उद्योगपर्व का सूचीपत्र ।

अध्याय	विषय	पृष्ठसे	पृष्ठतक
१	श्रीकृष्णवाक्यवर्णन ...	१	४
२	बलदेववाक्यवर्णन ...	४	६
३	सात्यकिवाक्यवर्णन ...	६	८
४	द्रुपदवाक्यवर्णन ...	९	१०
५	वासुदेववाक्यवर्णन ...	११	१२
६	द्रुपदवाक्य पुरोहित गमन वर्णन	१२	१४
७	अर्जुन का श्रीकृष्ण के पास द्वारकापुरी को जाना ...	१४	१७
८	शल्यवाक्यवर्णन ...	१७	२१
९	राजा शल्य का युधिष्ठिर से इन्द्र के घोर दुःख पाने का हाल वर्णन करना ...	२२	२६
१०	ब्रह्महत्या के भय से इन्द्र का समुद्र में छिपना व विना इन्द्र के सब प्राणियों का व्याकुल होना	२६	३०
११	राजा नहुष का इन्द्र होकर इन्द्राणी के संग भोग करने को कहना	३०	३२
१२	विष्णु की आज्ञा से देवताओं का इन्द्र से यज्ञ करवाना ...	३२	३५
१३	अपने पति को प्राप्त होने के अर्थ इन्द्राणी का राजा नहुष के पास जाना ...	३५	३७
१४	इन्द्रविजय वर्णन ...	३७	३८
१५	इन्द्र का राजा नहुष के पास शची को छलने के अर्थ भेजना	३८	४१
१६	बृहस्पतिजी का अग्निदेवता की स्तुति करना व उनके वरदान से इन्द्र का प्रकट होना ...	४१	४४
१७	राजा इन्द्र का अगस्त्यजी से नहुष को स्वर्ग से भ्रष्ट हो जाने का हाल पूछना ...	४४	४६
१८	इन्द्र को अपना राज्य मिलना वर्णन	४६	४८
१९	कौरवों व पाण्डवों को अपने २ सहायकों की सेना मँगवाना	४८	५०
२०	राजा द्रुपद के पुरोहित का कौरवों की सभा में जाना व नीति अनुसार वचन कहना ...	५०	५२
२१	उक्त पुरोहित के वचनों को सुनकर भीष्म कर्ण व धृतराष्ट्र का उत्तर देना ...	५२	५४
२२	पाण्डवों के पास राजा धृतराष्ट्र का संजय को भेजना ...	५४	५९
२३	युधिष्ठिर का संजय से अपना दुःख वर्णन करना ...	५९	६२
२४	युधिष्ठिर के वचनों को सुनकर संजय का उत्तर देना ...	६२	६३
२५	कौरवों व पाण्डवों के मिलाप करने के अर्थ संजय का वचन कहना	६३	६५
२६	युधिष्ठिर का संजय के वचनों का उत्तर देना	६६	६९
२७	युधिष्ठिर के वचनों को सुनकर पुनः संजय का उत्तर देना ...	६९	७३
२८	संजय के वचन सुनकर युधिष्ठिर का उत्तर देना ...	७३	७५
२९	श्रीकृष्णचन्द्र का वर्ण धर्म व राजनीति का वर्णन करना	७५	८२
३०	युधिष्ठिर का संजय से चलते समय आनन्द देनेवाले वचन कहना	८२	८७
३१	युधिष्ठिर का संजय से फिर संदेशा कहना	८७	८९
३२	संजय का कौरवों की सभा में आकर पाण्डवों के समाचार कहना	८९	९३
३३	राजा धृतराष्ट्र का विदुरजी से से सम्मति पूछना व उनका		

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अध्याय	विषय	पृष्ठसे	पृष्ठतक
	उत्तर देना	९३	१०५
३४	विदुरजी का पुनः धर्मनीतिमय वचन कहना	१०५	११३
३५	विदुर का धृतराष्ट्र के प्रति सुधन्वा व प्रह्लाद का इतिहास वर्णन करना	११३	१२१
३६	विदुर का एक परमहंस का इतिहास वर्णन करना	१२१	१२८
३७	विदुर का राजनीति व धर्मनीति वर्णन करना	१२८	१३५
३८	विदुर का नीति वर्णन करना	१३५	१४०
३९	विदुर का धर्मशास्त्र वर्णन करना	१४०	१४७
४०	विदुर का ज्ञान वर्णन करना	१४८	१५१
४१	विदुर का सनत्सुजात का हाल वर्णन करना	१५१	१५२
४२	सनत्सुजात मुनि व धृतराष्ट्र का संवाद वर्णन	१५२	१५८
४३	सनत्सुजात मुनि का मौनादिक भेद वर्णन करना	१५८	१६५
४४	सनत्सुजात मुनि का सब लक्षण योग वर्णन करना	१६५	१६९
४५	सनत्सुजात का शोकादिक दोष वर्णन करना	१६९	१७१
४६	सनत्सुजात का ज्ञान वर्णन करना	१७१	१७७
४७	संजय यत्न वर्णन	१७७	१७८
४८	संजय का धृतराष्ट्र से पाण्डवों का हाल वर्णन करना	१७८	१८९
४९	संजय के वचन सुन भीष्म का उत्तर देना	१९०	१९३
५०	संजय का धृतराष्ट्र से पाण्डवों का चरित्र वर्णन करना	१९३	१९७
५१	धृतराष्ट्र का भीमसेन की ... बड़ाई करना	१९७	२०२
५२	अर्जुन के चरित्रों को स्मरण करके धृतराष्ट्र का विलाप करना	२०२	२०४
५३	अर्जुन के पराक्रम को स्मरण करके धृतराष्ट्र का विलाप करना	२०४	२०५
५४	संजय का धृतराष्ट्र को बहुत प्रकार से समझाना	२०५	२०७
५५	दुर्योधन का धृतराष्ट्र को धैर्य देना	२०७	२१२
५६	दुर्योधन का संजय से पाण्डवों की कथा पूछना	२१२	२१४
५७	धृतराष्ट्र का संजय से पाण्डवों का हाल पछना	२१४	२१६
५८	धृतराष्ट्र का दुर्योधन से युद्ध करने को मना करना	२१६	२२१
५९	धृतराष्ट्र का संजय से श्रीकृष्ण व अर्जुन का मत पूछना	२२१	२२४
६०	धृतराष्ट्र का दुर्योधन से अर्जुन से मिलाप करने के वास्ते कहना	२२४	२२६
६१	दुर्योधन का पिता के वचन खण्डन करके युद्ध में दृढ़ सम्मत करना	२२६	२२८
६२	कर्ण का दुर्योधन से सम्मत करना	२२९	२३१
६३	दुर्योधन व भीष्म का संवाद वर्णन	२३१	२३३
६४	विदुरजी का दो पक्षी व एक व्याधा का वृत्तान्त वर्णन करना	२३३	२३५
६५	धृतराष्ट्र का दुर्योधन को समझाना	२३६	२३७
६६	धृतराष्ट्र का संजय से कृष्णादि का अभिप्राय पूछना	२३७	२३९
६७	धृतराष्ट्र का विदुर से पूछना कि कौरवों पाण्डवों में किसकी विजय होगी	२३९	२४०
६८	संजय का धृतराष्ट्र से कृष्ण व अर्जुन के बल का हाल वर्णन करना	२४०	२४१
६९	धृतराष्ट्र का दुर्योधन से ज्ञान की बातें करना	२४१	२४३
७०	संजय का धृतराष्ट्र से वासुदेव के नामों का अर्थ कहना	२४३	२४५
७१	धृतराष्ट्र का संजय से श्रीकृष्ण		

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अध्याय	विषय	पृष्ठसे	पृष्ठतक
	के चरित्रों को सुनकर उनको परमेश्वर करके जानना ...	२४५	२४६
७२	युधिष्ठिर का श्रीकृष्णजी से अपना दुख कहना व श्रीकृष्ण को धृतराष्ट्र के पास जाने से रोंकना	२४६	२५५
७३	श्रीकृष्णजी का युधिष्ठिर से कौरवों के अभिप्राय को कहना	२५५	२५६
७४	भीमसेन का श्रीकृष्णजी से युद्ध शान्त होने के अर्थ वार्ता करना	२५६	२६१
७५	भीमसेन के मुख से युद्ध शान्त होने के अर्थ वचन सुन कर श्रीकृष्णजी का क्रोधित होकर कटु वचन कहना ...	२६१	२६३
७६	भीमसेन का श्रीकृष्णजी से पुरुषार्थमय वचन कहना ...	२६३	२६५
७७	श्रीकृष्ण का भीमसेन के बल की प्रशंसा करना ...	२६५	२६७
७८	अर्जुन का श्रीकृष्णजी से कौरवों का संदेशा कहना ...	२६७	२६६
७६	श्रीकृष्णजी का अर्जुन से युद्ध का विधान वर्णन करना	२६६	२७१
८०	नकुलवाक्य वर्णन ...	२७१	२७३
८१	सहदेववाक्य वर्णन ...	२७३	२७४
८२	अपना दुःख स्मरण करके द्रौपदी का श्रीकृष्ण से सकोप वचन कहना	२७४	२७७
८३	श्रीकृष्णजी का कौरवों के पास पाण्डवों का संदेशा लेकर जाना	२७७	२८३
८४	श्रीकृष्णजी को हस्तिनापुर जाते हुए मार्ग में जो शकुन हुए उनका वर्णन ...	२८३	२८६
८५	श्रीकृष्णजी की पहुनई हेतु कौरवों का सामग्री एकत्र करना	२८६	२८७
८६	धृतराष्ट्र का श्रीकृष्ण के निमित्त सामग्री देने को संपर्ण सभा से वर्णन करना	२८७	२८८
८७	विदुर का धृतराष्ट्र से श्रीकृष्ण जी के मिलने की रीति वर्णन करना	२८८	२६०
८८	दुर्योधन का धृतराष्ट्र से श्री कृष्णजी को भेंट देने के लिये मना करना	२६१	२६३
८६	श्रीकृष्णजी का हस्तिनापुर पहुँचना व भीष्मादिक का आगे से सविधान मिलना ...	२६३	२६५
६०	श्रीकृष्ण का अपनी फूफू कुन्ती के पास जाना व उनका वार्ता वर्णन	२६५	३०४
६१	कृष्ण दुर्योधन संवाद वर्णन	३०४	३०८
६२	विदुरजी का श्रीकृष्णजी से सब वृत्तान्त सविनय वर्णन करना	३०८	३११
६३	श्रीकृष्णजी का विदुर से अपना मनोरथ वर्णन करना ...	३११	३१३
६४	कौरवों की सभा में श्रीकृष्णजी का वार्तालाप करना ...	३१३	३१८
६५	श्रीकृष्णजी का बहुत प्रकार की नीति कहकर कौरवों को समझाना	३१८	३२४
६६	परशुराम का दम्भोद्भव राजा का इतिहास कहना	३२४	३२६
६७	कण्वमुनि का दुर्योधन से पाण्डवों से मिलाप करने के अर्थ कहना	३२६	३३०
६८	मातलि व नारद को मिल कर वरुणलोक को जाना ...	३३१	३३३
६६	नारदजी का मातलि को नागलोक दिखलाना ...	३३३	३३५
१००	नारदजी का मातलि को हिरण्यपुर दिखाना ...	३३५	३३६
१०१	नारदजी का मातलि को गरुड़लोक दिखाना ...	३३६	३३७
१०२	नारदजी का मातलि को गोलोक व रसातल लोक दिखाना ...	३३८	३३६

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अध्याय	विषय	पृष्ठसे	पृष्ठतक
१०३	नारद का मातलि को नागराज की भोगवतीपुरी दिखाना	३३६	३४१
१०४	आर्यक नाम नागराज प्रति नारद वार्ता वर्णन ...	३४१	३४३
१०५	विनतासुत को आकर विष्णु से गर्व भरी बातें कहना ...	३४३	३४७
१०६	नारदजी को कौरवों का हठ वर्णन करना	३४७	३४६
१०७	गालव चरित्र वर्णन ...	३४६	३५१
१०८	गरुड़जी का गालव से पूर्व दिशा का हाल वर्णन करना	३५१	३५३
१०९	गरुड़जी का गालव से दक्षिण दिशा का हाल वर्णन करना	३५३	३५५
११०	गरुड़जी का गालव से पश्चिम दिशा का हाल वर्णन करना	३५५	३५६
१११	गरुड़जी का गालव ऋषि से उत्तर दिशा का हाल कहना	३५६	३५६
११२	गरुड़जी व गालवजी का पूर्व दिशा को जाना ...	३५६	३६१
११३	गालव व गरुड़ को ऋषभ पर्वत उतरकर शाण्डिली ब्राह्मणी के यहाँ जाना ...	३६१	३६३
११४	गरुड़ व गालव को सम्मत करके ययाति की समाज को जाना	३६३	३६५
११५	ययाति व नारद की वार्ता वर्णन	३६५	३६७
११६	गालवजी का राजा हर्यश्व से दो सौ घोड़ा लेकर अपनी कन्या देना	३६७	३६६
११७	गालवमुनि का राजा दिवोदास के पास आना ...	३६६	३७१
११८	गालवमुनि का अपनी कन्या को लेकर औशीनर राजा के यहां जाना	३७१	३७३
११९	गालव चरित्र वर्णन ...	३७३	३७५
१२०	राजा ययाति का सुता के अर्थ स्वयंवर करना	३७५	३७६
१२१	राजा ययाति का स्वर्ग से निपात होना	३७७	३७६
१२२	राजा ययाति का अपने नातियों की पुण्य लहिकर फिर अपने स्थान को प्राप्त होना	३७६	३८१
१२३	राजा ययाति का ब्रह्मा के वचन सुनकर सुख से देवलोक में रहना	३८१	३८४
१२४	श्रीकृष्णजी का दुर्योधन को समझाना	३८४	३६०
१२५	भीष्मपितामह का दुर्योधन प्रति वाक्य वर्णन ...	३६०	३६२
१२६	भीष्म व द्रोण का दुर्योधन प्रति वचन कहना और उस का न मानना	३६२	३६३
१२७	दुर्योधन का क्रोधित होकर श्रीकृष्ण प्रति वचन बोलना	३६४	३६६
१२८	श्रीकृष्ण का क्रोधित दुर्योधन प्रति वचन कहना ...	३६६	४००
१२९	गान्धारी का अपने पुत्र को बहुत तरह से समझाना व उसका न मानना ...	४००	४०४
१३०	दुर्योधन का श्रीकृष्ण के निमित्त बँधुआ करने का सम्मत करना	४०५	४०६
१३१	श्रीकृष्णजी का कौरवों को अपने तनु में सकल विश्व का दर्शन कराना	४०६	४१२
१३२	कुन्ती का श्रीकृष्णजी को राजनीति सुनाना कि यही नीति युधिष्ठिर से आप जाके सुनाइये	४१२	४१५
१३३	कुन्ती का श्रीकृष्णजी को एक क्षत्रिय की स्त्री विदुलाजी के चरित्र से क्षात्रधर्म वर्णन करना	४१५	४१६
१३४	विदुला को अपने पुत्र से क्षत्रियों का धर्म कहकर समझाना	४२०	४२३
१३५	माता को अपने पुत्र से राज-		

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अध्याय	विषय	पृष्ठसे	पृष्ठतक
	नीति कहकर समझाना ...	४२३	४२७
१३६	पुनः माता को पुत्र से राजनीति कहकर समझाना ...	४२७	४२९
१३७	कुन्तीका सन्देशा सुनकर श्रीकृष्णजी का विराट नगर को जाना	४३०	४३२
१३८	भीष्म व द्रोण का बहुत भाँति से दुर्योधन को समझाना ...	४३२	४३४
१३९	भीष्म व द्रोण का पुनः समझाना व उसका न मानना	४३५	४३७
१४०	हरि व कर्ण का दुर्योधन को समझाना	४३७	४३९
१४१	कर्ण का श्रीकृष्णजी से अपना को दुर्योधन का संग छोड़ के पाण्डवों के संग जाने को निषेध करना	४३९	४४४
१४२	कर्ण के वचन सुनकर श्रीकृष्णजी का उत्तर देना ...	४४४	४४५
१४३	कर्ण का श्रीकृष्णजी से वार्तालाप करके कौरवों की सेना में जाना	४४६	४५०
१४४	विदुर व कुन्ती संवाद ...	४५०	४५२
१४५	कर्ण व कुन्ती संवाद ...	४५३	४५४
१४६	कर्ण का कुन्ती से पाण्डवों का संग अंगीकार न करना ...	४५४	४५७
१४७	श्रीकृष्णजी का पाण्डवों के समीप पहुँचना ...	४५७	४६०
१४८	श्रीकृष्णजी का युधिष्ठिर से द्रोण व विदुर का कहा हुआ हाल वर्णन करना ...	४६०	४६४
१४९	श्रीकृष्णजी का युधिष्ठिर से जिसतरह कि धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से कहा था वह हाल वर्णन करना	४६४	४६७
१५०	श्रीकृष्णजी का युधिष्ठिर से दुर्योधनकृत युद्ध प्रबन्ध वर्णन करना	४६७	४६९
१५१	अर्जुन का सैन्य लेकर युद्ध के हेतु कुरुक्षेत्र में पहुँचना ...	४६९	४७५
१५२	पाण्डवों का कुरुक्षेत्र में अपनी सैन्य को टिकाना ...	४७५	४७७
१५३	युद्ध के विषय में कौरवों का विचार करना	४७७	४७९
१५४	श्रीकृष्ण का युधिष्ठिर से कौरवों का मत वर्णन करना व उसको सुनकर युधिष्ठिर का क्रोधित होना	४७९	४८१
१५५	कौरवों की सैन्य का कुरुक्षेत्र को पयान करना ...	४८२	४८५
१५६	कौरवों की सैन्य का फुरुक्षेत्र में विभाग करना ...	४८५	४८८
१५७	पाण्डवों की सैन्य का विभाग करना	४८८	४९०
१५८	पाण्डवों के पास रुक्मीवीर का आना	४९१	४९४
१५९	संजय का राजा से धर्मनीतिमय वचन कहना ...	४९४	४९५
१६०	दुर्योधन का युधिष्ठिर के पास दूत भेजना	४९५	५०६
१६१	उलूक दूत का युधिष्ठिर के पास दुर्योधन का संदेशा कहना ...	५०६	५०९
१६२	उलूक व युधिष्ठिर का वार्तालाप करना	५१०	५१४
१६३	उलूक के वचनों को सुनकर अर्जुन का उत्तर देना ...	५१५	५२०
१६४	युधिष्ठिर का युद्ध करने के लिये सैन्य को भेजना ...	५२०	५२१
१६५	भीष्मजी का युद्ध के लिये तैयार होना	५२१	५२४
१६६	भीष्मजी का दुर्योधन से रथ अतिरथ का व्याख्यान करना	५२४	५२५
१६७	भीष्मजी का दुर्योधन से अतिरथी को शोध के कहना ...	५२६	५२९
१६८	भीष्मजी का रथी अतिरथी वाद विवाद करके कर्ण के संग वर्णन करना ...	५२९	५३३
१६९	भीष्मजी का पाण्डवों के रथी अतिरथी महारथी को वर्णन करना	५३३	५३५

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अध्याय	विषय	पृष्ठसे	पृष्ठतक
१७०	भीष्मजी का पाण्डवों के वीरों को वर्णन करना ...	४३५	४३६
१७१	भीष्मजी का पाण्डवों के रथ महारथों का वर्णन करना ...	४३७	४३८
१७२	भीष्मजी का पाण्डवों के रथ वर्णन करना	४३९	४४०
१७३	भीष्मजी का दुर्योधन से राजाओं को जीतकर काशिराज की कन्या ले आने का हाल कहना	४४१	४४३
१७४	अम्बा का भीष्मजी से अपना मनवाञ्छित वर्णन करना ...	४४३	४४४
१७५	अम्बा का राजा शाल्व के समीप जाना व उनके ग्रहण न करने से उसका फिर लौटना	४४४	४४७
१७६	अम्बा के हित तपस्वियों का विचार करना व राजर्षि होत्रवाहन का परशुराम के पास जाने को कहना ...	४४८	४५०
१७७	अम्बा व होत्रवाहन राजा का वार्तालाप करना ...	४५०	४५३
१७८	अकृतव्रण व अम्बा व परशुरामजी का संवाद वर्णन ...	४५३	४५६
१७९	परशुरामजी का अम्बा को समझाना और उसका न मानना	४५६	४५८
१८०	अम्बा के विषय में भीष्म व परशुराम का संवाद करना ...	४५८	४६४
१८१	परशुराम व भीष्मजी का युद्ध होना	४६४	४६७
१८२	परशुराम व भीष्मजी के युद्ध में दोनों का मूर्छित होना...	४६७	४७०
१८३	परशुराम व भीष्म का घोर युद्ध होना	४७०	४७२
१८४	पुनि दोनों वीरों का युद्ध होना	४७२	४७५
१८५	परशुरामजी से जीतने के विषय में भीष्मजी को रात्रि में स्वप्न होना	४७५	४७६
१८६	परशुराम व भीष्म के युद्ध में परशुराम का मरण तुल्य मूर्छित होना	४७६	४७८
१८७	भीष्मजी का विजय पाना ...	४७८	४८१
१८८	अम्बा का निराश होकर यमुना किनारे तप करने जाना ...	४८२	४८५
१८९	महादेव का अम्बा को भीष्म के वध हेतु वरदान देना ...	४८५	४८७
१९०	अम्बा का द्रुपद की कन्या होकर जन्म लेना व फिर शिखण्डीनाम से प्रसिद्ध होना	४८७	४८८
१९१	राजा दशार्ण व द्रुपद का अपनी २ कन्याओं का परस्पर विवाह होना	४८९	४९१
१९२	द्रुपदराज का अपनी रानी से मत पूछना	४९१	४९३
१९३	शिखण्डी का वन को भागना और वहाँ तप करके एक श्रेष्ठ यक्ष को देखना	४९३	४९६
१९४	शिखण्डी का वर पाकर पुरुष होना व घर में आकर स्त्रीसुख भोगना	४९६	६०१
१९५	भीष्मजी का पाण्डवों की सेना को जो जितने दिन में मारेगा वर्णन करना	६०१	६०३
१९६	युधिष्ठिर का अपने भाइयों से काल प्रमाण पूछना ...	६०३	६०५
१९७	धृतराष्ट्र करके प्रेरित कौरवों की सेना का पाण्डवों की सेना को चलना	६०५	६०७
१९८	पाण्डवों की सेनामध्य कौरवों का प्रवेश करना	६०७	६१०

इति उद्योगपर्वणः सूचीपत्रम्।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

महाभारत भाषा उद्योगपर्व।

मङ्गलाचरण।

दोहा।

भव्यकरण अशरणशरण, कृष्णचरण उरधारि।
करौं कछुक उद्योग, उद्योग पर्व शुभकारि॥ १॥
भारत जलधि अपार नहिं, पार लहत बिनु पोत।
गहत रहत हरिपद स्वई, पार भली विधि होत॥ २॥
यहि पँचयें उद्योग प्रथ, पर्व्वमाहिं अध्याय।
यकशत अरु अट्ठानबे, हैं सब सरस स्वहाय॥ ३॥
कृष्णसहायक पाय उद्योग पाण्डवन कीन।
राज्य लहन हित आपनो, सोई कथा प्रवीन॥ ४॥
तहां प्रथम अध्याय महँ, कृष्ण कह्यहु समुझाय।
नृप विराटसन पाण्डवन, मिलनो राज्य उपाय॥ ५॥

श्रीनारायण व नरों में उत्तम नर व देवी सरस्वतीजी और व्यासजी को नमस्कार कर तदनन्तर जय का उच्चारण करै १ वैशम्पायनजी जनमेजय महाराज से बोले कि, अभिमन्युजी के पक्षवाले यादव पाण्डव वीर अभिमन्युजी का विवाह विराट की कन्या उत्तरा के सङ्ग

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कराय अति हर्षित हुए व चार दिन अच्छी तरह विश्रामकर प्रातःकाल उठकर राजाविराट की सभा में गये वह मत्स्यराज की सभा मोती, मूंगा, हीरा, पद्मरागादि उत्तम २ मणियों से चित्र विचित्र व जिसमें सर्वत्र उत्तम २ आसन धरे, फूलों की माला ठौर २ लटकी चन्दन अगरु आदि सुगन्धित वस्तुओं से सुगन्धित थी ऐसी सभा में नरराजों के वृद्ध लोग पहुँचे २ वहां राजा विराट व द्रुपदराज ये दोनों सब राजाओं में वृद्ध होने के कारण मान्य थे प्रथमही जाय आसनों पर बैठ रहे थे पीछे वसुदेवजी तथा बलभद्रजी व श्रीकृष्णचन्द्रजी भी जाय विराजमान हुए ३ उनमें बलभद्रजी व सात्यकी तो पञ्चालदेश के राजा द्रुपदजी के समीप बैठे, व श्रीकृष्णचन्द्रजी व युधिष्ठिरजी मत्स्य-देश के महाराज विराटजी के समीप बैठे ४ व सब राजा द्रुपद के पुत्र, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, युद्ध करने में बड़े वीर, प्रद्युम्न, साम्ब, राजा विराट के सब पुत्र व अभिमन्यु ये सब एक स्थान पर बैठे ५ व सब शूरवीर वीर्यरूप बल से अपने २ पिता के समान द्रौपदीकुमार सुवर्ण के चित्र विचित्र आसनों पर जा बैठे ६ जब नानाप्रकार के वसन भूषण धारण कर ये सब महारथी लोग आसनों पर विराजमान हुए तो उस समय वह सभा राजाओं के बैठने से ग्रहों से शोभित आकाश के समान सुशोभित हुई ७ तिसके पीछे समय के व समाज के उचित नानाप्रकार की चित्र विचित्र कथा कह सब पुरुषवीर श्री-कृष्णचन्द्रजी की ओर देखते हुए व चिन्तना करते हुए मुहूर्त्तभर बैठे रहे ८ जब बनाय सब लोग नानाप्रकार की कथा कह चुके तो सबको अपनी ओर चिताय पाण्डवों के कार्य के हेतु श्रीकृष्णचन्द्रजी ने सारार्थयुक्त व महाफलदायक वचन कहे उनको सब राजसिंहों ने सुना ९ वे ये हैं श्रीकृष्णचन्द्रजी बोले कि आप सब लोग जानते हैं कि जिसप्रकार महाराज इन युधिष्ठिरजी को सुबल के पुत्र ने द्यूत खेलने के समय छल से हराय राज्य हरलिया व तेरह वर्ष वन में रहने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के लिये इनसे प्रतिज्ञा कराली १० परन्तु ये सब पाण्डु के पुत्र पृथ्वी भर जीत सकते थे पर क्या करें सत्यरत होने के कारण अपने सत्यपर टिके रहे तेरह वर्ष तक महाउग्र वनवास का व्रत धारण किये बिताया ११ उन वर्षों में जानों तेरहवां यह वर्ष बड़ाही दुस्तर था जिसमें गुप्त होकर आपके समीप नानाप्रकार के क्लेश सहते हुए ये महात्मा लोग रहे व वन के दुःख तो प्रथमहीं भोग चुके थे १२ अब ये लोग इस पराधीनता की विपत्ति से छूटे हैं इससे अपने कुल का राज्य लिया चाहते हैं, हमारे मन से जिसमें महाराज युधिष्ठिरजी तथा दुर्योधन का भी हित हो १३ वही आपलोग विचारें, पर वह विचार धर्मयुक्त व यश करनेवाला हो, क्योंकि पूर्व के कुरुवंशी भी धर्मयुक्त व यशकारी ही कार्य करते रहे फिर ये धर्मराजजी तो अधर्मयुक्त देवताओं का भी राज्य नहीं चाहते १४ बरन धर्म्मार्थयुक्त हो चाहे एक ही ग्राम का राज्य हो ये उसी की इच्छा करते हैं सो तो इनके पितृपितामहादिकों का ही राज्य इनके लिये ऐसा है उसको तो जानते ही हो कि जैसे धृतराष्ट्र के पुत्रों ने छीन लिया १५ व यह भी जानते हो कि जैसे इन्होंने झूठी बात के लिये असह्यरूप इतना भारी कष्ट पाया, कुछ धृतराष्ट्र के पुत्रों ने अपने तेज से संग्राम में इनको नहीं जीत लिया केवल कपट के जुआ में ही जीता है १६ तथापि महाराज युधिष्ठिरजी अपने सुहृदों सहित धृतराष्ट्र के पुत्रों का कुशल ही चाहते हैं व नानादेश के राजाओं को पीड़ित कर इन पाण्डवों ने जितना राज्य धनादि अपने आप इकट्ठा किया है १७ उतना ही ये कुन्ती के पुत्र व माद्रीजी के पुत्र चाहते हैं और नहीं, जब ये लोग बालक रहे तब उन दुर्योधनादिकों ने इनके मारने के लिये विविध प्रकार के उपाय किये व कराये थे १८ क्योंकि उनको इनका राज्य लेलेने की इच्छा थी इससे इनको मार डारना चाहते थे यह वृत्तांत भी जानों आप लोगों को विदित ही है इससे अब कौरवों का लोभ व युधिष्ठिरजी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

की धर्म्मज्ञता देख १९ व उन लोगों की सम्बन्धता भी देख आप लोग सब जने मिलकर व अलग २ भी अपना सम्मत इस विषय में कहें व ये लोग अपने सत्य ही में टिके रहे इसी से अपनी प्रतिज्ञा के तेरह वर्ष दुःख से बिताये २० जो सत्य पर न रहते उन्हीं का सा उपचार ये भी करते तो सब धृतराष्ट्र के पुत्रों को मार डारते व धृतराष्ट्र के पुत्र जब इनका अपकार करते थे तो सुहृद लोग उनको रोकते भी थे २१ कि तुम इनके संग क्यों अपकार करते हो यदि ये युद्ध करेंगे तो तुमको मार डारेंगे तथापि इन लोगों ने लघुता के कारण उनको नहीं मारा व उन्होंने इनके मारने के लिये अपने सुहृदों सहित उपाय किये और ये अब उनको अपने सुहृदों को संग ले मार सकते हैं इस विषय में दुर्य्योधन का मत नहीं विदित होता कि वे क्या करेंगे २२।२३ व विना किसी का मत जाने उसके विषय का कोई काम न करना चाहिये यह सबका मत है तिससे धर्म्मशील पवित्र-चित्त, कुलीन, अप्रमत्त एक पुरुष दूत यहां से जाय २४ कि वह उनको समझाने में समर्थ हो कि वे युधिष्ठिरजी को आधा राज्य दे दें, इस प्रकार के श्रीकृष्णचन्द्रजी के धर्म्मार्थयुक्त, मधुर व समभाव के वचन सुन उन वचनों की बड़ी बड़ाई कर बलदेवजी बोले ॥ २५ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि श्रीकृष्णवाक्यन्नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

दूसरा अध्याय।

दो० कहब द्वितीयाध्यायमहँ, जिमि बलदेव महान।
कहे वचन पाण्डवनाहित, सबविधिसहितविधान ॥ १ ॥

बलदेवजी बोले कि, आप लोगों ने सुना जो श्रीकृष्णचन्द्र ने धर्म्मयुक्त व अर्थसहित वचन कहे वे वचन कैसे युधिष्ठिरजी के व दुर्य्योधन के हितकारी हैं १ इसमें देखो आधा राज्य छोड़कर पाण्डव वीर वन को आये थे उतनाही लेना चाहते हैं, अब दुर्य्योधन इनको

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

आधा राज्य दे अपने लोगों सहित सुखी रहैं २ व ये पुरुषप्रवीर पाण्डव भी अपना आधा राज्य पावें व इनके शत्रु दुर्य्योधनादि भी अच्छी रीति से बर्त्ताव करें तो इसमें इनको भी सुख हो व वे भी शान्त रहैं व इन दोनों के शान्त होने में प्रजाओं को भी सुख होगा ३ व जो कोई दुर्य्योधन का मत जानने तथा युधिष्ठिर का वचन उनसे कहने के लिये पाण्डवों व कौरवों का मेल होजाने के लिये जाय तो वह हमको भी परमप्रिय हो ४ परन्तु जो जाता हो वह उस समय युधिष्ठिरजी का सन्देश कहे जबकि भीष्मपितामह, दुर्य्योधन, विदुर, धृतराष्ट्र, महानुभाव द्रोणाचार्य्य, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, गान्धारराज, सञ्जय ५ व अन्य बलादि धृतराष्ट्र के सब पुत्र, महाजन लोग, बैठे हों व अपने हितकारी लोग पुराने कुल वृद्ध लोग जिन्होंने बहुत पुराने समय की बातें सुनी हों, वे भी बैठे हों ६ और भी सब नगरनिवासी छोटे-बड़े वहां बैठे हों नहीं तो सब उस समय बुलाये जायँ, जिसमें कि युधिष्ठिरजी का हित हो ७ वहां कहने को ऐसा चाहिये कि अब किसी प्रकार से किसी अवस्था में पाण्डवों को कुपित न कराना चाहिये और वे लोग नियत समय तक वनवास भी कर चुके प्रथम कुपित कराये गये तो कराये गये अब न कराना चाहिये क्योंकि उनके सत्य ही बल है व सेना भी है, फिर सत्यवादी युधिष्ठिरजी का राज्य तुम लोगों ने जुआ खेलाय हर लिया है कुछ बल से नहीं लिया ८ देखो जब जुआ होने लगा था तो सबोंने युधिष्ठिरजी को रोका था कि तुम न खेलो परन्तु ये उस विषय को अच्छी तरह नहीं जानते थे खेलने ही लगे तो गान्धारराज का पुत्र भी आया जो कि द्यूतविद्या में बड़ा निपुण है ९ वहां कर्ण, दुर्य्योधन को छोड़ युधिष्ठिरजी ने कहा चाहे जो खेलै, क्योंकि वहां सहस्रों द्यूतप्रवीण थे जिनको युधिष्ठिरजी जीत सकते थे १० परन्तु उन सबों को छोड़ इन्होंने शकुनी को ही खेलने के लिये बुलाया, उसने इनको द्यूत खेलने में जीत लिया, क्योंकि ये

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सदा हारे हुओं से ही जीतते थे उससे नहीं जीत सके ११ जब हठ से हार गये तो इन्होंने क्रोध किया इसमें शकुनी का कुछ भी अपराध नहीं है क्योंकि इन्होंने बुलाया तो वह खेला, तिस धृतराष्ट्रजी से जो वचन कहा जाय प्रणाम करके वह समझाय ही कर कहा जाय १२ व उसी प्रकार दुर्य्योधन से भी बहुत समझाय बुझाय विनयपूर्वक कहा जाय जिसमें वे इस ओर ध्यान दें, क्योंकि कौरवों से युद्ध करना न चाहते हो तो दुर्य्योधन से समझ ही बूझ वार्त्ता करना १३ क्योंकि जो प्रयोजन समझाने बुझाने से चलता है वह युद्ध करने से नहीं चलता १४ वैशम्पायनजी बोले ।

हरिगीतिका ।

बलदेव के इमि वचन सुनि, गुनि मनहिं महँ सात्यकि कुपो ।
अतिवेग उठि बलवचन दूषन लग्यो त्यहि क्षण नहिं चुपो ॥
करि क्रोध बोध सुशोध निज हिय वचन रचन बनायकै ।
बहुभाँति खण्डन कीन प्रतिपद मदन रह्यहु सुनायकै १।१५ ॥

का० न० दो० यह सुनिकै बलभद्र के, वचन सात्यकी वीर ।
तासु गिरा दूषणलग्यो, पूरित क्रोध गँभीर ॥ १ ॥

इति श्रीमन्महाभारतेउद्योगपर्वणिबलदेववाक्यन्नामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तीसरा अध्याय ।

दो० कहब तृतीयाध्याय महँ, सात्यकि जिमि कह बैन ।
सुनत सुनत पाण्डवन के, भयहु भलीविधि चैन ॥ १ ॥

सात्यकी बोले कि, जिस प्रकार का पुरुष का आत्मा होता है उसी प्रकार वह कहता है, जिस प्रकार का आपका अन्तरात्मा है उसी प्रकार कहते हो १ इस संसार में शूर पुरुष भी हैं व कातरपुरुष भी ये दोनों पक्ष पुरुषों में बड़े दृढ़ दिखाई देते हैं २ एक ही कुल में नपुंसक व महाबलवान् दोनों उत्पन्न होते हैं, जैसे एक ही वृक्ष में एक फरनेवाली

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

शाखा होती व एक विना फरनेवाली ३ हे बलभद्रजी ! हम आपके वचनों का दूषण नहीं करते बरन जो लोग ऐसे तुम्हारे वचन सुनते हैं उनका दूषण करते हैं ४ भला युधिष्ठिरजी का थोड़ा भी दोष निर्भय हो सभा के बीच में कोई कैसे कह सकता है ५ भला इन जुआ न खेलना जाननेवाले युधिष्ठिरजी को अपनी सभा में बुलाय आप सब उस विद्या में कुशल हो छल से जीत लिया फिर उन लोगों की धर्म-जय कैसे हुई ६ हां वे युधिष्ठिर महाराज के यहां आय धर्म से जुआ खेलते व जीतते तो अलबत्ता क्षत्रियों के धर्म के अनुकूल होता ७ उन लोगों ने छल से इनको जीता तो उन्होंने कौन धर्म की बात की, व इन्होंने जो धोखे में आय बाजी लगाई तो ये कैसे उनकी शरण में जायँ व निन्दित हों ८ फिर ये वनवास से भी निवृत्त हुए तो अपने आजा बाप का भी राज्य न लें, यदि ये युधिष्ठिरजी दूसरे का धन चाहें तो अलबत्ता निन्दित हों ९ अब ये इतना थोड़ा आधा भी राज्य माँगने के योग्य नहीं हैं व वे धर्म्मयुक्त कैसे ठहरे क्या उन्होंने छल से इनका राज्य नहीं हरलिया १० व फिर ये लोग अच्छी तरह वनवास कर भी आये तो भी वे कहते हैं कि जो समय गुप्त रहने का था उसी में ये विदित होगये गुप्त नहीं रहे इस विषय में भीष्मजी ने व विदुरजी ने व द्रोणाचार्य्यजी ने कहा भी कि ये लोग अपना पूरा काल बिताय आये हैं विदित नहीं हुए ११ उसपर भी इन पाण्डवों को इनका राज्य नहीं दियाचाहते, हमतो तीक्ष्ण बाणों से उनको समर में पराजित कराय जबरदस्ती १२ इनके पैरोंपर गिरवावेंगे, जो वे इन बुद्धिमान् युधिष्ठिरजी के पैरोंपर हाथ जोर न गिरेंगे १३ तो अपने मन्त्रियों सहित यमराज के स्थान को जायँगे, क्योंकि जब क्रोध कर हम युद्ध करने की इच्छा करेंगे तो १४ वे हमारा वेग न सह सकेंगे जैसे वज्र का वेग पर्व्वत नहीं सहसके उनमें अर्जुनजी को जिनके गाण्डीव धन्वा है व श्रीकृष्णचन्द्रजी को जिनके चक्र

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

आयुध है व हमको तथा क्रोध कियेहुए महादुरासद भीमसेनजी को समर में कौन सहसकेगा १५ फिर प्रलयसमय के यमराज के समान दीप्तिवाले अतिदृढ़धन्वा धारण किये नकुल व सहदेव व वैसेही प्रलयकाल के यम व काल के समान दीप्तिमान् महावीर रणधीर विराट व राजाद्रुपद १६ इनलोगों के सामने जिसको जीनेकी इच्छा होगी कौन आवेगा व धृष्टद्युम्न के भी सम्मुख कौन खड़ा होगा, व द्रौपदीजी की कीर्त्तिबढ़ानेवाले ये उनके पांच पुत्र हैं १७जोकि अपने २ पिताही के समान वीर्य्यवान् व उत्कट मदवाले हैं, फिर महाधनुर्द्धर अभिमन्युजी अति दुस्सह हैं इनके सम्मुख कौन खड़ा होगा १८ व काल, सूर्य्य, तथा अग्नि के समान प्रज्वलित गद, प्रद्युम्न व साम्बजी के सम्मुख कौन दिखाई देगा, हम ये सब लोग शकुनीसहित दुर्य्योधन को १९ व कर्ण को संग्राम में मार युधिष्ठिरजी को राज्याभिषेक करदेंगे, क्योंकि आततायी शत्रुओं को मारडारने में अधर्म्म नहीं होता २० आततायियों के ये लक्षण हैं, जो किसी के घर में अग्नि लगावे व भोजन में किसी को विष दे व छल से किसी का खेत राज्य व स्त्री हरले व किसी का धन छीनले व जो बिना शस्त्र लिये हुए को आप शस्त्र धारणकर मारै ये ६ आततायी कहाते हैं, इनमें के सब नहीं तो बहुत से लक्षण दुर्य्योधनादिकों में हैं इससे इनका मारनाही ठीक है ॥ २१ ॥

दो० रिपुसन माँगिबो अयशकर, अरु अधर्म्म कर मूल ।
यासों कीजै काम जो, धर्म्मतनय अनुकूल ॥ १ । २२॥
बांटि देहिं धृतराष्ट्र जो, धर्म्मतनय कहँ राज ।
तो सुयुधिष्ठिर भूपसों, लहिहैं कुशल समाज॥ २ ॥
राज्य पाण्डुसुत पाइ हैं, तो भल होइहि काम।
नाहिं तो जैहैं शरनि हत, कौरव यमके धाम ॥ ३ । २३ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सात्यकिवाक्यन्नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चौथा अध्याय।

दो० कहब चतुर्थाध्याय महँ, द्रुपद नृपति जिमि भाष।
सुनि सात्यकि के वचन जिन, श्रवणकरन अभिलाष ॥ १ ॥

सात्यकीजी के ऐसे वचन सुन राजा द्रुपदजी बोले कि, हे महाबाहो! यह ऐसाही होगा, दुर्योधन समझाने से राज्य न देंगे १ व धृतराष्ट्र भी अपने पुत्र के अनुकूलही काम करेंगे क्योंकि उनको पुत्र बहुत प्रिय हैं, भीष्मपितामह व द्रोणाचार्य्य भी उन्हीं के अनुकूल कहें, करेंगे क्योंकि वे उन का अन्न खाते हैं उसका लोभ करेंगे व करण तथा शकुनी मूर्खता के मारे उनकी सी कहेंगे २ बलदेवजी का वचन हमारे मनमें नहीं आता व न ज्ञानियों के समाज में कहने के योग्य है, हां जो हम कहते हैं नीतिमान् को सभा में जाय वैसा कहना चाहिये ३ दुर्योधन से नम्रता के साथ वार्त्तालाप किसी प्रकार न करना चाहिये क्योंकि वे कोमलता से साध्य नहीं हैं हमारे मत से वे बड़े पापबुद्धि हैं ४ जो पुरुष पापी दुर्योधन से मृदुवचन कहै वह जानों गधे के साथ नम्रता करै। व गाय के साथ तीक्ष्णता ५ क्योंकि वह पापी मृदु कहने से यह मानेगा कि इनके कुछ शक्ति ही नहीं है, जो उसके सङ्ग मृदुता की गई तो वह समझेगा कि बस अब हम जीत गये ६ अब हमलोग यह करेंगे इस विषय में यत्न करना चाहिये वह यह है कि मित्रों के यहां दूत भेजे जायँ वे लोग अपनी २ सेना ले २ आवें ७ उनमें शल्य, धृष्टकेतु, जयत्सेन व कैकयदेश के राजा इन सबों के यहां शीघ्रगामी दूत जायँ ८ नहीं तो दुर्योधन इन लोगों के यहां अवश्य दूत भेजेंगे फिर जिसका सन्देश प्रथम पहुँचेगा वे लोग उसी की ओर आवेंगे ९ इससे राजाओं से जनाने के लिये बहुतही शीघ्र युक्ति करनी चाहिये हमारे विचार से यह सब से बड़ा भारी कार्य्य है १० पहले शल्य के यहां शीघ्रता के साथ भेजो व जो शल्य के अनु-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

यायी हों उनके यहां भी व पूर्व्वसमुद्र के तटपर रहनेवाले राजा भगदत्त के यहां दूत भेजो ११ अमितौजा, उग्र, हार्द्दिक्य, अन्तक, दीर्घप्रज्ञ, शूर, रोचमान इनके यहां १२ बृहन्त व सेनाबिन्दु ये दो राजा बुलाये जायँ, तथा सेनजित्, प्रतिविन्ध्य, चित्तवर्म्मा व वास्तुक १३ वाह्लीक, मुञ्जकेश, चैद्याधिपति, सुपार्श्व, सुबाहु, महारथी पौरव राजा १४ शकदेश, पह्लवदेश व दरददेश के राजालोग, सुरारि, नदीज, कर्णवेष्ट १५ नील, वीरधर्म्मा, अतिवीर्य्यवान्, भूमिपाल, दुर्जय, दन्तवक्र, रुक्मी, जनमेजय, १६ आषाढ़, वायुवेग, पूर्व्वपाली, भूरितेजा, देवक, अपने पुत्रों सहित एकलव्य १७ कारूषक, वीर्य्यवान् क्षेमधूर्त्ति, काम्बोज, ऋषिक, अनूपक ये पश्चिम देश के राजा १८ जयत्सेन, काश्य, तथा पञ्चनद देश के राजा, क्राथपुत्र, दुर्द्धर्ष व जो राजा पर्व्वतों परके हैं १९ जालकि, सुशर्म्मा, मणिमान्, अतिमत्स्यक, पांशुराज्य का राजा, अति वीर्य्यवान् धृष्टकेतु २० तुण्ड, दण्डधार वीर्य्यवान् बृहत्सेन, अपराजित, निषाद, श्रेणिमान्, वसुमान् २१ बृहद्बल, महौजा, बाहु, परपुरञ्जय, समुद्रसेन राजा अपने पुत्रों सहित २२ उद्धव, क्षेमक, वाटधान, श्रुतायु, दृढ़ायु, वीर्य्यवान् शाल्व का पुत्र २३ कुमार राजा, व कलिङ्गदेश का बड़ा दुर्म्मदराजा, इन सबों के यहां दूत भेजे जायँ यह बात हम को रुचती है व ये महाविद्वान् ब्राह्मण हमारे पुरोहित हैं २४ । २५ इनको भेजिये जाय धृतराष्ट्रजी से सब वार्त्ता कहैं व जैसे २ दुर्य्योधन भीष्म से कहता है सब समझा दें २६ व जिस प्रकार धृतराष्ट्रजी से व रथियों में श्रेष्ठ द्रोणाचार्यजी से कहना है कहैं ॥ २७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्रुपदवाक्यन्नामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पाँचवाँ अध्याय।

दो० कहब पञ्चमाध्याय महँ, कृष्णचन्द्रजिमि बैन।
कह्यो दूत पठवन निमित, सुनहु सुनतही चैन ॥ १ ॥

श्रीभगवान् कृष्णचन्द्रजी राजा द्रुपद के वचन सुन बोले कि सोमक वंश के धुरन्धर राजाद्रुपद ने जो वचन कहा वह बहुतही उत्तम कहा क्योंकि अमित पराक्रमी राजा युधिष्ठिरजी के अर्थ की सिद्धि करनेवाला है १ व यह कार्य्य सुन्दर नीति की इच्छा किये हुए हम लोगों को सबसे प्रथम करना चाहिये क्योंकि इसके विपरीत जो पुरुष करै वह बड़ा अनारी हो २ व हम को कहो तो कुरुवंशियों व पाण्डवों से बराबर सम्बन्ध है व इसी से पाण्डवों कौरवों में हमारा बर्त्ताव भी बराबर है ३ अब हमलोग विवाह के लिये यहां बुलाये गये थे व आप भी इसी के लिये बुलाये गये थे, अब विवाह हो गया है अपने राजी प्रसन्न अपने २ घर को जायँगे ४ आप अवस्था व शास्त्र दोनों में हम लोगों से वृद्धतम हैं, इससे हम सब आप के शिष्य के समान हैं इसमें कुछ संशय नहीं ५ आप को धृतराष्ट्र निरन्तर बहुत मानते हैं, द्रोणाचार्य व कृपाचार्य के जानों सखाही हैं ६ इससे आप पाण्डवों के अर्थकारक सन्देश आजही भेजें जो आप सन्देश भेजेंगे उसमें हम सब लोगों को निश्चय है कि उत्तमही होगा ७ यदि कुरुराज धृतराष्ट्रजी बहुधा शान्ति करैं तो अच्छा है इन कौरवों, पाण्डवों में भायपन बना रहै नाश को न प्राप्त हों ८ कदाचित् मारे मोह व अहङ्कार के दुर्य्योधन इनसे मेल न करैं तो दूतों को भेज पीछे से हमें भी बुलाना ९ तब मन्दबुद्धि दुर्य्योधन मूढ़ अपने मन्त्रियों सहित जब अर्जुन क्रोध करेंगे नष्टभ्रष्ट हो समाप्त हो जायगा १० वैशम्पायनजी बोले कि जब कृष्णचन्द्रजी ने ऐसा कहा तो राजा विराट ने बड़ा सत्कारकर सैन्य व बान्धवसहित कृष्णचन्द्रजी को अपने यहां से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बिदा किया ११ जब कृष्णचन्द्रजी द्वारका को चले गये तो सब पाण्डवों ने व राजा विराट ने क्रोध कर सब संग्राम की तैयारी की १२ तदनन्तर अपने भाई बन्धुओं समेत आने के लिये राजा द्रुपद ने व विराट ने सब राजाओं को बुलाया १३ व पाण्डवों के वचन से तथा विराट व द्रुपद के सन्देश पर बड़े २ बलवान् राजालोग सब दिशों से आये १४ पाण्डवों के यहां बड़ी भारी सेना एकत्र हुई है यह सुन कौरवों ने भी बहुत से राजाओं को बुलाया १५ हे राजन्! कुरुवंशियों व पाण्डवों के कारण सब पृथ्वी सेना से भरगई, जहां देखो सब राजा ही राजा दिखाई देते थे १६ सब वीरों की चतुराङ्गिणी सेना इधर उधर से आय २ भरहुई जानों पर्वत वन सहित इस पृथ्वी को चलायही देगी ॥ १७ ॥

चौ० तब पाञ्चाल महीप बुलाई । वयोवृद्ध मतिवृद्ध सुहाई ॥
जौन स्वकीय पुरोहित रहई । पाण्डव हित कुरु ढिगाहि पठाई ॥१८

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि वासुदेववाक्यन्नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

छठवाँ अध्याय ।

दो० कहब छठे अध्यायमहँ, द्रुपदराज जिमि भाष ।
वचन सयुक्तिपुरोधमन, सुनहु सहित अभिलाष ॥ १ ॥

महाराज द्रुपदजी बोले कि, स्थावर जङ्गम सब भूतों में जिनके प्राण होता है वे श्रेष्ठ होते हैं व प्राणवालों में बुद्धिमान् बुद्धिमानों में मनुष्य श्रेष्ठ हैं व मनुष्यों में भी ब्राह्मण १ ब्राह्मणों में विद्यावान् विद्यावानों में भी सिद्धान्त जाननेवाले सिद्धान्त जाननेवालों में ग्रन्थकर्त्ता ग्रन्थबनानेवालों में भी ब्रह्मवादी श्रेष्ठ होते हैं २ सो आप सिद्धान्त जाननेवालों में प्रधान हैं हमारे विचार से यह आता है व कुल में भी आप विशेष हैं अवस्था व शास्त्र पढ़ने सुनने में भी ३ व बुद्धि में तो आप शुक्राचार्य्य व बृहस्पति के तुल्य हैं, इससे आपको विदित है

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दुर्य्योधन का जैसा चालचलन है ४ व कुन्ती के पुत्र युधिष्ठिरजी का जैसा चाल चलन है वह भी विदित है व धृतराष्ट्र के भी वृत्त विदित हैं व यह भी कि ये पाण्डव लोग जैसे शत्रुओं से छलेगये ५ विदुरजी ने धृतराष्ट्र को समझाया भी परन्तु वे अपने पुत्रही के अनुयायी रहे व शकुनी ने इन युधिष्ठिरजी को जानकर जुआ खेलने के लिये बुलाया था ६ युधिष्ठिरजी जुआ खेलना नहीं जानते व हम खेलने में चतुर हैं वह ठीकही है, क्योंकि ये बेचारे क्षत्रियों के वृत्त में टिके अपने सहज स्वभाव छल क्या जानें, ऐसे धर्मराजजी को छल से जुआ खेलाय जीतलिया ७ इससे वे लोग किसी प्रकार से भी अपने आप इनको राज्य न देंगे, इससे आप धृतराष्ट्र से धर्म्मयुक्त वचन कहते हुए उनके योधाओं के मन अवश्य लौटा देंगे व विदुरजी भी तुम्हारे वचनों के सहायक होंगे ८। ९ व भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्यादिकों के मतों में भेद उत्पन्न करादेंगे, जब मन्त्री व योधा सबों में भेद अर्थात् तोड़ फोड़ हो जायगा १० तो फिर दुर्य्योधन आदि उन मन्त्री आदिकों के इकट्ठा करने में लग जायँगे। उसी अवसर में पाण्डव लोग एकाग्र बुद्धि हो ११ सुखपूर्वक सेना एकत्र कर लेंगे व धन भी एकत्र कर लेंगे, जब उनके लोगों में भेद पर जायगा व तुम भी कार्य करने में विलम्ब कराते रहोगे तो १२ फिर वे यहां के समान सेना आदि न इकट्ठी कर पावेंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं, यह प्रयोजन यहां उतने समय में अच्छी तरह से होजायगा १३ व जो वहां बहुत दिनों तक रहोगे तो मेल हो जाने से धृतराष्ट्र भी तुम्हारे वचन को अच्छा समझने लगेंगे व प्रमाण मानेंगे, इससे आप धर्म्म-युक्त रहकर उन लोगों के सङ्ग धर्मसंयुक्त वार्त्ता करते हुए १४ व कृपालु हो पाण्डवों के क्लेश उन लोगों से कहते हुए व वृद्धलोगों से उनके पूर्व्वजों के किये हुए कुलधर्म्म कहते कहाते १५ उन लोगों के मनों में भय उत्पन्न करादोगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है व आप को

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जानों उनसे कुछ भय होही नहीं सक्की क्योंकि एक तो आप ब्राह्मण दूसरे सब शास्त्र पढ़े लिखे हो १६ व दूतकर्म्म में युक्त हो फिर बड़े बूढ़े हो इससे आप प्रातःकाल पुष्यनक्षत्र सहित विजयमुहूर्त्त में कौरवों के निकट युधिष्ठिरजी के कार्य्य के लियेजायँ १७ वैशम्पायनजी बोले कि, महाराज द्रुपदराज की ऐसी शिक्षा पाय समाचार जानने में बड़े चतुर पुरोहितजी हस्तिनापुर को गये ॥ १८ ॥

दो० नीतिनिपुण बुध शास्त्रमहँ, कोविद शिष्यसमेत ।
पुरहित पाण्डव हितकरन, गे कौरवन निकेत ॥ १ । १६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्रुपदवाक्यम्पुरोहितगमनन्नामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सातवाँ अध्याय ।

दो० कहब सप्तमाध्यायमहँ, अर्जुन जिमि हरिपास ।
गयहु द्वारकहि तासुमत, लै आये निजवास ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि, महाराज हस्तिनापुर को पुरोहित भेज राजाओं के पास पाण्डवों ने दूत भेजे १ अन्यत्र सबकहीं दूतों को भेज कुन्तीजी के पुत्र पुरुषों में बड़े श्रेष्ठ अर्जुनजी आप द्वारकापुरी को गये २ व जब वृष्णि अन्धक व भोजवंशियों सहित कृष्णचन्द्रजी व बलरामजी द्वारकापुरी को चलेगये तो ३ दुर्य्योधन ने गुप्तदूतों को भेज पाण्डवों के सब समाचार मँगा लिये जो वे लोग युद्ध की तैयारी कररहे थे ४ व जब सुनाकि कृष्णचन्द्रजी द्वारकाजी को चले गये, तो पवन के समान चलनेवाले घोड़ों पर सवार हो बड़ी भारी सेना ले दुर्य्योधन द्वारकापुरी को गये ५ व उसी दिन कुन्तीजी के पुत्र अर्जुनजी भी अतिरम्य द्वारकापुरी में बड़ी शीघ्रता के साथ पहुँचे ६ व दोनों पुरुष सिंहों ने जाय कृष्णचन्द्रजी को शयन करते हुए देखा ७ इसलिये दुर्य्योधन तो शिरहाने की ओर एक बड़ा सुन्दर आसन बिछा था उसपर बैठगये ८ तिसके पीछे अर्जुनजी वहां पहुँचे व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

श्रीकृष्णचन्द्रजी की बगल में हाथ जोर शिरझुकाय बैठगये ६ इतने में कृष्णचन्द्रजी जागे व नेत्र खोलतेही पहिले अर्जुनजी को देखा फिर उधर मुख किया तो दुर्य्योधन को देखा इसलिये दोनों जनों का यथावत् सत्कार व पूजाकर १० दोनों जनों के आने का प्रयोजन पूछा, तब पहिले हँसतेहीं से दुर्य्योधन कृष्णचन्द्रजी से बोले ११ कि इस हमारे व पाण्डवों के विग्रह में आप हमारे सहायक हो क्योंकि हम में व अर्जुन में आप की सख्य बराबर है १२ व सम्बन्ध भी जैसा अर्जुन से है वैसाही हमसे भी व हम आप के पास पहिले आये हैं १३ महात्माओं की यह रीति है कि उनके समीप जो प्रथम आता है उसको प्रथम भजते हैं फिर यह महात्माओं की रीति है आप तो सब महात्मा व सज्जनों में श्रेष्ठ हैं १४ व निरन्तर सज्जनों में हीं गिने जाते हैं इससे अपने सज्जनों के वृत्त का पालन करो १५ यह सुन कृष्णचन्द्रजी बोले कि हां आप हमारे यहां प्रथमहीं आये इसमें कुछ सन्देह नहीं परन्तु हे राजन्! हमने पहले अर्जुनही को देखा है १६ इसलिये तुम्हारे प्रथम आने से व अर्जुन को प्रथम देखने से हम दोनों जनों की सहायता करेंगे १७ बालकों का मनोरथ प्रथम पूर्ण करना चाहिये यह वेदवचन है इससे प्रथम अर्जुनही का मनोरथ पूर्ण करना चाहिये क्योंकि ये तुम से छोटे हैं १८ व हमारे तुल्य बलवान् व मोटे ताजे अर्ब्बुदों गोप हैं जिनका नारायण ऐसा नाम है वे सब संग्राम में बड़ा युद्ध करते हैं १९ वे लोग लड़ने में बड़ेही दुर्द्धर्ष हैं तुम दोनों में से एकजने की ओर लड़ते हुए वे नारायण होंगे व एक जनेकी ओर विना लड़ते हुए व अस्त्रशस्त्र धरे हुए खाली हाथ हम होंगे २० हे अर्जुन! इन हम दोनों में प्रथम तुम जिसको चाहो लेलो क्योंकि दुर्य्योधन से छोटे होने के कारण धर्म्म से तुम्हारी रोंक नहीं है ऐसे स्थान पर छोटाही प्रथम भाग लेता है २१ वैशम्पायनजी बोले कि जब श्रीकृष्णचन्द्रजी ने ऐसा कहा तो अर्जुनजी ने शस्त्रादि रहित

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

संग्राम में न लड़ते हुए श्रीकृष्णचन्द्रजी कोही अपनी ओर लिया २२ व शत्रुओं के नाशनेवाले नारायण जोकि अज अद्वैत हैं पर मनुष्यों में क्षत्रियों के मध्य में व देवता दानवों में भी उत्पन्न हैं २३ दुर्य्योधन ने वह सब नारायणरूपिणी राजाओं की सेना अपनी ओर ली उसमें दुर्य्योधन ने हज़ारों लाखों योद्धा पाये २४ व कृष्णचन्द्रजी को अस्त्र शस्त्र रहित जान परम आनन्द को प्राप्त हुए फिर सब वह सैन्य ले महाबली बलभद्रजी के स्थान को गये २५ व अपने यहां आने का सब हेतु उनसे कहा वह सुन बलदेवजी दुर्य्योधनजी से बोले २६ हे नरव्याघ्र ! जो हम ने विवाह में कहा था वह तुम को विदित होगा वही सब होगा २७ तुम्हारे लिये हमने श्रीकृष्णजी को बहुत दबाय-कर कहा कि हम लोगों से दुर्य्योधन तथा अर्जुन से समान सम्बन्ध है २८ परन्तु हमारा वचन उन्होंने नहीं अङ्गीकार किया व हम कृष्ण को छोड़ क्षणभर नहीं रहसकते २९ इससे न हम अर्जुनही के सहा-यक हैं न दुर्य्योधनही के वासुदेव को देख हम ने यही निश्चय कर लिया है ३० व तुम सब राजाओं से पूजित भारतवंश में उत्पन्न हुए हो जाव क्षत्रियों के धर्म्म से युद्धकरो ३१ वैशम्पायनजी बोले कि जब बलदेवजी ने ऐसा कहा तो उनको लपट छाती में मिलाय कृष्ण-चन्द्रजी को युद्ध करने से अलग जान दुर्य्योधन ने जाना कि बस अब हमारीही विजय होगी ३२ इसके पीछे दुर्य्योधन कृतवर्म्मा के पास गये उन्होंने एक अक्षौहिणी सेना उनको दी ३३ उस सेना को पाय दुर्य्योधन परम हर्षित हो व सुहृदों को हर्षित कराते हुए अपने स्थान को गये ३४ तिसके पीछे पीताम्बरधारी जगत् के उत्पन्न करनेवाले श्रीकृष्णचन्द्रजी दुर्योधन के चले जाने पर अर्जुनजी से बोले ३५ कि तुम ने क्या विचार विना लड़ते हुए भी हम को अपनी सहायता के लिये अङ्गीकार किया अर्जुनजी ने कहा कि हम जानते हैं कि आप उन सबों को मारने में समर्थ हैं व आप की कृपा से हम भी अकेले

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सबों के मार डारने में समर्थ हैं ३६ परन्तु आप लोक में कीर्त्तिमान् हैं इससे हमारा यश आप में जायगा व हम भी यश की चाहना करते हैं इसी से आपको हमने अङ्गीकार किया है ॥ ३७ ॥

दो० अब मम सारथि होहु तुम, यह है वाञ्छित मोर।
बहु दिन सों मम काम यह, पुरवहु सो चलि भोर ॥ १ । ३८ ॥
कह हरि पारथ बनब हम, तव सारथि न सँदेह।
यदपि कर्म यह निन्द्य पर, करब तुम्हारे नेह ॥ २ । ३९ ॥
इमि प्रसन्न अर्जुन सहित, कृष्णचन्द्र यदुवंस।
चलि पहुँचे ढिग धर्मसुत, उन लखि कीन प्रशंस ॥ ३ । ४० ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्व्वणि सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

आठवां अध्याय।

दो० कहब अष्टमाध्यायमहँ, जिमि लखि शल्य महीप।
दुर्योधन वश कीन्ह मग, पुनिगे धर्म समीप ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि, दूतों के वचन सुन मद्रदेश का राजा शल्य महारथी अपने पुत्रों को संग ले व बड़ी भारी सेना ले पाण्डवों के निकट चला १ व उसकी सेना दो २ कोस पर प्रति दिन टिकती हुई चली क्योंकि उस राजा के संग बड़ी भारी सेना थी २ व वह एक अक्षौहिणी सेना का महावीर्य पराक्रमी स्वामी था उसके शूर चित्र विचित्र कवच धारण किये विचित्रही उनके ध्वज व धनुष ३ सब विचित्र भूषण धारण किये विचित्रही सबके रथ व वाहन विचित्र ही माला पहिने वस्त्र भूषण भी विचित्रही धारण किये थे ४ व सब अपने २ देश के वेष बनाये भूषण भी अपने ही देश के पहिने ऐसे सैकड़ों हज़ारों शूरवीर क्षत्रियश्रेष्ठ उसकी सेना के पति थे ५ उसकी सेना जानों सब प्राणियों को व्यथित ही कराती हुई व पृथ्वी को कँपाती ही हुई धीरे २ टिकती हुई जहां पाण्डव लोग थे वहां

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को चली आती थी ६ उसी समय में दुर्योधन ने सुना कि महारथी महात्मा शल्यजी आते हैं इससे उनके समीप जाय बड़ी पूजा की ७ व उनकी सेवा के लिये रमणीय देशों में रत्नों से अच्छी तरह भूषित चित्र विचित्र सभा दुर्योधन ने बनवाई ८ उन सभाओं में राजों को बुलवाय उनसे नाना प्रकार के चित्र विचित्र क्रीड़ा के स्थान बनवाये व उन स्थानों में मांस व और भोजन करने पीने की वस्तु एकत्र करा दी ९ व मन के हर्ष बढ़ानेवाले विविध प्रकार के कुवां बनवाये तथा विविध प्रकार की वापियां भोजन बहुत प्रकार के मन्दिर नाना प्रकार के बनवा दिये १० राजा शल्य उन सभाओं को बड़ी दूर से देश २ में देखते हुए व टिकते हुए दुर्योधन के सेवकों से पूजित देवताओं के समान शोभित हुए ११ फिर आते २ एक दूसरी सभा में आये वह सभा देवताओं के ही स्थान के समान थी उसमें जितने पदार्थ दिखाई देते थे वे मनुष्यों के से बनाये नहीं थे किन्तु देवताओं के से १२ वहां पहुँच राजा शल्य ने अपना को अधिक समझा व इन्द्र को कम इससे बहुत प्रसन्न हो उन क्षत्रियश्रेष्ठ ने सेवकों से पूछा कि १३ युधिष्ठिरजी के किन पुरुषों ने यहां ऐसी सभा बनाई है उनको बुलाओ तो बनानेवालों को हम कुछ पारितोषिक दिया चाहते हैं १४ इस बात को कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरजी को भी चाहिये कि प्रसन्न करें तो हम इनको प्रसाद दें इस बात को सुन लोगों ने जाय दुर्योधन से सब समाचार कहा १५ व प्रसन्न हो शल्य अपना प्राण भी देने को तैयार हुआ कि जिसने ऐसी सभा बनवाई उसके संग अपने प्राण तक दे दूंगा तब गुप्त हो युधिष्ठिरजी का रूप बनाय अपने मातुल अर्थात् नकुल सहदेवजी के मामा शल्यजी के समीप आये १६ जब मद्रदेश के राजा ने उनको देखा व उनका सब यत्न जान मिल भेंट प्रसन्न हो उनसे कहा कि हमसे जो चाहो वह वर मांगो १७ यह सुन दुर्योधन बोले कि हे कल्याण ! आप सत्यवादी हो हमको यहीं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वरदान दें कि हमारी सब सेना के पति आप हों १८ राजा शल्य ने कहा अच्छा यह काम तो हमने अङ्गीकार किया अब बतावो और क्या करना चाहिये तब दुर्योधन ने बार २ कहा कि बस होचुका इतनाहीं कार्य करना है १६ शल्य बोला कि हे पुरुषश्रेष्ठ, दुर्योधन! अपने स्थान पर जाव हम शत्रुओं के नाशक युधिष्ठिरजी को देखने जायँगे २० व उनको देख बहुत शीघ्र तुम्हारे पास आ जायँगे परन्तु पुरुषों में श्रेष्ठ युधिष्ठिरजी को अवश्य देखना है २१ दुर्योधन बोले कि महाराज पाण्डवजी को देख शीघ्रही लौट आना वहांहीं न रहजाना क्योंकि हम अब आपही के अधीन हैं जो वचन आपने कहा है व हमने कहा है उसका स्मरण कीजिये २२ यह सुन राजा शल्य ने कहा कि तुम अपने राज्य को जाव हम बहुत शीघ्र आवैंगे तुम्हारा कल्याण हो यह कह शल्य व दुर्योधन दोनों परस्पर मिले भेंटे २३ व शल्य से पूछ दुर्योधन अपने स्थान पर चले आये व राजा शल्य दुर्योधन का वह धोखे का कर्म पाण्डवों से कहने को चले २४ जाते २ विराटजी के नगर के समीप पहुँच बाहर जहां सेना निवास था वहां उतरे व वहां सब पाण्डवों को शल्य ने देखा २५ व सब पाण्डवों के संग बैठ पाद्य अर्घ्य व सुन्दर वचन कि आप अच्छी तरह तो आये यह सब पाण्डवों की ओर से ग्रहण किया २६ तदनन्तर शत्रुओं के मारनेवाले राजा शल्य कुशलपूर्वक परम हर्ष से युधिष्ठिरजी को मिल २७ उसी प्रकार भीमसेन व अर्जुनजी से मिल भेंट अपने भानजे माद्रीजी के पुत्र नकुल सहदेव को मिल भेंट आसन पर बैठ युधिष्ठिर जी से बोले २८ हे कुरुनन्दन, राजशार्दूल! आपके यहां सब कुशल तो है बड़े भाग्य की बात है कि आप वनवास से छूटे २६ हे राजन्! अपने भाइयों व द्रौपदी के साथ इतने दिन वन में बिताये यह बड़ा दुष्कर कर्म किया ३० फिर उसमें भी जो एक वर्षतक अज्ञातवास आप लोगों ने किया वह बहुत ही दुष्कर किया फिर अब भी राज्य से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तो भ्रष्ट होकर दुःखी हो सुख कहां है ३१ अब दुर्योधनादिकों के कराये हुए इस बड़े भारी दुःख से शत्रुओं को मार ही कर सुख पावोगे ३२ हे महाराज ! लोक का सिद्धान्त आपको विदित है इसीसे लोभ का किया हुआ तुम्हारे कुछ नहीं है ३३ हे भारत ! पुराने राजर्षियों के मार्ग की इच्छा आप करें दान, तपस्या व सत्य में तत्पर रहें ३४ व क्षमा, इन्द्रियों का जीतना, सत्य बोलना, किसी भी जीव को न मारना ये सब काम करने से हे राजन् ! अद्भुतलोक आपको मिलेगा ३५ कोमल स्वभाव, दान देना, ब्राह्मण को ही देवता समझना, अतिदान में स्वभाव रखना, धर्म में परायण रहना इत्यादि धर्म जो लोक के साक्षी हैं सब आपको विदित हैं इसीसे आप इनकी रीति पर चलते हैं ३६ हे तात ! जगत् की सब गति आपको विदित है बड़े भाग्य की बात है कि आपके ऊपर ऐसा कष्ट परा उससे भी निवृत्त हो आये ३७ व यह भी बड़े भाग्य की बात है जो धर्मात्मा आपको भाइयों सहित देखते हैं कि बड़े दुष्कर कर्म से निवृत्त होकर धर्म ही करने में उद्यत हैं ३८ तिसके पीछे राजा शल्य ने मार्ग में अपना व दुर्योधन का समागम बताया व जिस प्रकार से उनको वरदान दिया वह भी सब सुनाया ३९ तो युधिष्ठिरजी बोले कि हे राजन् ! तुमने प्रसन्नमन हो जो दुर्योधन को वरदान दिया बड़ी ही पुण्य का कार्य किया ४० परन्तु एक काम हम भी आपसे कराया चाहते हैं वह करने के योग्य भी न हो तो आपको करना उचित है ४१ हे वीर ! दुर्योधन की अपेक्षा हमसे आपसे अधिक सम्बन्ध है इससे ममत्व भी अधिक जान आपसे कहते हैं आप आजकल बड़े भारी राजा होने के कारण युद्ध में श्रीकृष्णजी के समान हैं ४२ इससे जब कर्ण व अर्जुन का युद्ध होने लगे तो आप कर्ण के सारथि बनें ४३ व जो हमारा प्रिय चाहते हैं तो आप वहां अर्जुन की पालना करते रहें व कर्ण के तेज का नाश भी आप करते रहें क्योंकि उसके करने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

से हमारी जय होगी ४४ हे मातुल! यह कार्य करने के योग्य भी नहीं तौ भी आपको करना चाहिये ४५ यह सुन राजा शल्य बोले कि हे पाण्डव! तुम्हारा कल्याण हो जो प्रसन्नचित्त हो कर्ण के समागम में उनका तेज नाशने के लिये आपने हमको कहा ४६ तो हम अवश्य संग्राम में कर्ण के सारथि होंगे क्योंकि कर्ण हमको नित्य वासुदेव ही के समान मानते हैं ४७ उसका उपाय यह है कि युद्ध के समय हम उनको अहित व निन्द्य ही वचन कहा करेंगे जिसमें उनका तेज व अहङ्कार दोनों नष्ट होजायँगे व सत व सुखपूर्वक वह मार मिलेगा यह हम आपसे सत्य ही कहते हैं इसमें अन्तर न परेगा ४८ व इसके विशेष उस समय जो कुछ और भी हमारे करने के योग्य तुम्हारा प्रिय होगा हम करते रहेंगे ४९ व जो दुःख द्रौपदी सहित आपने द्यूत खेलने में पाया व कर्ण के कहे हुए कठोर वाक्य सहे ५० व जटासुर से बड़ा क्लेश पाया तथा कीचक से भी ये सब द्रौपदी को हुए जैसे दमयन्ती नल की रानी ने बड़े २ अशुभ सहे वैसे ही द्रौपदी को सहने परे ५१ हे वीर! अब सब दुःख सुखसमूह होजायँगे इस विषय में आप उदास न हों क्योंकि भाग्य बड़ी बलवती होती है चाहे जो करावे ॥ ५२ ॥

दो० दुःख महात्मा लहत हैं, निश्चय है महराज।
यहि जग देवहु दुखलहत, किमि औरनकर साज ॥ १ । ५३ ॥
सुनत सभार्य सुरेशहू, अति महातम परवोहु।
लहे दुःख बहु भूमिपति, यासों दुखी न होहु ॥ २ । ५४ ॥

का०न०दो० । दुःख महात्मा लहत हैं, महत युधिष्ठिर भूप।
शची सहित अमरेशज्यों, लहो दुःख अतिरूप ॥ १ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि शल्यवाक्यन्नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नववां अध्याय।

दो० कहब नवम अध्याय महँ, विश्वरूप वध शक्र।
जिमि करवायहु युक्ति सों, सुनि नरमुख कर वक्र॥ १॥

यह सुन युधिष्ठिरजी बोले कि इन्द्राणी सहित महात्मा इन्द्रजी ने कैसे घोर दुःख पाया यह हमारे जानने की इच्छा है १ राजा शल्य बोले हे राजन्! सुनिये पूर्व समय का एक पुराना इतिहास हैं जिसमें इन्द्राणी समेत इन्द्र के घोर दुःख पाने के समाचार प्रसिद्ध हैं २ एक महातपस्वी देवताओं में श्रेष्ठ त्वष्टा नाम प्रजापति हुए उन्होंने इन्द्र के मारने की इच्छा से एक पुत्र उत्पन्न किया उसके तीन शिर थे व विश्वरूप उसका नाम धराया ३ उन महातेजस्वी विश्वरूप ने इन्द्रजी का स्थान लेना चाहा व उनके सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि के समान घोर जो तीन मुख थे ४ उनमें से एक मुख से तो वेद पढ़ते थे व एक से मदिरा पान करते एक से सब दिशों को पीतेही से देखा करते थे ५ वे कोमल स्वभाव इन्द्रियों को दमन किये महातपस्वी धर्म व तपस्या करने में उद्यत हो अति दुष्कर व महातीव्र तपस्या करने लगे ६ उन अमित तेजस्वी विश्वरूपजी का तपोबल सत्य देख इन्द्र को बड़ा विषाद हुआ कि कहीं ये इन्द्र न होजायँ ७ अब कौन उपाय किया जाय जिसमें ये भोगविलास करने लगें व महातपस्या न करें क्योंकि जो ये बढ़ेंगे तो तीनों भुवनों को ग्रस लेंगे ८ यह बात बहुत प्रकार से विचार बुद्धिमान् तो थे ही उन्होंने विश्वरूप के लोभाने के लिये अप्सरों को आज्ञा दी ९ कि जिस प्रकार से ये विश्वरूप कामभोगों में लगें वह शीघ्रही करो अभी जाय उनको ललचावो विलम्ब न हो १० मोती हीरा आदि मणियों के हार धारण किये व नाना प्रकार के उत्तम वेष बनाय शृङ्गार कर अपने सब अङ्ग दिखावो ११ व हाव-भावादि जो तुम लोगों के कटाक्षादि हैं उनसे व अपनी सुन्दरता से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जाय लोभयुक्त उनको करो व हमारा भय मिटावो १२ हे स्त्रियो! हम अपने सेही अपना को बहुत घबराये हुए देखते हैं इससे यह महाघोर भय बहुत ही शीघ्र नाश करो १३ यह सुन अप्सरा बोलीं हे इन्द्रजी! उनके ललचवाने में हम लोग ऐसा यत्न करेंगी जिसमें उनसे कुछ भी आप भय न पावेंगे १४ यद्यपि वे तपस्वीजी जानों नेत्रों से भस्मही करते से वहां टिके हैं तथापि उनको लोभाने के लिये हम सब मिलकर जायँगी १५ व अपने वश में करने का यत्न करेंगी तथा आपका भय दूर करने में भी यत्न करेंगी इस प्रकार इन्द्रजी की आज्ञा पाय वे विश्वरूपजी के समीप गईं व वहां उन अप्सराओं ने विविध प्रकार के भावों से प्रलोभित किया १६ प्रथम जाय नाचने गाने व अपने अङ्गों की सुन्दरता दिखाने लगीं परन्तु उन महातपस्वी ने हर्षपूर्वक उनकी ओर देखाही नहीं १७ अपनी इन्द्रियों को वश में कर पूर्वदिशा के समुद्र के समान निश्चल बैठे रहे क्या करैं वे बेचारी बड़े २ यत्न कर जब थकगईं तो फिर इन्द्र के पास आईं १८ व हाथ जोड़ सबकी सब देवराजजी से बोलीं कि हे महाराज! वे ऐसे दुर्द्धर्ष हैं कि हम लोग उनको धैर्य से नहीं लासकीं १९ अब इसके पीछे आपको जो करना हो कीजिये इतना सुन अप्सराओं की तो बड़ाई कर बिदा किया २० व आप उनके मारने का उपाय विचारने लगे उस समय महाप्रतापी इन्द्रजी चुपचाप बैठे चिन्तवन करते रहे २१ इस तरह विचार यह निश्चय किया कि अब हम विश्वरूप के ऊपर वज्र चलावें बस ये मरजायँगे और कोई उपाय नहीं है २२ और शास्त्र में लिखा है कि आप चाहे बड़ाही बलवान् हो व शत्रु बहुत ही दुर्बल हो पर उसकी भी उपेक्षा न करनी चाहिये इससे मारही डारना ठीक है बस इन्द्र ने यही दृढ़ कर लिया २३ फिर अग्नि समान घोर रूप अतिभयङ्कर वज्र क्रोधकर विश्वरूप के ऊपर चलाया २४ व उसीके लगने से वज्र से भिन्न पर्वत के कंगूरे के समान विश्वरूप के शिर पृथ्वी पर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

गिर परे २५ वज्र से मरे हुए पर्वताकार उनको पृथ्वी पर परे देख उनके तेज से दीपित इन्द्र को कल्याण न मिला २६ क्योंकि वे महातेजस्वी वज्र से मारे भी गये तिस पर भी जीते ही से दिखाई देते थे व समर में परे हुए उनके शिर भी जीते ही से अद्भुत दिखाई देते इससे अति भयभीत इन्द्र उसी स्थान पर विचार करते हुए खड़े थे कि २७ उसी समय कन्धे पर कुल्हारी धरे एक बढ़ई वहां आया जहां कि वन में विश्वरूपजी मारे परे थे २८ उसे देख डरते हुए इन्द्र बड़ी शीघ्रता से उनसे बोले कि हमारा वचन मानो इनके शिर काट डारो २९ यह सुन वह बोला कि इनका बड़ा भारी कन्धा है इसके ऊपर चलाने से कुल्हारी टूटजायगी इसके सिवाय यह महात्माओं से निन्दित ब्राह्मण का मारना कर्म भी हम नहीं करसक्के ३० ऐसा सुन इन्द्र बोले कि तुम न डरो हमारा वचन करो हमारे प्रसाद से तुम्हारा शस्त्र वज्र के तुल्य होजायगा टूटेगा नहीं ३१ तब फिर वह बढ़ई बोला कि ऐसा घोर कर्म करते हुए आपको हम कौन समझें यह हम सुना चाहते हैं आप निश्चयपूर्वक कहिये ३२ इन्द्र बोले कि हम देवताओं के राजा इन्द्र हैं हमको तुम भी जानते होगे इससे जो हम कहते हैं करो इसमें कुछ विचार न करो ३३ यह सुन वह बढ़ई फिर बोला कि हे इन्द्र! इस क्रूर कर्म के करने से तुम क्यों नहीं लज्जित होते ऋषि के पुत्र इनको मार तुमको ब्रह्महत्या का भय क्या नहीं है ३४ इन्द्र बोले कि ब्रह्महत्या का भय क्यों नहीं है हम पवित्र होने के लिये पीछे से बड़ा दुश्चर धर्म करेंगे इसीसे इस महापराक्रमी शत्रु को हमने वज्र से मारा है ३५ परन्तु अब भी हम उद्विग्न हैं इससे बहुत डरते हैं जल्द इसके शिर काटडारो हम तुम्हारे ऊपर अनुग्रह करेंगे ३६ आज से यज्ञ में लोग पशु का शिर तुमको भाग देंगे यह हमने तुम्हारे ऊपर अनुग्रह किया अब हमारा यह काम शीघ्र ही करो ३७ शल्यजी युधिष्ठिरजी से बोले कि यह सुन इन्द्र के कहने से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

विश्वरूप के शिर उसने कुल्हारी से काट डारे ३८ जब वे शिर काटे गये तो उन तीनों शिरों से तीन प्रकार के पक्षी निकले एक कपिञ्जल दूसरे तित्तिर तीसरे कलबिंक अर्थात् गौरवा ३९ जिस मुख से विश्वरूपजी वेद पढ़ते व यज्ञ की औषध पीते, उस मुख से शीघ्रही कपिञ्जल नाम पक्षी निकले ४० व जिस मुख से वे सब दिशों को पीते ही से देखते थे उनके उस मुख से तित्तिर निकले ४१ व जिस मुख से वे मदिरा पान करते थे उनके उस मुख से कलबिंक व बाज निकले ४२ जब इस तरह विश्वरूपजी के शिर काटे गये तो इन्द्र विज्वर हुए व हर्षित हो स्वर्ग को चले गये व वह बढ़ई भी अपने घर को चला गया ४३ व शत्रु को मार इन्द्र ने अपना को कृतार्थ समझा वहां अपने पुत्र को इन्द्र से मारा हुआ सुन प्रजापति त्वष्टा ने क्रोध से नेत्र लाल कर ऐसे वचन कहे कि ४४ नित्य तपस्या करते हुए सहनशील इन्द्रियों को दमन किये व जीते हमारे पुत्र को विना अपराध इन्द्र ने मारा ४५ इस इन्द्र के मारने के लिये हम वृत्रासुर उत्पन्न करते हैं सब लोग हमारे वीर्य व तपस्या का फल देखें ४६ व वह दुष्टात्मा पापी इन्द्र भी देखे इतना कह आचमन कर तपस्वियों में महायशस्वी त्वष्टा क्रुद्ध हो ४७ अग्नि में आहुति दे अति घोर वृत्रासुर उत्पन्न कर ऐसा बोले कि हमारी तपस्या के प्रभाव से हे इन्द्र के शत्रो ! तुम बढ़ो ४८ ऐसा कहते ही सूर्य व अग्नि के समान तेजस्वी एक पुरुष स्वर्ग को आच्छादित कर काल समय के सूर्य के समान उदय हो बोला कि क्या आज्ञा होती है ४९ त्वष्टा ने कहा इन्द्र को मारो जैसेही ऐसी आज्ञा पाई कि वह बलवान् सीधे स्वर्ग को चला गया व वहां वृत्रासुर व इन्द्र का बड़ा भारी समर हुआ ५० क्योंकि दोनों इतना क्रुद्ध हुए थे जिसका कुछ ठिकाना नहीं तदनन्तर वृत्रासुर ने इन्द्र को पकड़ लिया ५१ व अपना मुँह फैलाय इन्द्र को मारे क्रोध के उठाय डार लिया तब इन्द्र के लील जाने पर देवता लोग व्याकुल हुए ५२ व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अपने पराक्रम से उन्होंने वृत्रासुर के नाशनेवाली जँभुवाई बनाई छोड़ी तब वृत्रासुर जँभुवाने लगा उसका मुँह फैल गया ५३ उसी मार्ग हो अपने अङ्ग सिकोर इन्द्र बाहर निकल आये उसी समय से प्राणियों को जँभुवाई आने लगी उसके पूर्व न थी ५४ इन्द्र को वृत्रासुर के मुख से निकले देख देवगण बहुत हर्षित हुए व इन्द्र वृत्रासुर का फिर बड़ा भारी युद्ध हुआ ५५ जब दोनों ने क्रोध कर बड़ा भारी युद्ध किया तो त्वष्टा के तेज के बल से महाबलवान् वृत्रासुर रण में बहुत बढ़ा ५६ जब उसको अत्यन्त बढ़ा देखा तो इन्द्र लौट खड़े हुए जाना कि हम इससे नहीं जीतसक्के जब इन्द्र लौट आये तो देवताओं ने बड़ा विषाद किया ५७ फिर इन्द्र को संग ले सबके सबोंने ऋषियों से सम्मति ली ॥ ५८ ॥

दो० काहकरै यह चिन्तना, मोहित ह्वै सुर कौन।
मन से पहुँचे विष्णुपहँ, वृत्रनाश लवलीन ॥ १ । ५९ ॥
मन्दर पर्वत निकट उन, स्तवन अरम्भ्योजाय।
अग्रगामि करि शक्र को, बहुविधि यत्न बनाय ॥ २ । ६० ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दशवां अध्याय।

दो० कहब दशम अध्यायमहँ, इन्द्र विजय सँग वृत्त।
ऋषिसुर सम्मति हरिनमन, सो जिमि भयहु सनृत्त ॥ १ ॥

इन्द्रजो देवताओं से बोले हे देवगण ! सब यह जगत् वृत्रासुर से व्याप्त ऐसा कुछ पदार्थ नहीं दिखाई देता जो उसके नाश के लिये हो १ हम प्रथम उससे लड़ने में समर्थ हुए थे परन्तु अब असमर्थ हैं कहो अब कैसे कल्याण हो क्योंकि वह तुमलोगों को बड़ा दुर्द्धर्ष है २ देखो वह बड़ातेजस्वी महात्मा व युद्ध में देवता मनुष्य सहित तीनों लोक ग्रसलेगा ३ इससे देवगण इस विषय में यह निश्चय कियाजाता है कि चलो श्रीविष्णु महात्मा के स्थान पर चलें ४ व उनसे सम्मत कर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इस दुष्टात्मा के वध का उपाय जानें ५ शल्यराज बोले कि ऐसा कह ऋषियों सहित सब देवतालोग शरणागतवत्सल महाबली श्रीविष्णु-भगवान् की शरण को गये ६ व वृत्रासुर के भय से पीड़ित वे लोग सब देवताओं के स्वामी विष्णुजी से बोले कि हे भगवन्! आगे तुमने तीनों लोक अपने विक्रमण से दबालिया ७ व अमृत ले देवों को पिलाया व रण में दैत्यों को मारा व महादैत्य बलि को बाँध इन्द्र को देवताओं का स्वामी बनाया ८ सब देवताओं के प्रभु आपही हो व यह संसार आपही में विस्तृत है व आप देव महादेव हैं व आपही के सब लोक नमस्कार करते हैं ९ हे देवोत्तम! इन्द्र सहित सब देवताओं की गति आप हो हे दैत्यसूदन! वृत्रासुर से यह सब जगत् व्याप्त है १० इतना सुन श्रीविष्णुभगवान् बोले आप लोगों का उत्तम हित अवश्य हम को करना है इससे ऐसा उपाय बतावैंगे जिसमें वह न बचेगा नाश ही हो जायगा ११ अब ऋषि देवता सब जने वहां जाव जहां वह विश्व-भर का रूप बनाये है उससे सम्मत करो फिर उसे जीत भी लोगे १२ हे देवताओ! हमारे तेज से देवराज ही की जय होगी क्योंकि हम अदृश्य हो इन्द्र के उत्तम आयुध में प्रवेश कर जायँगे इससे देवताओं, ऋषियों व गन्धर्वों को संग लेजाव वृत्रासुर का व इन्द्र का मिलाप करादो १३।१४ राजा शल्य बोले कि जब श्रीभगवान्जी ने ऐसा कहा तो सब देवगण व ऋषिगण इन्द्र को आगे कर चले १५ व जाते २ महापराक्रमी सब देवतालोग उसके समीप पहुँच तेज से प्रज्वलित दशोदिशों को तपाते हुए १६ व तीन लोकों को ग्रसते हुए सूर्य चन्द्रमा के समान प्रकाशित वृत्रासुर को इन्द्रादि देवों ने देखा १७ व ऋषि लोगों ने वृत्रासुर के समीप जाय कहा हे दुर्जय! तुम्हारे तेज से तीनों लोक व्याप्त हैं १८ परन्तु बड़ा भारी समय बीत गया तुम इन्द्र से नहीं जीत सके १९ इस तुम्हारी उनकी लड़ाई में देवता दैत्य मनुष्य सब पीड़ित होते हैं इससे अब तुम्हारी व इन्द्र की मैत्री हो जाय २०

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इस मैत्री में तुम सुख भी पावोगे व इन्द्रलोक भी पावोगे ऋषियों के वचन सुन महाबली वृत्रासुर २१ उन ऋषियों के प्रणाम कर विनयपूर्वक बोला कि आप लोग व सब गन्धर्व लोगों ने २२ जो कहा वह हमने सब सुना अब हमारा भी वचन सुनो भला हमारा व इन्द्र का मिलाप कैसे होगा २३ क्योंकि वे भी तेजस्वी ठहरे व हम भी फिर दो तेजस्वियों का कहीं मिलाप होता है २४ इतना सुन ऋषिलोग बोले कि एक बार भी सज्जनों की सङ्गति करनी चाहिये उसके करने से कल्याण हो जाता है इससे सत्पुरुष की सङ्गति का उल्लङ्घन न करना चाहिये बस यह सत्पुरुषों की ही सङ्गति है अवश्य कीजिए २५ व सज्जनों की सङ्गति दृढ़ व सत्य होती है जहां अर्थ होने में कष्ट हो वहां सज्जनों की सङ्गति ही से अर्थसिद्धि होती है सत्पुरुष का संग महाअर्थ के तुल्य होता है इससे धीर लोग सज्जनों की संगति नहीं छोड़ते २६ फिर इन्द्र तो सज्जनों में ही हैं व महात्माओं के निवास के स्थान हैं तथा सत्यवादी, अनिन्द्य, धर्मज्ञ व सूक्ष्म विषय के निश्चय जाननेवाले हैं २७ इससे इन्द्र के साथ तुम्हारी बहुत दिनों के लिये मैत्री होती है इससे हम लोगों के कहने में विश्वास करो इसके विपरीत अपनी बुद्धि न करो २८ राजा शल्य बोले कि महर्षियों के वचन सुन महातेजस्वी वृत्रासुर उन लोगों से बोला कि आप लोग हमारे अवश्य माननीय हैं क्योंकि तपस्वी हैं २९ पर हे देवताओ ! जो हम कहते हैं वह किया जाय तो जो महर्षियों ने हमसे कहा है वह हम अवश्य करें ॥ ३० ॥

दो० नहिं सूखे नहिं ओद से, नहिं शिल से नहिं काठ ।
शस्त्रअस्त्रसों नहिं निशा, दिन में नहिं यह पाठ ॥ १ । ३१ ॥
सुनहु इन्द्र अरु देवगण, मारि न पैहैं मोहिं ।
इमि भावत पुरुहूत सन, सख्यकहत हों तोहिं ॥ २ । ३२ ॥
ऋषिन कहा यह बात भलि, होय सन्धि तव तात ।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

यह सुनि प्रमुदित मन भयो, वृत्र कहत शुभ बात ॥ ३ । ३३ ॥
वृत्रनाश हृदि करि अमर, पति प्रमुदित बहुभाँति ।
तासु घातहित चिन्तवन, लगे करन गानि पाँति ॥ ४ । ३४ ॥

अब तब से इन्द्र वृत्रासुर के छिद्र निहारने लगे कि कौन सी उपाय से इसे मारना चाहिये एक दिन इन्द्र ने समुद्र के किनारे उस वृत्रासुर को देखा ३५ उस समय सन्ध्या होगई थी इससे बड़ा दारुण मुहूर्त था तिसके पीछे इन्द्र ने उसके वरदान की ओर दृष्टि की ३६ कि अब सन्ध्या होगई है न रात्रि है न दिन व वृत्रासुर भी अवश्यही बध करने के योग्य है क्योंकि हम सबों का वैरी है ३७ अब महाबलवान् व महाशरीरवान् वृत्रासुर को जो आज हम नहीं मार डारते तो कल्याण न होगा ३८ इस प्रकार चिन्तवन करते २ इन्द्र ने श्री विष्णुजी का स्मरण किया कि उसी समय समुद्र में एक पर्वताकार फेना बहता हुआ देखा ३९ कहा न यह सूखा है न गीला न कोई शस्त्र अस्त्र है इससे इसे वृत्रासुर के ऊपर फेंकें क्षणही भर में वह मर जावेगा ४० यह विचार वज्र व फेना साथही बहाय वृत्रासुर को इन्द्र ने मारा बस उसी फेने के भीतर पैठ श्रीविष्णुजी ने वृत्रासुर का नाश किया ४१ जब वृत्रासुर मारा गया तो सब दिशों में प्रकाश होगया पवन अच्छी तरह बहने लगे व प्रजा लोग बहुत हर्षित हुए ४२ इसके पीछे देवता, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, नाग व ऋषिलोग इन्द्र की स्तुति विविध प्रकार के स्तोत्रों से करने लगे ४३ जब बड़ी स्तुति की तो भगवान् ने सब को समझाया व शत्रु को मार इन्द्रजी ने सब देवतों सहित ४४ त्रिभुवन में श्रेष्ठ श्रीविष्णु भगवान् की बड़ी पूजा की तिसके पीछे जब वृत्रासुर मारा गया तो ४५ इन्द्र को झुठाई ने बड़ा तिरस्कार किया क्योंकि विश्वरूप के शिर कटवाने की ब्रह्महत्या से ४६ वे समुद्र में लुके थे फिर वृत्रासुर के मारने को निकल आये थे इससे फिर उसी पाप के मारे जाय समुद्र में मूर्च्छित हो गिरे कहीं पता खोजही नहीं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लगता ४७ वे केवल जल में परे सर्प समान लोटते थे इस प्रकार ब्रह्म-हत्या के भय से जब इन्द्र गुप्त रहे तो ४८ पृथ्वी पर का प्रकाश जाता रहा वृक्ष वन सब सूखे होगये नदियों के सोते बन्द होगये तड़ाग सब झूरे होगये ४९ व जल न बर्षने के कारण सब प्राणी इधर उधर घूमने मरने लगे देवता ऋषिलोग भी अत्यंत भयभीत हुए ५० व सब जगत् राजा न होने के कारण निरादर युक्त हो गया तब देवगण बहुत व्याकुल हो कहने लगे अब हम लोगों का राजा कौन हो ५१ इस प्रकार स्वर्ग में सब देव विना इन्द्र के व्याकुल हुए व बार २ कहने लगे कि हम लोगों का राजा बनने की इच्छा कोई नहीं करता ॥ ५२ ॥

इति श्रीमन्महाभारतेउद्योगपर्वणिदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

ग्यारहवां अध्याय।

दो० ग्यारहवें अध्याय महँ, नहुष भयो सुरराज ।
जिमि इन्द्राणी सन कह्यो, भोग हेतु यह साज ॥ १ ॥

राजा शल्य बोले कि जब देवताओं ने चाहा कि कोई हम लोगों का राजा हो तो सब ऋषियों ने कहा कि हे देव, यक्ष, किन्नर ! इन राजा नहुष को देवताओं के राज्य पर अभिषेक करो १ क्योंकि ये राजा बड़े तेजस्वी यशस्वी व धर्मात्मा हैं यह विचार राजा के समीप जाय देवतादिकों ने कहा २ कि आप हम लोगों के राजा हों तब देवताओं व ऋषियों से व पितरों से अपना हित चाहते हुए राजा बोले ३ कि हम दुर्बल हैं हमको आप लोगों को परिपालन करने की शक्ति नहीं है आप लोगों का राजा बलवान् होना चाहिये सो तो बल इन्द्र ही में है ४ तब सब देवता ऋष्यादि राजा से बोले कि आप हम लोगों के तपोबल से स्वर्ग में राजा हो पालन करो ५ क्योंकि हम लोगों को परस्पर अति घोर भय है इससे हे राजेन्द्र ! तुम स्वर्ग के राजा होवो ६ देवता, दानव, यक्ष, ऋषि, राक्षस, पितर, गन्धर्व,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भूत, व अन्य भी जो दृष्टिगोचर होते हैं ७ इन लोगों को देखते २ तुम तेज ग्रहण करोगे तो बलवान् होजावोगे इससे सदा धर्म पर चलते हुए ही हम लोगों के राजा आप हों ८ व ब्रह्मर्षियों देवों की रक्षा स्वर्ग में करें यह कह राजा नहुष को देवों ने स्वर्ग के राज्य पर अभिषेक कर दिया व वे सदा धर्मपूर्वक सब कर्म करते हुए सब लोगों के स्वामी हो गये ९ इस प्रकार अति दुर्लभ वरदान पाय स्वर्ग में राजा हो नित्य धर्मात्मा होकर फिर कामात्मा हो गये १० व सब देवताओं की फुलवारियों में नन्दनवन के उपवनों में हिमवान् पर्वत पर व कैलास पर व मन्दराचल व श्वेत पर्वत पर ११ सह्य, महेन्द्र, मलयाचल समुद्र व नदियों के तट पर अप्सराओं व देवकन्याओं के बीच में टिके हुए १२ नहुष देवराज बहुत तरह से क्रीड़ा करते हुए व बहुत प्रकार की दिव्य व सुनते ही से मन हरनेवाली कथा सुनते हुए १३ व विविध प्रकार के बाजा व मधुर स्वर सहित गान सुनते घूमने फिरनेलगे विश्वावसु नारदादि गन्धर्व तथा सब अप्सरा १४ व मूर्ति धारण किये सब ऋतु उनके सामने उपस्थित रहने लगे व शीतल, मन्द, सुगन्ध तीन प्रकार का मनोहरण शील पवन बहने लगा १५ इस प्रकार क्रीड़ा करते हुए महात्मा राजा नहुष की दृष्टि में कहीं इन्द्रजी की प्राणप्रिया इन्द्राणी पर गई १६ उनको देख उन दुष्टाधिराज ने सभासदों से कहा कि इन्द्र की रानी देवी हमारे पास क्यों नहीं आती १७ क्योंकि हम देवताओं के इन्द्र हैं तथा सब लोगों के स्वामी हैं इससे इन्द्राणी आज हमारे स्थान पर जरूर आवैं १८ यह वार्ता सुन उदास हो इन्द्राणीजी बृहस्पतिजी से बोलीं हे ब्रह्मन्! हम आपकी शरण में आई हैं नहुष से हमारी रक्षा कीजिये १९ आप हमको सब लक्षण संयुक्त कहते हो व यह भी कि तुम देवराज की अत्यन्त सौभाग्यवती प्राणप्रिया हो २० व सदा सौभाग्यवती बनी रहोगी विधवा कभी न होवोगी व पतिव्रता होने के कारण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तुम्हारे पति भी एक ही रहेगा ऐसा पूर्वसमय आपने कहा था अब अपनी वह वाणी सत्य कीजिये २१ आज तक आपका वचन कभी मिथ्या नहीं हुआ इससे हे द्विजसत्तम ! यह भी आपका वचन सत्य हो २२ ऐसी भय से चकित इन्द्राणीजी से बृहस्पतिजी बोले कि हमने जैसा तुमको कहा था तुम वैसी ही रहोगी यह निश्चय है २३ यहां आये हुए इन्द्रजी को शीघ्र ही देखोगी नहुष से न डरो यह हम सत्य ही कहते हैं २४ हम तुमको बहुत शीघ्र इन्द्र से मिला देंगे यह बात नहुष ने भी सुनी कि इन्द्राणी बृहस्पतिजी की शरण में गई हैं २५ इससे अङ्गिराजी के पुत्र बृहस्पतिजी के ऊपर उन्होंने बड़ा क्रोध किया ॥ २६ ॥

इतिश्रीमन्महाभारतेउद्योगपर्वणएकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

बारहवां अध्याय

दो० द्वादशवें अध्याय महँ, विष्णु वचन सो दैव ।
अश्वमेध करवायहु, आयहु शक्र तदैव ॥ १ ॥

राजा शल्य बोले कि नहुष को क्रोध किये देख ऋष्यादि देव अतिघोर दर्शन नहुष देवराज से बोले कि १ हे देवराज ! आप क्रोध न करें क्योंकि आपके क्रोध करने से देवता, गन्धर्व, दानव, किन्नर, नाग सहित सब जगत् नष्ट हो जायगा २ आप क्रोध मिटावें आप सदृश लोग कोप नहीं करते आप प्रसन्न हों इन्द्राणी तो पराई स्त्री है ३ इससे परदाराभिगमनरूप महापाप से अपना मन लौटाइये तुम्हारा कल्याण हो तुम देवराज हो प्रजाओं को धर्म से पालन करो ४ ऐसा कहे भी गये पर काम से मोहित नहुष ने देवादिकों का वचन न माना बरन इन्द्र के ऊपर क्रोध कर यह कहा कि ५ पूर्व समय में महायशस्विनी ऋषि की पत्नी अहल्या के सङ्ग जब इन्द्र ने उसके पति गौतमजी को विद्यमानता ही में भोग किया था तब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

आप लोगों ने क्यों नहीं रोंका ६ इसके सिवाय इन्द्र ने और भी क्रूर कर्म पूर्व काल में किये हैं जैसे विश्वरूप को मारना व वृत्रासुर से मैत्री कर छल से उसको मारना आदि फिर तब आप लोगों ने क्यों नहीं उनको रोंका ७ बस इन्द्राणी हमारे पास आवें इसी में उन का हित है व हे देवगण! तुम्हारा भी इसमें बड़ा हित होगा ८ देव-गण बोले हे सुरराज! जैसा तुम चाहते हो हम लोग इन्द्राणी को तुम्हारे पास लिवा लावेंगे अब यह क्रोध मिटाइये व प्रसन्न हूजिये ९ शल्य राजा बोले कि नहुष से ऐसा कह सब देवता व ऋषि लोग बृहस्पतिजी व इन्द्राणीजी से शुभ वचन कहने गये १० व बोले हे विप्रेन्द्र! हम लोग जानते हैं कि इन्द्राणी आपकी शरण में प्राप्त होकर आपके स्थान में हैं व आपने उनको अभय दान भी दिया है यह भी जानते हैं ११ परन्तु अब सब देवता, ऋषि व गन्धर्वादि आप की प्रार्थना करते हैं कि इन्द्राणी नहुष को आप दे दें १२ क्योंकि महाद्युति ये देवराज नहुष इन्द्र से विशेष हैं इससे इन्द्राणी इनको अपना पति बनावें १३ जब देवादिकों ने ऐसा कहा तो बेचारी इन्द्राणी रोदन करती हुई बृहस्पतिजी से यह वचन बोलीं १४ हे ब्रह्मन्! हम नहुष को पति बनाना नहीं चाहतीं इससे बड़े भारी भय से हमारी रक्षा कीजिये १५ बृहस्पतिजी बोले कि हे इन्द्राणी! हमारा यह निश्चय है कि हम किसी शरणागत को न त्यागें फिर धर्मज्ञा सत्यशीला तुमको तो त्यागही न करेंगे १६ हम ब्राह्मण हो अकार्य्य करना नहीं चाहते क्योंकि वेद के अनुसार चलते व सत्यही बोलने का हमारा स्वभाव है व धर्म्म की आज्ञा जानते हैं १७ हे देवताओ! तुम जाव हम यह कार्य्य न करेंगे क्योंकि इस विषय में ब्रह्माजी ने एक पुरानी गीत गाई है सुनो ॥ १८ ॥

हरिगीतिका ॥

भयभीत शरणागतहि जो नर, देत शत्रुहि जायकै।
नहिं जमत क्षितिपर तासु पावन, समयपर हरषायकै॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अरु समयपर नहिं जलद वर्षत, तासु हित मनलायकै ।
पुनि लहतरक्षकनहिं कबहुँ जब, चहत रक्षा आयकै १ । १९
अरु भीत व्याकुल नरहि जो नर, देत शत्रुहि धायकै ।
वह लहत निष्फल अन्न चेतन, रहित ह्वै अकुलायकै ॥
पुनि नष्टचित्त अवित्तसम ह्वै, गिरत स्वर्गहु सों सही ।
नहिं देवगणत्यहि दीन आहुति, लेत वह मनुहू कही २ । २०
भयभीत कहँ जो देत रिपुकहँ, ह्वै समर्थ बुलायकै ।
वह मरत त्यहि सन्तान असमय, सहित विस्मय धायकै ॥
त्यहि पितर वनवन फिरत मारे, कतहुं बसत न छायकै ।
पुरुहूतमुखसुरगण सकल त्यहि, हनत वज्र चलायकै ३ । २१

दो० यह जानत हम इन्द्र की, बधू न नहुषहि देव ।
लोकविदित सुरपतिप्रिया, शची इन्द्रही सेव ४ । २२ ॥
जो याको हित होय अरु, पुनि हित होय हमार ।
करहु देवगण सोइ शची, देवन कहत पुकार ॥ ५ । २३ ॥
सकल देव गन्धर्वयुत, गुरु सों वचन बनाय ।
कह्यो हमार सुनीति किमि, होय सुकहहु उपाय ॥ ६ । २४ ॥
गुरु कह देवी यह नहुष, ढिग कबहूं चलिजाय ।
हमनकेर अरु तासु हित, होय यही महँ भाय ॥ ७ । २५ ॥
बहुत विघ्न होइहि नहुष, कहंधैमारिहि काल ।
बलसंश्रय गर्वितमहा, बली न समझत हाल ॥ ८ । २६ ॥

राजा शल्य बोले कि जब बृहस्पतिजी ने ऐसा कहा तो सब देवता लोग प्रसन्न हो बोले कि आपने यह बहुत अच्छा कहा इसमें सब देवताओं का हित होगा २७ अच्छा है इन्द्राणीजी कभी आपही जाय उससे प्रार्थना करें यह विचार अग्न्यादिक सब देवता लोग २८ इन्द्राणी के पास जाय लोकभर का हितकारी वचन बोले हे इन्द्राणीजी ! स्थावर जङ्गम इस सब जगत् को तुम्हीं धारण किये हो व तुम पतिव्रता हो नहुष

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के पास निश्शङ्क चलीजाव २९ वह तुमको देख भोग करने की इच्छा कर उठेगा कि तुम्हारे पतिव्रत से तुरंत नष्ट होजायगा व इन्द्रजी अपने ऐश्वर्य को प्राप्त होंगे ३० इसप्रकार निश्चय कर कार्य सिद्ध होने के लिये इन्द्राणी लज्जासहित पापी नहुष के समीप गईं ३१ उनकी नई अवस्था सहित सुन्दर रूपवती देख काम के मारे व्याकुलचित्त दुष्टात्मा नहुष अति हर्षित हुआ ॥ ३२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

तेरहवां अध्याय।

दो० तेरहवें अध्याय महँ, जिमि सुरपति के हेत।
शची नहुषपहँ जाय हरि, भजि कै भईं सचेत ॥ १ ॥

राजा शल्य बोले कि इन्द्राणी को देख देवराज नहुष बोले कि हम तीनों लोकों के स्वामी हैं १ इससे हमको अपना पति बनाय सेवो जब नहुष ने ऐसा कहा तो पतिव्रता इन्द्राणी २ प्रचण्ड पवन के झिकोर से कँपते हुए केला के वृक्ष के समान कँपने लगीं व शिर से ब्रह्माजी को प्रणाम कर ३ घोर दर्शन नहुष नाम देवराज से बोलीं हे सुरेश्वर! हम तुमसे कुछ काल का अवकाश माँगा चाहती हैं ४ हम नहीं जानतीं कि इन्द्र किस गति को प्राप्त हुए व कहां गये, इसका निश्चय जान जब बनाय उनका पता न मिलै ५ तो हम आपके पास आवैं यह बात सत्य ही आपसे कहती हूँ जब इन्द्राणी ने ऐसा कहा तौ नहुष बहुत प्रसन्न हुए ६ व बोले हे सुश्रोणि! जैसा हमसे कहती हौ वैसाही हो जब इन्द्र की राह देखलेना उनका पता न लगे तभी हमारे पास आना परन्तु स्मरण बनारहै भूल न जाना ७ जब इसी रीति से इन्द्राणी नहुष से छूटीं तौ वहां से भागीं बृहस्पतिजी के स्थान पर पहुँचीं ८ व जो प्रतिज्ञाकर आईं सो सब निवेदन किया उनके वचन अच्छी तरह सुन अग्न्यादिक देवताओं ने इन्द्रजी के मिलने की बड़ी चिन्ता

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

की ९ व देवताओं के देव सबको उत्पन्न करानेवाले श्रीविष्णु भगवान्जी के समीप जाय वार्त्ता करने में बड़े चतुर देवगण उद्विग्न हो उन्हीं भगवान्जी से बोले १० हे देवेश ! देवगणों के ईश्वर इन्द्रजी तौ ब्रह्महत्या से अनादृत होगये हैं अब हमलोगों की गति आपही हैं क्योंकि हम सबों के पूर्वज हैं ११ व जगत् की रक्षाही के अर्थ विष्णुत्व को प्राप्त हुए हौ आपके वीर्य्य से वृत्रासुर मारा गया परन्तु ब्रह्महत्या ने इन्द्र को घेरलिया १२ इससे सुरगुणों में श्रेष्ठ इन्द्र के मोक्षका उपाय बताइये उन देवों के ऐसे वचन सुन श्रीविष्णु भगवान् बोले १३ कि इन्द्र हमारीही पूजा करैं हम उनको पवित्र करैंगे अब पुण्यदायक अश्वमेध यज्ञ कर पुरन्दर १४ फिर निर्भय हो देवताओं के इन्द्रत्व को पावैंगे व दुर्बुद्धि नहुष अपने कर्मों से ही नष्ट होजायगा १५ परन्तु हे देवताओ ! कुछ काल चुपा रहो बड़ी शीघ्रता न करो श्रीविष्णुजी की शुभ सत्य व अमृत समान मीठी वाणी सुन १६ जहाँ भय से डरते हुए इन्द्र थे उस देश को अपने अध्यापक बृहस्पतिजी व अन्य ऋषियों समेत गये १७ व वहां महात्मा इन्द्र के पवित्र होने के लिये ब्रह्महत्यानाशक अश्वमेधयज्ञ करने लगे १८ तौ इन्द्रने अपनी ब्रह्महत्या वृक्षों, नदियों, पर्वतों, पृथ्वी व स्त्रियों को बांट दी १९ इसतरह सब प्राणियोंको ब्रह्महत्या बांट पापात्मा भी इन्द्र आत्मज्ञानी हो आनन्दित होगये २० व आय अपनी पुरी में सब प्राणियोंका तेज नाशनेवाले व वरदान पाने से अतिदुस्सह नहुष को देवराज गद्दी पर बैठे देख कँपने लगे २१ व फिर इन्द्राणी के पति इन्द्रजी नष्ट होगये अदृश्य हो समय परखते हुए जहाँ तहाँ घूमने लगे २२ जब आय अवाय इन्द्र फिर गुप्त होगये तो इन्द्राणी मारे शोक के व्याकुल हो व दुखित हो हा इन्द्र ऐसा कह विलाप करने लगीं २३ ॥

दो० यदि दीन्ह्यों आहुति किह्यों, सन्तोष्यों गुरु देव ।
एक पतित्वरु सत्य म्वहिं, होय पुरन्दर सेव ॥ १ । २४ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तासों यहि शुभ रात्रि को, नमन करत करजोरि।
सिद्ध मनोरथ होय मम, मिटै शक्र की खोरि॥ २। २५॥
इमि जब निशा उपासना, प्रयत चित्त करि कीन।
निशा कीन देवी प्रकट, संशय हरण प्रवीन॥ ३। २६॥
जहाँ बसत सुरराज सो, देश मोहिं दिखलाव।
इमि देवी सन कहि शची, करि बहुभाँति बनाव॥ ४। २७।

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणीन्द्रविजयोनाम त्रयोदशोऽध्यायः॥ १३॥

चौदहवाँ अध्याय॥

दो० चौदहवें अध्याय महँ, जिमि देवी के साथ।
शची हिमाचल पार सर, महँ लखि शक्र सनाथ॥ १॥

राजा शल्य युधिष्ठिरजी से बोले कि जब इन्द्राणी ने ऐसी उपासना की तौ पतिव्रता व अतिरूपवती इन्द्राणी के समीप उपश्रुति नाम देवी आय खड़ी हुई तौ अवस्थारूप से सम्पन्न उन देवीजी को अपने समीप खड़ी देख १ हर्षित हो व पूजाकर इन्द्राणीजी उनसे बोलीं कि हमारे मन में तुमको जानने की इच्छा है बताओ तुम कौन हौ २ इतना सुन उपश्रुति बोलीं कि हे देवि, हे भामिनि! हमारा उपश्रुति नाम है तुम्हारे समीप आई हैं दर्शन तुम्हारे सत्य के कारण हमने दिया है ३ क्योंकि तुम पतिव्रता व यमनियम से युक्त हौ इससे वृत्रासुर के मारनेवाले इन्द्र को तुमको दिखादेंगी ४ हमारे पीछे २ शीघ्र चली आवो देवराज को देखोगी यह कह जब वे देवीजी चलीं तौ उनके पीछे २ इन्द्राणीजी भी चलीं ५ जाते २ देवी व इन्द्राणी देववन नांघती हुई व बहुत से पर्वतों को नांघ हिमाचल के उत्तर किनारे पर पहुँचीं ६ फिर आगे बढ़ीं तौ बहुत योजन विस्तृत समुद्र मिला उसके मध्य में नाना-प्रकार के वृक्षों से शोभित एक द्वीप मिला ७ उस द्वीप में नानाप्रकार के पक्षियों से सेवित सौ योजन का लम्बा व उतनाही चौड़ा एक

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तड़ाग दिखाई दिया ८ उसमें पांच रङ्ग के कमल हज़ारों फूल रहे थे व प्रत्येक पर भ्रमर बैठे गुञ्जार कररहे थे ९ उनमें एक कमल की नाल तोड़ भंसीड़ के डोरे में सूक्ष्मरूप धारण किये इन्द्र को बैठे देखा १० जब इन्द्र को सूक्ष्मरूप धारण किये उसके भीतर बैठे देखा तो उपश्रुति ने भी अपना सूक्ष्म ही रूप धारण कर लिया ११ व इन्द्राणी पूर्व्व समय के प्रसिद्ध इन्द्र के कर्मों से इन्द्र की स्तुति करने लगीं जब स्तुति बहुत की तब इन्द्र इन्द्राणी से बोले १२ तुम किस लिये यहां आई हो व हमको यहाँ जान कैसे पाया यह सुन उन्होंने नहुष के सब कर्म्म बताये १३ कि हे इन्द्र! वीर्य्य के मद से तीनों लोकों की इन्द्र पदवी पाय मारे अहङ्कार के वह दुष्टात्मा नहुष हमसे बोला १४ कि बैठो जब हम नहीं बैठीं तो उस क्रूर दुष्टात्मा ने हमसे प्रतिज्ञा कराली जो अब आप हमारी रक्षा नहीं करते तौ वह हमको अपनी वश में कर लेगा १५।

दो० यासों हम तव निकट को, गत आईं सुर राज।
अघी भयङ्कर नहुष को, मारिय होत अकाज॥१॥ १६॥
असुर दनुज सूदन निजहि, निजसों करहु प्रकास।
तेज लहहु सुर राज्य करु, आज्ञा वश सविलास २॥१७॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्व्वणीन्द्रविजये चतुर्दशोऽध्यायः॥ १४॥

पन्द्रहवां अध्याय॥

दो० पन्द्रहवें महँ कहब जिमि, इन्द्र शचिहि समुझाय।
छलन पठायहु नहुष पहँ, सोत्यहि छलि पुनिधाय॥ १॥
गुरुपहँ विनय सुनाय गइ, गुरुमख सुरपति हेत।
कीन अनल धरि रूप त्यहिं, खोज्यहु बहुत सचेत॥ २॥

राजा शल्य बोले कि जब इन्द्राणी ने ऐसा कहा तौ इन्द्र फिर शची से बोले कि विक्रम करने का यह समय नहीं है क्योंकि नहुष बड़ा भारी बलवान् है १ व उसको ऋषियों ने हव्यकव्य के भाग देदे बढ़ा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

रक्खा है इससे इस विषय में एक नीति कहते हैं उसको तुम करो २ परन्तु यह बात गुप्त ही रखना कहीं किसी से न कहना वह यह है कि एकान्त में नहुष के पास जाय कहो ३ कि हे जगत्पते ! हमारे यहां ऋषियों के ऊपर सवार हो आवो तौ हम प्रीति से तुम्हारी वश में हो जायँगी ४ जब इन्द्र ने ऐसा कहा तौ कमलनयना उनकी इन्द्राणी ऐसा ही करेंगी यह कह नहुष के समीप आईं ५ व नहुष उनको देख कुछ हँसकर बोले, भला तुम अच्छी तरह से तौ आईं तुम्हारा कौनसा काम करैं ६ मुझे अपने भक्त को भजौ हे मनस्विनि ! क्या चाहती हौ हे कल्याणि ! तुम्हारा जो कार्य्य हो हम करैंगे ७ हमारे विषय में कुछ लज्जा न करना विश्वास मान जो कहना हो सो कहौ हम सत्य २ शपथ करते हैं तुम्हारा वचन अवश्य करैंगे ८ इन्द्राणी बोलीं, हे महाराज ! जो समय आपने नियत किया है हम उसी को परखती हैं जैसे इन्द्र का पता न मिलै तौ तुम्हीं हमारे भर्त्ता हो जाव ९ व उस प्रतिज्ञा के सिवाय एक हमारा कार्य भी है उसको आप अपने चित्त में धारण करके कहैं कि हम तुम्हारा प्रिय करैंगे तौ हम आपसे कहैंगी १० वह वचन प्रेमयुक्त ही है बस जैसे आपने अङ्गीकार किया कि हम आपकी वश में हो गईं इन्द्र के घोड़े हाथी व रथ वाहन थे ११ परन्तु हे सुराधिप ! हम आपका अपूर्व वाहन चाहती हैं जो वाहन न विष्णु के हो न रुद्र के न असुरों के न राक्षसों के १२ वह वाहन यह है कि आपकी पालकी में सब ऋषि लोग ही लागैं व आपको ले चलैं बस वही वाहन हमको रुचता है १३ क्योंकि आप असुर व देवताओं के तुल्य होने के योग्य नहीं हैं क्योंकि जैसे ही आप किसी को देखना चाहैं देवतादि जो होय तौ उसका तेज आप धारण कर लेते हैं १४ व इसी से आपके सामने कोई पराक्रमी खड़ा नहीं हो सकता राजा शल्य बोले जब इन्द्राणी ने ऐसा कहा तो नहुष बहुत ही हर्षित हुए १५ व निन्दा रहित इन्द्राणी से नये इन्द्र बोले भी कि मने तौ

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अपूर्व ही वाहन वर्णन किया १६ अच्छा हम तौ तुम्हारी वश में हैं ही ऐसा ही करेंगे यह थोड़े पराक्रमी का काम नहीं है जो मुनियों को अपना वाहन बनावै १७ व हमको जो कहौ तौ हम तपस्वी व बलवान् व भूत वर्त्तमान भविष्य सबके स्वामी हैं हम क्रोध करें तौ संसार ही न रहै क्योंकि सब हमी में टिका है १८ जब हम क्रोध करैं तौ देवता, गन्धर्व, राक्षस, नाग, किन्नर, दानवादि सब लोक निवासी हमारे सामने नहीं समर्थ हो सके १६ जिसको नेत्र से देखते हैं हम उसका तेज हर लेते हैं इससे हे देवि! तुम्हारा वचन करेंगे इसमें कुछ संशय नहीं २० सप्तऋषि लोग व अन्य ब्रह्मर्षि लोग भी हमको अपने ऊपर चढ़ावैंगे हमारा माहात्म्य देखो तौ २१ इतना कह इन्द्राणी को तौ बिदा किया व नियम में टिके हुए ऋषियों को बुलाय २ अपनी पालकी नहुष उठवाने लगा २२ अब्रह्मण्य, बलवान्, मदबल से मतवाला, कामुक व दुष्टात्मा नहुष उस दिन ऋषियों को पकर २ पालकी में नहालिया २३ व नहुष से छूट इन्द्राणी बृहस्पतिजी के पास आय बोलीं कि नहुष ने जो प्रतिज्ञा हमारे सङ्ग की है उसके बहुतही कम दिन बाकी हैं २४ अब अपनी दासी हमारे ऊपर दयाकर इन्द्र को ढूँढ़िये बृहस्पतिजी ने कहा बहुत अच्छा हम ढूंढ़ेंगे २५ हे देवि! तुम दुष्टचित्त नहुष से न डरो यह बहुत दिन यहां न रहेगा यह नरों में अधम जायाही चाहता है २६ क्योंकि अधर्मज्ञ तौ है ही है महर्षियों को वाहन बनाने लगा है अवश्यही नष्ट होजायगा इसके सिवाय इस दुष्ट के नाशने के लिये हम यज्ञ भी करेंगे २७ व यज्ञ कर इन्द्र को भी बुलावैंगे तुम न डरौ तुम्हारा कल्याण हो यह कह बृहस्पतिजी ने अग्नि बार आहुति देने का प्रारम्भ किया २८ इस प्रकार महातेजस्वी बृहस्पतिजी ने जब आहुति दी तौ अग्नि के भीतर से वाणी हुई क्या चाहिये देवगुरु ने कहा इन्द्र को ढूँढ़लाइये २६ यह सुन भगवान् अग्निजी स्त्री का वेष धारणकर व अद्भुतरूप बनाय दर्शन दे उसी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

स्थान पर अन्तर्द्धान होगये ३० व जाय सब दिशों में व कोणों में पर्वतों पर व वनों में व सब पृथ्वी में अन्तरिक्ष अंगुल स्थान ढूंढ़ा क्योंकि मन के समान शीघ्र अपनी चाल उन्होंने करली थी ३१ एक निमेषही भर के अन्तर में आय अग्निजी बृहस्पतिजी से बोले हे बृहस्पतिजी ! हम इन्द्र को कहीं नहीं देखते ३२ अब केवल जल में ढूंढ़ना बाकी रहा है और सर्वत्र ढूंढ़ आये सो जल में जानों हम जाय ही नहीं सक्के वहां तौ हमारी पहुँच नहीं बताओ और आपका कौन काम करैं ३३ बृहस्पतिजी ने कहा बस अब जल में भी पैठकर ढूंढ़िये अग्नि बोले कि जल में तौ हम नहीं पैठ सक्के क्योंकि इसमें पैठने से तौ हमारा नाश ही होजायगा इसके लिये आपकी शरण में हैं तुम्हारा कल्याण हो क्षमा कीजिये ॥ ३४ ॥

दो० जल से पावक विप्र से, क्षत्रिय पथर से लोह।
होत तेज सबकहुँ चलत, जहँ से तहाँ न शोह ॥ १ । ३५ ॥

इति श्रीमन्महाभारतेउद्योगपर्वणीन्द्रविजयेपञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

सोलहवां अध्याय।

दो० सोरहवें महँ कहबजिमि, अग्नि विनय गुरु कीन्ह।
ह्वै प्रसन्न पावक शची, पतिहि लखायो चीन्ह ॥ १ ॥

इतना सुन बृहस्पतिजी बोले हे अग्निजी ! तुम सब देवताओं के मुख हौ क्योंकि हव्य तुम्हारे ही मुख से सबों को पहुँचती है व तुम सब प्राणियों के अन्तःकरण में गुप्त हौ साक्षी के समान विचरते हौ १ कवि लोग तुमको एक कहते हैं व फिर गार्हपत्य दक्षिणाग्नि व आहवनीय के भेद से तीन प्रकार का कहते हैं २ जब तुम इस जगत् को त्यागते हौ तौ यह तुरन्तही नष्ट होजाता है व तुम्हारे नमस्कार कर ब्राह्मण लोग अपनी स्त्री पुत्रों सहित अपने कर्मों से जीती हुई निरन्तर गति पाते हैं ३ हे अग्निजी ! तुम्हीं खीर पहुँचानेवाले हौ

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व तुम्हीं परम हव्य हो व बड़े २ यज्ञों में तुम्हारीही पूजा होती है ४ हे हव्यवाह! इन तीनों लोकों को बनाय प्रलयकाल में फिर सबको भस्म करते हौ इससे सब भुवनों की उत्पत्ति के कारण तुम्हीं हौ व तुम्हीं सब भुवनों के लीन होने के स्थान हौ ५ व पण्डित लोग बादर बिजली तुम्हीं को कहते हैं व तुमसे ज्वाला निकल सब प्राणियों को प्राप्त होती है ६ व तुम्हीं में सब जल टिके हैं व सब यह जगत् तुम्हीं में है इससे तीनों लोकों में ऐसा कुछ नहीं जो आपको विदित न हो ७ अपनी योनि में सब कोई पैठते हैं तुम भी निश्शङ्क हो जल में पैठौ हम तुमको सनातन ब्राह्मणों के मन्त्रों से बढ़ावैंगे ८ इस प्रकार जब अग्निजी की स्तुति हुई तौ उत्तम कवि भगवान् अग्निजी प्रसन्न हो बृहस्पतिजी से उत्तम वचन बोले ९ कि अच्छा अब तुमको इन्द्र दिखाई देंगे यह हम सत्य ही कहते हैं इतना कह जितना छोटी २ तलैयों से ले समुद्रपर्यंत जल है सबमें जाय ढूंढ़ा जब पता नहीं लगा तौ जाते २ वहां पहुँचे जिस सर में गुप्त हो इन्द्रजी रहते थे १० वहां भी कमलों के बीच में ढूंढ़ते २ एक भंसीड़ की नस के बीच में लुके हुए इन्द्र को अग्निजी ने देखा ११ व देखकर बड़ी शीघ्रता से आये बृहस्पतिजी से कहा कि एक अणुमात्र का शरीर धारण किये इन्द्र-कमल की नाली के सूत्र में बैठे हैं १२ यह सुन बृहस्पतिजी देवता गन्धर्वों को सङ्ग लेजाय उनके पुराने कर्मों से इन्द्र की स्तुति करने लगे १३ हे इन्द्र! महा दारुण असुर नमुचि को तुमने मारा व वैसेही घोर पराक्रमी शम्बरासुर तथा बलासुर को मारा १४ हे इन्द्र! बाढ़ो सब शत्रुओं को मारो व उठो देखो सब देवता ऋषि तुमको देखने आये हैं १५ हे महेन्द्र! दानवों को मार तुमने सदा लोकों की रक्षा की है व विष्णु के तेज से संयुक्त जल का फेना ले १६ तुमने पूर्वकाल में वृत्रासुर को मारा तुम सब प्राणियों में शरणागत वत्सल हौ व स्तुति करने के योग्य तुम्हीं हौ व तुम्हारे समान और कोई प्राणी नहीं है हे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इन्द्र! सब प्राणियों को तुम्हीं अपना में स्थापित कराते हौ व देवताओं की महिमा तुम्हीं ने की है १७ हे महेन्द्र! बलपावो व सब लोकों की रक्षा करौ जब ऐसी इन्द्र की स्तुति हुई तौ वे धीरे २ बढ़ने लगे १८ व थोड़ीही देर में अपना पूर्वकाल का शरीर धारणकर वे बड़े बलयुक्त होगये व आगे खड़े हुए गुरु बृहस्पतिजी से बोले १९ कि अब आप लोगों का कौन कार्य बाकी है महाकाय त्वष्टा व वृत्रासुर को तौ हमने मारही डारा था जोकि लोक भर नाश किये देते थे २० बृहस्पतिजी बोले कि मनुष्य राजा नहुष देवताओं ऋषियों के तेज से देवताओं का राज्य पाय हम लोग ऋषि देवताओं को बाधित करता है २१ इन्द्रजी बोले कि बताओ देवताओं की दुर्लभ राज्य नहुष ने कैसे पाया कौनसी उसने तपस्या की है व कैसा उसका वीर्य है २२ बृहस्पतिजी बोले हे इन्द्र! जब तुमने इन्द्रपद छोड़ दिया तौ भय के मारे देवताओं ने चाहा कि किसी को इन्द्र बनावैं तब देवता, पितर, गन्धर्व व ऋष्यादि सब एकत्र हो २३ जाय सबों ने नहुष से कहा कि तीनों भुवनों के रक्षक तुम हमारे इन्द्र बनो उनसे नहुष ने कहा हम इन्द्र नहीं होसक्के जो हमको अपने तेज से बढ़ावो तौ राजा हों २४ ऐसा कहने पर देवताओं के वीर्य व तेज से नहुष बढ़ देवादिकों का राजा हुआ परन्तु वह ऐसा दुष्टात्मा ठहरा कि तीनों लोकों का राज्य पाय अब ऋषियों से पालकी उठवाय सब लोक घूमने जाता है २५ परन्तु देखना तुम नहुष को कभी न देखना क्योंकि देखतेही वह प्राणियों का बल व तेज खींच अपना में कर लेता है इसी से सब देवता भी नहुष को नहीं देखते क्या करें गुप्त फिरते हैं २६ राजा शल्य बोले कि बृहस्पतिजी ऐसा कही रहे थे कि लोकपाल कुबेर व यमराज, चन्द्रमा, वरुण आये २७ व सब एकत्र हो इन्द्रजी से बोले कि बड़े हर्ष की बात है कि त्वष्टा के पुत्र वृत्रासुर को आपने मार डारा व यह बड़े ही भाग्य की बात है कि शत्रु को तो मार डारा पर अपने शरीर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

में कहीं घाव नहीं लगा २८ ऐसी बड़ाई सुन इन्द्रजी कुबेरादिकों से अच्छी तरह मिल इन सब लोकपालों से नहुष की बुद्धि में भेदडराने के लिये बोले २९ यह देवताओं का राजा नहुष बड़ा घोररूप है उसके मारने में आप लोग हमारी सहायता करैं वे लोग बोले कि हां नहुष तो बड़ा घोररूप है वह तो देखते ही तेज बल खींच लेता इससे हम लोग भी बहुत उससे डरते हैं ३० जो तुम नहुष राजा को पराजित करो तो हम लोग भी अपना २ भाग पावें इन्द्र ने कहा वरुण आप फिर जलपति हों व कुबेरजी तुमको भी हमने तुम्हारे अधिकार पर बैठाया ३१ अब देवगणों के सङ्ग अपना भाग ग्रहण करो घोरदृष्टि नहुष शत्रु को हम मार डारेंगे तब अग्निजी ने भी इन्द्र से कहा हमारा भी भाग लगाइये हम भी आपके सहाय होंगे ३२ इन्द्र ने कहा तुम्हारा भी भाग यज्ञ में होगा पर हमारे साझे में राजा शल्य बोले कि इस प्रकार चिन्तवनकर सब धनों व यक्षों के राजा कुबेरजी को बनाया ३३ व यमराज को पितरों का राजा तथा वरुणजी को जल का ऐसा विचार इन्द्र ने इन लोगों को इनका अधिकार फिर सौंप दिया ॥ ३४ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

सत्रहवां अध्याय।

दो० सत्रहवें महँ कहब जिमि, मुनि अगस्त्यसों शक्र।
नहुषहि सुन्यहु उरङ्ग ह्वै, भ्रष्टहोन गतिवक्र ॥ १ ॥

राजा शल्य बोले लोकपालों व देवताओं के सङ्ग बैठे इन्द्रजी नहुष के मारने का उपाय विचार रहे थे १ कि इतने में महातपस्वी अगस्त्यजी वहां आये व इन्द्र की बड़ाई करते हुए बोले कि बड़े भाग्य की बात है जो आप बढ़ते हैं २ विश्वरूप का विनाश ही किया था व वृत्रासुर का वध पर बड़े हर्ष की बात यह हुई जो नहुष देवराज्य से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नीचे गिराया गया ३ यह सुन इन्द्रजी बोले हे महर्षिजी! आपका अच्छा आगमन हुआ हम आपके दर्शन से बहुत प्रसन्न हुए अर्घ्य पाद्याचमनीय व सुन्दर वाणी हमसे लीजिये ४ राजा शल्य बोले कि, इस प्रकार पूजाकर सुखपूर्वक आसन पर बैठाये प्रहर्षित हो इन्द्रजी ब्राह्मणों में श्रेष्ठ अगस्त्यजी से बोले कि ५ हे भगवन्! हमारी यह सुनने की इच्छा है कि पापी नहुष स्वर्ग से कैसे भ्रष्ट हुआ ६ अगस्त्य जी बोले हे इन्द्र! यह प्रिय वचन सुनिये जैसे दुष्टात्मा, दुराचारी व बल के मारे महा अहङ्कारी राजा नहुष स्वर्ग से भ्रष्ट हुआ ७ पापी नहुष को कन्धों पर पालकी में चढ़ाये घूमते २ एक दिन हम महर्षि लोग व देवर्षि लोग भी थककर ८ नहुष से पूछने लगे हे जीतनेवालों में श्रेष्ठ! हम लोगों को एक संशय है कि जो मन्त्र ब्रह्माजीही ने गाइयों के प्रोक्षण करने के लिये मन्त्र बनाये हैं वे प्रमाणयुक्त हैं वा नहीं ९ यह सुन मूर्ख नहुष ने कहा उन मन्त्रों का प्रमाण नहीं है १० तब ऋषियों ने कहा अधर्म में तुम लगे हो धर्म कहां से पावो इन मन्त्रों का प्रमाण महर्षियों ने हमसे पूर्वही कह रक्खा है ११ अगस्त्य जी बोले हे इन्द्रजी! इस प्रकार ऋषियों के साथ विवाद करते हुए नहुष दुष्ट ने हमारे शिर में अपना लात छुवा दिया १२ बस उसी से उसका तेज हत हो गया व श्रीरहित हो गया तब मारे भय के भीत हुए उस दुष्ट से हमने कहा १३ जिससे सबसे पूर्वज परमेश्वर के बनाये हुए व ब्रह्मर्षियों के अनुष्ठान किये हुए मन्त्रों को तुम दूषते हो जो अदूष्य हैं व हमारे शिर में अपना पैर तुमने छुवा दिया १४ व जो कि ब्रह्मतुल्य ब्रह्मर्षियों को तुमने वाहन बनाया है १५ इन कर्मों से तुम पापी स्वर्ग से भ्रष्ट हो व पुण्यक्षीण हो पृथ्वी तल पर जाय परो १६ दशहज़ार वर्षतक सर्परूप धारण किये पृथ्वी पर विचरोगे फिर स्वर्ग में आवोगे १७ इस प्रकार वह दुरात्मा देवराज्य से भ्रष्ट हुआ बड़े भाग्य की बात है अब हम सब बाढ़ेंगे ब्राह्मणों का कण्टक दुष्ट हत

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होगया १८ अब स्वर्ग में चल तीनों लोकों की रक्षा कीजिये क्योंकि शत्रुओं को जीतही लिया इन्द्रियों को जीत व महर्षियों से स्तुति पाय सुखीही रहोगे तो रक्षा करते ही रहोगे १९ राजा शल्य बोले ॥

दो० देव महर्षि सहर्ष भे, पितर यक्ष गन्धर्व ।
भुजग निशाचर सब सुखी, नहुष भयो गतगर्व ॥ १ । २० ॥
देवसुताप्सरगण सहित, सरित शैल जल राशि ।
सब सन्तुष्ट भये तबहिं, नहुष सर्प क्षिति बाशि ॥ २ । २१ ॥
सब बोले मिलि बढ़हु नित, रिपुनाशन सुरराज ।
मारेहु नहुष अगस्त्यमुनि, कीन्ह बड़ो सुरकाज ॥ ३ ॥
बड़े भाग्य की बात यह, जो पापी है सर्प ।
परा रहै क्षिति पर फिरै, गयो तासु सब दर्प ॥ ४ । २२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणीन्द्रविजये सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अठारहवां अध्याय ।

दो० अष्टादशवें महँ कहब, जिमि सुरपति लहराज ।
बहुरि युधिष्ठिरसों सकल, कहिगे शल्य समाज ॥ १ ॥

राजा शल्य बोले कि उसके पीछे गन्धर्व व अप्सराओं ने इन्द्रजी की बड़ी स्तुति की व देवराज सब लक्षणसंयुक्त ऐरावत हाथी पर चढ़ १ महातेजस्वी अग्नि, ब्रह्मर्षि, बृहस्पति, यमराज, वरुण, धन के स्वामी कुबेरजी २ व अन्य सब देवताओं अप्सराओं गन्धर्वों सहित वृत्रासुर के मारनेवाले इन्द्रजी अपने स्वर्ग को गये ३ व अपनी इन्द्राणी के साथ परमानन्दित हो देवराज त्रिभुवन का पालन करने लगे ४ तिसके पीछे वहां अथर्ववेद के अधिकारी अङ्गिरा मुनि दिखाई दिये व उन्होंने अथर्ववेद के मन्त्रों से इन्द्र की पूजा की ५ उसके पीछे भगवान् इन्द्र ने बहुत हर्षित हो अङ्गिराजी को वरदान दिया ६ कि जिससे अङ्गिराजी ने हमारी पूजा अथर्ववेद के मन्त्रों से की है इससे इस अथर्ववेद के अधिकारी अङ्गिराजी हुए व इस वेद का अथर्वाङ्गिरस

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नाम हुआ व अङ्गिराजी आज से यज्ञ में भाग पाया करें ७ ऐसी रीति से अङ्गिराजी की पूजाकर देवराज ने उनको प्रसन्नतापूर्वक बिदा किया ८ फिर सब देवताओं व ऋषियों की पूजाकर अति हर्षित हो इन्द्रजी धर्म से प्रजाओं का पालन करने लगे ९ इस रीति से स्त्री सहित इन्द्र ने यह बड़ा दुःख पाया व शत्रुओं के मारने के लिये छिपकर जल के भीतर रहे भी १० इससे द्रौपदी व अपने महात्मा भाइयों समेत जो महावन में आपने क्लेश पाया उसका खेद न करें ११ जैसे वृत्रासुर को मार इन्द्रजी ने अपना राज्य पाया ऐसेही आप भी राज्य पावेंगे १२ देखो ब्राह्मणों का वैरी पापी दुराचारी नहुष अगस्त्यजी के शाप से दशहज़ार वर्ष के लिये नष्ट होगया १३ ऐसेही दुराचारी कर्ण दुर्योधनादि तुम्हारे शत्रु भी शीघ्र नष्ट होजायँगे १४ तब इन द्रौपदीजी के व अपने भाइयों के साथ समुद्र पर्यन्त इस पृथ्वी का राज्य आप भोग करेंगे १५ हे राजन् ! यह वेदतुल्य इन्द्र की विजय का उपाख्यान विजय की इच्छा किये हुए राजा को सेना की तैयारी के समय में सुनना चाहिये १६ हे जीतनेवालों में श्रेष्ठ ! इसी से आपको हमने यह इन्द्रविजय सुनाया है जिससे महात्मा लोग स्तुति करने से बढ़ते हैं १७ हे युधिष्ठिरजी ! दुर्योधन के अपराध से व भीमार्जुन के बल से सब महात्मा क्षत्रियों का अभाव होजायगा १८ यह इन्द्र की विजय का आख्यान जो पुरुष इन्द्रियों को अपने वश में कर पढ़ै वह पापरहित हो स्वर्ग जीत वहाँ यहाँ सुखी रहै १९ व उसको शत्रु से उत्पन्न भय कभी न हो न वह पुत्रहीन कभी हो व न कोई विपत्ति उसको कभी हो व बड़ी लम्बी आयुष उसकी हो सब कहीं वह जय पावे पराजय उसकी कभी न हो २० वैशम्पायनजी बोले कि, इस प्रकार शल्य राजा ने राजा युधिष्ठिर को बहुत समझाया तो उन्होंने शल्य की बड़ी पूजा की २१ व शल्य के वचन सुन कुन्तीजी के पुत्र युधिष्ठिरजी मद्रदेश के राजा शल्यजी से यह वचन बोले ॥ २२ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो० आप कर्ण के सारथी, अवशि होब न सँदेह ।
तहँते जो बध कर्णकर, अर्जुन विनय सनेह ॥ १ । २३ ॥
शल्य कहा जो कहत तुम, सो सब करब न शङ्क ।
और कार्य्य जो करि सकब, वहौ करब निहलङ्क ॥ २ । २४ ॥
इमि लहि सम्मत पाण्डवन, सैन्य सहित मद्रेश ।
गयहु सुयोधन पास सुनु, पारिक्षित सुनरेश ॥ ३ । २५ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणीन्द्रविजयो नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

उन्नीसवां अध्याय ।

दो० उन्निसवें महँ कहब जिमि, पाण्डव कौरव भूप ।
देश देश की सैन्य लहि, भये मुदित सुखरूप ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी जनमेजयजी से बोले कि सात्त्वतवंशियों का महारथ युयुधान वीर बड़ी भारी चतुरङ्गिणी सेना ले युधिष्ठिरजी के पास आया १ इस महापराक्रमी युयुधान अर्थात् सात्यकी की नाना देशों से सेना आई उसमें नाना प्रकार के आयुध धारण किये वीर सेना को शोभित करते थे २ ये २ आयुध वीरों के पास थे फरसा, धनवांसी, शूल, बरछी, मुद्गर, घरना, लाठी, फांशी, बालों से मूंठि बनी हुई तलवार ३ खड्ग धनुष व विविध प्रकार के बाण ये सब मलेदले चमाचम थे इनसे सेना शोभित होती थी ४ इन अस्त्रशस्त्रों से शोभित वह दल बादल सेना बिजली सहित बादल ही के समान शोभित हुई ५ यह ऐसी एक अक्षौहिणी सेना युधिष्ठिरजी की सेना में प्रवेश कर कैसी दिखाई दी जैसे समुद्र में कोई छोटी सी नदी जाय मिलै ६ इसी तरह एक अक्षौहिणी सेना ले महाबली चन्देली का राजा धृष्टकेतु अमित पराक्रमी पाण्डवों की सहाय को आया ७ व जरासन्ध का पुत्र बड़ा बलवान् जयत्सेन मगधदेश का राजा भी एक अक्षौहिणी सेना ले पाण्डवों के यहां आया ८ व ऐसे ही समुद्रतट निवासियों को सङ्ग

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लिये पांडीचरी का राजा बहुत योधों को सङ्गलिये युधिष्ठिरजी के पास आया ९ इस राजा की सेना उस सब सेना में सबसे अधिक देखने के योग्य थी १० उसी समय राजा द्रुपदजी की बड़ी धूमधामी सेना आई इसमें नानादेश के लोग थे व महारथी उनके पुत्र ही बड़े २ वीर थे ११ व ऐसे ही मत्स्यदेश का राजा विराट पर्वती सेना लिये पाण्डवों के समीप आया १२ इस तरह इधर उधर से महात्मा पाण्डवों के यहाँ सात अक्षौहिणी सेना आई इसमें सबके ध्वजादि चिह्न और २ प्रकार के थे १३ व सब सेनावाले कौरवों से लड़ने की इच्छा किये पाण्डवों को हर्षित कराते थे ऐसे ही दुर्योधनादिकों को हर्ष बढ़ाती हुई १४ पूर्व के समुद्र के किनारे के राजा भगदत्त ने एक अक्षौहिणी सेना दी इस राजा की सेना में चीनदेश व किरात देश के लोग इतना सुवर्ण धारण किये थे जिसके कारण वह सेना कठचम्पा के वन के समान शोभित होती थी १५ ऐसे ही भूरिश्रवा व शल्य राजा १६ एक २ अक्षौहिणी सेना ले ले दुर्योधन के पास आये व भोज, अन्धक, कुकुरवंशियों सहित कृतवर्मा १७ एक अक्षौहिणी ले दुर्य्योधन की सहायता को आया इस राजा की सेना में सब पुरुषसिंह वनमाला धारण किये थे १८ इससे यह सेना मतवाले हाथियों की क्रीड़ा से युक्त वन के समान शोभित होती थी ऐसे ही जयद्रथादि सिन्धु सौवीर देश के वासी १९ राजा लोग पर्वतों को कँपाते ही से आये इन लोगों की बड़ी भारी सेना ऐसी शोभित होती थी कि २० मानों पवन से उड़ाया हुआ बादल जैसे शोभित होता है व काम्बोजदेश का राजा सुदक्षिण २१ एक अक्षौहिणी ले आया इसकी सेना का समूह टीड़ियों के झुण्ड के समान शोभित होता था २२ वह दुर्योधन की सेना में आय गुप्त हो गया क्योंकि वहां भी तो बड़ी भारी सेना इकट्ठी थी ऐसे ही माहिष्मतीपुरी के रहनेवाला नील नाम राजा नील ही रङ्ग के आयुध लिये २३ व दक्षिणदेश के निवासियों को सङ्ग लिये आया व अवन्ती-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पुरी के दो राजा जो कि बड़े बलवान् व पराक्रमी थे बड़ी भारी २४ एक २ अक्षौहिणी अलग २ लेकर दुर्योधन के समीप आये व केकय देश के राजा पांच सगे भाई २५ दुर्योधन को हर्षित कराते हुए एक अक्षोहिणी लेकर आये २६ इस तरह जहाँ तहाँ के महात्मा राजाओं की तीन सेना और बन गईं हे भरतर्षभ! २७ इस तरह दुर्योधन के ग्यारह सेना हो गईं वे सब पाण्डवों से युद्ध करने को नाना प्रकार के ध्वजा सहित रथों से समाकुल थीं २८ ऐसा हुआ कि हस्तिनापुर में मुख्य २ सेना टिकने का भी अवकाश न मिला २६ इससे सब पञ्चनददेश व कुरु जाङ्गलदेश, रोहितवन, मरु देश ३० अहिच्छत्र प्रदेश, कालकूट व गङ्गाकूल, वारण, वाटधान, यमुनोत्तरी, पर्वत ३१ यह सब सब प्रकार के अन्नों से संयुक्त देश कुरुवंशियों की सेना से भर गया ३२ ऐसी सेना उस पुरोहित ने जाय देखी जिसे राजा द्रुपदजी ने दुर्योधनादिकों के समझाने को भेजा था ॥ ३३ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पुरोहितगमने एकोनविंशतितमोऽध्यायः ॥ १६ ॥

बीसवां अध्याय ।

दो० बिसवें महँ जिमि द्रुपदकर, जाय पुरोहित विप्र ।
कह्यो कौरवन सभा महँ, नीति कहब सब क्षिप्र ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि वह राजाद्रुपद का पुरोहित कौरवों की सभा में पहुँचा उसका बड़ा भारी सत्कार धृतराष्ट्र भीष्म व विदुरजी ने किया १ फिर उसने भी अपनी कुशल कह व कौरवों की कुशल पूछ सब सेनापतियों के बीच में बैठ सबों की ओर देख वचन कहा २ कि आप सब लोग राजाओं का सनातनधर्म जानते हैं इससे आप लोगों से उसका उत्तर लेने के लिये यद्यपि विदित है तौ भी हम कुछ कहेंगे ३ धृतराष्ट्र व पाण्डु एकही विचित्रवीर्य ही के पुत्र हैं इससे पिता के धन में दोनों का भाग समान है इसमें कुछ भी सन्देह नहीं ४ उनमें

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

धृतराष्ट्र के पुत्रों ने तो पितृ पितामहादिकों का धन पाया व पाण्डु के पुत्रों ने किसी तरह पितृ पितामहादिकों का धन न पाया ५ वह आप लोग जानतेही हैं कि धृतराष्ट्र के पुत्रों ने ऐसा धन का आच्छादन किया कि पाण्डुपुत्रों को कुछ भी न मिला ६ यहां तक कि उनके प्राणान्त होने के लिये भी अनेक उपाय किये गये परन्तु उनकी आयुष् बाकी थी इससे मारे न मरसके ७ फिर उन महात्माओं ने अपने बल से कुछ राज्य बढ़ाया वह शकुनी के साथ मिल धृतराष्ट्र के पुत्रों ने छल से जुआ ख्यलवाय छीन लिया ८ उसको भी कुछ नहीं कहते जो हुआ सो युक्तही हुआ फिर उस पर भी सन्तोष न हुआ उन बेचारे पाण्डवों को तेरह वर्ष के लिये वनवास दिया गया ९ फिर स्त्री सहित उन लोगों को सभा में अत्यन्त क्लेश दिये गये फिर वन में जानों नाना प्रकार के दारुण क्लेश उनको मिले १० फिर विराटनगर में उन महात्माओं ने ऐसे क्लेश पाये जैसे पापी लोग अन्ययोनि में उत्पन्न होकर पाते हैं व उनका स्मरण नहीं करते ११ परन्तु वे पाण्डुलोग उन सब यहां के किये कराये पापों को पीछे डार कुरुवंशियों से मिलाप ही चाहते हैं १२ इससे उन लोगों के वृत्त जान व दुर्योधन के भी जान सुहृद्र लोगों को चाहिये कि दुर्योधन को समुझादें १३ वे वीर कुरुओं के सङ्ग विग्रह नहीं करते यह चाहते हैं कि लोक का विनाश न हो व हम अपना राज्य पाय जायँ १४ व जो हेतु दुर्योधन का है कि वे लोग हमसे दुर्बल हैं इससे मिलाप चाहते हैं हम इनको जीत लेंगे यह हेतु आप लोगों को न मानना चाहिये क्योंकि वे लोग बड़े भारी बलवान् हैं दुर्बल किसी प्रकार से नहीं हैं १५ देखो सात अक्षौहिणी सेना युधिष्ठिरजी के यहां इकट्ठी हैं व सब कौरवों के सङ्ग लड़ने को तैयार हैं केवल महाराज धर्मपुत्र की आज्ञाही की राह देखते हैं १६ इनके सिवाय और पुरुषसिंह हैं जो हज़ारों अक्षौहिणियों के समान एक २ हैं जैसे सात्यकी, भीमसेन, नकुल व सहदेव १७ व इधर भी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ग्यारह अक्षौहिणी सेना इकट्ठी हैं व उधर बहुरूपी महाबाहु अर्जुनजी हैं १८ व जैसे अर्जुनजी सब सेनाओं से पृथक् हैं वैसाही महादीप्तिमान् भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी भी हैं १६ फिर सेना का बहुत होना व अर्जुन का विक्रम तथा कृष्णचन्द्रजी की बुद्धिमत्ता जान ऐसा कौन मनुष्य है जो उनसे युद्ध करै ॥ २० ॥

का० न० रो० बुद्धि समय विचारि तुमको, होय दीबे जौन ।
नहीं काल बिताइये अब, वेगि दीजै तौन ॥ १ ॥

दो० धर्म समय अनुसार जो, देबे होय सो देहु ।
काल बितावहु जानि वृथा, मानि मोरि शिष लेहु ॥ १ । २१ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पुरोहितवाक्यन्नामविंशतितमोऽध्यायः ॥ २० ॥

इक्कीसवां अध्याय ।

दो० इक्कीसवें अध्याय महँ, भीष्म कर्ण धृतराष्ट्र ।
उत्तर दीन पुरोहितहि, देन चहा नहिं राष्ट्र ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि, पुरोहित के ऐसे वचन सुन काल के अनुसार पूजाकर महातेजस्वी व बुद्धि अवस्था दोनों से वृद्ध भीष्मपितामहजी बोले १ बड़े भाग्य की बात है कि कृष्णचन्द्र सहित सब पाण्डव कुशलपूर्वक हैं बड़े भाग्य की बात है कि उन लोगों को सहायक भी मिले हैं व बड़े भाग्य की बात है कि वे अपने धर्म ही में रत हैं २ व बड़े भाग्य की बात है जो वे लोग कौरवों से मिलापही चाहते हैं व बड़े भाग्य की बात है जो पाण्डव लोग अपने भाई कौरवों के साथ युद्ध नहीं किया चाहते ३ आपने सत्यही कहा यह ऐसाही है इसमें कुछ सन्देह नहीं परन्तु जो आपने अतितीच्ण वाक्य कहा वह ब्राह्मण तैसेही कहा यह भी हमारे विचार में आता है ४ इसमें भी संशय नहीं पाण्डव लोगों को यहां व वन में भी क्लेश मिला व धर्म से उन लोगों ने अपने पितृ पितामहों का सब धन भी नहीं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पाया इसमें भी सन्देह नहीं ५ व अर्जुन अस्त्रविद्या में कुशल बलवान् व महारथी हैं युद्ध में उनको कौन सहसकेगा यह भी ठीक है ६ क्योंकि चाहे साक्षात् इन्द्र भी आवैं तौ भी न खड़े होसकें फिर अन्य धनुर्द्धारियों की क्या गणना हम तो जानते हैं कि वे तीनों लोकों के जीतने में समर्थ हैं ७ भीष्मजी के ऐसा कहते ही कि उनका निरादर कर दुर्योधन की ओर देख बड़ी ढिठाई से मारे क्रोध के कर्ण ऐसा बोले ८ हे ब्राह्मणदेव ! पाण्डवों के पक्ष की जो बातैं तुमने कहीं उनको लोक में ऐसा कोई प्राणी नहीं जो न जानता हो फिर बार २ उन बातों के कहने की कौन आवश्यकता है ९ हां दुर्योधन की ओर से शकुनी ने जुआं खेलने में अगाड़ी युधिष्ठिर को जीत लिया था उसमें वन जाने की प्रतिज्ञा होगई थी इससे वे वन को चले गये १० व उस तेरह वर्ष के बिताने के समय की राह परखते थे इससे उन्होंने अपने पितृ पितामहों का राज्य नहीं लेना चाहा पर वह समय तौ अब भी नहीं बीता केवल मत्स्यदेश के राजा व पाञ्चाल देश के राजा द्रुपद के बल पर मूर्खों के समान राज्य लिया चाहते हैं ११ सो हे विद्वन् ! भय से तौ दुर्योधन आधा क्या चौथाई भी राज्य न देंगे व धर्म से तौ सम्पूर्ण पृथ्वी शत्रु को भी देदें १२ जो वे लोग अपने पितृ पितामहादिकों का राज्य फिर लेना चाहते हैं तो अब से फिर तेरह वर्षतक जाय वन में बसें क्योंकि अब की प्रतिज्ञा नहीं पूर्ण हुई थी कि उनका पता मिल गया था १३ फिर चले आवैं निर्भय हो दुर्योधन के समीप बैठें मूर्खता से केवल अधार्मिकी बुद्धि न करें १४ नहीं जो धर्म छोड़ वे पाण्डव लोग युद्धही करने की इच्छा करते हैं तौ इन सब कौरवों के सामने आय हमारे वचन का स्मरण करैंगे १५ इतना सुन फिर भीष्मजी बोले कि कर्ण तुम्हारे इस वचन से क्या है अर्जुन का वह कर्म स्मरण करो जो कि अकेले ही उन्होंने हम तुम सब छः महारथों को विराट नगर में जीत लिया १६ व उसी समय बहुत

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लोगों को जीतते हुए उनका कर्म तुमने देखा है इससे जैसा ये ब्राह्मण देव कहते हैं जो हम लोग वैसा न करेंगे तो निश्चय है कि समर में अर्जुन के मारे हुए पृथ्वी पर परे धूर फांकेंगे १७ वैशम्पायनजी बोले कि जब भीष्मजी ने ऐसा कहा तौ धृतराष्ट्रजी उनकी बड़ी बड़ाई कर व प्रार्थना कर व कर्ण को बहुत फटकार ऐसा बोले १८ कि शन्तनुजी के पुत्र भीष्मजी ने जो कहा है वह हमारे हितकी बात है व पाण्डवों के तथा सब जगत् के हितकी है ॥ १९ ॥

दो० सञ्जय को बुलवाय हम, अब पाण्डवन समीप ।
पठैदेव वे जानिहैं, सकल बात कुलदीप ॥ १ । २० ॥
इमि कहि सञ्जय कहँ सभा, मांझ बुलाय बहोरि ।
आदर करि पाण्डवनपहँ, जान कह्यो कर जोरि ॥ २ । २१ ॥

क० न० रो० बहुतभर्त्सनकर्णको करि, कहै ऐसे बैन ।
मन्त्र करि सञ्जय पठावहु, पार्थ पै मतिऐन ॥
सभा में बुलवाय सञ्जय, को लयो तब भूप ।
बहुत आदर सहित बोले, वचन उचित अनूप ॥ १ । २२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकविंशतितमोऽध्यायः ॥ २१ ॥

बाइसवां अध्याय ।

दो० बाइसवें महँ कहब जिमि, सञ्जय को समझाय ।
पठयहु नृप धृतराष्ट्रहू, पाण्डव ढिग अकुलाय ॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी सञ्जयजी से बोले हे सञ्जय ! सब कहते हैं कि पाण्डव लोग दुःख सह अब आये हैं, इससे वहां जाय उनके समाचार जानौ युधिष्ठिरजी से ऐसा कह उनका आदर करना कि बड़े भाग्य की बात है जो आप सन्नद्ध हो स्थान को प्राप्त हुए १ व सबसे कहना कि हम सब बहुत अच्छी तरह हैं क्योंकि वे लोग कष्टसहित वास के योग्य भी न थे तथापि वनवास कर आये तौ भी वे निष्कपट व उपकारीही

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हम लोगों की ओर बने हैं व शान्ति रखते हैं २ हे सञ्जय ! हमने कहीं कोई भी पाण्डवों की कभी मिथ्यावृत्ति नहीं देखी व उन लोगों ने अपने वीर्य से जो धन लक्ष्मी पाया सो सब हमको आय दे दिया ३ हम पार्थों को परखते ही रहे पर उन लोगों में कोई ऐसा एक भी दोष न पाया जिससे उनकी निन्दा करैं वे सदा धर्म के अर्थ व धनके अर्थ काम करते हैं व सुख के लिये तथा पुत्रादि प्रिय के लिये धर्म नहीं छोड़ते व न कामों को रोंकते ४ व पार्थ लोग घाम, जाड़ा, भूख, प्यास, नींद, अरसई, क्रोध, हर्ष व प्रमाद इनको धारणा व बुद्धि से तिरस्कार कर धर्म के अर्थ उपाय करते हैं ५ वे लोग समय पर मित्रों को धन दे देते हैं व बहुत दिन एकत्र रहने से मैत्री नहीं मिटा देते यथोचित मान व अर्थ मित्रों का करते हैं उनका वैरी राजा अजमीढ़ के पक्ष में कोई नहीं है ६ हां पापी विषम बुद्धि दुर्योधन व क्षुद्रस्वभाव कर्ण इन दोनों को छोड़ क्योंकि ये दोनों सुखरहित प्रिय व महात्मा इन लोगों का क्रोध व्यर्थ बढ़ाया करते हैं ७ व कार्य के आरम्भ में वीर्य करनेवाला फिर चाहे कार्य हो वा न हो सदा सुख चाहनेवाला यह दुर्योधन पाण्डवों के जीते जो उनके भाग का हरलेना योग्य मानता है यह इसकी मूर्खता है ८ जिस युधिष्ठिर के अनुयायी अर्जुन, श्रीकृष्णचन्द्र, भीमसेन, सात्यकी, नकुल, सहदेव व सञ्जयादि हैं इससे युद्ध होने से प्रथम ही उनका भाग दे देना अच्छा है ९ क्योंकि अकेले एक अर्जुनही रथ पर चढ़ गाण्डीव धन्वा ले पृथ्वी भर को भगादेवैं व वैसेही वरन् उनसे भी अधिक तीनों लोकों के स्वामी महात्मा जीत लेने के स्वभाववाले श्रीकृष्णचन्द्रजी हैं जिनके सामने कोई भी ढिठाई नहीं करसक्ता १० व जो श्रीकृष्णचन्द्रजी मेघ समान शब्द करते हुए बाणसमूहों को पाँखियों के समान जल्द चलाते हुए केवल वरदानही माँगने के योग्य हैं नहीं लड़ने के भला उनके सामने युद्ध करने को कौन मनुष्य खड़ा होगा हाथ जोर वरदान भले माँगले ११ देखौ अकेले अर्जुन उत्तर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कुरुदेश व उनके उधर की उत्तर दिशा रथ पर चढ़ जीत आये व उनका धन हरलाये व दक्षिण समुद्र के तटपर द्राविड़ देश के रहनेवालों को भी अपना अनुयायी कर लिया १२ व जिन अर्जुन ने गाण्डीव धन्वा ले खाण्डव वन में इन्द्र सहित सब देवगणों को जीत लिया वह वन अग्नि को दे दिया इससे पाण्डवों का कितना यश मान हुआ १३ व गदाधारियों में आजकल भीमसेन के तुल्य दूसरा कोई नहीं व हाथियों को लड़ानेवाला भी उनके समान कोई नहीं व रथ पर भी चढ़ने में अर्जुन से न्यून इनको कोई नहीं कहते व बाहों से तौ उनके दससहस्र हाथियों का बल है १४ व अच्छी तरह युद्धविद्या सिखे वैर करना जानते वे भगवान् बड़े सदा असहनशील बड़े बलवान् हैं जिनको युद्ध में साक्षात् इन्द्र भी न जीतसके ऐसे भीमसेन क्रोध करने पर तौ सब हमारे सम्बन्धी दुर्योधनादि को भस्म कर डारैंगे १५ फिर उनमें किसको कहैं किसको न कहैं सुन्दर चित्तवाले बलवान् शीघ्र हाथ चलानेवाले अर्जुन से धनुर्विद्या अच्छी तरह सिखे हुए नकुल व सहदेव शत्रुओं में एक को भी न बाकी राखैंगे जैसे बाजपक्षी उड़ते हुए पक्षियों में किसी को बाकी नहीं छोड़ते १६ व जो हमारे यह बलवान् भीष्म द्रोणादि सैन्य सत्य २ है इसको भी पाण्डवों के सामने हम तुच्छ समझते हैं इसका भी किया कुछ न होगा व उन पाण्डवों के मध्य में धृष्टद्युम्न एक बड़ा भारी वेगवान् योधा वर्त्तमान है १७ हमने सुना है कि वह अपने मन्त्रियों समेत, पाण्डवों के अर्थ आया है फिर जिसके धृष्टद्युम्न ऐसा वृष्णिसिंह अग्रणी हैं ऐसे युधिष्ठिरजी की कौन सहसकेगा १८ व यह भी हमने सुना है कि विराटराजा युधिष्ठिरजी के साथ रात्रि दिन बैठता उठता खेलता था इससे उनका सखा होगया है व अपने पुत्र सहित युधिष्ठिरजी का भक्त है १९ व पांच भाई केकय देश के राजा हैं उनको सब रथियों ने रोंक रक्खा है इससे वे लोग केकयदेशवालों से राज्य लेने की इच्छा से पाण्डवों के अनुयायी हैं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कि ये लोग हमारा राज्य हमको दिला देंगे २० व हम सुनते हैं कि वीर २ राजा जितने हैं सब पाण्डवों के अर्थ आये हैं वे सब शूर वीर बड़ी भक्ति से व प्रीति से युधिष्ठिरजी की सेवा में हैं २१ व सब पर्वती राजा अन्य कठिन स्थानों के रहनेवाले राजा व और जो पृथ्वी में बड़े २ कुलीन वृद्ध हैं व म्लेच्छ भी नाना प्रकार के वीर्य आयुध सहित पाण्डवों के अर्थ आये व वहां टिके हैं २२ व पाण्डुदेश का राजा जो समर में इन्द्र ही के तुल्य है वह बहुत से युद्धविशारद योधों को सङ्ग ले पाण्डवों के अर्थ आया है यह भी महात्मा लोक में बड़ा भारी वीर है व उसके समान वीर्य तेज किसी में नहीं है २३ व जिसने द्रोणाचार्य, अर्जुन, श्रीकृष्णचन्द्र, कृपाचार्य, भीष्मपितामहजी से अस्त्रविद्या सीखी है व जिसको लोग प्रद्युम्न के समान कहते हैं वह सात्यकी भी पाण्डवों के अर्थ आया है व टिका है २४ व चेदि करुषादि देशों के राजा भी सब उपायों से तैयार हो २ पाण्डवों के अर्थ आये हैं उन चेदिदेश के राजाओं में सूर्य समान तपते हुए राज्यलक्ष्मी से शोभित देदीप्यमान २५ समर में और किसी के रोंकने के योग्य नहीं पृथ्वी में सब धनुर्द्धरों में श्रेष्ठ ऐसे चेदिराज शिशुपाल को क्षत्रियों का उत्साह मिटाय जबरदस्ती २६ पाण्डवों का यश व मान बढ़ाते हुए जिन श्रीकृष्णचन्द्रजी ने त्रिशूल चलाय मार डारा जिनका मान सब करुष चेदि आदि देशों के राजा मानते हैं २७ उन कृष्णचन्द्र की ओर शिशुपाल को छोंड़ कौन राजा दौड़ता और तो सिंह के सामने छोटे मृगों के ही समान थे २८ सो वह भी इनको देख दौरा तो सही परन्तु कृष्णजी के मारने से निर्जीव हो पृथ्वी पर पवन के वेग से उखड़े हुए कठचम्पा के वृक्ष के समान गिर सोरहा २९ हे सञ्जय! जबसे दूतोंने आय पाण्डवों के समाचार हमसे कहे हैं तब से हम कृष्णचन्द्र के कर्मों का स्मरण करते हैं पर शान्ति को नहीं प्राप्त होते ३० जिन पाण्डवों के अग्रणी वृष्णिसिंह श्रीकृष्णजी हैं उनको और कोई शत्रु नहीं सह

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सक्ता फिर जब से सुना कि अर्जुन रथी व कृष्णचन्द्र सारथी होंगे तब से हमारा हृदय काँपता है कि एक अर्जुनही के सामने जाना कठिन था फिर ये दोनों महापुरुष एकही रथ पर रहैंगे कौन सम्मुख होगा ३१ कदाचित् मन्दबुद्धि यह हमारा पुत्र दुर्योधन संग्राम में उन दोनों के सम्मुख न जाय तौ चाहै कल्याण पावै नहीं तौ वे दोनों पुरुष कौरवों को भस्म कर देंगे जैसे इन्द्र विष्णु दैत्यों की सेना भस्म कर देते हैं ३२ हमारे मत से अर्जुन इन्द्र समान हैं व कृष्णचन्द्र जानों सनातन पुरुष हैं व कुन्ती के पुत्र युधिष्ठिर जानों धर्माराम लज्जावान् व अतिशीघ्र कार्य करनेवाले हैं ३३ दुर्योधन ने युधिष्ठिरजी को छल लिया नहीं तौ वे जो क्रोध करते तौ सब धृतराष्ट्र के पक्षवालों को भस्म कर देते हम वैसा अर्जुन से, कृष्णचन्द्रजी से, भीमसेन, नकुल व सहदेव से नहीं डरते ३४ जैसा क्रोध किये हुए राजा युधिष्ठिर के क्रोधसे डरते हैं क्योंकि वे महा-तपस्वी ब्रह्मचर्ययुक्त हैं उनके मन का संकल्प सिद्ध हो जाता है ३५ सो हम उनका क्रोध जानते हैं यहां बैठे २ स्मरण कर भयभीत होरहे हैं लड़ने भिरने को कौन कहै इससे रथ पर चढ़ शीघ्रही राजा द्रुपद की जहां सेना टिकी है वहाँ जाव ३६ जातेही युधिष्ठिरजी से कुशल पूछना व जब वे प्रसन्न हों तो फिर २ पूछना व महाभाग वीर्यवानों में उदार जनार्दन भगवान् के बनाय समीप जाय कुशल पूछना ३७ सब से कुशल हमारी जबानी पूछना व कहना कि धृतराष्ट्र पाण्डवों से शान्ति चाहते हैं हे सूत ! युधिष्ठिरजी कृष्णचन्द्रजी के किसी वचन का निषेध नहीं करते बरन सब उन्हीं का कहा करते हैं ३८ व पाण्डवों को श्रीकृष्णचन्द्रजी अपने समान प्रिय हैं क्योंकि वे महाविद्वान् नित्य पाण्डवों की कुशल ही में युक्त रहते हैं ॥ ३९ ॥

हरिगीतिका ॥

आये हुए सब पाण्डवन सन, वचन मोर सुनायकै ।
सब कुशल पूंछेहु सञ्जयनसन, हरिहि बहुत मनायकै ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अरु मत्स्य भूप विराट सात्यकि, सन कह्यहु समुझायकै।
पुनि पांच सुत जो द्रुपदतनया, के तिन्हैं दुलरायकै॥ १॥
वहँ जाय जो जो समय योग्य, बुझाय सोइ बनाय कै।
अरुपाण्डवन हित होय जामहँ, कह्यहु बहुत बुझाय कै॥
वहँ बात बहुत विचारि भाष्यहु, सुनत युद्ध बढ़ै नहीं।
वहँ राजसदस संभारि सञ्जय, कटुवचन न कढ़ै कहीं॥२।४०॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्वाविंशतितमोध्यायः॥ २२॥

तेइसवां अध्याय।

दो० तेइसवें अध्याय महँ, कह्यो युधिष्ठिर भूप।
जिमि सञ्जयसों सकल दुख, कहवै प्रति अनुरूप॥ १॥

वैशम्पायनजी बोले कि, राजा धृतराष्ट्रजी के ऐसे वचन सुन सञ्जय पाण्डवों के देखने को विराटनगर के समीप के उपप्लव्यनाम स्थान को गये १ व वहां पहुँच कुन्तीजी के पुत्र राजा युधिष्ठिरजी के समीप जाय प्रणाम कर प्रथम सञ्जय २ गवलाण के पुत्र हर्षित हो युधिष्ठिरजी से कहने लगे कि हे राजन्! बड़े भाग्य की बात है जो आपको रोग रहित देखते हैं व सहायवान् देखते हैं मानों इन्द्रही के समान विद्यमान देखते यह और भी बड़े भाग्य की बात है ३ आपकी कुशल बुद्धिमान् व वृद्ध अम्बिका के पुत्र राजा धृतराष्ट्रजी ने पूछी है कि पाण्डवों में श्रेष्ठ आप व भीमसेन, अर्जुन व नकुल, सहदेव कुशल तौ हैं ४ व हे राजन्! जिसमें आप कल्याण की इच्छा से इच्छित कामों की इच्छा करते हौ वे मनस्विनी सत्यव्रता वीरों की पत्नी राजपुत्री द्रौपदीजी अपने पांचो पुत्रों सहित कुशल तौ हैं ५ यह सुन युधिष्ठिरजी बोले हे सञ्जयजी! अच्छी तरह तौ तुम्हारा आगमन हुआ तुम्हारे दर्शन से हम लोग बहुत प्रसन्न हुए तुम्हारी कुशल चाहते हैं हम तौ अपने छोटे भाइयों सहित बहुत आनन्द हैं ६ हे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

विद्वन्, सूत ! बहुत दिनों के पीछे कुरुवंशियों में वृद्ध राजा धृतराष्ट्रजी की यह कुशल सुन जानों हमने आज राजा को ही देखा ऐसा मानते हैं यह बात जैसेही तुमको देखा वैसेहा प्रीति के योग से जानपरी ७ भला वृद्धावस्था को प्राप्त बड़े मनस्वी बड़े बुद्धिमान् सर्वधर्मयुक्त पितामह भीष्मजी कुशल तौ हैं व उनकी वृत्ति हम लोगों में पूर्वही कीसी है ८ भला अपने पुत्रों सहित महात्मा विचित्रवीर्यजी के पुत्र राजा धृतराष्ट्रजी तौ कुशलपूर्वक हैं व बड़े भारी विद्वान् महाराज वाल्हिकजी तौ कुशली हैं ९ हे तात ! सोमदत्तकुशली हैं व भूरिश्रवा व सत्यप्रतिज्ञ शल कुशली हैं अपने पुत्र सहित द्रोणाचार्य व कृपाचार्य ये विप्र सब बड़े धनुर्द्धर अरोग तौ हैं १० व सब पृथ्वी पर के धनुर्द्धारियों में मुख्य महाप्राज्ञ सब शास्त्रों के जाननेवाले व भूतल में सब वीरों में प्रधान ये लोग कुरुवंशियों का कल्याण तौ चाहते हैं ११ जिन कुरुवंशियों के बीच में ये सब धनुर्द्धारी रहते हैं उनसे ये लोग मान तौ पाते हैं क्योंकि उनमें तौ एक धर्मशील बड़े धनुर्द्धर दर्शनीय रूप अश्वत्थामाजी हैं वै विना मान कैसे रहते १२ हे तात ! महाप्राज्ञ राजकुमार वेश्या के पुत्र युयुत्सुजी तौ अच्छे हैं व जिसका आज्ञाकारी मन्दबुद्धि दुर्योधन है वह मन्त्री कर्ण कुशली हैं क्या १३ व सब घर की वृद्ध स्त्रियां धृतराष्ट्रादिकों की माता लोग व दासों की स्त्रियां जो भोजन बनातीहैं पतोहैं, पुत्र, भानजे, बहिनें, कन्या, पुत्र ये सब निष्कपट तौ रहते हैं १४ हे तात ! भला राजा पूर्ववत् ब्राह्मणों का स्नेह तौ यथोचित करते हैं भला ब्राह्मणों को जो हमने ग्रामादि दिये थे दुर्योधन उनको लिये तौ नहीं लेता वे लोग बराबर पाये तौ जाते हैं १५ भला अपने पुत्रों सहित राजा धृतराष्ट्र ब्राह्मणों के निरादर से डरते हैं व दाता को स्वर्ग में पहुँचाने के लिये मार्ग्गरूप ब्राह्मणों की जीविका के हरने से तौ डरते हैं वा नहीं १६ क्योंकि यह ब्राह्मणों की जीविका का पालन परलोक में प्रकाश करने के लिये बड़ी भारी मसाल है व यहां यश करता है

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कदाचित् वे मन्द ब्राह्मणों की जीविका का नाश करेंगे तौ सब कौरवों का नाश होजायगा १७ भला अपने पुत्रों सहित राजा धृतराष्ट्रजी मन्त्री दीवान आदि अमात्य वर्गों की जीविका तौ बराबर दिये जाते हैं व वे लोग शत्रुओं से मिलकर तौ अपनी जीविका नहीं किया चाहते कि यहां सुहृद् बने रहते होयँ व काम वैरियों की मति से करते होयँ ऐसा तौ नहीं है १८ हे तात ! भला कौरवलोग हम पाण्डव लोगों का कुछ पाप तो आपस में नहीं कहते व अश्वत्थामा द्रोणाचार्य व कृपाचार्य ये ब्राह्मणलोग जोकि बड़े वीर हैं वे लोग तौ कुछ हम लोगों में पाप तौ नहीं कहते १९ भला कभी सहित पुत्र धृतराष्ट्रजी के पास आय कौरवलोग कहते हैं कि अब शान्त रहौ भला कहीं चोरादि दुष्टों को एकत्र बैठे देख संग्राम में से शत्रुओं को भगानेवाले अर्जुन के कर्मों का स्मरण करते हैं २० भला कभी धनुष की खींची हुई पनच पर चढ़े हुए फिर गाण्डीव से छूटे हुए मेघसमान गर्जते सीधे चले जाते हुए अर्जुन के बाणों को स्मरण करते हैं २१ क्योंकि इस पृथ्वी में अर्जुन के समान व अधिक योद्धा हमने नहीं देखा जिसके हाथ से एक ही बार के चलाने से बड़ी तीक्ष्ण पैनी सपक्षबाणों की साठ धारा निकलती हैं २२ भला गदा हाथ में लिये शत्रुओं को कँपवाते बड़े वेगवान् भीमसेन को बहुत घासयुक्त स्थानों में इधर उधर दौरते हुए मतवाले हाथी के समान सेना में फिरते हुए कभी कौरव लोग स्मरण करते हैं या नहीं २३ भला जिन्होंने आये हुए कलिङ्ग देश के राजादिकों को समर में बायें हाथ से बाण चलाय २ जीत लिया दहिने से नहीं ऐसे सहदेव का स्मरण कभी कौरव करते हैं या नहीं २४ हे सञ्जय ! तुम्हारे सामने ही एक समय त्रिगर्त्त देशवाले सीदियों के जीतने को नकुल को पश्चिम दिशा में भेजा था इन्होंने जीत वह दिशा हमारे वश में करदी इनको कभी वे लोग स्मरण करते हैं या नहीं २५ जब दुष्टमन्त्रियों की सम्मति से दुर्योधनादि घोषयात्रा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को द्वैत वन होकर जाते थे वहीं शत्रुओं के वश में पर गये थे इससे महाअनादर हुआ था तब अर्जुन ने व भीमसेन ने जाय छुड़ाया २६ उस समय अर्जुन के पीछे हम भी प्रेरणा करते जाते थे व भीमसेन, नकुल, सहदेव को प्रेरणा करते अर्थात् हम पाँचों ने उनको छुड़ाया पर मुख्यकर अर्जुन ने ही शत्रुओं को भगाय उनको छुड़ाया भला कभी ऐसे अर्जुन का स्मरण करते हैं॥ २७॥

हरिगीतिका॥

जब दान भेदरु दण्ड सों, धृतराष्ट्र सुताहि न जीति हैं।
तब एक साम उपायसों नहिं, जीति हैं यह नीति हैं॥
सुनु ताहि सों सञ्जय उन्हें, हम दण्ड दैबोही चहैं।
नहिं करिय हम सब रीति सों वह, जौन द्विज तुमहीं कहैं॥ १।२८॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि युधिष्ठिरवाक्यन्नामत्रयोविंशतितमोऽध्यायः॥ २३॥

चौबीसवां अध्याय।

दो० चौबिसवें महँ कहब जिमि, भूप युधिष्ठिर काहिं।
सञ्जय उत्तर दीन बहु, करि विचार मनमाहिं॥ १॥

सञ्जय बोले कि हमसे जैसा आप कहते हो वह वैसाही है व जो आप कौरवों व वहां रहनेवाले और श्रेष्ठ जनों को पूछते हो वे सब कुरुवंशी कुशलपूर्वक हैं किसी को कोई रोग नहीं व और भी जिन २ लोगों को आपने पूछा सब वे कुशली हैं १ हे पाण्डव! दुर्योधन के यहां वृद्ध व साधुलोग भी हैं व पापी भी बहुत हैं व माँगने पर तौ शत्रुओं को भी दुर्योधन दान देते हैं फिर ब्राह्मणों की जीविका क्यों हरें २ व जो विना अपराध किये हुए दुर्योधनादिकों के साथ द्रोह किया चाहते हैं वह अच्छा नहीं क्योंकि जब उन्होंने आपको वनवास दिया था अपराध किया था तौ भी आपने उनका द्रोह नहीं किया तौ इस समय तौ अवश्य न द्रोह करना चाहिये व जो साधुवृत्ति से चलनेवाले आप

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लोगों को पुत्र सहित धृतराष्ट्र कुछ अनुचित कहैं तो मित्रद्रोही हों जो गति मित्रद्रोहियों की होती है आप भोगें ३ वे वृद्ध धृतराष्ट्र ठीक २ मिलाप तौ नहीं चाहते पर हां अपने पुत्रों के नाश के भय से अन्तःकरण में अत्यर्थ जरा करते हैं यद्यपि ब्राह्मणों से सुनते हैं कि मित्र-द्रोह करना सब पापों से बड़ा है तथापि निवृत्त नहीं होते हां हे नर-देव! आपका स्मरण सदा करते हैं व युद्ध में संग्राम में शत्रुओं को भगानेवाले अर्जुनजी का स्मरण करते हैं व जहां मल्लयुद्ध के वास्ते नगारे शङ्ख बाजने लगते हैं वहां गदा हाथ में लिये भीमसेनजी का स्मरण करते हैं ४। ५ व समरभूमि में सब दिशों में कूदते हुए व बार २ सेना के ऊपर बाण वरषाते हुए व समर में बड़े दुःख से कँपाने के योग्य नकुल व सहदेवजी का भी स्मरण करते हैं ६ हे राजन्! सर्व धर्म युक्त होकर जब आप को भी ऐसा कठिन क्लेश प्राप्त हुआ तौ पुरुष के प्रारब्ध में क्या होनेवाला है यह नहीं जान परता ७ इससे अब आपही अपनी बुद्धि से समभाव रहिये क्योंकि इन्द्र के तुल्य सब पाण्डुजी के पुत्र आप लोग काम के अर्थ धर्म को न छोड़ें ८ अब, आपही अपनी बुद्धि से समता करिये जिसमें कौरवों, पाण्डवों, सृञ्जयों व अन्य राजाओं का जो कि इधर उधर के सम्बन्धी हैं सब का कल्याण हो ॥ ९ ॥

दो० सुत अमात्य सम्बन्धियुत, आम्बिकेय निशि माहिं।
हमसन जो भाष्यो सुनहु, नृप पितृव्य तव आहिं॥ १। १०॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सञ्जयवाक्यन्नामचतुर्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २४ ॥

पच्चीसवां अध्याय।

दो० पचिसवें महँ कहब जिमि, सञ्जय कह्यो प्रसङ्ग।
कौरव पाण्डव मिलन को, जहँ लखात शुभ ढङ्ग॥ १ ॥

इतना सुन युधिष्ठिरजी बोले कि इस समय पाण्डव, सञ्जय, श्री-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कृष्णचन्द्रजी, सात्यकी व विराट सब बैठे हैं जो बात धृतराष्ट्रजी ने तुम से कही है वह कहो १ सञ्जय बोले कि युधिष्ठिरजी, भीमसेनजी, अर्जुनजी व नकुल, सहदेवजी व श्रीकृष्णचन्द्रजी, वसुदेवजी, सात्यकी, चेकितान व विराटजी २ व राजा द्रुपदजी जो सब से वृद्ध हैं व धृष्टद्युम्न व पर्वतराज, याज्ञसेनि इन सब महाशयों से हम कुरुवंशियों का ऐश्वर्य चाहते हुए जो बात कहैंगे सब आप लोग सुनैं ३ राजा धृतराष्ट्रजी चाहते हैं कि अबतक जो हुआ सो हुआ अब झगड़ा शान्त हो जाय इसीसे हमारे यहां आने के लिये बड़ी शीघ्रता के साथ अपने हाथ से रथ में घोड़े नहे कुछ वही नहीं अब भाई, पुत्र स्वजनसहित राजा का वचन सुन पाण्डवों को रुचै जिसमें शान्ति होजाय विग्रह न बढ़ै ४ आप सब पाण्डव लोग सब उत्तम २ धर्मों से संयुक्त हैं जैसे कि सुन्दर आकार प्राणियों के ऊपर कृपा, सरलता, अक्रूरता, दानशीलता, लज्जापरायणता व कर्मों का निश्चय ज्ञान करना ये सब गुण पाण्डवों में विद्यमान हैं व उत्तम कुल में उत्पन्न हैं ५ इससे ऐसे आप लोगों को यह मारपीट हीन कर्म करना उचित नहीं है क्योंकि आप लोगों के बुद्धि बल व भयङ्कर सेना भी है इससे प्रकाशित हो रहे हैं उसमें इस पाप से मलिनता आय जायगी जैसे उजलेही वस्त्र में एक बिन्दु भी काजर लगने से धब्बा पर जाता है ६ जिस युद्ध में सबका तो क्षय होता है व पाप का उदय होता है नरक जानों होताही है व उसका अन्त नाशही होता वह जानता हुआ पुरुष कौन ऐसा कार्य करै क्योंकि जय भी हुई व भाई बन्धु मारे गये तौ वह पराजय केही समान है ७ व जिन लोगों ने अपनी जातिवालों का कार्य किया वे धन्य हैं व वही लोग पुत्र हैं, सुहृद् व बान्धव भी वेही लोग हैं सो जानों घोषयात्रा में दुर्योधनादिकों को छुड़ाया ज्ञातियों का कार्य तो बहुत अच्छा किया अब यह निन्दित ज्ञातियों का मारना न करना चाहिये क्योंकि युद्ध हुआ तो अवश्य कुरुवंशियों का विनाश होगा ८

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सो जो आप लोगों ने दुर्योधनादिकों को न सिखलाया केवल उनको शत्रु मान मारही डारा तो यह आप लोगों का जीवन भी मृत्युही के समान है क्योंकि बालकों को मार आप जीवे यह अच्छा नहीं समझा जाता ६ व युद्ध करने में उधर के भी लोग अवश्य मारे जायँगे क्योंकि चाहे देवता लोग जिनके मन्त्री व सहाय हैं वे इन्द्र भी अकेले आपलोगों व भगवान् कृष्णचन्द्रजी के व चेकितान पार्षदों को बाहों से रक्षित सात्यकी आदि के सामने खड़े हों पर जीत न सकें १० व फिर द्रोण, भीष्म, अश्वत्थामा, शल्य, कृपाचार्य, कर्ण व अन्य राजाओं से रक्षित कौरवों को भी रण में अकेला कौन वीर जीत लेगा ११ व दुर्योधन की भी बड़ी भारी सैन्य है उसको भी ऐसा कौन है कि उसकी ओर कोई मारा न जाय व वह उस सैन्य को जीतले इससे हम जय व पराजय दोनों में कुछ कल्याण नहीं देखते १२ भला दुष्कुल में उत्पन्न हुए नीचों के समान ये आप पाण्डव लोग धर्म अर्थ रहित यह कर्म कैसे करेंगे इससे हम आप लोगों से प्रसाद माँगते व प्रणाम करते तथा वासुदेव भगवान् से व बड़े वृद्ध राजा द्रुपदजी के भी प्रणाम करते १३ व हाथ जोर आप लोगों के शरण में आये हैं बताइये कौरवों व सृञ्जयों का कल्याण कैसे हो व जो हम ने ऐसा दीनवचन कहा कि पाण्डवादिकों के सामने इन्द्र भी न खड़े हो सकेंगे व यह कठोर वचन कि कौरवों के सामने भी कौन खड़ा होगा यह आप लोगों को भयभीत होने के लिये नहीं कहा बरन दोनों ओर के लोगों का विनाश दिखाय मिलाप होजाने के लिये कहा है इससे भगवान् वासुदेवजी व अर्जुन जी इस हमारे वचन की ओर किञ्चिन्मात्र भी दृष्टि न करें १४ क्योंकि माँगने पर तो दुर्योधन प्राण भी देसक्ते हैं तो अन्य राज्यादि को कौन कहै यह राजा व भीष्मादिकों का भी मत है कि आप लोगों की शान्तिही उत्तम है विग्रह होना सर्वथा अनुचित है ॥ १५ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चविंशतितमोऽध्यायः ॥ २५ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

छब्बीसवां अध्याय।

दो० छब्बिसवें महँ कहब जिमि, भूप युधिष्ठिर आप।
सञ्जय वचनोत्तर दियो, कहि कौरवन मिलाप॥ १॥

युधिष्ठिरजी बोले कि, हे सञ्जय! युद्धाभिलाषिणी वाणी हमारी कौन सी आप ने सुनी जिससे युद्ध से डरते हो हे तात! अयुद्ध युद्ध से बहुत अच्छा है सो अयुद्ध से काम चले तो कौन पुरुष युद्ध करै १ हे सञ्जय! जो विना कुछ किये ही पुरुष जो चाहे वह काम सिद्ध होजाय तौ फिर कर्म न करै यह बात हम जानते हैं व जो विना कुछ किये काम न चलै तौ युद्ध से भी छोटे बहुत से कर्म हैं करै पर युद्ध कभी न करै २ युद्ध पुरुष कभी न करै ऐसा किसके ऊपर दैव का शाप है जो अपने बूते युद्ध करना अङ्गीकार करै फिर सुख की इच्छा से पार्थ लोग कर्म तौ करते हैं परन्तु जो धर्मयुक्त व लोक का हित होता वही करते ३ प्रशंसनीय लोग वही सुख का कर्म करते जिसमें धर्म का उदय हो जैसे ग्रीष्मऋतु में गङ्गाजी का स्नान व जिस सुख के कर्म में पाप होता उसे नहीं करते जैसे जीवहिंसा व परस्त्रीगमनादि व नहीं तौ वास्तव में कर्म करना तौ दुःख ही है क्योंकि सब कर्म कष्टसाध्य होते हैं व जो पुरुष इन्द्रियों की प्रीति के करनेवाले कर्म के वश है वह तो सदा सुख चाहता व दुःख का नाश चाहता है ४ कामवासना का स्मरण करना चित्त को सन्तप्त करता है व उसमें लगे रहने से पुरुष को दुःख नहीं होता जैसे बरते हुए अग्नि में घृतादि की आहुति देने से और अग्नि का तेज बढ़ता है कुछ उसे दुःख नहीं होता ५ व काम अर्थ सिद्ध होजाने पर भी पुरुष उससे तृप्त नहीं होता जैसे घृत डारने से अग्नि नहीं तृप्त होता इस विषय में हम लोगों व धृतराष्ट्र का दृष्टान्त देखिये हम लोगों सहित उनके १०५ पुत्र हैं तथापि उन्होंने राज्य करना न छोड़ा करते ही रहे फिर उस पर भी तृप्त न

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हुए तो हम पांचों को दूर कर दिया पर अब भी नहीं तृप्त हुए ६ समर्थ विग्रहकर औरों के विरोध से अपनी उत्कर्षता करता है उसको कोई कुछ नहीं कहता असमर्थ करता तो नष्ट ही होजाता व असमर्थ नाच गीत नहीं देखता सुनता समर्थ देखता सुनता है असमर्थ पुष्प चन्दनादि नहीं सूंघता समर्थ सूंघता व असमर्थ अर्गजादि अनुलेपन नहीं लगा सकता समर्थ लगा सकता ७ असमर्थ उत्तम वस्त्र नहीं धारण कर सकता समर्थ करता समर्थ चाहे जो करै जो राजा धृतराष्ट्रजी असमर्थ होते तो हम लोगों को देश से क्यों निकाल देते यद्यपि ऐसा है तथापि काम हृदय को खेद कराता है सो काम अबुध लोग दुर्योधनादिकों को ही उचित है बुध जो हम लोग हैं उन को उचित नहीं क्योंकि हम लोगों के शरीर में तो काम रहता है तो हृदय को खेद कराता है८ राजा धृतराष्ट्र आप खुद विषम स्वभाव हैं व औरों की सामर्थ्य देखते हैं यह अच्छा नहीं जैसे अपने वृत्त जानते हैं वैसेही औरों के भी जानें९ अब धृतराष्ट्र का शोक करना इस समय ऐसा है जैसे कोई पुरुष वसन्तादि गर्मी के ऋतु में दोपहर के समय बड़े भारी सूखे वृक्षों के वन में अग्नि लगादे व प्रचण्ड पवन के चलने से अग्नि बढ़ै व उसके समीप ही आप खड़ा होकर फिर अपने बचाने का उपाय विचारै १० दुर्बुद्धि, कुटिलता करने में रत, मन्दमति, मूढ़ व दुष्ट मन्त्रियों के मत में चलनेवाले अपने पुत्र के वशीभूत हो ऐश्वर्य तो राजा धृतराष्ट्र मांगते ही हैं फिर दीन वचन बार २ क्यों कहते हैं ११ महाश्रेष्ठतम विदुरजी को नीच के समान तुच्छ जान दुर्योधन उनके वचन का निरादर करता ऐसे पुत्र का राजा धृतराष्ट्र प्रिय चाहते जान बूझ अधर्म ही करते १२ देखो बड़े मेधावी, कुरुवंशियों के शुभचिन्तक, बहुत से शास्त्र सुने, पढ़े, प्रशस्तवक्ता, शीलवान्, विदुरजी को कुरुवंशियों के हित के अर्थ राजा धृतराष्ट्र ने पुत्र के लोभ से न स्मरण किया १३ मान नाशनेवाले, मान की कामना करनेवाले, दूसरे का उत्कर्ष न सहनेवाले, क्रोधी,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अर्थ व धर्म का उल्लङ्घन किये दुर्भाषी करणादि दुष्ट राजाओं के वशानुग कामात्मा, पापियों से ही पूजित, शिक्षा देने के अयोग्य, कल्याणरहित, बड़े क्रोधी, मित्रद्रोही व पापबुद्धि अपने पुत्र दुर्योधन को देखते २ राजा धृतराष्ट्र ने अर्थ व काम दोनों छोड़ दिये १४ । १५ हे सञ्जय ! हमने तभी जान लिया था कि बस अब कौरवों का नाश होजायगा जब हम जुआ खेल रहे थे व विदुरजी ने बहुत अच्छी बात कही पर धृतराष्ट्र के भी मुख से न निकला कि विदुर अच्छा कहते हैं १६ हे सञ्जय ! जब से विदुरजी का सम्मत न मानने लगे तभी से कौरवों के ऊपर क्लेश आया व जबतक विदुरजी की बुद्धि के विचार में चले तबतक कौरवों का राज्य बढ़ता ही रहा १७ हे सञ्जय ! इससे अर्थ के लोभी हमारे वचन सुनो व जो दुर्योधन के मन्त्री, दुश्शासन, शकुनी व कर्ण हैं उनकी मूढ़ता देखो १८ सो हम इसकी परीक्षा ही करते हैं कि कौरवों व सृञ्जयों की स्वस्ति कैसे हो पर नहीं देखते क्योंकि जब धृतराष्ट्रजी ने और लोगों का भी बहुत ऐश्वर्य पाया तो दूरदर्शी विदुरजी को राज्य से निकाल दिया १९ अब पुत्रों सहित धृतराष्ट्रजी प्रशंसा करते हैं कि पृथ्वी में हमारा निष्कण्टक राज्य होगया अब उन लोभी के साथ हमारा मेल होता नहीं देख परता जिन्होंने जब हम को वनवास हुआ तो अपना सब कार्य सिद्ध मानलिया जानों हमी लोग उनके सब कार्यों के अवरोधक थे २० जो कर्ण युद्ध में आयुध हाथ में लिये अर्जुन को अजेय नहीं समझता है तो विराटादि नगरों में तो अर्जुन से बड़े २ बहुत युद्ध हुए उनमें डूबते हुए कौरवों को द्वीप समान आश्रय स्थान वह क्यों न हुआ कि बूड़ने न देता २१ अर्जुन से अधिक दूसरा धनुर्द्धर भूमण्डल में नहीं है इस बात को कर्ण जानता है व दुर्योधन भी जानते हैं व द्रोणाचार्य व भीष्म पितामहजी भी जानते हैं व और भी कौरव जो वहां हैं व घोषयात्रा में थे सब जानते हैं २२ जैसे शत्रुओं के नाशक अर्जुन के वहां न होने पर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दुर्योधन के पास राज्य होगया है उसको सब कौरव लोग जानते हैं व और भी राजा लोग जो वहां इकट्ठे हैं वे भी जानते हैं २३ इसी हेतु से दुर्योधन पाण्डवों का ममत्व हर लेना चार हाथ का लम्बा आयुध हाथ में लिये धनुर्विद्या जाननेवाले अर्जुन के सामने युद्ध में जाय अपने राज्य के लिये अच्छा समझते हैं २४ परन्तु हम जानते हैं जोर से खींचे हुए गाण्डीव धन्वा का शब्द जबतक समर में नहीं सुना तभी तक सब धृतराष्ट्र के पुत्र जीते हैं व जब तक भीमसेन को समर में क्रुद्ध नहीं देखते तभी तक दुर्योधन अपना अर्थ सिद्ध मानते हैं २५ हे तात! इन लोगों की कौन गणना है इन्द्र भी भीमसेन, अर्जुन व नकुल, सहदेव के जीवते हमारा ऐश्वर्य नहीं हर सकते २६ सो हे सञ्जय! जो अपने पुत्रों सहित वृद्ध राजा धृतराष्ट्रजी भी इस बात को समझें तो धृतराष्ट्र के पुत्र संग्राम में पाण्डवों के कोप से भस्म होकर नाश को न प्राप्त हों २७ हे सञ्जय! आपकी पूजा कर हम क्षमापन कराते हैं आप जानते हो कौरवों ने जो २ कष्ट हम लोगों को दिये हैं व हम लोगों की वृत्ति जैसी दुर्योधनादिकों में रही वह भी जानते हो ॥ २८ ॥

तोटकछन्द ॥

यदि पीत लहे हम दुःख महा। पर शान्ति करैं सुनि सूत कहा ॥
हमको उपराज्य मिलै उनही। महराज बनै बड़ राज्य लही ॥
दो० इन्द्रप्रस्थ उपराज्य है, हस्तिन पुर बड़राज।
छोटो हमको देहिं वे, लहैं बड़ो न अकाज ॥ १ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षड्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २६ ॥

सत्ताईसवां अध्याय।

दो० सत्ताइसवें महँ कहब, जिमि सञ्जय पुनि भाख।
भूप युधिष्ठिर के वचन, सुनि मनगानि तजि माख ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

युधिष्ठिर के वचन सुन फिर सञ्जयजी बोले हे पार्थ! धर्म में तुम्हारा सब
का यह व्यापार लोक में सुना व देखा भी बड़ी भारी आपकी कीर्त्ति भी
सुनी इससे अनित्य जीविका के अर्थ व्यर्थ कौरवों को न मारिये १ कदा-
चित् विना युद्ध किये कौरव लोग आपको राज्य भी न दें तो अन्धक-
कवंशियों व वृष्णिवंशियों के राज्य में भिक्षा माँग निर्वाह करना
अच्छा है पर युद्धकर राज्य लेना नहीं २ एक तो मनुष्य का जीवन
थोड़े ही दिनों का वह भी अति चलायमान व नित्य उसमें भी नित्य
दुःख व फिर चञ्चल स्थिरता क्षणमात्र की भी नहीं फिर वह यश के
अनुरूप नहीं इससे पाण्डव आप वृथा पाप न करें ३ हे नरेन्द्र! धर्म
के विघ्न के मूल ये काम मनुष्य को हठसे आय लपट जाते हैं इससे
बुद्धिमान् पुरुष प्रथम उनका विनाश करता हुआ लोक में उत्तम प्रशंसा
पाता है ४ हे पार्थ! अर्थ की तृष्णा इस संसार में बड़ा बन्धन है जो
पुरुष अर्थतृष्णा की इच्छा करते हैं उनका धर्म बाधित हो जाता है
इससे जो पुरुष धर्म ही अङ्गीकार करता वही ज्ञानी है व जो काम की
इच्छा करता है उसका अर्थ भी जाता रहता धर्म तो जानों पहिले ही
बाधित हो गया ५ हे तात! धर्म, अर्थ, कामादि कर्मों में धर्म को जो
पुरुष मुख्य मानता है वह महाप्रतापी सूर्य समान प्रकाशित होता व
धर्महीन पुरुष जो यह पृथ्वी भर पाय जाय तौ भी वह पापबुद्धि कष्ट
ही पाता है ६ आपने वेद पढ़े, ब्रह्मचर्य धारण किया, बहुत से यज्ञ
किये, ब्राह्मणों को इच्छित दान दिया व परलोक में बहुत वर्षों तक
सुख पाने के लिये अपना आत्मा भी दे दिया ७ जो पुरुष भोग विला-
सादि सुख व पुत्रादि प्रियों का ही सेवन किया करता व योगाभ्यास
के कर्म नहीं करता वह धन नाश हो जाने पर सुखहीन हो जाता है
व कामवेग से प्रेरित दुःखपूर्वक होता है ८ इसी प्रकार जो पुरुष ब्रह्म-
चर्य में युक्त हो धर्म करता व धर्म छोड़ फिर अधर्म करने लगता उसकी
परलोक में अश्रद्धा हो जाती है वह मन्दबुद्धि मरने के पीछे सन्तप्त

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होता है ९ परलोक में कर्मों का नाश नहीं होता चाहे पुण्यकर्म हों व पापकर्म पुण्य व पाप जो किया जाता है वह पहिले परलोक में पहुँच जाता व उसके करनेवाला पीछे से पहुँचता है १० आपने न्यायपूर्वक धन इकट्ठा कर ब्राह्मणों को दिया सो भी जो श्रद्धा से पवित्र व गन्ध रसादियुक्त वह भी बहुधा यज्ञ कराय दक्षिणा की रीति से इस प्रकार के सब उत्तम आपके कर्म विख्यात हैं ११ हे पार्थ! धर्म इसी लोक में किया जाता है मर जाने पर फिर वहां कुछ नहीं किया जाता इससे आपने पारलौकिक कार्य पुण्य यहीं सब कर लिया जिसकी प्रशंसा सब पण्डित लोग करते हैं १२ परलोक में न मृत्यु है न बुढ़ापा न भय न भूख न प्यास न कुछ मनके अप्रिय पदार्थ, न वहां कुछ करना होता है केवल इन्द्रियों काही पालन पोषण करना होता है १३ हे पार्थ! काम से इस प्रकार का नाश होनेवाला कर्म न करैं क्रोध से उत्पन्न नरक व हर्ष से उत्पन्न स्वर्गलोक दोनों हैं परन्तु आप नरक व स्वर्ग दोनों के जानेवाले कर्म न करैं किन्तु मोक्ष के अर्थ उत्कृष्ट योगाभ्यास से ही कीजिये भाइयों को मार इस राज्य के लेने से क्या है १४ कर्मों के पीछे पर, सत्य, दम, सरलता, अक्रूरता आदि शुभ कर्म आप न छोड़ें व अश्वमेध, राजसूयादि यज्ञ लोक के संग्रह के लिये करें परन्तु पापकर्म के समीप अब आप न जायँ १५ हे पाण्डव! जो यह गोत्रबधरूप पाप बहुत दिनों के लिये आप लोग करैंगे तो जो वन में बहुत वर्षों तक आप लोग बसे व दुःख सह कर धर्म किया वह वृथा ही हुआ १६ जो कहिये कि उस समय कोई सहाय न था इससे हमने वनवास अङ्गीकार किया दुर्योधन के भय से नहीं तौ वन के जाने के प्रथम ही क्यों न युद्ध किया राज्यादि छोड़ क्यों चले गये यह आप लोगों का शारीरक बल तौ तब भी विद्यमान था व ये मन्त्री लोग भी आप के वश में थे व भगवान् कृष्णचन्द्र सात्यकी वीर भी वश में थे १७ अपने पुत्रों सहित रुक्मरथ व विराट भी बड़े लड़नेवाले

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अपने पुत्रों सहित इनके सिवाय जिन राजाओं को आप लोगों ने प्रथम जीता था वे सब तो आपही के संग होते १८ इस प्रकार इन सबों की सहायता से प्रताप के मारे तपते हुए कृष्णचन्द्रजी व अर्जुन के सामने बड़े २ शत्रुओं को रङ्गभूमि में मारते हुए आपने दुर्योधन का अहङ्कार क्यों न दूरकर दिया १९ अब शत्रु का बल बढ़ाय व अपने सहायों को दुर्बल कराय व वन में तेरहवर्ष बस इस हीनकाल में क्यों लड़ने की इच्छा करते हो इससे तो उस समय का लड़ना बहुत अच्छा था २० अब तो हमारे मत से किसी रीति से भी युद्ध न करना चाहिये क्योंकि चाहे अधर्मज्ञ हो वा धर्मज्ञ हो पर युद्ध करने पर ऐश्वर्य उसको मिलता है पर कभी ऐसा भी देखा कि अधर्मज्ञ की विजय व धर्मज्ञ की पराजय व बुद्धिमान् कहीं युद्ध करने में हार जाता व निर्बुद्धि जीत जाता प्रयोजन कि युद्ध में जय पराजय किसी के अधीन नहीं होती २१ हे पार्थ ! आजतक अधर्म में आपकी बुद्धि कभी नहीं टिकती थी व न कभी क्रोध से आपने पाप किया अब नहीं जानते क्या कारण है जो आप अपनी बुद्धि के विरुद्ध यह गोत्रबधरूप पाप किया चाहते हैं २२ हे महाराज ! यह क्रोध आपके पीने के योग्य है जोकि न तो किसी रोग से उत्पन्न है व करू है व शिर पिरवाने लगता है यश को हरता है पाप उदय इसका फल है सज्जनों के पीने के योग्य है व असज्जनों के पीने के योग्य नहीं फिर आपसे बढ़कर सज्जन और कौन है जो क्रोध पान करे २३ ऐसा कौन पुरुष है जो पापमूल क्रोध करने की इच्छा करे आपकी क्षमाही बहुत अच्छी है भोग नहीं क्योंकि जिस कोप में आपके परदादा शन्तनुजी के पुत्र भीष्मजी मारे जायँगे व पुत्रसहित द्रोणाचार्य आप लोगों के भी गुरु २४ फिर कृपा-चार्य, राजा शल्य आपके मामा, सोमदत्त, विकर्ण, विविंशति, कर्ण व दुर्योधन इन सबों को मार आपको कैसा सुख होगा जैसा सुख पाइयेगा हमसे कहिये ॥ २५ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो॰ जलधि अवधि चिति हू लहे, जरा मरण न छुटात ।
प्रिय अप्रिय सुख दुखहु नाहिं, यह लखि लड़हु न तात ॥ १।२६ ॥
जो अमात्य हित कर्म यह, करन चहत हौ भूप ।
उन्हैं देहु धन जाहु जनि, नरक न तव अनुरूप ॥ २।२७ ॥
का॰ न॰ दो॰ सागरान्त चिति लहेहु है, जरा मृत्यु अनिरुद्ध ।
सुख दुख प्रिय अप्रिय समुझि, करहु न भूपति युद्ध ॥ १ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तविंशतितमोऽध्यायः ॥ २७ ॥

अट्ठाइसवां अध्याय ।

दो॰ अट्ठाइसवें महँ कहब, जिमि सञ्जय के बैन ।
भूप युधिष्ठिर सुनि उतर, दीन न हीन सुखैन ॥ १ ॥

सञ्जयजी के ऐसे वचन सुन महाराज युधिष्ठिरजी बोले कि, सञ्जय जैसा तुम कहते हो इसमें कुछ सन्देह नहीं अधर्म से धर्म ही अच्छा होता है परन्तु धर्म वा अधर्म जो हम करें, दोनों को अच्छी तरह जान जो अधर्म ही ठहरे तो हमारी निन्दा कीजिये १ धर्माधर्म की परीचा तीन प्रकार की होती है, जैसे दम्भादियुक्त पुरुष में मारणादि के लिये मन्त्र जपादि अधर्म को अन्य पुरुष धर्म ही जानते हैं उसी प्रकार प्रच्छन्नयोगी दत्तात्रेयादि परमहंसों में राग द्वेषादि शून्यतारूप धर्म भी उन्मत्तवत् आचरण होने के कारण अधर्म ही ऐसा दिखाई देता है व वशिष्ठादि मुनियों में जो धर्म है वह धर्म ही है परन्तु विद्वान् लोग अपनी बुद्धि से अच्छी तरह देख लेते हैं आप भी तो विद्वान् हैं देख लीजिये हम में धर्म है व अधर्म २ यह भी धर्म ब्राह्मण का अध्ययनादि, चात्रिय का शौर्यादि, वैश्य का कृष्यादि जैसा पूर्व में कह आये हैं वैसा ही है परन्तु आपत्काल में धर्म अधर्म दोनों नित्यवृत्ति हैं जैसे आपत्काल में ब्राह्मण व वैश्य को चात्रियों की वृत्ति शौर्यादि करना धर्म है व अनापत्काल में अधर्म, ऐसे ही एक ही धर्म अन्यवर्ण का

१०

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अन्यवर्ण में होने से अधर्म हो जाता है परन्तु प्रमाण मुख्य धर्म काही है आपद्धर्म का नहीं ३ परन्तु जब जिसकी जो जीविका है वह लुप्त हो जाय तो आपत्काल में भी जो जीविका न करनी चाहिये जैसे ब्राह्मण की जीविका एक भिक्षाटन भी है वह आपत्काल में भी क्षत्रियादिकों को न करनी चाहिये पर जब अपनी जीविका बनाय जाती रहै तो उसे क्षत्रियादि भी कर सकते हैं तब वही उनका धर्म हो जाता है परन्तु जब आपत्काल बीत जाने पर भी उसको न छोड़ें तो वह अधर्म होने से महानिन्द्य है व ऐसे ही जो आपत्काल में भी अपना ही कर्म करता रहै तो वह भी निन्द्य है क्योंकि उसमें प्राण ही जाते रहने व कुटुम्बियों के मर जाने से आत्महत्या का दोष होता है ४ हे सञ्जय ! जिससे कि ब्रह्माजी ने ब्राह्मणों को और वर्ण की जीविका कर लेने से फिर आपत् से छूटने पर प्रायश्चित्त लिखा है इससे विदित होता है कि आपत्काल में एक दूसरे की जीविका कर सकते हैं बस इसी से हमने भी एक चक्रा में भिक्षाटन किया वह अनुचित नहीं है इससे कर्म करनेवालों को देखो जब जानो कि वे असत्कर्म करते हैं तभी उनकी निन्दा करो ५ प्राणियों का नाश जिससे न हो इसलिये पण्डितों ने सबके लिये भी ब्राह्मणों की वृत्ति भिक्षाटन का करना विधान कर दिया है व जो अब्राह्मण विद्वान् नहीं हैं उनके वास्ते तो सबके समीप जाय जो जीविका करैं उसका विधान ही है ६ वह हमारे पितृ पितामहादि तथा अन्य प्रपितामहादि भी जिस मार्ग पर चले हैं हम भी उसी पर चलते हैं क्योंकि हम आस्तिक हैं अन्य धर्म को नहीं मानते ७ हे सञ्जय ! जो कुछ धन इस पृथ्वीपर है व जो देवताओं के यहां है व प्राजापत्य, त्रिदिव, ब्रह्मलोकादि जो कुछ पदार्थ हैं अधर्म से हम इनको भी नहीं इच्छा करते ८ देखो धर्म के ईश्वर कुशल, नीतिमान्, ब्राह्मणों के उपासक, अति बुद्धिमान्, कृष्णचन्द्रजी नानाप्रकार के महाबलवान् राजाओं को जानते हुए शिक्षा देते हैं ९ जो हम

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

मिलाप करना न मानें तो निन्द्य समझे जायँ व जो युद्ध करते हुए अपना धर्म न करें तो भी निन्द्य समझे जायँ हमको तो दोनों अभीष्ट हैं समझाये समझते हों तो समझें नहीं तो युद्ध किया चाहें युद्ध करें नहीं तो हमसे कहते करते न बनता हो तो महायशस्वी भगवान् वासुदेवजी बैठे हैं ये बोलें क्योंकि ये हम दोनों जनों का अर्थ चाहते हैं १० फिर, शैनेय, चेदिवंशीय, अन्धकवंशीय, वृष्णिवंशीय, भोज-वंशीय, कुकुरवंशीय व सृञ्जयवंशीय सब बैठे हैं ये सब लोग वासु-देवजी की ही बुद्धि ले शत्रुओं व मित्रों को आनन्दित करते हैं ११ व उग्रसेनादि वृष्णिवंशीय अन्धकवंशीय सब कृष्णचन्द्र ही के चलाये हुए नीतिमार्ग पर चलते हैं व सब देवतुल्य, मनस्वी, सत्यपरायण, महाबल यादवलोग बड़े २ भोगवान् यहां बैठे हैं १२ फिर कृष्णचन्द्रजी को ऐश्वर्यदायक भाई पाय काशी के राजा बभ्रुजी उत्तम श्रीपाय बैठे हैं जिसको सब इच्छित वासुदेव ही जी देते हैं जैसे वर्षाऋतु में सब प्रजाओं का हित मेघ बरसाते हैं ॥ १३ ॥

दो० निश्चयज्ञ सब कर्म के, पण्डित मम प्रिय साधु।
हैं केशव इनकर वचन, हम न उलँघिहैं आधु ॥ १ । १४ ॥

का० न० दो० निश्चयज्ञ सब कर्म के, केशव आत मतिऐन।
मम प्रिय हम अतिक्रमण नहिं, करिहैं तिनके बैन ॥ १ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्यष्टाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २८ ॥

उन्तीसवां अध्याय।

दो० उन्तिसवें महँ कहब जिमि, वासुदेव भगवान ।
वर्णधर्म नृपनीति कुछ, वर्णन कीन महान ॥ १ ॥

तब भगवान् महान् बुद्धिमान् श्रीकृष्णचन्द्रजी बोले कि हे सञ्जय! हम सदा पाण्डवों का अविनाश, ऐश्वर्य व प्रिय चाहते हैं व वैसे ही बहुत पुत्र सहित राजा धृतराष्ट्र की वृद्धि चाहते हैं १ व हमको यही

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इच्छा रहती है कि इन लोगों से यही प्रतिदिन कहें कि तुम लोग आपस में मिले रहो शान्त हो जाव व पाण्डवों के सामने राजा युधिष्ठिरजी से भी यही सुनते हैं कि उनको यही प्रिय है २ परन्तु हे सञ्जय! राज्य के निमित्त में युधिष्ठिरजी शान्त होना चाहते हैं वह अति दुष्कर है क्योंकि उस राज्य के पुत्र सहित धृतराष्ट्रजी अति लोभी हैं फिर उन कौरवों का कलह क्यों न बढ़ेगा ३ हे सञ्जय! विचालित धर्म को पालन करते हुए हमको व युधिष्ठिरजी को तुम जानते हो फिर उत्साह करनेवाले प्रसिद्ध कार्य करते हुए कुटुम्ब में बसे युधिष्ठिरजी से तुमने यह क्यों कहा कि तुम धर्म लोप करते हो इस विषय में तो पाण्डव पवित्र हैं क्योंकि वे अद्रोही हैं जहां कुछ कर्त्तव्याकर्त्तव्य की व्यवस्था हो वहीं ब्राह्मणों को ऊँची व नीची व्यवस्था देनी चाहिये ४।५ मोक्ष की सिद्धि कर्म से ही तो है जैसे जनकादिकों को कोई ऐसा कहते हैं कोई २ कहते हैं कि कर्म से नहीं होती विद्या से होती है जैसे कि संन्यासियों को इससे कर्म करना व न करना शास्त्र के मत से दोनों ठीक हैं परन्तु जो सदा अच्छे पदार्थ भोजन कर रहा है वह उससे तृप्त नहीं होता इससे संन्यास गृहस्थ नहीं कर सकता उसको अपने आश्रम का धर्म ही करना ठीक है, क्योंकि संन्यासी ब्राह्मण लोग भी गृहस्थ ही के द्वार पर आते हैं ६ जिन विद्याओं से कर्म सिद्ध होते हैं उन्हीं का फल भी होता न कि अन्य विद्याओं का फिर इस विषय में तो कर्म ही का फल देखते हैं क्योंकि प्यासा जब जल पीता है तभी उसकी प्यास जाती है ७ व यह ज्ञानविधि कर्म ही के साथ कर्त्तव्य है जब तक कर्म किये जाता है व ज्ञान भी करता है दोनों होते जाते हैं जब कर्म छोड़ देते हैं ज्ञान ही ज्ञान रखते हैं उसी को संन्यास कहते हैं ८ परन्तु कर्म करना अच्छा है देखो कर्म ही से ये देवगण शोभित होते हैं व कर्म ही से पवन आकाश तक चला जाता है कर्म ही से रात्रि दिन होते हैं आलस्य नहीं करते इसी से सूर्य

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नित्य ही उदय होते हैं कर्म न करें तो कैसे उदय हों ६ मास, आधा मास, नक्षत्र, योग इन सबों में आलस्यरहित हो चन्द्रमा प्राप्त होता है व आलस्य छोड़ अग्नि जलाता है व प्रजा उसमें आहुत्यादि देती हैं तो वह उनको कर्मफल देता है १० व आलस्य छोड़ यह पृथ्वी अपने बल से इतना बड़ा भारी भार अपने ऊपर उठाती है व नदियां भी आलस्य छोड़ शीघ्रता के साथ जल बहाती हैं उससे सब प्राणियों को तृप्त करती हैं ११ व अन्तरिक्ष व दिशों में गर्जते हुए मेघ व आलस्यरहित हो बरसते हैं व देवताओं में श्रेष्ठ होने की इच्छा से इन्द्र ने आलस्यरहित हो ब्रह्मचर्य किया १२ उसी से प्रथम सुख व मन के प्रिय पदार्थ छोड़ कर्म करने से श्रेष्ठता को प्राप्त हुए जब वे तपस्या करते थे सत्य बोलते धर्म से चलते, प्रमत्त नहीं रहते, इन्द्रियों को दमन करते, सहनशीलता रखते, सबमें ममता करते व सबका प्रिय करते १३ इतने सब कर्म करने से देवराज ने देवताओं का राज्य पाया व एकाग्रचित्त हो अपना शरीर प्रशंसनीय कर बृहस्पतिजी ने ब्रह्मचर्य कर्म किया १४ सब सुख छोड़ इन्द्रियों को रोका इससे देवताओं के गुरु हुए व इसी तरह कर्म ही से स्वर्ग में नक्षत्र शोभित होते हैं व ११ रुद्र, ८ वसु, १३ विश्वेदेव १५ राजा यम, विश्रवा के पुत्र कुबेर, गन्धर्व, यक्ष, अप्सरा सब कर्म ही से शोभित हैं ब्रह्मविद्या ब्रह्मचर्य व क्रिया करते हुए ऋषि लोग स्वर्ग में शोभित होते हैं १६ इस प्रकार सब लोगों व ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों का कर्म जानते हो कि सब अपना २ कर रहे हैं फिर जाननेवालों में ज्ञानवान् हो तुम कौरवों से युद्ध करने को क्यों रोंकते हो १७ फिर इन युधिष्ठिरजी का संयोग वेदों में अच्छी तरह है व अश्वमेध राजसूयादि यज्ञ करने से धर्म में संयोग है व धनुष, कवच, बखतर आदि धारण करने व हाथी, घोड़े, रथ, शस्त्र रखने में भी संयोग हैं इससे शिक्षा करने के योग्य नहीं न किसी के जीतने के मान के हैं १८ कदाचित् ये पाण्डव लोग विना

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कौरवों को मारे ही राज्य पाने के विषय का उपाय जान पावें तो जानो हिंसा करने में उद्यत भीमसेन को रोंक धर्म की रक्षारूप पुण्य ही इन लोगों को हो यह तो बड़ी अच्छी बात है १६ व नहीं तो जो ये लोग क्षत्रियों के धर्म में वर्तमान हो भाग्यवश से मृत्यु ही को प्राप्त हो जायँगे तौ भी अपनी शक्ति भर अपना क्षत्रियों का धर्म पालन करते इनका स्मरण भी उत्तम होगा २० अथवा जो तुम मिलाप ही करना उत्तम मानते हो तौ राजाओं का धर्म युद्ध करने में है कि अयुद्ध करने में इसका निर्णय कर आप लोग कहें हम लोग वही करेंगे २१ हे संजय ! प्रथम तुम चारों वर्णों का धर्म देख लो व अपना भी कर्म जान लो या सुनलो तो फिर चाहै पाण्डवों के कर्म की निन्दा करना व प्रशंसा करना जैसी तुम्हारी बुद्धि हो वैसा करना २२ सब वर्णों के धर्म कहते हैं सुनो ब्राह्मण वेद पढ़ें, यज्ञ करैं, दान दें, मुख्य मुख्य तीर्थों की यात्रा करैं, विद्या पढ़ावैं, यज्ञ करावैं, योग्य दान भी ले लें २३ इसी प्रकार क्षत्रिय प्रजाओं की रक्षा करैं, पर रक्षा बड़ी सावधानी से करैं प्रमत्त होकर नहीं कि कुछ का कुछ हो जाय, दान दें, यज्ञ करैं, वेद पढ़ें, विवाह करैं व पुण्य करता हुआ अपने घर में रहै, २४ धर्म सदा करता रहै, धर्मशास्त्र भी अवश्य पढ़ै, पुण्य वह करैं जिससे जब चाहे तब ब्रह्मलोक को चला जाय व वैश्य वेद पढ़, खेती गोरक्षा व उद्यम कर धन बटोरता हुआ व सबको पालन पोषण करता कराता २५ व ब्राह्मणों क्षत्रियों का प्रिय करता हुआ धर्मशील हो पुण्य करता हुआ अपने घर में रहै शूद्र का धर्म पुराना यह सुनाई देता है कि ब्राह्मणों की टहल करैं व उनको प्रतिदिन प्रणाम करैं, वेदशास्त्र कुछ न पढ़ैं न यज्ञ करैं नित उठ ऐश्वर्य बढ़ाने में निरालस रहैं २६ क्षत्रियमात्र का तो धर्म कह चुके क्षत्रियों में जो राजा हो उसके इतने और भी धर्म हैं कि इन ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्रों का पालन करैं व सब वर्णों को अपने २ धर्म में लगावैं, प्रजाओं से किसी वस्तु की इच्छा न

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करैं व सब प्रजा से समभाव रक्खैं, अधर्म के कार्य न करैं २७ जो कोई ऐसे राजाओं से श्रेष्ठ हो व अपने ज्ञान से सर्वधर्मयुक्त राजा युधिष्ठिर को प्रजाओं की रक्षा करने व देखने को कहै इस कार्य में इनको साधु न जाने तो वह असाधु है २८ कदाचित् कोई क्रूर राजा दुर्योधन सदृश दैव के कोप से सैन्य ले दूसरे का ऐश्वर्य चाहै तौ फिर राजाओं में युद्ध होने लगे जैसे दुर्योधन ने युधिष्ठिर के राज्य का लोभ किया है तौ युद्ध ही करने के लिये इन्द्रजी ने कवच, शस्त्र, धनुष बनाया है व ऐसे चोर राजाओं के ही मारने को कवच शस्त्र धनुष का कर्म बनाया है २६।३० ऐसे चोररूप राजाओं के बध से पुण्य मिलती है सो यह दोष कुरुवंशियों में अच्छी तरह विद्यमान है क्योंकि इन अधर्मज्ञों ने धर्म न जाना यह चोर राजाओं का धर्म उत्पन्न कर दिया यह अच्छा नहीं है ३१ देखो धृतराष्ट्र के पुत्र ने अकस्मात् पाण्डवों का राज्य हर लिया अब उनके वंशवाले सब कुरुवंशीय पुराने राजधर्म नहीं देखते ३२ देखो चोर जहां अदृष्ट होकर धन हरता है व प्रत्यक्ष में हरता है परनिन्दा दोनों की होती है फिर यह बात क्या दुर्योधन से पृथक् है नहीं उनमें तो विद्यमान ही है उन्होंने तो चोरी क्या डांका मारा जो प्रत्यक्ष हीमें पाण्डवों का राज्य हर लिया ३३ अब जिसको क्रोध वशानुगामीहो मारे लोभ के धर्म मानते हैं कि यह राज्य भी हमारी ही है वह भाग अब पाण्डवों का है क्योंकि तेरह वर्ष वनवास के पीछे इनको मिल जाने की प्रतिज्ञा हो चुकी थी वह इन पाण्डवों का भाग दुर्योधनादि क्यों लिये बैठे हैं ३४ इससे अब इस विषय में युद्ध करते २ जो इन पाण्डवों का वध भी होजाय तौभी प्रशंसाही के योग्य है क्योंकि अपने पितृ पितामहादिकों का राज्य दूसरे के राज्य से विशेष है हे संजय! ये पुराने राजधर्म जो हमने तुमसे कहे वे सब राजसभा में कौरवों के सामने कहना ३५ व मृत्यु के वशीभूत जिन मूढ़ राजाओं को दुर्योधन ने बुलाया है सभा में इनके भी सामने यह सब वृत्तान्त कहना जोकि दुष्ट दुर्योधनादिकों ने सभा के बीच में किया था ३६

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कि परमयशस्विनी शीलवती रोदन करती पाण्डवों की प्राणप्रिया भार्या द्रौपदीजी को घर से पकर मँगाया व भीष्मादि कुरुवंशीय देखते रहे ३७ उस समय जो कोई बाल वृद्ध कुरुवंशीय ऐसा कर्म करते दुश्शासन को रोंकते तौ धृतराष्ट्र हमारा प्रियकरते व उनके पुत्रों का कल्याण होता नहीं तौ इसके बदले में जो होगा सो सब जानेंगे ३८ दुश्शासन दुष्ट जबरदस्ती द्रौपदीजी को पकरे घसीटता हुआ सभा में श्वशुरों के सामने लाया उस समय करुणापूर्वक रोदन करती हुई द्रौपदी ने चाहा कि कोई हमारा नाथही बचावै पर विदुर को छोड़ और किसी को नाथ न देखा ३९ मारे दीनता के सब राजा बटुरे सभा में बैठे रहे कोई बोल न सके एक विदुरजी धर्मार्थयुक्त वचन अपनी धर्मबुद्धि से उस अल्पबुद्धि दुश्शासन से बोले ४० इससे हे सञ्जय! उस सभा में तुम भी थे कुछ नहीं बोलसके अब पाण्डवों को धर्म का उपदेश किया चाहतेहौ व द्रौपदीजी ने तौ उस सभा में जाय ऐसा शुद्ध व दुष्कर कर्मकिया कि जिससे शोकसागर में डूबते हुए पाण्डवों को तथा अपना को उबार लिया जैसे समुद्र के जल से नाव उबार लेती है ४१ जहां कि श्वशुरोंके समीप खड़ी द्रौपदी से कर्ण ने कहा कि हे द्रौपदी! अब तुम्हारी अन्यत्र गति नहीं है अब दासी बन धृतराष्ट्र के घर को चलो तुम्हारे पति हार गये उनको जीते न समझो अब अपने वास्ते और पति अङ्गीकार करलो ४२ । ४३ वह कर्ण का बाणरूप वचन अतितीक्ष्ण अर्जुनजी के कानों से होकर हृदय में पैठ गया है व वह मर्मघाती अति घोर वाग्बाण अन्तःकरण के हाड़ों को काटता हुआ उनके हृदय में चुभ गया है ४४ व जब युधिष्ठिरादि वन जाने के लिये मृगचर्म धारण करने लगे उस समय दुश्शासन ने जो कटुक वचन कहे कि ये सब मर गये इनके लिये तिल खोंट डारो अब ये मरकर बहुत दिनों तक नरक में रहेंगे ४५ व गान्धार देश के राजा शकुनी ने छल से जुआं खेलने के समय पार्थ से कहा कि नकुल तौ हार गये अब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तुम्हारा क्या है तुम द्रौपदी को बाजी लगाय जुआं खेलो ४६ वह सब सञ्जय तुम भी जानते हो कि जुआं खेलने के समय कैसे २ निन्दित वचन उन लोगों ने किये परन्तु अब हम यह प्रार्थना करते हैं कि यह कार्य करने के लिये जो हम जाने पावैं तौ ४७ जो पाण्डवों का अर्थ भी न छोड़ें व कौरवों को समझा भी सकें तो हमको तो बड़ी पुण्य व महा उदय हो व कुरुवंशीय मृत्यु की फांसी से छूटें ४८ परन्तु यह तौ तब हो जो कौरव लोग नीतियुक्त, धर्मवती, अर्थवती, हिंसारहित हमारी वाणी की ओर दृष्टि दें व सामने पहुँचने पर कुरुवंशीय हमारी पूजा करें ४९ व जो इसके विपरीत हुआ हम गये भी व हमारा वचन उन्होंने न माना तो संग्राम करने के लिये तैयार महारथी अर्जुन व भीमसेनजी से ध्वस्त व अपने कर्मों से ही भस्मीभूत ही धृतराष्ट्र के पुत्रों को जानों ५० दुर्योधन अभी अपने घर बैठे रूखे वचन पाण्डवों को कहते हैं कि ये लोग हम से पराजित हो गये सो हाथ में गदा लिये प्रमत्त भीमसेनजी समय पर दुर्योधन को स्मरण करावैंगे ५१ दुर्योधन क्रोधमय बड़ा भारी वृक्ष है उसके स्कन्ध कर्ण हैं व डारें शकुनी हैं व फूल फल दुश्शासन हैं व बुद्धि के नाशक राजा धृतराष्ट्र उसकी जड़ हैं ५२ व युधिष्ठिरजी धर्ममय बड़े भारी वृक्ष हैं उस वृक्ष के स्कन्ध अर्जुनजी व भीमसेनजी शाखा नकुल सहदेव फूल फल हम वेद व ब्राह्मण उसके मूल हैं ५३ व पुत्र सहित राजा धृतराष्ट्र वन हैं व उस वन में व्याघ्ररूप ये पाण्डुपुत्र हैं इससे हे सञ्जय ! व्याघ्रों सहित यह वन न काटो कि वन से निकल वे व्याघ्र सबका विनाश करें ॥ ५४ ॥

दो० वन बिन व्याघ्र मरै कटै, व्याघ्र विना वन जानु ।
तासों रचै व्याघ्र वन, वन पालै त्यहि मानु ॥ १ । ५५ ॥
लता सुयोधन आदि हैं, पाण्डव सरल महान ।
विना बड़े तरुपर चढ़े, लता न बढ़ै अलान ॥ २ । ५६ ॥
पाण्डव सेवा करने को, अरु करने को युद्ध ।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उद्यत हैं धृतराष्ट्र कहँ, रुचै करैं सो बुद्ध ॥ ३ । ५७ ॥
धर्मधुरीण प्रवीण ये, पाण्डव चहत मिलाप ।
समरथयोधा लखि इन्हें, किमि इमि करत प्रलाप ॥ ४ । ५८ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्व्वण्येकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

तीसवां अध्याय ।

दो० कह बतीसवें महँ कह्यो, धर्म तनय जो बैन ।
सञ्जयसों चलते समय, सकल सकल सुखऐन ॥ १ ॥

श्रीकृष्णचन्द्रजी के ऐसे वचन सुन सञ्जयजी बोले कि हे नरदेव, देव, पाण्डव ! अब हम आप से आज्ञा माँगते हैं व जाते हैं हमने जो वचन कहे हैं वे कुछ मन में कोई बात कुटिलता राख नहीं कहे कि उनको विचार दुख माना जाय आप का कल्याण हो १ व जनार्द्दन जी, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, सात्यकी, चेकितान इन सब आप लोगों से भी जाने के लिये आज्ञा माँगते हैं आप लोगों का कल्याण हो हे महाराजो ! हमारे ऊपर कृपा दृष्टि बनी रहै २ जब सञ्जय जी ऐसा कह बिदा होने लगे तौ युधिष्ठिरजी बोले कि अच्छा संजय अनुमति है जाव तुम्हारा कल्याण हो, हम लोगों के अप्रिय वचनों का स्मरण कभी न करना क्योंकि हम लोग व कौरव लोग भी तुमको जानते हैं कि ये शुद्धात्मा मँझुवा सभा में स्थित हैं ये किसी की सी नहीं कहते ३ तुम यथार्थ वक्ता, सुप्रिय, कल्याण वचन, शीलवान् व सन्तोषी, दूत हौ व कभी तुम्हारी मति मोहित नहीं होती व कभी दुर्वचन सुन क्रोध नहीं करते ४ व न कभी रूखी, मर्मस्थलभेदिनी, नीरस व कार्यहीन वाणी बोलते हम जानते हैं कि धर्मयुक्त, अर्थवती व हिंसारहित वाणी सदा बोलते हौ ५ प्रियतम दूत हमारे तुम्हीं हो व दूसरा कोई आवे तौ विदुरजी आवें क्योंकि हम लोग तुम को बार-बार बहुत दिनों से देखते हैं तुम अर्जुन के समान हमारे सखा हौ ६

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हे सञ्जय! यहां से शीघ्रही जा प्रणाम करने के योग्य ब्राह्मण लोगों से हमारी ओर से स्तुति करना क्योंकि वे लोग विशुद्ध वीर्य, ब्रह्मचर्य से वेदाध्ययन करनेवाले उत्तम कुल में उनका जन्म व सर्व धर्मयुक्त होते हैं ७ व स्वाध्यायी, संन्यासी, ब्राह्मण, तपस्वी जो नित्य वन में रहते हैं इन सबों से हमारी ओर से प्रणाम करना व अन्य सब लोगों की कुशल सबसे कहना ८ व राजा धृतराष्ट्रजी के पुरोहित से तथा आचार्य, ऋत्विजों से भी अच्छी तरह से मिलना व उनकी कुशल पूछना यहां की उनसे कहना ९ व जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों से पृथक् शूद्र लोग वहाँ बसते हैं व वृद्ध मनस्वी शील बलवान् हैं व कहते ही कहते हम लोगों का स्मरण करने लगते हैं व यथा-शक्ति कुछ अपने धर्म के अनुसार काम करते हैं १० उनसे हम को कुशलपूर्वक बताय फिर हमारी ओर से उनको पूछपाछ देना व पीछे फिर उन का अनामय पूछना कि अच्छे तो हो व जो लोग राज्य में उद्यम कर जीते हैं व जो लोग बड़े २ अधिकारों पर नियुक्त हो पालन पोषण करते हैं इन सब लोगों को भी पूछना ११ व द्रोणाचार्यजी से भी बहुत २ प्रकार से प्रणाम कहना जो कि हम लोगों के इष्ट आचार्य हैं व नीति निपुण विधान करने के अधिकारी व वेदों के पढ़ने के समय ब्रह्मचर्य जिन्होंने धारण किया था व जिन्हों ने अस्त्र को फिर चार चरण का बनाया उस अस्त्र के ४ चरण ये हैं कि मन्त्र उपचार प्रयोग व संहार १२ व सब विद्या पढ़े, रणकर्म में दक्ष, चतुश्चरणास्त्र-कारी, गन्धर्व पुत्रसम रूप धारी, अति वेगचारी अश्वत्थामा से भी हमारी ओर से कुशल पूछना १३ व महारथ आत्मविद्याविशारद कृपाचार्यजी के स्थान पर जाय हमारी ओर से बार २ हमारा नाम ले तुम उनके चरण छूना १४ व जिनमें शूरता, अक्रूरता, तपस्या, बुद्धि-मत्ता, शीलता, विशेष श्रवणशक्तिता, पराक्रमता, धारणतादि गुण हैं ऐसे कुरुसत्तम भीष्मजी के चरण छूकर हमारा नाम वहां लेना १५ हे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

संजय ! बुद्धिचक्षु, कुरुवंशियों के नायक, बहु शास्त्रश्रुत, वृद्धसेवी, अति बुद्धिमान् व अतिवृद्ध राजा धृतराष्ट्रजी को प्रणाम कर उनसे हम को अरोगी बताना १६ व मन्द, मूर्ख, शठ, पापशील व जो पृथ्वी भर का राज्य करता है ऐसे दुर्योधन से भी हमारी ओर से कुशल पूछना १७ व बड़ा धनुर्द्धर कौरवों में शूरतम उसका छोटा भाई दुश्शासन जो कि उसी के समान दुष्ट है उससे भी कुशल पूछना १८ व जिन वाह्लिक देश के राजा को कौरवों पाण्डवों के मिलाप होजाने के सिवाय अन्य कुछ प्रयोजन नहीं उन बुद्धिमान् राजा से हमारा प्रणाम कहना क्योंकि वे बड़े साधुस्वभाव हैं १६ अनेक श्रेष्ठ गुणों से युक्त विज्ञानवान्, सौम्यस्वभाव व स्नेह से सदा अमर्ष सहनेवाले सोमदत्त हमारे पूजनीय हैं २० महा धनुर्द्धर, महारथी, कुरुवंशियों में पूजनीय, सौमदत्ति हमारे भाई व सखा हैं मन्त्री सहित उनसे कुशल पूछना २१ व और भी जो २ कुरुवंशियों में मुख्य २ हों चाहै युवा, पुत्र, पौत्र, भाई जो कुछ हम लोगों का लगता हो उसके साथ यहां से जो २ योग्य हो उससे वह २ कह कुशल पूछना २२ व जिन २ राजाओं को पाण्डवों से युद्ध करने के लिये दुर्योधन ने बुलाया है वशाति, शाल्व, केकय, अम्बष्ठ, त्रिगर्त्तादि, पूर्व, उत्तर, दक्षिण, पश्चिम किसी देश के रहनेवाले हों व पर्वतीय हों परन्तु अक्रूर व शील वृत्तयुक्त हों तौ उन सबों की कुशल पूछना २३ । २४ व हाथी रथ घोड़ों पर चढ़नेवाले व पैदल चलनेवाले जितने लोग श्रेष्ठ २ हैं उन सबों से हम को कुशलयुक्त बताय उनकी कुशल पूछना २५ व राजा के अमात्य, द्वारपालक सेनापति कोशाधीश जमा खर्च लिखनेवाले व धन एकत्र करनेवाले जो लोग हैं उन लोगों से भी कुशल पूछना २६ व कुरुवंशियों के बीच में श्रेष्ठ, विज्ञ, महापण्डित, सब धर्मयुक्त व जिसको युद्ध करना कभी नहीं अच्छा लगता ऐसे वैश्यापुत्र से कुशल पूछना २७ परद्रव्य हरने में निपुण जुआं खेलने में अद्वितीय, गुप्तछली, पांशा खेलने में बड़ा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चतुर, गोटी बसने में बड़ा विज्ञ, द्यूतविद्या में दुर्जय, युद्ध में असमर्थ ऐसे चित्रसेन से कुशल पूछना २८ परद्रव्य हरने में चतुर, पांशा खेलने में अद्वितीय, दुर्योधन का मान करने के लिये मिथ्यावादी गान्धार देश के पर्वतीय राजा शकुनी से भी कुशल पूछना २९ व जो अप्रधृष्य पाण्डवों को अकेला रथ पर सवार हो जीतना चाहता है व मोहित पाण्डवों को मोहित करने में अद्वितीय वैकर्त्तन है उससे भी कुशल पूछना ॥३०॥

दो० भक्त गुरू भर्त्ता पिता, माता सुहृद हमार।
दूरदर्शि मन्त्री विदुर, पूछ्यो कुशल उदार ॥ १ । ३१ ॥
गुणयुत नारी वृद्ध जो, सब मम मातु समान।
उन सबपहँ तुम जायके, पूछ्यो कुशल महान ॥ २ । ३२ ॥
पुत्र पौत्र जीवत तुम्हैं, पालत क्रौर्य बिहाय।
इमि उनहूंसन कह्यहु सुखि, अहैं युधिष्ठिर राय ॥ ३ । ३३ ॥
जो भार्या कौरवन की, कुशल उनहुँ सन पूछु।
गुप्त रहत निज गृहसयुग, करत काम की छूछु ॥ ४ । ३४ ॥
करत श्वशुर सेवा सुकर, ज्यहि तुमपति अनुकूल।
त्यहिविधि कारजकरहुसब, कबहुँ करहु जनि भूल ॥ ५ । ३५ ॥

व हे सञ्जय! जो हमारी प्यारी दुलारी पतोहैं हैं व अपने कुल की मर्यादा पर चलतीं व सब सुशीलतादि गुणयुक्त हैं उनसे जाय कहना कि प्रसन्न हो युधिष्ठिर ने कहा है कि तुम्हारी सन्तान बढ़ै ३६ हे सञ्जय! जो अभी कन्या हैं जिन का विवाह नहीं हुआ उनको गोद में बैठाय२ अनामय पूछना व हमारी जबानी कहना कि तुम लोगों को कल्याण युक्त व तुम्हारे अनुकूल पति मिलैं व तुम लोग अपने २ पतियों के अनुकूल रहो ३७ हे तात! अलंकृत, सुन्दर वस्त्र धारण किये, सुगन्ध लगाये, सुन्दर रूप बनाये, सुखवती, भोगवती व शीघ्र ही सबके सामने आनेवाली व बहुत युक्ति से शीघ्र २ बोलनेवाली वेश्या लोगों से भी हमारी ओर से पूछना ३८ व कौरवों की जितनी दासियां, दास व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अन्धे, पँगुले, लँगड़े और भी लोग उनके आश्रित हों उन सबों से प्रथम हमको कुशलपूर्वक बताय पीछे उनकी कुशल पूछना ३६ कि तुम लोगों की पुरानी जीविका चली आती है कि नहीं व दुर्योधन के यहां से भोग के पदार्थ तुम लोगों को मिले जाते हैं व नहीं व जो अङ्गहीन, कृपण, वामन, अन्ध, बूढ़े, हाथी घोड़ों परके नौकर हथिवाल सहीस आदि दुर्योधन दयावान् के यहां रहते हैं उनसे भी प्रथम हम को कुशल बताय पीछे उनकी कुशल पूछना ४०।४१ व कहना कि तुम लोग अपनी २ खराब जीविका के दुःख से न डरो परलोक में तुम लोगों ने अवश्य पाप किया है परन्तु अब थोड़े ही दिनों की बात है शत्रुओं को जीत सुहृदों के ऊपर अनुग्रह कर तुम लोगों को कपड़े व अन्न से अच्छी तरह पोषेंगे ४२ व दुर्योधन से दूतों की द्वारा यह कहला देना कि ब्राह्मणों को जो वार्षिकी जीविका हमने दे रक्खी है उसको कहीं वे न मिटावें व जो कुछ उन्होंने अपनी ओर से दी होंगी वे भी हम आय सब देखेंगे अच्छी तरह उन लोगों की जीविका सुधार रक्खें ४३ व जो अनाथ, दुर्बल, मूढ़ लोग हैं सदा काम किया करते व कुछ भी नहीं कर सकते ऐसे बिचारे दीनों से भी हमारी जबानी कुशल पूछना ४४ व हे सञ्जय! जो और लोग नानादिशों से आय २ अन्न के लिये दुर्योधन के शरण में हों उन सब लोगों की ओर देख सबों से कुशल पूछना ४५ इस प्रकार सब आये हुए अभ्यागतों से व सब दिशों से आये हुए दूतों से उनकी कुशल पूछ पीछे से हमारी कुशल उनसे कहना ४६ जो योधा दुर्योधन ने बुलाये हैं पृथ्वी में वैसे और नहीं हैं यह न समझें शत्रुओं को नाशनेवाला धर्म हमारे ही यहां है सेना से शत्रु नहीं मारा जाता किंतु धर्म ही से मारा जाता है ४७ हे सञ्जय! दुर्योधन से यह भी वृत्तान्त कहना कि जो इच्छा तुम्हारे हृदय को खेद देती है कि हमीं सब राज्य लेलें उसी इच्छा से हम सब कौरवों को शिक्षा देंगे ॥ ४८ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो० तुम्हें जौन प्रिय तिमि नहीं, रहब सुयोधन जानु।
इन्द्रप्रस्थ देवहु नतरु, युद्ध वेग ही ठानु ॥ १ । ४६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सञ्जयगमनोनामत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

इकतीसवां अध्याय।

दो० यकतिसवें अध्याय महँ, जिमि सञ्जय सों फेरि।
कह सँदेश कुन्तीतनय, कहब स्वई नहिं देरि ॥ १ ॥

फिर युधिष्ठिरजी बोले कि हे सञ्जय! साधु व असाधु, बालक व वृद्ध, अबल व बलवान्, सबको ईश्वर अपनी वश में करता है १ व वही बालक को पण्डित करता व पण्डित को बालक इसी तरह पूर्व के कर्मानुसार सबको सब देता है २ जो वे हमारा बल जानना चाहते हों तौ जैसा है ज्यों का त्यों कह देना अथवा सम्मतकर कराय हर्षित हो यथा तथा कहना ३ हे सञ्जय! कौरवों के समीप जाय महाबलवान् धृतराष्ट्रजी के निकट जाय प्रणामकर हमारी ओर से कुशल पूछना ४ व कुरुवंशियों के मध्य में बैठे हुए राजा से कहना कि हे राजन्! तुम्हारे ही वीर्य से पाण्डव लोग सुख से जीवते हैं ५ व तुम्हारे ही प्रसाद से उन बालकों ने राज्य पाया था अपने आगे उनको राज्य पर स्थापित करने में उपेक्षा न कीजिये क्योंकि आपकी उपेक्षा में वे न रहेंगे ६ व हे सञ्जय! सब ब्रह्माण्ड एक ही किसी के पास नहीं है इसमें बहुत अवकाश है कहीं सब लोग बटुर कर रहेंगे तुम शत्रुओं के वश में न परना ७ व उसी तरह, भारतवंशियों के पितामह व शन्तनुजी के पुत्र भीष्मजी से हमारा नाम कह कि युधिष्ठिर आपको प्रणाम करते हैं इतना कह शिर झुकाय अभिवादन करना ८ व हमारे पितामह से अच्छी तरह अभिवादन कर विनयपूर्वक कहना कि आपने डूबता हुआ राजा शन्तनुजी का वंश फिर उतराया ९ अब अपने मत से आप ऐसा करें जिसमें तुम्हारे पौत्र परस्पर प्रीतिमान् हो जीवते रहें १०

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व इसी रीति पर कुरुवंशियों के परममन्त्री विदुरजी से कहना कि हे सौम्य ! युधिष्ठिरजी के विषय में जो हित चाहते हो तो ऐसी बातें कहो जिसमें युद्ध न हो ११ व राजसभा में कुरुवंशियों के मध्य में बैठे असहनशील राजा के पुत्र दुर्योधन से बार २ सिखाय कहना कि अपापिनी इन हमारी द्रौपदी को जो तुम लोगों ने सभा के बीच में तिरस्कार किया उसको हमलोगों ने क्षमा किया इससे कौरवों को न मारेंगे १२ । १३ व इसी तरह पूर्व परके बहुत से क्लेश पाण्डवों ने क्षमा किये यद्यपि बड़े बलवान् भी रहे वह सब कौरव लोग जानते हैं १४ हे सौम्य ! जो हमलोगों को मृगचर्म पहिराय तुमने वनवास दिया है वह दुःख हमलोगों ने क्षमा किया इससे अब कौरवों को न मारेंगे १५ व जो कुन्तीजी के सामने द्रौपदी के केश पकर तुम्हारे मत से दुश्शासन ने खींचा है वह भी दुःख हमलोगों ने क्षमा किया १६ अब अपना राज्य पावैं तुम अपनी लोभिनी बुद्धि पराये धन से लौटावो १७ अब हमलोग शान्ति ही चाहते हैं जो राज्य का एक भी देश हमलोगों को देवो तौ सब शान्ति हो जावै व परस्पर हमारी तुम्हारी प्रीति बनी रहै ॥ १८ ॥

दो० कुशथल वृकथल माकँदी, वारणवत ये चार ।
वसन हेतु यक जो चहहु, पँचवां करहु विचार ॥ १ । १९ ॥
पांच ग्राम हम पांचहू, भाइन देहु न आन ।
ज्ञातिसङ्ग हम सबन की, शान्ति होय बलवान ॥ २ । २० ॥
भ्राता भ्राता सों मिलै, मिलै पिता सों पुत्र ।
हर्षित कौरव द्रुपद नृप, रहैं लड़ैं नहिं कुत्र ॥ ३ । २१ ॥
सब पाञ्चाल अरु कौरवन, अक्षत चहत महीप ।
हम सब चहत प्रसन्न मन, शान्त होन कुलदीप ॥ ४ । २२ ॥
शान्त होब अरु समर महँ, खड़े होब हम दोय ।
चहत धर्म अर्थहु चहत, मृदु दारुण जो होय ॥ ५ । २३ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

का० ज०। अविस्थल सुवृकस्थल जौन। माकन्दी है शुभथलतौन॥ और वारणावत अभिराम। और एक जो चहहु ललाम॥ एक एक भ्रातन्ह प्रति एक। देहु ग्राम तुम सहित विवेक॥ ज्ञातिन्ह सहित तुम्हें मतिमान। शान्ति होयगी सहित विधान॥ भ्राता भ्राता को सुखदान। पितापुत्र को पालकप्रान॥ होय सुखी सब सभा विशाल। कुरुवंशी अरु जे पाञ्चाल॥ सुमनसहोहिं सामते सर्व। कुरुपाञ्चाल न मरैं अखर्व॥ चाहत हैं हम साम अवश्य। नतरु युद्ध तजि कै आलस्य॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकत्रिंशोऽध्यायः॥ ३१॥

बत्तीसवां अध्याय॥

दो० बत्तिसवें महँ कहब जिमि, सञ्जय कौरव पास।
जाय कहे पाण्डवन के, समाचार करि व्यास॥ १॥

वैशम्पायनजी जनमेजयजी से बोले कि धृतराष्ट्रजी की आज्ञा सब पूरी कर युधिष्ठिरजी की आज्ञा पाय सञ्जय हस्तिनापुर को गये १ व वहां शीघ्रही पहुँच पुर में प्रवेश कर अतिवेग अन्तःपुर की ड्योढ़ी पर जाय द्वारपाल से बोले २ हे द्वारपाल! महाराज धृतराष्ट्रजी से जाय कहो कि पाण्डवों के यहां से सञ्जय आये हैं खबरदार देर न करो ३ जो राजा जागते हों तौ कहो कि जब उनको विदित होजाय तौ हम प्रवेश करैं हम को बहुत आवश्यक बात कहनी है इतना सुन द्वारपाल राजा के पास गया व हाथ जोर बोला ४ हे महाराज! सञ्जय आप को प्रणाम करते हैं व आप के दर्शन के लिये द्वार पै खड़े हैं पाण्डवों के यहां के समाचार लाये हैं उनके लिये क्या आज्ञा है ५ यह सुन धृतराष्ट्रजी बोले कि उनसे हम को अतिकुशली बतावो अच्छी तरह आये हुए सञ्जय को यहां लावो उनके देखने के लिये हम भी किसी समय में भी असमर्थ नहीं हैं वे द्वारही पर क्यों खड़े रहे सीधे यहां क्यों नहीं चले आये ६ वैशम्पायनजी बोले कि द्वार-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पाल ने जब वैसाही सञ्जयजी से कहा तो राजा की आज्ञा पाय बड़े चतुर शूरवीर व श्रेष्ठ लोगों से रक्षित राजभवन जाय सिंहासन पर विराजमान राजा धृतराष्ट्रजी से हाथ जोर सञ्जयजी बोले ७ कि हे महाराज! हम सञ्जय हैं प्रणाम करते हैं पाण्डवों के पास से हो आये आप के प्रणाम कर पाण्डुजी के पुत्र युधिष्ठिरजी ने आप की कुशल पूछी है ८ व उन्होंने आप के सब पुत्रों को भी प्रसन्नता से पूछा है व यह भी कि महाराज पुत्र पौत्रों समेत कुशल तौ हैं व जो आपके सुहृद मन्त्री व अन्य उपजीवी नौकर चाकर हैं उन समेत राजा कुशल हैं यह भी पूछा है ९ धृतराष्ट्रजी बोले कि हे तात, संजय! तुम को व युधिष्ठिर को सुख से अभिनन्दित कर कहते हैं कि भला अपने पुत्र, अमात्य, भाइयों सहित कौरवों के राजा युधिष्ठिरजी बनाय अच्छे तौ हैं १० संजयजी बोले कि अमात्यादिकों सहित युधिष्ठिरजी बहुत कुशल पूर्वक हैं आपके आगे जो कुछ धनादिक पाते थे अब फिर उसके पाने की इच्छा करते हैं व दोष रहित धर्म अर्थ करते बहुत शास्त्र सुनते उदार चित्त रहते शीलवान् हैं व शुभाशुभ विचार में दृष्टि रखते हैं ११ व युधिष्ठिर के अन्य धर्म से मुख्य धर्म दया है व दया से भी जो धर्म यज्ञादि धन से होते हैं वे मुख्य हैं व उनका सुख प्रिय सप्रयोजन कामों में रहता है १२ ईश्वर की प्रेरणा से पुरुष सब कार्य करता है जैसे कठपुतली नचानेवाले की प्रेरणा से सब कार्य करती है युधिष्ठिर जी को ऐसे कार्य देख पर तौ भी कष्टित देख मनुष्य के कार्य से ईश्वर का कार्य बड़ा मानते हैं १३ व पापाधिक घोररूप कहने के अयोग्य यह तुम्हारे यहां का कर्म देख जबतक उत्कृष्ट शत्रु बिचारे कि देखें ये क्या चाहते हैं तबतक अन्य पुरुष कार्य कर प्रशंसा पाय जाय १४ युधिष्ठिरजी ने तो अप्रयोजन पुरानी केचुल छोड़े हुए सर्प के समान पाप छोड़ अपने स्वाभाविक आचरण से शोभित होते हैं क्योंकि उन्होंने सब पाप अब आप के ऊपर छोड़ दिया १५ बड़े खेद की

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बात है कि धर्म अर्थ युक्त श्रेष्ठ लोगों के आचरण से रहित अपना कर्म महाराज सुनिये जिसके करने से यहां तो निन्दित हुए हो फिर स्वर्ग में भी पाप पीछे लगेगा १६ सो अब उन पाण्डवों को छोड़ अपने पुत्र के वशीभूत हो अकेले ही दुर्लभ अर्थ आप लिया चाहते हो व पृथ्वी पर अधर्म शब्द भी आप अकेलेही लिया चाहते हो हे महाराज! यह निन्द्य कर्म आपके योग्य नहीं है १७ क्योंकि बुद्धिहीन, दुष्कुल में उत्पन्न, क्रूरस्वभाव, दीर्घ वैरी, क्षत्रियों की विद्या में अधीर, हीन वीर्य व अशिष्ट पुरुषों के ऊपर आपदें आनी चाहिये १८ व आप तौ अच्छे कुल में उत्पन्न, बलवान्, यशस्वी, बहुश्रुत, सुखजीवी, जितेन्द्रिय, धर्म अधर्म दोनों के सेवक हो फिर आपके ऊपर भी अभाग्य सवार हो तौ बड़े आश्चर्य की बात है १९ आपने यह निन्द्य कर्म पाण्डवों को वनवास रूप कैसे किया क्योंकि ऐसे श्रेष्ठ भीष्मपितामह व विदुरादि मन्त्रियों ने कहा भी कि जुआं न खेलो पर नहीं माना तुम तो बड़े बुद्धिमान् व विपत्ति समय में भी धर्म अर्थ के करनेवाले थे हे महाराज ! ऐसा कर्म तो सब मन्त्रियों से हीन व क्रूर मनुष्य करता है २० हाय बड़े खेद की बात है कि आपके यहां सब मन्त्रवेत्ता व कर्म करने में नित्य युक्त ऐसे २ मन्त्री विद्यमान ही रहे उनका यह बलवान् निश्चय हुआ कि होते २ आय कुरुवंशियों को नाश होने पर पहुँचा दिया २१ जो तुम्हारे पापकर्म से प्रेरित युधिष्ठिरजी ने पाप करने की इच्छा की तो सब कुरुवंशियों का अकाल मरण हुआ जो कहो ऐसा करने से उनको गोत्रबध दोष होगा तो यह बात नहीं तुम्हारे ही कारण तो चोरों के समान पाप हुआ इससे पाप व निन्दा तुम्हारे ऊपर छोड़ वे अपाप व अनिन्द्य रहेंगे २२ ईश्वरों के विषय से बाहर कुछ नहीं सब ईश्वराधीन ही है क्योंकि अर्जुनजी परलोक तक इसी शरीर से चले गये उनको भी वनवासादि के दुःख हुए तौ इसमें कुछ सन्देह नहीं कि मनुष्य की कर्त्तव्यता कुछ नहीं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

है २३ व इसी से इन शौर्य्यादि गुणों को कर्म्मानुसार घटती बढ़ती को प्राप्त देख व ऐश्वर्य्य अनैश्वर्य्य अनित्य देख पार न पाय राजा-बलिजी ने काल को छोड़ और कुछ बलाबल करने का कारण नहीं माना २४ चक्षु, श्रोत्र, नासिका, त्वचा व जिह्वा येही पांच मनुष्य के ज्ञान स्थान हैं इनकी जब तृष्णा का नाश होता तभी सुख, दुःख, लाभ, अलाभ को समान जान पुरुष इन्द्रियों को अपने २ विषय से निवृत्त करता है २५ परन्तु हम ऐसा भी पुरुष का कर्म्म नहीं मानते कि सब ईश्वराधीन ही हैं क्योंकि माता व पिता के कर्म्म से पुरुष उत्पन्न होता है व विधिपूर्व्वक भोजन करता है तभी शरीर रहता है उस समय कौन कर्म करताहै २६ व सदा प्रिय, अप्रिय, सुख, दुःख, निन्दा, प्रशंसा, इनको सब समय २ पर भजते हैं परन्तु जब वह अपराध करता तौ दूसरा मनुष्य उसकी निन्दा करता जब वह अच्छे काम करता तौ उसी की प्रशंसा करने लगता २७ इससे पाण्डवों के विरोध से हम आपकी निन्दा करते हैं जो हमारा कहा न मानोगे युधिष्ठिरादिकों को राज्य में भाग न दोगे तो प्रजाओं के लिये यह कर्म्म अवश्य हो जायगा कि तुम्हारे अपराध से अर्जुनजी कौरवों को भस्म करदेंगे जैसे अग्नि सूखी घास को जलाता है २८ हे राजन्! जुआं खेलने के समय जो तुम अकेले कामात्मा अपने पुत्र के वश में आय बड़ाई करते हुए इस लोक में शान्त न हो गये उसके परिणाम का यह फल देखो २९ हे नरेन्द्र! अश्रेष्ठ कर्णादिकों के ग्रहण करने से व श्रेष्ठ विदुरादिकों के दूर करने से अब ऐसे दुर्बल हो गये हो कि सब धन धान्य समेत इस पृथ्वी की रक्षा नहीं कर सकते हो यह अब हाथ से जाती है। ३०।

दो० आयसु होवे शयन हित, मार्ग श्रमित हम भूप।
प्रात समय पाण्डव वचन, सभा सुनै अतिरूप॥ १। ३१॥
कहा नृपति आयसु अहै, शयन करहु अब सूत।
प्रात सभा महँ सब सुनब, धर्मतनय कहनूत॥ २। ३२॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

का०न०चौ० हमरथ वेग श्रमित हैं भूप। शयनाज्ञा अब करहु अनूप ॥
भोर सभा महँ सहकुरुवंस। सुन्यहु युधिष्ठिर वचनप्रशंस ॥
धृतराष्ट्रउवाच ॥ भोर सभा में पाण्डवबैन। सुनि हैं कुरुकुल सहमतिऐन ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥

तेंतीसवां अध्याय।

दो० तेंतिसवें महँ कहब जिमि, पूछ्यहु विदुर महीप।
विदुर कह्यहु बहु मन्त्र तहँ, सुनि प्रसन्न कुलदीप ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि सञ्जय को अपने घर जाने की आज्ञा दे महाप्राज्ञ राजा धृतराष्ट्रजी द्वारपाल से बोले कि हम विदुरजी को देखा चाहते हैं उनको यहाँ लावो विलम्ब न हो १ धृतराष्ट्रजी का भेजा दूत विदुरजी के पास जाय बोला हे महाप्राज्ञ ! महाराज आपको देखा चाहते हैं २ दूत द्वारा ऐसी आज्ञा पाय विदुरजी राजभवन में आय द्वारपाल से बोले कि महाराज से जाय निवेदन करो कि विदुर आये हैं ३ द्वारपाल जाय महाराज से बोला कि, हे राजेन्द्र ! आपकी आज्ञा से विदुरजी आये व आपके चरण देखा चाहते हैं क्या करें हमको आज्ञा हो ४ धृतराष्ट्रजी बोले कि दूरदर्शी महाप्राज्ञ विदुरजी को यहाँ बुलाय लावो हम विदुरजी के दर्शन में कभी भी असमर्थ नहीं हैं ५ द्वारपाल जाय विदुरजी से बोला कि हे विदुरजी ! बुद्धिमान् राजा-साहब के अन्तःपुर में प्रवेश कीजिये क्योंकि महाराज ने हमको आज्ञा दी है कि हम विदुरजी के देखने में असमर्थ नहीं हैं ६ वैशम्पायनजी बोले कि इसके पीछे विदुरजी धृतराष्ट्रजी के स्थान पर जाय हाथ जोर चिन्ता करते हुए राजा धृतराष्ट्रजी से बोले ७ हे महाप्राज्ञ ! आपकी आज्ञा से हम विदुर हैं आये हैं जो कुछ करना हो तैयार हैं उसके करने की आज्ञा हो ८ धृतराष्ट्रजी बोले कि हे विदुरजी ! सञ्जय वहां से आये व हमारी निन्दाकर घर को गये प्रातःकाल सभा में युधिष्ठिर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के वचन वे कहैंगे ९ उन कुरुवीर का वचन हम नहीं जानते कि क्या है वही हमारे अङ्गों को जलाता है इसी से हमको निद्रा नहीं आई १० अब जागते में जरते हुए हमारा जिसमें कल्याण देखो वही हमसे कहो क्योंकि हे तात! तुम धर्म अर्थ में कुशल हो ११ जब से सञ्जय पाण्डवों के यहां से आये हैं तब से हमारे मन को यथावत् शान्ति नहीं है सब इन्द्रियां सुस्थिर नहीं हैं वे क्या कहैंगे यही हमको चिन्ता लगी है १२ विदुरजी बोले कि साधनहीन दुर्बल पुरुष जो बलवान् पुरुष के रगरे में परा व जिसका धन हर गया व कामी पुरुष व चोर इन चारों को नींद नहीं आती १३ हे महाराज! क्या इन महादोषों का स्पर्श तो कहीं नहीं हो गया कि कहीं दूसरे के धन की इच्छा किये तो नहीं सन्तप्त होते १४ धृतराष्ट्रजी बोले कि हम परम कल्याणकारी धर्म्मयुक्त तुम्हारे वचन सुना चाहते हैं क्योंकि इस राजवंश में एक तुम्हीं विज्ञानी हो १५ विदुरजी बोले कि हे धृतराष्ट्र! सर्व-लक्षणसम्पन्न पुरुष तीनलोकों का राजा होता है इससे युधिष्ठिर तुम्हारे प्रार्थना करने के योग्य हैं उनको आपने वन को भेजा १६ व तुम उसके विपरीत सर्व लक्षण हीन हो इससे राज्यांश पाने के योग्य नहीं क्योंकि नेत्रहीन ठहरे व धर्म्मात्मा भी हो व धर्म्म के विषय में चतुर भी बड़े हो यह उपहास की बात विदुरजी ने कही १७ व युधिष्ठिरजी ने अक्रूरता, दयालुता, सत्यता व पराक्रमता के हेतु तुम्हारा गौरव मान बहुत से क्लेश सहे १८ फिर ऐसे युधिष्ठिर को तो तुमने निकाल दिया अब दुर्य्योधन, शकुनी, कर्ण व दुश्शासन इन लोगों में ऐश्वर्य्य स्थापन कर तुम कैसे ऐश्वर्य्य चाहते हो १९ शास्त्र की अपेक्षा, शक्ति की अपेक्षा, वैराग्य की अपेक्षा, श्रद्धा की अपेक्षा इतने ज्ञान जिसको अर्थ से न खींच सके वह पण्डित कहाता है २० व जो अच्छे २ कार्य्यों का सेवन करै, निन्दित कार्य्यों का सेवन नहीं करै, नास्तिक नहीं होय व श्रद्धा-वान् हो ये सब पण्डित के लक्षण हैं २१ व क्रोध, अहर्ष, अहङ्कार,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

निर्लज्जता, अपना को पण्डित मानना जिसको ये दुर्गुण खींच न सकें वह पण्डित कहाता है २२ जिसकी कृत्य व मन्त्रित मन्त्र और कोई नहीं जानते जब वह कार्य्य कर चुकता तभी सब जानते वह निश्चय पण्डित कहाता है २३ शीत, उष्ण, भय, मैथुन, धनसमृद्धि, दरिद्रता ये जिसके कार्य्य में विघ्न न कर सकें वह निश्चय पण्डित कहाता है २४ जिसकी बुद्धि स्वभाव ही से चञ्चल है काम व अर्थ में नहीं टिकती व जो काम से अधिक अर्थ को मानता है वह निश्चय पण्डित कहाता है २५ व जिन मनुष्यों को पण्डितों की बुद्धि होती है वे यथाशक्ति किसी कार्य्य के करने की इच्छा करते व यथाशक्ति ही करते व अपमान किसी का नहीं करते २६ जो पुरुष अच्छी तरह दृढ़तापूर्वक जान लेने के लिये बड़ी देर तक सुनता व फिर झट जान लेता व सब कार्य्य जान ही कर करता है केवल इच्छा ही से नहीं करता कि जो बात हुई झट कर बैठा व जो विना अच्छी तरह पूछे किसी को उत्तर नहीं देता यह पण्डित का पहिला चिह्न है २७ व पंडितों की बुद्धि रखनेवाले मनुष्य जो मिलने के योग्य वस्तु नहीं उसकी इच्छा नहीं करते व जो वस्तु जाती रहती उसका शोच नहीं करते व विपत्ति समय में भी मोहित नहीं होते २८ व जो पुरुष निश्चय कर कार्य करता व विना कार्य की समाप्ति हुए उस कार्य को छोड़ता नहीं व सदा सप्रयोजन ही काम करता वह निश्चय पण्डित कहाता २९ हे भरतर्षभ! पण्डित लोग श्रेष्ठ ही कर्म में अनुराग करते व सदा ऐश्वर्य ही के कर्म करते व अपने हितकारी की निन्दा कभी नहीं करते ३० व जो पुरुष अपने सम्मान में हर्षित नहीं होता व अपमान में बहुत सन्तप्त भी नहीं होता व गङ्गाजी के कुण्ड के समान जो सदा अचल रहता वह निश्चय पण्डित कहाता है ३१ व जो सब प्राणियों का निश्चय जानता सब कर्मों का योग जानता व मनुष्यों के सब उपाय जानता ऐसा पुरुष निश्चय पण्डित कहाता है ३२ व जो पुरुष

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अकुण्ठित वचन होता लोक की कथाओं में अभिज्ञ होता तर्कणा करना जानता व जिसको सुनते २ तुरन्त स्मरण हो आता व जो बहुत ही शीघ्र ग्रन्थों का अर्थ कहता वह निश्चय पण्डित कहाता ३३ व शास्त्र जिसकी बुद्धि के पीछे चलता व बुद्धि शास्त्र के पीछे चलती व जिसने श्रेष्ठों की मर्यादा भिन्न नहीं की वह निश्चय पण्डित कहाता है ३४ व जो शास्त्र नहीं जानता पर सब कार्य करने में उन्नद्ध रहता व दरिद्र होकर भी उदार चित्त रहता व सदा जहां कहीं से पावे पर-धन ही खींचने का मन कुकर्म से रखता उसको पण्डित लोग मूर्ख कहते हैं ऐसे ही दुर्योधन हैं ३५ व जो अपना अर्थ छोड़ दूसरे के अर्थ के पीछे घूमता व मित्र के अर्थ मिथ्या कहता वह मूढ़ कहाता जैसा कि शकुनी है ३६ जो विना इच्छा किये हुए लोगों को अपनी ओर इच्छा कराता व जो उसकी ओर इच्छा करते हैं उनका परि-त्याग करता व बलवान् से वैर करता वह मूर्ख कहाता है जैसे आप ३७ व जो अमित्र को मित्र करता व मित्र से वैर करता व मारता भी है व दुष्ट ही कर्म करने का आरम्भ करता उसको पण्डित लोग मूढ़ कहते हैं ३८ व जो अपना काम भृत्यादिकों के द्वारा से ही कराता आप नहीं देखता सुनता सब कहीं अपनी जान उपाय ही किया करता व जो शीघ्र करने के योग्य है उसमें देर करता है वह मूढ़ है ३९ व जो पितरों की श्राद्ध नहीं करता व न देवताओं की पूजा करता व अच्छा मित्र नहीं करता उसको लोग मूर्ख कहते हैं ४० व जो विना बुलाये जाता व विना पूछे ही बहुत कहने लगता व अविश्वस्त का वि-श्वास मानता वह मनुष्याधम मूर्ख है ४१ व जो अपना में वही दोष होने पर भी औरों को वह दोष लगाता व अपना में सामर्थ्य न होने पर भी औरों के ऊपर क्रोध करता वह मूढ़ है ४२ व जो अपना बल नहीं जानता धर्म अर्थ वर्जित अलभ्य वस्तु विना यत्न ही किये लिया चाहता है वह मूढ़ बुद्धि कहाता है ४३ व जो अन्य के शिष्य को

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सिखाता व जो शून्य में राजा व औरों की स्त्रियों की उपासना करता व अदाता से कुछ पाने की इच्छा से उसकी सेवा करता है वह मूढ़ कहाता है ४४ व जो बड़ा भारी धन पाय व विद्या ऐश्वर्य पाय भी शान्त चित्त विचरता मदान्ध नहीं घूमता वह पण्डित कहाता है ४५ व जो अकेला ही अच्छा पदार्थ भोजन करता व सुन्दर वस्त्र आप ही धारण करता अपने अधीन भृत्यादिकों को कुछ नहीं देता उससे क्रूर और कौन होगा ४६ पुरुष अकेला ही पाप करता व फल बहुत से लोग भोगते हैं पर भोगनेवाले लोग छूट जाते हैं करनेवाला दोष-भागी होता है ४७ धनुर्द्धर का चलाया बाण एक को मारे वा न मारे परन्तु बुद्धिमान् की चलाई बुद्धि राजा सहित देशभर का नाश कर दे ४८ एक बुद्धि से कार्य अकार्य दो पदार्थों का निश्चय कर मित्र उदासीन व शत्रु इन तीनों को साम, दाम, भेद व दण्ड इन चारों से अपने वश में करो व पांच इन्द्रियों को जीत सन्धि, विग्रह, यान, द्वैधीभाव, स्वस्थानस्थिति, शत्रुद्रोह, चिन्तन ये ६ पदार्थ जान अति स्त्रीसेवन, द्यूत खेलना, शिकार खेलना, मद्य पीना, कठोर वचन बोलना, अति घोर दण्ड देना व वृथा धन खर्चना इन सातों को छोड़ सुखी रहो इसका दूसरा अर्थ वेदान्त की रीति पर यह है कि एक बुद्धि से नित्य अनित्य दो पदार्थों का निश्चय कर काम, क्रोध व लोभ इन तीन पदार्थों को शम, दम, उपरम व श्रद्धा इन चार पदार्थों से अपने वश में करो व पांच इन्द्रियों को जीत काम, क्रोध, लोभ, मद, मात्सर्य, अहङ्कार ये ६ व अशनाया, पिपासा, शोक, मोह, जरा व मृत्यु इन ६ पदार्थों को जान पांच इन्द्रियां व बुद्धि मन इन सात पदार्थों को छोड़ सुखी रहो ४९ विषरस एक पीनेवाले ही को मारता है शस्त्र से भी एक ही मारा जाता है परन्तु दुष्ट मन्त्री का मन्त्र, राज्य प्रजा सहित राजा का विनाश कराता है ५० अकेले स्वादुयुक्त पदार्थ न भोजन करे, अकेले बहुत अर्थों की चिन्तना न करे, अकेले मार्ग न चले,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जहां बहुत सोते हों अकेला बैठ न जागे ५१ हे राजन्! एक अद्वितीय जो ब्रह्म है उसे तुम नहीं जानते जो कि स्वर्ग के लिये सत्य सोपान है जैसे समुद्र उतरने के लिये नौका होती है ५२ क्षमा करने वालों में एक ही दोष होता है दूसरा कोई नहीं जो कि क्षमावान् को लोग असक्त मानने लगते हैं ५३ परन्तु वह दोष क्षमा करनेवाले को न मानना चाहिये क्योंकि क्षमा परम बल है अशक्तों को क्षमा गुण है व समर्थों का भूषण है ५४ लोक में क्षमा सबको वश कर लेती है व क्षमा से क्या नहीं सिद्ध होता क्योंकि शान्तिरूप खड्ग जिसके हाथ में है उसको दुर्जन क्या करेगा ५५ जहां खर न हो उस स्थान पर अग्नि गिरे तो अपने आप बुझ जाय व जो क्षमा नहीं करता वह बहुत से दोषों से अपना को युक्त कराता है ५६ एक धर्म परम कल्याणदायक है व एक क्षमा उत्तम शान्ति है व एक विद्या परम तृप्ति है व एक अहिंसा सब सुख देती है ५७ जैसे बिल में रहनेवाले अन्य जन्तुओं को सर्प निगल जाता है वैसे ही जो राजा युद्ध करने में कुशल नहीं उस राजा को व अप्रवासी ब्राह्मण को पृथ्वी निगल जाती है ५८ दो कर्म करता हुआ पुरुष इस लोक में शोभित होता है एक कठोर वचन न बोलता हुआ व दूसरे दुष्टों का सत्कार न करता हुआ सो दुष्ट शकुन्यादिकों का आप सत्कार करते हैं ५९ दो मनुष्य औरों का विश्वास बहुत करते हैं एक कामिनी स्त्रियां दूसरा अपने पूजितों की पूजा करनेवाला, जैसे आप अपने पुत्र दुर्योधन के पूजित शकुनी की पूजा करते ६० दो पुरुष लोक में शरीर शोषने के लिये बड़े तीक्ष्ण कण्टक हैं एक निर्द्धन होकर जो उत्तम पदार्थों को चाहता है व दूसरा जो असमर्थ हो कोप करता है वह असामर्थ्य तुम्हारे पुत्र में है ६१ विपरीत कर्म करने से दो पुरुष शोभित नहीं होते एक किसी कार्य के करने में उदासीन गृहस्थ व दूसरा कार्य करता हुआ संन्यासी सो आप अपने पुत्र के कलह निवारण करने में उदासीन रहते अच्छी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तरह कभी रोंकते नहीं ६२ हे राजन्! दो पुरुष स्वर्ग के ऊपर टिके रहते हैं एक क्षमायुक्त राजा, दूसरा दरिद्र होकर भी दानी, सो क्षमायुक्त राजा युधिष्ठिर हैं ६३ न्याय से आये हुए धन के दो अतिक्रम हैं एक अपात्र को देना दूसरा पात्र को न देना ६४ दो पुरुष संसार में गले में बड़ी भारी पर्वत की शिला बँधाय बड़े गहिरे पानी में फेंक देने के योग्य हैं एक धनवान् होकर भी जो दान नहीं देता व दूसरा जो दरिद्र होकर भी तपस्या नहीं करता सो दान तुम्हारा पुत्र नहीं करता ६५ हे राजन्! दो पुरुष सूर्यमण्डल भेदनकर ऊंचे को चले जाते हैं एक योगाभ्यासयुक्त संन्यासी, दूसरा जो सम्मुख रण में मारा गया, ६६ हे भरतर्षभ! वेदवादी लोग कहते हैं कि उत्तम, मध्यम, निकृष्ट मनुष्यों के ये तीन उपाय हैं ६७ व हे राजन्! पुरुष भी लोक में उत्तम, मध्यम, अधम के भेद से तीन प्रकार के हैं इससे जो जिस कर्म के योग्य हो तीनों प्रकारों में से उसको वहाँ लगाना चाहिये परन्तु आप ने अधम कर्णादिकों को उत्तम मन्त्रियों के कार्य में लगाया है ६८ हे राजन्! भार्या, दास व पुत्र ये तीन अधम होते हैं अर्थात् पुरुष के जीते जी स्त्री को कुछ अधिकार देने लेने का नहीं व स्वामी की विद्यमानता में दास को नहीं तथा पिता की मौजूदगी में पुत्र को अधिकार नहीं इन में जो जितना पाय जाय उसका उतनाही धन है प्रयोजन कि तुम्हारे पुत्र को कुछ अधिकार नहीं तुम पाण्डवों का राज्य दे सकते हो ६९ परधनों का हरना, परस्त्री का स्पर्श करना व सुहृदों का परित्याग करना ये तीन दोष नाशकारक हैं परन्तु ये तीनों दोष आप में हैं ७० काम, क्रोध, लोभ ये तीन अपने नरक के द्वार हैं इससे इन तीनों को छोड़ना चाहिये पर आपमें ये भी तीनों हैं ७१ भक्त व भक्ति करने की इच्छा किये हुए व जो कहता हो कि हम तुम्हारे हैं ये तीनों जब शरण में आवें तो सङ्कट भी हो तो इनको न त्यागे ये तीनों गुण पाण्डवों में हैं व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तुमको कुछ सङ्कट भी नहीं है ७२ हे भारत! वरदान देना, राज्य करना, पुत्र का जन्म होना व शत्रु को कष्ट से छुड़वाना ये चार समान हैं ७३ हे राजन्! महाबलवान् राजा को चार बातें न करनी चाहिये पर उनको पण्डित ही जानता है सब लोग नहीं जानते वे ये हैं अल्पबुद्धियों से, सुस्त मनुष्यों से जो शीघ्रता के कार्य में भी सुस्ती करते हों व जो मारे हर्ष के चञ्चल रहते हों व जो युद्धकर्म न जानते हों केवल जुआं इत्यादि खेलना ही जानते हों इनके साथ सलाह न करें ७४ हे तात! शोभायुक्त तुम्हारे गृह में ये चारों प्रकार के लोग विद्यमान हैं व उन्हीं से सम्मति ली जाती है व वृद्ध, ज्ञातिवाला, अवसन्न, कुलीन, सखा, दरिद्र, सन्तानरहित भगिनी ये सब तुम्हारे घर में हैं तो भी तुम उपदेश नहीं ग्रहण करते क्योंकि ये लोग जहां रहते अच्छा ही कार्य करते जैसे कि वृद्ध कुल के धर्म बताया करता ज्ञातिवाला सहायक होता, अवसन्न सेवा करता, कुलीन बालकों को धर्म सिखलाता, सखा हित की बातें बताता, दरिद्र सदा आज्ञाकारी रहता, सन्तानरहित भगिनी धन की रक्षा करती है ७५ हे महाराज! चार पदार्थ तुरन्त फल देनेवाले होते हैं यह पूछते हुए इन्द्रजी से बृहस्पतिजी ने कहा है वे हमसे सुनो ७६ देवताओं का सङ्कल्प, बुद्धिमानों का अनुभाव, विद्वान् लोगों का विनय व पापियों का विनाश ७७ ये चार कर्म अभयङ्कर हैं परन्तु विपरीत होने से भयदा-यक हो जाते हैं मानपूर्वक अग्निहोत्र व मानपूर्वक मौन व मान-सहित पढ़ना व मानपूर्वक यज्ञ ७८ पिता, माता, अग्नि, आत्मा व गुरु इन पांचों की सेवा पांच अग्नियों के समान करनी चाहिये ७९ देवता, पितर, मनुष्य, भिक्षुक व अतिथि इन पांचों की पूजा करने से यश होता है ८० मित्र, अमित्र, मध्यस्थ, गुरु व सेवक लोग जहां २ तुम जावगे ये पांच तुम्हारे पीछे २ चले जायँगे ८१ मनुष्य के पांच इन्द्रियां होती हैं कदाचित् एक इन्द्रिय में छेद हो तो मनुष्य की बुद्धि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चू जाती जैसे चर्म के पात्र से जल बह जाता है ८२ नींद, सुस्ती, भय, वैर, आलस्य व शीघ्रता से करनेवाले काम में विलम्ब करना ये ६ दोष ऐश्वर्य चाहनेवाले पुरुष को चाहिये कि छोड़ दें ८३ समुद्र के बीच में टूटी हुई नौका के समान पुरुष इन ६ दोषों को छोड़ दें १ अप्रवक्ता आचार्य २ विना पढ़ा ऋत्विक् ३ अरक्षक राजा ४ अप्रिय-वादिनी भार्या ५ ग्राम की कामना किये गोपाल ६ वन की इच्छा किये नापित ८४। ८५ सत्य, दान, अनालस्य, अनसूया, क्षमा व धारणाशक्ति ये ६ गुण पुरुष को कभी न छोड़ना चाहिये ८६ गाय, बैल, सेवा, खेती, भार्या, विद्या व शूद्र की सङ्गति इनको जो मुहूर्त्त भर भी देखेभाले न रहे तो नष्ट हो जाती हैं ८७ ये ६ पुरुष अपने पूर्व के उपकारी को पीछे से छोड़ देते हैं वे उसका अपमान करने लगते हैं विद्या पढ़ चुकने पर विद्यार्थी अपने आचार्य का अपमान करते व विवाह हो जाने व स्त्री पाय जाने पर पुत्र अपनी माता का अनादर करते व कन्दर्परहित पुत्र स्त्री का, सेवक लोग कार्यकर होने पर स्वामी का व नाव से उतरे हुए राही नाव का व बीमार लोग अच्छे हो जाने पर वैद्य का निरादर करते ८८। ८९ आरोग्य, अनृण होना, विदेश में न रहना, सज्जनों के सङ्ग बैठना उठना, सानुकूल जीविका, निर्भय वास ये ६ पदार्थ मनुष्य के सुखदायक हैं ९० ईर्षाकारी, निर्दयी, असन्तुष्ट, क्रोधी, नित्य शङ्कितचित्त व परभाग्योपजीवी ये ६ पुरुष नित्य दुःखित रहते हैं ९१ प्रतिदिन कुछ पै कुछ धन आना, अरोगिता, प्रियवादिनी प्रियभार्या, अपने वश्य पुत्र, अर्थकरी विद्या ये ६ प्राणियों को सुख-दायी हैं ९२ काम, क्रोध, शोक, मोह, मद, मान इन छवों के वशीभूत जो नहीं होता वह जितेन्द्रिय पापों के वशीभूत नहीं होता फिर अनर्थ उसके पास कहां से आवें ९३। ६ प्राणी छः में जीते हैं सातवां इनका साथी कोई नहीं प्रमत्त लोगों के यहां से चोर जीते हैं रोगियों के यहां से वैद्यलोग कामियों के यहां से वेश्या यजमानों के यहां से यज्ञ कराने-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वाले पण्डित आपस में लड़ते हुओं के यहां से राजा लोग व मूर्खों के यहां से पण्डित लोग जीवते हैं ६४। ६५ दुःख के उदय करानेवाले ७ दोष राजा को सदा त्यागना चाहिये कि जिन दोषों से राजा लोग बहुधा नष्ट हो जाते हैं चाहे उनकी जड़ कैसी भी पुष्ट हो ६६। १ अति स्त्रीसेवन, २ पांशाखेलना, ३ शिकार खेलना, ४ मदिरा पीना, ५ कटु वचन बोलना, ६ अतिउग्र दण्ड देना, ७ अर्थ का दूषण करना, बस यही सात हैं ६७ पुरुष के नाश होने के पूर्व निमित्त ये ८ हैं १ ब्राह्मणों से वैर करना, २ ब्राह्मणों के सङ्ग विरोध करना, ३ ब्राह्मणों का धन हरना, ४ ब्राह्मणों के मारने की इच्छा करना, ५ ब्राह्मणों की निन्दा करना, ६ ब्राह्मणों की प्रशंसा सुन प्रसन्न न होना, ७ अपने यहां कुछ कार्य होने पर ब्राह्मणों का न स्मरण करना, ८ ब्राह्मणों के माँगने पर उनकी निन्दा करना इन दोषों को जाने व जानकर विज्ञ को चाहिये कि न करे ६८। १०० हे भारत ! ये ८ हर्ष के हेतु हैं नववां और कोई नहीं व यही ८ सुख के हेतु भी हैं १०१। १ मित्रों के साथ समागम, २ बहुत धन इकट्ठा मिल जाना, ३ पुत्र का मिलाप, ४ मैथुन के समय का सन्निपात, ५ समय पर प्रियवार्त्ता, ६ अपने वर्ग्गवालों का उत्कर्ष, ७ वाञ्छित लाभ, ८ सभा के बीच में अपनी पूजा १०२। १०३ ये ८ गुण पुरुष को तेजस्वी करते हैं १ प्रज्ञा, २ कुलीनता, ३ इन्द्रियों को दमन करना, ४ शास्त्र पढ़ना, ५ पराक्रम होना, ६ बहुत बोलने का स्वभाव न परना, ७ यथाशक्ति दान देना, ८ उपकार मानना, १०४ शरीर-रूप गृह में पांच श्रोत्रादि इन्द्रियां, मन, बुद्धि, अहङ्कार व स्थूल शरीर ये ९ द्वार हैं अविद्या, काम व कर्म ये ३ इसके धारण करनेवाली थून्हियां हैं शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध ये ५ साक्षी हैं व चिच्छक्ति से अधिष्ठित इसको जो जानता है वह उत्कृष्ट कवि है १०५ हे धृतराष्ट्र! दश प्राणी धर्म नहीं जानते उनको समझो, १ मदिरादि पीने से मत्त, २ अन्य विषय के कारण प्रमत्त, ३ धातु के दोष से उन्मत्त, ४

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

थका हुआ, ५ क्रुद्ध, ६ बुभुक्षित, ७ दौरा जाता हुआ, ८ लोभी, ९ भयभीत, १० कामी, इससे इन सबों में पण्डित को न लगना चाहिये इनमें तुम लोभी हो १०६ । १०७ इस विषय में एक पुराना इतिहास है जिसे पुत्र के लिये सुधन्वा असुरेन्द्र ने गाया है १०८ जो राजा काम व क्रोधत्यागता है व पात्र को दान देता है व विशेष बातें जानता, शास्त्र पढ़ता, शीघ्र ही कार्य करता उसका सब लोग प्रमाण करते हैं १०९ व जो पुरुष मनुष्यों को विश्वास में ले आना जानता है व दोष प्रसिद्ध हो जाने पर दण्ड देता व अपराध के अनुसार दण्ड देना जानता व ब्राह्मणादिकों के ऊपर अपराध करने पर भी क्षमा करना जानता ऐसे पुरुष की सेवा लक्ष्मी करती हैं ११० व जो शत्रु को अति दुर्बल नहीं जानता जैसा रिपु होता बुद्धिपूर्वक उसकी वैसे ही सेवा करता व बलवानों के साथ विग्रह करना नहीं चाहता व समय पर अपना पराक्रम दिखाता वह पुरुष धीर कहाता है १११ व जो पुरुष विपत्ति में कभी दुःखित नहीं होता व सावधानता से सदा उद्योग करता रहता समय पर दुःख सहता व धुरन्धर कहलाता व वह सबको जीत लेता ११२ जो पुरुष व्यर्थ विदेश को नहीं जाता पापियों के संग मिलाप नहीं करता व परस्त्री का स्पर्श नहीं चाहता दम्भ, चोरी, चुगुली व मदिरापान नहीं करता वह सदा सुखी रहता ११३ व जो पुरुष क्रोध से अर्थ, धर्म, कामों की सेवा नहीं करता व जहां बुलाया जाता वहां निश्चययुक्त ही वचन कहता व मित्र के साथ कभी विवाद करना नहीं चाहता व आप अपूजित होने पर भी कोप नहीं करता वह निश्चय पण्डित है ११४ व जो किसी की निन्दा नहीं करता दया सबके ऊपर रखता व आप दुर्बल होने पर किसी से प्रतिकूलता नहीं करता व बहुत दिनों तक किसी से विवाद नहीं करता ऐसा पुरुष सर्वत्र प्रशंसित होता ११५ जो पुरुष कभी उद्धत वेष नहीं बनाता व अपने पौरुष से औरों के सामने किसी को बकता झकता नहीं व आप मूर्च्छित भी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हो जाय तो भी किसी को कटुक वचन नहीं कहता उसको लोग सदा प्रिय करते हैं ११६ व जो पुरुष मिटे मिटाये वर को फिर नहीं उद्दीपित कराता न अहङ्कार पर आरूढ़ होता न बिलकुल अस्त ही हो जाता व आप दुर्ग्गति में भी परा हो तो भी अकर्त्तव्य कार्य नहीं करता उस श्रेष्ठ शीलवान् पुरुष को श्रेष्ठ लोग श्रेष्ठ कहते हैं ११७ जो पुरुष अपने सुख में प्रहर्षित नहीं होता व न और के दुःख में प्रहृष्ट होता व देकर फिर पछिताता नहीं वह सत्पुरुषों के स्वभाव का कहा जाता है ११८ व जो पुरुष देशाचार समय व जाति धर्म को भूषित किया चाहता वह परावरज्ञ कहाता वह पुरुष चाहे जहां कहीं जाय पर महाजनों का आधिपति होता है ११६ जो पुरुष दम्भ, मोह, मत्सर, पापकार्य, राजवैरकारक, चुगुली, वैरसमूह, मत्त उन्मत्त व दुर्ज्जनों के साथ वाद नहीं करता वह प्रज्ञावान् सबों में प्रधान होता है १२० जो पुरुष दान, मोह, देवता, मङ्गलपदार्थ, प्रायश्चित्त व विविध प्रकार के लोकवाद इनको जो नैत्यक मानता नैमित्तिक नहीं मानता उसके कार्य की आराधना देवता करते हैं १२१ जो पुरुष बराबरी वालों के सङ्ग विवाह करता हीनों के साथ नहीं करता व बराबरीवालों के ही साथ सख्य व्यवहार व कथा करता है व जिनमें विशेष गुण होते उनको आगे बैठाय सत्कार करता उस पण्डित की नीति सुनीति होती है १२२ जो पुरुष अपने आश्रितों को प्रथम भाग लगाय आप कुछ प्रमाणसहित थोड़ा भोजन करता व अमित कर्म कर मित काल तक कुछ थोड़ा शयन करता व जो उससे कोई माँगे तो वह वैरी को भी दे ऐसे आत्मज्ञानी के समीप अनर्थ आते ही नहीं १२३ जिसका कर्त्तव्य ऐसा गुप्त होता कि अन्य लोग कोई जान ही नहीं पाते जब तक सलाह होती तब तक कोई जान नहीं पाता जब कार्य हो जाता तभी लोग जानते हैं, ऐसे पुरुष का कोई भी अर्थच्युत नहीं होता १२४ जो पुरुष सब प्राणियों से शान्त रहता व सत्यवादी, कोमल स्वभाव,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

औरों के मान करनेवाला व शुद्ध अभिप्राय रखनेवाला व अपनी जाति के लोगों के मध्य में ऐसा प्रसिद्ध हो जैसे सब मणियों में बड़ी खानि का श्रेष्ठ मणि प्रसिद्ध होता है १२५ जो पुरुष अपने आप निन्दित कर्मों से लज्जित रहता, वह सब लोक का गुरु होता है व वह अनन्ततेज, प्रसन्न मन, एकाग्रचित्त रहता व सूर्य समान प्रकाशित रहता १२६ देखो शाप से दग्ध राजा पाण्डुजी के इन्द्र के तुल्य ये पांच पुत्र वन में उत्पन्न हुए व उन बालकों को तुम्हीं ने बढ़ाया व पढ़ाया लिखाया व वे तुम्हारी ही आज्ञा का पालन अब भी करते हैं १२७ इससे हे तात! पाण्डवों को राज्य दे आप अपने पुत्रों सहित प्रमुदित रहिये व फिर आप देवता लोगों की व मनुष्यों की ओर से भी शङ्कनीय न रहेंगे ॥ १२८ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

चौंतीसवां अध्याय ।

दो० चौंतिसवें महँ कहब जिमि, विदुर कह्यहु पुनि बैन ।
धर्मनीति साने सकल, सुनत भूप मन चैन ॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी इतना सुन फिर विदुरजी से पूछने लगे कि चिन्ताग्नि से दग्धमान जागते हुए हमारे करने के योग्य जो देखते हो हे तात! वही हमसे कहो क्योंकि धर्म अर्थ में तुम कुशल हो १ हे विदुर! तुम बुद्धिपूर्वक सब हमको आज्ञा दो जो कुछ युधिष्ठिर का विचार तुम्हारे विचार में आता हो व जो कुरुवंशियों का कल्याणकारक मानते हो वह कहो २ हम पापाशङ्की हैं इससे हमें इसमें पाप ही देख पड़ता है इससे व्याकुल हो तुमसे पूछते हैं अब तुमने जो युधिष्ठिर के मन की बात विचारी हो वह हमसे कहो ३ विदुरजी यह सुन बोले शुभ हो व पाप वैर की बात हो वा प्रिय पर जिसका अनादर न चाहता हो उससे विना पूछे भी सब कहना चाहिये ४ इससे हे राजन्!

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जो तुम्हारा व सब कुरुवंशियों का हित वचन होगा वही कहेंगे कल्याणकारक व धर्मयुक्त वचन कहते हुए हमसे वह सुनो ५ हे भारत! जो वचन कपट द्यूतादि मिथ्या कर्मों से मिले हुए हैं व असत् उपायों से सिद्ध होने लायक हैं उनमें मन कभी न करो ६ जो कर्म उपाययुक्त हो चाहे सिद्ध हो व न सिद्ध हो तो उसमें बुद्धिमान् को अपने चित्त में ग्लानि न करनी चाहिये ७ सप्रयोजन कर्मों में प्रयोजन का निश्चय प्रथम कर ले तदनन्तर कर्म करने का प्रारम्भ करना चाहिये बड़ी जल्दी न करनी चाहिये ८ प्रथम जो करना हो उसका प्रयोजन देख ले फिर यह कि इसका फल क्या होगा व फिर अपना उद्यम देखे कि हमारे साध्य है व नहीं साध्य देखा करै असाध्य न देखा करै ९ जो पुरुष क़िला, सेना, वृद्धि, क्षय इत्यादि कर्मों का निश्चय नहीं जानता व कोष देश का भी निश्चय नहीं जानता वह राज्य पर स्थित नहीं रह सकता १० जो पुरुष इन सेना कोषादिकों के निश्चय अच्छी तरह जानता है व धर्म अर्थ के समझने में युक्त है वह पुरुष राज्य पाता है ११ राज्य को पाय अयोग्य रीति से कभी न चलना चाहिये क्योंकि अविनय राजलक्ष्मी का नाश करता है जैसे बुढ़ाई रूप का नाश करती है १२ जो वस्तु मुख में मीठी लगती हो व खाने पर मृत्यु करती हो उसे न खाना चाहिये क्योंकि बहुत अच्छा भोजन जान मछली लोहे की कटिया लोभ के मारे लील जाती है उसका प्रयोजन नहीं देखती व न फल विचारती इससे प्राण जाते रहते हैं १३ जो वस्तु सुख से भोजन करने के योग्य हो व भोजन करने पर अच्छी तरह पचती हो व अन्त में भी हित करे कुछ वातादि रोग न करती हो ऐश्वर्य चाहनेवाला पुरुष वही पदार्थ भोजन करे १४ वृक्ष के कच्चे फल जो पुरुष तोड़ लेता वह प्रथम तो उन फलों से रस नहीं पाता दूसरे फिर बीज की हानि हो जाती है क्योंकि कच्चे फल की गुठलू जमती ही नहीं १५ जो पुरुष समय पर पककर चुआ फल ग्रहण करता वह फल से रस भी पाता है व बीज से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

फिर फल पाता है १६ जैसे भ्रमर फूलों की रक्षा किये रहता युक्ति से रस ही चूस लेता इसी प्रकार राजा को चाहिये कि मनुष्यों से धन ले ले पर उनके प्राण न मारे १७ पुष्प ही पुष्प तोड़ लेना चाहिये जड़ से वृक्ष न उखाड़ना चाहिये जैसे माली बाटिका में पुष्प ही तोड़ता है वृक्षों को उखाड़ विध्वंस नहीं करता १८ यह करने से हमको कौन फल होगा व न करने से क्या होगा इस रीति से कर्मों का निश्चय कर ले फिर करने योग्य हो तो करे न करने योग्य हो तो न करे १९ बहुत काम ऐसे होते हैं कि उनके करने का आरम्भ ही न करना चाहिये जैसे बलवान् के साथ का वैर क्योंकि ऐसे कामों में जो पौरुष किया वह निरर्थक होजाता है २० जिसकी प्रसन्नता से कुछ फल नहीं मिलता व क्रोध भी जिसका निरर्थक होता क्रोध करके भी कुछ हानि नहीं कर सकता उसको प्रजा अपना स्वामी नहीं बनाना चाहती जैसे नपुंसक पति को स्त्रियां अपना पति नहीं बनाना चाहतीं २१ कोई २ प्रयोजन ऐसे हैं कि वे होते तो हैं थोड़े उपाय से व उनका फल बड़ा होता है बुद्धिमान् लोग उनके करने का आरम्भ बहुत जल्द करते हैं उनके करने में विघ्न नहीं करते २२ जो राजा सबको सीधी दृष्टि से जानों पीता ही हुआ देखता है वह चाहे चुपचाप बैठा भी रहै तो प्रजा उसका अनुराग करती हैं २३ कोई २ वृक्ष अच्छी तरह फूलता है पर फरता नहीं व फरता भी तो भी बड़ी कठिनता से चढ़ने के योग्य होता है व कोई पक्का नहीं है पर वह पक्के समान जान पड़ता है वह कभी चूता नहीं अर्थात् कोई २ लोग वचन व देखने से जानों बड़ा अनुग्रह दिखाते पर अफल रहते सेवक को धनादि दे बढ़ाते नहीं फरते भी हैं तो नहीं मिलते तो उनके पास सब कुछ होता पर वे सेवक अवश्य ही नहीं होते व कोई पकते नहीं पक्के से दिखाई देते हैं तो उनके कुछ बल भी नहीं तो भी अपना को बलवान् सा प्रकाशित करते हैं २४ जो पुरुष देखने से, मन से, वचन से व कर्म से चार प्रकार से सेवकों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को प्रसन्न रखता है उसके ऊपर सेवक भी प्रसन्न रहते हैं २५ जैसे मृग व्याधों को देख मृगगण डरते हैं वैसे ही जिसको देख सब प्राणी डरते हों तो वह पुरुष चाहे समुद्रपर्यन्त तक की पृथ्वी का राजा हो जाय तो भी उसका राज्य छूट जाय २६ जो अन्यायी पुरुष है चाहे अपने पितृ-पितामहों का राज्य अपने कर्म से पाय भी जाय परन्तु वह राज्य नष्ट कर देता है जैसे कि पवन बादर को नष्ट कर देता है २७ जो राजा आगे के सज्जनों के किये धर्म करता है ऐश्वर्य बढ़ानेवाली उसकी पृथ्वी धन से पूर्ण हो जाती है २८ व धर्म छोड़नेवाले व अधर्म करने-वाले राजा की पृथ्वी जानों संकुचित हो जाती अन्नादि नहीं उपजाती जैसे चमड़े से ढांक देने से अग्नि संकुचित हो जाता है २९ जो यत्न लोग शत्रु राज्य के नाशने में करते हैं वही यत्न अपने राज्य के पालन में करें तो अच्छा हो ३० धर्म से राज्य मिलता है इससे धर्म ही से राज्य का पालन भी करे जिसमें धर्ममूल राजलक्ष्मी पाय न उसको छोड़ना परे न राजलक्ष्मी उसे छोड़े ३१ चाहे उन्मत्तता के कारण कोई अनर्थ वचन भी कहता हो व चाहे कोई बालक कुछ बकता हो पर उसमें की भी सारांश बातों को ग्रहण कर ले जैसे पत्थरों के बीच से सुवर्ण निकाल लिया जाता है ३२ पाण्डित्ययुक्त वचन व सुन्दर रीति से कहे माता, पिता, गुरु आदि के वचन व अच्छी तरह कहे हुए चाहे जिसके वचन हों उनमें भी चुन २ ग्रहण करे जैसे शीला बीनने-वाले एक २ अन्न चुनते हैं ३३ गाय बैल गन्ध से देखते हैं व ब्राह्मण लोग देवताओं के द्वारा सब देखते व राजा लोग दूतों के द्वारा देखते हैं व अन्य लोग नेत्रों से देखते हैं ३४ जो गाय लतही मरकही होने के कारण बड़ी कठिनता से दुहने देती व छोड़ने बाँधने आदि कितने कष्ट पाती है व जो शुद्धी होती दुहने देती है उसको कोई कुछ व्यथा नहीं देता ३५ जो विना तपाये झुकता है उसे लोग नहीं तपाते जो बांस अपने आप झुककर सीधा रहता उसे कोई सीधा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होने के लिये नहीं तपाते ३६ इसी उपमा से धीर को चाहिये कि बलवान् को देख आप नम्र हो जायँ व जो पुरुष बलवान् के आगे नम्र होता है वह इन्द्र को प्रणाम करता है इससे इन्द्र भी उसके ऊपर दया करते हैं प्रयोजन यह है कि पाण्डव लोग बलवान् हैं उनके सामने तुम झुक चलो तो अच्छा हो ३७ पशुओं के स्वामी मेघ हैं व राजाओं के बान्धव दूत लोग हैं स्त्रियों के बान्धव पति लोग होते हैं ब्राह्मणों के बान्धव वेद हैं इससे पाण्डवों के समाचार तुम दूतों के द्वारा जान लो क्योंकि राजाओं के बान्धव दूत ही हैं ३८ सत्य से धर्म की रक्षा होती है व विद्या की रक्षा योग से होती, शुद्धता से रूप की रक्षा होती व आचार से कुल की रक्षा होती है इससे सत्य की रक्षा करो ३९ तोल-नाप धरने से अन्न की रक्षा होती है घोड़ों की रक्षा टहलाने खुजाने आदि से होती है व बार २ देखने से गायबैलों की रक्षा होती व स्त्रियों की रक्षा मलीन फटे आदि वस्त्रों से होती है क्योंकि सुन्दर वस्त्र धारण करने से उनके गाहक और लोग हो जाते हैं ४० हम जानते हैं कि आचारहीन पुरुष का कुछ कुल से प्रमाण नहीं होता क्योंकि जो अन्त्यजों में भी उत्पन्न हैं आचार करने से विशेष हो जाते हैं ४१ जो पुरुष दूसरे के धन, रूप, वीर्य्य, कुल, सुख, सौभाग्य व सत्कारादि की ईर्ष्या करता है उसके अनन्त रोग बने रहते इससे तुम भी पाण्डवों की ईर्ष्या न करो ४२ अकर्त्तव्य करने से सदा डरता रहे व कर्त्तव्यों के न करने से भी डरे व कार्य सिद्ध के प्रथम मन्त्रभेद से भी डरे व जिसके पीने से मद होता जाने उसे न पीवे ४३ विद्यामद, धनमद व परिवार का मद ये तीन संसार में मद होते हैं परन्तु ये मद अहंकारियों को ही होते सज्जनों के लिये ये ही सब दम हो जाते अर्थात् सज्जन लोग विद्यादि होने से और भी अपनी इन्द्रियों को अपने वश में रखते ४४ असज्जन लोगों की जब सज्जन लोग किसी कार्य के करने के लिये प्रार्थना करते हैं तो वे असज्जन भी हैं पर अपना को सज्जन मानने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लगते हैं चाहे उनका कुछ कार्य भी न करें पर उनके पूछने ही पर समझने लगते हमने इनका कार्य कर दिया ४५ आत्मज्ञानियों की गति सज्जन लोग ही हैं व सज्जन सज्जनों की भी गति हैं तथा असज्जनों की गति भी सज्जन हैं व असज्जन सज्जनों की गति किसी प्रकार नहीं हैं ४६ सुन्दर वस्त्र धारण किये पुरुष सभा जीत लेता व इन्द्रियजित् पुरुष मीठा भोजन करने की आशा जीत लेता व किसी सवारी पर सवार पुरुष मार्ग जीत लेता व शीलवान् सब कुछ जीत लेता है ४७ इससे पुरुष में शील ही प्रधान है वह जिसका नष्ट हो गया उसको न कुछ जीने से प्रयोजन है न धन से न बन्धुओं से इससे आप शील की रक्षा करें ४८ धनाढ्यों के भोजन में मांस की उत्कृष्टता समझी जाती है व मँझेसू लोगों के में गोरस की व दरिद्रों के में तैल की उत्कृष्टता समझी जाती है इससे आप शीलवान् हो उसमें दारिद्र्य भी प्राप्त होगा तो भी कल्याण ही है ४९ दरिद्र लोग केवल अन्न ही को अच्छी तरह बनाय चुनाय सदा भोजन करते हैं मांस गोरस कुछ नहीं पाते परन्तु भूँख उनको ऐसा स्वादु उत्पन्न कराती है जो धनाढ्यों को बहुत ही दुर्लभ है ५० बहुधा लोक में धनवानों के भोजन करने की शक्ति ही नहीं रह जाती क्योंकि उनके कुछ पचता ही नहीं व दरिद्रों के पेटों में काष्ठ भी पच जाते हैं ५१ निकृष्ट लोगों को आजीविका की भय लगी रहती है कि ऐसा न हो कभी जीविका न मिलै व मध्यम-लोगों को मरने की भय लगी रहती व उत्तम मनुष्यों को अपमान होने की भय रहती इससे शील न होने से बड़ा भारी अपमान होगा जिससे बड़ा क्लेश होगा ५२ ऐश्वर्य का मद बड़ा पापिष्ठ होता क्यों-कि उसी से मदिरा पीने आदि के मद उत्पन्न होते हैं व ऐश्वर्य मद से मतवाला पुरुष जब तक ऐश्वर्य से पतित नहीं हो जाता तब तक नहीं जानता ५३ इन्द्रियों के अर्थों में वर्त्तमान विना रोंकी हुई इन्द्रियों से लोग तपाये जाते हैं जैसे सूर्यादि ग्रहों से नक्षत्र तपाये जाते हैं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

५४ जबरदस्ती खींचनेवाली पांच इन्द्रियों से खींचे हुए पुरुष के ऊपर आपत्तियां बढ़ती हैं जैसे शुक्लपक्ष में बहुत बढ़ जाने से चन्द्रमा के ऊपर कृष्णपक्ष होते ही विपत्ति आ जाती है इससे आप भी ऐश्वर्य मत्त हो गए हैं आपत्ति को प्राप्त हुआ चाहते हैं ५५ जो राजा अपना को विना जीते अमात्यों के जीतने की इच्छा करता है व शत्रुओं के ही जीतने की इच्छा करता वह अमात्यादिकों को जीत नहीं सकता अवश हो आप ही हीन हो जाता है ५६ प्रथम अपने शरीर ही को वैरी समझ उसे जीतै तो अमात्यों व शत्रुओं को सहज ही में जीत ले ५७ क्योंकि जितेन्द्रिय, जितात्मा व विकार करनेवालों को दण्ड देने-वाले व सब कार्य परीक्षा लेकर करने वाले पुरुष की सेवा लक्ष्मी नित्य किया करती ५८ हे राजन्! यह पुरुष का शरीर रथ है व आत्मा इसका सारथि व इन्द्रियां घोड़े हैं, जो इन्द्रियां अच्छी तरह दमन कर सिखलाई गईं तो सीखे हुए घोड़ों के समान इस रथ को चलाती हैं फिर सुख-पूर्वक जीव इस पर सवार घूमता जैसे रथी रथ पर चढ़ सुख से जाता ५९ ये ही इन्द्रियां जो अपने वश में न राखी गईं तो फिर मार डालने पर भी तैयार हो जाती हैं जैसे जो घोड़े वश में नहीं हैं वे मार्ग में अनारी सारथि को मार डालते हैं ६० अर्थ के हेतु जो अनर्थ देखता व अर्थ को अन्याय से देखता वह अजितेन्द्रिय बालबुद्धि बड़े दुःख को सुख मानता है ६१ जो पुरुष धर्म व अर्थ को छोड़ केवल इन्द्रियों के ही वश में परा रहता वह लक्ष्मी, प्राण, धन व स्त्रियों से शीघ्र ही परि-त्याग किया जाता है ६२ जो पुरुष केवल अर्थ ही का ईश्वर रहकर इन्द्रियों का अनीश्वर हो जाता है वह इन्द्रियों के अनैश्वर्य के हेतु ऐश्वर्य ही से भ्रष्ट हो जाता है ६३ बुद्धि से जीते हुए मन बुद्धि व पांच इन्द्रियों से आत्मा को वश में करे क्योंकि आत्मा का बन्धु आत्मा ही है व आत्मा का रिपु भी आत्मा ही है ६४ उस आत्मा का बन्धु भी आत्मा ही है जिसने आत्मा से आत्मा को जीत लिया

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वह निश्चय बन्धु समान है व रिपु के भी समान है ६५ हे राजन्! सूक्ष्मछिद्र के जाल में फँसी हुई दो मछलियों के समान काम व क्रोध प्रज्ञा का लोप कर देते हैं ६६ जो पुरुष अर्थ धर्म को देख जयसिद्ध करने की सामग्री इकट्ठी करता वह पुरुष सामग्री कर सुख पाता है ६७ जो पुरुष भीतर की पांच इन्द्रियों को विना जीते मन से उत्पन्न और शत्रुओं को जीतना चाहता है उसका अनादर वे शत्रु कर डालते हैं देखते हैं कि बड़े २ महात्मा राजा लोग इन्द्रियों को वश न करने के कारण अपने कर्मों से व राज्य के विभ्रमों से बाँधे जाते हैं ६८ ऐश्वर्य के विलास सहित अपने कर्मों से बहुत से महात्मा राजा अजितेन्द्रिय होने से बँधे देखे गये ६९ पापियों के संग्रह से अपापियों को पापियों के तुल्य ही दण्ड होता है क्योंकि उन दोनों के एकत्र रहने से मित्रभाव हो जाता है जैसे सूखे ईंधन के सङ्ग मिलाय बारने से गीला भी बर जाता है इससे पापियों के सङ्ग मिलाप न करना चाहिये ७० रस शब्द स्पर्शादि पञ्चप्रयोजन सहित शत्रु रूप रसनादि पांच इन्द्रियों को जो पुरुष मोह वश अपने वश में नहीं रखता उस पुरुष को विपत्ति ग्रस लेती है ७१ अनिन्दा, सरलता, पवित्रता, सन्तोष, प्रिय बोलना, इन्द्रियों का दमन करना, सत्यता, बिना प्रयास कुछ कार्य करना दुराचारियों के इतनी बातें नहीं होतीं ७२ आत्मज्ञान, विना प्रयास के कुछ कार्य करना, सहनशीलता, धर्म की नित्यता, गुप्त वाणी व दान ये पदार्थ नीचों के नहीं होते ७३ रूखी बोली व निन्दा से मूर्ख लोग पण्डितों की हिंसा करते हैं परन्तु रूखी बोली व निन्दा के कहनेवाला पापी होता व क्षमा करनेवाला छूट जाता है ७४ असाधुओं को हिंसा का बल होता व राजाओं को दण्डविधान का बल होता, स्त्रियों को शुश्रूषा करने का व गुणवानों को क्षमा का बल होता है ७५ निश्चित वचन बोलना राजा को बहुत दुष्कर होता है क्योंकि अर्थयुक्त व विचित्र वचन बहुत कोई

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नहीं बोल सकता ७६ अच्छा बोलना त्रिविध प्रकार के कल्याण प्राप्त कराता है व वही खराब बोलना अनर्थ उत्पन्न कराता है ७७ बाण लगने से जो घाव होता वह फिर भर आता व कुल्हारी से काटा वन फिर हरियाता है परन्तु जो दुर्वचन लगने से छेद हो जाता वह कभी नहीं भरता ७८ कान के आकार की गांसीवाले व फोंफरी नली से चलानेवाले बाण लगने पर मनुष्य निकाल लेते हैं परन्तु, वचनबाण कोई निकाल नहीं सकता क्योंकि वह हृदय में सदा सोया करता इससे खरकता रहता ७९ वाणीरूप बाण मुख से निकलते हैं जिनके लगने से रात्रिदिन पुरुष शोचता है वे दूसरे के सुकुमार स्थल में लगते हैं इससे विद्वान् लोग दूसरों के ऊपर वाग्बाण न छोड़ें ८० देवता लोग जिस पुरुष का निरादर कराते हैं उसकी बुद्धि खींच लेते हैं कि वह नीच कर्म करने लगता है ८१ विनाश काल में बुद्धि मलिन हो जाती है इससे उसके हृदय से अन्याय न्याय के समान कभी नहीं हटता ८२ हे राजन्! अब पाण्डवों के व तुम्हारे पुत्रों के विरोध से तुम्हारी बुद्धि भी वैसी ही हो गई है पर तुम नहीं जानते ८३ हे धृतराष्ट्र! सर्वलक्षणसम्पन्न होने से तीनों लोकों के राजा युधिष्ठिर होंगे पर तुम्हारे आज्ञाकारी हैं ८४ तुम्हारे सब पुत्रों का अतिक्रमण कर राज्य के योग्य वही हैं क्योंकि तेज, प्रज्ञा से युक्त व धर्म अर्थ के जाननेवाले हैं ॥ ८५ ॥

दो० अक्रूरता दयादि से, धर्मधारि महँ श्रेष्ठ।
तव गौरवसों क्लेशबहु, सहे युधिष्ठिर ज्येष्ठ ॥ १ । ८६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

पैंतीसवां अध्याय।

दो० पैंतिसयें महँ कहब जिमि, विदुर कह्यहु बहुनीति।
कहि इतिहास सुधन्व प्रह, लादहुकर युत प्रीति ॥ १ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इतना सुन धृतराष्ट्रजी बोले हे बुद्धिमान्, विदुरजी ! धर्मअर्थसहित वचन फिर कहो क्योंकि तुम बड़े विचित्र वचन कहते हो जिनके सुनने से हमारा मन तृप्त नहीं होता १ विदुरजी बोले सब तीर्थों में स्नान करना व सब प्राणियों के संग समता रखना दोनों समान हैं बरन समता और विशेष है २ इससे हे राजन् ! अपने पुत्रों व भतीजों में समता रक्खो इससे यहां बड़ी कीर्त्ति पाय मरणान्त में स्वर्ग पावोगे ३ क्योंकि जब तक मनुष्य की पुण्य कीर्त्ति लोगों में गाई जाती है तब तक वह पुरुष स्वर्ग लोक में पूजित होता है ४ इस विषय में यह पुरातन इतिहास परिडत लोग कहते हैं जिसमें केशिनी के अर्थ विरोचन व सुधन्वा का संवाद है ५ हे राजन् ! अतिरूपवती केशिनी-नाम एक कन्या विशेष पति पाने की इच्छा से स्वयंवर में स्थित थी ६ उस कन्या के लेने के लिये विरोचन नाम दैत्य वहां आया उसे देख केशिनी उससे बोली ७ कि ब्राह्मण सुधन्वा हमारे पर्यङ्क पर क्यों न चढ़ेंगे जो तुम नीच दैत्य हमारे लिये आये हो ८ विरोचन बोले कि हम लोग प्रजापति के वंश के हैं इससे निश्चय श्रेष्ठ हैं व हमारे ही ये सब लोक हैं देव कौन होते हैं व ब्राह्मण कौन होते ९ केशिनी बोली, अच्छा इसी स्थान पर हमारे लिये आये हुए तुम्हारी व सुधन्वा ब्राह्मण की परीक्षा हम ले लेंगी, क्योंकि सुधन्वा प्रातःकाल आनेवाले हैं तुम जानों आयही चुके हो १० विरोचन बोले, कि अच्छा जैसा तुम कहती हो वैसा ही हम करेंगे हम व सुधन्वा दोनों को प्रातःकाल देखोगी ११ विदुरजी बोले कि जब रात्रि बीत गई व सूर्य उदय हुए तो प्रह्लाद के पुत्र विरोचन व केशिनी दोनों के पास सुधन्वा नाम ब्राह्मण आये १२ उन ब्राह्मणदेव को आये देख केशिनी ने उठ प्रणाम कर पाद्य अर्घ्यादि उनको दिया १३ तब सुधन्वा से विरोचन ने कहा कि हमारे साथ आवो इस सुवर्ण के आसन पर बैठो तब सुधन्वा बोले कि हे विरोचन तुम अपने सुवर्ण के आसन पर अकेले बैठे रहो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हम तुम्हारे संग आसन पर न बैठेंगे १४ तब विरोचन बोले, कि हां सुधन्वा तुम्हारे योग्य तो काठ का पीढ़ा वा कुश काश की चटाई है तुम हमारे साथ श्रेष्ठ आसन पर क्यों बैठोगे १५ सुधन्वा बोले कि पिता व पुत्र एक आसन पर बैठ सक्ते हैं वा दो ब्राह्मण वा दो क्षत्रिय वा दो वृद्ध वैश्य वा दो शूद्र परन्तु और २ जाति के दो मनुष्य कभी एक आसन पर नहीं बैठ सक्ते १६ तुम्हारे पिता नीचे बैठकर हमारी सेवा करते हैं, परन्तु तुम बालक हो व घर में रह सुख करते हो तुम कुछ नहीं जानते १७ विरोचन बोले, कि हमारे यहां जितने सुवर्ण चांदी बैल घोड़े हैं सबकी बाजी लगाते हैं, हम तुम में जो श्रेष्ठ हो उसके जाननेवाले के पास चलो पूछें १८ सुधन्वा बोले, कि सोना चांदी बैल घोड़े तुम्हारे तुम्हारे यहां रहैं उनके बाजी लगाने की आवश्यकता नहीं हमारे तुम्हारे प्राणों की बाजी लगाई जाय जो हारे अपने प्राण दे दे, चलो जो जानता हो पूछें १९ विरोचन बोले कि हम तुम प्राणों की बाजी लगाय कहां पूछने चलेंगे बतावो तो न तो हम देवताओं के पास जायँगे न मनुष्यों के पास कभी जायँगे २० सुधन्वाजी बोले कि, प्राणों की बाजी लगाय तुम्हारे बाप प्रह्लादजी के पास चलेंगे क्योंकि वे पुत्र के अर्थ भी झूठ न कहेंगे फिर दूसरे के अर्थ क्यों कहने लगे २१ विदुरजी बोले कि क्रोध कर ऐसी बाजी लगाय सुधन्वा व विरोचन दोनों प्रह्लादजी के पास गये २२ इन दोनों को देखते ही प्रह्लादजी ने विचार किया ये दोनों तो ऐसे दिखाई देते हैं जानों वैर के कारण कभी एक स्थान पर बैठे भी नहीं क्योंकि क्रोध किये हुए दो सर्पों के समान एक मार्ग में चले आते हैं २३ यह विचार विरोचन से पूछा कि विरोचन इस तरह इनके साथ तो कभी नहीं चलते थे अब आज क्यों चलते हो, यह हम तुमसे पूछते हैं कि क्या तुम्हारा व सुधन्वा का सख्यभाव है २४ विरोचन बोले, कि सुधन्वा से हमारा सख्य कुछ नहीं है हम दोनों ने प्राण की बाजी लगाई है, इससे हम दोनों में

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कौन श्रेष्ठ है यह निश्चय बताओ मिथ्या न कहना २५ प्रह्लादजी बोले कि अरे सेवको सुधन्वाजी के लिये पाद धोने के लिये जल व पीने के लिये शर्बत लाओ, यह सेवकों से कह सुधन्वा से बोले कि ब्राह्मण देव आप तो पूजनीय हो और सामग्री भी आती है पर तब-तक मङ्गलार्थ यह मोटी ताजी गाय लो २६ सुधन्वा बोले कि शर्बत पानी तो हमने मार्ग ही में छोड़ दिया है प्रह्लादजी जो प्रश्न हम पूछते हैं उसका निश्चय बताओ क्या है २७ भला ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं वा विरोचन, प्रह्लादजी बोले कि ब्राह्मणदेव एक ही तो हमारे पुत्र है तुम साक्षात् ब्राह्मण हो फिर दोनों जनों के विवाद में हम ऐसा पुरुष प्रश्न का उत्तर कैसे दे २८ सुधन्वा बोले, कि गाय व और जो कुछ धन हो अपने पुत्र को दो हमारे व इनके विवाद में सत्य २ कहो २९ प्रह्लाद जी बोले, कि प्रथम तुम हमारे प्रश्न का उत्तर दो कि जो न सत्य ही कहे न असत्य ही कहे, ऐसा अन्यायवक्ता कौन दुःख पावे ३० सुधन्वा बोले सौत के संग ही संग पति के संग रात्रि में रहने से स्त्री को जो दुःख होता है व जुआ से हारे हुए को रात्रि में जो दुःख होता है व भार लादने से बहुत थके पुरुष को जो रात्रि में दुःख होता वह अन्यायवक्ता को हो ३१ जो दुःख मारे भूखों के किसी नगर में घिरे हुए व द्वार पर बहुत से शत्रुओं को खड़े हुए देख होता है वही दुःख झूठी साखी बोलनेवाले अन्यायी को मिलता है ३२ छगड़ी आदि पशुओं के बीच में झुठाई करने से पांच पुश्ति तक के ऊंचेवाले नरक में गिराये जाते हैं व गायबैलों के अर्थ मिथ्या कहने से दश पुश्ति ऊंचेवाले व घोड़ों के विषय में झुठाई करने से सौ पुश्ति तक के व पुरुष के विषय में मिथ्या कहने से सहस्र पुश्ति तक के ऊंचेवाले वा आप भी नरक में जाता है ३३ व जो सुवर्ण के लिये झुठाई करता अर्थात् कुछ सुवर्णादि उत्कोच अर्थात् घूस ले मिथ्या कहता वह अपने उत्पन्न हुओं व होनेवालों को भी जानो मारता है व पृथ्वी के लिये झुठाई

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सबका नाश करती है इससे पृथ्वी के विषय की झुंठाई कभी न करो यह केशिनी भी पृथ्वी ही के तुल्य है ३४ प्रह्लादजी बोले, कि हे विरोचन ! सुधन्वा के पिता अंगिराजी हमसे श्रेष्ठ हैं व तुमसे श्रेष्ठ सुधन्वा हैं व इनकी माता भी तुम्हारी माता से श्रेष्ठ है इससे तुम सुधन्वा से हार गये ३५ हे विरोचन ! अब तुम्हारे प्राणों के मालिक सुधन्वा हैं व सुधन्वाजी तुम्हारे देने से हम फिर विरोचन को पाने की इच्छा करते हैं ३६ सुधन्वा बोले, हे प्रह्लाद ! जिससे तुमने धर्म ही की बात कही मिथ्या नहीं कहा, इससे तुमको दुर्ल्लभ पुत्र फिर देते हैं ३७ हे प्रह्लाद ! यह विरोचन पुत्र हमने तुमको दिया, अब यह हमारे सामने केशिनी के पाद हल्दी से धोवे व उसको अपनी स्त्री बनावे हमसे उससे कुछ काम नहीं ३८ विदुरजी धृतराष्ट्रजी से बोले कि हे राजन् ! इससे तुम भी भूमि के अर्थ मिथ्या कहने के योग्य नहीं हो, अपने पुत्र के लिये झूंठ कह पुत्र मन्त्र्यादि सहित नाश को न पहुँचो ३९ जैसे लाठी ले चरवाहे पशुओं की रक्षा करते वैसे देवता लोग हाथ में दण्डा ले नहीं रक्षा करते किन्तु जिसकी रक्षा किया चाहते बुद्धि से उसका विभाग करते हैं ४० इससे जैसे २ पुरुष कल्याण में मन करता है वैसे २ उसके सब अर्थ सिद्ध होते हैं इसमें कुछ भी संशय नहीं ४१ माया में वर्त्तमान मायावी पुरुष को वेद दुःख से नहीं तारते, अन्तकाल में वेद मायावी को छोड़ देते हैं, जैसे पक्ष जम आने पर पक्षी फिर दण्ड नहीं सहते वहां से उड़कर चारा चुनने लगते ४२ मदिरा पीना, कलह करना, बहुत लोगों से वैर रखना, किसी की स्त्री में व किसी के पुत्र के बीच में उससे अन्तर डारना, जातिवालों के बीच में भेद कराना, राजा का भाग, स्त्रीपुरुष का वियोग व खराब मार्ग, इतने कार्य बराने के योग्य हैं, हे राजन् ! इनमें जातिवालों में भेद व कलह में तुम्हारी प्रवृत्ति उचित नहीं है ४३ हाथों की रेखा देखनेवाले सामुद्रिक, प्रथम चोरी करता हो फिर उद्यम करने लगे ऐसा बनियां

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व रमल विद्यावाला पण्डित, वैद्य, शत्रु, मित्र व भड़ुआ इन सात को कभी गवाही करने को न ले जाना चाहिये, इनमें शत्रु की गवाही में विपरीत बोलने का भय रहता व मित्र के बोलने में प्रतिपक्षी विश्वास नहीं करते ४४ मान के लिये अग्निहोत्र व मान के अर्थ मौन रहना, मान के लिये ही पढ़ना, मान के अर्थ यज्ञ करना ये चार यद्यपि अभयंकर हैं तथापि जब अच्छी रीति से नहीं किये जाते तो भयंकर हो जाते हैं ४५ घर फूंकनेवाला, विष देनेवाला, अपनी स्त्री की खर्ची खानेवाला, यज्ञ की औषधि बेंचनेवाला, तीर बनानेवाला, चुगुली करनेवाला, मित्रद्रोही, परस्त्रीगामी, गर्भपात करवानेवाला, गुरु की शय्या पर बैठनेवाला, ब्राह्मण हो मदिरा पीनेवाला, अति तीक्ष्ण स्वभाववाला, दुःखित को दुःख देनेवाला, नास्तिक, वेद की निन्दा करनेवाला, खोंची लेनेवाला, पुरोहित जिसका सोलह वर्ष तक भी यज्ञोपवीत न हुआ हो व जो कभी गायत्री न जपता हो, ब्राह्मण हो हल जोतनेवाला, चाहे समर्थ भी हो व हमारी रक्षा करो ऐसा कहने पर भी मार डालनेवाला, ये सब ब्रह्मघाती के समान हैं, इनमें घर फूंकनेवाला व विष देनेवाला ये दोनों तुम्हारे पुत्रों में हैं ४६ । ४८ अँधेरे में तृणों के बारने से रूप पहिंचाना जाता, आचार से धर्म जाना जाता, अहिंसादि करने से साधु, भय में शूर, दारिद्र में धीर, आपत्काल में मित्र व शत्रु जाने जाते हैं ४९ बुढ़ाई रूप को हरती है, आशा धैर्य को, मृत्यु प्राणों को, निन्दा धर्म को, क्रोध लक्ष्मी को, अनारियों की सेवा शील को, काम लज्जा को व अभिमान सबको हरता है ५० मङ्गल कर्म से श्री होती है व ढिठाई से बढ़ती है, शीघ्रता से काम करने से जड़ पकड़ती है, संयम रखने से सदा टिकी रहती है, तुममें संयम नहीं है इससे श्री न रहेगी ५१ प्रज्ञा, कुलीनता, इन्द्रियों का दमन, शास्त्र पढ़ना, पराक्रम, बहुत न बोलना, यथाशक्तिदान व उपकार मानना ये ८ गुण पुरुष को प्रकाशित

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कराते हैं ५२ ये सब गुण उस पुरुष के पास अपने आप आ जाते हैं राजा जिसका सत्कार करता है यद्यपि ये बड़े महानुभाव गुण हैं तथापि राजसत्कार गुण सबसे अधिक शोभित होता है ५३ आठ गुण जो आगे कहेंगे वे मनुष्य लोक में स्वर्गलोक के दृष्टान्त हैं, उनमें चार तो सज्जनों में नित्य रहते हैं व चार के पीछे २ पण्डित लोग चलते हैं ५४ यज्ञ, दान, पढ़ना, तपस्या ये चार तो पण्डितों में नित्य रहते व दम, सत्य, सरलता, अक्रूरता इन चारों के सज्जन पण्डित लोग अनुयायी रहते हैं ५५ यज्ञ करना, वेदाध्ययन करना, दान देना, तपस्या करना, सत्य बोलना, क्षमा करना, करुणा होना व अलोभ करना यह आठ प्रकार का धर्म का मार्ग है ५६ उनमें प्रथम के चार यज्ञ, अध्ययन, दान, तपस्या इनको लोग दम्भ के अर्थ भी सेवन करते, परन्तु पीछे के चार सत्य, क्षमा, करुणा, अलोभ ये दुष्टों में रहते ही नहीं ये सदा सज्जनों में ही रहते हैं ५७ जिसमें वृद्ध लोग न बैठे हों वह सभा नहीं है व जो धर्म नहीं कहते वे वृद्ध नहीं हैं व जिसमें सत्य नहीं है वह धर्म नहीं है व जो छलयुक्त वचन है वह सत्य नहीं है ५८ सत्य, रूप, शास्त्र, विद्या, कुलीनता, शील, बल, धन, शूरता, शोभन वचन ये दश स्वर्ग की योनियां हैं ५९ पाप करने से पापकीर्त्ति पुरुष हो पाप ही भोग करता व पुण्य कर पुण्यकीर्त्ति पुरुष पुण्य ही भोगता है ६० इससे प्रशंसित पुरुष पाप कभी न करे, क्योंकि बार २ का किया हुआ पाप बुद्धि का नाश कर देता है ६१ नष्ट बुद्धि पुरुष नित्य पाप ही करने का आरम्भ करता है, यद्यपि पुण्य बार २ करने से बुद्धि को बढ़ाती है पर दुष्ट तौ भी पुण्य नहीं करते ६२ वृद्ध प्रज्ञलोग नित्य पुण्य ही करने का आरम्भ करते हैं, क्योंकि पुण्य करता हुआ पुण्यकीर्त्ति पुरुष पुण्यस्थान को जाता है, इससे एकाग्रचित्त हो पुरुष पुण्यही की सेवा करे ६३ निन्दक, मर्मस्थलभेदक, अप्रियवादी, वैर करनेवाला व शठ ऐसा पापी पुरुष

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

शीघ्र ही कष्ट पाता है ६४ व अनिन्दक, प्रज्ञावान् व सदा सुन्दर कार्य करनेवाला वह बड़ा कष्ट कभी नहीं पाता सर्वत्र शोभित होता है ६५ जो बुद्धिमानों से बुद्धि ही सीखता है वही पण्डित है, क्योंकि पण्डित धर्म अर्थ दोनों पाय सुख बढ़ा सक्ता है ६६ दिन में वह कार्य करना चाहिये जिससे रात्रि में सुख से बसे व आठ महीनों में इतना कार्य करे जिससे चार महीना वर्षा में सुख से रहे ६७ बाल युवावस्था में वह विद्याध्ययन धनोपार्ज्जनादि कार्य करे, जिससे वृद्धावस्था में सुख से रहे व जब तक जीवे तब तक ऐसा कार्य करे जिससे मरने के पीछे स्वर्गादि में सुख से बसै ६८ लोग जो अन्नवस्त्र खापहिर चुकते हैं उसकी बड़ाई करते व जब स्त्री बुढ़ापा हो जाती तो उसकी बड़ाई करते कि जुआनी में हमारी स्त्री बहुत अच्छी थी व लड़ाई जीते हुए शूर की प्रशंसा करते तथा तत्त्वज्ञानी तपस्वी की प्रशंसा करते ६९ अधर्म से पाये हुए धन से जो छिद्र मूंदा जाता है वह खुला ही रहता है बरन उससे भी अधिक खुल जाता है ७० चित्त जीते हुए पुरुषों का शिक्षक गुरु है व दुष्टों का शिक्षक राजा व गुप्त पापियों के शिक्षक यमराजजी हैं ७१ ऋषियों, नदियों, महात्माओं के कुलों व स्त्रियों के दुराचार का माहात्म्य किसी के जानने के योग्य नहीं है ७२ ब्राह्मणों की पूजा करनेवाला दानी व अपनी जातिवाले भाई बन्धुओं के साथ सिधाई करनेवाला व शीलवान् क्षत्रिय बहुत दिनों तक पृथ्वी का पालन करता है॥ ७३ ॥

दो० सोनफूल फूली मही, पुरुष तीन चुनि लेत।
शूर प्रज्ञ अरु नृपति की, सेवा करन सचेत॥ १। ७४॥
बुद्धि श्रेष्ठ कारज भुजा, बल सोहैं सब साध्य।
तिन्हैं जांघ बलसों करन, नीच कर्म निर्बाध्य॥ २। ७५॥
दुर्योधन अरु शकुनिमहँ, मूढ़ दुशासन माहिं।
कर्णहु महँ ऐश्वर्य है, चहत विभूति कहांहिं॥ ३। ७६॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सब गुणयुत पाण्डव सकल, यह भल जानहु भूप।
पितृ समान समझत तुम्हैं, तुम सुतसम अनुरूप ॥ ४।७७ ॥

का० दो० उरवी को सुवरण पुहुप, लुनत तीन गुणवान।
शूर और कृतविद्य अरु, ज्ञाता नीति विधान ॥ १ ॥
करत बुद्धिबल कर्म जो, श्रेष्ठ कर्म है तौन।
विना बुद्धि को बाहुबल, करि जय पावत कौन ॥ २ ॥
कहि आये जितने सुगुण, पाण्डव में ते सर्व।
श्रेष्ठ पिता मानत तुम्हैं, तुम सुत गुणो अखर्व ॥ ३ ॥

सो० दुर्योधन मतिमन्द, शकुनि दुशासन करण सह।
अतिऐश्वर्य सुछन्द, इनको मतलागि मति चहौ ॥ ४ ॥

इति श्रीमन्महाभारतेउद्योगपर्वणिपञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

छत्तीसवां अध्याय।

दो० छत्तिसवें महँ कहब जिमि, विदुर बहुरि कह नीति।
परमहंस इतिहास कहि, सुनत होत ज्यहि प्रीति ॥ १ ॥

विदुरजी बोले कि, इस विषय में एक पुराना इतिहास कहते हैं जिसमें दत्तात्रेयजी व साध्यों का संवाद है यह हमने सुना है १ परमहंसरूप से फिरते हुए महाप्राज्ञ दत्तात्रेयजी को देख साध्य देवगणों ने पूछा २ कि हे महर्षिजी ! हम साध्य देवता हैं परन्तु आपको देख अनुमान नहीं कर सकते हमलोग जानते हैं कि आप शास्त्र पढ़ने से बड़े धीर हैं व बड़े बुद्धिमान् हैं इससे कवियों की उदार वाणी हम से कहिये ३ यह सुन परमहंसजी बोले हे देवताओ ! हम ने सुना है कि इतना कार्य करना चाहिये कि अविक्लवता, इन्द्रियों की निवृत्ति, सत्य धर्म का अनुवर्त्तन इनसे हृदय की गांठ काट आत्मा के साथ प्रिय अप्रिय दोनों को समान जाने ४ चाहे कोई अपना को शाप भी दे पर आत्मज्ञानी उसको न शापदे क्योंकि सह लेनेवाले का क्रोध

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ही शाप देनेवाले को जलाता है व उसकी पुण्य भी उसी सहनेवाले को मिल जाती है ५ शाप किसी को न दे, अपमान किसी का न करे, मित्रद्रोही न हो व नीचों की सेवा न करे, अभिमान न करे, आचारहीन न हो, रूखी व रोषवती वाणी न बोले ६ क्योंकि रूखी बोली पुरुषों के मर्म स्थल व हड्डियों व हृदय व प्राणों को भस्म कर देती है इससे धर्मात्मा को चाहिये कि रूखी व अकल्याणकारिणी वाणी न बोले ७ जो पुरुष ऐसे वचन बोलते कि सुननेवाले के सुकुमार सब स्थल व्यथित होजाते हैं व जो कठोर वचन बोलते व जिसकी रूखी वाणी होती है व जो वचनरूप कांटों से मनुष्यों को व्यथित करता है उस पुरुष को अतिदरिद्र जानना चाहिये व जानों वह अपने मुख में मृत्यु को बैठाये है जभी वह भीतर पैठ जाय तभी मार डाले ८ जो कोई शत्रु महात्मा को अति तीक्ष्ण व अग्नि सूर्य के समान चमकते हुए बाणों से मारता है तो उस महात्मा पण्डित को चाहिये कि उसके बाण लगे हों व जला भी जाता हो तो वह यही माने कि यह हम को पुण्य देता है ९ जो सज्जन की सेवा करे व असज्जन की, तपस्वी की सेवा करे व चोर की बस जिसी की सेवा करेगा उसी के वश होजायगा जैसे उजले कपड़े को चाहो जिस रँग में रँगो वह वैसा ही होजाता है ऐसे ही तुम्हारे पुत्र पापी हैं उनके निकट रहने से तुम भी पाप करने लगोगे १० जो पुरुष वाद विवाद न करता न कराता व जो मारने पर न आप मारता न किसी से कहकर मरवाता है व जो पापी को मारना नहीं चाहता देवता लोग चाहते हैं कि ऐसा पुरुष हमारे यहां आवे ११ बोलने से विना बोलना अच्छा है व जो बोले तो सत्यही बोले यह दूसरा अच्छा है सत्य हो व प्रिय भी हो तो तीसरा अच्छा है व सत्य प्रिय धर्म युक्त भी हो तो चौथा अच्छा है १२ जैसे लोगों के सङ्ग पुरुष बैठता व जैसे लोगों की सेवा करता, वैसाही वह होना चाहता है इससे वैसाही होजाता है १३ जहां २ से पुरुष

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

निवृत्त होता वहां २ से छूटता जाता है इसी तरह जब सब कहीं से निवृत्त हो जाता तो फिर उसको कुछ भी दुःख नहीं रह जाता १४ पुरुष न किसी से जीता जाता न औरों के जीतने की इच्छा करता है न किसी के सङ्ग वैर करता न मारता है व निन्दा प्रशंसा में तुल्य स्वभाव रहता व न शोचही करता न हर्षही करता इसके करने करानेवाला और ही है १५ जो सब का कल्याण चाहता अकल्याण में मन करता ही नहीं व सत्यवाद, कोमल स्वभाव, इन्द्रियों को जीते रहता वह उत्तम पुरुष कहाता है १६ जो अनर्थ नहीं समझाता व जिसको देने को कहता देताही है व दूसरे के छिद्र भी देखता रहता पर दुष्टता नहीं करता वह मध्यम पुरुष कहाता है १७ दुश्शासन, घोषयात्रा में गन्धर्वों से गदा से मारा भी गया व शस्त्रों से विदीर्ण भी हुआ तथापि क्रोधवश होने से अभी सीधा नहीं हुआ व जिससे वह कृतघ्न है उपकार किसी का मानता ही नहीं इससे पाण्डवों ने उसे गन्धर्वों से छुटाया भी परन्तु उनके उपकार का नाशही करता व उनका क्या किसी का मित्र वह दुष्टात्मा नहीं है बस ये सब कला उसमें अधम पुरुषकी हैं १८ जो पुरुष गुरु लोग श्रेष्ठों से भी कल्याण होने में विश्वास नहीं करता सदा आत्मा में ही शङ्कित बना रहता है व मित्रों का अनादर किया करता है वह अधम पुरुष है १९ जहां तक हो उत्तम पुरुषों की ही सेवा करे समय पर जाने पर मध्यम पुरुषों की भी करे परन्तु जो अपना ऐश्वर्य चाहै तो अधमों की सेवा कभी न करे २० नित्य के उत्थान करने व बुद्धि व पौरुष से व बल से असज्जन भी पुरुष धन पाता है परन्तु अच्छी प्रशंसा नहीं पाता व न महाकुलीनों के आचार पाता है २१ धृतराष्ट्रजी बोले कि यद्यपि देवता लोग धर्म्म अर्थ से नित्य व बहुश्रुत होते तथापि महाकुलीन होने की इच्छा करते हैं इससे हे विदुरजी! हम आप से यह प्रश्न करते हैं कि महाकुल कौन होते हैं २२ विदुरजी बोले कि, जहां कृच्छ्रचान्द्रायणादि व्रतरूप तपस्या हो व इन्द्रिय जब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वेदाध्ययन, वेदाध्यापनादि ब्रह्मधन, यज्ञ, पुण्यपूर्वक विवाह व निरन्तर अन्नदान ये सात गुण हों व सदाचार होता वे महाकुल कहाते हैं २३ जिन लोगों का आचार व्यथित नहीं होता न उनके उत्पन्न करनेवाले पिता माता उनके वृत्त से व्यथित हों किन्तु उनके आचार से सदा सन्तुष्ट रहते हों व जो चित्त की प्रसन्नता से धर्म्म करते हैं व जो अपने कुल में विशेषकीर्त्ति चाहते हैं व मिथ्या बोलतेही नहीं वही महाकुल हैं २४ विना यज्ञ करने से व नीचों के यहां विवाह करने से, वेद के न पढ़ने पढ़ाने से व ब्राह्मणों के निरादर से कुल अकुलता को पहुँचजाते हैं २५ ब्राह्मणों के अनादर से, ताड़न से व ब्राह्मणों की निन्दा से व किसी की धरोहर हरलेने से कुलीन अकुलीन होजाते हैं २६ जो कुल आचरण से हीन हैं वे गाय बैल आदि से व सत्पुरुषों के होने से व धन के होने से कुलीनों की गणना में नहीं गिनेजासक्ते २७ जो आचरण से हीन नहीं हैं वे अल्पधन भी कुल कुलीनों की गिनती में आजाते हैं व बड़ायश करलेते हैं २८ सुन्दर आचरण की रक्षा यत्न से करनी चाहिये व धन तो आता जाता रहता है धन से क्षीण होने से अक्षीणही समझा जाता है व आचरण से हत हुआ तो हतही होजाता है २९ जो कुल आचरण से हीन होजाते हैं गाय बैलों से छाग छगाड़ियों से, घोड़ों से व अच्छी खेती से वे कुल नहीं हरेभरे होते ३० हमारे कुलमें कोई वैर करनेवाला न हो व राजा मन्त्री परधनहारी न हों व मित्रद्रोही न हो कपटी, मृषावादी, देवता, पितर व अतिथियों से प्रथम भोजन करनेवाला न हो ३१ जो हमारे ब्राह्मणों को मारे व जो हमारे ब्राह्मणों को विषदे व जो न हमारे संग्राम में आवे वह हमारे सङ्ग न रहै ३२ अतिथियों के लिये सज्जनों के गृह में बिछाने के लिये पैरा नरई आदि तृण, अच्छी भूमि, जल व सुन्दर मधुरवाणी ये नहीं उच्छिन्न होजाते बरन मिली जाते हैं ३३ सत्कार करने के लिये परमश्रद्धा से जहां तृणादि दियेजाते हैं वे पुण्यात्मा धर्म्म करने-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वाले मनुष्यों के कामही हैं ३४ छोटी भी लढ़ी जितनाभार उठा सक्ती है उतना और पृथ्वी से उत्पन्न कोई भी नहीं उठासक्के ऐसेही योग्य कुलीन लोग जितना लोगों का भार सहते हैं उतना अन्य मनुष्य नहीं सहसक्के ३५ जिसके कोप से भय लगती हो वह मित्र नहीं है व जिस मित्रकी ओर से सदा चित्तशङ्कितही बना रहै वह भी मित्र नहीं है किन्तु जिस मित्र के सामने पिता के पास के रहने के समान शिक्षा मिलती हो वह मित्र है और तो सम्बन्धमात्र के मित्र हैं ३६ व जो कोई सम्बन्धी भी न हो पर मित्रभाव से रहता हो तो वही बन्धु वही मित्र वही गति वही उत्तम गृह है ३७ चलचित्त व वृद्धों के असेवक व चञ्चल बुद्धि पुरुष का मित्र संग्रह करना निश्चय नहीं है ३८ चलचित्त, अनात्मज्ञानी व इन्द्रियों के वशीभूत पुरुष के दूरही दूर अर्थ रहते हैं निकट नहीं आते जैसे सूखे सरोवर के पास हंस नहीं जाते ३९ अकस्मात् कोप करना व विना निमित्तही कभी प्रसन्न होजाना बादर के समान चञ्चल असाधुओं का शील होता है ४० जो लोग सत्कार करने व अर्थ सिद्ध होनेपर भी अपने मित्रों के हित नहीं होते मरने पर उनका मांस चील्ह कौवा आदि मांसभक्षी पक्षी व शृगाल कुत्तादि पशु नहीं खाते ४१ चाहे धन हो व न हो मित्रों का सत्कार सदा करता रहै यह न विचारे कि इनके तो थोड़ाही सारांश है इनका सत्कार क्या करें ४२ दूसरे का सन्ताप करने से रूप भ्रष्ट होजाता है व सन्तापसे बल भ्रष्ट होता सन्तापसे ज्ञान भ्रष्ट होता व सन्ताप ही से पुरुष रोगी होजाता है ४३ जो मिलने के योग्य इष्टवस्तु नहीं उसके न मिलने से जो पुरुष शोक करता है उसका एक तो वृथा शरीर उपतप्त होता दूसरे वैरीलोग हर्षित होते इससे शोक में मन न करो ४४ मनुष्य मरता फिर उत्पन्न होता व पुरुष छोटा रहता फिर बढ़ता व मनुष्य माँगता है फिर वह और के माँगनेवाला भी होजाता है व मनुष्य औरों को शोचता है फिर कभी उसे और लोग शोचते हैं ४५ सुख, दुःख, लाभ, अलाभ, मरना, जीना, भव, अभव ये सब क्रम से समय २ पर हुआ करते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हैं इससे धीरपुरुष न हर्षित हों न शोक करें ४६ श्रोत्रादि पांच इन्द्रियां व मन ये छवो चल हैं इनका विषय जहां २ बढ़ता है उस २ मार्ग के द्वारा पुरुष की बुद्धि चूती है जैसे छेदवाले बर्तन से जल चुआ करता ४७ इतना सुन धृतराष्ट्रजी बोले कि शरीर के भीतर मिथ्या बातों के उपचार से हमने अग्निराजा को स्थापन कररक्खा है इससे वह अग्नि मन्दबुद्धि हमारे पुत्रों को युद्ध कराय मारेगा ४८ यह सब संसार नित्य उद्विग्न रहता व यह मन भी नित्य उद्विग्न रहता अब जो पद नित्य अनुद्विग्न रहता हो वह हमसे कहो ४९ इतना सुन विदुरजी बोले कि हे पापरहित! विद्या, तपस्या, इन्द्रियों का जीतना, लोभ छोड़ना इन कार्यों के विना किये हम आपकी शान्ति नहीं देखते ५० पुरुष बुद्धि से भय मिटाता व तपस्या से सद्गुरु शास्त्रादि पाता व गुरु की सेवा करने से ज्ञान पाता व योगाभ्यास से शान्ति पाता है ५१ विना दान पुण्य करने से व विना वेद पुण्य के पढ़ने जानने से व विना राग वैरादि छूटने से मोक्ष की अभिलाषा किये पुरुष यहीं घूमा करते हैं ५२ अच्छी तरह पढ़ने का व अच्छीतरह युद्ध करने का व अच्छी तरह किये गये कर्म्म का व अच्छीतरह किये गये तप का फल व सुख अन्त में पाता है ५३ जिन पुरुषों का जातिवाले लोगों के सङ्ग बिगाड़ होजाता अच्छे २ बिस्तरों पर लेटने से भी उनको नींद नहीं आती न स्त्रियों में उनको प्रीति होती न मागध सूतों के स्तुति करने सेही नींद आती न प्रसन्नताही होती ५४ व न वे लोग कभी धर्म्मही करते व न वे लोग कभी सुखही पावें न वे गौरवही पाते न उनलोगों को शान्त रहना ही रुचता है ५५ व न उनको अपना हित भी कोई कहता तो अच्छा लगता व उनका योग क्षेम भी नहीं अच्छी तरह होता उन लोगों को नाश के सिवाय और कुछ सूझता ही नहीं ५६ गाइयों को दुग्धादि से सम्पन्न होना चाहिये, ब्राह्मणों को तपस्या से सम्पन्न होना चाहिये स्त्रियों में चपलता होतीही है व जातिवालों से भय होतीही है ५७

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कुल के लोग पहिले बढ़ाये जाते हैं फिर बहुत वर्षोंतक बढ़ते रहते हैं व बहुत होने के कारण बहुत प्रयास करते हैं जिनकी कि सज्जनों की उपमा होती है जैसे तुम्हारे पाण्डव लोग ५८ यह गुण पाण्डवों मेंही है कि जहां से बढ़ाये गये हैं उनके सङ्ग परें तो बहुतही बड़ा काम करें सब जातिवाले वैसे नहीं होते बरन उनके विपरीत होते हैं जातिवाले लोग जबतक अलग २ रहते हैं धुआंया करते व जब इकट्ठे होजाते हैं तो बरने जरने लगते हैं हे धृतराष्ट्र! जाति के लोग अङ्गारों के समान होते हैं जबतक अलग २ रहते धुआं निकला करता जब इकट्ठे होते तो धधक बरने लगते हैं ५९। ६० बड़ा भारी बलवान् बड़ी पुष्टता के साथ लगा हुआ भी अकेला वृक्ष कुछ नहीं करसक्ता क्योंकि उसको जब चाहे प्रचण्ड पवन जड़ मूड़ से उखाड़डाले ६१ परन्तु जो वृक्ष बागों में बहुत से एकत्र लगे होते वे परस्पर एकत्र के रहने से मिले रहते इससे प्रचण्ड पवनको भी सहलेते हैं एकाएकी नहीं उखड़ते ६२ इसी तरह सब गुणों से युक्त भी हो पर अकेला मनुष्य है तो उसे अकेले पेड़ के समान उखाड़ने के योग्य शत्रुलोग समझते हैं ६३ एक दूसरे की सहाय करने से व मिलजुल रहनेसे जातिके लोग इकट्ठे रहनेसे बढ़तेहैं जैसेतड़ागमें कमल मिलजुल बढ़ते हैं ६४ ब्राह्मण, गाय, जाति के लोग, बालक, स्त्रियां व जिनका अन्न खाता हो व जो शरण में आये हों इतने लोग मारने के योग्य नहीं होते ६५ हे राजन्! मनुष्य में सधनता व नीरोगता के सिवाय और कोई गुण नहीं होता इससे जो रोगी होते वे मरे ही के तुल्य रहते हैं ६६ हे महाराज! प्रशान्त चित्त हो दीनता को पान करजाव यह दीनता व्याधि से उत्पन्न नहीं होती पर कटु होती है व शिर में व्यथा करती, पाप का अनुबन्ध ही है, कठोर, तीक्ष्ण व गरम होती है सज्जन लोग इसे पीते असज्जन नहींपीते ६७ रोगी लोग फूलों का आदर नहीं करते व न विषय वासनाओं को निश्चय जानते न धन के योग के सुखपाते हैं क्योंकि नित्य वे लोग सदा दुःखित ही रहते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इससे कुछ जानही नहीं पाते ६८ हे राजन्! जुआ में जीती हुई द्रौपदी को देख हमने जो वचन आपसे कहा आपने उसे नहीं माना वह यह था कि दुर्योधन को रोंको इस विषय में अनर्थ न करे क्योंकि सत्पुरुष जुआ नहीं खेलते ६९ वह बल नहीं है जो कोमल पदार्थ से अबल होजाय व सूक्ष्म धर्म शीघ्रता के साथ सेवन करना चाहिये व जो लक्ष्मी क्रूर पुरुष में समाहित रहती वह शीघ्रही नष्ट होती है व जो कोमल मनुष्यों से प्रौढ़ रहती वह पुत्र पौत्रादिकों के समयतक बनी रहती है॥ ७०॥

हरिगीतिका॥

धृतराष्ट्र सुत पाण्डवन पालहिं पाण्डुसुत उनपालहीं।
कुरुपाण्डवन के एकहीं रिपु मित्र एकहि चालहीं॥
यासों उभय मिलि रहहिं यकसँग और बात न ख्यालहीं।
रहिहैं सुखी धन धान्ययुत सब जियहिंगे बहुकालहीं॥१।७१॥
धृतराष्ट्र मेढ़ीथम्भ तुम हौ कौरवन के मानहू।
सब अहैं भूप अधीन तुम्हरे कुरुन कुल यह जानहू॥
वनवास दुःखित पाण्डवनकहँ पालिये यश लीजिये।
यह वचन हमरो मानिये बस और कछु जनि कीजिये॥२।७२॥

दो० कौरव पाण्डव एकमहँ, मिलवहु रिपु न बढ़ाव।
पाण्डव हैं सब सत्यपर, दुर्योधन समभाव॥३।७३॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षट्त्रिंशोऽध्यायः॥ ३६॥

सैंतीसवां अध्याय।

दो० सैंतिसवें महँ कहब जिमि, विदुर कह्यउ पुनि ज्ञान।
राजनीति करि प्रीति अरु, धर्मनीति धरि ध्यान॥ १॥

विदुरजी बोले कि, हे धृतराष्ट्रजी! स्वायम्भुव राजा मनुजी ने आकाश अपनी मूठी में किये सत्रह पुरुष बताये हैं १ एक तो बताया है

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कि इन्द्र का धनुष किसी के झुकाने के मान का नहीं है व फिर सूर्य चन्द्रमा के किरण किसी के पकड़ने के योग्य नहीं २ व जो पुरुष विना सिखाने के योग्य पुरुष को थोड़े लाभ के लिये सिखाता है व उससे सन्तुष्ट हो जाता है व जो अपने लाभ के लिये शत्रु की सेवा करता है व जो स्त्रियों की रक्षा से अपना कल्याण चाहता है वे दोनों मूर्ख हैं व जो विना माँगनेवाले से माँगता है व आप युद्धादि कुछ कर नहीं सकता पर बकता बहुत है ३ व जो कुलीन होकर चोरी व्यभिचारादि अकर्त्तव्य कार्य करता है व जो निर्बल हो बलवान् का नित्य वैरी रहता व जो श्रद्धा-रहित पुरुष से कुछ सदुपदेश करता है व जो चाहने के अयोग्य की चाहना करता है ४ व जो श्वशुर होकर अपनी पतोहू से उसके पिता भाई आदि के समान प्रत्यक्ष में कुछ हास्य की वार्त्ता करता व जो आपत्काल में कहीं बधू के पिता आदि से रक्षित हो फिर अनापत्काल में भी वहीं रह अपना मान चाहता है व जो परस्त्रीगमन करता है व जो स्त्रियों के सङ्ग बार बार वार्त्ता किया करता है ५ व जो पुरुष पाकर कहता है हमको स्मरण नहीं है व जो तीर्थादि में देने को कहआता व यहाँ माँगने पर कहने लगता हम तो वहीं दे चुके व जो दुष्ट के पराक्रम व साधुता की बड़ाई करता व उसको सत्यवादी बताता बस ये १७ मूर्ख हुए इन सबों को हाथों में फांसी लिये यमराज के दूत नरक को लेजाते हैं ६ जिसके सङ्ग जो जैसा करे उसके सङ्ग वह भी वैसा ही करे, दुष्ट के सङ्ग दुष्टता व साधु के सङ्ग साधुता करना ही धर्म है व इसके विपरीत अधर्म है ७ वृद्धता रूप को हरती है, आशा धैर्य को हरती, मृत्यु प्राणों को, निन्दा धर्म को, काम लज्जा को, नीच की सेवा आचरण को, क्रोध लक्ष्मी को व अभिमान सब पदार्थों को हरता है ८ धृतराष्ट्रजी बोले कि, हे विदुरजी ! वेदों में पुरुष की १०० वर्ष आयुष्य लिखी है पर किस हेतु से पूरी आयुष्य पुरुष नहीं पाता ९ विदुरजी बोले कि अतिमान करना, अतिवाद करना, चोरी करना,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

विष खिलाना आदि न छोड़ना, क्रोध करना, अपने ही शिश्नोदर का पालन पोषण करना व मित्रों से द्रोह करना १० ये ६ बड़े तीक्ष्ण खड्ग हैं मनुष्यों की आयुष्य काट डालते हैं बस ये ही ६ मनुष्यों को मार डालते हैं मृत्यु किसी को नहीं मारती ११ विश्वस्त पुरुष की स्त्री के सङ्ग जो भोग करता व जो गुरु के बिस्तरापर बैठता व ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य होकर जो शूद्र की स्त्री के सङ्ग भोग करता व ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य हो जो मदिरा पान करता १२ व जो ब्राह्मण हो किसी की पठौनी करता व जो किसी की जीविका हरलेता व जो ब्राह्मण को सेवकाई में रखता व जो शरणागत को मारता व मरवाता ये सब ब्राह्मण मार डालनेवाले के समान हैं इनके सङ्ग में बैठने, उठने, खाने, पीने से ब्रह्महत्या का प्रायश्चित्त करना चाहिए १३ व विद्यावान्, नीतिवान्, दानी, देवता, पितर व अतिथियों के भोजन से बचे अन्न का भोजन करनेवाला, किसी भी जीव को न मारनेवाला, अनर्थ न करनेवाला, कुशल, उपकार माननेवाला, सत्यवादी व सरल चित्त-वाला इतने पुरुष स्वर्ग को जाते हैं १४ हे राजन् ! सदा प्रियवादी पुरुष सुलभ हैं सब कहीं मिलते हैं परन्तु अप्रिय हो परहित हो ऐसे वचन को श्रोता वक्ता दोनों दुर्लभ हैं १५ जो पुरुष धर्म पर आरूढ़ हो प्रिय अप्रिय छोड़ अपने स्वामी के हित ही वचन कहता चाहे सुनने में बहुत ही अप्रिय हों ऐसे ही पुरुषसे राजा सहायवान् होता है १६ कुल के अर्थ दुराचारी एक पुरुष को छोड़ देना चाहिए व ग्राम के अर्थ एक कुल छोड़ देना चाहिये देश के अर्थ एक ग्राम छोड़ना चाहिये व अपने अर्थ पृथ्वी भर छोड़नी चाहिये व १७ आपत्काल के लिये कुछ धन की रक्षा करनी चाहिये व स्त्रियों की रक्षा धन से भी करनी चाहिये व अपनी रक्षा तो स्त्रियों से व धन से भी करनी चाहिये १८ बहुत पूर्व समयसे जुआं खेलना मनुष्योंका वैरकारी देखा सुना गया है इससे बुद्धिमान् पुरुष हँसौवा करने के लिये भी जुआं कभी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

न खेलैं १९ हे राजन्! जब तुम्हारे यहां जुआं खेलने का प्रारम्भ हुआ था तभी हमने कहा था कि यह बात अच्छी नहीं इसमें अनर्थ होगा परन्तु आपको हमारा वचन ऐसा न अच्छा लगा जैसे रोगी को हित भी कड़ुवी औषध नहीं अच्छी लगती २० हे राजन्! काकरूप अपने पुत्रों से चित्र विचित्र पङ्खवाले मयूररूप पाण्डवों को पराजित कराया चाहते हो व सिंहों को छोड़ शृगालों की रक्षा चाहते हो इससे समय आने पर शोच करोगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है २१ हे तात! जो पुरुष सेवा करते हुए व सदा हितकारी सेवक के ऊपर कभी क्रोध नहीं करता उस स्वामी में सेवक भी विश्वास करते हैं व आपत्काल में स्वामी को नहीं छोड़ते २२ भृत्यों की जीविका रोंक और बाहर से किसी का धन उसके बदले में न हरने की इच्छा करे क्योंकि जिन भृत्यों की जीविका रुकजाती है वे समयपर स्वामी को छोड़ देते हैं चाहे स्नेहवान् भी हों पर जब उनकी जीविका जाती रहती तो कार्य नहीं करते २३ प्रथम जो कार्य करना है उसका साध्य असाध्य विचार ले फिर नौकरों चाकरों की जीविका अच्छीतरह नियत करदे व अपनी आमदनी व खर्च भी बनाय जान ले तो फिर अपने मनके सहायकों को ग्रहण करे क्योंकि सहायकों से सिद्ध होनेवाले कार्य बड़े दुष्कर होते हैं २४ जो पुरुष स्वामी का अभिप्राय जान सब कार्य निरालस हो करता है व सदा हितही वचन बोलता व सदा स्वामी का अनुरागी रहता व अपने स्वामी की शक्ति जानता है ऐसा श्रेष्ठ अपने समान दया करने के योग्य है २५ व जो भृत्य सिखाने पर स्वामी के वचन का आदर न करता हो व कार्य करने की आज्ञा पाय उसका निषेध करता हो व जो अपनी बुद्धि का बड़ा अभिमान रखता हो व सदा आज्ञा के विरुद्धही काम करता हो ऐसे भृत्य का त्याग तुरन्त ही कर देना चाहिये २६ व अहङ्काररहित, सामर्थ्यवान्, शीघ्र कार्यकारी, दयावान्, मधुरवक्ता औरों के बगदाने के मान का नहीं रोग-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लेशरहित सयुक्तिक वचन कहनेवाला ऐसा ८ गुणयुक्त दूत जहां कहीं भेजना हो भेजे २७ सन्ध्या समय विना परिचित मनुष्य के घरपर टिकने के लिये न जाना चाहिये व रात्रि में अकेला चौरहा में न सोवै व राजा के भोग करनेवाली स्त्रियों से भोग करने के लिये प्रार्थना न करे २८ व अच्छे मन्त्री को चाहिये कि जिस राजा के बहुत से दुष्ट मन्त्री हों उन्हीं की सङ्गति में परारहता हो उसकी सम्मति में न रहे व पूछने पर यह भी न कहे कि तुम्हारे तो बहुत मन्त्री हैं हम कुछ न कहेंगे किन्तु कहदे कि हमको इस समय फलां कार्य है इतना कह टल जाय २९ अति लज्जावान्, राजा, पुंश्चल, राजसेवक, पुत्र, भाई, विधवा स्त्री व छोटे बालक की माता, सेना से जीविका करनेवाला व जिसकी जीविका छीनली गई हो धन लेन देन के व्यवहार में इतने पुरुष वर्जनीय हैं ३० प्रज्ञा, कुलीनता, शास्त्र पढ़ना, सब इन्द्रियों का जीतना, पराक्रम, बहुत न बोलना, दान यथाशक्ति देना, उपकार मानना इतने गुण पुरुष को प्रकाशित करते हैं ३१ हे तात! इन सब महानुभाव गुणों को जबरदस्ती एकगुण प्राप्त हो जाता है जिसका राजा सत्कार करता है वह इन सब गुणों को धारण करता है ३२ व जो पुरुष नित्य अच्छी तरह स्नान करता है उसको बल, रूप, स्वर, वर्णों का शुद्धोच्चारण, स्पर्श, गन्ध, विशुद्धता, श्री, सुकुमारता व श्रेष्ठ स्त्रियां ये दशगुण भजते हैं ३३ व जो पुरुष अच्छीतरह योग्य भोजन करता है उसको आरोग्य, आयुर्बल, बल, सुख, स्वच्छता व सुन्दर सन्तान ये ६ गुण भजते हैं व उसको बहुत भोजन करनेवाला कोई नहीं कहता ३४ व अकर्म्मशील, बहुत खानेवाला, लोगों का वैरी, बड़ा मायावी, क्रूर, देशकाल न जाननेवाला, कुत्सित वेष धारण करनेवाला इतने पुरुषों को अपने घर में न बसावे ३५ कृपण, गालियां देनेवाला, मूर्ख, वनवासी, जुआरी, जो मानने के योग्य न हो पर माना जाता हो, निष्ठुरवादी, वैरी व उपकार न माननेवाला चाहे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बहुत भी दुःखित हो पर इतने पुरुषों से कभी कुछ न माँगे ३६ व आततायी, जोकि ६ प्रकार के होते हैं जैसे कि, अग्नि लगानेवाला, विष खिलानेवाला, सदा शस्त्रही हाथ रखनेवाला, परधन छीन लेनेवाला, पराया खेत व पराई स्त्री हर लेनेवाला, ये व सदा व्यग्रचित्त, नित्य मिथ्यावादी, अदृढ़ भक्तियुक्त, स्नेहहीन, अपना को ही कुशल माननेवाला इन ६ अधम पुरुषों का सेवन कभी न करना चाहिये ३७ सहायकों सेही धन मिलता है व धन सेही सहायक मिलते हैं इससे ये दोनों परस्पर बँधे हुए हैं व इसी से विना एक दूसरे के सिद्ध नहीं होता ३८ पुरुष को चाहिये कि पुत्रों को उत्पन्नकर उनको ऋणी न रखकर व उनके लिये कुछ जीविका भी नियत कर कन्याओं का विवाहादि कर उनके घरों को भेज वनमें जाय मुनि होजावे ३९ व जो कार्य सब प्राणियों को हित हो व अपना को भी सुखदायक हो वही कर्म करना चाहिये क्योंकि ईश्वर ऐसे ही कर्म से सब अर्थों की सिद्धि का मूल होता है ४० वृद्धि, प्रभाव, तेज, पराक्रम, उद्यम व निश्चय इतने जिसके होते हैं उसकी आजीविका नहीं हो सक्ती किन्तु सदा जीविका रहती है ४१ पाण्डवों के सङ्ग विग्रह करने में तुम देखो कितने दोष हैं जिनमें कि इन्द्रादि देवगण भी व्यथित होंगे व पुत्रों से वैर, नित्य उद्विग्नता सहित बसना, यश का नाश, शत्रुओं को हर्ष होगा ४२ भीष्मजी का कोप व तुम्हारा कोप, इन्द्र समान द्रोणाचार्य का कोप, राजा युधिष्ठिर का कोप ये सब इस लोक को उजाड़ देंगे जैसे केतु का आकाश में उदय सब लोकों को उजाड़ता है ४३ व जो मेल कर लोगे तो १०० पुत्र तुम्हारे व कर्ण व ५ पाण्डव ये सब समुद्रपर्यन्त पृथ्वी का राज्य अच्छी तरह करलेंगे ४४ हे राजन्! तुम्हारे पुत्र वन के समान हैं व पाण्डु के पुत्र व्याघ्रों के तुल्य हैं इससे व्याघ्र सहित वन न काटो क्योंकि व्याघ्र वन से नाश नहीं होते वे बनेही रहते हैं ४५ व्याघ्रों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के विना वन नहीं बचसक्ता व विना वन व्याघ्र भी नहीं बचते इससे व्याघ्र वन की रक्षा करते हैं व वन व्याघ्रों की रक्षा करता है ४६ देखो पापी दुर्योधनादि पुण्यात्मा पाण्डवों के कल्याणरूप गुणों के जानने की वैसी इच्छा नहीं करते जैसी कि उन लोगों के निर्गुण जानने की इच्छा करते हैं ४७ जो उत्कृष्ट धर्म की सिद्धि चाहे वह प्रथम ही से धर्म ही का सेवन करे क्योंकि धर्म से अलग अर्थ कभी नहीं जाता जैसे स्वर्ग लोक से अमृत कहीं नहीं जाता ४८ जिसका आत्मा पाप से अलग रहता व कल्याण में ही लगा रहता है वह प्रकृति विकृति सब जानता है ४६ जो पुरुष धर्म अर्थ व काम अपने समय पर सेवन करता है वह पुरुष धर्म अर्थ व काम यहां व परलोक में भी पाता है ५० हे राजन् ! क्रोध व हर्ष से उठे हुए वेग को जो रोंकता है व जो विपत्तिकाल में भी मोहित नहीं होता वह लक्ष्मी पाता है ५१ पुरुषों के पांच प्रकार का बल होता है वह हम से सुनिये जो बाहों का बल होता वह सबसे छोटा बल होता है ५२ व अच्छे अमात्यों का मिलना दूसरा बल है व धन का लाभ तीसरा बल है यह पण्डित लोगों ने कहा है ५३ व जो उसके पितृ पितामहा-दिकों का सहज बल है उसका अभिजात नाम है व वह चौथा बल है ५४ हे भारत ! जिसने इन चारों का संग्रह किया है वह सब बलों का बल प्रज्ञाबल पांचवां कहाता है ५५ जो पुरुष किसी के सङ्ग बड़ा भारी अपकार करे व उससे वैर बांध हम बहुत दूर हैं हमतक वह काहे को पहुँचेगा इसका विश्वास न करता वह मूर्ख है ५६ क्योंकि स्त्री, राजा, सर्प, विद्या, स्वामी, शत्रु व भोग के पदार्थों में कौन प्राज्ञ विश्वास करे ५७ व प्रज्ञारूप बाण से मारे हुए पुरुष के लिये न तो वैद्य हैं न औषधें न होम मन्त्र न मङ्गल पदार्थ न अथर्व वेद के मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, स्तम्भनादि प्रयोग, न सिद्ध लोग हैं ५८ हे राजन् ! सर्प, अग्नि, सिंह व जाति भर में बड़ा बुद्धिमान् पुत्र इन सबका अनादर मनुष्य को न करना चाहिये ५६

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अग्नि का तेज लोक में बहुत है वह काष्ठों के भीतर रहता है परन्तु काष्ठ तबतक नहीं बरता जबतक कोई बारनेवाला नहीं होता ६० व वही अग्नि जब काष्ठों से मथ कर अलग निकाला जाता तो उस काष्ठ व दूसरे वनको भी जला देता है ॥ ६१ ॥

दो० इमि कुलीननर क्षमायुत, अनल तेजसम होत।
बिन आकार विराजहीं, अनलइँधन जिमि सोत ॥ १ । ६२ ॥
तुम सपुत्र भूपति लता, पाण्डव शाल महान।
विना महाद्रुम पर चढ़े, लता न टिकै अलान ॥ २ । ६३ ॥
तव सुतवन तहँ पाण्डवन, व्याघ्र गुनो महिपाल।
विना सिंह वन नशत वन, बिन हरि रहत विहाल ॥ ३ । ६४ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

अड़तीसवां अध्याय।

दो० अड़तिसवें महँ कहब जिमि, विदुर कह्यहु पुनि नीति।
जासु सुने सज्जन नरन, प्रतिदिन नीति सुप्रीति ॥

विदुरजी बोले कि जब वृद्ध मनुष्य किसी युवा पुरुष के निकट आता है तो मारे गौरव के युवा के प्राण निकल जाते हैं जब वृद्ध का प्रत्युत्थान व प्रणाम करता तो फिर उसके आजाते हैं १ इससे चाहिये कि जब कोई साधु श्रेष्ठ अपने यहाँ आवे तो प्रथम उसे आसन दे जल आन पाँव धोय उसकी कुशल पूछ अपने समाचार उससे कहै फिर उसे अन्नादि भोजन दे २ क्योंकि जिसका जल शर्बत व सुन्दर वचन घर में आने पर साधु महात्मा नहीं ग्रहण करते चाहे उसने लोभ से न दिया हो व भय से व कृपणता से पर उसके जीवन को श्रेष्ठ लोग निरर्थक कहते हैं ३ क्योंकि वैद्य, तीर बनानेवाला, ब्रह्मचर्यभ्रष्ट, चोर, क्रूर, मद्य पीनेवाला, गर्भपात करानेवाला, खड्गादि अस्त्र-शस्त्र बनाने वाला, वेद बेंचनेवाला ये सब यद्यपि जलमात्र भी देने के योग्य नहीं तथापि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जो अतिथि हो सन्ध्या समय अपने द्वारपै आवें तो अति प्रियों के समान पूजनीय हैं ४ जैसे वेद बेंचने के योग्य नहीं वैसे ही लोन, पूरी आदि पक्का अन्न, दही, दूध, मधु, तेल, घी, तिल, मांस, फल, मूल, तरकारी, रँगा वस्त्र, सब सुगन्धित वस्तु व सब तरह की मिठाइयां ब्राह्मण क्षत्रिय के बेंचने के योग्य नहीं हैं ५ व जो पुरुष रोषरहित व ढेला, पत्थर, सुवर्ण के समान जाननेवाला हो व शोकरहित, स्नेह वैर हीन निन्दा सुन कोप न करनेवाला, प्रशंसा सुन हर्षित न होनेवाला व प्रिय अप्रिय को छोड़े, राग द्वेषरहित होने से उदासीनवृत्ति से रहता हो उसका भिक्षुक नाम है ६ फिर तिनीपसाही, कन्द, मूल, शाक से अपनी जीविका करता हो, अपनी इन्द्रियों को अपने वश में रखता हो, अग्नि में हवनादि करने में उद्यत रहता हो, वन में बसता हो ऐसा तपस्वी पुण्यात्मा अतिथियों का धुरन्धर कहाता है ७ बुद्धिमान् का अपकार कर अपना को दूर समझ विश्वास न करे क्योंकि बुद्धिमान् की भुजा बड़ी लम्बी होती हैं जिनसे पकर के मारडालता है क्योंकि वह पहिले मारा गया है ८ अब विश्वासपात्र का भी विश्वास न करे व विश्वास· पात्र का भी अति विश्वास न करे क्योंकि विश्वास करने से ऐसी भय उत्पन्न होती है कि जड़ मूल से काट बहाती है ९ ईर्ष्यारहित अपनी स्त्री को रक्षा में रखनेवाला समान भाग लेनेहारा व प्रियवादी स्नेहवान् पुरुष स्त्रियों की मधुर वाणी के वश में न परे १० भाइयो स्त्रियाँ सदा पूजा करने योग्य हैं क्योंकि बड़ी भाग्यवाली व पुण्यात्मा होती हैं व घर का प्रकाश इन्हीं से होता है व यही घर की शोभा हैं इससे इनकी रक्षा विशेष होनी चाहिये क्योंकि इनके भ्रष्ट होने से सब भ्रष्ट हो जाता है ११ इन स्त्रियों को पिता का जनाना मकान देदे व माता की रसोई का स्थान भी इन्हीं को देदे व गाय बैल आदि पशुओं की अन्नादि देने से अपने समान रक्षा भी उन्हीं के सौंपना करदे तो आप खेती आदि जो चाहे करने को जाय १२ व भृत्यों के सिपुर्द उद्यम

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

की चीज़ें करे व पुत्रों के सिपुर्द ब्राह्मणों की सेवा इस तरह करने से पुरुष सुखी रहता है देखो जल से आग उत्पन्न होती व ब्राह्मण से क्षत्रिय व पत्थर से लोहा उत्पन्न होता है इन अग्नि क्षत्रिय व लोहों का सब कहीं तेज फैलता है परन्तु अपनी २ उत्पत्ति स्थान में जाने से अर्थात् अग्नि जल में जाने से क्षत्रिय ब्राह्मण के सामने जाने से व लोहा पत्थर पड़ने से नहीं तेज करता बिलकुल शान्त ही हो जाता है १३ नित्य ही अच्छे कुल में उत्पन्न सज्जन लोग अग्नि समान तेजस्वी होते हैं पर क्षमावान् ऐसे होते कि मानों उनका कुछ आकार ही नहीं होता जैसे काष्ठ में आग रहती पर विना मथे नहीं निकलती न कुछ जोर करती है १४ जिस राजा की सलाह घर बाहर कहीं के रहनेवाले नहीं जानते वह सब ओर देखता हुआ राजा बहुत दिनों तक ऐश्वर्य भोगता है १५ जो करने पर हो कभी किसी से न कहे जब कर चुके तो सब आप जान लें जानने की आवश्यकता नहीं १६ धर्म काम अर्थ कार्य व मन्त्र इनमें ऐसा करने से भेद नहीं परता जब कि मन्त्र पर्वत पर चढ़कर व धवरहर पर बैठ व एकान्त स्थल में बैठकर करे १७ व वन में जाय व जहां कहीं तृण वृक्ष कुछ न हो साफ सुथरा बड़ी दूर तक परा हो वहां मन्त्र करने से भेद नहीं परता जो सुहृद् नहीं है वह परम मन्त्र जानने के योग्य नहीं है १८ चाहे पण्डित हो व अपण्डित हो पर चञ्चल मनुष्य मन्त्री बनाने के योग्य नहीं होता इससे राजा विना परीक्षा लिये कभी किसी को मन्त्री न बनावे १९ मन्त्री हो स्वामी के अर्थ की सदा इच्छा रक्खे व जो सम्मत उससे पूछा गया हो उसकी रक्षा करे किसी दूसरे से न कहे बस ऐसा करने से जानों उसने उसके सब काज कर दिये २० धर्म अर्थ व काम में जो राजा गूढ़ मन्त्र रहता उसके सब काम सिद्ध हो जाते हैं इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है २१ जो राजा मोहवश अच्छे कार्य नहीं करता वह उन कार्यों के भ्रष्ट होने से अपने प्राण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भी खो देता है २२ प्रशस्त कर्मों का अनुष्ठान सुखदायी होता है व अच्छे कार्यों का प्रारम्भ न करना पश्चात्ताप कराता है २३ जैसे विना वेद पढ़े ब्राह्मण श्राद्ध कराने व श्राद्ध में भोजन करने के योग्य नहीं होते ऐसे ही जो पुरुष सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव व समाश्रयण ये ६ गुण नहीं जानता वह मन्त्र सुनने के योग्य नहीं २४ हे नृप! जो पुरुष, यथावस्थित अपने सब काज करने पर स्थित रहता व अपनी वृद्धि क्षय जानता व सन्धि विग्रहादि ६ गुण जानता व सत्कृत शील रखता ऐसे पुरुष के पृथ्वी स्वाधीन रहती है २५ व जिसका क्रोध हर्ष दोनों निष्फल न हों व सब कार्य अपने आप देख लिया करे व खजाना सब अपने ही विश्वास में रक्खे ऐसे पुरुष के भी पृथ्वी स्वाधीन रहती है २६ राजा को चाहिये कि राजा इस नाम मात्र ही से व छत्र धारण करने ही से सन्तुष्ट रहे और धन ऐश्वर्यादि मन्त्री आदिकों को भी देता रहे आपही न सब खा जाय २७ ब्राह्मण को ब्राह्मण ही जानता, स्त्री को पतिही जानता, अमात्य को राजा ही जानता व राजा को भी राजाही जानता है २८ बन्दीखाने में प्राप्त शत्रु को कभी न छोड़ना चाहिये जब उसे देखे टेढ़ी ही नजर से देखे बल हो तो मार भी डारे व शिथिल बन्धन से कभी शत्रु को न बांधे क्योंकि वैसे शत्रु से सदा भय रहती है २९ देवता, राजा, ब्राह्मण, वृद्ध, बालक व रोगी इनके ऊपर जो क्रोध कभी आवे तो क्रोध को अवश्य रोकना चाहिये ३० मूर्खों के करने के योग्य निरर्थक कलह बुद्धिमान् न करै क्योंकि ऐसा करने से एक तो लोक में अकीर्त्ति होती है व कुछ अनर्थ उसके ऊपर भी आजाता ३१ जिस राजा की प्रसन्नता से कुछ लाभ नहीं होता व जिसके क्रोध से भी कुछ हानि नहीं होती उस राजा को प्रजा नहीं चाहती जैसे नपुंसक पति को स्त्रियां नहीं चाहतीं ३२ न बुद्धि ही से धन मिलता न मूर्खताही से दरि-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

द्रता मिलती पण्डित लोग इस धन व दरिद्रता मिलने का हेतु प्रारब्ध समझते हैं और कुछ नहीं क्योंकि बहुत बुद्धिमान् दरिद्र देखे जाते व बहुत मूर्ख धनवान् पर सार्वत्रिक नहीं कि मूर्ख ही धनवान् हों पण्डित न हों ३३ विद्यावृद्ध शीलवृद्ध, वयोवृद्ध व बुद्धिवृद्ध व धन होने से वृद्ध इन सब वृद्धों का अपमान मूर्ख नित्य किया करते हैं ३४ परन्तु अप्रशस्त आचरण करनेवाले, मूर्ख, निन्दक, अधर्मात्मा, वचनदुष्ट व क्रोधी के यहां अनर्थ बहुत ही शीघ्र आ जाते हैं ३५ व दान देकर न कहना व जिस कार्य के लिये जो समय नियत है उसको उसी पर करना व मधुर प्रिय बोलना ये काम शत्रुओं को भी अपने वश में खींच लेते हैं ३६ छल रहित बोलनेवाला, चतुर, उपकार माननेवाला, मतिमान् व सरल चित्त पुरुष जो धनहीन भी होजाता है तो भी उसकी रक्षा बहुत लोग करते हैं ३७ धारणाशक्ति, इन्द्रियों को उनके विषय से निवृत्त करना व इन्द्रियों को जीतना, पवित्र रहना, करुणा करना, प्रिय वचन बोलना व मित्रों से द्रोह न करना ये सात पदार्थ लक्ष्मी के बढ़ानेवाले हैं ३८ जो पुरुष विना देवता, पितर, अतिथियों को दिये भोजन करता व दुष्टात्मा होता, उपकार नहीं मानता, निर्लज्ज होता ऐसा पुरुष लोक में त्याग करने के योग्य है ३९ जो पुरुष निर्दोष पुरुष के अन्तःकरण को आप सदोष हो कुपित कराता है वह अपने घर में सर्प के समान रात्रि में भी सुख से नहीं सोता ४० जो दुष्ट अपनी मजदूरी आदि के लिये दुष्टता करते हों उनको सदा देवताओं के समान प्रसन्न रखना चाहिये ४१ जो धन स्त्रियों के पास धरा है व जो धन जाति आदि से उन्मत्त चित्त पुरुषों के पास है, जो जातिभ्रष्टों के पास व जो और नीचों के पास धरा है इन सबों में सन्देहही है समय पर काम आवें व न आवें ४२ जहां स्त्रियों का ही पुरुषार्थ है व जहां जुआं खेला जाता है व जहां बालक की शिक्षा से कार्य होता है वहां के लोग अवश हो ऐसे डूबते हैं जैसे पत्थर की

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नाव पर चढ़नेवाले नदी में अवश डूबते हैं ४३ हे भारत! जो लोग अपने प्रयोजन के कामों में लगे रहते और विशेष कामों में नहीं लगते उन लोगों को हम पण्डित मानते हैं क्योंकि वे लोग विशेष प्रसङ्ग जानते हैं ४४ जिसकी प्रशंसा जुआरी लोग करें व दूत लोग करें व जिसकी प्रशंसा जिन स्त्रियों के विना ब्याही जाने पर पुत्र हुआ हो उसकी ही वृत्ति से जीती हों वे करें वह पुरुष नहीं जीता ॥ ४५ ॥

दो० परम धनुर्द्धर अरु अमित, तेज पाण्डु सुत त्यागि।
भूप सुयोधन महँ धस्यो, सब विभूति क्यहि लागि ॥ १ ।४६ ॥
तासों तुम त्यहि वेगही, भूति रहित महिपाल।
लखिहहु जिमि मदयुत बलिहि, भ्रष्ट लखे त्यहिकाल ॥२।४७॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्यष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

उन्तालीसवां अध्याय।

दो० उन्तालिसवें महँ कहब, जिमि पुनि विदुर महान।
धर्मशास्त्र सब नीतिमय, किय चितलाय बखान ॥ १ ॥

इतनी बातें सुन धृतराष्ट्रजी बोले कि, पुरुष ऐश्वर्य अनैश्वर्य के करने में असमर्थ ही है क्योंकि सूत्र में बँधी हुई कठपुतरी के समान भाग्य ने इस पुरुष को अपने वश में कर रखा है १ इससे हम को क्यों दूषित करते हो अब जो उचित हो कहिये हम कान लगाय सुनते हैं विदुरजी बोले हे भारत! हम क्या जो काल के प्रतिकूल वचन कहें तो बृहस्पति भी हों तो अज्ञता व अपमान को प्राप्त हों २ मन्त्रबल से व मूलबल से जो प्रियकरता वह प्रिय होता परन्तु वह दानमान के न होने पर अप्रिय होजाता है परन्तु हम वैसे नहीं हैं हम ने समय की बात कही है इससे हम अनादर करने के योग्य नहीं हैं ३ जो जिसका वैरी होता वह उसके विचार से साधु व पण्डित नहीं होता व प्रिय चाहे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अशुभ भी कहे तो उसकी दृष्टि में शुभही कहता है व वैरी अच्छा भी कहे तो अशुभही समझ परता है ४ हे राजन्! जब दुर्योधन पुत्र छोटाही था तभी हमने आपसे कहा था कि आप इसका परित्याग करें क्योंकि इसके छोड़ने से तुम्हारे १०० पुत्र बचेंगे व इसके न त्यागने से १०० का नाश होगा ५ वह वृद्धि बहुत न माननी चाहिये जिससे क्षय हो किन्तु वह क्षय बहुत मानना चाहिये जिससे वृद्धि हो ६ हे महाराज! जिस क्षय के होने से वृद्धि होती हो वह क्षय नहीं है किन्तु क्षय उसको मानना चाहिये जिसके पाने से बड़ी हानि हो ७ कोई २ गुण के धनी होते हैं कोई २ धन के परन्तु जो केवल धनही से धनी हों गुणहीन हों आप उनका त्यागकरें ८ धृतराष्ट्रजी बोले कि आप सब उन्नति होने के हितही वचन कहते पर क्या करें हम पुत्र को नहीं छोड़ सक्के यह जानते हैं कि जहां धर्म वहीं जय होती है ९ विदुरजी बोले चाहे अतीव गुणसम्पन्न हो पर विनययुक्त न हो व थोड़ा भी प्राणियों का नाश चाहे तो वह त्याज्य है १० व जो लोग सदा दूसरे के अपवाद ही में निरत रहते व दूसरों को दुःख ही देने में भी व परस्पर विरुद्ध कराने के लिये सदा यत्न करते ११ उनके देखने में बड़ा दोष व उनके सङ्ग बसने से महाभय व उनका धन लेने से महादोष उनको कुछ देने से महाभय होती है १२ व जो लोग आपस में भेद कराने का स्वभाव रखते व आप सदा कुछ पै कुछ सकाम रहते वे निर्लज्ज शठ महापापी कहाते हैं ये साथ बसाने में अतिनिन्दित हैं १३ व इनके सिवाय और भी बड़े २ दोषों से जो नर युक्त हों उनका परित्याग करना चाहिये क्योंकि नीच के साथ सौहार्द करने से प्रीति व सुख का नाश होता है १४ व सौहार्द में सुख कुछ भी नहीं होता क्योंकि नीच अपवाद ही के लिये यत्न करते हैं व नाशही होनेवाले कार्यों का आरम्भ करते हैं १५ व थोड़ा भी अपकार करने से मारे मोह के वह नीच शान्त नहीं होता ऐसे दुष्ट नीच क्रूर पापियों के सङ्ग से अनर्थही

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होता १६ इससे इन नीचों का स्वभाव सुन दूरही से विद्वान् को चाहिये कि इनका परित्याग करे व जो दीन, बीमार व ज्ञातिवाले की रक्षा करता है १७ वह पशु पुत्र सहित अनन्त कल्याण की बातें पाता है व जो अपना सुख चाहे उनको चाहिये कि अपनी जाति के लोगों को बढ़ावें १८ इससे हे राजन्! तुम भी अपने कुल की वृद्धि करो जो ज्ञातिवालों का सत्कार करोगे तो तुम्हारा कल्याण होगा १९ ज्ञाति के लोग गुणहीन भी हों तो वे रक्षा करने ही के योग्य होते हैं व जो गुणवान् तुम्हारी प्रसन्नता की इच्छा करते हों उनको क्या कहें २० हे राजन्! वीर पाण्डवों के ऊपर प्रसाद कीजिये उनकी जीविका के लिये कुछ ग्राम दे दीजिये २१ ऐसा करने से लोक में आपका यश होगा अब आप वृद्ध हुए हैं पुत्रों को शिक्षा देते रहें २२ हम भी तुम्हारे हितही की कहते हैं हम को अपने हित चाहनेवाला समझिये हे तात! जो अपना शुभ चाहे ज्ञाति के लोगों से विग्रह न करे किन्तु ज्ञातिवाले लोगों के ही साथ सब सुख भोगे अकेले भोगने की इच्छा न करे २३ साथ भोजन, साथही बतलाना व परस्पर प्रीति करना, जाति बिरादरी के लोगों के सङ्ग येही कार्य करने चाहिये विरोध कभी उनके सङ्ग न करना चाहिये २४ ज्ञातिही के लोग तारते हैं व ज्ञातिहीवाले डुबाते हैं उनमें अच्छे आचरणवाले तारते हैं व खराब आचरणवाले डुबाते हैं २५ हे राजेन्द्र! पाण्डवों के लिये आप अच्छे आचरणवाले हों क्योंकि जब आप पाण्डवों समेत हो जायँगे तो कोई भी शत्रु आपकी ओर ढिठाई न कर सकेगा २६ ज्ञातिवाले को धनवान् व राज्यवान् देख ज्ञाति के लोग जो भूंख प्यास के मारे कष्टित होते हैं उनका पाप उस धन राज्यवान् को पहुँचता है जैसे विषयुक्त बाण लगे हुए मृग के वध का दोष बाण चलानेवाले व्याध का होता है २७ हे नरश्रेष्ठ! जो हमारा कहा नहीं मानते तो पीछे पछितावोगे क्योंकि अपने पुत्रों को व पाण्डवों को जिसी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

किसी को मारे हुए सुनोगे पश्चात्ताप के सिवाय और कुछ न हाथ लगेगा २८ जिस कर्म के करने से एकान्त में खट्वा पर बैठ परिताप करना परे वह कर्म पहिले ही से न करे क्योंकि यह जीवन अनित्य है कितने दिनों के लिये ऐसा कर्म करे २९ शुक्राचार्य की नीति के विरुद्ध कर्म जो पुरुष करता है वह सुख नहीं पाता इससे अबतक जो हुआ सो हुआ अब जो बाकी है उस अर्थ के पाने का विचार करना चाहिये ३० पाण्डवों के विषय में प्रथम जो पाप दुर्योधनने किये हैं अब तुम कुलवृद्ध हो उन पापों को मिटाओ ३१ उसका उपाय यही है कि पाण्डवों को राज्य का अधिकार दे निष्पाप हो लोक में आनन्द से रहो व बुद्धिमान् लोग तुम्हारी बड़ाई करें ३२ जो पुरुष धीरों के वचन सुन उनमें निश्चय कर कर्म करने का आरम्भ करता उसका यश बहुत दिनों तक रहता है ३३ व जो पुरुष कुशल लोगों के कहे वचनों को अच्छी तरह नहीं जानता व जानता भी है तो करता नहीं तो वह वचन निरर्थक ही हो जाता है ३४ जो विद्वान् पाप के उदय होनेवाले कर्मों का आरम्भ ही नहीं करता वह बढ़ता रहता है व जो अपने पूर्व समय के किये हुए पापों का विचार नहीं करता व कर्म करने का प्रारम्भ कर देता है ३५ वह कुबुद्धि पुरुष अगाध नरक में गिराया जाता है व मन्त्र भेद के ६ द्वार हैं पण्डित लोग कहते हैं जिनको हम कहते हैं ३६ जो पुरुष धन की वृद्धि निरन्तर चाहे वह इनकी रक्षा किये रहै मदपान करना, निद्रा, परदूतादि को न जानता व अपने इशारे ३७ व दुष्ट अमात्यों में विश्वास करना व अकुशल दूत का भी विश्वास मानना इन मन्त्र द्वारों को जान जो सदा इनको गुप्त रखता है ३८ व अर्थ, धर्म, काम के आचरण में युक्त रहता वह अपने शत्रुओं के ऊपर जा बैठता है व विना शास्त्र जाने व विना वृद्धों की सेवा किये ३९ धर्म अर्थ कोई नहीं जान सकता चाहे बृहस्पति के समान हो जो वस्तु

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

समुद्र में गिरी वह नष्ट होगई व जो वाक्य किसी ने न सुना वह नष्ट ही होती ४० व जो समझता नहीं उससे कहने से शास्त्र नष्ट होता व विना अग्नि केवल राख ही में आहुति देना नष्ट होता इससे पण्डित को चाहिये जो कार्य करे प्रथम अपनी बुद्धि से परीक्षा लेले व बुद्धि ही से बार २ उसकी निश्चय करले कि इसका फल क्या होगा ४१ व सुन देखकर तब प्राज्ञों से मैत्री करे विनय, अकीर्त्ति का नाश करती है व पराक्रम अनर्थ का नाश करता है ४२ व क्षमा नित्य क्रोध को नाशती है व आचार अलक्षण को नाशता है ४३ भोजन वस्तु की सामग्री, खेत, घर, सेवा, भोजन व वस्त्रादि से कुल की परीक्षा लेनी चाहिये ४४ जो वस्तु अकस्मात् इच्छित मिलजाय उसका निषेध न करना चाहिये चाहे निर्मुक्तदेह विरक्त भी हो फिर काम रक्त गृहस्थ को क्या कहना ४५ राजद्वार में प्रतिष्ठा के साथ रहनेवाले पण्डित व प्रियवादी प्रियदर्शन पुरुष को व सुन्दर बोलनेवाले मित्र का पालन यत्न से करना चाहिये ४६ चाहे दुष्कुलीन हो व कुलीन हो पर मर्यादा का उल्लङ्घन न करता हो व सदा धर्म करने की इच्छा रखता हो, सरल स्वभाव रहता हो व लज्जावान् हो तो वह १०० कुलीनों से श्रेष्ठ है ४७ जिसका चित्त अपने चित्त से मिले व गूढ़ाचार मन्त्र यन्त्रादि से जिसका २ चित्त मिले व बुद्धि से बुद्धि मिले उन दोनों की मैत्री कभी नहीं मिटती ४८ व दुर्बुद्धि, किसी कार्य की उन्नति न जाननेवाले व अन्धऊ कुआं के समान तृणों से मूंदे हुए पुरुष की मैत्री बुद्धिमान् पुरुष न करे क्योंकि वह नष्ट ही होजाती है ४९ व अहङ्कारी, मूर्ख, क्रोधी व विना विचारे करनेवाला व धर्मरहित इन पुरुषों के सङ्ग मैत्री कभी न करनी चाहिये ५० व उपकार माननेवाला, धर्मात्मा, सत्यवक्ता, गम्भीर स्वभाव, दृढ़भक्ति करनेवाला, जितेन्द्रिय व मर्यादा में स्थित ऐसे मित्र का त्याग कभी न करना चाहिये ५१ इन्द्रियों को उनके विषय से रोंकना मृत्यु के समान दुःखद है एकाएकी कोई रोंक

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नहीं सकता पर जो उनको अपने विषयों में अत्यन्त लग जाने दे तो देवताओं को भी वे नष्ट कर दें फिर मनुष्यों की कौन गणना ५२ सब प्राणियों से कोमलता रखना व निन्दा न करना, क्षमा करना व धारणाशक्ति रखना व मित्रों का अपमान कभी न करना पण्डित लोग इनको आयुष बढ़ानेवाले कहते हैं ५३ जो पुरुष अन्याय से नाशितधन न्याय से फिर इकट्ठा करना चाहता है वह बुद्धिमान् सत्पुरुष का काम है ऐसा ही करना चाहिये ५४ जो पुरुष होनेवाले दुःख के मिटाने का उपाय जान तब उसमें दृढ़ निश्चय कर लेता व जो कार्य हो गये हैं उनको भी अच्छी तरह जानता उस पुरुष के धन कभी नहीं घटते ५५ कर्म मन व वचन से जिस पदार्थ का सेवन पुरुष नित्य किया करता है वही उस पुरुष को अपनी ओर खींचता है इससे धर्म ही का आचरण करना चाहिये ५६ मङ्गल वस्तु दधि, दूर्वा, धेनु आदि का छूना, शास्त्र पढ़ना, उद्यम करना, सरलता रखना व बार २ सज्जनों का दर्शन इतने पदार्थ पुरुष को ऐश्वर्य कराते हैं ५७ बार २ उद्योग करना, लक्ष्मी, लाभ व शुभ का मूल होता है, इससे पुरुष सदा प्रसन्न रहता व अनन्त सुख पाता है ५८ जो अपनी बढ़ती चाहे वह सदा सर्वत्र क्षमा करे क्योंकि इससे बढ़कर कोई ऐश्वर्य करनेवाला व हित पदार्थ संसार में नहीं है ५९ उसमें अशक्त पुरुष तो सदा क्षमा करे व समर्थ भी धर्म के कारण क्षमा करे व जो न अशक्त ही हो न समर्थ ही हो किन्तु मध्यम हो उसको भी क्षमा ही करनी चाहिये ६० व जिस सुख के सेवन करने से पुरुष के धर्म अर्थ न जाते रहते हों ऐसे काम का सेवन करना चाहिये खाने पीने में किसी वस्तु के ऊपर हठ न करे कि आज हम यही पदार्थ खायँगे चाहे धर्म जाय व रहे ६१ व दुःख से पीड़ित किसी वस्तु के अहङ्कार से प्रमत्त, नास्तिक, आलसी, अजितेन्द्रिय व उत्साहरहित पुरुषों में लक्ष्मी नहीं बसती ६२ व जो पुरुष सरलतायुक्त रहता व अपने सीधेपन ही से लज्जावान् रहता उसको असमर्थ

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

मान दुष्ट लोग ढिठाई करने लगते हैं ६३ व अत्यन्त सीधे, अतिदानी, अतिशूर, अतिव्रत करनेवाले व प्रज्ञा के अभिमानियों के समीप मारे भय के लक्ष्मी जाती ही नहीं ६४ लक्ष्मी न अतिगुणवानों के यहां रहती न अतिनिर्गुणों के यहां बसती है क्योंकि न तो यह बहुत गुणों की इच्छा करती न निर्गुणों की ६५ किन्तु उन्मत्त हो बैल की इच्छा की हुई गाय के समान अन्धी यह लक्ष्मी कहीं २ टिकती है अग्निहोत्रादि यज्ञ ही देवताओं के फल हैं व शास्त्र पढ़ने का फल शील व आचरण है ६६ व स्त्री का फल भोग करना व पुत्र होना है धन का फल देना व भोग करना है व जो पुरुष अधर्म से उपराजे हुए धन से परलोक के लिये यज्ञ दानादि करता ६७ वह पुरुष मरने पर उसका फल नहीं भोगता क्योंकि वह धन बड़े कुमार्ग से आया था ६८ महावन में व वन में कष्ट व आपत्काल में व क्रोध में व संग्राम में अस्त्र-शस्त्रों के उठने पर सत्त्ववान् पुरुषों को भय नहीं होती ६९ व उद्यम, संयम, चतुरता, अनलसता, धारणाशक्ति, स्मरण, अच्छी तरह विचारपूर्वक कार्य में आरम्भ करना ये सब ऐश्वर्य के मूल हैं ७० तपस्वियों के तपस्या ही बल है व वेदवादियों को वेद ही बल है असाधुओं को हिंसा बल है व गुणवानों को क्षमा बल है ७१ जल, मूल, फल, दुग्ध, खीर, ब्राह्मण की आज्ञा, गुरु के वचन व औषध ये ८ पदार्थ व्रत को नहीं नाश करते ७२ व जो कर्म करने से अपना को कष्ट हो व दूसरे के सङ्ग न करे यह संग्रह के अर्थ हमने धर्म बताया इससे विपरीत अपने मनमाना धर्म है वह करने के योग्य नहीं ७३ अक्रोध से क्रोध जीतना चाहिये साधु कर्म से असाधु को कृपण को दान से व सत्य से मिथ्या को जीतना चाहिये ७४ स्त्री परस्त्रीगामी, आलसी, डरपोंक, अतिक्रोधी, अपना को ही पुरुष समझनेवाला, चोर, उपकार न माननेवाला व नास्तिक जो वेदशास्त्र का प्रमाण न मानता हो इनका विश्वास कभी न करना चाहिये ७५ जो पुरुष

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अपना से बड़े लोगों के प्रणाम करता व नित्य वृद्धों की सेवा करता उसके कीर्त्ति, आयुर्बल, यश व बल ये चार पदार्थ बढ़ते हैं ७६ जो धनादि अतिक्लेश से मिलैं व जो अधर्म से मिलैं व शत्रु के सामने प्रणामादि करने से मिलैं उन सबों में कभी न मन कीजिये ७७ मूर्ख सन्तानरहित मैथुन भूंखी प्रजा व विना राजा का राज्य इतने शोच करने के योग्य हैं ७८ प्राणियों का बुढ़ापा मार्ग चलना है व पर्वतों का जल, स्त्रियों का बुढ़ापा भोग न करना व मन का बुढ़ापा दुर्वचन है ७६ वेदों का मल अनभ्यास है व ब्राह्मण का मल व्रत न करना पृथ्वी का मल बाह्लिक देश है जो कि समुद्र में जहां सिन्धु आदि ६ नदियां मिली हैं वहां है व पुरुष का मल झुँठाई है ८० व पतिव्रता स्त्री का मल बहुत चटापटी का वेष बनाय हास्य की बातें करना है व स्त्रियों का मल विदेश का रहना है सुवर्ण का मल, रूप व रूप का मल राँगा राँगा का सीसा व सीसा का मल मैल है ८१ सोने से निद्रा न जीते व काम से स्त्री को न जीते इन्धन से अग्नि को न जीते व न पीने से मदिरा को जीते क्योंकि ये इतनों से जीत नहीं जाते बरन और बढ़ते हैं ८२ जिसने दान से मित्रों को जीत लिया व संग्राम में शत्रुओं को जीता व अन्नपान से स्त्रियों को जीता उसका जीवन सफल हुआ ॥ ८३ ॥

दो० शती सहस्री हू जियत, मरत न नर बिनकाल।
यासों बहु इच्छा तजहु, सुनि धृतराष्ट्र भुआल ॥ १।८४ ॥
जो महि महँ यवधान पशु, सोन नारि सब भूप।
मिलहिं न एकहि सकललखि, लोभ न करहु अनूप ॥ २।८५॥
पुनि नृप तुमसन कहत जो, पाण्डव अरु निजपूत।
सम समझत तो राज्य सब, बाँटि देहु तो सूत ॥ ३।८६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चालीसवां अध्याय ।

दो० चालिसवें महँ कहब जिमि, विदुर कह्यहु विज्ञान ।
राजराज धृतराष्ट्र सों, सुनहु सकल दै कान ॥ १ ॥

विदुरजी फिर बोले कि, जो पुरुष सज्जनों की पूजा से पूजित अभिमान से शून्य यथाशक्ति अर्थ करता है व सज्जनों को प्राप्त होता है उसका बड़ा भारी यश होता है क्योंकि सज्जन लोग सुख यश देने के लिये सदा समर्थ होते हैं १ जो पुरुष शत्रुओं की खींचाखींची से बच अधर्मयुक्त बड़े भी अर्थ को त्यागता वह बड़े २ दुःख छोड़ सुखपूर्वक शयन करता है जैसे पुरानी खाल छोड़ सर्प सुखपूर्वक सोता है २ मिथ्या कहने से जय होना व राजा के बीच में चुगुली करना व पिता, माता, गुरु आदि बड़ों की निन्दा करना ये तीनों ब्रह्महत्या के समान हैं ३ सब प्रकार से निन्दा करना मृत्यु है व अतिवाद लक्ष्मी का नाशक है व सेवा व शीघ्र ही बड़ाई करना ये सब विद्या के शत्रु हैं ४ आलस्य, मद, मोह, चञ्चलता, सभा में बैठना, उद्धता, अभिमानता व लोभ ५ ये सात दोष विद्यार्थियों को सदा त्यागना चाहिये क्योंकि सुखार्थी को विद्या कैसे आ सक्ती है इससे विद्यार्थी को सुख नहीं है ६ सुखार्थी हो तो विद्या छोड़े व विद्यार्थी हो तो सुख छोड़े, अग्नि काष्ठों से तृप्त नहीं होता व नदियों से समुद्र नहीं तृप्त होता सब प्राणियों को एक ही सङ्ग कोई नहीं मार सक्ता न पुरुषों को स्त्री मार सक्ती हैं ७ आसाधारणा शक्ति का नाश करती है व यमराज धनराज्यादि का नाश करते, क्रोध लक्ष्मी का नाश करता, कृपणता यश का नाश करती, अपालन पशुओं का नाश करता व हे राजन् ! क्रोध कर अकेला ब्राह्मण राज्यभर का नाश करता है ८ छाग, अश्व, कांस्य, चांदी, निषादिकों की खींच, शकुनि, ब्राह्मण, वृद्ध, अवसन्नज्ञाति व कुलीन इतने लोग सदा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तुम्हारे घर में रहते हैं ६ व छाग, बैल, चन्दन, वीणा, दर्पण, मधु, घृत, विष, ताम्रपात्र, दक्षिणावर्ती शङ्ख, शालग्राम, हरिद्रा १० इतने पदार्थ गृह में रखने चाहिये यह मनुजी ने कहा है व इन सब पदार्थों के रखने का प्रयोजन देवता ब्राह्मण व अतिथियों की पूजा है ११ हे तात! सबसे पर पुण्यदायक व सबसे विशेष यह तुमसे बताते हैं कि काम, लोभ व भय से व प्राणों के निमित्त भी धर्म कभी न छोड़े १२ क्योंकि धर्म नित्य है व सुखदुःख अनित्य हैं व जीव नित्य है इसके हेतु अनित्य हैं इससे अनित्य को छोड़ नित्य में टिको सन्तोष को प्राप्त होवो क्योंकि सन्तोष के समान और कुछ लाभ नहीं है १३ हे राजन्! देखो महाबली, महानुभाव लोग, धनधान्य से पूर्ण पृथ्वी का राज्य भोग कर पर राज्य व बहुत भोगविलास के पदार्थ यहीं छोड़ यमराज के वश में जाय परे १४ देखो, बड़े दुःख से पालित पोषित पुत्र को मर जाने पर मनुष्य उठाय अपने घर से दूर ले जाते व बार बनवाय बहुत रोदन कर उसे काष्ठ के समान अग्नि में जला देते हैं १५ इस प्रकार जब प्राणी मर जाता है तो उसका धन और ही कोई भोगता है पक्षी व अग्नि उसके शरीर के धातु, चर्बी, मेदा, बसा आदि को खाते हैं वह केवल पाप व पुण्य को अपने सङ्ग ले जाता है और कुछ उसके सङ्ग नहीं जाता १६ बस उसको इस तरह श्मशान भूमि में छोड़ ज्ञाति बिरादरी के लोग सुहृद् व पुत्र सब अपने २ घर को लौट आते हैं जैसे पुष्पफलरहित वृक्षों को छोड़ पक्षी लोग जहां चाहते चले जाते हैं १७ जब अग्नि में पुरुष डाला जाता तो उसके कर्म उसके पीछे २ स्वर्ग व नरक को जाते हैं इससे पुरुष को चाहिये कि धीरे २ धर्म का सङ्ग यत्न से करता रहै १८ इस लोक से ऊपर स्वर्ग-लोक है व उससे व इससे भी नीचे पाताल में महा अन्धकार रूप अन्धतामिस्र नाम नरक है वह इन्द्रियों को मोहित कराता उसको जानो पर हे राजन्! ऐसा न करो जिसमें तुमको भी वही प्राप्त

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हो १९ यह हमारा वचन सुन जो इसको यथावत् जानना चाहोगे तो परमयश पावोगे व न यहां न परलोक में कुछ तुमको भय होगी २० हे राजन्! यह जीव नदीरूप है व पुण्य इसमें स्नान करने का घाट है, सत्य इसमें जल है, धारणाशक्ति इसके किनारे हैं, दया लहरें हैं, इसमें स्नान करने से पुण्य कर्म करनेवाला प्राणी पवित्र हो जाता है क्योंकि जीव सदा पुण्यरूप व लोभरहित होता २१ काम क्रोधरूप घड़ियालवाली व पञ्चेन्द्रिय जलवाली नदी में धारणाशक्ति को नाव बनाय जन्म मरणादि भयंकर स्थल से उतरो २२ प्रज्ञावृद्ध, धर्मवृद्ध, विद्यावृद्ध व वयोवृद्ध अपने भाई बन्धु की पूजाकर जो कार्य अकार्य पूछता है वह कभी मोह को नहीं प्राप्त होता २३ धारणाशक्ति से शिश्नेन्द्रिय व उदर की रक्षा करे व हाथों पैरों की नेत्रों से व नेत्र कान मन से, मन व वचनों की रक्षा कर्म से करे २४ नित्य यथाकाल स्नान आचमन में तत्पर, नित्य यज्ञोपवीत धारण किये, नित्य वेदाध्ययन करता हुआ, नित्य जाति-भ्रष्ट का अन्न त्यागे, सत्य बोलता, गुरु के कर्म करता हुआ ब्राह्मण ब्रह्मलोक से कभी नहीं नीचे आता २५ व चार वेद पढ़, अग्निहोत्र नित्य कर, यज्ञों से देवताओं की पूजा कर, प्रजाओं का पालन कर, गाय व ब्राह्मण के अर्थ शस्त्रधारण करने से अपना शरीर पवित्र कर, संग्राम में मृत्यु पाय क्षत्रिय स्वर्ग को जाता है २६ व वेदशास्त्र पढ़ ब्राह्मण व क्षत्रियों को समय पर धन दे तथा और भी आश्रित लोगों को धन दे, तीन अग्नियों की पूजा कर व उनका शुद्ध धूम सूंघ मरने पर दिव्य सुख स्वर्ग में वैश्य पाता है २७ व शूद्र ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यों की पूजा क्रम से करता हुआ इनके सन्तुष्ट होते ही अपने पाप भस्म कर मरने पर देह यहां छोड़ स्वर्ग के सुख भोगता है २८ इस तरह चारों वर्णों का धर्म आपसे कहा उसके कहने का हेतु हमसे सुनो अब क्षत्रिय के धर्म प्रजादि पालन रूप से युधिष्ठिरजी हीन हुए

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जाते हैं इससे उनको राज्यगद्दी पर बैठावो २९ इतना सुन धृतराष्ट्रजी बोले।

दो० यह ऐसहि जिमि कहत तुम, नित सिखवत हो तात।
जिमि सिखवत तिमि मम भवति, मति जानहु फुर बात॥ १। ३०॥
वह मति हम पाण्डवन प्रति, करत सदा दिन रात।
पर दुर्योधन पाय विप, रीत होत सुन तात॥ २। ३१॥
भाग्य उलङ्घन करि सकत, कोइ नहीं मति धीर।
यासों निश्चय भाग्य ही, पौरुष व्यर्थ शरीर॥ ३। ३२॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४०॥

इकतालीसवां अध्याय।

दो० इकतालिसवें महँ कहब, विदुर कहेउ जिमि फेरि।
सनत्सुजात मुनीशवच, सच नहिं गच पच ढेरि॥ १॥

धृतराष्ट्रजी बोले कि, हे विदुर! जो कुछ तुमने न कहा हो अभी कहने को बाकी है वह भी हम सुना चाहते हैं क्योंकि तुम जितना कहते सब विचित्र ही कहते हो १ विदुरजी बोले हे भारत! जिन पुराने सनातन सनत्सुजात मुनि ने जिनकी पांच वर्ष की अवस्था सदा बनी रहती कहा है कि मृत्यु कहीं नहीं है २ वे तुमसे गुप्त प्रकट व सब हृदय में टिकनेवाली ब्रह्मविद्या कहेंगे क्योंकि सब बुद्धिमानों में वे श्रेष्ठतम हैं ३ धृतराष्ट्रजी बोले हे विदुर! अब जो हमसे सनत्सुजात कहें वह क्या तुम नहीं जानते जो तुम्हारी प्रज्ञा में कुछ शेष हो तो तुम्हीं हमसे कहो ४ विदुरजी बोले कि हम शूद्रयोनि में उत्पन्न हुए हैं इससे अब ब्रह्मविद्या नहीं कह सकते जो कुमार सनत्सुजात की बुद्धि है हम सब जानते हैं पर क्या करें ५ जो ब्राह्मण की योनि में उत्पन्न हो वह गुप्त योग सांख्य शास्त्रादि ब्रह्मविद्या जो चाहै कहै उससे देवता लोग भी उसकी निन्दा न करें इससे तुमसे हमने यह बात कही

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

है ६ धृतराष्ट्रजी बोले कि हे विदुर ! बताइये तो भला सनातन मुनि सनत्सुजातजी का समागम हमारे इस देह के साथ यहीं बैठे २ कैसे होगा वे तो ब्रह्मलोक में प्रायः रहते हैं ७ वैशम्पायनजी जनमेजयजी से कहने लगे कि इतने में विदुरजी ने सनत्सुजात ऋषि का स्मरण किया कि विदुर का चिन्तित जान सनत्सुजातजी ने आय उसी स्थान पर दर्शन दिया ८ व विदुरजी ने वेदविधान से उनको अर्घ्यपाद्याचमनीयादि दे सुखपूर्वक बैठाय उनसे प्रश्न किया ९ कि हे भगवन् ! धृतराष्ट्र के मन में कुछ संशय है जो कि हम नहीं कह सकते आप इनसे उसका उत्तर बतावें ॥ १० ॥

दो० जो सुनिये नृपराज सब, दुःख पार है जाहिं ।
लाभ अलाभरु अप्रिय प्रिय, अन्तकजराजु आहिं ॥ १ । ११ ॥
भय अमर्ष क्षुध प्यास मद, भूति अरति आलस्य ।
काम क्रोध अरु पाप पुन, इन्हहिं न बाधैं ग्रस्य ॥ २ । १२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

बयालीसवां अध्याय ।

वैशम्पायनजी बोले, तिसके पीछे बड़े बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र ने विदुरजी के वचन सुन परम बुद्धि को भूषित करते हुए सनत्सुजातजी से पूछा १ हे सनत्सुजातजी जो आपकी वाणी विदुरजी की जबानी सुनी कि मृत्यु नहीं है तो देवता दैत्यादि सब अमृत्यु के लिये ब्रह्मचर्य करते हैं तो मृत्यु अमृत्यु दोनों पक्षों में कौन सत्य है २ सनत्सुजातजी बोले कि जिस ब्रह्मचर्य कर्म से मृत्यु नहीं होती व मृत्यु स्वरूप से है यह तुमने हमसे पूछा हम कहते हैं सुनो इस विषय में कुछ शङ्का न करो ३ मृत्यु अमृत्यु अवस्थाभेद से एक ही पुरुष के दोनों सत्य हैं मोह से मृत्यु होती यह कवियों का सम्मत है व हम प्रमाद को मृत्यु कहते हैं व अप्रमाद को अमृत्यु ४ प्रमाद ही से असुर लोग मृत्यु को प्राप्त होते हैं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व ज्ञान से फिर ब्रह्मभूत होजाते हैं कुछ मृत्यु व्याघ्र के समान किसी को पकरकर खाय नहीं जाती क्योंकि इसका रूप तो कुछ दिखाई ही नहीं देता ५ जो मृत्यु का रूप ही नहीं दिखाई देता तो उसके होने में कौन प्रमाण है इस विषय में कहते हैं कि कोई २ मूढ़ यमराज को मृत्यु कहते हैं परन्तु जिनका आत्मा ब्रह्मचर्य में लगा रहता जैसे कि योगियों का उनकी मृत्यु कभी होती ही नहीं हां यमराज को कहते हैं कि पितृलोक में बैठे हुए सबको शिक्षा देते हैं वही शुभ कर्म करनेवालों को कल्याणरूप हैं व अशुभ करनेवालों को अकल्याणरूप हैं पर यह भी भ्रान्ति सर्प को दण्ड समझना व दण्ड को सर्प समझना इसी के तुल्य है वस्तुतः कुछ भी नहीं ६ वे ही लोग यह भी कहते हैं कि यमराज ही की आज्ञा से क्रोध, अज्ञान, लोभरूप मृत्यु नरों के लिये निकलती है इसी से अहङ्कार के मारे कुमार्गों में चलने से आत्मा के योग को कोई नहीं पाता ७ व इसी से वे मनुष्य मोहित हो यमराज-रूप मृत्यु के वशीभूत हो यहां से जाय यमलोक में पहुँचते वहां से कालान्तर में फिर यहां आते फिर नरक में जाते हैं प्राणियों के मरने के पीछे उनकी इन्द्रियों के देवगण भी वहीं चले जाते इसी से मरण को मृत्यु कहते हैं प्रयोजन कि यमराज को व अज्ञान नाश को मृत्यु कहते हैं ८ फिर जब उनके कर्मों का उदय हुआ तो कर्मफलों के भोग करने के अनुराग से स्वर्गादिकों में जाते हैं इससे मृत्यु को नहीं तरते ब्रह्म के अष्टाङ्ग योग न करने के कारण प्राणी फिर भोग करने में प्रवृत्त हो जाता है ९ व जो इस पुरुष की मिथ्याभूत शब्द स्पर्शादि विषयों में नित्य प्रवृत्ति रहती है वही इन्द्रियों को महामोह कराती है इसी से मिथ्याभूत विषयों के योग से अभिहत हो यह अन्तरात्मा सब ओर से विषयों का सेवन करने लगता है १० इससे शब्दादि विषयों का स्मरण प्रथम लोगों का नाश करता उसके पीछे काम फिर क्रोध परन्तु ये सब विना चित्तवृत्ति जीते हुए अज्ञानियों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को ही मृत्यु को प्राप्त कराते हैं व चित्तवृत्ति को जीते हुए धीर लोग तो अपने धैर्य से मृत्यु को उतर जाते हैं ११ इससे जो मृत्यु के पार जाया चाहता हो वह पुरुष अपने सामने आये हुए अभिलाषों का नाश करै जो अभिलाष भी हो तो भी उसका अनादर कर भुला दे इस तरह जो विद्वान् अभिलाषों का नाश करता है उसको अज्ञानरूप मृत्यु यमरूप मृत्यु के समान नहीं खाती निष्काम पुरुष के समीप मृत्यु नहीं आती १२ पुरुष काम के अनुसार चलता है इससे काम ही के पीछे उसका विनाश भी होता है इससे कर्मों को दूर कर जो कुछ दुःखरूप अन्धकार है उसको पुरुष नाशता है १३ यह काम प्राणियों को अज्ञानरूप नरक दिखाई देता है इस काम स्त्री सुखादि में पुरुष गढ़ायुक्त भूमि पर दौरते हुए पुरुषों के समान दौरते हुए इधर उधर ठोकर खाते हैं १४ जो पुरुष काम से निरादरित चित्त नहीं है उसको तृणमय व्याघ्र के समान मृत्यु क्या कर सकेगी कुछ भी न कर सकेगी इससे हे राजन्! इस काम के जीवनरूप अज्ञान को नाश करता हुआ पुरुष स्त्र्यादिकों के सुख को कुछ भी न मानता हुआ उसका स्मरण न करै १५ क्रोध, मोह, लोभयुक्त जो तुम्हारा जीव इस तुम्हारे शरीर के भीतर है वही तुम्हारी मृत्यु है इस प्रकार मृत्यु को उत्पन्न जान ज्ञान में टिका पुरुष मृत्यु से नहीं डरता क्योंकि जैसे मृत्यु के विषय में प्राप्त होने से मनुष्य मरता है वैसे ही ज्ञानी पुरुष के विषय में आय मृत्यु मर जाती है १६ इतना सुन धृतराष्ट्रजी बोले कि, यज्ञ करने से द्विजातियों को पुण्यतम सनातन उत्तम सत्यलोकादि मिलते हैं यह वेदों में वेदवादियों ने कहा है व उन्हीं लोकों को वेद मोक्ष प्रापक कहते हैं फिर विद्वान् यज्ञादि कर्म क्यों न करे जब यज्ञ ही से मोक्ष मिलता है तो ज्ञान से क्या है १७ यह सुन सनत्सुजातजी फिर बोले कि जैसा तुम कहते हो उस मार्ग से अज्ञानी पुरुष मोक्ष को प्राप्त होता है व वेद भी उस मार्ग के द्वारा मोक्ष प्राप्ति

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कहते हैं परन्तु जीव जब कुछ चेष्टा नहीं करता केवल ज्ञान ही समझता तभी पर निर्गुण आत्मा को प्राप्त होता है व निष्काम पुरुष सुषुम्णा नाड़ी के मार्गों को दूर कर ब्रह्मलोक हो परमेश्वर में लीन होता है १८ यह सुन धृतराष्ट्रजी बोले कि उस अज पुराण पुरुष को कौन संयोग कराता है जिसके संयोग से वह दुःखादि का भागी होता है व जो वही इस सब विश्व को क्रम से उत्पन्न करता है तो उसका इसके करने से कौन प्रयोजन है व उसको इसमें सुख क्या है हे विद्वन्! यह सब यथावत् हमसे कहो १९ सनत्सुजातजी बोले कि जीव व परमात्मा के भेद करने में बड़ा भारी दोष है क्योंकि इनका अनादि से योग है इससे ये नित्य ही होते हैं जीव व परमात्मा के योग में कुछ आधिक्य नहीं हो जाती क्योंकि पुरुष अनादि योग ही से होते हैं २० जो यह भगवान् है वह नित्य है पर माया के योग से आत्मरूप इस विश्व को उत्पन्न करता है व उसी तरह की वह अपनी शक्ति मानता है क्योंकि शक्ति व शक्तिमान् में वेद भेद नहीं बताते बस परमेश्वर अपनी शक्ति से विश्व करता है इससे विश्व भी परमेश्वर ही है २१ धृतराष्ट्रजी बोले कि, इस जगत् में कोई कोई धर्म नहीं करते व कोई कोई अधर्म ही करते तो बताइये कि धर्म को पाप नष्ट कर डालता है व धर्म पाप को नाशता है २२ सनत्सुजातजी बोले कि पाप व धर्म दोनों भोग करने होते हैं इससे दोनों मोक्ष साधन के उपयोगी हैं अर्थात् संन्यास व कर्म दोनों मोक्ष के उपयोगी हैं २३ इससे मोक्ष की स्थिति में दोनों नित्य हैं व ज्ञान से विद्वान् संन्यास से सिद्ध परमेश्वर को प्राप्त होता है व कर्म करने से पुण्य को प्राप्त होता है परन्तु किसी किसी कर्म से पाप को भी प्राप्त होता इससे ज्ञान ही श्रेष्ठ है २४ पुण्य पाप दोनों कर्म सफल हैं पुण्य से स्वर्ग प्राप्ति फल होता व पाप से नरक प्राप्ति फल होता है परन्तु स्थिर दोनों हैं कर्म करने से धर्म भी मिटता है व पाप भी इससे विद्वान् लोग धर्म से पाप का नाश करते हैं व मूढ़

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लोग कर्म के फल में स्वर्ग पश्वादि सुख लेते हैं इससे पाप से धर्म बलवान् होता यह बात सिद्ध हुई २५ धृतराष्ट्रजी बोले कि अपने अपने धर्म के अनुसार पुण्य करते हुए ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों को जो सनातन लोक मिलते हैं उनका क्रम आप कहें व उनसे भिन्न मोक्ष सुख भी आप बतावें यह हम जानना चाहते हैं २६ सनत्सुजातजी बोले कि जिन ब्राह्मणों को यम नियमादि रूप व्रत करने में यह मान है कि हम औरों से अधिक करेंगे जैसे कि मल्लादि बलवानों को परस्पर विस्पर्द्धा होती है वे ब्राह्मण लोग इस शरीर से मृतक हो ब्रह्मलोक को जाते फिर वहां ब्रह्मा के सङ्ग मुक्त होजाते हैं २७ व जिन ब्राह्मणों को व्रत में नहीं यज्ञादि धर्म करने में विस्पर्द्धा है वे उस यज्ञादि के द्वारा यहां से स्वर्गलोक को जाते सत्यलोक को नहीं जाते २८ परन्तु जो लोग धर्म न करने में अपराध समझ अपना यज्ञादि धर्म ही किया करते वे वेदवादी लोग यही कहते कि यज्ञादि धर्म ही करना चाहिये वे लोग यज्ञ से व्यतिरिक्त व्रतादि करनेवाले ब्राह्मणों को बड़े नहीं मानते २९ अब योनियों का धर्म कहते हैं योगी को चाहिये कि जिस ब्राह्मण के यहां वर्षा समय के तृण के समान अन्न जल अधिक हो उसी ब्राह्मण के यहां भोजनकर जीवनवृत्ति करें दीन ब्राह्मणों को न सतावें व क्षुधा से अपनी आत्मा को न पीड़ित करें ३० जिस देश में विना अपना प्रभाव बताये कोई अमङ्गल भय गाली प्रदानादि करता हो वहां भी जो अपना उत्कर्ष न कहकर भोजनादि किसी तरह कर लेता वह श्रेष्ठतम योगी है व जो इसके विपरीत करता वह श्रेष्ठ नहीं है ३१ व जो अपनी प्रशंसा न करनेवाले के ऊपर कोप न करै व निन्दादि रहित श्रद्धापूर्वक अन्नदाता ही का अन्न भोजन करे वही उत्तम योगी है ३२ व जो संन्यासी अपने पाण्डित्यादि वीर्य के बल से जीविका कर व उत्कर्ष दिखाय कहीं भोजन करता वह कुत्ते के समान वान्ताशी है जैसे कुत्ता वान्तकर डारता फिर उसी को खाता है ३३ व जो ब्राह्मण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अपनी ज्ञाति के लोगों के बीच में बसा हुआ भी यह चाहता है कि मेरा ब्रह्मचर्यादि कोई ज्ञातिवाला न जानने पावे गुप्त ही किया करूं पण्डित लोग उसको उत्तम ब्राह्मण कहते हैं ३४ इस प्रकार की ब्रह्मचर्या विना किये अन्तररहित, चिह्नहीन, अचल, शुद्ध व द्वैतवर्जित आत्मा को कौन ब्राह्मण पाने के योग्य है इससे ऐसा करने से क्षत्रिय के यहां भी ब्रह्म का वास होता है ३५ व जो कोई आत्मा को अपना से पृथक् मानता है उस पापी आत्मघाती चोर ने कौन पाप नहीं किया किन्तु सब पाप कर चुका ३६ जो पुरुष श्रमहीन रहता कुछ अपने पास नहीं रखता वह शिष्टों में श्रेष्ठ व उपद्रवहीन गिना जाता है व शिष्ट भी हो तो अपना आचरण शिष्टों का सा न रक्खे वही ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मण कहाता है ३७ जो ब्राह्मण मनुष्यों के धन पशु स्त्री पुत्रादि में तो दरिद्र रहते व देवताओं के धन पारलौकिक धर्मादि करने में धनाढ्य रहते व ईश्वर की उपासना में भी सम्पन्न रहते वे किसी के ढिठाई करने व कँपवाने के मान के नहीं होते उनको परमेश्वर का देह ही समझना चाहिये ३८ जो पुरुष यज्ञ करनेवालों को इष्टफल देनेवाले देवताओं को यज्ञादि करने से अच्छी तरह जानै वह भी ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मण के समान नहीं है क्योंकि याज्ञिक को यज्ञफल मिलता वह अनित्य है व ब्रह्मज्ञानी अपने आप परमेश्वरप्राप्ति का यत्न कर लेता है ३९ जिस निरारम्भ ब्राह्मण को देवता लोग मानते हैं वह ब्रह्मात्मवेत्ता ब्राह्मण मानित होता है परन्तु अपना को मान्य नहीं मानता व जो उसका अपमान करता उसको भी पीड़ित नहीं करता ४० जिसका मान हो उसको चाहिये कि ऐसा मानै कि लोक का स्वभाव ही मानने का है इससे सब हमको मानते हैं कुछ हममें मान्य होने की योग्यता नहीं है ४१ अधर्म निपुण, माया करने में चतुर मूढ़ लोग जोकि मान्य लोगों के अपमान करनेवाले हैं वे मान्य लोगों का मान नहीं करते मान्यों को चाहिये कि पशुओं के समान उन निर्विवेकियों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

से उपेक्षा रक्खें पर उनको दण्ड कुछ भी न दें ४२ मान व मौन एक स्थान पर नहीं रहते क्योंकि मानार्थियों को परलोक दुर्लभ है व परलोकार्थियों को मान दुर्लभ है ॥ ४३ ॥

दो० यद्यपि श्री सुखदायिनी, जो विभूति की मूल ।
तदपि अहै परिपन्थिनी, योगिवृन्द कहँ शूल ॥ १ ॥
जो वैदिक श्री विप्र की, यजुरादिक निष्पन्न ।
प्रज्ञा हीनहिं दुर्लभा, वह श्री सुनहु प्रसन्न ॥ २ । ४४ ॥
द्वार बहुत दुर्द्धर सकल, ब्राह्मी श्री के भूप ।
पण्डित जन बहु भाँति सों, कहत स्वमति अनुरूप ॥ ३ ॥
सत्य सरलता शौच दम, विद्या लज्जा आदि ।
सकल मोहनाशक कहे, जहां नहीं मदनादि ॥ ४ । ४५ ॥
का०न०दो० मान आरजव सत्य दम, ब्राह्मी श्री शुभदाय ।
श्रीविद्या अरु शौच ये, मोहहिं देत दुराय ॥ १ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सनत्सुजातीये द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४२ ॥

तेंतालीसवां अध्याय ।

दो० तेंतालिसवें महँ कहब, जिमि मौनादिक भेद ।
सनत्सुजात मुनीश कह, मन्थन करि सब वेद ॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी बोले कि, हे विद्वन्! मुनि के धर्म को मौन कहते हैं तो वह मौन किस प्रयोजन के लिये है व श्रवण मनन से बाहर जो मौन शब्द है वह किस लिये है व मौनभाव किसको कहते हैं मौन से विद्वान् मौन को प्राप्त होता है व मौन कैसे लोग रहते हैं ये ५ प्रश्न मौन शब्द के हुए सो कहिये १ सनत्सुजातजी बोले कि, जिससे मन सहित वेद उस परमेश्वर में प्रवेश नहीं कर सकते इससे उसको मौन कहते व जहां वचन मन दोनों न पहुँचे वहां मौन का प्रयोजन है वह दो प्रकार का है एक बाहर की इन्द्रियों के रोकने से मौन, दूसरा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

मन के रोकने से मौन इस तरह चार मौन का उत्तर हुआ व जिससे ॐकार उत्पन्न हुआ जिससे सब वेद बने इससे पांचवां मौन शब्द हुआ २ धृतराष्ट्रजी बोले कि यजुर्वेद व सामवेद को जो जानता है वह पाप करने से पाप में लिप्त होता वा नहीं लिप्त होता ३ सनत्सुजातजी बोले कि अविज्ञानी को न सामवेद के मन्त्र कर्म के पाप से रक्षा करते न यजुर्वेद के मन्त्र यह हम तुमसे मिथ्या नहीं कहते ४ मायायुक्त मायावी पुरुष को दुःख से वेद नहीं तारते, किन्तु जैसे पङ्ख जम आने पर पक्षी अपनी झोंझ छोड़ देते ऐसे ही अन्तकाल में वेद उस अविज्ञानी पुरुष को छोड़ देते हैं ५ धृतराष्ट्रजी यह सुन फिर बोले, हे विचक्षण! जो विना धर्मवाले को वेद रक्षा नहीं कर सकते तो ऋक्, यजुः, साम से पवित्र पुरुष ब्रह्मलोक में पूजित होता यह ब्राह्मणों का सनातन अनर्थक वचन कैसे है ६ सनत्सुजातजी बोले कि उस परमेश्वर के श्वास से वेद उत्पन्न हुए हैं व उसी के नाम रूपादि से यह विश्व उत्पन्न है इससे वेद व विश्व दोनों परमेश्वर ही के रूप हैं ७ उसी परमेश्वर के अर्थ तप करना कहा है व यज्ञ करना इन दोनों के करने से विद्वान् पुण्य को प्राप्त होता है फिर पुण्य से पाप का नाश कर पीछे ज्ञान से प्रकाशित उसका जीव हो जाता है ८ व फिर ज्ञान से विद्वान् आत्मा को प्राप्त होता व इसके विपरीत अनात्मज्ञानी इन्द्रियों को सुख चाहता है इससे इस लोक व परलोक दोनों में इन्द्रिय विषयों के फल भोगता व उलट पलट फिर स्वर्ग नरकादि में परता ९ तपस्या इस लोक में की जाती है व फल अन्य लोक में भोगने को मिलता है यह अविद्वानों का विषय है पर जो विद्वान् लोग तपस्या करते हैं उनको इसी लोक में फल मिल जाते हैं १० धृतराष्ट्रजी बोले कि, हे सनत्सुजात! वही शुद्ध तप विद्वान् के लिये समृद्ध व मूर्ख के लिये असमृद्ध दो प्रकार का कैसे है आप ऐसी रीति से बताइये जिसमें हम दोनों प्रकार का तप जानें ११ सनत्सुजातजी बोले कि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जो तपस्या निष्काम की जाती उससे मुक्ति मिलती उसे समृद्ध कहते व जो सकाम की जाती उससे स्वर्गादि सुख मिलते उसे असमृद्ध कहते हैं १२ हे क्षत्रिय! जो हमसे पूछते हो यह सब भोग्य पदार्थ तपोमूल हैं इसी तप ही से विद्वान् लोग मुक्ति पाते हैं १३ धृतराष्ट्रजी बोले हे सनत्सुजातजी ! निष्कलमष तपस्या तो हमने सुनी अब तपस्या का कल्मष बतावो क्या है जिससे हम सनातन ब्रह्म को जानें १४ सनत्सुजातजी बोले, तपस्या में क्रोधादिक बारह व क्रूरता ये तेरह दोष होते हैं व धर्मादिक बारह गुण जो कि तुम्हारे पूर्वज मन्वादिकों के शास्त्रों में व ब्राह्मणों के शास्त्रों में लिखे हैं व सब कहीं प्रसिद्ध हैं १५ क्रोध, काम, लोभ, मोह, अतृप्ति, अकृपा, असूया, मान, शोक, स्पृहा, ईर्ष्या, निन्दा, ये १२ मनुष्यों के दोष हैं इससे सब त्यागने के योग्य हैं १६ इनमें से एक की उपासना करने से दूसरा छिद्र देखे रहता ऐसे ही क्रम से सब आजाते हैं ये सब ऐसे छिद्र देखते जैसे मृगों के छिद्र व्याधा देखता है १७। १ विकत्थन जो पराये गुण की निन्दा व अपने गुण की प्रशंसा करे २ स्पृहालु, अति यत्नपूर्वक परस्त्री भोगादि की इच्छा करनेवाला ३ मनस्वी, अहङ्कार की अधिकता से दूसरे का अपमान करनेवाला ४ बिभ्रत्कोप, विना कारण भी सदा कोप करनेवाला ५ चपल, मित्रभावादि में अस्थिर ६ अरक्षण, शक्ति होने पर भी अपनी स्त्र्यादि का पालन न करनेवाला, इतने ६ पाप पापी लोग किया करते हैं व सज्जन लोग बड़े क्लेश में भी परने पर इनको नहीं करते १। १८ सम्भोग, साधिविद्धिषम, स्त्री सङ्गम सम्मति में दुष्ट व्यवस्थावाला २ अतिमानी ३ दत्तानुतापी दान देकर पछितानेवाला ४ कृपण प्राणान्त होने पर भी धन न खर्चनेवाला ५ बलीयान् अतिशय भेंट लेनेवाला ६ वर्गप्रशंसी, दूसरे के निरादर की बड़ाई करनेवाला ७ वनितासुद्वेष्टा व अपनी ब्याही स्त्री से अप्रीति करनेवाला ये

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सात व पूर्वश्लोक के ६ सब १३ नृशंस दोष हुए इन सबों को धर्मात्मा नहीं करते १९। १ धर्म २ सत्य ३ दम ४ तप ५ अमात्सर्य ६ लज्जा ७ तितिक्षा ८ अनसूया ९ यज्ञ १० दान ११ धृति १२ श्रुत ब्राह्मण के ये १२ व्रत हैं २० जो इन द्वादश गुणों को ग्रहण करे वह पृथ्वी भर का राज्य कर सके व सबको शिक्षा दे सके इनमें के तीन वा दो वा एक भी जिसमें हो वह धनवान् अवश्य हो २१ दम इन्द्रियों का जीतना, त्याग सब कर्म ईश्वर में अर्पण करना अप्रमाद तत्त्वों का अनुसन्धान करना, इन तीनों में मुक्ति टिकी रहती है इन सबों का फल सत्य है इससे सत्य, दम, त्याग, अमाद ये सब करने चाहिये २२। १८ दोष त्यागने से १८ प्रकार का दम सिद्ध होता है १ कृताकृत में प्रतिकूलता वैदिकादि कर्म में आलस्यादि करना व अकृत उपवासादि में इन्द्रियों की चटपटी २ अनृत ३ अभ्यसूया ४ काम स्त्र्यादिकों का अभिलाष ५ अर्थ धन बटोरने में अतियत्न ६ स्पृहा धन का अभिलाष २३। ७ क्रोध ८ शोक ९ तृष्णा १० लोभ ११ पैशुन्य चुगुली १२ मत्सर १३ हिंसा १४ परिताप १५ अरति अच्छे कर्म में प्रीति न करना २४। १६ अपस्मार करने योग्य का भुलाना १७ अतिवाद १८ सम्भावना महत्त्व बुद्धि इन १८ दोषों से जो विमुक्त हो उसको पण्डित लोग दान्त अर्थात् जितेन्द्रिय कहते हैं २५ जिसके दमादिक विपरीत हैं उसको १८ मदादि होजाते हैं व ६ प्रकार का त्याग ये सब २४ प्रकार के मददोष कहाते हैं २६ व ६ प्रकार का त्याग कल्याणदायक है उनमें तीसरा काम त्याग बहुत दुष्कर है इस काम त्याग से मनुष्य दुःख से उतर जाता है व जो उसको जीत लेता उसको सर्वदुःखनिवृत्तिरूप मोक्ष होजाता है २७। ६ प्रकार का त्याग कल्याणदायक है उनमें प्रथम त्याग वह है जो लक्ष्मी को देख हर्षित न हो व नित्य वैराग्य के योग्य से कुआं खुदाना तड़ागादि खुदाना बाटिकादि लगाना इसे इष्टापूर्त्त कहते यह दूसरा त्याग है २८ व काम त्याग तीसरा त्याग है यद्यपि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

यह अवाच्य पद है तथापि यह दोष नहीं है तीसरा गुण है २६ यह काम त्याग स्त्रीसुखादि द्रव्यों के त्याग से होता है व इच्छा से स्त्र्यादि द्रव्यों के सेवन से नहीं होता किन्तु इन द्रव्यों के सेवन से अधिक बढ़ता है ३० कर्मों के न सिद्ध होने पर दुःख न करे, न कुछ ग्लानि करे किन्तु सबकी कीर्त्त्यादि गुणों से संयुक्त हो द्रव्यवान् बना रहै ३१ व कीर्त्ति धनादि नाशरूप अप्रिय होने पर भी व्यथित न हो यह चौथा त्याग है व इष्ट पुत्रों व स्त्र्यादि पदार्थों को कभी न माँगे यह पांचवाँ त्याग है ३२ व कोई योग्य पुरुष कुछ माँगे तो उसे धनादि दे दे तो बड़ा शुभ हो यह छठां त्याग है, इन सब त्यागों के करने से प्रमाद न करे तो जानों आठगुणों को प्राप्त हो जो आगे कहेंगे ३३ सत्य यथार्थ बोलना १ ध्यान मूर्त्त्यादि का स्मरण करना २ समाधान जाने हुए व अच्छी तरह जाने हुए पदार्थों का समझाना ३ चोद्य तर्क करना ४ वैराग्य सब जगत् से विराग करना ५ अस्तेय चोरी न करना ६ ब्रह्मचर्य स्त्री सङ्ग न करना ७ असंग्रह कुछ अपने पास न रखना ८। ३४ इस प्रकार मद के जो दोष कहे उनका परित्याग करे व त्याग अप्रमाद को भी त्याग करे वह भी आठ गुण सहित हैं ३५ आठ दोष प्रमाद के हैं उनको भी त्यागे वे प्रमाद पांच तो पांच इन्द्रियों से उत्पन्न होते छठा मन से ३६ व पुत्रादि के नष्ट होजाने पर का शोक सातवां प्रमाद है व पुत्रादि की कामना करने पर भी उसकी प्राप्ति न होना यह आठवां प्रमाद है इन आठों से छूटे तो सुखी हो ३७ हे राजेन्द्र ! सत्यात्मा होवो क्योंकि सत्य ही पर सब लोक अपने २ स्थानों पर स्थित हैं इन सबों में सत्य मुख्य है क्योंकि सत्य में मुक्ति टिकी रहती है ३८ दोषों को छोड़ तपव्रत करे यही ब्रह्मा का बनाया सत्य व्रत है इससे सज्जनों को यही करना चाहिये ३९ पूर्वकथित सब दोषों से छूटना व सब गुणों से संयुक्त होना यही समृद्ध अत्यर्थ युक्त केवल तप कहाता है ४० हे राजन् ! जो तुमने हमसे पूछा वह हमने संक्षेप से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बताया यह पापहारी, पुण्यकारी व जन्म, मृत्यु, जरापहारी है ४१ इतना सुन धृतराष्ट्रजी पूछने लगे कि इतिहास पुराणादिकों को आख्यान कहते उन सहित वेद को बड़ा भारी लोग कहते हैं व कोई कोई चार वेद कहते कोई कोई तीन ४२ कोई दो वेद कोई एक वेद कोई ब्राह्मणों सहित बहुत वेद कहते हैं उनमें हम कितना जानें वह बताइये ४३ सनत्सुजातजी बोले, कि ब्रह्म एक ही है वह सत्य है व उसी के जानने के लिये वेद हैं उसके अज्ञान से बहुत वेद बना डारे गये इसी से बहुत उपासना करने के योग्य देवादि भी बनाये गये पर वेद में उन सबों के ऊपर ब्रह्मत्व नहीं कहा गया जो सत्य है वही ब्रह्म है जैसी उपासना करते हैं वह ब्रह्म नहीं है उस सत्य में भी ब्रह्म का लाभ बड़ा दुर्घट है ४४ इस प्रकार वेद को न जान हम प्राज्ञ हैं यह लोग जानते हैं व दान, अध्ययन, यज्ञ लोभ से करने लगते हैं ४५ जब सत्य से छूटे तो उनको सङ्कल्प होता है उससे यज्ञ करने की इच्छा होती यह सब सत्यब्रह्म वेद्य वेद के विना जानने ही से यज्ञादि करने की इच्छा होती है ४६ कोई देवता ध्यानादि रूप यज्ञ मन से करते व कोई ब्रह्मयज्ञ जपादि रूपयज्ञ वचन से करते कोई ज्योतिष्टोमादि यज्ञ कर्म से करते इनमें कर्मयज्ञ से वचनयज्ञ श्रेष्ठ है व वचनयज्ञ से मनोयज्ञ व सङ्कल्प सिद्ध पुरुष सङ्कल्पनीय पदार्थ ब्रह्मलोकादिकों को प्राप्त होता है ४७ जब आत्मज्ञान का सङ्कल्प न सिद्ध हो तो मौनादि व्रत धारण करे परन्तु ज्ञानियों को तो सत्यव्रत ही करना सब व्रतों से श्रेष्ठ है ४८ एक ज्ञान प्रत्यक्ष होता जैसे शोक मोह निवृत्तिरूप व एक ज्ञान परोक्ष होता जैसे कायिक, वाचिक, मानसिक तपस्या इसका फल स्वर्गादि में प्राप्त होता है, बहुत पढ़नेवाले व बहुत पढ़ानेवाले को द्विज समझो ४९ इससे हे क्षत्रिय! जो पढ़कर बहुत बकता ही हो उसे ब्राह्मण न मानो किन्तु जो सत्यज्ञान परमात्मा के स्मरण से बाहर न हो उसे तुम ब्राह्मण जानो ५० पूर्वकाल में जो अथर्वा मुनि ने अथर्व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उपनिषद् कहा है जिसमें लिखा है कि यज्ञ पाप से रक्षा नहीं कर सकते क्योंकि ये पाप से तारने के लिये अदृढ़ नौका हैं इससे उपनिषदों के पढ़नेवाले वेदवित् नहीं कहाते किन्तु जो वेद पढ़े भी न हों पर वेदों के जानने के योग्य परमेश्वर के तत्त्व को जानते हों वे वेदवित् हैं ५१ उस सत्यब्रह्म में वेद स्वतन्त्रता से प्राप्त होते हैं व वेदवादी केवल वेद पढ़ने ही से नहीं होता किन्तु जो वेद पढ़कर वेद से जानने के योग्य सत्य ब्रह्म को जानते हैं वे ब्रह्मवादी हैं ५२ वेदों के रहस्य को कोई नहीं जानता कोई कोई चित्त की शुद्धि से इन वेदों के रहस्य को जानता है परन्तु जो केवल वेदरहस्य ही जानता है व वेदवेद्य सत्यब्रह्म को नहीं जानता वह वेद भी नहीं जानता किन्तु जो सत्यब्रह्म में टिका है वही वेदवेद्य परमेश्वर को जानता वही वेदों को भी जानता है ५३ अहङ्कारादि अचेतनों के मध्य में कोई जानने के योग्य नहीं है इससे जानने के योग्य चित्त से वेद के जानने योग्य आत्मा को नहीं जानते व जानने के योग्य अनात्मा को भी नहीं जानते, इससे यह सिद्ध हुआ कि आत्मा व अनात्मा दोनों जड़ के जानने के योग्य नहीं हैं व जो आत्मा को जानता है वह अनात्मा को भी जानता है व जो अनात्मा को ही जानता वह सत्यब्रह्म को नहीं जान पाता ५४ व जो चिदात्मा परमेश्वर वेदों को प्राप्त होता है वह वेद्य अनात्मा को भी जानता है पर उसको न वेद जानते हैं न वेद के जाननेवाले यद्यपि वह ऐसा है तथापि वेद के जाननेवाले वेद ही के प्रमाण से उस चिदात्मा को जानते हैं ५५ जैसे चन्द्रमा के किरणों से प्रकाशित वृक्ष की शाखा लोग जान लेते इसी तरह वेद भी परमात्मा के अर्थ को स्वतः प्रकाशित होने के कारण जान लेते हैं कुछ अपनी सामर्थ्य से नहीं जानते जैसे चन्द्र के प्रकाश विना रात्रि में वृक्ष की शाखा कोई नहीं जान सकता ५६ हम उसको ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मण जानते हैं जो सब प्रकार से शास्त्रों व वेदों की व्याख्या

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करे व शास्त्र के अर्थों को युक्ति से अनुसन्धान करे व जिसको शास्त्र में संशय न हो व दूसरों के संशय मिटा दे ऐसे ही ब्रह्मज्ञानी को गुरु बनाना चाहिये ५७ बस ऐसे परमेश्वर को न कहीं पूर्व दिशा में ढूंढ़ना चाहिये न दक्षिण में न नये स्थानों में न तिरछे स्थलों में न सब कोणों में ५८ किन्तु उसको आत्मज्ञानियों में ढूंढ़ना चाहिये वेद में ढूंढ़ने की आवश्यकता नहीं उस प्रभु को तपस्या देखती है इससे तप करना चाहिये ५६ व मौन हो उसकी उपासना करे मन से भी कोई और काय व्यापार न करे इस प्रकार तुम भी अन्तरात्मा में प्रसिद्ध उस ब्रह्म को प्राप्त होवो ६० केवल मौन रहने से मुनि नहीं होता व न घर छोड़ संन्यास ले वन में बसने से किन्तु जो परमेश्वर के लक्षण जगदुत्पत्त्यादि आत्मज्ञान जानता हो वह सबों में श्रेष्ठ मुनि है ६१ व वह ज्ञानी सब अर्थों के प्रकट करने से वैयाकरण कहाता है व उसी से वह आत्मज्ञानी व्याकरणरूप परमेश्वर के विपरीत कुछ नहीं करता ६२ जो ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मण सब लोकों को प्रत्यक्ष देखता है वह सर्वदर्शी होता है व जो सत्यरूप ब्रह्म सच्चिदानन्द में स्थित होता वह सर्वज्ञ कहाता ॥ ६३ ॥

दो० इमि धर्मादिक महँ टिके, देखत ब्रह्महि भूप।
यह क्रम से लखि वेद महँ, कहा स्वमति अनुरूप ॥ १ । ६४ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सनत्सुजातीये त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥

चवालीसवां अध्याय।

दो० चौवालिसवें महँ कहब, जिमि सब लक्षण योग।
सनत्सुजात मुनीश कहँ, सुनत मिटत भव रोग ॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी बोले कि, हे सनत्सुजात, कुमार! जो उत्कृष्ट ब्रह्मप्रापिका कामहीन विश्वरूपिणी वाणी आप जानते हैं वह हमसे कहिये १ सनत्सुजातजी बोले कि यह ब्रह्म शीघ्र नहीं जान परता जिसको

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पूछते हो व अपने मन में हर्षित होते हो कि हम भी ब्रह्मविद्या के अधिकारी हैं वह विद्या सब इन्द्रिय मन में व मन बुद्धि में रोंकने से व ब्रह्मचर्य रह गुरुकुल में रहने से मिलती है २ धृतराष्ट्रजी बोले कि जिस सनातनी अत्यन्त विद्या को ब्रह्मचर्य से प्राप्त होने के योग्य आप बताते हैं व वह कार्य काल में यही आत्मा में ही बसती है अब ब्राह्मणों के योग्य वह मुक्तिरूप विद्या कैसे प्राप्त हो बताइये ३ सनत्सुजातजी बोले कि ब्रह्मचर्य से सिद्ध पुरानी व गुरु वृद्धों में नित्य रहनेवाली ब्रह्मविद्या कि जिसको प्राप्त हो लोग मर्त्यलोक छोड़ देते हैं वह ब्रह्मविद्या हम कहेंगे ४ धृतराष्ट्रजी बोले कि जो ब्रह्मविद्या ब्रह्मचर्य ही से जानने के योग्य है प्रथम यह कहिये कि वह ब्रह्मचर्य ही कैसे हो ५ सनत्सुजातजी बोले जो लोग आचार्य के स्थान में जाय निष्कपट ब्रह्मचर्य करते हैं वे लोग यहीं वेदशास्त्र बनानेवाले होजाते हैं वे देह छोड़ ब्रह्म में लीन हो जाते हैं फिर उनका जनन मरणादि नहीं होता ६ इस लोक में जो लोग ब्रह्म के साथ वास की इच्छा कर सत्त्वगुण में ठिक कामों को जीतते हैं वे देह से आत्मा को पृथक् करते हैं जैसे मूंज से सिरकी अलग की जाती है ७ हे भारत! पिता माता इस शरीर को उत्पन्न करते हैं व आचार्य उसको ब्रह्मविद्या पढ़ाता है तो जानो उसका दूसरा जन्म होता इस तरह जो गुरु के यहां ब्रह्मविद्या सीखता वह जरामरण रहित हो जाता है ८ जो गुरु ब्राह्मणादि वर्णों को मोक्ष देता हुआ उनके अन्तःकरण में सत्यब्रह्म सच्चिदानन्द को स्थापित कराता उसको पिता माता मानना चाहिये व उसका उपकार मान कभी उससे द्रोह न करना चाहिये ९ शिष्य नित्य प्रथम गुरु के प्रणामकर पवित्र व सावधान चित्त हो वेद पढ़ने की इच्छा करे मान कभी न करे न कभी रोष करे ब्रह्मचर्य का यह प्रथम पाद है १० क्योंकि जो पुरुष पवित्र हो शिष्यवृत्ति के क्रम से विद्या पढ़ता है वही ब्रह्मचर्य व्रत का प्रथम पाद कहाता है ११ व मनसा, वाचा,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कर्मणा व प्राणों से धनों से गुरु का प्रिय करता रहै यह ब्रह्मचर्य व्रत का दूसरा पाद कहाता है १२ व जिससे कि गुरु के समान ही गुरुपत्नी होती है इससे जैसे गुरु की सेवा करता व मानता वैसे ही गुरु की स्त्री की भी सेवा करे व माने व गुरुपुत्र को भी वैसे ही माने यह भी दूसरा ही पाद है १३ व जब विद्या पढ़ हो तो यह जानै कि इन आचार्यजी ने हमको अपना जान शास्त्रवेद ब्रह्मविद्या पढ़ाय बढ़ाया है अत्यानन्दित हो वह ब्रह्मचर्य व्रत का तीसरा पाद है १४ व विद्या पढ़ जब तक गुरुदक्षिणा न दे चुके तब तक दूसरे आश्रम को न जाय व जो धनादि गुरुदक्षिणा में दे उसका अभिमान न करे कि हमने इतनी गुरुदक्षिणा दी, यह ब्रह्मचर्य व्रत का चौथा पाद है १५ विद्या का एक पाद गुरु से पढ़कर जाने दूसरा विद्यार्थी अपनी बुद्धि से जाने तीसरा बुद्धि के विभव से चौथा साथ पढ़नेवाले विद्यार्थियों के सङ्ग बैठ अभ्यास करने से १६ इस ब्रह्मचर्य व्रत के धर्मादिक १२ गुण व और आसन प्राणायामादि व बल ये सब रूप हैं व आचार्य की सेवा और वेद के अर्थ में अभ्यास कर लेना ये दोनों उसके फल हैं १७ इस प्रकार पढ़ लिख जो धन कहीं पावे उसमें अहङ्कार न करे कि हमने अपनी बुद्धि से पाया है किन्तु सब गुरु के प्रभाव से मिला है यह मान गुरु को दे व पीछे यही वृत्ति गुरु के पुत्र के विषय में भी रहे यह सज्जनों की गुणयुक्त वृत्ति है १८ इस प्रकार जो ब्रह्मचर्य व्रत कर गृहस्थाश्रम में आता वह बहुत पुत्र पाता व सब रीति से उसकी बढ़ती होती है व प्रतिष्ठा भी वह बड़ी भारी पाता है व दिशा विदिशा सब उसके मनोरथ पूर करती हैं व उसके ऐसे ब्रह्मचर्य में सब लोग बसते हैं १९ इस ब्रह्मचर्य से देवता लोग देवत्व को प्राप्त हुए व ऋषि लोग ऋषित्व को व ब्रह्मलोक को २० गन्धर्वों व अप्सराओं का रूप इसी ब्रह्मचर्य ही से हुआ है व इसी ब्रह्मचर्य के प्रभाव से सूर्य शीघ्र उदय होते हैं २१ जैसे चिन्तामणि से उससे माँगनेवाले लोग जो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चाहते माँग लेते वैसे ही ब्रह्मचर्य का प्रभाव जान देवादिकों ने जो चाहा माँग लिया इसी से ये सब ऐसे हो गये हैं २२ जो पुरुष सब चार पाद युक्त ब्रह्मचर्य का सेवन करता व तपस्या कर अपना शरीर पवित्र करता वह इसी ब्रह्मचर्य के प्रभाव से राग द्वेषादि रहित हो जाता व अन्तकाल में मृत्यु को भी जीत लेता मोक्ष को प्राप्त हो जाता है २३ हे क्षत्रिय! अविद्वान् लोग निर्मल कर्म से अनित्य लोकों को जीतते हैं व विद्वान् उसी निर्मल कर्म से ब्रह्म ही को प्राप्त हो जाता है क्योंकि मोक्ष के लिये अन्य मार्ग ही नहीं है ज्ञान ही से मुक्ति होती है २४ इतना सुन चुप हो ब्रह्म का ध्यानकर उसे न देख नानावर्ण के नाड़ियों के मार्ग हृदय में देख शङ्कितचित्त हो धृतराष्ट्रजी बोले कि हमको तो शुक्ल, लोहित, कृष्ण, अञ्जन सदृश, धूम सदृश कई प्रकार का ब्रह्म का रूप विदित होता है पर सद्धर्म का जो रूप विद्वान् पुरुष देखता हो वह मोक्षरूप पद हम कैसे जानें बताइये २५ सनत्सुजातजी बोले कि ब्रह्ममार्ग में यद्यपि शुक्ल सा, लोहित सा, कृष्ण सा, लोहवर्ण सा व सूर्यवर्ण सा दिखाई देता है तथापि ब्रह्म जैसा है वह रूप न पृथ्वी में है न अन्तरिक्ष में व न समुद्र के जल में २६ न नक्षत्रों में न बिजली में न बादरों में न पवन में न देवताओं में न चन्द्रमा में दिखाई देता न सूर्य में २७ न ऋग्वेद में न यजुर्वेद में न विमल सामवेद में न रथन्तर में न बार्हद्रथ में न यज्ञादिकों में उस अरूप का रूप दिखाई देता २८ किन्तु उस अरूप का रूप अपारणीय है व अज्ञान रूपान्धकार से परे है व महाप्रलय के समय में काल भी उसी ब्रह्म में लीन होता है व अतिसूक्ष्म होने से दुर्लभ है व छूरा की धार से भी तीक्ष्ण है व पर्वतादि जितने बड़े से बड़े पदार्थ हैं उन सबों से बड़ा है ॥ २९ ॥

चौ० अधिष्ठान सब कर अविकारा। सकल लोक महँ तासु पसारा॥
ब्रह्म महद्यश नामहु तासू। जग जहँ होत प्रलयतहँ बासू॥१॥३०

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

महदुद्यत यश बहुरि अनामय। कविवच नहिं कहते विकारमय॥
जहां जगत सब करत निवासा। जो त्यहि जानत त्यहि अमृतासा २।३१

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सनत्सुजातीये चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥

पैंतालीसवां अध्याय।

दो० पैंतालिसवें महँ कहब, जिमि शोकादिक दोष।
सनत्सुजात मुनीश कह, अरु धर्मादि अशेष ॥ १ ॥

सनत्सुजातजी बोले कि, शोक १ क्रोध २ लोभ ३ काम ४ मान ५ निद्रा ६ ईर्ष्या ७ मोह ८ मद्यादि पीने की इच्छा ९ स्नेह १० असूया ११ निन्दा १२।१ ये १२ महादोष मनुष्यों के प्राणनाशक हैं जो इनमें के एक २ हों तब भी प्राणनाशक हैं जो सब हों तो क्या कहना इन सबों से युक्त पुरुष पाप करने पर उतारू होता है २ स्पृहयालु, उग्र, परुष, अवदान्य, क्रोधी, विकत्थन करनेवाला ये ५ क्रूर के धर्म हैं इनको पाय पुरुष और किसी का मान नहीं करते इन सब दोषों के अर्थ ४२।४३ के अध्याय में लिख चुके हैं ३ सम्भोग सद्विद्विषम् १ अतिमानी २ दत्त्वाविकत्थी ३ कृपण ४ दुर्बल ५ बहुप्रशंसी ६ वनितासुद्विट् ७ ये सात दोष पापियों के स्वभाव के हैं व नृशंस दोष कहाते हैं इन शब्दों के भी अर्थ कर चुके हैं ४ धर्म १ सत्य २ तप ३ दम ४ अमात्सर्य ५ लज्जा ६ सहनशीलता ७ अनिन्दा ८ दान ९ शास्त्राभ्यास १० धारणा शक्ति ११ व क्षमा १२ ये १२ ब्राह्मण के महाव्रत हैं ५ जो इन द्वादश गुणों से नहीं च्युत होता वह समुद्रपर्यन्त पृथ्वी को शिक्षा दे सकता है तीन दो वा एक धर्मादिकों में से प्रत्येक की रक्षा के लिये वह अपना सब धन खर्च करडालता यह भी जानना चाहिये ६ व दमत्याग अप्रमाद इनमें मुक्ति टिकी है ये सब वेदवादियों में मुख्य ब्राह्मणों में रहते हैं ७ चाहे सत्य हो व असत्य हो पर किसी के दोष ब्राह्मण को कहना उचित नहीं है क्योंकि जो पराया

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अपवाद कहते हैं उनको नरक वास होता है ८ मद में १८ दोष होते हैं पूर्व समय नहीं कहा अब कहते हैं १ लोकद्वेष्य परस्त्री गमनादि २ प्रातिकूल्य धर्मादिक में विघ्न करना ३ अभ्यसूया गुणी पुरुषों में दोष आरोप करना ४ मिथ्या बोलना ६ । ५ काम स्त्री का अभिलाष ६ क्रोध ७ पारतन्त्र्य मदिरादि के वश होना ८ परवाद परदोष कहना ६ पैशुन चुगुली १० अर्थ हानि नट कथिक वेश्यादिकों को व्यर्थ देना ११ विवाद वैर करना १२ मात्सर्य १३ प्राणियों को पीड़ित करना १०।१४ ईर्ष्या पर गुणों को न सहना १५ मोद अहङ्कार से हर्ष करना १६ अतिवाद निर्मर्याद बोलना १७ संज्ञानाश कार्य अकार्य का विचार न करना १८ अभ्यसूयत निरन्तर परद्रोह करने का स्वभाव इससे पण्डित को चाहिये मद न करे क्योंकि यह सदा निन्द्य है सौहृद में ६ गुण हैं १ प्रिय के सुख में हर्ष करना २ प्रिय के दुःख में दुःखित होना ३ अपना जो कुछ हो माँगने पर प्रिय को दे देना विना माँगने पर भी देना चाहे स्त्री पुत्रादि इष्ट जो पदार्थ प्रिय माँगे शुद्ध भाव से सब देना १२ । ४ जिसको अपना सर्वस्व दे दे उसके यहां अपने उपकार के पलटे में कुछ पाने की इच्छा से न बसना ५ अपने कर्म से ही उपार्जित धन खाना मित्रोपार्जित की इच्छा न करना ६ अपना कल्याण भी मित्र के लिये नाशना १३ जो गृहस्थ इस तरह गुणवान्, दाता व सात्त्विक होता वह शब्द, स्पर्श, रस, गन्ध, रूप पांच विषयों से श्रोत्र, त्वचा, रसना, घ्राण, चक्षु पांच इन्द्रियां निवृत्त करा लेता है १४ धैर्य से जो च्युत नहीं होते उन्हीं लोगों के सङ्कल्प से यह विषयों से इन्द्रियों का निवृत्त करना तप ब्रह्मलोकादि देता है १५ सत्यसङ्कल्प पुरुष के सङ्कल्प ही से सब यज्ञ होते हैं व मध्यम पुरुष के वचन से व और प्राकृत लोगों के कर्म करने से यज्ञ होते हैं १६ जो सगुण ब्रह्म की उपासना से सङ्कल्प सिद्ध पुरुष होते उनसे विशेष निर्गुणब्रह्म की उपासना से सङ्कल्प सिद्ध होते हैं १७ यह योगशास्त्र शिष्यों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को पढ़ाना चाहिये इससे बड़ा यश होता है व इससे अन्य जो शास्त्र हैं उनको कविलोग केवल वचन का विकार कहते हैं व इस योगशास्त्र जाननेवाले योगी में सबकुछ शक्ति होती है व जो लोग उस योग-शास्त्र को जानते हैं वे मुक्त होजाते हैं १८ हे राजन्! कर्मरूप पुण्य करने से सत्यब्रह्म को पुरुष नहीं पा सकता व जो होमयज्ञादि कर्म अविद्वान् लोग करते हैं वे मोक्ष को नहीं प्राप्त होते व न अन्तकाल में कुछ आनन्द ही पाते हैं॥ १९ ॥

चौ० मौनी एक उपासक रहई। मनहूं से न करन कुछ चहई।
स्तुतिसों जानि आनन्दित होई। करै न निन्दासों रिस कोई १।२०
हे नृप! वेद भेद यह देखी। कर्म छोड़िकरि ज्ञान विशेखी॥
ब्रह्म लीन है यह संसारा।लखै कहतहमसहित विचारा२।२१

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सनत्सुजातीये पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४५॥

छियालीसवां अध्याय।

दो० छयालिसवें महँ कहब जिमि, पुनि विज्ञान बखान।
सनत्सुजात मुनीश किय, खण्डि सकल अज्ञान॥ १ ॥

सनत्सुजातजी बोले कि, जो ब्रह्मबीज तुल्यबीज हो विश्व की उत्पत्ति का मूलकारण है व जो सूर्य रूप से सर्वत्र दीप्यमान है व जिसका महद्यश नाम है उसी को इन्द्रियों के देवगण सेवते हैं व उन्हीं से सूर्य प्रकाशित होते हैं उन्हीं सनातन भगवान् को योगीलोग देखते हैं १ शुक्ररूप आनन्द से ब्रह्म आकाश होता है व उसी से बढ़ता है वही शुक्र प्रकाशवान् सूर्यादिकों के मध्य में स्थित हो तपता है उसी सनातन भगवान् को योगीलोग देखते हैं २ जलों से जलरूप परब्रह्म जल के मध्य में टिका है व जीव ईश्वर दोनों अन्तरिक्ष में विराजमान होते हैं उन दोनों से भिन्न जगत् का कारण चिद्रूप जो सदा उदयास्त होने पर भी प्रकाशित रहता वह जीव ईश्वर दोनों को

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व पृथ्वी स्वर्ग को धारण करता है ऐसे सनातन भगवान् को योगी लोग देखते हैं ३ व वही शुक्र जीव व ईश्वर दोनों को पृथ्वी स्वर्ग व ब्रह्माण्ड को धारण करता है व उसी से दिशा नदियां सब निकलती हैं व उसी से बड़े २ भारी समुद्र निकलते हैं ऐसे सनातन भगवान् को योगीलोग देखते हैं ४ व जिस शुक्र के विनाशी भी रथरूप शरीर के चक्र के निमित्त चलते हुए अश्वरूप इन्द्रिय प्रज्ञावान् जीव को परमात्मता को प्राप्त कराते हैं व जो दिव्य अजर अमर है ऐसे सनातन भगवान् को योगीलोग देखते हैं ५ इस ब्रह्म की आकृति सादृश्य में नहीं टिकती व इसी से कोई नेत्र से उसे नहीं देखता जो अपनी बुद्धि मन व हृदय से उसको जानते हैं वे मुक्त होजाते हैं ऐसे ब्रह्म सनातन भगवान् को योगीलोग देखते हैं ६ व चित्तादि द्वादशपूग अर्थात् समुदाययुक्त नदी अविद्यानाम महानदी जो बड़ी प्रवाहवती है चक्षुरादि इन्द्रियों के अनुग्राहक सूर्यादि देवताओं से रक्षित व इस शुक्राधिष्ठित स्थान में भासमान महाभयङ्कर अविद्यानाम नदी का पुत्र पश्वादिरूप मधु पीते हुए जीव उसके ऊँचे नीचे के मार्गों में घूमते इससे फिर २ इस शुक्राधिष्ठान में घूमते हैं ऐसे सनातन भगवान् को योगीलोग देखते हैं वे १२ पूग ये हैं चित्तादिपूग १ स्मरणादिपूग २ श्रोत्रादिपूग ३ श्रवणादिपूग ४ वागादिपूग ५ वचनादिपूग ६ शब्दादिपूग ७ वियदादिपूग ८ प्राणादिपूग ९ श्वसनादिपूग १० संस्कारपूग ११ सुकृतादिपूग १२ अमररूप ईशान जीव यहां यज्ञादि कर्म कर चन्द्रमण्डल के मध्य में बैठ उसके भीतर का अमृत देवता होकर पीता व फिर कर्मफल जो भोग करने को शेष रह जाते उनके भोगने की इच्छा से सब प्राणियों में जन्म लेता वही जीव हव्यरूप यज्ञ की कल्पना करता उस ईश्वररूप जीव सनातन भगवान् को योगीलोग देखते हैं सुवर्णतुल्य स्त्री पुत्रादि पुत्रयुक्त अविद्यारूप नाश होने के योग्य वृक्ष को पाय प्राण रहित जीव पक्षीरूप हो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इधर उधर नानाप्रकार की योनियों में जन्म लेते हैं उस सनातन भगवान् को योगी लोग देखते हैं ७—६ पूर्णरूप ब्रह्म से पूर्णरूप ही जीव पृथक् किये जाते हैं व उसी पूर्ण से प्राणादि पूर्ण बनाये गये व पूर्ण प्राणादि ब्रह्म में टिके रहते तो पूर्ण ब्रह्म ही से दूर करते हैं तो शेष भी पूर्ण ही रह जाता है उस पूर्ण सनातन भगवान् को योगी लोग देखते हैं १० व उसी पूर्ण ब्रह्म से आकाश उत्पन्न हुआ आकाश से वायु वायु से अग्नि अग्नि से जल जल से पृथ्वी उससे सब प्राणी व उसी पूर्ण में ये सब फिर मिलजाते उसमें अग्नि भोक्ता है व सोम भोज्य व सोम में सब प्राण व इन्द्रियां विस्तृत हैं ११ कहां तक गिनावें जो कुछ स्थावर जङ्गम है सब उसी से उत्पन्न है उसे कह नहीं सकते ऐसे पूर्ण सनातन भगवान् को योगी लोग देखते हैं १२ प्राणवायु अपान को अपान में खींचता व प्राण को मन खींचता मन को बुद्धि खींचती बुद्धि को परमात्मा खींचता उस परमात्मा सनातन भगवान् को योगी लोग देखते हैं १३ हंस रूप परमात्मा शरीर रूप वृक्ष पर चढ़ा है परउस वृक्ष में बँधा नहीं है उस आत्मा के जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति व तुरीय ये चार चरण हैं इनमें चौथा तुरीय चरण वह नहीं प्रकाशित करता व उन तीनों चरणों से जल से बाहर उछला हुआ घूमता व उस चौथे तुरीय पाद को बार बार ऊपर को उठाता है उसको शिव अद्वैत मानते हैं व ऊपर के तीनों पादों को विश्व, तैजस व प्राज्ञ, मानते हैं क्योंकि वह चौथा इन तीनों में निरन्तर व्याप्त रहता है जो उस तुरीय को देखे तो न मृत्यु ही हो न मुक्त ही हो किन्तु सदा एक रस बना रहै उस सनातन भगवान् को योगी लोग देखते हैं १४ अंगुष्ठमात्र पुरुष अन्तरात्मा, पञ्चप्राण, मन, बुद्धि, दश इन्द्रिय युक्त लिङ्ग शरीर के सम्बन्ध से इसलोक परलोक दोनों में जाता है उस स्तुति करने के योग्य उपाधि के अनुसार सब कार्य करने में समर्थ आदि मूल कारण को चैतन्यरूप से सर्वत्र विराजमान न होने पर भी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

मूढ़ नहीं देखते उस सनातन भगवान् को योगी लोग देखते हैं १५ मनुष्यों में संघाताभिमानी जीवों में कोई शम दमादि हीन होने से असाधन कहाते कोई क्षमादि युक्त होने से साधन कहाते पर यह ब्रह्म सदा निर्विकार होने से मनुष्यों में समान दिखाई देता इससे मुक्त व बद्ध दोनों में समान ही रहता उनमें मुक्त लोग ब्रह्मरस के उत्कर्ष को प्राप्त होते ऐसे समान सनातन भगवान् को योगी लोग देखते हैं १६ ब्रह्माकार अन्तःकरण की वृत्तिरूप विद्या से आत्मलोक अनात्मलोक दोनों को प्राप्त हो प्रारब्ध के अनुसार विद्वान् देहधारी होता तो इसका न किया हुआ भी अग्निहोत्र किया हुआ होजाता है इससे हम ब्रह्म हैं ऐसी ब्राह्मीवाणी कहते हुए तुमको लघुता न हो अर्थात् हम दास हैं ऐसा न कहो क्योंकि ब्रह्मवित् ब्रह्मही होता इससे अपना को ब्रह्म कहना ही चाहिये व उसी को प्रज्ञान नाम है पर उसको धीर लोग ही प्राप्त होते हैं १७ इस तरह वचन मन से अतीत जगत् के जन्मादि स्थान का रूप परमात्मा महात्मा महापूज्यत्व को प्राप्त होता है उसको कर्म लोप का दोष भी नहीं होता व पावकरूप भोक्ता जीव को अपना में मिलाता है उस पुरुष को जो जानता है उस पुरुष का अर्थ मोक्ष नहीं नाश होता जिसके ज्ञान से अर्थ नाश नहीं होता उस सनातन भगवान् को योगी लोग देखते हैं १८ जो दश लक्ष वा अनन्त पक्ष लगाय दूर को चला जाय वह भी जिसके हृदय के मध्य में परमेश्वर बैठा है उस योगी के हृदय में आपही जाता है चाहे मन के समान वेग रखता हो जिस परमेश्वर में दूर की भी वस्तु आ जाती है उस सनातन को योगी लोग देखते हैं १९ इस परमेश्वर अरूप का रूप किसी के देखने में नहीं आता पर विशुद्ध सत्त्व ब्रह्मज्ञानी संन्यासी उसका रूप देखते हैं यह जान जो जगत् का हितकारी होता वह मन के जीतने-वाला होता है व पुत्रादि के नाश में भी सन्तप्त नहीं होता व जो ऐसा ज्ञान सब छोड़ विरक्त होते वे मुक्त होजाते हैं उस मुक्त सनातन भगवान्

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को योगी लोग देखते हैं २० संन्यास करके भी वञ्चकों की सङ्गति न करनी चाहिये क्योंकि लौकिक मनुष्य अपने गुरुओं की शिक्षा से मद्य मांस पर स्त्री सेवनादि पापरूप गह्वरों को छिपाते हैं जैसे सर्प लोग अन्य को भय भी देते पर बिलादि में छिपकर अपना को छिपाते हैं उन बाहर से रमणीय मद्य मांसादिकों में पड़कर मूढ़ मोहित होते हैं जैसे अपने सुन्दर मार्ग में चलते हुए पुरुषों को मद्य मांसादि भक्षण अपवित्र ब्रतों के उपदेश से दाम्भिक लोग लोगों को नरक में पहुँचाने के लिये भुला देते हैं इससे अच्छी तरह परीक्षा लेकर जिसके लाभ के लिये सङ्गति करनी चाहिये उस सनातन भगवान् को योगी देखते हैं २१ जो लोग जीवन्मुक्त हैं वे ऐसा कहते हैं कि हम सदा असत् देहेन्द्रियों से सुख दुःख जन्म जरा मरणवान् किये गये पर असत्कृत न होवें क्योंकि मृत्यु भी तो नहीं है न जन्म ही है व मोक्ष भी हमको कहीं से नहीं है क्योंकि जब बन्धन होता है तब मुक्ति होती है वह तो हमको है ही नहीं इसमें हेतु यह है कि सत्य घटादि व मिथ्या रस्सी को सर्प मानना दोनों समान बन्ध हैं क्योंकि सब जगत् ब्रह्माधीन है व कार्य कारण की योनि हमीं हैं तिस हमको योगी लोग देखते हैं २२ वह ब्रह्मवित् साधु कर्म से उत्कृष्ट नहीं होता व असाधु कर्म से अपकृष्ट नहीं होता क्योंकि मानुषों में वह सदा समान ब्रह्मवि ूप दिखाई देता है व वह ब्रह्मविद्रूप ब्रह्ममोक्ष में भी समान ही दिखाई देता क्योंकि पाप पुण्य दोनों का स्पर्श उसमें नहीं रहता इस प्रकार पूर्वोक्त प्रकार से योगयुक्त ब्रह्मविद्रूप ब्रह्ममधु एकरसरूप ब्रह्म के पीने की इच्छा करता है ऐसे ब्रह्मविद्रूप सनातन ब्रह्म भगवान् को योगी लोग देखते हैं २३ इस ब्रह्मवित् के हृदय को निन्दा वचन नहीं सन्तप्त कराते अथवा हमने नहीं पढ़ा हमने नहीं अग्निहोत्रादि यज्ञ किया ये भी उसके मन को ताप नहीं कराते किन्तु इस ब्रह्मवित् को ब्रह्म सम्बन्धिनी विद्या शीघ्र ही प्राप्त होती है जिस विद्या को पाय सबको वह प्राज्ञ देखता है उस ऋतम्भरा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नाम ब्रह्मविद्या को ग्रहण करना चाहिये जिसको ध्यानी लोग प्राप्त होते हैं और नहीं जिसको निन्दा वचनादि नहीं ताप कराते उससे अभिन्न सनातन ब्रह्म भगवान् को योगी लोग देखते हैं २४ इस प्रकार जो सब प्राणियों में लगे हुए आत्मा गुरु वचन को देखता वह अन्यत्र दारादिकों में व अन्यत्र कर्मादिकों में युक्त पुरुषों में क्या शोचै कुछ भी न शोचै किन्तु वे ही लोग शोच करें २५ जैसे बड़े भारी तड़ागादि में भी जितने जल से स्नान पानादि का काम चलता है उतने ही से लोगों का प्रयोजन रहता है ऐसे ही सब वेदों में आत्मज्ञानी का प्रयोजन जितने से है उतना ही ग्रहण करे बहुत पुस्तक भार लादने का कुछ प्रयोजन नहीं २६ दिन रात्रि जगत् की शिक्षा के लिये घूमते हुए अज महात्मा व्यापक जोकि अंगुष्ठमात्ररूप हृदय में बैठा हुआ दिखाई देता है उसको आत्मा मान कृतकृत्य हो इन्द्रियों के विषयों से निवृत्त हो प्रसन्नतापूर्वक आत्मज्ञानी टिका रहता है २७ व वह ब्रह्मविदात्मा ऐसा मानता है कि इस जगत् के माता पिता पुत्रादि सब हमीं हैं व सबके आत्मा भी हमीं हैं और कुछ भूत भव्य भवत् नहीं है सब हमीं हैं २८ व पितामहादि वृद्ध भी इस संसार के हमीं हैं व पिता पुत्र भी हमीं हैं व तुम लोग हमारे ही आत्मा में टिके हो व फिर भी तुम हमारे नहीं हो न हम तुम्हारे कोई हैं यद्यपि प्रथम जगत् भरके माता, पिता, पुत्रादि आत्मा को कह रस्सी में सर्प का आरोप किया तथापि इस जगत् व परमात्मा का कुछ भी सम्बन्ध नहीं यह जानना चाहिये २९ किन्तु आत्मा ही हमारा स्थान है व आत्मा ही हमारा जन्म है व आत्मा ही इसमें ओत प्रोत है अजर अमर सब आत्मा हम हैं व अज अद्वैत जगत् की शिक्षा के लिये रात्रि दिन अनलस हो हमीं फिरते हैं व हमीं को जान आत्मज्ञानी प्रसन्न हो इन्द्रियों के विषय से अलग प्रसन्न हो बैठा रहता है ॥ ३० ॥

चौ० सूक्ष्महु ते अतिसूक्ष्म बखाना । यासों अति दुर्लभ्य महाना ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

यह निर्ग्गुण है ब्रह्म अनूपा। लखत जाहि निर्गुण अनुरूपा १
शोभन मन है जासु ससुमना। सगुण ब्रह्म यह गुनुमन अपना॥
यह सब जग कर अन्तर्यामी। है हृदि जागत सबकर स्वामी २
आकाशादिक पञ्च भूत महँ। जरायुजादि प्राणि महँ है वहँ॥
सब हृदि कमल करै वह बासा। यासों सर्वगनाम प्रकासा ३।३१

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सनत्सुजातीये षट्चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४६॥

सैंतालीसवां अध्याय।

दो० सैंतालिसवें महँ कहब, जिमि धृतराष्ट्र महीप।
गुरुसुत नृप भ्राता सहित, सभागये कुलदीप॥ १॥

इतनी कथा कह वैशम्पायनजी फिर जनमेजयजी से बोले कि, इस प्रकार धीमान् सनत्सुजातजी व विदुरजी के साथ बतलाते २ राजा धृतराष्ट्र को वह रात्रि बीत गई १ उस रात्रि के बीतने पर सब राजा लोग सञ्जय को देखने की इच्छा से राजसभा में आये २ धर्म अर्थ युक्त पाण्डवों की वार्त्ता सुनने की इच्छा से धृतराष्ट्रादि सब राजा लोग अमृत समान उज्ज्वल सुवर्ण से अंगणभूषित अति सुन्दर, चन्द्रमा के समान प्रकाशित अति मनोहर चन्दनादि सुगन्धित जल से सींची हुई रुचिर चित्र विचित्र सुवर्ण के काष्ठों के उत्तम २ पत्थरों के हाथी दाँतों के कुरसी आदि आसनों से भरी हुई व उनके नीचे चटापटी के बिछौने बिछी हुई बड़ी भारी राजसभा में गये ३।५ उनमें भीष्मजी, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, राजाशल्य, कृतवर्मा, जयद्रथ, अश्वत्थामा, विकर्ण, सोमदत्त, बाह्लिक देश का राजा, विदुरजी, महारथ युयुत्सु व और भी जो बड़े २ शूरवीर राजा लोग थे ये धृतराष्ट्रजी को आगे कर उस शुभ सभा में पैठे ६।७ व दुश्शासन, चित्रसेन, शकुनी, सौबल, दुर्मुख, दुस्सह, कर्ण, उलूक, विविंशति ये सब लोग असहन शील महामानी कुरुराज दुर्योधन को आगे कर उस सभा में पैठे जैसे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

देवता लोग इन्द्र की सभा में पैठते हैं ८ । ९ उस समय परिघसमान लम्बी बाहों के शूरवीरों के पैठने से वह राजसभा सिंहों के पैठने से पर्वत की कन्दरा के समान शोभित हुई १० व वे महापराक्रमी बड़े बड़े धनुर्द्धर लोग सभा में पैठ सूर्यवत् प्रकाशित चित्र विचित्र आसनों पर जा बैठे ११ हे राजन् ! जब सब राजा लोग आसनों पर बैठ चुके तो द्वारपाल ने आय कहा कि सूत के पुत्र सञ्जयजी आये हैं १२ देखो ये सञ्जय जो रथ पर चढ़ पाण्डवों के पास गये थे वे हमारे यहां के दूत बहुत अच्छे चलनेवाले घोड़े मचे हुए रथ पर चढ़े बड़ी शीघ्रता से चले आते हैं १३ द्वारपाल ऐसा कहीरहा था कि कुण्डल धारण किये सञ्जय झट रथ से उतर आ पहुँचे व महात्मा राजाओं से भरी हुई उस सभा में पैठे १४ व बोले कि हे कौरव लोग ! हम पाण्डवों के समीप गये थे अब आये यह सब लोग जानो पाण्डव लोग अवस्था के अनुरूप सब कौरवों को अभिनन्दित करते हैं १५ व सब वृद्धों के प्रणाम करते व अपनी अवस्थावालों से उनके योग्य मिलते भेंटते हैं व अवस्था के अनुसार युवा लोगों से भी यथोचित कहा है १६ हे राजा लोगो ! जिस प्रकार धृतराष्ट्रजी की शिक्षा से हम यहां से गये थे सब पाण्डवों से कहा उन्होंने जो कहा सुनो ॥ १७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सञ्जययाने सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥

अड़तालीसवां अध्याय ।

दो० अड़तालिसवें महँ कहब, जिमि सञ्जय सब हाल ।
कहे पाण्डवन के बहुरि, उनके वचन विशाल ॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी ने पूछा कि, हे सञ्जय ! अब हम तुमसे यह पूछते हैं कि दुष्टात्माओं के प्राणनाशक व संग्रामों के नायक महात्मा अर्जुन वीर ने राजसभा में कौन वाक्य कहा है १ सञ्जयजी बोले कि युधिष्ठिर की सम्मति से व कृष्णचन्द्रजी के सामने युद्ध करने की इच्छा से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

महात्मा अर्जुनजी ने जो वचन कहा है वह दुर्योधन चित्त लगाय सुनें २ युद्ध करने की इच्छा किये व अपने बाहों का बल जान महारणधीर अर्जुनजी ने कृष्णचन्द्रजी के समीप निर्भय हो कहा कि सब कुरुवंशियों के सामने दुर्योधन से कहना ३ पर ऐसे समय में कहना जब कि मन्दबुद्धि, अतिमूढ़ काल के समीप आ जाने से बनाय पक कर शिथिल सदा दुष्ट वचन बोलता दुष्टात्मा कर्ण भी सुनता हो जो हमसे सदा युद्ध करने की इच्छा किये रहता व सबसे अपनी बड़ाई भी किया करता है ४ व जिन राजाओं को पाण्डवों से युद्ध करने के लिये दुर्योधन ने बुलाया है उनको भी सुनाय कर कहना जिसमें हमारे कहे वचन अमात्ययुक्त राजा सुनें ५ व जिस प्रकार सब देवता लोग देवराज के वचन सुनते हैं उसी प्रकार अर्जुनजी की समर्थ वाणी सृञ्जयवंशीय व पाण्डवों ने सुनी है ६ यह वचन गाण्डीव धनुर्द्धारी अरुण नेत्रयुक्त अर्जुनजी ने युद्ध करने पर उद्यत होकर कहा है कि जो अजमीढ़वंश के राजा युधिष्ठिरजी का राज्य दुर्योधन न छोड़ेंगे तो ७ जानों पूर्वसमय का किया हुआ पाप अभी दुर्योधनादिकों का विद्यमान ही है उन्होंने उसका फल अभी भोग नहीं किया क्योंकि उन लोगों का युद्ध भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव व कृष्णचन्द्रजी से ८ तथा शैनेय आयुधग्रहण किये धृष्टद्युम्न शिखण्डी व इन्द्रतुल्य पराक्रमी युधिष्ठिरजी से होगा जो युधिष्ठिरजी जैसे ही अपकार करने की चिन्तना करेंगे वैसे ही पृथ्वी व स्वर्ग दोनों को भस्म कर देंगे ९ ऐसे हम लोगों के सङ्ग जो दुर्योधन युद्ध करना चाहते हों तो बस हम पाण्डवों का सब कार्य सिद्ध हो जायगा उनको मार पूरा राज्य ले लेंगे पाण्डवों के लिये आधा राज्य न दें अच्छा अब वे युद्ध ही करें १० तो जो दुःख धर्मचारी युधिष्ठिरजी ने वनवास में सहे हैं उन दुःखों को समर में मरकर वहां परे हुए दुर्योधन सहें ११ जिन कुरु पाण्डवेय देशों को दुष्टात्मा अन्यायवृत्ति दुर्योधन प्राप्त हुआ है उन

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

देशों को लज्जा, ज्ञान, तपस्या, दम, शूरता, धर्म, रक्षा व बलयुक्त युधिष्ठिरजी के विषय में अनुरक्त करो दुर्योधन के नाश होने पर प्रजाओं को हमारे सम्मुख करना तुम्हारा कार्य है उसके सङ्ग मिलाप कराना तुम्हारा कार्य नहीं है यह हम से कहा १२ और यह भी कि प्रणिपात, सरलता, तप, जितेन्द्रियत्व, धर्मरक्षा व बलयुक्त युधिष्ठिरजी ने छल की वार्त्ता को पाय भी नाना प्रकार के दुःख सह सत्यही बोलते रहे व क्षमा ही करते रहे १३ जब प्रशंसा करने योग्य हमारे ज्येष्ठ भाई युधिष्ठिरजी क्रोधयुक्त हो कुरुवंशियों के ऊपर अपना बहुत वर्षों का घोर क्रोध छोड़ेंगे तब दुर्योधन युद्ध का शोच करेंगे कि नाहक हमने युद्ध किया १४ क्योंकि प्रथम धूमयुक्त हो फिर कुछ प्रज्वलित तदनन्तर हहाय बरते हुए व शुष्कतृणों को जलाते हुए अग्नि के समान क्रोध से प्रज्वलित युधिष्ठिरजी देखते ही दुर्योधन की सेना को भस्म कर देंगे १५ जब गदा हाथ में लिये रथ पर चढ़े क्रोधरूप विष उगिलते असहनशील भयङ्करवेग भीमसेनजी को दुर्योधन देखेंगे तब युद्ध करने का शोच करेंगे अभी क्या १६ जब कवचादि धारणकर शत्रुओं के वीरों को मारनेवाले व क्रोध करने पर अपने रूप से बाहर भीमसेनजी को सेना के आगे चलते व यमराज समान शत्रुसेना को नाशते देखेंगे तब दुर्योधन हमारे वचन का स्मरण करेंगे १७ जब पर्वताकार हाथियों को भीमसेनजी से मारे हुए व जल के समान मुख से रक्त उगि-लते हुए व मस्तक फटे हुए देखेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे १८ जब गाइयों के झुण्ड में पिले हुए महासिंह के समान गदा हाथ में लिये भीमसेनजी धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारेंगे तब दुर्यो-धन युद्ध का शोच करेंगे १९ जब, महाभय में भी निर्भय, अस्त्रविद्या में कुशल, पहुँचते ही पहुँचते शत्रुसेना के मर्दन करनेवाले भीमसेन-जी एक रथपर चढ़े हजारों रथों को व पैदरों को गदा से मारते पीटते व बड़े बड़े हाथियों को बड़े वेग से पकड़ पकड़ धनवांसी पर धर दुर्योधन की

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सेना पर फेकेंगे जैसे काटनेवाले कुल्हारी से वन काटते हैं तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे २० । २१ जब अग्नि से जलते हुए छपरहिल ग्राम के समान व पके अन्न पर बिजली परने से जले हुए अन्न के तुल्य अपनी सेना दुर्योधन देखेंगे तब युद्ध का शोच करेंगे २२ व जब भीमसेनजी के शस्त्रों की ज्वाला से भस्मवीर मारी हुई भयभीत हो भगी व बहुधा धैर्य रहित योधायुक्त अपनी सेना देखेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे २३ व जब चित्र विचित्र युद्ध करनेवाले नकुलजी रथ पर चढ़ शत्रु के रथियों के शिरों के ढेर काट काट लगा देंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे २४ व सदासुख के योग्य नकुलजी वन में बहुत दिनों तक जो दुःख की शय्यापर सोये हैं, वे जब क्रोध कर विषधर सर्प के समान विष उगिलेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे २५ हे राजन्! युधिष्ठिरजी की आज्ञा से प्राण छोड़ने पर उद्यत राजा लोग जब तुम्हारी सेना के मध्य में युद्ध करने के लिये अच्छे अच्छे रथों पर चढ़ दौरेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे २६ जब शस्त्रविद्या में कुशल युवावस्थावालों के समान प्रकाशित महाशूरवीर द्रौपदी के पाँच पुत्रों को प्राण छोड़ भागते हुए कौरवों के पीछे दौरते हुए देखेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे २७ व जब अनुकूलगति शब्दरहित चक्र, सुवर्ण के तारों से खिंचे व सुशिक्षित अश्व मचे रथ पर सवार व महाभय में भी निर्भय समर में बड़े कुशल सहदेवजी को सब दिशों में कूदते हुए व बाणों से राजाओं के शिर काटते हुए देखेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे २८ । २९ व जब लज्जावान् निपुण सत्यवादी महाबलवान् सब धर्मयुक्त व रणसंकुल में बड़े शीघ्रकारी सहदेवजी शकुनी के ऊपर दौरते हुए बाण चलावेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ३० व जब, बड़े बाण चलानेवाले शूरवीर अस्त्रविद्या में कुशल रथ पर चढ़ युद्ध करने में बड़े पण्डित द्रौपदी के पुत्र प्रतिविन्ध्यादिकों को विषधर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सर्पों के समान इधर उधर दौरते देखेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ३१ व जब परवीरघाती अस्त्रविद्या में कुशल अभिमन्यु मेघों के समान बाण बरसाते हुए कृष्णचन्द्रही के समान संग्राम में इधर उधर घूम शत्रुओं का मथन करेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ३२ व जब आबालवीर्य बालरूप अभिमन्यु को इन्द्रसमान अस्त्रविद्या में कुशल सब शत्रु की सेना में मृत्यु समान पहुँचे देखेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ३३ व जब सिंह समान वीर्य युवावस्था को प्राप्त बड़े शीघ्रगामी युद्धकर्म में बड़े विशारद प्रभद्रक लोग सैन्यसहित धृतराष्ट्र के पुत्रों के ऊपर बाणों की वर्षा करेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ३४ व जब वृद्धावस्था को प्राप्त महारथी राजा विराट व राजाद्रुपदजी अलग अलग सेनाओं के सम्मुख हो सैन्य सहित धृतराष्ट्र के पुत्रों को देखेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ३५ व जब समर में रथ पर सवार हो अस्त्रविद्या में बड़े चतुर द्रुपदजी क्रुद्ध होकर ज्वानों के शिर बाणों से काटेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ३६ व जब परवीरनाशक विराटजी अक्रूर-स्वभाव मत्स्यदेश निवासियों सहित बलवत्तर संग्राम में शत्रु की सेना में पैठेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ३७ व जब सौम्य स्वभाव श्रेष्ठरूप विराटजी के ज्येष्ठ पुत्र को कवचादि धारण किये रथ पर चढ़े समर में आगे देखेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ३८ व जब कौरवों में श्रेष्ठ वीर भीष्मजी को समर में शिखण्डीजी मारेंगे तो हमारे शत्रु कोई न जीवेंगे यह हम सत्य ही कहते हैं ३९ व जब रथरक्षायुक्त दिव्य घोड़े मचे रथ पर सवार शत्रु के रथ समूहों को तोड़ते हुए व रथियों को ढूँढ़ते हुए शिखण्डी भीष्मजी का निरादर करेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ४० व जब सृञ्जय-वंशियों की सेना में आगे चलनेवाले धृष्टद्युम्न को जिसे द्रोणाचार्य ने अस्त्रविद्या बताई थी देखेंगे तब दुर्योधन सन्ताप करेंगे ४१ व जब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वे धृष्टद्युम्न हमारे सेनापति हो बाणों से धृष्टराष्ट्र के पुत्रों व द्रोणाचार्य को भी मारेंगे तब दुर्योधन रण में शोच करेंगे ४२ व लज्जावान् बुद्धिमान् बलवान् मनस्वी व लक्ष्मीवान् सोमवंशियों में श्रेष्ठ वृष्णि-सिंह सात्यकीजी जिन हम लोगों के अग्रणी हैं उनका वेग और शत्रु न सहेंगे ४३ दुर्योधन से कहना कि ऐसे चाहे उनकी विजय भी होजाती पर अब राज्य पाने की इच्छा न करें क्योंकि हमलोगों ने अब युद्ध में अद्वितीय महाबली भीमबल अस्त्रविद्या में निपुण शिनि के नाती सात्यकीजी को अपना सचिव बनाया है ४४ बड़ी चौड़ी छातीवाले दीर्घबाहु मथनशील युद्ध में अद्वितीय परमास्त्रवेत्ता भयरहित तालप्रमाण आयुध धारण किये महारथी अस्त्रविद्या में कुशल शिनि के नाती शिनियों के स्वामी सात्यकीजी जब हमारे कहने से शत्रुओं के ऊपर बाण बरसावेंगे जैसे मेघ जल बरसाते हैं व ये शत्रुनाशक उनकी ओर के प्रधान योद्धाओं को आच्छादित करेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ४५। ४६ व जब युद्ध करने की इच्छा से दीर्घबाहु दृढ़ धनुर्द्धारी महात्मा सात्यकीजी की गन्ध शत्रु लोग पावेंगे तो जैसे सिंह की महक पाय गाइयां भागती हैं वैसे ही समर से वे लोग भागेंगे ४७ क्योंकि महात्मा दीर्घबाहु दृढ़ धनुर्द्धारी अस्त्रविद्या में निपुण बहुत जल्द हाथ चलानेवाले ये सात्य-कीजी पर्वतों को फोर डारेंगे व सब लोकों को हरलेंगे व आकाश में टिके हुए सूर्य के समान शोभित होंगे ४८ क्योंकि ये शत्रुओं के विस्मयकारी रमणीयरूप सुशिक्षित इनका अस्त्रयोग है व जैसा वृष्णिसिंह श्रीकृष्णचन्द्रजी का प्रशस्त बड़ाभारी अस्त्रविद्या में योग है वैसाही सब गुणयुक्त सात्यकीजी का है ४९ व जब श्वेत चार घोड़े मचे सुवर्ण का रथ मधुवंश में उत्पन्न सात्यकी का देखेंगे तब मन्द-बुद्धि दुर्योधन सन्ताप करेंगे ५० व जब सुवर्ण मणियों से प्रकाशित श्वेतरङ्ग के घोड़ों से युक्त पताकामें वानर लिखित अतिउग्र रथ पर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चढ़े हुए श्रीकृष्णचन्द्र सहित हमको देखेंगे तब दुर्योधन मन्दबुद्धि सन्ताप करेंगे ५१ व जब महारण में मेरे चढ़ाये हुए गाण्डीव धन्वा की प्रत्यञ्चा का वज्रपरने के शब्द के समान शब्द वह मन्दबुद्धि दुर्योधन सुनेगा तब वह दुष्ट धृतराष्ट्र का पुत्र जिसके सहायक भी दुष्ट ही हैं सन्तप्त होगा व बाणों की वर्षा के अन्धकार में वर्षा की अँधियारी में भागती हुई गाइयों के समान भागती हुई अपनी सेना को देखेगा तब भी सन्तप्त होगा ५२। ५३ व जब बादर से निकले हुए घोर रूप भयङ्कर बिजली की चिनगारियों के समान गाण्डीव धन्वा की प्रत्यञ्चा से निकले हुए तीच्णण बाण समूहों को संग्राम में हज़ारों शत्रुओं को नाशते व हाथी, घोड़े, रथों को भी ग्रसते हुए देखेंगे तब मूढ़ दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ५४। ५५ व जब हमारे प्रेरित बाणों से कटे हुए अपनी ओर के चलाये बाणों को मन्द दुर्योधन देखेंगे तब युद्ध करने का शोच करेंगे ५६ व जब हमारे भुजों से प्रेरित बाण वृत्त से गिरे हुए फलों को चुनते हुए पत्तियों के समान ज्वाने पुरुषों के शिर चुनेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ५७ व जब रथ, हाथी, घोड़ों पर से हमारे बाणों से मारे हुए वीरों को रङ्गभूमि में गिराये देखेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ५८ व जब धृतराष्ट्र की सेनावालों को नष्ट होते व शत्रु के अस्त्रमार्ग को न प्राप्त होते व कुछ भी कर्म न करते देखेंगे तब दुर्योधन युद्ध करने का शोच करेंगे ५९ व जब पैदरों के समूह तथा रथों के समूहों को मुख फैलाये काल के समान बाण फैलाये हुए हम ज्वलित बाणों से शत्रुओं को दूर बहावेंगे तब मन्दबुद्धि दुर्योधन सन्ताप करेंगे ६० व जब हमारे गाण्डीव से छिन्न भिन्न हो रथ से गिर अपनी सेना को धूर में गिर व्याकुल देखेंगे तब मन्दबुद्धि दुर्योधन सन्ताप करेंगे ६१ दुर्योधन छिन्न भिन्नगात्र मूर्च्छित व घोड़े, हाथी, वीर मरे हुए अपने सैन्य को देखेंगे तब जानेंगे ६२ व जब कष्टित शब्दयुक्त मारे गये व मारे जाते हुए केश

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हाड़ व खोपड़ी फैले हुए अपने सैन्यों को यज्ञ के पशुओं के समान मारे परे देखेंगे तब दुर्योधन मन्दबुद्धि सन्ताप करेंगे ६३ व जब गाण्डीव धन्वा श्रीकृष्णचन्द्र दिव्य शङ्ख पाञ्चजन्य घोड़े अक्षय तरकस व देवदत्तनाम अर्जुन का शङ्ख इन सबको रथ पर युद्ध में देखेंगे तब दुर्योधन शोच करेंगे ६४ व जब चोर रूप धृतराष्ट्र पुत्रों को उनके मरण समय में मार अच्छा धर्म्म चलाय कौरवों को हम भस्म करेंगे तब पुत्रसहित धृतराष्ट्र शोच करेंगे ६५ भाई सैन्य भृत्य सहित भ्रष्टैश्वर्य हो क्रोध के वशीभूत अल्पचित्त अहङ्कार के पीछे मारे जाने से काँपते हुए दुर्योधन पश्चात्ताप करेंगे ६६ एक समय सन्ध्यावन्दनाचमन करने के पीछे ब्राह्मण ने कहा था कि हे अर्जुन ! शत्रुओं के साथ लड़ दुष्कर कर्म करो ६७ तुम्हारे आगे आगे हरिद्वर्ण घोड़ों के रथ पर चढ़ शत्रुओं को नाशते हुए इन्द्र चलेंगे व सुग्रीवादि घोड़ों के रथ पर चढ़े पीछे पीछे श्रीकृष्णचन्द्रजी रक्षा करेंगे ६८ व हमने वज्र हाथ में लिये इन्द्रजी से युद्ध में कृष्णचन्द्रजी को सहाय माँगा था वे कृष्णचन्द्र इन चोरों के मारने के लिये हमको सहाय मिले इससे हम जानते हैं कि देवताओं ने ही यह हमारा कार्य किया ६९ वे कृष्णचन्द्र चाहे आप युद्ध भी न करें पर मन से भी जिस पुरुष की विजय चाहें उसके इन्द्रादि देव भी शत्रु हों तो उनको भी वह जीतले तो मनुष्यों के जीतने में कौन चिन्ता है ७० व जो पुरुष युद्धकर कृष्णचन्द्र को जीतना चाहे वह तो सगर के पुत्रों से बढ़ाये हुए अप्रमेय समुद्र को हाथों से उलचडारे या तैरकर पार चला जाय ७१ परन्तु यह बात है कि जो कैलासादि पर्वतों को अपने चटकनों से मार फोड़ना चाहे तो नहँ सहित उसका हाथ ही फटजायगा पर वह पर्वतों का कुछ भी न कर सकेगा ७२ व जो युद्ध से कृष्णचन्द्रजी को जीतने की इच्छा करे वह तो बरते हुए अग्नि को हाथों से बुझा सकता है व चन्द्रमा सूर्य को भी रोंक सकता है व देवताओं से जबरदस्ती अमृत छीन सकता

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

है ७३ कि जिन श्रीकृष्णचन्द्रजी ने रथ पर अकेले ही सवार हो समर में भोजदेश के राजा व उसकी सेना को जीत रुक्मिणीजी का विवाह कर लिया जिसमें महात्मा प्रद्युम्नजी उत्पन्न हुए ७४ व जिन कृष्ण-चन्द्रजी ने नग्नजित राजा के पुत्रों से बाँधे हुए सुदर्शन नाम राजा को गान्धारदेश निवासियों व नग्नजित् के पुत्रों को हठ से जीत छुड़ाया ७५ व इन्होंने अपनी छाती से पाण्डुदेश के राजा को पीस डारा तथा कलिंगदेश निवासियों को समर में मर्द्दन कर डारा व इन्हीं की फुँकाई हुई वाराणसीपुरी बहुत वर्षोंतक अनाथ परी रही ७६ व एकलव्य नाम निषादराज से कृष्णचन्द्रजी बहुत दिनों से युद्ध करना चाहते थे पर अब उसे इन्होंने मार डाला इससे वह पृथ्वी पर परा शयन कर रहा है जैसे जम्भासुर ने बड़े वेग से पर्वत चूर्ण करने के लिये पर्वत में टक्कर मारा पर पर्वत के टक्कर से आपही मर गया ७७ व इन्हीं कृष्णचन्द्रजी ने बलदेवजी के सङ्ग वृष्णिअन्धकवंशियों के स्वामी उग्र-सेन के पुत्र कंस को बीच सभा में मार उग्रसेन को राज्य दे दिया ७८ व इन्होंने आकाश में टिके हुए शाल्वदेश के राजासौभ को मार डाला व सौभ के द्वारपर उसी की प्रेरणा से चली आती हुई शक्ति दोनों हाथों से पकर ली फिर इनको कौन मनुष्य सह सकता है ७९ व प्राग्ज्योतिषनाम नगर में बड़ा भारी एक क़िला था जिसके सामने देवता दैत्य कोई नहीं जा सकते थे वहां भूमि का पुत्र नरकासुर रहता था उसने इन्द्र की माता अदितिजी के मणि के कुण्डल छीन लिया था ८० यद्यपि देवता लोग मृत्यु से नहीं डरते तथापि इन्द्रादि देवता उसे जीत न सके तब श्रीकृष्णचन्द्रजी का अपारणीय बल व अस्त्र देख ८१ उसके मारने के लिये देवगणों ने कृष्णचन्द्रजी को नियोजित किया व कृष्णचन्द्रजी ने भी उसके कर्म सुने कि यह बड़ापराक्रमी है ८२ पर वहां जाय छः सहस्र पाश जो उसके क़िला के किनारे किनारे बने थे उन्हें तोड़ उन्हीं पाशों में एक मुरनामा दैत्य था उसे मार सब पास

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दूर किये ८३ व वहां उस बड़े भारी बलवान् से इन महाबली विष्णु जी से युद्ध हुआ उसमें वह कृष्णचन्द्रजी के हाथों से मृत्युपाय पवन के वेग से गिरे हुए कर्णिकार वृक्ष के समान पृथ्वी पर सोया ८४ इस प्रकार पृथ्वी के पुत्र नरकासुर व मुरासुर को मार अदिति के मणिमय कुण्डल ले यश व श्रीयुक्त अप्रतिम प्रभाव कृष्णचन्द्रजी चले आये ८५ इस प्रकार का भयङ्कर कार्य किये कृष्णचन्द्रजी को देख देवताओं ने बहुत वरदान दिये कि हे कृष्ण! आज से तुम चाहे जितना युद्ध करोगे तुमको श्रम न होगा व आकाश जलादि में तुम्हारी गति होगी ८६ व तुम्हारे अङ्ग में किसी के चलाये शस्त्र घाव न कर सकेंगे इस प्रकार कृष्णचन्द्रजी अस्त्रविद्या में कुशल हैं व इस प्रकार के अप्रमाण बली कृष्णचन्द्रजी में गुणों की सम्पदा सदा बनी रहती है ८७ तिन असह्यवीर्य विष्णु अनन्तपराक्रम को दुर्योधन कहते हैं कि हम जीत लेंगे व सदा यही तर्कणा किया करते हैं पर ये हमलोगों की ओर दयाकर उनकी सब बातों को सहते हैं ८८ व दुर्योधन हठ से चाहते हैं कि हमारा व श्रीकृष्णचन्द्रजी का कलह होजाय परन्तु पाण्डवों के विषय में कृष्णचन्द्रजी को जो ममत्व है वह किसी के मिटाने के मान का नहीं है उसे कुरुक्षेत्र के युद्ध में जाय दुर्योधन अच्छी तरह जानेंगे ८९ इससे अब हम अपना राज्य पाने के लिये भीष्मपितामह, धृतराष्ट्र, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा व शारद्धत के प्रणामकर युद्ध करेंगे ९० व वह पापबुद्धि दुर्योधन पाण्डवों से लड़ना चाहता है तो धर्म ही से उसका मरण ठीक हो जायगा इसमें कुछ सन्देह नहीं क्योंकि उसने मिथ्या बाजी लगाय हम लोग पाण्डुपुत्रों को जीत लिया जिससे बारह वर्ष तक हम लोग वन में रहे ९१ व एक वर्ष जो गुप्त होकर हम लोग विराट नगर में रहे उसमें तो बड़ा ही कष्ट पाया फिर हम लोगों के जीते जी अधिकार पर बैठ दुर्योधनादि कैसे आनन्दित रहने पावेंगे ९२ कदाचित् इन्द्रादि देवताओं की भी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सहायता पाय वे लोग हम लोगों को युद्ध में जीत लेंगे तो धर्म से अधर्म ही करना श्रेष्ठ समझा जायगा निश्चय कोई धर्माचरण न करेगा ९३ जो पुरुष कर्माधीन न होंगे व हम लोग दुर्योधनादिकों से श्रेष्ठ न होंगे तो उन्हीं की जय होजायगी क्या सन्देह है नहीं तो हम वासुदेवजी की सहायता से ससहाय दुर्योधन को मारही डालेंगे ९४ व जो यह राज्य का न देना कर्म बन्ध्य न होगा व पुण्य निष्फल न होगी व जो हम लोगों को वनवास दिया था उसका भी फल विफल न होगा तो अवश्य दुर्योधन की पराजय होगी ९५ व यह बात कौरवों के सामने हम कहते हैं कि जो दुर्योधनादि युद्ध करना नहीं चाहते युद्ध से अन्यत्र ही कुरुवंशीय रहा चाहते हैं तो यहां भी कोई लड़ना नहीं चाहता ९६ व जो तुम लोग युद्ध ही किया चाहते हो हम अकेले ही कर्ण सहित धृतराष्ट्र के पुत्रों को मार सब राज्य जीत लेंगे अब तुम लोगों को जो करना हो करो अपने धन पुत्र स्त्रियों को देख सुन मिल भेंट रहो ९७ क्योंकि हमारे यहां वृद्धावस्था को प्राप्त बहुत शास्त्र पढ़े लिखे शीलवान् कुलीन वार्षिक समाचार कहने में चतुर नक्षत्रों के विचार में निश्चयज्ञ ऊंचे नीचे सब भाग्य के प्रश्न कहनेवाले ब्राह्मण लोगों ने कहा है कि इस वर्ष में कौरवों की क्षय होगी व पाण्डवों की जय ९८ । ९९ जिस प्रकार युधिष्ठिरजी शत्रुओं से वैर करना ही चाहते हैं उसी प्रकार वृष्णिसिंह श्रीकृष्णचन्द्रजी भी जय पराजय में संशय नहीं रखते शत्रुओं का निग्रह ही चाहते हैं अनुग्रह नहीं चाहते १०० व हम भी अप्रमत्त हो अपनी बुद्धि से वैसा ही देखते हैं कि यही भावी है व हमारी दृष्टि भी इस विषय में नहीं व्यथित होती कि युद्ध करने पर धृतराष्ट्र के पुत्र बने न रहेंगे १०१ व विना खींचे ही हमारा गाण्डीव धनुष हिलता है व विना हिलाये ही धन्वा की पनच काँपती है बाण भी तूण के मुख से बार बार निकलना चाहते हैं १०२ खड्ग मियान से बार बार निकलती

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

है जैसे पुरानी खाल को छोड़ सर्प निकलता है व पताका से रूखी बातें सुनाई देती हैं कि अर्जुन तुम्हारा रथ कब युद्ध करने के लिये चलेगा १०३ रात्रि में शृगालों के झुण्ड के झुण्ड शब्द करते हैं व अन्तरिक्ष से राक्षस पृथ्वी पर गिरते हैं व मृगगण, शृगाल, मयूर, काक, गृध्र, बगुला, ऋक्ष १०४ व सुवर्णपत्रादि पक्षी ये सब श्वेत घोड़े मचा हमारा रथ देख उसके पीछे अपने आप गिरते हैं इससे हम अकेले ही बाण बरसाते हुए सब राजाओं को मृत्यु लोक को भेज देंगे १०५ जब हम पृथक् पृथक् अस्त्र समूह धारण करेंगे तो शत्रुओं को ऐसे भस्म करेंगे जैसे ग्रीष्म ऋतु में अग्नि वन जलाता है व जो पाशुपतास्त्र व ब्रह्मास्त्र इन्द्रजी ने हम को दिया है १०६ उन वेगवान् अस्त्रों को जब हम शत्रुओं के मारने के लिये धारण करेंगे तो फिर किसी को बाकी न रक्खेंगे व तभी हम शान्ति को भी प्राप्त होंगे हे सञ्जय ! यह हमारा अभिप्राय सबों से कहना ॥ १०७ ॥

हरिगीतिका ।

धृतराष्ट्र सुत इन्द्रादि सुरगण पायहू जीता चहैं ।
पर तबहुँ नहिं संग्राम जिति हैं बात हम साँची कहैं ॥
यह गुनत निजमन मोहताकर है सबै देखें सही ।
धृतराष्ट्रनन्दन करत हठवश कलह फल पैहैं वही ॥१।१०८॥
वृद्ध भीष्म पितामहरु कृप द्रोण विदुर महानहू ।
अरु द्रोणतनय महान ये सब कहहिं जो सोई सहू ॥
सब होहिं कौरव दीर्घजीवी हमहुँ सुख यहिमा लहैं ।
अब और बात दिखात नाहिं नाहिं हमहुँ कछु औरै कहैं ॥२।१०९॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्यष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उनचासवां अध्याय ।

दो० उञ्चासवयें महँ कहब, भीष्म कह्यो जिमि बैन ।
सुनि सञ्जय के वचनवर, जासु सुने ही चैन ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि, सब राजा लोग एकत्र बैठे थे उन सबों के सामने शन्तनुजी के पुत्र भीष्मजी दुर्योधन से यह वचन बोले कि १ एक समय बृहस्पतिजी व शुक्राचार्य ब्रह्माजी के पास बैठे थे व इन्द्रादि सब देवता ८ वसु ३ अग्नि २ । १२ सूर्य, साध्यगण, सप्तर्षि लोग, विश्वावसु नाम गन्धर्व और अच्छी २ अप्सरा ३ ये सब लोक भर से वृद्ध ब्रह्माजी के नमस्कार कर व चारों ओर घेर सब देवगण बैठे थे ४ उन सबों के मन व तेज अपने पराक्रम से ग्रहण करते ही पूर्व के देवता नर नारायण ऋषि वहां आये ५ तब बृहस्पतिजी ने ब्रह्माजी से पूछा कि ये कौन महात्मा हैं जो आप को भी प्रणाम नहीं करते वे बैठे हैं हे पितामह ! इन दोनों जनों को हम से बताइये ६ ब्रह्माजी बोले कि, जो ये महाबली तपस्वी अपनी तपस्या से ही पृथ्वी व अन्तरिक्ष को प्रकाशित करते हैं ७ ये नर नारायण ऋषि हैं मनुष्य लोक से ब्रह्मलोक में आये हैं व ये दोनों अपने ही तप से बढ़े हैं व महाबल पराक्रमी हैं ८ इन दोनों जनों ने अपने कर्म से लोक भर को आनन्दित किया है व दैत्यों का नाश करने के लिये देवता गन्धर्वादिकों ने भी इनकी पूजा की है ९ वैशम्पायनजी बोले कि, यह सुन इन्द्रजी वहां चले गये जहां कि जाय नर नारायण तपस्या करने लगे थे इन्द्रजी के सङ्ग सब देवता व बृहस्पतिजी भी गये १० व उसी समय में देवासुर नाम संग्राम हुआ था देवता लोगों को बड़ी भय उत्पन्न हुई थी इससे इन्द्र ने उन दोनों महात्मा नर नारायणजी से वरदान माँगा ११ तो उन दोनों जनों ने कहा कि, अच्छा जो वरदान माँगना हो माँगो, तब इन्द्र ने कहा हमारी सहायता आप

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दोनों कीजिये १२ तब उन दोनों जनों ने कहा अच्छा जो तुम चाहते हो हम दोनों करेंगे तब उन दोनों के सङ्ग इन्द्रने बहुत से दैत्यों व दानवों को जीता १३ उनमें नर ने संग्राम में इन्द्र के शत्रु पौलोम व कालजङ्घ नाम सहस्रों को मार डाला १४ सो अर्जुन वही नर ही हैं इन्होंने स्थिर रथ पर चढ़े ही चढ़े इन्द्र को ग्रसते हुए जम्भासुर का शिर बाण से काट डाला १५ व इन्होंने समुद्र के पार साठ हज़ार निवात-कवचनाम राक्षसों को जीत हिरण्यपुर को पीड़ित किया १६ व इन्हीं अर्जुन ने इन्द्रादि देवताओं को जीत खाण्डव वन दे अग्नि को तृप्त कर दिया १७ व इसी प्रकार नारायणजी ने बहुत से अन्य लोगों को मारा इस तरह इन दोनों महापराक्रमियों को देखो आये हैं १८ वासुदेव व अर्जुन ये दोनों महारथी नारायण व नर हैं व पूर्व समय के देवता हैं अब इसलोक में इन्द्रादि देवगण भी इनको नहीं जीत सकते १९ ये कृष्णचन्द्रजी तो नारायण हैं व अर्जुनजी नर हैं नारायण व नर एकही पराक्रम रखते हैं पर स्वरूप दो दिखाई देते हैं २० ये दोनों कर्म ही करने के लिये लोक में व्याप्त हुए हैं व जहां जहां युद्ध करने का काम परता है वहां प्राप्त होते हैं २१ नारदजी ने इन दोनों के लिये कह दिया है कि तुम युद्ध ही किया करो यह सबसे उन्होंने कहा है क्योंकि वे वृष्णिवंशियों को अच्छी तरह जानते हैं २२ हे दुर्योधन! जब शङ्ख, चक्र, गदा हाथों में लिये कृष्णचन्द्रजी को व अस्त्र शस्त्र धारण किये भयङ्कर धनुर्द्धारण किये अर्जुन को इन दोनों सनातन महात्माओं को एकही रथ पर चढ़े देखोगे तब हमारे वचनों का स्मरण करोगे २३।२४ व जो तब भी हमारे वचनों का स्मरण न करोगे तो कौरवों का अभाव भी होजायगा क्योंकि हे तात! तुम्हारी बुद्धि अर्थ धर्म दोनों से आजकल बनाय पृथक् होगई है २५ कदाचित् हमारा कहा न मानोगे तो बहुतों को मारे हुए सुनोगे क्योंकि सब कुरुवंशीय तुम्हारे ही मतपर चलते हैं २६ व तुम इन्हीं तीन दुष्टों का मत मानते हो एक

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तो परशुराम जी के शाप से युक्त सूतपुत्र कर्ण का २७ दुर्मति सुबल के पुत्र शकुनी का व इसी तरह क्षुद्र स्वभाव पापी अपने भाई दुश्शासन का २८ इतना सुन कर्ण बोले कि जो हमको पितामहजी आप कहते हो वह आयुष्मान् को न कहना चाहिये हम क्षत्रिय के धर्म में टिके हैं अपने धर्म से बाहर नहीं है २९ फिर और हम में कौन दुराचरण है जिससे आप हमारी निन्दा करते हो हमारा दुःख धृतराष्ट्र के पुत्र कोई कुछ नहीं जानते ३० व न हमने आजतक दुर्योधन का कुछ दुःख किया है हां जो हम कहते हैं अवश्य करेंगे भी हम अकेले ही पांचो पाण्डवों को मारडालेंगे पर जो वे रण में हमारे सामने आवेंगे ३१ जिनसे प्रथम विरुद्ध होचुका सज्जन लोग फिर उनसे मेल मिलापकर शान्त कैसे हों हम राजा धृतराष्ट्र का व दुर्योधन का सब प्रिय करेंगे क्योंकि राजा वही दोनों जने हैं पर और किसी का कहा तो हम न मानते हैं न मानेंगे ३२ वैशम्पायनजी बोले कि कर्ण के वचन सुन शन्तनुजी के पुत्र भीष्मजी महाराज धृतराष्ट्र को अपनी ओर चिताय यह वचन बोले कि ३३ यह कर्ण जो नित्य बका करता है कि हम अकेले पाण्डवों को मार डालेंगे यह महात्मा पाण्डवों का सोलहवां भाग भी पूरा नहीं है ३४ व जो अन्याय दुरात्मा तुम्हारे पुत्रों को आनेवाला है वह इसी दुर्मति सूतपुत्र ही का कर्म जानो ३५ व इसी के मत पर टिका मन्दबुद्धि तुम्हारा पुत्र दुर्योधन देवपुत्र शत्रुनाशक पाण्डवों का अपमान करता है ३६ क्या पाण्डवों ने जो पूर्व समय में एक एक ने कर्म किया है वह दुष्कर कर्म इसने कभी किया है जो बार बार बकता है ३७ विराट नगर में जब अर्जुन ने इसके भाई को मारडाला उसे देख इसने क्या कर लिया ३८ अर्जुन ने अकेले आय हम सब कौरवों का मथन कर सब के वस्त्र तक छीन लिया तब क्या यह कहीं विदेश को चला गया था ३९ जब घोष यात्रा में गन्धर्व लोग तुम्हारे पुत्र दुर्योधन को पकड़े लिये जाते थे तब यह सूत का

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पुत्र कर्ण कहां था जो अब बड़ा भारी वीर बनता है ४० वहां अकेले अर्जुन ही ने नहीं बरन भीमसेन ने युधिष्ठिर ने व नकुल सहदेव ने भी इकट्ठे होकर उन गन्धर्वों को पराजित किया था ४१ हे भरतर्षभ! ये जो बहुत सी बातें यह बकता ही चला जाता है सब झूठी हैं व सर्व धर्म अर्थ के लोप करनेवाली हैं ४२ भीष्मजी के वचन सुन बड़े प्रसन्न हो व बड़ाई करते हुए द्रोणाचार्यजी धृतराष्ट्रजी से बोले ४३ हे राजन्! भरतश्रेष्ठ भीष्मजी ने जो कहा है वही कीजिये धन के लोभियों के कहे वचन कभी न कीजिये ४४ हम भी युद्ध से प्रथम ही पाण्डवों के सङ्ग मेल करना ही अच्छा समझते हैं क्योंकि जो अर्जुन की कही बातें सञ्जय ने कही हैं ४५ हम जानते हैं अर्जुन सब करेंगे इसमें कुछ भी अन्तर न परेगा क्योंकि अर्जुन के समान तीनों लोकों में आज कल कोई धनुर्द्धर नहीं है ४६ अर्थयुक्त भीष्मजी के व द्रोणाचार्य के वचन का निरादर कर राजा धृतराष्ट्र सञ्जय से फिर पाण्डवों को पूछने लगे ॥ ४७ ॥

दो॰ भीष्म द्रोणसन नृपति जब, नहिं बोल्यहु करि प्रीति।
तबहिं निराश भये सकल, कौरव गुनि जिय भीति ॥ १।४८ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥

पचासवां अध्याय।

दो॰ पचासवयें महँ कहब, जिमि सञ्जय नृप पाहिं।
कह्यहु बहुरि पाण्डव चरित, अरुजो नृपति तहांहिं ॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी सञ्जय से बोले कि, धर्म के पुत्र पाण्डव राजा युधिष्ठिरजी ने क्या कहा है व हमारी प्रसन्नता के लिये जो यह बहुत सेना आई है, उसे सुन युद्ध करने की इच्छासे युधिष्ठिरजी क्या कर रहे हैं व उनके भाइयों तथा पुत्रों की आज्ञा चाहते हुए कौन लोग मुख की ओर निहारते हैं १। २ व स्वभाव से अकोपित पर दुष्टों से कोपित राजा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

युधिष्ठिरजी को युद्ध करने से कौन लोग रोंकते हैं ३ सञ्जय बोले कि राजा युधिष्ठिर का मुख सब पाञ्चाल व पाण्डव देखते हैं व युधिष्ठिरजी सबको सिखलाते रहते हैं ४ पाण्डवों व पाञ्चालों के रथ समूह अलग अलग कुन्तीजी के पुत्र युधिष्ठिरजी को आते देख अभिनन्दित करते हैं ५ आकाश में उदित सूर्य के समान प्रकाशित युधिष्ठिरजी तेजोराशि को देख पाञ्चाल लोग अभिनन्दित करते हैं ६ व गाई बकड़ी आदि के चरवाहों से ले व पाञ्चाल देश निवासी तथा मत्स्यदेश निवासी सब युधिष्ठिरजी को अभिनन्दित करते हैं ७ व युधिष्ठिरजी को युद्ध करने के लिये उद्यत देखने को सब ब्राह्मणियां व राजपुत्रियां तथा वैश्यों की कन्या खेलती खेलती सदा वहां आती हैं ८ धृतराष्ट्रजी बोले कि अब धृष्टद्युम्न व सोमवंशियों की सेना पाय व और जिस किसी की सेना पाय पाण्डव लोग हम लोगों से युद्ध करने को सन्नद्ध हुए हों उनको बताओ कौन कौन हैं ९ वैशम्पायनजी बोले कि जब इस प्रकार सञ्जयजी से कुरुवंशियों की सभा में धृतराष्ट्रजी ने पूछा तो बड़ी देर तक चिन्तना करते ही से सञ्जय अत्यर्थ ऊधी श्वासें ले १० विना कारण ही उनको बड़ा कष्ट हुआ यहां तक कि वे मूर्च्छित होगये उनकी वह दशा देख सभा में विदुरजी बोले कि ११ हे महाराज ! ये सञ्जय तो मूर्च्छित हो पृथ्वी पर गिर परे अब ऐसे हीनप्रज्ञ होगये हैं कि कुछ बोल ही नहीं सकते १२ धृतराष्ट्रजी बोले कि निश्चय है कि सञ्जय ने महारथ कुन्तीपुत्रों को देखा है इसी से उन पुरुषसिंहों ने इनके मन को उद्वेजित करा दिया है १३ वैशम्पायनजी बोले कि इतने में चैतन्य हो सञ्जय श्वास सँभार सभा में महाराज धृतराष्ट्रजी से बोले १४ कि हे महाराज ! विराट राजा के गृह में बसने से कुन्तीजी के पुत्रों को हमने बहुत दुर्बल देखा १५ हे महाराज ! सुनिये जिन लोगों के सहाय से पाण्डव लोग आपसे युद्ध करने को सन्नद्ध हुए हैं एक तो वीर धृष्टद्युम्न के सहाय से पाण्डव लोग तुम्हारे साथ युद्ध करने को सन्नद्ध

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हुए हैं १६ व जो धर्मात्मा न रोष से न भय से न धन के हेतु से न कारणों के वाद से कभी सत्य को छोड़ सकते हैं १७ व जो धर्मधारियों के धर्म में प्रमाण हैं ऐसे युधिष्ठिरजी के सहाय से पाण्डव लोग युद्ध करने को सन्नद्ध हुए हैं १८ व जिन भीमसेनजी ने काशी निवासियों तथा अङ्ग मगध व कलिङ्गनिवासियों को जीता उनके सहाय से पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करने को सन्नद्ध हुए १९ व जिसके वीर्य से चारों पाण्डव लोग बड़ी जल्दी लाक्षाभवन से निकले व फिर हिडिम्ब राक्षस रूप समुद्रजल में थाह लेने को द्वीपरूप हुए २० व जब जयद्रथ ने द्रौपदी को पकर खींचा था तब जो कुन्तीपुत्र भीमसेनजी जिन पाण्डवों को द्वीप हुए थे २१ व जिस भीमसेन ने वारणावत में जरते हुए सब पाण्डवों को छुड़ाया उनके सहाय से पाण्डव लोग तुम्हारे साथ युद्ध करने को सन्नद्ध हुए २२ व जिस भीमसेनजी ने विषम घोर गन्धमादन पर्वत पर जाय द्रौपदी की रति की प्रीति दिखाई व अपने क्रोध से औरों को पराजित किया २३ व जिनके भुजों में दश सहस्र हस्तियों के पराक्रम का सार है उन भीमसेनजी के सहाय से पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करने को सन्नद्ध हुए हैं २४ व जिन्होंने कृष्णचन्द्रजी के सङ्ग रह पराक्रम से इन्द्रादि देवों को जीत अग्नि को खाण्डव वन दिया २५ व जिन्होंने युद्ध में साक्षात् शूल-पाणि गिरीश उमापति महादेवजी को सन्तुष्ट कर दिया २६ व जिन्हों ने धनुर्द्धारण कर सब लोकपालों को अपने वश में कर लिया उन अर्जुनजी की सहायता से पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करने को उद्यत हुए हैं २७ व जिसने पश्चिम दिशा के निवासी सब म्लेच्छों को जीत वह दिशा अपनी वश में कर ली वे चित्र विचित्र योद्धा नकुल जी वहां विद्यमान हैं २८ उन अति दर्शनीय धनुर्द्धारी वीर माद्रीजी के पुत्र नकुल के सहाय से पाण्डव लोग तुम्हारे साथ युद्ध करने को सन्नद्ध हुए हैं २९ व जिन सहदेवजी ने काशी, अङ्ग, मगध व कलिङ्ग

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

देश निवासियों को समर में जीत लिया उन्हीं के सहाय से पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करने को सन्नद्ध हैं ३० व जिसके वीर्य के सदृश पृथ्वी में चार ही पुरुष हैं पाँचवां नहीं ३१ एक अश्वत्थामा, दूसरा धृष्टकेतु, तीसरा रुक्मी, चौथे प्रद्युम्न उन्हीं सबसे छोटे माद्री के पुत्र सहदेव की सहायता से पाण्डव लोग तुम्हारे सङ्ग युद्ध करने को उद्यत हैं ३२ व जो अम्बानाम काशिराज की कन्या ने पूर्वकाल में ३३ भीष्मपितामहजी के वध की इच्छा से घोर तप किया था व चाहा था कि मैं मरकर भी जहां कहीं जन्म लूं भीष्म को मारूं व पाञ्चालराज की कन्या हुई भाग्यवश से फिर वही पुरुष हो गई ३४ व स्त्री पुरुष दोनों के गुण जो अच्छी तरह जानती रही वही पुरुष युद्ध में महादुर्मद पाञ्चालराज का पुत्र कलिङ्गदेश के राजाओं से लड़ा ३५ उस शिखण्डी वीर की सहायता से पाण्डव लोग तुम कुरुवंशियों से युद्ध करने को सन्नद्ध हैं ३६ व जिसे भीष्म के वध की इच्छा से कुबेर ने पुरुष बनाया उसी बड़े धनुर्द्धर के सहाय से पाण्डव लोग तुम्हारे सङ्ग युद्ध करने को उद्यत हुए हैं ३७ व बड़े भारी धनुर्द्धर पांच भाई केकयराज के पुत्र सदा कवचादि धारण किये रहते ऐसे शूर हैं उनके सहाय से पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करने को सन्नद्ध हैं ३८ व जो दीर्घबाहु शीघ्र अस्त्र चलानेवाले सत्य विक्रम वृष्णिवंश में वीर सात्यकीजी हैं उनसे तुमसे युद्ध होगा ३९ व जो १२ वर्ष वनवास करने के पीछे महात्मा पाण्डवों के शरण हुए थे उन राजा विराट से तुमसे युद्ध होगा ४० व जो काशीपतिराजा वाराणसीपुरी में बसता है वह पाण्डवों का योद्धा हुआ है इससे वे लोग तुमसे युद्ध करने को सन्नद्ध हुए हैं ४१ व द्रुपदराज के महात्मा पुत्र जो विषधर सर्प समान स्पर्श करने में हैं उनको पाय पाण्डव लोग तुमसे युद्ध किया चाहते हैं ४२ व जो वीर्य में अर्जुन के तुल्य व इन्द्रियों के दमन करने के विषय में युधिष्ठिरजी के तुल्य हैं उन वीर अभिमन्यु के साथ पाण्डव

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लोग तुमसे युद्ध करने को सन्नद्ध हुए हैं ४३ व जो शिशुपाल का पुत्र महायशस्वी समर में दुस्सह धृष्टद्युम्न वीर है उस चेदिराज की सहायता से पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करने को सन्नद्ध हुए हैं ४४ जो कि धृष्टद्युम्न एक अक्षौहिणी सेना ले पाण्डवों के समीप आया है ४५ व जो वासुदेवजी पाण्डवों के आश्रय देवताओं के आश्रय इन्द्र के समान हैं उनकी सहायता से पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करने को सन्नद्ध हुए हैं ४६ व उसी प्रकार का उसका भाई शरभ है व उसके सङ्ग उसका भाई करकर्ष भी है इन दोनों की सहायता से पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करने को सन्नद्ध हैं ४७ व जरासन्ध के पुत्र सहदेव व जयत्सेन युद्ध में अद्वितीय वीर ये दोनों पाण्डवों के अर्थ युद्ध करने पर उद्यत हैं ४८ व राजाद्रुपदजी भी बड़ी भारी सेना ले पाण्डवों के अर्थ तुमसे युद्ध करने को उद्यत हैं ४९ ये व इनको छोड़ और भी पूर्व पश्चिम उत्तर के बहुत से राजा लोग सहस्रों वहां आये हैं जिन सबों के आश्रय से पाण्डव लोग तुम्हारे सङ्ग युद्ध करने को सन्नद्ध हुए हैं ॥ ५० ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥

इक्यावनवां अध्याय।

दो० इक्यावनवें महँ कहब, जिमि धृतराष्ट्र बहोरि।
भीमसेन की बहुत ही, कीन बड़ाइ कठोरि ॥ १ ॥

इतना सुन धृतराष्ट्रजी बोले कि हे सञ्जय! जिनको तुमने गिनाया वे सब बड़े धनुर्द्धर हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं परन्तु ये सब मिलकर एक ओर व एक ओर अकेले भीमसेन हैं १ इससे हे तात! असहनशील क्रोध किये हुए भीमसेन से हमको महाभय उत्पन्न होती है जैसे व्याघ्र से महामृग को भय होती है २ हम लम्बी व ऊंची श्वासें लेते सब रात्रियों में जागते ही रहते हैं भीमसेन के भय से जागते ही

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

रहते हैं जैसे व्याघ्र के भय से और मृगगण जागते रहते हैं ३ व अपनी सेना में हम ऐसा किसी को नहीं देखते जो इन्द्रसमान पराक्रमी महाबाहु भीमसेन के सामने युद्ध में खड़ा हो व उनको सह सकै ४ इससे असहनशील व दृढ़ वैरकारी सत्य सत्य हास्य करनेवाले सदा तिरछे देखनेवाले महावेग महापराक्रम महाबाहु महाबल भीमसेनजी मन्दबुद्धि हमारे पुत्रों का युद्ध में नाश कर डालेंगे ५। ६ महानिर्बन्ध के वशीभूत कुरुवंशियों को गदा हाथ में लिये भीमसेन यमराज ही के समान युद्ध में हैं ७ आठकोन की लोह से बनी व सुवर्ण से भूषित भीमसेन की महागदा उद्यत ब्रह्मदण्ड के समान हम देखा करते हैं ८ जैसे मृगों के यूथों में बड़े बल से सिंह पिलता है वैसे ही हमारी सेनाओं में भीमसेन पिलेंगे ९ ये भीमसेन सब हमारे पुत्रों से क्रूर विक्रम हैं व बाल्यावस्था ही में सबसे अधिक भोजन करते थे व सबसे अधिक वेगवान् भी थे १० जो बाल्यावस्था में हमारे पुत्रों के साथ भीमसेन लड़ते थे तभी वे हाथी के समान इनको मर्दित कर डालते थे उसी का स्मरण कर हमारा हृदय कँपता रहता है ११ व उन्हीं के वीर्य में सदा हमारे पुत्र लपटे रहते थे व वही भीमपराक्रमी भीम ही इन लोगों के बीच में भेद डालने के मूल हैं १२ व मनुष्य घोड़े हाथियों की सेनाओं को निगलते भीमसेन को समर में क्रुद्ध हम अपने आगे ही खड़े से देखते हैं १३ अस्त्र में द्रोणाचार्य व अर्जुन के समान वेग में वायु समान क्रोध में महादेव के तुल्य भीमसेन को संग्राम में कौन मारेगा १४ हे सञ्जय ! असहनशील महाशूरवीर हमारे भीमसेन के समाचार कहो हम उनको अलभ्य लाभ समझते हैं जो कि उन शत्रुघाती ने १५ तभी खेलने ही के समय व वनवासादि ही के समय हमारे पुत्रों को नहीं मार डाला क्योंकि उन्होंने आगे बड़े बड़े बलवान् यक्षों को मार डाला था १६ फिर उनका वेग संग्राम में कोई मनुष्य कैसे सह सकेगा हे सञ्जय ! भीमसेन तो बाल्या-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वस्था में भी हमारे वश में नहीं रहते थे १७ फिर अब जब कि हमारे दुष्ट पुत्रों से नाना प्रकार के क्लेश पा चुके तब तो और भी निठुर रोषी हो हमसे दूर भागेंगे वे हमारे सामने कभी न नम्र होंगे सदा तिरछे देखते टेढ़ी भौंहें किये भीमसेन कैसे शान्त होंगे १८ व शूरवीर अप्रतिबल गौर स्वरूप ऊंचे ताल के समान व लम्बाई में भीमसेन अर्जुन से भी बीता भर अधिक हैं १९ व वेग से तो वे घोड़ों को अतिक्रमण कर जाते व बल से हाथियों का वे पाण्डवों में मध्यम, मधुमत्तनेत्र, बली, भीमसेन सदा स्पष्ट वार्त्ता नहीं करते जो कहते हैं हुङ्कार ही भरकर कहते हैं २० व हमने व्यासजी के मुख से भीमसेन की बाल्यावस्था ही में सुना था कि रूप से वीर्य से भीमसेन यथातथ्य पाण्डु व पवन ही के समान हैं २१ व जब ये समर में क्रोध करेंगे तो लोह की गदा से रथ, हाथी, घोड़े व मनुष्य सबको मार डालेंगे २२ ऐसे असहनशील नित्य क्रोधी प्रहार करनेवालों में श्रेष्ठ भीमसेन का पूर्व समय में अप्रिय कर हमने बड़ा अपमान किया २३ अब हम यह शोचते हैं कि कानों तक खींचकर चलाई हुई लोह की बड़ी मोटी सुवर्ण से भूषित जंजीरों से बँधी भीमसेन की गदा जो कि सैकरों को एक ही सङ्ग नाशती है व वज्र का सा जिसमें नाद होता है उसे हमारे पुत्र कैसे सह सकेंगे २४ व वे मन्द हमारे पुत्र अपार नौका को भी अथाह शर से बेधन करने के योग्य भीमसेनरूप दुर्गम समुद्र उतरा चाहते हैं २५ ये हमारे मूर्ख लड़के हम बका करते हैं सुनते ही नहीं क्या करें मदिरा से मत्त लोग खाली ऊंचा विषम मानते ही नहीं २६ जो नररूप मृत्यु के सामने समर में जायँगे उनको जानों ब्रह्मा ने प्रेरणा की जैसे सिंह मृगों को मरने की प्रेरणा करता है २७ व ६ कोण की चार हाथ की लम्बी अमित पराक्रमी दुःख से स्पर्श करने के योग्य सिकहर में स्थापित किये भीमसेन की चलाई गदा हमारे पुत्र कैसे सहेंगे २८ व गदा घुमाते हाथियों का मस्तक फोरते, जीभ से इधर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उधर ओठ चाटते बार बार मुख से थूंक निकालते २६ हाथियों की ओर निहारते भयङ्कर नाद करते व हाथियों के ऊपर जोर से कूदते व गर्ज्जते ३० व रथ मार्गों में कूदते फांदते उनके सवारों को मींजते मांजते प्रज्वलित अग्नि के समान वर्त्तमान भीमसेन से मेरी प्रजा कैसे बचेगी ३१ हमारी सेना को विदारित करते रथ जाने का मार्ग बनाते गदा हाथ में लिये महाबाहु भीमसेन प्रलय समय दिखावेंगे ३२ पुष्पित वृत्तों को तोड़ते हुए मदान्ध हाथी के समान हमारे पुत्रों की सेना को विदारते भीमसेन रण में प्रवेश करेंगे ३३ व रथी घोड़े सारथि रहित रथों को करते व रथियों तथा सवारों को भञ्जन करते तीर के वृत्तों को ढहाते हुए गङ्गावेग के समान भीमसेन हमारे पुत्रों की सेना में पैठेंगे ३४ । ३५ हे सञ्जय ! हमारे पुत्र, भृत्य व राजा लोग सब भीमसेन की भय से पीड़ित दिशों में भागते फिरेंगे ३६ जिन भीमसेन वीर ने कृष्णचन्द्र की सहायता से महापराक्रमी जरासन्ध को उसके स्थान में जाय मारा ३७ जिस बली जरासन्ध ने सम्पूर्ण पृथ्वी जीत अपने वशकर प्रतापित किया था ३८ देखो भीष्मजी के प्रताप से कुरुवंशीय अन्धक वृष्णिवंशीय जरासन्ध के वशीभूत नहीं हुए सो भी भाग्य ही का बल था ३६ ऐसे जरासन्ध को बाहुशाली भीमसेनजी ने जाय विना आयुध धारण किये ही मार डाला फिर उससे अधिक कौन है जिसे भीमसेन न मार डालेंगे ४० जैसे बहुत काल से इकट्ठा किया विष विषधर सर्प लोगों पर छोड़ता है उसी तरह हमारे पुत्रों के ऊपर रण में भीमसेन तेज छोड़ेंगे ४१ व देवताओं में अति श्रेष्ठ इन्द्रजी जैसे वज्र से दानवों को मारते हैं ऐसे ही गदा हाथ में लिये भीमसेन हमारे पुत्रों को मार डालेंगे ४२ सहने के अयोग्य अतिवीर्यवान् तीव्रवेग पराक्रमी भीमसेन को लालनेत्र किये आगे रण में कूदते ही से हम देखा करते हैं ४३ गदा रहित धनुर्हीन रथ पर न चढ़े हुए व कवचादि न धारण किये हुए भीमसेनजी से केवल

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

मलयुद्धही में इधर का कौन वीर आगे खड़ा होगा ४४ जिस प्रकार हम धीमान् भीमसेन का वीर्य जानते हैं भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य भी जानते हैं ४५ ये भीष्मादिक हमारे यहां के वीर जब सेना के आगे खड़े होंगे तब अपना नाश अच्छी तरह जानेंगे ४६ उन लोगों की विजय देखते भी हैं परन्तु जो हम अपने पुत्रों को नहीं रोंकते उससे यह स्पष्ट है कि पुरुष की भाग्य बड़ी बलवती होती है चाहे जो करे ४७ वे सब महाधनुर्द्धर पुराने स्वर्ग मार्ग पर टिके हैं इससे राजयश की रक्षा करते रण में अपने प्राण छोड़ने पर तैयार होजायँगे ४८ व जैसे भीष्मजी के पौत्र व द्रोणाचार्य कृपाचार्य के शिष्य हमारे पुत्र हैं ऐसेही पाण्डव लोग भी इन लोगों के पौत्र शिष्य हैं ४९ व जो कुछ हमारे आश्रय से थोड़ा बहुत इष्टान्नादि इन लोगों को मिलता है उसका उपकार श्रेष्ठ होने के कारण ये तीनों वृद्ध करेंगे ५० क्योंकि क्षत्रिय के धर्म को ग्रहणकर जो क्षत्रिय समर में शस्त्र लेकर खड़ा हुआ व मारा गया उसका वही उत्तम धर्म है ५१ परन्तु जो कोई पाण्डवों से युद्ध करना चाहते हैं उन सबों को हम शोचते हैं क्योंकि जो विदुरजी ने कहा था उससे भय होती है ५२ हे सञ्जय! हम इस दुःख के मिटाने के लिये कोई ज्ञानही नहीं मानते यह होनेवाला दुःख अति बलवन्त है ज्ञान से निवारण करने के योग्य नहीं ५३ देखो निर्मुक्त ऋषि लोग भी लोक का संग्रह देख सुख से सुखी होते व दुःख से दुःखी ५४ फिर हमारी कौन गणना है जो पुत्र, राज, स्त्री, पौत्र व बन्धुओं में सहस्रों प्रकार से आसक्त हैं ५५ अब इस बड़े भारी संशय में हमको और कुछ उत्तर नहीं दिखाई देता बस जब विचारते हैं तो कौरवों का विनाश ही नजर आता है ५६ जुआं आदि जो पाण्डवों के सङ्ग खेले गये वही कौरवों के दुःख के कारण हुए सो वे सब राज्य ऐश्वर्य की कामना से इस मन्दबुद्धि दुर्योधन ने किये ५७ हम जानते हैं कि अन्तगामी काल का धर्म विपरीत है उससे भाग

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बत्र भी नहीं सक्के जैसे पहिया की पुट्ठी रथ को छोड़ अलग नहीं चल सक्ती ॥ ५८ ॥

दो० काहकरौं कहँ जाहुँ किमि, करहुँ कछू सुनु सूत ।
कालपाश फन्दित इमें, कौरवनशत न बूत ॥ १ । ५६ ॥
जब ये शत सुत मरहिंगे, अवश सुनेंगे तात ।
कौरव नारि विलाप हम, लखब न मरणापात ॥ २ । ६० ॥
यथा ग्रीष्म महँ पवनयुत, अनल दहत तृणभूर ।
तिमि अर्ज्जुन युत सगदकर, भीम दहैं मम शूर ॥ ३ । ६१ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥

बावनवां अध्याय ।

दो० बावनवें महँ कहब जिमि, किय धृतराष्ट्र विलाप ।
सुमिरि सुमिरि अर्ज्जुन चरित, यथातथ्य न प्रलाप ॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी बोले कि, जिन अर्ज्जुन की झूंठी बात कभी हमने सुनी ही नहीं वे अर्ज्जुन जिस समाज में योद्धा हों तीनों लोक का राज्य उसी का है १ हम उन्हीं गाण्डीवधन्वा अर्ज्जुन ही के सामने युद्ध में जानेवाला शूर नहीं देखते यही तो निरन्तर चिन्तवन करते रहते हैं २ हृदय विदारण कानतक खींच चलाये बाणसमूह चलाते अर्ज्जुन के सामने खड़ा होनेवाला वीर हम नहीं देखते ३ व समर में अपराजित बलवानों में श्रेष्ठ अस्त्रविद्या में निपुण पुरुषों में श्रेष्ठ बड़े वीर द्रोणाचार्य्य व कर्ण युद्ध करने को जायँ तो ४ यह बड़ा भारी सन्देह है कि कर्ण को भीमादिकों के ऊपर कृपा आ जायगी व द्रोणाचार्य्य वृद्ध ही हैं फिर उनके भी गुरु हैं हां शायद अन्त में विद्या का स्मरण न करें बात यह कि सब प्रकार हमारी विजय नहीं हो सक्ती व अर्ज्जुन सब प्रकार समर्थ बलवान् दृढ़ धनुर्द्धर हैं युद्ध बड़ा भारी होगा पर विजय पाण्डवों की ही होगी ५ । ६ सब पाण्डव अस्त्रविद्या में निपुण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हैं व सबों ने बड़ा यश पाया है इससे चाहे सब देवताओं का ऐश्वर्य्य वे लोग छोड़ दें पर विजय को न छोड़ेंगे ७ कर्ण व द्रोणाचार्य्य के मारेजाने पर हमारी ओर शान्ति हो जायगी व अर्ज्जुन के मारेजाने पर पाण्डवों की शान्ति हो जायगी परन्तु अर्ज्जुन का न कोई मारने ही वाला है न जीतने ही वाला फिर इधर ही की शान्ति होगी ८ भला मन्दबुद्धि इन हमारे पुत्रों के विषय में जो अर्ज्जुन का क्रोध उठा है वह कैसे शान्त हो और लोग भी अस्त्र जानते हैं पर वे कभी हारते हैं कभी जीतते हैं ९ भाई सदा जीत होनी तो अर्ज्जुन ही की सुनाई देती है देखो ३३ वर्ष हो गये उन्होंने देवताओं को जीत अग्नि को खाण्डव वन दे तृप्त कराया १० सब देवताओं को जीत लिया हम लोग तो उनकी पराजय कहीं नहीं जानते फिर जिसके रथ के हांकने-वाले श्रीकृष्णचन्द्र हैं उसी की जय निश्चय होगी जैसे इन्द्र की जय सदा होती है ११ कृष्णचन्द्र व अर्ज्जुन एक रथ पर चढ़े व रोदा चढ़ा गाण्डीव धन्वा ये तीनों एक ही काल में तेज इकट्ठे होंगे यह हमने सुना है १२ व हमारे उस तरह का न धनुष है न वैसा योद्धा न सारथि इस बात को मन्द दुर्य्योधन के वशानुग ये हमारे यहाँ के लोग नहीं जानते १३ हे सञ्जय! प्रकाशित वज्र किसी के ऊपर चले उसे बचा भी दे पर अर्ज्जुन के चलाये बाण जिनके ऊपर चलें उनको न बचावें मार ही डालें १४ अर्ज्जुन बाण चलाते ही चलाते मारते ही से शोभित होने लगते हैं मानों बाणों की वर्षा से शत्रुओं के शिर बाहर ही उठा बहावेंगे १५ यह निश्चय है कि गाण्डीव से उठा प्रदीप्त तेज हमारे पुत्रों की सेना को भस्म करेगा १६ व हम जानते हैं कि अर्ज्जुन के व उनके रथ के शब्द से भयपीड़ित हो कौरवों की सेना तितर बितर हो जायगी १७ जैसे दावानल भूरी घास को जलाता चला जाता है वैसे ही अर्ज्जुन से उठी हुई शरज्वाला हमारे दुर्य्योधनादिकों को भस्म करेगी ॥ १८ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चौ० जब अर्ज्जुन अतिनिशित नराचा। कर्ण खींचि फेंकिहैं कहिसांचा॥
तब यमराज सरिश सब हारी। ह्वैहहिं वे हम कहत पुकारी १। १६
छेद भेद भागन बहु भाँती। सुनब कौरवन कर न प्रवसाती॥
जब तब रणमहँ नाश अपारा। होइहि कौरवगण अँधियारा २।२०

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५२॥

तिरपनवाँ अध्याय॥

दो० तिरपनवें महँ कहब जिमि, पुनि धृतराष्ट्र महीप।
विलपे बहुत प्रकार सों, सुमिरि पार्थ कुल दीप॥ १॥

धृतराष्ट्रजी फिर सञ्जयजी से बोले कि, जैसे बड़े पराक्रमी पाण्डव लोग सदा जीतने ही की इच्छा रखते हैं वैसे ही उनके सब वीर राजा लोग भी जय के वास्ते अपने प्राण देने को तैयार हैं १ हे वत्स! तुम्हीं बताते हो कि पाञ्चाल देश के राजा, केकय मत्स व मगधदेश के बहुत से पराक्रमी हम लोगों की हार पर उतारू हैं २ व जो इच्छा करें तो इन्द्रादि सब लोकपाल व लोकों को भी अपने वश में कर लें वे जगत्-कर्त्ता कृष्णचन्द्रजी भी पाण्डवों की जय में चित्त लगाये रहते ३ जिस सात्यकी ने सब विद्या अर्ज्जुन से सीखी है वे शैनेय बीज के समान शर बोते हुए समर में टिकेंगे ४ फिर राजाद्रुपद का पुत्र धृष्टद्युम्न जो बड़ा क्रूरकर्म्मा व महारथ है हमारे पुत्रों के सामने रण में खड़ा होगा ५ हे तात! युधिष्ठिरजी के क्रोध से व अर्ज्जुन के विक्रम से तथा नकुल सहदेव व भीमसेन से हमको सदा भय उत्पन्न होती है ६ सैन्य के मध्य में उन मनुष्येन्द्रों ने अस्त्ररूप जाल डार दिया है उसे हमारे सैन्यवाले न उतर पावेंगे इसी से हम शोच करते हैं हे सञ्जय! ७ बड़े दर्शनीय मनस्वी लक्ष्मीवान्, ब्रह्मवर्चस्वी, मेधावी, सुकृत प्रज्ञ व धर्म्मात्मा युधिष्ठिरजी हैं ८ व मित्रों से अमात्यों से सुसम्पन्न, युद्ध के प्रेरणा करनेवालों से सुसम्पन्न, महारथ भाई व श्वशुरादिकों से उपपन्न ९ व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

स्वाभाविक धारणाशक्ति से युक्त, अक्रूर स्वभाव, महादानी, लज्जावान्, सत्य पराक्रम १० बहुश्रुत, कुशलात्मा, वृद्धसेवी, जितेन्द्रिय हैं ऐसे सर्वगुण सम्पन्न बरते हुए अग्नि के समान प्रज्वलित ११ युधिष्ठिरजी में पतङ्ग के समान कौन मूर्ख पतित होगा क्योंकि यह पाण्डवाग्नि अनावार्य्य है जो उसमें गिरेगा मरने ही की इच्छा से गिरेगा इससे मरी जायगा १२ देखो अपने शरीर में क्रोधाग्नि स्थापित किये राजा युधिष्ठिरजी को हमने मिथ्याही प्रज्वलित किया इससे मन्द हमारे पुत्रों को वे जरूर युद्ध में नाशैंगे १३ हे कौरव लोग ! सुनो हम पाण्डवों से युद्ध न करना ही अच्छा समझते हैं क्योंकि युद्ध करने में कुलभर का नाश होगा १४ हमारी यही परम बुद्धि है व इसी में हमारा मन शान्त होता है जो आप लोगों को भी युद्ध करना न अङ्गीकार हो तो हम भी शान्ति ही करने का यत्न करते हैं ॥ १५ ॥

दो० क्लिश्यमान हम सबन को, धर्म्मतनय न उपेच्छ ।
हमहिं अधर्म्म किये शपति, किमि अधर्म्म सापेच्छ ॥ १ । १६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥

चौवनवां अध्याय।

दो० चौवनवें महँ कहब जिमि, सञ्जय बहुत प्रकार ।
समझायहु धृतराष्ट्रकहँ, कहि बहुयुक्ति अपार ॥ १ ॥

सञ्जयजी बोले कि हे महाराज ! जैसा आप कहते हैं यह ऐसा ही है युद्ध करने में अर्ज्जुन सब क्षत्रियों का नाशही कर डालेंगे यही दिखाई देता है १ व आप अर्ज्जुन के समाचार व आचरण निश्चय जानते भी हैं पर पुत्र के वशीभूत हैं आप ऐसे धीर का यह विचार ही हम नहीं जानते क्यों ऐसा है २ हे महाराज ! बार २ अपराध करते हुए आपकी यह बुद्धि न रहैगी तुम्हीं ने प्रथम से पाण्डवों का निरादर कर रक्खा है ३ जो पिता श्रेष्ठ सुहृद हो उसको सदा सावधान चित्त

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

रहना चाहिये व उसको सबका हित ही करना चाहिये क्योंकि जो औरों के मारने की इच्छा करता है वह गुरु नहीं कहाता ४ यह जीता इतना पाया ऐसा जब पाण्डवों को पराजित सुनते थे तब द्यूतके समय में लड़कों के समान आप भी हँसते थे ५ जो कुछ कठोर वचन कहने लगते थे तो आप पाण्डवों की उपेक्षा करते यह नहीं देखते कि ये सम्पूर्ण राज्य जीते लेते हैं ६ हे महाराज! तुम्हारे पिता का राज्य कुरु-देश व जाङ्गल ही देश है बाकी पृथ्वी आपने पाण्डवों की ही जीती पाई है ७ अपनी बाहों के बल से जीत पाण्डवों ने भूमि तुम्हारे समर्पण की पर आप समझते हो कि यह सब हमीं ने किया ८ गन्धर्वराज तुम्हारे पुत्रों को पकड़े लिये जाता था पर अर्जुन ही तुम्हारे पुत्रों को फिर लाये ९ जब द्यूत में पाण्डव हारे तब तुम बालकों के समान सन्तुष्ट हुए व जब वे लोग वन को चले तब भी तुम्हारी वही दशा रही १० यह नहीं जानते कि जब बड़े तीक्ष्ण बहुत बाण अर्जुन बरसावेंगे तो समुद्र भी सूखा हो जायगा फिर मांस के देहवालों की कौन गणना ११ बाण चलानेवालों में अर्जुन सबसे श्रेष्ठ हैं व धनुषों में गाण्डीव सबसे श्रेष्ठ है सब प्राणियों के मध्य में कृष्णचन्द्र व सब आयुधों में सुदर्शन १२ व रोचमान वानर सब वानरों में श्रेष्ठ है व केतुमानों में केतु श्रेष्ठ है इसी तरह श्वेताश्ववाले अर्जुन रण में सबसे श्रेष्ठ हैं १३ वे हम लोगों को ऐसा नाशेंगे जैसे कालचक्र नाशता है हे राजन्! आजकल सब पृथ्वी उसी की है जिसके भीमसेन व अर्जुन योधा हैं व वही राज-सत्तम भी है १४ इससे भीमसेन से मारी हुई तुम्हारी सेना देख दुर्योध-नादि कौरव आप नष्ट हो जायँगे १५ व भीमसेन अर्जुन से भयभीत तुम्हारे पुत्र व उनके पीछे चलनेवाले राजा लोग विजयी न होंगे १६ व अब मत्स्य देश के लोग व पञ्चाल केकय देशों के लोग तुम्हारी सेवा न करेंगे शाल्व देश व शूरसेन देशवाले भी क्योंकि सब तुम्हारा निरादर करते हैं १७ ये सब जाय युधिष्ठिरजी के शरण में पहुँचे क्योंकि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वे लोग उनके वीर्य को जानते हैं व उन्हीं लोगों की भक्ति से तुम्हारे पुत्रों के साथ विरोध रखते हैं १८ पाण्डव लोग धर्मयुक्त होने से वध के योग्य नहीं हैं व जिसने पाण्डुपुत्रों को क्लेश दिया हो व अब भी उनसे वैर रखता हो वह पापी सब उपाय से शिक्षा करने के योग्य है १९ द्यूत खेलने के समय हमने भी कहा था व विदुरजी ने भी कि यह कर्म अच्छा नहीं है इससे अब अपने पुत्र का तुम शोच न करो २० । २१ अब जो तुम पाण्डवों के विषय में विलाप करते हो वह ऐसा है जैसे असमर्थ पुरुष का किया सब निरर्थक होता है ॥ २२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुःपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥

पचपनवां अध्याय।

दो० पचपनवें महँ कहब जिमि, दुर्य्योधन निज तात।
समझायहु बहु भाँति कहि, पाण्डव मारण बात ॥ १ ॥

दुर्य्योधन बोले कि, हे महाराज ! न डरिये व आप हम लोगों का शोच न कीजिये क्योंकि हम लोग समर में शत्रुओं के जीतने में समर्थ हैं १ जब पाण्डवों को वनवास दिया गया तो वहां श्रीकृष्णचन्द्रजी आये व शत्रुराज्यमर्द्दन कारक बड़ी भारी सेना लिये २ केकयदेश के राजा आये धृष्टकेतु धृष्टद्युम्नादि बहुत से अनुयायी राजा पार्थों के पास आये ३ व सब इन्द्रप्रस्थ के समीप ही होकर निकले व कुरुवंशियों सहित आपकी सबों ने निन्दा की ४ व सबके सब मृगचर्म्म धारण किये युधिष्ठिरजी के पास बैठे ५ व श्रीकृष्णादि सब राजाओं ने कहा कि राज्य पाण्डवों को दिया जाय व सबकी इच्छा थी कि तुम्हारा नाश हो कहीं रहने न पावें ६ यह सुन ज्ञाति वालों की क्षय के भय से हमने भीष्म द्रोण व कृपाचार्य्य से कहा ७ कि अच्छा जब समय आवेगा तो पाण्डवलोग राज्य पर टिकेंगे परन्तु श्रीकृष्णचन्द्र तो सब प्रकार से हम लोगों का समुच्छेद ही करना

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चाहते हैं ८ विदुर को छोड़ उनके मत से हम सब वध करने के योग्य हैं परन्तु धृतराष्ट्र धर्म्मज्ञ हैं व कुरुवंश में सज्जनतम इससे वे भी मारने के योग्य नहीं हैं ९ प्रयोजन यह है कि कृष्णचन्द्रजी हम लोगों का पूरा समुच्छेदकर कुरुवंशियों का सब राज्य युधिष्ठिर को दिलाना चाहते हैं १० फिर अब तो समय आ गया है कि तो मेल करने के लिये चलें उन लोगों के पैरों परें या लज्जा से भाग खड़े हों व प्राणों की आशा छोड़ शत्रुओं से युद्ध करें ११ यह हम भी जानते हैं कि प्रतियुद्ध करने से हम लोगों की पराजय होगी क्योंकि सब राजा युधिष्ठिर के वशवर्त्ती हैं १२ व हम लोग राज्य से खुद विरक्त हैं व मित्र लोग सब कोप किये हैं व राजा लोग सब तथा बन्धु लोग हम लोगों को धिक्कार करते हैं १३ हां उनके पास जाय प्रणिपात करें तो इसमें कुछ दोष नहीं क्योंकि ऐसा करने से वंशक्षय न होगी और बहुत दिनों तक हमारा उनका मेल मिलाप बना रहेगा, परन्तु हमको तो और ही अभीष्ट है क्या करें हम तो प्रज्ञानेत्रवाले राजा अपने पिता का शोच करते हैं १४ जो कि हमारे लिये दुःख को प्राप्त हैं व अनन्त क्लेश पा रहे हैं हे नरोत्तम, धृतराष्ट्र ! हमलोग तुम्हारे पुत्रों ने तो प्रथम ही शत्रुओं का अवरोध किया था जिसमें हमलोगों का प्रिय हो यह बात आप जानते ही हैं १५ इससे पाण्डव लोग अमात्य पुत्रादि सहित राजा धृतराष्ट्र का उच्छेद कर वैर ही करेंगे अब वे मेल न करेंगे १६ जब हम ऐसा विचार मारे चिन्ता के व्यथित हो गये तो भीष्म-पितामह द्रोणाचार्य्य कृपाचार्य्य व अश्वत्थामा ने हमसे कहा कि १७ यद्यपि हम लोगों ने पाण्डवों का बड़ा अभिद्रोह किया है पर तुम न डरो क्योंकि युद्ध में टिके हुए हम लोगों के जीतने में वे लोग समर्थ नहीं हो सके १८ हम लोग अकेले २ सब पाण्डवों को जीत सके हैं वे लोग हम लोगों के सामने आवें तो तीखे बाणों से सबका अहङ्कार हमलोग दूर कर देंगे १९ प्रथम अकेले भीष्म ही ने सब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राजाओं को जीत लिया था जबकि इनके पिताजी मृतक हुए थे तब अकेलेही रथपर चढ़ इन्होंने २० बहुत से राजाओं को क्रोधकर मार डाला तब मारे भय के सब राजा इन देवव्रत भीष्मजी के शरण को आ गये २१ वे भीष्मजी हमलोगों के साथ समर में पाण्डवादिकों के जीतने में समर्थ हैं इस विषय में आप सन्देह न करें २२ यह इन अमित तेजस्वियों का निश्चय पूर्वही काल से हो गया था हां पहिले सब पृथ्वी पाण्डवों के वश में थी २३ परन्तु अब वे लोग हमलोगों को समर में नहीं जीत सक्ते क्योंकि अब पाण्डव लोग छिन्नपक्ष व हीनवीर्य्य हो गये हैं २४ अब सब पृथ्वी हमलोगों के वश है इसी से हमने सब राजाओं को बुलाया है ये सब हमारे सुखदुःख में समान सुखी दुःखी हैं २५ ये राजा लोग हमारे लिये अग्नि में कहो तो पैठें कहो तो समुद्र में फांद परें यह आप अच्छी तरह जानें २६ व जब तुम पाण्डवों की बड़ाई कर २ उन्मत्त के समान दुःखित हो रोदन करने लगते हो तो ये लोग तुमको हँसते हैं २७ इन राजाओं में एक एक राजा पाण्डवों के जीतने में समर्थ हैं व सब यही मानते हैं इससे यह भय जो आपको आ गई है दूर हो २८ इस हमारी सम्पूर्ण सेना को इन्द्र भी नहीं जीत सक्ते बरन ब्रह्माजी भी इसको एकाएकी नाश नहीं कर सक्ते २९ व हमारे प्रभाव से व हमारी सेना से भयभीत ही होकर युधिष्ठिर हस्तिनापुर छोड़ पांच ग्राम हमसे मांगते थे ३० व जो आप कुन्तीजी के पुत्र भीमसेन को समर्थ समझते हो वह मिथ्या है क्योंकि हमारा सम्पूर्ण प्रभाव आप नहीं जानते ३१ हमारे समान गदायुद्ध में पृथ्वी भर में कोई दूसरा नहीं है व न कभी कोई दूसरा हुआही है न होहीगा ३२ क्या करें हम बड़ा अभियोग करते हैं व गदाविद्या के पारगन्ता हैं व दुःखपूर्वक इस कुरुकुल में बसे हैं इससे हमको न भीमसेन ही से भय है न और ही किसी से ३३ जिससे कि हमने बलदेवजी से गदाविद्या सीखी है इससे सत्य ही कहते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

है कि हमारे समान दूसरा गदाधारी नहीं है ३४ यद्यपि भीमसेन भी युद्ध में बलदेवही के तुल्य हैं व बलमें पृथ्वीभर में सबसे अधिक परन्तु युद्ध में हमारी गदा का प्रहार भीमसेन न सहसकेंगे ३५ जो हम एकभी प्रहार रोषकर भीमसेनको दें तो वह प्रहार तुरन्त उनको यमपुर को पहुँचा देगा ३६ हे राजन्! मैं सदा गदा हाथ में लिये भीमसेनको देखना चाहता हूं यह बहुत दिनों से मनोरथ मेरा चला आता है ३७ जब हम समर में भीमसेन के गदा मारेंगे तो अवश्यही वे प्राणरहित हो पृथ्वी पर गिरेंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं ३८ व भीमसेन की कौन गणना जो हम गदा मारें तो हिमवान् पर्व्वत भी चूर्ण हो जाय व सैकरों हज़ारों प्रकार से बिथर जाय ३९ व वासुदेव अर्ज्जुन ये दोनों भी अच्छी तरह जानते हैं कि गदाविद्या में दुर्य्योधन के समान पृथ्वी में दूसरा नहीं है यह निश्चय है ४० इससे अब समर में भीमसेन से भय आपको न हो हे राजन् ! आप उदास न हो हम भीमसेन को अवश्य ही मार डालेंगे ४१ जब हम भीमसेन को मार डालेंगे तो बहुत से महारथी इसमें ऐसे हैं जो मारे बाणों के अर्ज्जुन को आच्छादित करलेंगे क्योंकि बहुत तो उनके तुल्यरूप ही हैं बहुत उनसे भी विशेष हैं ४२ जैसे भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, कर्ण, भूरिश्रवा, प्राग्ज्योतिष देशों के राजा शल्य व सिन्धुदेश के राजा जयद्रथ ४३ इनमें एक एक वीर पाण्डवों को मार सक्ता है व सब इकट्ठे होकर तो क्षणमात्र में सबको यमपुर भेज देंगे ४४ सब पृथ्वी भर की सेना अकेले धनुर्द्धर अर्ज्जुन को नहीं जीत सक्ती इस आपके कथन का कुछ हेतु ही हमको नहीं विदित होता क्योंकि भीष्मजी ने सैकरों बार बाणसमूह से अर्ज्जुन को युक्त कर दिया है ४५ व द्रोणाचार्य्य, अश्वत्थामा व कृपाचार्य्य के सामने परने से तो वे यमपुर ही को चले जायँगे हे भारत ! भीष्मपितामहजी शन्तनुजी से अधिक हैं ४६ ये ब्रह्मर्षियों के सदृश हैं यहां उत्पन्न हुए हैं व देवताओं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को भी दुस्सह हैं इससे भीष्म को मार डालनेवाला कोई पृथ्वी में विद्यमान ही नहीं है ४७ क्योंकि भीष्मजी के पिता ने कह दिया था कि जब तक तुम्हारी इच्छा न होगी तब तक तुम न मरोगे और द्रोणाचार्य्यजी जानों महर्षि भरद्वाजजी से द्रोणी में उत्पन्न हुए हैं ४८ व द्रोणाचार्य्यजी से परमास्त्रवेत्ता ये अश्वत्थामाजी उत्पन्न हुए हैं व ये आचार्य्य मुख्य कृपाचार्य्यजी महर्षि गौतमजी से सरपत के वन में उत्पन्न हुए हैं ४९ इससे ये श्रीमान् अवध्य हैं व अश्वत्थामा के पिता माता व मातुल ये तीनों अयोनि से उत्पन्न हैं ५० व ये अश्वत्थामाजी जानों हमारी ओर शूर विद्यमान ही हैं हे महाराज! ये सब लोग देवताओं के समान महारथ हैं ५१ ये लोग समर में इन्द्र को भी व्यथित करेंगे इनमें से एक एक को अर्ज्जुन देख भी नहीं सक्ते युद्ध करने को कौन कहे ५२ व ये सब जो एकत्र होंगे तो अर्ज्जुन को मारही डालेंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है व हमारे मत से भीष्म द्रोण कृपाचार्य्य ही के समान कर्ण वीर भी हैं ५३ क्योंकि परशुरामजी ने कर्ण को आज्ञा दी है कि तुम हमारे समान हो व इन कर्णजी के सङ्गही के उत्पन्न दो बड़े सुन्दर कुण्डल थे ५४ उनको इन्द्र ने आय इन्द्राणी के लिये माँगा व उनके बदले में एक बड़ी अमोघ शक्ति इन्द्र ने दी ५५ फिर उस शक्ति से युक्त कर्ण को अर्ज्जुन कैसे जीत लेंगे इससे हम जानते हैं कि हाथ में आ गये फल के समान हमारी विजय होगी ५६ व हमारे शत्रुओं की पराजय तो सब प्रकार से धरी है क्योंकि ये हमारे भीष्मजी एकदिन में दशहज़ार योधों को मारडालते हैं ५७ व इन्हीं के समान महाधनुर्द्धर द्रोणाचार्य्य अश्वत्थामा कृपाचार्य्य भी हैं व ये सब सात क्षत्रियों के समूह यहां वर्त्तमान हैं ५८ या तो हमलोग अर्ज्जुनही को मार डालेंगे व अर्ज्जुन हमींलोगों को मार डालेंगे परन्तु हमारे योधालोग जब अर्ज्जुन के वध करने में नियुक्त होते हैं तो सब बहुत अच्छा मानते हैं ५९ फिर जिस अर्ज्जुन का वध सब राजालोग इस

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हुए वायुवेग १०० घोड़े श्वेतवर्ण के मचे रहते हैं जो घोड़े पृथ्वी, आकाश, अन्तरिक्ष कहीं नहीं रुकते सर्वदा सब कहीं चले जाते हैं व उनमें से जो कोई कुछ घोड़े मार भी डाले तो वे सौ के सौ पूरे बने रहते हैं क्योंकि उनको पूर्वकाल का वरदान है १३ इस तरह के अमर राजा के घोड़े श्वेत वर्ण के व श्वेत ही वर्ण के रथ में जुते शोभित होते हैं व सप्तर्षियों के तुल्य तेजस्वी वायुवेग भीमसेनजी के रथ के घोड़े हैं १४ व तित्तिर के रँग के चित्र विचित्र पीठ के घोड़े अर्जुन के दिये हुए सहदेवजी के रथ में चलते हैं वे अर्जुन के घोड़ों से भी विशेष हैं १५ व माद्री के पुत्र नकुलजी के रथ में इन्द्रजी के दिये वायुवेग बलवान् व जल्दबाज घोड़े मचते हैं जैसे कि इन्द्र के रथ में मचते हैं १६ व इसी तरह सबकी अवस्था व विक्रम के अनुरूप चित्र विचित्र महा वेगवान् अच्छे २ घोड़े सब देवताओं के ही दिये हुए अभिमन्यु व द्रौपदीकुमार प्रतिविन्ध्यादिकों के रथ में घोड़े हैं ॥ १७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥

सत्तावनवां अध्याय।

दो० सत्तावनवें महँ कहब, जिमि धृतराष्ट्र महीप।
सञ्जयसन पाण्डवन के, प्रेरक सुनेहु सुदीप ॥ १ ॥

धृतराष्ट्र बोले कि हे सञ्जय ! तुमने वहां प्रीति से आये किन लोगों को देखा जो पाण्डवों के अर्थ हमारे पुत्र की सेना से युद्ध करना चाहते हैं १ सञ्जय बोले कि अन्धक वृष्णि वंशियों में मुख्य एक तो कृष्णचन्द्रजी को हमने वहां आये हुए देखा है व चेकितान व युद्ध करने की इच्छा किये सात्यकी को देखा है २ ये दोनों पाण्डवों के अर्थ अलग अलग एक एक अक्षौहिणी सेना लेकर आये हैं दोनों महारथ हैं व दोनों पुरुषमानी हैं ३ एक अक्षौहिणी सेना व अपने सत्यजित धृष्टद्यु-म्नादि दशपुत्रों सहित पाण्डवों के अर्थ पाञ्चालदेश के राजा द्रुपदजी ४

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अपने पुत्र शिखण्डी से परिपालित सब सैन्यों को आच्छादित कर वहां आये हैं ५ व अपने पुत्र शङ्ख तथा उत्तर को सङ्ग ले व एक अक्षौहिणी सेना ले व सूर्यदत्त मदिराक्षादि वीरों को सङ्ग ले व और भी सब अपने भाई भतीजों सहित विराट देश के राजा पाण्डवों के पास आये हैं ६ । ७ व मगध देश के राजा जरासन्ध के पुत्र सहदेव तथा शिशुपाल के पुत्र धृष्टकेतु चँदेली का राजा आया है इन दोनों के सङ्ग एक २ अक्षौहिणी सेना है ८ व केकय देश के राजा पांच भाई एक अक्षौहिणी सेना लेकर आये हैं इन सबों के रथों की पताका अरुणरंग की हैं ९ बस इन्हीं लोगों को हमने वहां आये देखा है जो पाण्डवों के अर्थ तुम्हारे पुत्र की सेना से युद्ध करना चाहते हैं १० जोकि मानुष, दैव, गान्धर्व व आसुर व्यूह जानता है वह राजा धृष्टद्युम्न सेना में बड़ा मुख्य है ११ हे राजन्! शन्तनुजी के पुत्र भीष्मजी को तो शिखण्डी का भाग बनाया है व उसी शिखण्डी ही के पीछे अपने लोगोंसहित राजा विराट भी रहेंगे १२ व युधिष्ठिरजी के भाग में मद्रदेश के राजा शल्यजी ठहराये गये हैं क्योंकि वहां सब कहते थे कि ये दोनों विषम स्वभाव नहीं हैं इससे इन दोनों का युद्ध ठीक है १३ व अपने सौ भाइयों समेत व पुत्रों सहित तथा पूर्वदेश व दक्षिण देश के राजाओं समेत दुर्य्योधन भीमसेन के भाग में किये गये हैं १४ व कर्ण, वैकर्त्तन, अश्वत्थामा, विकर्ण, जयद्रथ व और जो पृथ्वी भर में शूरमानी हैं उन सबों को अर्ज्जुनजी ने अपने भाग में लिया है १५ । १६ व बड़े धनुर्द्धर केकय देश के राजकुमार पांच भाई अन्य केकय देशवालों से जो तुम्हारी ओर आये हैं उनसे युद्ध करेंगे १७ व उन्हीं पांच भाइयों के भाग में मालव शाल्व त्रिगर्त्त देश के दोनों सप्तक भी हैं १८ व दुर्य्योधन के सब पुत्र तथा दुश्शासन के सब पुत्रों को व राजा बृहद्बल को अभिमन्यु ने अपने भाग में कल्पित किया है १९ व धृष्टद्युम्नादि सब महाधनुर्द्धर व द्रौपदी के पुत्र द्रोणाचार्य्यजी से युद्ध

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करेंगे २० व चेकितान सोमदत्त से द्वन्द्व युद्ध किया चाहते हैं व भोजवंशीय कृतवर्मा से सात्यकी युद्ध करना चाहते हैं २१ व माद्रीजी के पुत्र बड़े भारी शूरवीर सहदेवजी ने युद्ध में अपना भाग आपके श्याल शकुनी को कल्पित किया है २२ व उलूक छली व सारस्वत गणों को माद्री के पुत्र नकुलजी ने अपना भाग कल्पित किया है २३ व जो और सब राजा लोग यहां पाण्डवों से युद्ध करने के लिये संग्राम में आवेंगे उन सबों के समीप नाम पुकारने पर सब पाण्डव लोग समय २ पर पहुँचते रहेंगे २४ इस प्रकार तुम्हारी सब सेना वहां आपस में युद्ध करने के लिये बांट ली गई है अब पुत्र सहित आपको जो करना हो सो कीजिये २५ इतना सुन धृतराष्ट्रजी बोले कि बस दुष्ट जुआरी ये हमारे पुत्र अब न बचेंगे क्योंकि इनका युद्ध संग्राम में बलवान् भीमसेन से होगा २६ व ये सब पृथ्वी भर में राजा जो हमारी ओर आये हैं इनका भी प्रोक्षण काल ने किया जैसे यज्ञ में यजमान बलिप्रदान के पशुओं को हरिद्रादि लगाय मारने के लिये प्रोक्षित करते हैं क्योंकि ये सब गाण्डीव धन्वा के अग्नि में परकर भस्म होंगे जैसे अग्नि में पतङ्ग गिरकर भस्म होते हैं २७ बस हमने जान लिया कि इन महात्माओं के विरोध से हमारी सेना इधर उधर भाग खड़ी होगी फिर पाण्डवों के सामने युद्ध करने को कौन जायगा २८ ये सब पाण्डव लोग अतिरथ, शूर, कीर्त्तिमान् व प्रतापी हैं व तेज से सूर्य्य व अग्नि के तुल्य तेजस्वी हैं इससे अपने तेज ही से शत्रुओं को जीत लेंगे २९ फिर जिन पाण्डवों के नायक तो युधिष्ठिरजी तथा रक्षक श्रीकृष्णचन्द्रजी व योधा अर्ज्जुन भीमसेन ३० व नकुल, सहदेव, धृष्टद्युम्न, पार्षत, सात्यकी, द्रुपद, धृष्टकेतु व उसका भाई ३१ व उत्तम पराक्रमी पाञ्चालदेशीय अतिदुर्जय युधामन्यु, शिखण्डी, क्षत्रदेव व विराट के पुत्र उत्तर ३२ इसी प्रकार काशी निवासी राजा लोग व चन्देली के राज्य के सब मत्स्यदेशनिवासी व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सृञ्जयवंशीय विराट का पुत्र बभ्रु व पाञ्चालदेशवासी तथा भद्रकादि वहां वीर विद्यमान हैं ३३ जिन वीर पाण्डवों की पृथ्वी विना उनकी इच्छा इन्द्र भी न हरसकें व जो रणधीर वीर पाण्डव पर्व्वतों को भी बाणों से चूर्ण कर डालें ३४ उन सब गुणसम्पन्न व देव व प्रतापी पाण्डवों से हमारा दुष्ट पुत्र दुर्य्योधन युद्ध किया चाहता है हम बराबर हल्लाकर रहे हैं नहीं सुनता सञ्जय क्या करें ३५ इतना सुन दुर्य्योधन बोले पाण्डव व हम दोनों एक ही जाति हैं व दोनों पृथ्वी ही पर रहते हैं कोई देवता नहीं जो स्वर्गादि में रहता हो तो फिर तुम एक पाण्डवों की ही जय क्यों मानतेहो ३६ देखो भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य्य, अतिदुर्ज्जय, कर्णवीर, जयद्रथ, सोमदत्त व अश्वत्थामा ३७ इन सब महा धनुर्द्धरों को समर में सब देवगण सहित इन्द्र भी न जीत सकेंगे फिर पाण्डवों की कौन गणना है ३८ इसके सिवाय सब श्रेष्ठ २ शूरवीर राजा लोग हमारे अर्त्थ पाण्डवों को मार सक्ते हैं ३९ व हमारे यहां के लोगों को पाण्डव लोग युद्ध में देख भी नहीं सक्ते फिर युद्ध करने को कौन कहै व हम अकेले ही जो पराक्रम करें तो सब पाण्डवों को व उनके पुत्रों को युद्ध में मार ही डालें ४० और जो राजा लोग हमारा प्रिय चाहते हैं वे उनको ऐसा रोकेंगे जैसे व्याध लोग हरिणों के बच्चों को जाल से घेरते हैं ४१ व बड़े रथसमूह से तथा हमारे बाणजालों से पाञ्चालों समेत पाण्डव विध्वस्त होंगे ४२ इतनासुन धृतराष्ट्रजी बोले कि हे सञ्जय! यह हमारा पुत्र उन्मत्त के समान बकता ही है समर में धर्मपुत्र युधिष्ठिरजी को नहीं जीत सकता ४३ धर्मज्ञ महात्मा सपुत्र पाण्डवों की बलवत्ता भीष्मजी जानते हैं अन्य कोई क्या जानेगा ४४ व इसीसे इनको पाण्डवों के सङ्ग विग्रह करने की बातही नहीं रुचती अब हे सञ्जय! फिर उन पाण्डवों के विचेष्टित हमसे कहो और क्या क्या किया चाहते हैं ४५ व उन वीर मनस्वी पाण्डवों को बार बार प्रेरणा कौन

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करता है कि तुम युद्ध ही करो जैसे बरते हुए अग्नि को कोई आहुति देकर प्रेरित किया चाहे ४६ सञ्जय बोले कि बहुधा तो सदा धृष्टद्युम्न पाण्डवों को दीपित करता है कि हे भरतसत्तम लोगो ! युद्ध से न डरो अवश्य ही युद्ध करो यही कहा करता है ४७ और यह भी कहता है कि दुर्य्योधन ने जिन राजाओं को बुलाया है उनमें जितने तुमुल रणसंकुल में आवेंगे उन सबों को सानुबन्ध हम अकेले ही समाप्त कर देंगे जैसे तिमिमत्स्य सब मत्स्यों को लील जाता है ४८ । ४६ व भीष्म, कर्ण, द्रोण, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, शल्य व दुर्योधन इन सबों को हम अकेले आड़ेंगे जैसे किनारा समुद्र को आड़ता है ५० जब ऐसा धृष्टद्युम्न ने कहा तो धर्मात्मा राजा युधिष्ठिरजी बोले कि तुम्हारा धैर्य व वीर्य पाञ्चाल सहित हम सब पाण्डव जानते हैं ५१ हम लोगों को इस संग्राम से उद्धार करो हम तुम को जानते हैं कि आप क्षात्र धर्म पर आरूढ़ हैं ५२ व यह भी जानते हैं कि आप अकेले ही कौरवों के ऊपर अकृपा करने में समर्थ हैं जो कोई कौरव आगे युद्ध करने की इच्छा से आवेंगे उन्हीं को आप मारेंगे ५३ इससे इस विषय में आप जो कुछ करें व विचारें हमको सब अङ्गीकार है व जो पुरुष संग्राम से भागे हुए तथा शरणागत आये हुओं को अपना पौरुष दिखाता हुआ शूर उनके आगे सन्नद्ध हो खड़ा होता है व उनको बचाता है उसको तो सहस्र रुपये देकर भी मोल लेना चाहिये यह नीतिमानों का मत है ५४ । ५५ सो तुम शूर, वीर व विक्रमी हो इससे भयभीत लोगों के रक्षक हो इसमें कुछ सन्देह नहीं ५६ जब धर्मात्मा युधिष्ठिरजी ने ऐसा कहा तो निर्भय हो धृष्टद्युम्न ने हमसे यह कहा कि ५७ हे सूत ! दुर्योधन के जितने देश हैं व जितने उनके योधा हैं उन सब वाह्लिक देश के राजा व कर्ण, द्रोण, अश्वत्थामा व जयद्रथ ५८ दुश्शासन, विकर्ण व दुर्योधन व भीष्मपितामहजी इन सबों के पास बहुत ही शीघ्र जाय कहना कि ॥ ५९ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चौ० धर्मतनय जानि जानहुँ सरलू। अर्जुन तुम्हहिं बधहिं जिमि गरलू॥
यासों राज्य युधिष्ठिर दीजै। माँगि कछू पाण्डव सों लीजै १।६०
यहि महिमहँ अर्जुन सम वीरा। नहिं दिखात दूसर रणधीरा॥
सत्य पराक्रम पाण्डु दुलारे। अर्जुन जानत हैं जनसारे २।६१
दीन अर्जुनहिं रथहय देवन। दिव्य विभूषण भूषित भेवन॥
यासों वे हैं मनुज अजेया। कबहुँ न युद्ध करन मन देया ३।६२

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५७॥

अट्ठावनवां अध्याय।

दो० अट्ठावनवें महँ कहब, जिमि पुनि कौरवराज।
समझायहु दुर्योधनहिं, करहु न रणकर साज॥ १॥

धृतराष्ट्रजी बोले कि, बड़े आश्चर्य की बात है कि क्षत्र तेजस्वी कुमारावस्था से ब्रह्मचारी युधिष्ठिरजी से ये मन्द युद्ध किया चाहते हैं हम कहते ही जाते हैं पर कुछ भी नहीं मानते १ हे दुर्योधन, भरतसत्तम! युद्ध करने से निवृत्त रहो सब अवस्था में युद्ध की प्रशंसा वीर लोग नहीं करते २ अमात्यादि सहित तुम्हारी जीविका के लिये आधी पृथ्वी बहुत है इससे पाण्डु के पुत्रों को यथोचित आधी पृथ्वी दे दो ३ इस बात को सब कुरुवंशीय धर्मयुक्त मानेंगे जब तुम महात्मा पाण्डुपुत्रों से शान्ति मानोगे ४ हे प्रिय पुत्र! अपनी इस सेना की ओर तो देखो तुम्हारा अभाव ही हो गया पर अज्ञान के मारे तुम नहीं समझते ५ हम युद्ध करना नहीं चाहते न वाह्लिकराज चाहते हैं न भीष्म चाहते न द्रोणाचार्य न अश्वत्थामा न सञ्जय ६ न सोमदत्त न शल्य न कृपाचार्य युद्ध चाहते सत्यव्रत, पुरुमित्र, भूरिश्रवा व जयद्रथ भी युद्ध नहीं चाहते ७ जो कुरुवंशीय पाण्डवों की ओर से बनाय मन से हार गये हैं वे सब युद्ध करने की इच्छा नहीं करते फिर तुम अकेले क्या करोगे हे प्राणप्रिय! जो बात हम सबको रुचती है वही तुम

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को भी रुचै युद्ध न करो ८ सो हम जानते हैं कि तुम भी अपनी इच्छा से युद्ध करना नहीं चाहते किन्तु तुमको तो कर्ण युद्ध करने पर उतारू कराता है व दुष्टात्मा दुश्शासन तथा सुबल का पुत्र दुष्ट शकुनी ९ इतना सुन दुर्योधन महामानी बोले कि न हम आपके ऊपर भार राख पाण्डवों को युद्ध करने के लिये बुलाते हैं न द्रोणाचार्य के ऊपर न अश्वत्थामा के, न सञ्जय के, न भीष्म के, न काम्बोज देश के राजा के, न वाह्लिक के, न कृपाचार्य के, न सत्यव्रत के, न पुरुमित्र के, न भूरिश्रवा के, न औरही किसी तुम्हारे सम्बन्धी के ऊपर १० । ११ किन्तु हम व कर्ण दोनों जने रणयज्ञ फैलाय व युधिष्ठिर को उस यज्ञ का पशु कर दोनों जने दीक्षित होंगे १२ रथ को तो वेदी बनावेंगे व खड्ग को स्रुव, गदा को स्रुक्, कवच को सभा व चारों पहरों में चातुर्होत्र करेंगे बाणों को कुश बनावेंगे व यश को हव्य १३ इस प्रकार आत्मयज्ञ से संग्राम में यमराजजी की पूजाकर शत्रुओं को जीत वैरिहीन हो शोभित होंगे १४ हम व कर्ण व हमारे भाई दुश्शासन बस यही तीनोंजने समर में पाण्डवों को मार डालेंगे और किसी की कुछ आवश्यकता नहीं है १५ या तो हमीं पाण्डवों को मार इस पूरी पृथ्वी का राज्य करेंगे या पाण्डव ही हम को मार पूरी धरणी का राज्य करेंगे १६ हे राजन्! हमने अपने प्राण, राज्य व धन सब छोड़ा परन्तु पाण्डवों के सङ्ग हम कभी न बसेंगे १७ जितनी बड़ी तीक्ष्ण सुई की नोक होती है उतनी भी पृथ्वी हम पाण्डवों को नहीं दे सक्के फिर आधे राज्य को कौन कहै १८ यह सुन फिर धृतराष्ट्रजी बोले हे प्राणप्रियो! हमने इस दुर्योधन को आज से छोड़ा पर यह मूर्ख यमपुर को जाता है इसके पीछे जाते हुए आप लोगों को हम शोचते हैं १९ कुरुवंशियों के यूथों में जो श्रेष्ठ श्रेष्ठ हैं उनको शूरवीर पाण्डव लोग ढूँढ़ ढूँढ़ मारेंगे जैसे व्याघ्र पशुओं को मारता है २० हमको अब यह दुःख जान परता है कि कुरुवंशियों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

की स्त्रीरूप यह सेना सात्यकी वीर के बाहुओं के बीच में लपटेगी २१
व मधुवंश में उत्पन्न शिनिवीर के नाती सात्यकी वीर सब धन
पाण्डवों के अर्थ इकट्ठा करते हुए बाणों की धार का बीज समरभूमि
में बोवेंगे २२ वहां सेना के मुखिया भीमसेनजी होंगे उनके संश्रित
बाकी होंगे २३ अभी क्या जब भीमसेन के मारे हुए दाँत टूटे शिर
फटे पैर कटे सब अङ्ग लटे हाथी देखोगे २४ व पर्वताकार उनको भीष्म
से सर्वाङ्ग विशीर्ण देखोगे व स्पर्श करोगे हे तात ! तब हमारे वचनों
का स्मरण करोगे २५ जब घोड़े, हाथी, रथ, पैदर सहित सेना भीम-
सेन से मारी गई देखोगे तब हमारे वचनों का स्मरण करोगे २६
कदाचित् तुम लोगों ने पाण्डवों से मिलाप न करलिया तो तुम लोगों
को बड़ी भारी भय आय गई इसमें कुछ भी सन्देह नहीं भीमसेन की
गदा से जब मारे जावगे तब आप शान्त होजावगे अभी हमारे कहने
ही से शान्त होजाव २७ जब कुरुवंशियों की सैन्य महावन के समान
भीमसेन की गदा से छिन्न भिन्न देखोगे तब हमारे वचनों का स्मरण
करोगे २८ इस प्रकार दुर्योधनादि सब राजाओं से कह राजा धृतराष्ट्र
फिर सञ्जय जी से बोले ॥ २९ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्यष्टपञ्चाशततमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥

उनसठवां अध्याय।

दो० उनसठवें महँ कहब जिमि, हरि अर्जुन मत भूप।
पूछ्यहु सञ्जयसन बहुरि, तिन वर्ण्यो शभ रूप ॥

धृतराष्ट्रजी बोले कि, हे महाप्राज्ञ ! महात्मा वासुदेव व अर्जुनजी ने जो वचन कहे हों वे हमसे कहिये हम तुम्हारे वचन सुना चाहते हैं १ सञ्जयजी बोले कि हे राजन् ! सुनिये जिस प्रकार हमने अर्जुन व कृष्णचन्द्रजी को देखा है व उन वीरों ने जैसा कहा है वह तुमसे कहते हैं २ हम चरण की अँगुलियां देखते हाथ जोड़े कृष्णचन्द्र व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अर्जुन से आपका सन्देश कहने के लिये एक दिन जनाने मकान के भीतर गये ३ जहां कि न अभिमन्यु कभी जाते थे न नकुल न सहदेव केवल कृष्णचन्द्र व अर्जुन व सत्यभामा द्रौपदी चारही जने रहते थे ४ दोनों जने मधुपान किये उन्मत्त व दोनों चन्दन लगाये फूलों की माला पहने सुन्दर वस्त्र ओढ़े पहने दिव्य भूषण धारण किये थे ५ व जिसमें चित्र विचित्र हज़ारों रत्न जड़े थे ऐसे सुन्दर बड़े भारी आसन पर दोनों महात्मा बैठे थे उस पर बिस्तरा भी नाना प्रकार का चित्र विचित्र ही बिछा था कि जिसका वर्णन नहीं होसक्ता ६ वहाँ जो हमने देखा तो अर्जुन की गोद पर तो कृष्णचन्द्रजी दोनों चरण धरे थे व अर्जुन एक चरण द्रौपदी की गोद में दूसरा सत्यभामाजी की गोद में धरे थे ७ तब अर्जुनजी ने हमको बैठने के लिये सुवर्ण की एक चौकी दी परन्तु हम उसे हाथ से छूकर भूमि पर बैठ गये उस पर नहीं बैठे ८ उस समय चौकी पर से सिकोरे ऊर्ध्वरेखा सहित शुभ लक्षणयुक्त अर्जुनजी के दोनों चरण हमने देखे ९ व श्याम स्वरूप बड़े लम्बे तरुण अवस्था को प्राप्त सांखू के वृक्ष के समान स्कन्धवाले एक आसन पर बैठे हुए कृष्णचन्द्रजी व अर्ज्जुनजी को देख हमको बड़ीभय हुई १० सो इन्द्र व विष्णु के समान अर्ज्जुन कृष्णचन्द्रजी को भीष्म व द्रोणाचार्य्य के बल से व कर्ण के बकने से मन्दात्मा दुर्योधन नहीं समझते ११ हमको तो तभी निश्चय होगया कि जिन युधिष्ठिरजी के ऐसे ये दोनों जने आज्ञाकारी हैं उनके मन का सङ्कल्प सिद्ध होगा इसमें कुछ भी अन्तर नहीं १२ इसतरह जब अन्नपानादि से हमारा सत्कार हुआ व बनाय अच्छी तरह बैठे तो हमने दोनों जनों से आपका सँदेश हाथ जोर शिर पर धर कहा १३ तब धनुष की प्रत्यञ्चा के दाग बनेहुए हाथ से कृष्णचन्द्रजी का शुभलक्षण चरणारविन्द छूकर अर्ज्जुनजी ने प्रेरणा की कि आप सञ्जय को उत्तर दीजिये १४ तब इन्द्रध्वज के समान उठकर सर्व भूषण भूषित श्रीकृष्ण-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चन्द्रजी कि जिनका विक्रम इन्द्र के भी विक्रम से अधिक है बैठकर हमसे बोले १५ वह वचन यद्यपि उन्होंने बड़ी नम्रता से व मन्द २ मुसुकाकर कहा पर ऐसा दारुण था कि सुनतेही सुनते आपकी ओरवालों को भय उत्पन्न हो जावे १६ वह शिक्षा अक्षरयुक्त वचन हमने सुना पहिले तो जानपरा कि बहुतही मीठा है पर पीछे से कलेजा धड़क उठा १७ वासुदेवजी बोले कि हे सञ्जय! यह हमारा वचन धृतराष्ट्र जी व कुरुवंशियों में मुख्य भीष्मजी तथा द्रोणाचार्य्य के आगे सबसे कहना १८ व हम दोनों जनों की ओर से ज्येष्ठलोगों से प्रणाम कह व छोटों की कुशल पूछकर पीछे उत्तर देना १९ वह यह है कि आप लोग विविध प्रकार के यज्ञ करें व ब्राह्मणों को बड़ी २ दक्षिणा दें व स्त्री पुत्रादिकों के सङ्ग आनन्द की बातें करलें क्योंकि अब बड़ी भारी भय तुमलोगों के ऊपर आगई है २० सुपात्रों को खूब धन दो व अपने २ प्रियपुत्रों को मिलो भेंटो इष्टमित्रों का प्रिय करो क्योंकि महाराज युधिष्ठिर अब तुमलोगों को पराजितकर अपनी जय के विषय में बड़ी शीघ्रता कररहे हैं २१ व दुश्शासन ने जब द्रौपदीजी का वस्त्र राजसमाज में खींचा था तब उन्होंने जो गोविन्द ऐसा कहकर हमको पुकारा था वह ऋण उनका हमको केवल वस्त्र बढ़ायही देने से नहीं छोड़ता किन्तु जब सब कौरवों का नाश करदेंगे तब छोड़ेगा अभी तो उसका ब्याज बढ़ताही जाता है २२ इस बात का स्मरण करते रहो कि जिन अर्ज्जुनजी के गाण्डीव धन्वा है व हम सारथी का कर्म्म करते हुए सहायक हैं उनके साथ तुमलोगों का दारुण वैर है २३ इससे जिसको काल ने न घेरा हो चाहे इन्द्र भी हों तो ऐसा कौन है जो हमको दूसरा पाये अर्ज्जुन के सामने रण में खड़ा हो जिसको कालने घेरा है वही खड़ाहोगा २४ क्योंकि जो अर्ज्जुन को समर में जीते वह तो वहाँ से भूमि उठाले व क्रोध से इस सब प्रजा को भस्म करडालें देवताओं को स्वर्ग से गिरादे २५ व देवता, दैत्य, मनुष्य, यक्ष, गन्धर्व, नागों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

में हम उसे नहीं देखते जो रण में अर्ज्जुन के सन्मुख खड़ा हो २६ जो कि विराट नगर की बात सुनी जाती है कि एकओर एक व एक ओर बहुत से वह बड़ी अद्भुत है व इसविषय में दृष्टान्त है २७ जब कि विराट नगरमें एकही अर्ज्जुन के मारे तुम सबलोग भाग खड़े हुए खड़े हो न सके व इस विषय का वह पूरा दृष्टान्त है दूसरे की आवश्यकता नहीं २८ इससे साफ विदित है कि बल, वीर्य, तेज, शीघ्रता, शीघ्र हाथ चलाना, अविषाद व धैर्य्य अर्ज्जुनसे अन्यत्र नहीं है ॥ २९ ॥

दो० गर्ज्जत वर्षत समय पर, मेघ समान महान ।
यह कहि पार्थ बढ़ाय हरि, भाष्यहुयुत अभिमान ॥ १ । ३० ॥
इमि सुनि केशव के वचन, श्वेत तुरँग रणधीर ।
कह्यहु वचन यह जो सुनत, मम रोमाञ्च शरीर ॥ २ । ३१ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकोनषष्टितमोऽध्यायः ॥ ५९ ॥

साठवां अध्याय ।

दो० सठिवें महँ वह कहब जिमि, पुनि धृतराष्ट्र महीप ।
समझायहु दुर्य्योधनहिं, पार्थ मिलन मन टीप ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि सञ्जय के ऐसे वचन सुन राजा धृतराष्ट्रजी पार्थों के गुण व अपनी ओर के दोष विचारने लगे १ जब बनाय सूक्ष्मता से गुण दोष विचारलिये तो भी पुत्रों की जय की इच्छा से बहुत सी बातें सोचीं २ व यथातथ्य बलाबल जान महाबुद्धिमान् धृतराष्ट्र-जी पाण्डवों की शक्ति बताने लगे ३ उनमें पाण्डवों को तो देवता मनुष्य दोनों की शक्ति से व तेज से अधिक समझ व कौरवों की अल्प शक्तिमान् दुर्य्योधन से कहनेलगे कि ४ हे दुर्य्योधन ! यह चिन्ता हम को निरन्तर बनीरहती है कभी मिटतीही नहीं तुमसे सत्यही कहते कुछ अनुमान से नहीं कहते ५ देखो अपने पुत्रों में सब प्राणी परम स्नेह करते हैं व यथाशक्ति उनका प्रियहित भी करतेही रहते हैं ६ यह रीति सब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उपकार करनेवालों की है कि अपने प्रिय पुत्रादिकों का उपकार करते ही हैं व इसी से सब सज्जन लोग प्रत्युपकार करने की भी इच्छा करते हैं ७ इससे जब कौरवों पाण्डवों का संग्राम होने लगेगा तो अग्नि अवश्य अर्जुन का उपकारक प्रत्युपकार करने के लिये मन्त्री बनेंगे क्योंकि अर्जुन ने उनको खाण्डव वन दे तृप्त किया है वह उपकार प्रथम कर चुके हैं ८ व अपनी जाति के लोभ से पाण्डवों के उपकार के लिये जब बुलाये जायँगे धर्म, पवन, इन्द्र, अश्विनीकुमार भी अवश्य आय सहायता करेंगे क्योंकि पाण्डवादि उनके पुत्र ही ठहरे ९ इससे भीष्म, द्रोण, कृपाचार्यादिकों को भय से पाण्डवों की रक्षा करने को युद्ध में ये लोग अवश्य आवेंगे यह हमारे विचार में आता है १० फिर एक तो पार्थ लोग अपने आप वीर्यवान् हैं फिर अस्त्र शस्त्रादि हाथ में लिये उस पर धर्मादि देवताओं समेत होंगे तो उनको कोई देख भी न सकेगा लड़ने को कौन कहै ११ जिस अर्जुन का अति-दुरासद दिव्य तो गाण्डीवधन्वा है व बाणों से सदा पूर्ण अक्षय बड़े भारी दो तरकस हैं १२ व दिव्य वानर हनुमान् रथ की ध्वजा पर हैं व तरकस की गति धूमाकार है जब उससे बाण निकलने लगते तो धुवांते ही हुये निकलते व रथ भी चारों समुद्र पर्यन्त पृथ्वी भर में उनके समान किसी का नहीं १३ जिसका शब्द महा मेघ के गर्ज्जने के समान सबको सुनाई देता है व शत्रुओं को भय कराने के लिये तो वज्र के शब्द से भी अधिक है १४ व जिनको सब लोग वीर्य में अति मानुष सम-झते हैं व राजा लोग जिनको समर में देवता लोगों को भी जीत लेने-वाला समझते हैं १५ व जो पांचसौ बाण एक ही बार में तूणीर से निकाल चला देते हैं चलाते कोई नहीं देखता जब लगनेवालों को मार फिर लौटते हैं तो बाणों को सब कोई देखते हैं यह काम निमेष मात्र में वे करते हैं १६ व जिनको भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, मद्रदेश के राजा शल्यजी व अन्य सब मध्य के लोग भी कहते हैं कि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

देवता भी नहीं जीत सके तो मनुष्य की कौन गणना है इससे युद्ध में कोई भी अर्जुन को न जीत सकेगा १७। १८ क्योंकि वे एकही हाथ से पाँचसौ बाण बड़े वेग से चलाते हैं जैसे कि राजा सहस्रबाहु पांचसौ हाथों से चलाता था १९ ऐसे अर्जुन को तो समर में हम सब को मारते ही देखते हैं पर उनके मारनेवाले को नहीं देखते ॥ २० ॥

दो० इमि निशिदिन चिन्तत हमें, नींद न आवत तात।
कौरव पाण्डव मेल जिमि, होय चहत सो बात ॥ १ । २१ ॥
कौरवदल क्षय उदय यह, होनी चहत महान।
अन्त कलह कर लखत नहिं, विना मेल कुछ आन ॥ २ । २२ ॥
यासों पार्थन सँग हमें, शम भावत न बिगार।
जासों कौरव गणनसों, पाण्डव शक्त्यधिकार ॥ ३ । २३ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६० ॥

इकसठवां अध्याय।

दो० इकसठवें महँ कहब जिमि, दुर्योधन पितु बैन।
खण्डि कह्यहु पाण्डवन कहँ, समर पराजय दैन ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि हे महाराज! इस प्रकार पिता के वचन सुन असहनशील दुर्योधन महा क्रोध कर फिर यह वचन बोले कि १ हे राजसत्तम! जो आप यह मानते हैं कि देवता लोग पाण्डवों के मन्त्री व सहायक हैं इससे वे किसी के जीतने के योग्य नहीं यह भय आपकी दूर हो २ क्योंकि काम वैर के न करने से व लोभ द्रोह की उपेक्षा करने ही से देवता लोग देवत्व को प्राप्त हुए हैं ३ यह अगाड़ी भगवान् द्वैपायन व्यासजी ने महातपस्वी नारदजी ने व परशुरामजी ने हमसे कहा है ४ देवता लोग मनुष्यों के समान काम, क्रोध, लोभ व द्वेष से किसी के सङ्ग नहीं प्रवर्त्तित होते ५ जो अग्नि, वायु, धर्म, इन्द्र व अश्विनीकुमार भी कामादि में लग जायँगे तो वे भी बड़ा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दुःख पावेंगे ६ इससे आप इस विषय में चिन्ता न करें देवता लोग शम दमादि देव कार्य करने में सदा उद्यत रहते युद्धादि असुरों के काम हैं उनमें उनकी उपेक्षा रहती है वे पाण्डवों की सहायता कभी न करेंगे ७ व जो काम के संयोग से देवताओं में अपना प्रमाण छोड़ द्वेष व लोभ दिखाई देगा तो उनका किया कुछ हो भी न सकेगा क्योंकि उनकी मर्यादा से बाहर हो जायगा ८ हां देवबल हममें अलबत्ता है इससे जो हमने बार २ अग्नि की पूजा की है वह अग्नि क्या शान्त हो जायगा नहीं वह तो तीनों लोकों का नाश कर देगा फिर पाण्डवों की कौन गणना है ९ इससे जितना तेज धर्मादि देवों में है हममें उसमें अधिक आप समझिये १० क्योंकि हम जो मन्त्र पढ़ें तो फटती हुई पृथ्वी व फटते हुए पर्वतों के शिखर भी यथावस्थित रख लें फटने न पावें ११ व चैतन्य अचैतन्य चर अचर सब जगत् के विनाश के लिये जो बड़ा घोर शब्द हो तो हम उसे भी शान्त कर दें १२ व पत्थरों की वर्षा प्रचण्ड पवन सबको हम शान्त कर सक्ते हैं हमारे ये कार्य्य सब देखा ही करें व हम प्राणियों के ऊपर दया कर ऐसा करी डारें १३ व हम मन्त्र से जब जल का स्तम्भन कर दें तो उसके ऊपर रथ, पैदर, हाथी, घोड़े आदि सब चले जायँ इस से देवताओं के भाव शम दमादि व असुरों के भाव वैर मारणादि हम सबके प्रवर्त्तक हैं १४ व अक्षौहिणियों को सङ्ग ले जिन २ देशों के जाने की इच्छा हम करें वहां २ विना रोंक टोंक हमारे घोड़े मन्त्र के प्रभाव से चले जायँ १५ व हमारे विषय में भयानक सर्पादि भी कुछ नहीं कर सक्ते क्योंकि जीतो मन्त्रों से रक्षित रहते उनके आगे भयङ्कर लोग अपने आप नष्ट हो जाते हैं १६ व हमारे राज्य में जब हम चाहते हैं तभी वर्षा होती है व हमारी सब प्रजा भी धर्मिष्ठ है व खेती के विघ्नकारक सात ईतियाँ भी हमारे राज्य में नहीं होतीं १७ व जिनके सङ्ग हम वैर करें उनकी रक्षा अश्विनीकुमार पवन अग्नि व सब देवगण सहित इन्द्र धर्म्म-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राज कोई भी नहीं कर सके १८ जो ये अश्विनीकुमारादि हमारे शत्रुओं की रक्षा करने में समर्थ होते तो तेरह वर्ष तक पाण्डव लोग दुःख न पाते ये लोग बचा लेते १९ इससे हम आपसे यह सत्य ही कहते हैं कि जिसके सङ्ग हम वैर करें उसकी रक्षा देव, गन्धर्व, किन्नर, नागादि कोई भी नहीं कर सके २० हम शुभ व अशुभ जो कुछ चिन्तवन करते हैं वह मिथ्या कभी नहीं होता मित्रों के विषय में शुभ व शत्रुओं के विषय में अशुभ २१ हम जो कहें कि ऐसा होगा तो वैसा ही हो इससे हमको सब लोग सत्यवादी कहते हैं २२ सो इस विषय में सब लोक भर हमारा साक्षी है आपके समझाने के ही लिये हमने कहा है कुछ अपनी बड़ाई के लिये नहीं कहा २३ हमने कभी अपनी बड़ाई अपने मुख से नहीं की क्योंकि अपने मुख से अपनी बड़ाई करनी मूर्खों का काम है सज्जनों का नहीं २४ व आप सुन लेंगे कि पाण्डवों को मत्स्यदेशनिवासियों को पाञ्चालदेश व केकयदेशवालों को व सात्यकी तथा वासुदेव को दुर्य्योधन ने जीत लिया २५ जैसे सब नदियां समुद्र में पहुँच नष्ट हो जाती हैं दिखाई नहीं देतीं वैसे ही वंश व मित्र सहित पाण्डव लोग हमारे सामने आय नष्ट ही हो जायँगे फिर न दिखाई देंगे २६ हमारे उनसे पर तो बुद्धि है व उनसे पर तेज व उनसे पर वीर्य व उनसे पर विद्या व उनसे पर योग सब बातों में हम उनसे विशेष हैं २७ जो बात भीष्मजी, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, शल्य व शल अस्त्र विद्या में जानते हैं वे सब बातें हममें हैं ॥ २८ ॥

दो० यह सुनि नृप पुनि पाण्डवन, कहँ सञ्जयसन पूछ ।
ममसुत बल सुनि पाण्डवन, बलकछु और न कूछ ॥ १।२९ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बासठवाँ अध्याय।

दो० बासठवें महँ कहब जिमि, कर्ण सुयोधन पाहिं।
नृपहि देखि पाण्डवपरक, कह्यहु वचन वरआहिं॥ १॥

वैशम्पायनजी बोले कि, जब धृतराष्ट्रजी फिर बड़े प्रेम से अर्जुन के समाचार सञ्जय से पूछने लगे तो उनकी बतकही की ओर व उनका न ख्याल कर कर्ण दुर्योधन को प्रसन्न करते हुए बोले १ कि हमने परशुरामजी से मिथ्या प्रतिज्ञा कर जो ब्रह्मास्त्रविद्या सीखी थी उसको जान मुनिराज परशुरामजी ने शाप दिया था कि जा चोर अन्त-काल में यह ब्रह्मास्त्रविद्या तुझे छोड़ देगी तेरे काम न आवेगी २ बड़ा भारी अपराध करने पर भी महर्षिजी ने हमको बड़ा शाप नहीं दिया यह बड़ी दया की क्योंकि वे तीक्ष्ण तेजस्वी महर्षिजी समुद्र सहित पृथ्वी भर को कोप करने पर भस्म कर सक्के थे ३ हमने बड़ी प्रार्थना की तो उन्होंने कहा जब तक तुम्हारी आयु है तब तक इससे बड़े बड़े कार्य कर सकोगे मरण समय में तुम्हारे काम में यह अस्त्र न आवेगा सो अभी तो हमारी आयु बहुत बाकी है इससे इस ब्रह्मास्त्र से हम अर्जुन को मार सक्के हैं यह भार हमारे शिर है ४ ऋषि के प्रसाद से एक निमेष मात्र में मत्स्य पाञ्चालादि राजाओं को मार पाण्डवों का नाशकर शस्त्रधारियों के लोक को हम चले जायँगे ५ अब भीष्मजी तुम्हारे ही समीप बैठे रहें व द्रोणाचार्य भी यहीं रहें अन्य राजा लोगों का भी कुछ काम नहीं हमारे साथ कुछ थोड़ी सी फौज कर दी जाय हम अकेले ही पाण्डवों को मार डालेंगे यह भार हमारे ऊपर आया ६ जब कर्ण ने ऐसा कहा तो भीष्मजी उससे बोले कि हे कर्ण! यह क्या बक रहा है तुझे काल ने बनाय ही घेर लिया है तू यह नहीं जानता कि हमीं तो इस सभा में प्रधान हैं हमारे मारे जाने पर सब कौरव मारे जायँगे जब औरों को कुछ समझना ही नहीं तो उनके बचने से क्या होगा ७

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कृष्णचन्द्रजी के सङ्ग अर्जुनजी ने अग्नि को खाण्डववन देने के समय जो कर्म किया है उसे जान अब तुम अपने मन की मन ही में रहने दो बहुत मत बको ८ व जो शक्ति देवताओं के राजा इन्द्रजी ने तुमको दी है उसे तुम समर में श्रीकृष्णचन्द्रजी के हाथ से चलाये हुए सुदर्शन चक्र से भस्म की हुई देखोगे ९ व जो यह तुम्हारा बाण है जिस पर फूल पाती बहुत चढ़ाते हो व बहुत मानते हो वह अर्जुन के बाणों से मारे हुए तुम्हारे प्राणों के सङ्ग नष्ट हो जायगा १० हे कर्ण ! बाणासुर व भौमासुर के मारनेवाले श्रीकृष्णचन्द्रजी अर्जुन की रक्षा करते हैं जोकि संग्राम में तुम्हें सरीखे सहस्रों मानी शत्रुओं को क्षणमात्र में मार डालते हैं ११ इतना सुन कर्ण रक्त वर्ण मुख कर बोला कि इसमें कुछ सन्देह नहीं जैसा तुम कहते हो कृष्णचन्द्रजी वैसे ही हैं बरन उससे भी अधिक हैं परन्तु जो आपने कुछ कठोर वचन कहा है उसका फल सुनिये १२ हम अब बाण न चलावेंगे क्योंकि जो हम युद्ध करेंगे तो विजय किये हुए हमको पितामहजी सभा में देखेंगे व जब हम युद्ध न करेंगे तो इनके वीर्य तो है नहीं मारे जायँगे तब हमारा प्रभाव पृथ्वी भर देखेगी १३ वैशम्पायनजी बोले कि इतना कह महाधनुर्द्धर कर्ण अपने घर को चला गया सभा को उसने छोड़ दी व भीष्मजी कुरुवंशियों के आगे हँसते ही से दुर्योधन से बोले १४ सूतपुत्र कर्ण तो बड़ा ही सत्यप्रतिज्ञ ठहरा कहां तो प्रथम प्रतिज्ञा की कि हम अकेले ही सबको मार डालेंगे कहां अब कहकर चला गया कि तुम्हारे जीते जी अब हम लड़ेहींगे नहीं यह कैसा तुम्हारा मित्र ठहरा फिर अभी तो कहता था कि पाण्डवों के मारने का भार हमारे ऊपर आया अब घर बैठे वह भार कैसे सहेगा हम तो जानते हैं कर्ण तो जैसे ही तैसे पाण्डवों को मारेगा पर व्यूह बनाय भीमसेन सबको मारेंगे वह अच्छी तरह सब जने देखोगे १५ देखो कर्ण कहता था कि अवन्तीपुरी के राजा कलिङ्गदेश के राजा जयद्रथ चँदेली का राजा व वाह्लिकदेश का राजा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इनकी विद्यमानता में हमीं सब पाण्डवों को व सबों को मारेंगे १६ भला यह क्या मारेगा क्योंकि जब भगवान् अनिन्द्य परशुरामजी से इसने ब्राह्मण बनकर ब्रह्मास्त्रविद्या पढ़ी तभी इस अधम पुरुष का धर्म, तप, व्रत सब नष्ट हो गया १७ जब इस प्रकार भीष्मजी ने कहा तो कर्ण सभा में अस्त्र फेंक अपने घर को चला गया व धृतराष्ट्र का पुत्र अल्प बुद्धि दुर्योधन भीष्मजी से बोला ॥ १८ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥

तिरसठवाँ अध्याय।

दो० तिरसठवें महँ कहब जिमि, दुर्योधन कह भीष्म।
पुनि त्यहि भाष्यहु विदुरकहि, दान्त चिह्न सम ग्रीष्म ॥ १ ॥

दुर्योधन बोले कि, हे भीष्मजी! हम व पाण्डव लोग सब मनुष्य ही हैं व जन्म भी एक ही वंश में हमारा उनका है व वीर्य रूपादिकों में भी एक ही प्रकार के हैं फिर आप पाण्डवों की ही जय होगी यह कैसे मानते हैं १ हम व पाण्डव वीर्य से, पराक्रम से, अवस्था से, ज्ञान से व शास्त्र पढ़ने से समान हैं २ व अस्त्रविद्या भी समान ही सब लोगों ने सीखी है व शीघ्रतादि कुशलता व शूर समृद्धि भी समान ही हममें उनमें है व हम सबकी जाति भी समान ही है व मनुष्य ही वे भी हैं व हम भी ३ फिर पितामहजी आप पाण्डवों की ही विजय कैसे जानते हैं हम न आपके भरोसे युद्ध करने का आरम्भ करते हैं न द्रोणाचार्य के न कृपाचार्य के न वाह्लिक के ४ न और राजाओं के भरोसे किन्तु हम कर्ण व हमारा भाई दुश्शासन ५ बस तीन ही जने सब पाण्डवों को समर में पैने बाणों से मार डालेंगे उसके पीछे बहुत २ दक्षिणा दे अश्वमेधादि यज्ञ करेंगे ६ व ब्राह्मणों को गाय घोड़े धनादि दे तृप्त करेंगे व जैसे बिना मल्लाह की नावों को जलकुण्डों में घुमाय बोर डारता है उसी रीति से समर में हम लोग पाण्डवों को बोरेंगे व यज्ञ के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पशुओं के समान मारेंगे ७ सो कुछ परोक्ष में नहीं तुम्हारे सामने ही केशव सहित पाण्डवों को रथनागादि सहित मारेंगे कि उनका अहंकार कहीं को चला जायगा ८ यह सुन विदुरजी ने विचारा कि यह इन्द्रियादिकों को दमन किये नहीं है इससे कुलक्षय करेगा इसलिये दम के लक्षण कहते हुए अपने आप बोल उठे इस संसार में जिसको ब्रह्म जानने की इच्छा है उसे दम ही सनातन धर्म है यह निश्चय यज्ञ वृद्धों ने कहा है ९ व जिसमें दम होता है दान क्षमा उसकी सिद्धियां हैं व दान्त होने के पीछे तपस्या ज्ञान व शास्त्र का पढ़ना भी आता है विना दम अर्थात् इन्द्रियों को अपने वश में किये कुछ नहीं होता १० दम ही तेज बढ़ाता है व दम ही उत्तम पवित्र है व दम करने ही वाला पापरहित व वृद्ध तेजस्वी भी होता है ११ व जो पुरुष दम नहीं करते उन अदान्तों से प्राणियों को ऐसी भय रहती है जैसे मांसभक्षी व्याघ्र सिंहादिकों से रहती है व उन्हीं के रोंकने के लिये ब्रह्माजी ने क्षत्रियों को बनाया है १२ इससे ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ व संन्यास चारों आश्रमों के लिये दम श्रेष्ठ है अब जिनका फलोदय दम है उनका लक्षण कहते हैं १३ क्षमा, धारणशक्ति, अहिंसा, समता, सत्य, सरलता, इन्द्रियों का जीतना, धैर्य, कोमलता, लज्जा, अचञ्चलता १४ अकृपणता, अक्रोधता, सन्तोष, श्रद्धा, ये गुण दान्त में रहते हैं व काम, लोभ, अहङ्कार, क्रोध, निद्रा, मिथ्या बकना १५ मान, ईर्ष्या, व शोक इनकी सेवा दान्त नहीं करता क्योंकि सीधापन, अशठता व शुद्ध रहना ये लक्षण दान्त दम करनेवाले के हैं १६ अलोलुप, थोड़ा चाहनेवाला, किसी वस्तु की इच्छा न करना, समुद्र तुल्य धैर्य रखनेवाला ऐसा पुरुष दान्त कहाता है १७ सदाचारी, शीलसम्पन्न, प्रसन्नचित्त, आत्मज्ञानी पण्डित हो वह पुरुष यहां सुखपाय मरने पर सुन्दरगति पाता है १८ व जिसको किसी प्राणी से भय न हो न उससे किसी प्राणी को भय हो वह पुरुष सबसे उत्तम व परिपक्वबुद्धि कहाता

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

है १९ व जो सब प्राणियों का हितकारी सबका मित्र हो व उससे कोई प्राणी ऊबता न हो व समुद्र समान गम्भीर स्वभाव हो व प्रज्ञा से तृप्त रहता हो व शान्त चित्त हो जाता है २० व जो भाग्य के दिये हुए भोगों से तथा सदाचार से भी मुक्त रहते हैं व शम में परायण होते वही दान्त कहाते व वही प्रसन्न भी रहते हैं २१ व जो पुरुष मनसा, वाचा, कर्मणा कुछ करता ही नहीं श्रवण मननादि परोक्ष ज्ञान ही से तृप्त रहता है व इन्द्रियों को जीते रहता व सब कहीं ममता शून्य रहता ऐसा तो ब्रह्म ही हो जाता है ॥ २२ ॥

दो० जिमि अम्बर महँ पक्षिगति, नहिं लखात किय खोज।
इमि प्रज्ञान वितृप्त मुनि, मार्ग्ग लखात न सोज ॥१।२३॥
गृह तजि जो मोक्षहि चहत, ताहित शाश्वत लोक।
तेजोमय कल्पित रहत, स्वर्ग्ग माहिं गत शोक ॥२।२४॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि विदुरवाक्ये त्रिषष्टितमोऽध्यायः॥६३॥

चौंसठवां अध्याय।

दो० चौंसठवें महँ कहब जिमि, विदुर कह्यहु इतिहास।
दो पक्षी यक व्याध कर, जो न दान्त त्यहि नास॥

विदुरजी बोले कि, हमने पूर्व्वजों से सुना है कि एक चिड़ीमार ने पक्षियों के पकड़ने के लिये पृथ्वी पर जाल फैलाया १ उसमें आय दो पक्षी फँस गये पर वे दोनों आपस में मेल कर साथही ऐसे जोर से उड़े कि जाल समेत आकाश को चले गये २ जब चिड़ीमार ने देखा कि ये दोनों तो जाल समेत आकाश को उड़ गये तो जहां २ होकर ऊपर २ वे उड़े जाते थे नीचे २ मारे लोभ के वह भी दौरा चला जाता था ३ इस प्रकार पक्षियों के पकरने की इच्छा से नीचे २ दौरते हुए चिड़ीमार को एक मुनि ने सन्ध्या वन्दनादि कृत्य करने के पीछे देखा ४ उन दोनों पक्षियों को तो ऊपर उड़ते हुए व लुब्धक को

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पीछे दौड़ते देख इस अगाड़ी वाले श्लोक को पढ़ मुनि ने पूछा कि ॥ ५ ॥

दो० लुब्धक यह आश्चर्य्य मोहिं, लागत बहुत विचित्र ।
जो खेचर पकरन लिये, पैदर दौरत मित्र ॥ १ । ६ ॥

यह सुन चिड़ीमार बोला कि, अभी ये दोनों सम्मत कियेहैं इससे मेरा जाल भी उड़ाये लिये जातेहैं जहां दोनोंसे विवाद होगा वहां सहित जाल नीचे गिरेंगे तब मैं इन्हें पकड़ लूंगा बस मेरा कार्य्य सिद्ध हो जायगा ७ विदुरजी बोले कि इस तरह मुनि से कह वह लुब्धक थोड़ी ही दूर और उनके पीछे पीछे दौरा कि इतनेमें उन दोनोंमें विवाद हुआ दोनों सहित जाल नीचे गिरे ८ व आपस में लड़ने लगे यहां तक कि बनाय जाल में बझ गये बस निकट आय चिड़ीमार ने दोनों को पकड़ मार डाला व अपने घर को वह ले गया ९ इसी तरह जो जातिवाले भाई बन्धु आपस में विग्रह कर लड़ते हैं वे उन दोनों पक्षियों के समान पकर मार डाले जाते हैं क्योंकि शत्रु के वश में विग्रह होने से लोग परी जाते हैं १० एक साथ भोजन करना, एक साथ वार्तालाप करना, परस्पर पूछा पाछी करना व मङ्गलादि पूछना, उनके यहां जाना व उनको अपने यहां बुलाना ये जातिवाले भाई बन्धुओं के कार्य्य हैं विरोध करना आपस का काम कभी नहीं है ११ जो लोग सुन्दर मन से समय पर अपने वृद्धों की सेवा करते व उनके वचन मानते हैं वे लोग सिंह से रक्षित वन के समान अच्छेद्य होते हैं १२ व जो लोग धन राज्यादि पाय अकेले दीन से होकर बैठकर खाया भोगा चाहते हैं वे अपना धन अवश्य शीघ्र ही अपने शत्रुओं को देते हैं १३ हे धृतराष्ट्रजी ! जाति के लोग लुकेठों के तुल्य होते हैं जब तक दूर २ रहते हैं धुआंया करते हैं जब इकट्ठे होते हैं तो एक में मिलकर बरने लगते हैं फिर उनके समीप कोई नहीं आ सक्ता १४ इस विषय में एक वृत्तान्त हम और कहते हैं जैसा कि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हम ने पर्वत पर देखा है उसे सुन फिर जैसा उचित हो वैसा करो १५
एक समय हम यन्त्र मन्त्रादि जाननेवाले ब्राह्मणों व किरातों के साथ
उत्तरदिशा में एक पर्वतपर गये १६ वह पर्वत गन्धमादन पर्वत के
समीप है व सब लतादिकों से आच्छादित है औषधियां उसपर सब
प्रकाशित देवता गन्धर्व सिद्धादि उसकी सेवा करते थे १७ उसपर
हमने एक स्थानपर कुम्भ के समान बड़ा सोनामाषी नाम एक धातु
देखा व हमारे सब साथियों ने भी देखा १८ उसकी रक्षा विषधर सर्प कर
रहे थे व वह धातु कुबेरजी को बहुत प्रिय था जिसको प्राप्त हो मनुष्य
भी हो तो अमर होजाय १९ अन्धा हो तो उसके नेत्र होजायँ वृद्ध
मनुष्य उसका सेवन करे तो युवा होजाय यह बात वे ब्राह्मण लोग
कहते थे जो यन्त्र मन्त्रादि जानते थे २० उसके पीछे जो किरातलोग
हमारे सङ्ग थे उन्होंने उसे लेना चाहा पर उन सर्पों ने काटा वे सब मर
गये २१ ब्राह्मणोंने नहीं लेना चाहा वे बचगये उसीतरह यह आपका
पुत्र पृथ्वी अकेलेही लिया चाहता है मारे लोभ के मधु तो देखता है
पर यह नहीं देखता कि कैसे कठिन स्थान में लगी है वहां जायँगे तो
गिरकर चकनाचूर होजायँगे २२ दुर्य्योधन समरमें अर्ज्जुनके सङ्ग लड़ना
चाहते हैं परन्तु हम इनमें तेज व विक्रम उनके समान नहीं देखते २३
क्योंकि अर्ज्जुन ने रथ पर चढ़ अकेले ही पृथ्वी भर को जीत लिया
है व भीष्म द्रोणादि जानों सब विराट नगर में गये थे २४ पर सब भाग
खड़े हुए अब तुम को किसका बल देखना है जो कोई देखने के योग्य
हो वह तुम्हारे सामने क्यों नहीं खड़ा होता ॥ २५ ॥

दो० द्रुपदमत्स्य पति विजयि ये, क्रुद्ध होहिं जब भूप ।
पवनेरित पावक सदृश, रण न शेषि हैं रूप ॥ १ । २६ ॥
यासों नृप निज अङ्कमहँ, लेहु युधिष्ठिर काहिं ।
युद्ध भये तब होय है, अजय यहां शक नाहिं ॥ २ । २७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुष्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पैंसठवां अध्याय ।

दो० पैंसठवें महँ कहब जिमि, पुनि धृतराष्ट्र भुआल ।
समझायहु दुर्य्योधनहिं, कहि कहि वचन विशाल ॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी बोले कि, हे दुर्य्योधन, पुत्र ! जो हम तुमसे कहें वही मानो तुम उस कुमार्ग को मार्ग समझते जैसे अच्छीतरह मार्ग न जाननेवाला मुसाफिर जानता है १ क्योंकि तुम पांचों पाण्डवों का तेज अकेले हरा चाहते हो वह तेज पञ्च महाभूत पृथ्वी, जलाग्नि वाय्वाकाश के तेज के समान है जिनके तेज से सबलोक धारण कराये जाते हैं इससे अधिक कौन कुमार्ग्ग होगा २ व धर्म्म समान टिकेहुए कुन्तीजी के पुत्र युधिष्ठिरजी को तुम किसी प्रकार न जीत सकोगे चाहे मर भले रहो ३ व जिनके समान बलवान् कोई दूसरा भूतलमें विद्यमानही नहीं व रण में शत्रुओं को कालरूपही दिखाई देते उन भीमसेन को तुम भयभीत किया चाहते हो यह ऐसा है जैसे वृक्ष प्रचण्ड पवन को भयभीत किया चाहे ४ व सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ जैसे कि सब पर्व्वतों में सुमेरु पर्व्वत ऐसे गाण्डीवधन्वा धारण करनेवाले अर्ज्जुन से युद्ध में कौन लड़ेगा ५ व पाञ्चाल देशके राजाके पुत्र धृष्टद्युम्न शत्रुओं के मध्य में बाण छोड़ते हुए यहां के किस वीर को न मारडालेंगे जैसे वज्र चलाते हुए इन्द्रजी शत्रुओंके ऊपर वज्र चलाते हैं ६ व वृष्णि अन्धक वंशियों में सम्मत पाण्डवों के हित में रत सात्यकी जी तुम्हारी सेना का विध्वंस करी डालेंगे ७ व जो प्रतिमान से तीनों लोकों में सबसे अलग पराक्रमी हैं जिसके समान कोई भी नहीं है उन पुण्डरीकाक्ष कृष्णचन्द्रजी से कौन बुद्धिमान् युद्ध करेगा ८ कृष्णचन्द्रजी के व अर्ज्जुन के स्त्री ज्ञाति बन्धु बान्धव आत्मा व पृथ्वी सब एकही समझो कुछ उन दोनों में अन्तर नहीं है ९ व वासुदेवजी आप भी अतिदुर्द्धर्ष व यतात्मा हैं व पाण्डव लोग उन्हींके हैं फिर जहाँ कृष्णचन्द्र विद्यमान

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हैं उनको पृथ्वी भर भी नहीं सहसक्ती १० इससे हे तात! अर्थ कहनेवाले सज्जन सुहृदों के वचनों पर टिको व सबसे वृद्ध भीष्म पितामहजी के वचन मानो ११ व हमारे भी वचन मानो व कौरवों के अर्थ ही की बात सदा देखनेवाले द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, विकर्ण व महाराज वाह्लीकजी के वचन मानो १२ इन सबलोगों को हमारेही समान तुम को मानना चाहिये क्योंकि ये सब धर्म्मवेत्ता हैं व सब हमारे तुल्य स्नेह करते हैं १३ व जो विराट नगर में तुम अपने सौ भाइयों समेत थे तथा भीष्म कर्णादि भी विद्यमान थे सबके सामने अर्ज्जुन गाइयों को खेद ले गये व तुम्हारी सेना तितिर बितिर होगई १४ यह बात महा अद्भुत उस नगर की सुनी जाती है कि तुम लोग बड़े २ पराक्रमी बहुत से थे व अर्ज्जुन अकेले ही थे बस इस विषय का यही दृष्टान्त है कि उनसे तुम युद्ध में न जीतोगे ॥ १५ ॥

दो० तहँ अर्ज्जुन एकहि कियो, किमि सब भाइ समेत।
यासों तिन निजभाइ गुनि, देहु भाग करि चेत ॥ ११६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६५ ॥

छासठवां अध्याय।

दो० छासठवें महँ कहब जिमि, पुनि सञ्जय सनभूप।
पूछयहु कृष्णादिकन कर, अभिप्राय सुख रूप ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि, महाप्राज्ञ धृतराष्ट्रजी इस प्रकार दुर्य्योधन से कह फिर सञ्जय से पूछने लगे कि १ हे सञ्जय! कृष्णचन्द्रजी की जो बातें कुछ और बाक़ी हों वे सुनावो व उनके पीछे अर्ज्जुनने जो कुछ कहा हो वह भी सुनाना इस बात के सुनने में हमको बड़ा कुतूहल है २ यह सुन सञ्जय बोले कि वासुदेवजी की बातें तो होगईं उनके वचन सुन कुन्तीजी के पुत्र अर्ज्जुनजी ने जो बड़ी दुर्द्धर्षता से कृष्णचन्द्रजी के सुनते में कहा है सुनाते हैं सुनिये ३ शन्तनुजी के पुत्र

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पितामह भीष्मजी से व धृतराष्ट्रजी से, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, कर्ण, महाराज बाह्लिक से ४ अश्वत्थामा, सोमदत्त, शकुनी, दुश्शासन, शल, पुरुमित्र व विविंशति ५ विकर्ण, चित्रसेन, जयत्सेन, विन्दानुविन्द, अवन्तीपुरी के राजा, दुर्म्मुखनाम कौरव से ६ सिन्धुदेश के राजा, दुस्सह, भूरिश्रवा, भगदत्त, राजा जलसन्ध ७ व और भी जो राजा लोग वहां मरने की इच्छा से आये हों जिन्हें पाण्डवों से युद्ध करने के लिये कौरवों ने बुलाया हो व पाण्डवाग्नि में भस्म हुआ चाहते हों ८ उन सब लोगों से यथायोग्य हमारी ओर से प्रणामादि कह कुशल पूछ फिर पाप करनेवाले सुयोधन से राजसमाज के मध्य में यह कहना ९ जो दुर्य्योधन, असहनशील, दुर्ब्बुद्धि, पापात्मा, महालोभी है वह जब अपने मन्त्रियों समेत बैठा हो तब हमारे वचन कहना १० इस प्रकार हमको बनाय स्थापित कर अर्ज्जुनजी ने अर्थयुक्त व धर्म्मसंयुक्त वचन वासुदेवजी की ओर अच्छे प्रकार देख नेत्र लाल कर व बनाय फैलाय कहा ११ कि जिस प्रकार श्रीकृष्णचन्द्रजी के सामने हमारे वचन तुमने सुने हैं उसी प्रकार मध्य सभा में सुयोधनसे कहना खबरदार कोई बात रहने न पावे १२ वह यह वचन है कि तुम लोग ऐसा यत्न करो जिसमें हम महाबाणों के अग्नि में जोकि रथ वायु से प्रेरित होगा व धनुषही स्रुव के स्थान में होगा व सब अस्त्रशस्त्रोंके बलको हर लेगा ऐसे समरयज्ञ में तुमलोगों को आहुति बनाय होम न करें १३ नहीं अच्छा होगा शत्रुओं के नाशक महाराज युधिष्ठिरजी का भाग बहुत ही शीघ्र बांट दो कुछ काम नहीं यदि ऐसा न करोगे तो इसमें कुछ भी अन्तर न समझना हम तीक्ष्ण बाणों से मार हाथी घोड़े पैदर सेना समेत तुम लोगों को यमराज के पुर को पहुँचा देंगे ॥ १४ ॥

दो० तब हम अर्ज्जुन कृष्ण के, करि प्रणाम लै आज्ञ ।
वचन कहन अतिवेग यहँ, आये भूपति प्राज्ञ ॥ १ ।१५ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६६ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सरसठवां अध्याय।

दो० सरसठवें महँ कहब जिमि, सभा उठे पर भूप।
पूछ्यहु सञ्जयसन सुमत, उन न कहा गुपचूप ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि, सञ्जय के ऐसे वचन धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्योधन ने न प्रसन्न किया तब राजा लोग चुप हो रहे व सबके सब उठ २ अपने २ स्थान पर चले गये राजसभा खाली हो गई १ जब सब राजालोग उठ गये तो राजा धृतराष्ट्रजी एकान्त में फिर सञ्जय से कुछ पूछनेपर हुए २ व मन में यह विचार था कि हमारे पुत्रों की विजय हो क्योंकि पुत्रों के वशीभूत तो थे ही व पाण्डवों का मुख्य अभिप्राय व निश्चय जानलें वैसा करें ३ धृतराष्ट्रजी बोले हे सञ्जय! तुम पाण्डवों का वृत्तान्त व शक्ति सब अच्छीतरह जानते हो व यहां भी सेनामें जो कुछ सारांश है वह भी जानते हो बताओ कौन बात हमारे पुत्रों के यहां अधिक है व कौनसी पाण्डवोंमें कमहै ४ तुम इस विषय का सब सारांश जानते हो क्योंकि सर्व्वदर्शी, धर्म्म, अर्थ में निपुण व निश्चय जाननेवाले हो इसी से हमने तुम से पूछा है जो युद्ध होगा तो कौन हारेंगे व कौन जीतेंगे व इधर उधर जितने इकट्ठा हुए हैं उनमें कौन कौन युद्ध की इच्छा करते हैं कौन २ केवल आय ही गये हैं पर लड़ना नहीं चाहते ५ यह सुन सञ्जय बोले कि हे राजन्! हम एकान्तमें तुम से कुछ भी न कहेंगे क्योंकि हमारे विषयमें तुम्हारी दोषदृष्टि होजायगी इससे अपने पिता व्यासजी को बुलालो व अपनी रानी गान्धारीजी को भी तब हम तुम से कहेंगे ६ क्योंकि वे दोनोंजने जो दोषदृष्टि हमारे विषय में करोगे उसको दूर करते रहेंगे क्योंकि वे दोनों धर्म्मज्ञ निपुण व निश्चय जाननेवाले हैं इससे उन्हीं दोनों के सामने कृष्णचन्द्र व अर्ज्जुन का सब मत तुमसे कहेंगे ७ वैशम्पायनजी बोले कि, सञ्जय यह कहते ही थे कि विदुरजी व्यासजी और गान्धारी को वहाँ

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बुलालाये व वे आगये ८ उस समय सञ्जय व धृतराष्ट्र दोनों का मत अच्छी तरह जान भगवान् व्यासजी बोले कि ९ हे सञ्जय! जो धृतराष्ट्र पूछते हैं कृष्णचन्द्र व अर्ज्जुन का अभिप्राय जैसा तुम जानते हो यथातथ्य कहो कुछ भी न्यूनाधिक न हो ॥ १० ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥

अरसठवां अध्याय।

दो० अरसठवें महँ कहब जिमि, कृष्णार्ज्जुन बलवृत्त।
निश्चय सञ्जय भूपसन, कह्यहु पत्त अपहत्त ॥ १ ॥

सञ्जयजी बोले कि, कृष्णचन्द्रजी व अर्ज्जुनजी दोनों महाधनुर्द्धर हैं व दोनों सब प्रकार पूजित हैं व दोनों साक्षाद्ब्रह्मरूप हैं सबके ऊपर कृपा करने के लिये अपनी इच्छा से जन्म दोनों जनोंने लिया है १ मनस्वी भगवान् वासुदेव का चक्र पांच हाथ का लम्बा है उसी के भीतर सब कुछ आजाता है जिस २ बात की चिन्तना करते सब हो जाता व उनकी ओर को दृष्टि नहीं कर सक्ता २ वह वासुदेव का चक्र कौरवों का तो संहार किया चाहता व पाण्डवों का हित इससे वह सार असार बल जानने के लिये तेज का पुञ्ज अब भासित होता है ३ इसी से उस चक्र से श्रीकृष्णचन्द्रजी ने नरकासुर, शम्बरासुर, कंस व शिशुपाल को जोकि बड़े ही बलवान् थे एक खेल के साथ जीत लिया ४ व वे जैसे ही मन करें पृथ्वी अन्तरिक्ष व स्वर्ग सबको अपनी वश में करलें बरन सबको वश में किये ही हैं ५ हे राजन्! जो आप बार २ पाण्डवों के विषय में सारासार बल जानने के लिये पूछते ही हो तो हम विस्तारपूर्व्वक वर्णन करते हैं सुनिये ६ एक ओर तो सब जगत् व एक ओर जनार्द्दन भगवान् तो भी सार में सब जगत् से जनार्द्दन भगवान् विशेष हैं ७ सब जगत् भर जो चाहे तो कृष्णचन्द्रजी को भस्म नहीं कर सक्ता व वे सबको क्षणमात्र में

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भस्म कर सक्ते हैं परन्तु वे कृष्णचन्द्र जहां सत्य, धर्म्म, लज्जा, सरलता होती है ८ उसी ओर रहते हैं फिर जहां वे रहते वहीं जय भी होती है व पृथ्वी, अन्तरिक्ष, स्वर्ग सबको भगवान् जनार्द्दनजी ९ एक खेल के साथ विचेष्टित करा देते हैं वे भगवान् पाण्डवों को यज्ञ बनाय लोक भर को मोह कराते ही से अधर्म्म करनेवाले मूढ़ दुर्य्योधनादि तुम्हारे पुत्रों को भस्म किया चाहते हैं १० व कालचक्र, जगच्चक्र, युगचक्र सबको भगवान् वासुदेव अपने योगबल से बार २ घुमाया करते हैं ११। १२ कहांतक कहैं जितना स्थावर जङ्गम संसार है व काल मृत्यु भी है सबके स्वामी कृष्ण ही हैं यह हम तुमसे सत्य ही कहते हैं १३ सब संसार के ईश भी हैं तथापि महायोगी सब जगत् में टिक कर्म्म करने का आरम्भ करते हैं जिसमें जगत् बढ़े जैसे खेती करनेवाले बढ़ने की इच्छा से सदा उसी के कर्म्मों का आरम्भ करते हैं १४ इसी से अपनी माया के योग से बढ़ने के लिये जगत् को वञ्चित कराते हैं जो पुरुष सबको छोड़ उन्हीं को सब प्रकार से प्राप्त होते हैं वे मोह को नहीं प्राप्त होते ॥ १५ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्यष्टषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६८ ॥

उनहत्तरवां अध्याय।

दो० उनहत्तरवें महँ कहब, जिमि धृतराष्ट्र महीप।
पुनि भाष्यहु निजपुत्रसन, कहि बहु ज्ञान प्रदीप ॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी बोले कि, हे सञ्जय! कृष्णचन्द्रजी को तुम कैसे सब लोक के स्वामी समझते व जानते हो व हम उनको वैसा क्यों नहीं जानते इसका कारण हमसे बतावो १ सञ्जय बोले, कि हे राजन्! सुनिये तुम्हारे विद्या नहीं है व हमारी विद्या कभी कम नहीं परती इससे विद्याहीन होने के कारण तुम्हारा अज्ञानान्धकार ध्वस्त नहीं हुआ बस इसी से केशव भगवान् को तुम नहीं जानते २ हे तात! विद्या

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ही से हम मधुसूदन भगवान् कृष्णचन्द्रजी को सब प्राणियों के उत्पन्न पालन व नाश करनेवाले व सबके कर्त्ता व उनको किसी ने नहीं किया व तीनोंकालों में विद्यमान जानते हैं ३ यह सुन धृतराष्ट्रजी बोले कि हे सञ्जय! तुम्हारे कौनसी भक्तिहै जिससे तुम मधुसूदन भगवान् को जानते हो कि ये तीनों कालों में व सब युगों में वर्त्तमान रहते हैं ४ सञ्जय बोले कि तुम्हारा कल्याण हो एक तो हम माया का सेवन नहीं करते न वृथा अधर्म करते भक्ति से केवल शुद्ध भाव रहते हैं इसी से शास्त्र के द्वारा जनार्दन भगवान् को जानते हैं ५ यह सुन धृतराष्ट्रजी दुर्योधन से बोले हे दुर्योधन! हृषीकेश जनार्दन भगवान् की शरण में प्राप्त हो सञ्जय हमारे बड़े श्रेष्ठ हैं इनका भी यही सम्मत है इससे हे तात! केशव भगवान् की शरण को जाव ६ यह सुन दुर्य्योधन बोले चाहे अर्ज्जुन के सखा होकर भगवान् देवकी के पुत्र लोकभर का नाश कर दें पर हम उनकी शरण को न जायँगे ७ यह सुन फिर धृतराष्ट्रजी बोले कि हे गान्धारीजी! तुम्हारा यह पुत्र दुर्य्योधन दुर्बुद्धि नरक को जाता है क्योंकि यह दुष्टात्मा भगवान् से ईर्षा करता है व महामानी है तथा साधुओं के वचनों का उल्लङ्घन करता है ८ गान्धारी बोलीं हे ऐश्वर्य्य की इच्छा से दुष्टात्मा दुर्य्योधन! अरे तू वृद्धों की आज्ञा का उल्लङ्घन करता है हे मूर्ख! ऐश्वर्य्य व प्राण दोनों छोड़ व हमको व पिता को भी छोड़ ९ व शत्रुओं को प्रीति बढ़ाता हुआ व हमको शोक से बढ़ाता हुआ जब भीमसेन की गदा से मारा जायगा तब पिता के वचन का स्मरण करेगा अभी क्यों करेगा १० इतना सुन व्यास भगवान् बोले हे राजन्, धृतराष्ट्र! तुम हमारी वार्ता सुनो तुम कृष्णचन्द्रजी के परम प्रिय हो क्योंकि तुम्हारे सञ्जय ऐसे दूत हैं जोकि तुम को इस संसारफांसी से छुड़ालेंगे ११ क्योंकि ये हृषीकेश भगवान् को पुराणपुरुष व सबसे परे जानते हैं व इससे जब एकान्त में उनकी सेवा करोगे तो बड़ीभारी भय से छूटजावगे १२ हे धृतराष्ट्र! जो पुरुष क्रोध

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हर्ष से आच्छादित हो नानाप्रकार की फांसियों से बन्ध अपने धनों से नहीं सन्तुष्ट होते दूसरों का धन लिया चाहते हैं १३ वे लोग कामान्ध हो यमराज के वश में परते हैं क्योंकि इच्छा उनको मूढ़कर डारती है जैसे अन्धों के टिका लेने चलनेपर अन्धे खाले ऊँचे गिरते हैं १४ जिस मार्ग्ग होकर बुद्धिमान् लोग जाते हैं वही एक मुख्य मार्ग्ग है व जो उसके विपरीत चलता वह मृत्युको प्राप्त होता है पर महात्मा उस विपरीत मार्ग्ग में नहीं चलते १५ धृतराष्ट्रजी बोले हे प्रिय, सञ्जय! हमसे वह निर्भय मार्ग्ग बतावो जिस पर चल हम हृषीकेश भगवान् को प्राप्त हों जोकि परम उत्तम सिद्धि रूप हैं १६ सञ्जय बोले कि जिसने अपना मन नहीं जीता वह पुरुष नित्य सिद्ध भगवान् जनार्द्दनजी को नहीं प्राप्त होता इससे अपनी इन्द्रियों को जीतने से अन्यत्र कोई उपाय परमेश्वर कृष्णचन्द्रजी की प्राप्ति के लिये नहीं है १७ इससे अप्रमाद से इन्द्रियों को प्रथम इच्छा से अलग करना चाहिये क्योंकि अप्रमाद व अहिंसा यही दो ज्ञान के कारण हैं १८ इससे हे राजन्! इन्द्रियों के जीतने में यत्न करो इधर उधर बुद्धि न जाने पावे उसको अपनी वश में करो १९ सो यह ज्ञान ब्राह्मणलोगही जानते हैं जोकि इन्द्रियों को अपनी वश में कर लेते हैं बस यही ज्ञान व यही मार्ग्ग है जिसके द्वारा बुद्धिमान् लोग जाते हैं ॥ २० ॥

दो० अजितेन्द्रिय नर पुञ्ज के, नहिं वश होत मुरारि।
शास्त्रयुक्ति के लाभ से, होत प्रसन्न खरारि ॥ १ । २१ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकोनसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ६९ ॥

सत्तरवां अध्याय।

दो० सत्तरवें महँ कहब जिमि, सञ्जय कीन बखान।
वासुदेव मुखशब्द कर, जिमि व्याकरण विधान ॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी बोले कि हे सञ्जय! तुम भगवान् वासुदेव के नामों व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कर्म्मों के अर्थ अच्छीतरह जानते हो इससे हम पूछते हैं पुण्डरीकाक्ष का वर्णन हमसे करो व यह भी बताओ कि हम उनको कैसे प्राप्त हों १ सञ्जय बोले कि हमने वासुदेवजी के नामोंका अर्थ तो कुछ अवश्य सुना है पर जितना अब हमको आता है कहैंगे क्योंकि वासुदेव भगवान् तो अप्रमेय हैं वस्तुतः उनके नामों का अर्थ जानना बहुत कठिन है २ बसें सब भूतप्राणी जिसमें उसे वासु कहते व वासु ही जो देव उनको वासुदेव कहते हैं व व्यापक होने से विष्णु नाम कहाया ३ व मा बुद्धि की वृत्ति को कहते हैं। उसे "धवयति" कहे, जो दूर करै उसे माधव कहते अथवा मा लक्ष्मी को कहते व धव पति को मा के धव पति को माधव कहते हैं अथवा मौन से ध्यान से व योग से माधव कहते हैं व सर्व-तत्त्वमय होने से मधु अब मधुसूदन कहाते हैं अथवा मधुपृथ्व्यादि २४ तत्त्वों को कहते हैं उनको हनै प्राप्त हो जो उसको मधुहा व मधुसूदन कहते अथवा मधु नाम दैत्य को हननेवाले के मधुहा मधुसूदन कहते ४ "कृषि" शब्द सत्ता का वाचक है व 'ण' शब्द निर्वृति का वाचक इस लिये इनदोनों के योग से कृष्णशब्द बनता है इसका अर्थ यह हुआ कि जो सब संसार को अपने में खींच ले उसे कृष्ण कहते हैं ५ व नित्य अक्षय अव्यय परमधाम को पुण्डरीक कहते हैं उसके भाव से पुण्डरीकाक्ष कहे जाते हैं व पुण्डरीक उजले कमल को कहते उसके समान अक्षि नेत्र जिसके हों वह पुण्डरीकाक्ष कहाता यह अर्थ तो प्रसिद्ध ही है व जन कहे चोर जनों को त्रास देने से जनार्द्दन कहाते हैं यद्वा जन अर्द्दन याचन करें मुक्त्यादि जिससे उसे जनार्द्दन कहते हैं ६ जिससे कि तत्त्व से च्युत नहीं होते व जो सत्त्व से हीन नहीं होता उसे सत्वत कहते व सत्वत ही को सात्वत कहते व वृष धर्म को कहते उसके कहने वाले को वृषभ कहते सो वेद हुआ व वही वृषभ वेद ही ईक्षण नेत्र जिसके हो वह वृषभेक्षण कहाता है यह भी विष्णु का नाम है ७ व जो उत्पन्न नहीं होता उसे अज कहते व अनीक कहे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सेना को जो जीतता उसे अनीकजित् कहते व देवताओं के मध्य में आप ही प्रकाशित होने से दामोदर कहाये अथवा दामरस्सी बांधी गई जिस के उदर में उसे दामोदर कहते हैं ८ हर्ष व सुख के ईश होने से हृषीकेश कहाये व अपने बाहुओं से द्यावापृथ्वी को धारण करने से महाबाहु कहाते हैं ९ व जो अधः नीचे को कभी न क्षीण हो उसे अधोक्षज कहते हैं व नरों का अन्तावस्था में अयन घर जिसमें होता वह नारायण कहाता है १० पूर करनेवाले को पूरु व पुरु कहते हैं व "सीदन्ति" कहे टिकते हों सब जिसमें उसे 'स' कहते व इन दोनों के योग से पुरुष बना व पुरुष ही जो उत्तम वही पुरुषोत्तम कहाता व पुरुषों में उत्तम पुरुषोत्तम यह अर्थ तो प्रसिद्धही है व असत् सत् सबके उत्पत्ति व नाश के स्वामी होने से सर्व भी नाम है ११ व धर्म्म में कृष्ण प्रतिष्ठित हैं व धर्म्म कृष्ण में प्रतिष्ठित है १२ व सत्य असत्य दोनों गोविन्द ही हैं इससे सत्य भी नाम है व विक्रमण करने से भी विष्णु नाम है व जीतने से जिष्णु नाम हुआ १३ व अन्त न होने से अनन्त नाम है व गाइयों व इन्द्रियों के जानने से गोविन्द नाम हुआ व अतत्त्व मिथ्याभूत जगत् को तत्त्व सत्य सा करने से प्रजाओं को मोहित करते हैं १४ इस प्रकार के नित्य भगवान् मधुसूदन महाबाहु अच्युत कृष्णचन्द्र भी अक्रूरता प्रकट करने के लिये तुम लोगों को समझाने को आवेंगे ॥ १५ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

इकहत्तरवां अध्याय।

दो० इकहत्तरवें महँ कहब, जिमि धृतराष्ट्र नरेश।
सञ्जय सों सुनि गुनि हृदय, जान्यहु कृष्ण परेश ॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी बोले कि, हे सञ्जय! हम नेत्रवालों के भाग्य की बड़ाई करते हैं जो कि उत्कृष्ट शरीर से सब दिशा व विदिशों को प्रकाशित

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करते शोभायमान कृष्णचन्द्रजी को समीप से देखेंगे हमारे तो नेत्र ही नहीं जो समीप भी आवेंगे तो भी न देख पावेंगे १ और फिर पाण्डवों की पूज्यवाणी कहते हुये कृष्णचन्द्रजी को कौरव लोग देखेंगे वह वाणी सृञ्जयवंशियों की कल्याणकारिणी होगी व जो उसको भूषित करेंगे उनके ग्रहण करनेवाली होगी व जो मृतक हो जायँगे उनके ग्रहण के योग्य न होगी व सब प्रकार अनिन्द्य होगी २ कृष्णचन्द्रजी जब यहां आवेंगे निरन्तर प्रकाशित एक वीर सबके प्रेरक यादवों में श्रेष्ठ शत्रुओं के निहन्ता व क्षोभक होंगे व वैरियों का यश छीन लेंगे ३ ऐसे वरदान देनेवाले, महात्मा, शत्रुनाशक व क्रूरता-रहित वाणी बोलते हुए व हमारे पुत्रादिकों को मोहित करते हुए वृष्णिवंशियों में श्रेष्ठ कृष्णचन्द्रजी को कौरव लोग देखेंगे धन्य है ४ व सनातन ऋषि नारायण आत्मज्ञ संन्यासियों की वाणी के समुद्र-रूप व कलश समान कर में ग्रहण करने के योग्य, मर्य्यादापालक, जाति से गरुड़ रूप शोभन पक्षवाले, प्रजाओं के हरनेवाले भुवन के स्थान ५ सहस्रशिरवाले, पुराणपुरुष, आदि मध्यान्त रहित, अनन्त-कीर्त्ति, बीज के स्थापन करनेवाले, अज, नित्य, परों के भी पर ऐसे कृष्णचन्द्रजी की शरण को मैं प्राप्त हूं ६ व तीनों लोकों के निर्माण करनेवाले व देवता, सुर, नाग, राक्षसों के भी उत्पन्न करनेवाले राजाओं के व पण्डितों के प्रधान व इन्द्रजी के छोटे भाई वामनरूप ऐसे कृष्णचन्द्रजी की मैं शरण में हूं ॥ ७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७१ ॥

बहत्तरवाँ अध्याय ।

दो० बाहत्तरवें महँ कहब, धर्म्मतनय जिमि भाख ।
कृष्णचन्द्रसों सकल दुख, जो सुनि हरि किय माख ॥ १ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अरु धृतराष्ट्र महीप पहँ, जान कह्यहु हरि आप।
धर्म्म सूनु रोंकेहु बहुरि, कह्यहु जान गत दाप॥ २॥

इतनी कथा सुन जनमेजयजी ने वैशम्पायनजी से पूछा कि जब सञ्जय पाण्डवों के यहां से कौरवों के पास को गये तो हमारे पिताजी के पितामह पाण्डवों ने क्या किया यह हम सुना चाहते हैं हम से कहिये १ वैशम्पायनजी बोले कि सञ्जय के चले जाने पर धर्म्म के पुत्र राजा युधिष्ठिरजी सब भक्तों व सात्वतवंशियों के पालक कृष्णचन्द्रजी से बोले २ कि हे मित्रवत्सल ! यह ऐसा काल आया है जिसमें आप को छोड़ दूसरे को नहीं देखते जो इस विपत्ति से हम लोगों को तारे ३ हे माधव ! आप के आश्रित हो निर्भय होकर भी हमलोग मिथ्याभिमानी अमात्यसहित दुर्य्योधन से प्रार्थना करें ४ जैसे सब विपत्तियों में वृष्णिवंशियों की रक्षा करते हो वैसेही आप को पाण्डवलोग भी रक्षा करने के योग्य हैं इससे इस महाभय से हमलोगों की रक्षा कीजिये ५ इतना सुन श्रीभगवान् बोले कि हे महाबाहो ! हम तो यहां प्राप्तही हैं जो आप को कहना हो सो कहिये जो आप कहोगे हम सब करेंगे ६ युधिष्ठिरजी बोले कि हे कृष्णचन्द्र ! आपने पुत्र सहित धृतराष्ट्र का विचार सुना जो सञ्जय ने हमसे कहा यह सब धृतराष्ट्रही का विचार है क्योंकि सञ्जय की वार्त्ता से धृतराष्ट्र के मन की बात खुलगई दूत तो मालिक की इच्छा के अनुकूल कहताही है जो जिसका दूत है उसके विपरीत कहे तो मारडालने के योग्य समझा जाय ७।८ देखिये विना राज्य दियेही हम लोगों से शान्ति चाहते हैं ऐसे लोभी हैं कि पापमन से अपने समान और को भी नहीं जानते ९ देखो हमलोग धृतराष्ट्रही की आज्ञा से बारह वर्षतक तो वन में रहे व एक वर्ष छल से छिपकर विराट नगर में रहे १० अब जब चौदहां वर्ष आया तो भी धृतराष्ट्रही राज्यपर टिके रहेंगे व हम को जो कहा था कि चौदहें वर्ष अपना राज्य लेना सो हमलोग अब भी राज्य न

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लें पर हम यह बात न मानेंगे क्योंकि ब्राह्मणों ने हमसे कहदिया कि अब राज्य तुमको मिलना चाहिये ११ लोभी राजा धृतराष्ट्र अपना धर्म्म नहीं देखते क्योंकि पुत्र के वशीभूत हैं इसीसे उसी मन्द की आज्ञा में चलते हैं १२ हे कृष्ण ! सुयोधनही के मतमें टिककर राजा हमलोगों के विषय में मिथ्या आचरण करते हैं व मारे लोभ के अपना प्रिय करते हैं १३ अब इससे अधिक दुःख हमको कौन होगा कि हमारी माता वहांहीं परी हैं व हम उनका सम्भार नहीं करसक्के न अपने इष्ट-मित्रों का पालन पोषण करसक्के हैं १४ देखिये काशी के राजा चँदेली के राजा व मत्स्यदेश व पाञ्चाल देश के राजा व आप ऐसे हमारे सहायक तिसपर भी हमने उनसे केवल पांचग्राम माँगे १५ कि अविस्थल, वृकस्थल, माकन्दी व वारणावत व पांचवां और जो तुम्हारे मन में हो सो दो १६ बस हमको पांचही दो चाहे ग्राम दो वा नगर दो कि जिनमें हम पांचोभाई बसें व युद्ध होने से ये भीष्मपितामहादि न मारे जायँ १७ पर दुष्टात्मा दुर्य्योधन ने पांच भी देना न अङ्गीकार किया अपनेही को वह राजा मानता है फिर इससे अधिक दुःख हमको और कौन होगा १८ कुलीन के घर में उत्पन्न वृद्ध जो दूसरेके धनकी इच्छा करता है तो उसका लोभ प्रज्ञान का नाश करता है व प्रज्ञा लज्जा का नाश करती है १९ व लज्जा जब हत हो जाती है तो धर्म्म को बाधती है व जब धर्म्म हत हो जाता है तो लक्ष्मी का नाश करता है व लक्ष्मी जब हत हो जाती है तो पुरुष का नाश करती है बस जब पुरुष के पास धन न हुआ तो जानो वह मर गया २० क्योंकि निर्द्धन पुरुष के यहां से जाति के लोग मित्र व ब्राह्मण लोग विना सत्कार पाये लौट जाते हैं जैसे अफल वृक्ष से पक्षी लोग लौट जाते हैं २१ हे तात ! यह हमारा मरण है कुछ जीवन नहीं है जोकि पतित के समान हमारे यहां से ज्ञाति के लोग निवृत्त हो जाते हैं जैसे मृतक शरीर से प्राण निवृत्त हो जाते हैं २२ शम्बरासुर ने कहा है कि इससे अधिक

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पापी योनि कोई नहीं जिसको न आज भोजन मिला है न प्रातःकाल मिलने की आशा है २३ धन हीं को परम धर्म्म कहते हैं क्योंकि धन में सब कुछ टिका रहता है इससे जिनके धन है वही लोक में जीते हैं व जिनके पास धन नहीं है वे पुरुष मरे ही हैं २४ न जो पुरुष बलवान् किसी को धन से अलग खींच कर डाल देते हैं उन्होंने उस पुरुष के धर्म्म, अर्थ, काम, सब जानों मथ डारे व उस पुरुष को भी २५ इस अधन अवस्था को पाय बहुत तो मृतक ही हो जाते हैं व कोई अपना ग्राम छोड़ दूसरे ग्राम को भग जाते हैं कोई वन को चले जाते हैं व कोई नाश ही हो जाते हैं २६ व कोई विक्षिप्त ही हो जाते कोई शत्रुओं की वश में जाय परते हैं कोई किसी के दास हो जाते हैं कि हमको यहां से कुछ धन मिलेगा २७ इस तरह के मरण से पुरुष को आपत् बड़ी है क्योंकि जब धन का नाश हुआ जोकि धर्म्म व काम का निमित्त है तो फिर उससे अधिक विपत्ति क्या होगी २८ इससे तो जो निर्द्धन होकर मरना हो तो प्रथम ही मर जाय वह अच्छा है, क्योंकि सबके आगे से दुर्दशा भोग कर तो न मरना परे २९ हे कृष्ण ! जो पुरुष सदा का निर्द्धन ही है वह उस प्रकार दुःखित नहीं होता जैसा कि प्रथम धनवान् था व फिर दरिद्र हो गया वह दुःखित होता है ३० यद्यपि प्राणी अपने ही अपराध से बड़ा दुःख पाता है पर दुःखित होने पर इन्द्रादि देवताओं की निन्दा करता है अपनी निन्दा नहीं करता ३१ निर्द्धन पुरुष की ऐसी मति हो जाती है कि उसे सब शास्त्र भी नहीं रोंक सक्के और वह सेवकों को रिसाया करता व सुहृदों की निन्दा किया करता है ३२ उसको सदा क्रोध ही घेरे रहता इससे वह बार बार मोहित बना रहता व मोह की वश में रहने से सदा क्रूर ही कर्म्म की सेवा करता है ३३ व पापकर्म्म करते करते फिर वह वर्णसङ्कर हो जाता व वर्णसङ्कर उसे नरक को ले जाता यह हाल पापकर्म्म ही से होता है ३४ जो उसने ऐसी अवस्था में विचार न किया तो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नरक को जाता ही है व प्रबोध प्रज्ञा से ही होता इससे जो प्रज्ञाचक्षु होगा वही तरेगा नहीं तो डूबने में कौन सन्देह है ३५ क्योंकि जो पुरुष के प्रज्ञा होती है तो वह शास्त्रों कोही देखता है व जब शास्त्र में निष्ठा हुई तो फिर वह धर्म करनेलगता है जब धर्म करनेलगा तो उसे बुरे कामों के करने में लज्जा होजाती है ३६ व जो लज्जावान् होता वह पापोंसे वैर करने लगता जो पाप से वैर करता उसके धन फिर बढ़ता है जब धनवान् होगया तो फिर पुरुष होजाता ३७ व जब नित्य धर्म करने लगता तो प्रशान्तात्मा हो जाता व फिर सब कार्य्य के योग्य होजाता व फिर वह कभी अधर्म्म करने में बुद्धिही नहीं करता व पापकर्म्म में तो कभी टिकताही नहीं ३८ व जो निर्लज्ज होजाता वह विमूढ़ न स्त्री में गिना जाता न पुरुष में किन्तु वह वृक्षादि स्थावरों की गणना में गिनाजाता व पशुओं के तुल्य होजाता इससे उसका धर्म्म करने का अधिकारही नहीं रहजाता जैसे शूद्र वैसाही वह होजाता है ३९ लज्जावान् पुरुष देवताओं की रक्षा करता व पितरों की रक्षा करता व अपनी भी करताही है व इसी से अमृतत्व को प्राप्त होजाता बस पुण्यकर्म्म करनेवालों की यही काष्ठा है ४० सो लज्जावान् होना हममें जैसा है वह आपने प्रत्यक्षही देखा कि लज्जावान् ही होने के कारण राज्य से परिभ्रष्ट हो अब यहां परे हैं ४१ इससे अब हमलोग श्री को किसीप्रकार नहीं छोड़सक्के इस राज्यलक्ष्मी के लेने के यत्न करने में जो हमलोगों का वध भी होजाय तो भी अच्छाही है ४२ सो इस विषय में तो हमारा मुख्यपक्ष है लक्ष्मी पावहींगे क्योंकि हम तुम्हारे हैं व फिर प्रशान्तचित्त हैं समता को प्राप्त हैं फिर उस राज्यलक्ष्मी को प्राप्तही होंगे ४३ परन्तु यह बड़ी रौद्रगति है कि जो हमलोग अब कौरवों को मारहीकर राज्यलक्ष्मी पावेंगे यों न पावेंगे ४४ क्योंकि जो लोग अपने सम्बन्धवाले भी न हों व शत्रुता करते हों तो भी वे अवध्य हैं फिर जो ऐसे हों कि सम्बन्धही के हों फिर श्रेष्ठ हों तो उनको क्या कहना उनको तो मारनाही न चाहिये ४५ देखिये

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एक तो सब हमारी ज्ञाति के ठहरे फिर सब हमसे बड़े व हमारे सहायक भी भीष्मादिक रहे अब भी हैं व गुरुलोग भी उनमें हैं इनका वध तो महापाप का रूपही है फिर इस युद्ध में अच्छाई कौन सी है ४६ हां यह अलबत्ता है कि क्षत्रियों का धर्म्महीं पापी है फिर हमलोग क्षत्रियों केही बान्धव ठहरे अब चाहे धर्म्म हो व अधर्म्मपर हमलोगों का तो धर्म्मही ठहरा और वृत्ति तो हमलोगों की निन्दितही ठहरी ४७ तीन वर्णों की शुश्रूषा करना शूद्रों की वृत्ति ठहरी व वैश्य की वृत्ति बाजार की जीविका ठहरी व हमलोग क्षत्रियों की जीविका औरों को वध करें यह ठहरी व ब्राह्मणों ने जानों अपनी जीविका भीख माँगना अङ्गीकार कर रक्खा है ४८ देखो क्षत्रिय क्षत्रिय को मारता, व मछली मछली से अपनी जीविका करती है, कुत्ता कुत्ते को मारता है, यह कैसा अधम धर्म्म है ४९ हे कृष्ण! युद्ध करने में कलह तो जानों नित्यही है, व संग्राम होने के समय सबके प्राणों को कष्ट होताही है व बल जानों नीतिही के अधीन है फिर जय व पराजय अपने अधीन नहीं जो हो ५० व प्राणियों का जीवन मरण उनके अधीन नहीं व अकालमें न दुःखही मिलता न सुखही किन्तु दुःख सुख अपने २ समय पर मिलते हैं ५१ बाजेसमय अकेला पुरुष बहुतों को मार डालता व कहीं एक को बहुत मारते हैं कहीं शूरको कायर मारता व अयशस्वी पुरुष यशस्वी को मारता ५२ दोनों की जय होती कभी देखीही नहीं गई न दोनों की पराजय व दीनता जानों युद्ध में होती है व भागने में भी अच्छा नहीं होता फिर युद्ध में नाश व धननाश ये भी दोनों होतेही हैं ५३ सबप्रकार से युद्ध में क्लेशही होता है क्योंकि ऐसा कौन है जो औरों को मारे व आप न मारा जाय व जो युद्ध में मारागया उसके लेखे जय पराजय दोनों समानहैं ५४ मरण से पराजय कुछ विशेष नहींहै क्योंकि जिसकी विजय होती उसकी हानिही होती है क्योंकि उसके भी तो लोग मारेही जाते हैं ५५ अन्त में प्रिय पुत्रादिकों को

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भी लोग मारडालते हैं व जो पुत्रों को भाइयों को नहीं देखता उसी का वचन हीन होजाता है ५६ युद्ध में अपने प्राणों के रहने से निराश हो जाना चाहिये क्योंकि जो लोग धीर श्रेष्ठ व दयावान् होते हैं ५७ वही लोग युद्ध में मारेजाते हैं व छोटेलोग बच जातेहैं व शत्रुओं को मारडालने पर भी पश्चात्ताप ही होता है ५८ व दोष का उत्पादन करना भी पाप है व शत्रु का शेष रखना उससे भी पाप है क्योंकि जो शत्रु का शेष रह गया तो वह फिर बल पकड़ उसका शेष नहीं रखता इस से शत्रु का शेष न रखना चाहिये ५९ क्योंकि वह यही चाहता है कि हम अब इसका सर्व्वनाश कर डालें व जिसकी जय होती है वह तो फिर वैर छोड़ देता है व जो पराजित होता वह दुःखी रहने से उससे वैर रखता है ६० व जो पुरुष न जय की इच्छा करे न पराजय की दोनों को त्यागता है वह प्रशान्तचित्त हो सुख से सोता है व जिसने किसी से वैर कर रक्खा है वह नित्य दुःख से ही सोते हीं उसको नींद कभी नहीं आती ६१ व जो पुरुष अस्वस्थचित्त हो सर्प्प सहित मन्दिर के समान सबसे शङ्कित चित्त रहता है उसका यश जाता रहता है ६२ व उसकी अकीर्त्ति सब प्राणियों में फैल जाती है व वैर जोकि बहुत काल से उसने कर रक्खे हैं वे शान्त नहीं होते ६३ व जो एक भी पुरुष कुल में विद्यमान रहता तो उसके अयश के कहने वाले बहुत विद्यमान रहते हैं इससे हे केशव ! वैर से कभी नहीं शान्त होता ६४ जैसे घी डालने से अग्नि और भी बढ़ता है कुछ शान्त नहीं होता ६५ इससे जब तक बनाय नाश नहीं हो जाता तब तक शान्ति नहीं होती व छिद्र देखनेवालों में यह महादोष है कि जो पौरुष में बलवान् होता उसके हृदय को मन की व्यथा बाधा करती है इससे शान्त होने का कोई भी उपाय नहीं है फिर कि तो मन की व्यथा को त्यागे तो शान्ति होय या मरण हो जाय तो शान्ति हो ६६ अथवा शत्रुओं की जड़ के नाश करने से शान्ति हो व ऐसे ही शान्त

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होकर बैठे तो वह तो बहुत ही अच्छा है व जो वैर छोड़ देने पर शान्ति होती है वह सबसे ठीक है नहीं तो फिर शत्रु का वध कर डाले पूरी शान्ति हो जाय ६७ व जो राज्य त्याग करने से शान्ति होती है सो तो विना राज्य तो उसका वध ही हो गया शान्ति काहे को ठहरी इससे न इसी का संशय करे इस हमारे राज्य में शत्रु लोग छिद्र देख फिर प्रहार करेंगे न यही विचारे कि भ्रष्टश्री होने से हमारा ही नाश न होगा किन्तु राज्य किसी प्रकार से न छोड़े ६८ इससे न तो हम राज्य ही छोड़ा चाहें व न कुल की क्षय ही सह सकें इससे मेल करने से जो शान्ति हो जाय तो वही श्रेष्ठ है ६९ व हम लोग तो यही चाहते हैं कि राज्य मिले पर युद्ध न हो मेल हो जाय जब किसी प्रकार कहने सुनने समझाने से भी मेल न हो तो युद्ध तो सिद्ध ही फिर नपुंसकता अङ्गीकार कर बैठ न रहना होगा ७० जब शान्त न होगा तो युद्ध अवश्य ही करना होगा सो भी यह नहीं कि एक बार करके चुप हो रहें नहीं जैसे नित्य बार २ कुत्ते लड़ते हैं उसी प्रकार लड़ना होगा यह तो पण्डितों ने बताया है युद्ध तो धरा ही है ७१ जैसे कुत्ते प्रथम पूंछ हिलाते वैसे प्रथम ध्वजा हिलावेंगे कुत्ते फिर भूंकते हैं हम लोग भी हल्ला करेंगे कुत्ते परस्पर भूंकना सुन और जोर से भूंकने लगते हम लोग उनकी निन्दा व अपनी प्रशंसा जोर से करेंगे कुत्ते भूमि में लोटने लगते हम लोग भी दण्डादि करने के लिये लोटेंगे कुत्ते दाँत निकाल कर गुर्राते व भूंकते हम लोग सिंहनाद करेंगे उसके पीछे वे भी लड़ते तो हम लोग भी लड़ेंगे ७२ फिर इस प्रकार युद्ध करने में जो कुत्ता बलवान् होता वह मांस खाता है इसी प्रकार मनुष्यों में भी है कुछ विशेष नहीं है लड़ने पर जो बलवान् होगा राज्य भोगेगा ७३ बलवानों को तो सब प्रकार से उचित है कि दुर्बलों का अनादर करें व दारुण विरोध करें व जो प्रणिपात करता वह तो दुर्बल होताही है ७४ परन्तु पिता राजा व वृद्ध सब प्रकार से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

मान ही के पाने के योग्य होते हैं इससे धृतराष्ट्र हमारे मान्य व पूज्य दोनों हैं ७५ परन्तु हे माधव ! जो हम जाय उनके पैरों परें तो भी तो नहीं बनता क्योंकि पुत्र का स्नेह बलवान् होता व धृतराष्ट्र को जानों बहुत ही पुत्र का स्नेह है इस पुत्रके वशीभूतहो हँसेंगे कि देखो फिर हमारे पैरों पर परे ७६ इससे हे कृष्णचन्द्रजी ! अब इस समय आपके विचार में क्या आता है हम लोग क्या करें जिससे अर्थ व धर्म्म दोनों से हीन न हों ७७ इस प्रकार के अर्थ के सङ्कोच में आपको छोड़ और किससे पूछें ७८ क्योंकि आपके समान हमारा प्रिय चाहनेवाला व सर्व कर्म्मों की गति जाननेवाला व सब निश्चय जाननेवाला सुहृत् कौन है ७९ वैशम्पायनजी बोले कि, जब युधिष्ठिरजी ने ऐसा कहा तो श्रीकृष्णचन्द्रजी ने कहा कि अच्छा हम तुम दोनों के अर्थ कौरवों की सभा को जायँगे ८० व वहां जो तुम्हारे प्रयोजन के विना छोड़े शान्ति करा पावें तो बड़ी पुण्य हो व हमारा महाफलदायक चरित हो ८१ व कौरवों सृञ्जयों को मृत्यु की फांसी से छुड़ावें जिसमें पाण्डवों के भी प्राण बचें व कौरवों के भी व सब पृथ्वीभर के राजाओं के भी ८२ यह सुन युधिष्ठिरजी बोले कि हे कृष्णचन्द्रजी ! हमारा मत नहीं है कि आप कौरवों के समीप जायँ क्योंकि जो आप अच्छा भी कहेंगे तो दुर्य्योधन आपका वचन न करेंगे ८३ व सब राजा वहां दुर्य्योधन ही के वशानुचर हैं उनके बीच में आपका जाना हमको नहीं रुचता ८४ क्योंकि हमको आपके द्रोह से न द्रव्य प्रसन्न कर सक्ती है न देवत्व फिर सुख की कौन गणना है व न इन्द्रादि सब देवताओं का ऐश्वर्य्य ८५ यह सुन श्रीभगवान्जी बोले कि, हाँ महाराज हम भी दुर्य्योधन की यह पापता जानते हैं परन्तु जो हम वहां जायँगे तो कोई राजा व अन्य भी सब लोग हमको कुछ कह न सकेंगे कि कृष्णचन्द्रजी भी वहां रहे उन्होंने भी न समझाया ८६ जो कहो कि वहां कोई अपने मेल का नहीं इससे वे लोग कुछ उपद्रव न करें तो जब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हम युद्ध में क्रोध करेंगे तो हमारे सामने जितने राजा व कौरव वहां हैं कोई भी खड़े न हो सकेंगे जैसे सिंह के आगे छोटे मृग नहीं खड़े होते ८७ कदाचित् उन्होंने हमारे विषय में कुछ अनुचित करना चाहा तो हम सब कौरवों को भस्म कर देंगे यह हमने निश्चय कर लिया है ८८ हे पार्थ! हमारा वहां का गमन निरर्थक न होगा कि तो अर्थ ही की प्राप्ति होगी कि तुम्हारा उनका मेल ही हो जायगा कि तो फिर किसी को कुछ कहना ही हमारे विषय में बाकी न रहेगा ८९ यह सुन युधिष्ठिरजी बोले कि॥

दो० कृष्ण तुम्हें जो रुचै सो, करहु कौरवन्ह जाहु।
स्वस्तिमान कृत अर्थ पुनि, आये लखि हरषाहु॥१।९०॥
हरि कौरव ढिग जाय तिमि, समझायहु जिमि दोय।
कौरव पाण्डव एकचित, ह्वै सँग बसि सुखि होय॥२।९१॥
भ्राता हौ पुनि हौ सखा, प्रिय अर्ज्जुन मम दोय।
सौहृदसों निश्शङ्क शुभ, लहहु भूति जिमि होय॥३।९२॥
हम को जानहु रिपुन्ह कहँ, जानहुँ अर्थ रु भाखि।
जो जो मम हित होय सो, कह्यहु सुयोधन माखि॥४।९३॥
जो जो धर्म्म संयुक्त बच, अरु हितकारक होय।
सान्त्व होय वा सान्त स्वइ, केशव कह्यहु न दोय॥५।९४॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्विसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७२॥

तिहत्तरवां अध्याय।

दो० कहब तिहत्तरवें महें, जिमि श्रीकृष्ण महान।
भूप युधिष्ठिर सों कह्यहु, कौरव वृत्त बखान॥ १॥

श्रीभगवान्जी बोले कि हमने सञ्जय का वचन सुना व आपका भी इससे हम कौरवों का अभिप्राय जानते हैं व जो आपका अभिप्राय है वह भी जानते हैं १ तुम्हारी बुद्धि धर्म्म का आश्रय लिये है

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व कौरवों के वैर का आश्रय लिये जो विना युद्ध किये थोड़ा भी मिले तो वह तुमको बहुत है २ परन्तु क्षत्रिय के लिये नैष्ठिक कर्म्म नहीं लिखा है क्योंकि सब आश्रम वाले कहते हैं कि क्षत्रिय भिक्षा न माँगै ३ संग्राम में चाहे जय हो व वध हो पर क्षत्रिय का सनातन धर्म्म यही है व दीनता कृपणता क्षत्रिय के लिये अच्छी नहीं है ४ हे युधिष्ठिर! कार्प्पण्य पर टिकने से सञ्जीविका न चलेगी इससे विक्रम करो व शत्रुओं को मारो ५ यह तो जानते ही हो कि धृतराष्ट्र के पुत्र अत्यन्त लोभी हैं क्योंकि बहुत दिनों तक तुम्हारा उनका स्नेह रहा है व बहुत दिनों तक एकी स्थान पर बसते रहे हो अब उन लोगों ने मित्र भी बहुत लोगों को बना लिया है व सेना भी बहुत इकट्ठी कर ली है ६ यह बात किसी प्रकार नहीं होसकती कि वे तुम से मेल करें भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्यादिकों के साथ होने से वे अपनी बलवत्ता समझते हैं ७ हे राजन्! जब तक तुम इनसे मृदुता करोगे तब तक ये तुम्हारा राज्य हर लेंगे ८ दुर्य्योधनादिक तुम्हारा इच्छित न तुम्हारी दयालुता से करेंगे न कृपणता व न धर्म्म अर्थ के कारण से ९ इसका निमित्त यह है कि जब तुम बनवास के लिये कौपीन धारण करने लगे थे वे कुछ भी नहीं पछिताये बरन बहुत प्रसन्न हुए फिर उनमें अपनपौ कहां है व तुम्हारी दया कहां है १० देखो भीष्म-पितामह, द्रोणाचार्य्य, बुद्धिमान् विदुरजी, ब्राह्मण लोग व साधु लोग, धृतराष्ट्र व नगरनिवासी ११ ये सब कुरुमुख्य देखते रहे उन सबके सामने दानशील, कोमलस्वभाव, दान्त, धर्म्मशील व धर्म्म के अनु-यायी १२ आपको उन्होंने छल से बुलाय जान बूझकर जुआं खेलाया व उस कर्म्म से अब भी कुछ लज्जित नहीं होते कि हमने अनुचित किया १३ इससे अब ऐसे दुष्ट स्वभाव दुर्य्योधन के विषय में दया व प्रेम न करो वे तो सब लोक भरके मारनेके योग्यहैं फिर तुमको क्या कहें तुम्हें तो उनका वध ही कर डालना चाहिये १४ क्योंकि अयोग्य

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वाणीं कह कर भाइयोंसमेत तुमको सभा में उन्होंने बहुत पीड़ित किया है फिर जो उनकी उस पर किसी मुँहदेखा ने बड़ाई की तो बहुत प्रसन्न हुए १५ व आपस में बतलाते हैं कि अब पाण्डवों का यहां कुछ नहीं है उनका नाम व गोत्र ही अब बाकी नहीं रहा क्या जानें कहां को चले गये व बूड़ बह मरे १६ व जो कहीं होंगे भी तो बहुत काल हो जाने के कारण उनका निरादर हो जायगा व जब नष्टप्रकृति हो जायँगे तो आप हमारे शरणागत होंगे १७ जब जुआं होने लगा तो पापी दुश्शासन ने अनाथ के समान द्रौपदीजी के बार पकड़ सभा में भीष्म, द्रोणाचार्य्यादिकों के सामने घसीटा व कुवचन कहा १८। १९ व आपने रोंक दिया था इससे कोई आपके ये भीमादि भाई भी नहीं बोल सके क्या करें धर्म्म की फांसी में बँध गये नहीं तो उसी समय उनके सब कर्म्म कर डालते २० ये व और भी बहुत सी बातें कह सुन तुम्हारे चले आने पर सभा में अपनी बड़ी बड़ाई की कि देखो कैसे हमने युक्ति से निकाल दिया २१ उस समय जो लोग सभा में व तुम्हारी दशा जिन्होंने देखी थी कि ये निरपराध निकाले जाते हैं उनके सबके आंशु बहने लगे थे २२ जितने राजालोग व ब्राह्मणलोग वहां थे किसी को यह बात प्रसन्न नहीं आई इससे सब दुर्य्योधन की निन्दा करते थे २३ हे राजन्! जब कुलीन की निन्दा हुई तो जानों उसका वध हो चुका पर हमारी जान वध हो जाय वह अच्छा पर कुजीविका निन्दा भली नहीं २४ व वह तो तभी मार डाला गया जब निर्लज्ज हुआ फिर एक ने नहीं पृथ्वी भर के राजाओं ने निन्दा की थी व अब भी करते हैं २५ जो ऐसा निन्दित हुआ उसका तो आप ही से वध हो चुका है कुछ थोड़ा ही सा बाकी है जैसे जब वृक्ष की बीचवाली जड़ कट गई तो फिर उसके गिरने में कौन अन्तर है २६ वह दुष्ट तो सर्प के समान सबलोकभरे से वध्य है इससे हे राजन्! दुष्ट दुर्य्योधन को अब मार ही डालिये कुछ बिचारने की आवश्यकता नहीं है २७ सब प्रकार से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उसका वध तुम्हारे करने के योग्य है व हमको भी रुचता है व जो तुम भीष्मपितामह व धृतराष्ट्र के प्रणाम करने को कहते वह तो उचित है हमें भी रुचता है पर दुर्य्योधन पापी को तो मार ही डालिये २८ व जिन लोगों का दुर्य्योधन के विषय में दुबिधा है कि यह अच्छा है या बुरा उन लोगों का संशय हम जाय काट डालेंगे २९ व राजाओं के सामने आपके सब पुरुषार्थ कहेंगे जिनके सुनने से आपकी प्रशंसा व उसकी निन्दा होगी ३० जब हम धर्म्म, अर्थ, काम सहित वचन कहेंगे तो नानादेशों के राजालोग सुनकर बहुत प्रसन्न होंगे ३१ व तुमको जानेंगे कि ये बड़े धर्म्मात्मा सत्यवादी हैं व उसको जान लेंगे जैसा कि उसने लोभ किया है ३२ व जब चारों वर्णों के वृद्ध बालक युवा सब बटुरेंगे तब हम सबके सामने उसकी निन्दा करेंगे ३३ व उनसे शान्त होना जो तुम माँगोगे तो तुमको कोई अधर्म्मात्मा न कहेगा बरन सब राजालोग सब कौरवों व धृतराष्ट्र की ही निन्दा करेंगे ३४ जब लोकनिन्दित दुर्य्योधन मारा जायगा तो फिर और कौन सा कार्य्य करने को बाकी रह जायगा बस सब कुछ हो जायगा ३५ इससे हम वहां जाय तुम्हारे प्रयोजन को लिये हुए कौरवों से शान्त होने ही की वार्त्ता करेंगे व उसको दोषों से लक्षित करेंगे ३६ वह जाय युद्धादि करने के कौरवों के वृत्तान्त जानसुन तुम्हारी जय के लिये फिर लौट आवेंगे ३७ पर हम जानते हैं कि सबप्रकार से कौरवों से युद्ध ही करना पड़ेगा शान्ति न होगी क्योंकि सबकारण उसीप्रकार के उत्पन्न दिखाई देते हैं ३८ देखो मृग व पक्षी घोर नाद कर रहे हैं व सन्ध्या होते ही होते हाथीघोड़ों में जो मुख्य मुख्य हैं उनके घोररूप दिखाई देते हैं व अग्नि में बहुत से रङ्ग दिखाई देते ३९ कदाचित् यहां यमराज न आवें तो चाहे मनुष्यों का क्षय न हो नहीं तो शकुनों से तो बहुत लोगों का नाश ही दिखाई देता है इससे शस्त्र, यन्त्र, कवच, रथ, हाथी व घोड़े सबको इकट्ठा कर ४० सब योधालोग हाथी,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

घोड़े, रथों पर चढ़े तैयार बैठे रहें व जो कुछ संग्राम के लिये करना हो करिये ॥ ४१ ॥

हरिगीतिका॥ नहिं देहिंगे तुमकहँ सुयोधन जियत धन अरु राजहू।
जो छीनलीन तुम्हार सब धन राज्यद्यूत अकाजहू ॥
यासों रहहु सबभांति उद्यत युद्ध करनो ही परै।
हम कहत बात विचारि यामहिं कबहुँ नहिं शंकापरै ॥ १।४२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्रिसप्ततितमोऽध्यायः॥ ७३ ॥

चौहत्तरवां अध्याय।

दो० चौहत्तरवें महँ कहब, जिमि केशवसन भीम।
कह्यहु शान्त होने वचन, कहनकेरि सब सीम ॥ १ ॥

भीमसेनजी श्रीकृष्णचन्द्रजी से बोले कि हे कृष्णचन्द्रजी ! जैसी वार्ता करने से कौरवों से मिलाप हो जाय वैसी ही वार्त्ता कीजियेगा युद्ध करने की वार्त्ता सुनाय उनको न डरवाइयेगा १ असहनशील, अतिक्रोधी, कल्याण के वैरी, महामनस्वी, दुर्य्योधन से कोई कड़ी बात न कहियेगा किन्तु समझायही कर काम निकालियेगा २ क्योंकि एक तो दुर्य्योधन स्वभाव ही से पापी जीव है फिर चोरों के तुल्य उसका चित्त है व ऐश्वर्य्य के मद से मतवाला है फिर पाण्डवों से बहुत दिनों से वैर रखता है ३ फिर दीर्घदर्शी नहीं है फिर निष्ठुर वक्ता है व सबको ऊंची नीची कहने का स्वभाव पर गया व क्रूरपराक्रमी है व बड़ा लम्बा क्रोधी शिक्षा करने के अयोग्य व पापात्मा पापप्रिय है ४ वह चाहे मर जाय पर सेवा कभी किसी की न करै व न अपना मत छोड़े चाहे जैसा हो फिर ऐसे से शान्ति होनी हम बहुत ही दुष्कर समझते हैं ५ वह सुहृदों से भी विपरीत ही रहता फिर शत्रुओं से क्या कहे व धर्म्म को जानों उसने छोड़ ही दिया है व झुंठाई जानों बहुत ही उसे प्रिय है व सुहृदों के भी वचन मन का प्रतिघात करता फिर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

शत्रु पक्षवालों को कौन कहै ६ व वह अपने दुष्ट स्वभाव में सदा टिका रहता इससे सदा क्रोध के वश में रहता व स्वभाव ही से पाप को प्राप्त होता जैसे तृण से ढका हुआ सर्प वैसा ही वह है ७ दुर्य्योधन की जितनी सेनाहै वह आपको विदितहै व जो उसका शील व जो स्वभाव है व जो बल है व पराक्रम है सब आप जानते हो ८ अगाड़ी कौरव भी अपने पुत्र-बान्धवों सहित प्रसन्न रहते थे व हमलोग भी इससे देवताओं के समान ऐसे हो गये थे क्योंकि बान्धवों सहित हर्षित रहते थे ९ परन्तु इसी दुर्य्योधन ही के क्रोध से कौरव ऐसे भस्म होंगे जैसे जाड़े के पीछे ग्रीष्म में अग्नि से जल वन भस्म होते हैं १० हे मधुसूदन ! जिन्होंने अपने अपने सगोत्रीय व मित्र व श्यालश्वशुरादि बान्धवों का नाश किया है वे अठारह ये राजा प्रख्यात हैं ११ सो जब धर्म्म के अन्त का समय आता है तो तेज से ज्वलित धनाढ्यों के यहां असुरों के समान कलह होने लगता १२ वे अठारह राजा ये हैं १ हैहय वंशियों में उदावर्त्त २ नीपवंश में जनमेजय ३ तालजङ्घवंश में बाहुल ४ कृमिवंश में बड़ा उद्धत वसु १३।५ सुवीरवंश में आजबिन्दु ६ सुराष्ट्रवंश में रर्षद्धिक ७ बलीह वंश में अर्कज ८ चीनवंश में धौतमूलक १४।९ विदेहवंश में हयग्रीव १० महौजस्वंश में बरयु ११ सुन्दरदेशवंश में बाहु १२ दीप्ताक्षों में पुरूरवा १३ । १५ । १४ चेदिमत्स्यों में सहज १५ प्रवीरों में वृषध्वज १६ चन्द्रवत्सों में धारण १७ मुकुटों में विगाहन १६ । १८ नन्दिवेगों में शम ये इतने राजा कुलनाशक हुए हैं हे कृष्ण ! ये सब युग के अन्त में उत्पन्न हुए हैं इसी से अपने अपने कुल का नाश करने से पुरुषाधम कहाते हैं १७ ऐसे ही युगान्त में हम व कौरवों के नाश करने को काल के समान कुल का अङ्गार यह दुर्य्योधन हुआ इससे यह पापी महानीच मार डालने ही के योग्य है १८ इससे उसके सामने बहुत कोमल वचन सो भी धीरे से कहियेगा सो भी धर्म्मअर्थ सहित व हित वचन हे उग्रपराक्रम !

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बहुधा ऐसा ही बोलियेगा जिससे काम की सिद्धि हो कठोर किसी तरह न कहियेगा १६ हम सब लोग चाहे दुर्य्योधन के नीचे रहें व नीच होकर उसके पीछे पीछे चलें पर हमारे भीष्मपितामहादि जिसमें नाश को न प्राप्त हों वही करना २० चाहे हमसे व कौरवों से उदासीन वृत्ति रहै न शत्रुता रहे न मित्रता पर हे वासुदेव ! आप ऐसा कीजियेगा जिसमें कौरवों को कुलक्षय करने का दोष न स्पर्श करे २१ हे कृष्ण! वृद्ध पितामहजी से व सब सभासदों से ऐसा कहना कि जिसमें सब भाइयों में सौभ्रात्र हो व दुर्य्योधन शान्त हो जाय ॥ २२ ॥

दो० हम इमि भाषत भूपहू, करत प्रशंसा याहि।
अर्ज्जुनहू नहिं रण चहत, दया बहुत है ताहि ॥ १ । २३ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुस्सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७४ ॥

पचहत्तरवां अध्याय।

दो० पचहत्तरवें महँ कहब, जिमि हरि भीमहि भाख।
शान्त होन की बात सुनि, मन महँ करि बहु माख ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि, पर्वत की लघुता के व अग्नि में शीतलता के समान असम्भव भीमसेनजी के कोमलतायुक्त वचन सुन पवन जैसे अग्नि को प्रचण्ड कराता है वैसे वचनों से कृपायुक्त भीमसेनजी को प्रचण्ड कराते हुए महाबाहु शार्ङ्गनाम धनुष धारण करनेवाले श्रीभगवान् केशवचन्द्र बलदेवजी के छोटे भाई हँसते ही से भीमसेन से बोले १ । २ । ३ कि हे भीमसेन ! तुम तो सदा क्रूर व वध करने के योग्य धृतराष्ट्र के पुत्रों के मर्दन करने की इच्छा से युद्ध ही की प्रशंसा करते थे ४ व उनके मार ही डालने के लिये कभी सोते भी नहीं बहुधा जागते ही रहते कभी लेट भी गये तो उताने ही करवट ले व नीचे मुख करके नहीं व सदा घोर अशान्तरूप व अकल्याणकारिणी ही वाणी भी बोलते थे ५ व इसी से सदा अग्नि के तुल्य गरम

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

श्वास सदा लेते व अपने क्रोध से सदा सन्तप्त बने रहते व धुआं सहित अग्नि के समान सदा अप्रशान्त तुम्हारा मन बना रहता ६ व एकान्त में भी जब कभी सो जाते तो मानों किसी ने भार से दबा दिया है इससे ऊर्धीश्वासें लिया करते इससे तुमको कोई लोग मानते हैं कि ये उन्मत्त हो गये हैं ७ व सदा वृक्षों को तोड़ते उखाड़ते व इधर उधर बेझते दौरते हाथी के समान अकस्मात् पृथ्वी पर जोर से पैर दै दै मारते हुये इधर उधर दौरते फिरते हो ८ हम लोगों के सङ्ग बैठने की रुचि भी नहीं रखते केवल एकान्त में बैठे सबकी निन्दा किया करते कि कोई लड़ने की सम्मति नहीं देता व रात्रि दिन और किसी पुरुष का सङ्ग प्रसन्न नहीं करते ९ अकस्मात् गर्वयुक्त हो रोदन करते से एकान्त में बैठे रहते जांघो के ऊपर शिर धर नेत्र मूंद बड़ी देर तक बैठे रहते १० व फिर सदा भौंहें चढ़ी रहतीं ओष्ठ दाँतों से चबाते ही से रहते इस प्रकार के तुम बार बार देखे जाते हो यह सब क्रोध ही का कराया हुआ है स्वाभाविक धर्म्म नहीं है ११ व जैसे पूर्व ही ओर तेज प्रकाशित करते हुए प्रात दिन सूर्य्य उदित होते व पश्चिम ही ओर अस्त होते १२ तैसे ही हम यह सत्य कहते हैं इसमें कुछ भी व्यक्तिक्रम नहीं है हम जाय अकेले गदा से दुर्य्योधन को मार डालेंगे १३ यह कह भाइयों के मध्य में गदा छूकर सौगन्द खाते हो उन तुम्हारी बुद्धि अब शान्त होने के विषय में आ गई १४ बड़े आश्चर्य की बात है जो लोग सदा युद्ध ही करने की इच्छा किये रहें व जब युद्ध का समय बनाय निकट आ जाय तब चित्त बिगड़ उठे इससे विदित हुआ कि भीम अब तुम बनाय भयभीत हुए १५ बड़े आश्चर्य की बात है पार्थ तुम स्वप्न के अन्त में व जागने के अन्त में महिष पर चढ़ना व वामनेत्रादि फरकना इत्यादि विपरीत निमित्त देखते हो इसी से कौरवों से मेल किया चाहते बस जान लिया कि युद्ध से तुम भी डरते हो १६ बड़े ही आश्चर्य की बात है जो तुम अब नपुं-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सक के समान हो पुरुषार्थ की कुछ बात ही नहीं करते बड़े ही कष्ट में परे हो इसी से तुम्हारा मन ऐसा विकल हो गया १७ व तुम्हारा हृदय काँपता है व मन विशीर्ण हुआ जाता है अब टिहुनी पकड़ के उठने बैठने लगे होगे इसी से कौरवों से मेल चाहते हो भय में क्या नहीं होता १८ हे पार्थ ! मनुष्य का चित्त अनित्य है कभी चल हो जाता कभी अचल जैसे सेमर की रुई बात के वेग से उड़ती चली जाती है व पवन न होने पर स्थिर ही एक स्थान पर परी रहती १९ तुम्हारी तो यह बुद्धि ऐसी अप्रमाण हो गई जैसे बैलों की वाणी मनुष्य की सी हो जाय वह पाण्डवों के मनों को ऐसा डुबोये देती है जैसे विना नाव-वालों को कोई अगाध जल में पकड़ डुबोदे २० हे भीमसेन ! जो तुम ने ऐसा अपने स्वभाव के विपरीत वचन कहा उससे हमको ऐसा आश्चर्य हुआ जैसे पर्वत चलने लगे तो आश्चर्य हो ॥ २१ ॥

दो० यासों लखि निज कर्म अरु, जन्म देखि कुल माँहिं ।
तजि विषाद उठि वीर अब, समर करहु कस नाहिं ॥ १ । २२ ॥
जो राउर कहँ ग्लानि यह, सो न तुम्हारे योग्य ।
जो न पराक्रम सों मिलै, क्षत्रिय को न सभोग्य ॥ २ । २३ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७५ ॥

छिहत्तरवाँ अध्याय ।

दो० कहब छिहत्तरवें महँ, जिमि हरिसों कह भीम ।
पुरुषारथ मय वचन सब, शूरवीर मन सीम ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि जब वासुदेवजी ने ऐसा कहा तो भीमसेन जी तो सदा के क्रोधी व असहनशील काहे को ऐसा सह सकें प्रथम तो अच्छे घोड़े के समान जोर से दौड़े फिर बोले कि १ हे सत्य पराक्रम, श्रीकृष्णचन्द्रजी ! हम और ही प्रकार करना चाहते हमको आप और ही प्रकार के जानते हम युद्ध से डरनेवाले हो गये २ हे कृष्ण !

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तुम तो बहुत दिन हमारे सङ्ग रहे हो सत्य २ हमको जानते हो वा नहीं जानते जैसे कुण्ड में डूबता हुआ नाव को छोड़ और किसी को कुछ नहीं समझता ३ इसी से तुम हमको ऐसे वचन कहते हो क्योंकि जो हमको अच्छी तरह जानता होगा कि ये भीमसेन हैं वह हमको ४ ऐसे अयोग्य वचन कैसे कहेगा जैसे आपने कहे सो कुछ नहीं आप सब कुछ कह सक्के हैं पर हम भी अब कुछ कहते हैं सुनिये ५ अपना पौरुष व बल औरों के बल पौरुष के सम नहीं है क्योंकि अपने कर्म की प्रशंसा करना श्रेष्ठों का काम नहीं है क्याकरें अब कुछ कहनाही परा ६ क्योंकि अब तो अतिवाद से युक्तही हैं कुछ अपना बल कहहींगे हे कृष्णचन्द्र! देखिये यह पृथ्वी व यह स्वर्ग है इन्हीं दोनों में प्रजा बसी हैं ७ ये दोनों अचल हैं व बनाय प्रतिष्ठित हैं व अनन्त हैं व सब संसार के पिता माता हैं व जो ये दोनों कदाचित् क्रोध करें तो मिलकर दो शिलाओं के समान बराबर होजायँ ८ परन्तु हम एकाएकी दोनों को पकड़ लें स्वर्ग अपने स्थानपर रहे व पृथ्वी अपने स्थानपर एक में तो न मिलने पावे चाहे जैसा हो हमारे परिघाकार इन बाहों का अन्तर देख लो ९ जो इनके बीच में परकर व फिर छूटजाय ऐसा पुरुष हम किसी को देखतेही नहीं १० चाहे हिमवान् हो व समुद्र व इन्द्र जिन्होंने बल को मारा परन्तु जिस को हम मारा चाहें ये तीनों उसकी रक्षा न कर सकें व जितने ये क्षत्रिय पाण्डवों से युद्ध करने को आये हैं उन आततायियों को तो ११ पैर के तले दबाय पृथ्वी में प्रविष्ट करा दूंगा कि उनका कहीं पता खोज न मिलेगा परन्तु आप हमारे विक्रम को अभी कुछ भी नहीं जानते १२ जैसे हमने अपने विक्रम से जीत राजाओं को अपनी वश में कर लिया अच्छा यद्यपि हम सूर्य्य की प्रभा ही के समान बल के कारण प्रसिद्ध हैं तो भी आप नहीं जानते तो १३ जब गाढ़ युद्ध होगा तब तो आप अच्छे प्रकार जानोगे अभी हमको कठोर वचनों से क्यों कष्टित करते हो जैसे कोई घाव की दुर्गन्ध शुद्ध करने के लिये घाव

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वाले को कष्ट देता है १४ हम अभी यथामति कहते हैं पर हम को इससे अधिक जानों सो समर में देखोहीगे जब हम सबका नाश करेंगे १५ व हम जब हाथी, घोड़े, रथों को उनके सवारों सहित पकर २ स्वर्ग को फेंकेंगे जो फिर वायु वेग के कारण नीचे न आवेंगे तब देखोगे अभी क्या व उसी प्रकार सब क्षत्रियों को फेंकेंगे जो बड़े बड़े हैं तो भी देखियेगा १६ सो आप भी देखेंगे व सबलोग भी देखेंगे जब हम सबसे बड़ों २ कोही ऊपर को उछालेंगे न हमारी मज्जा कम्पित होती है न हमारा मन काँपता है १७ व न सब लोकभरे के क्रोध करने से भी हमको कभी भय होती फिर इन कौरवों बेचारों की कौन गिनती ॥ १८ ॥ किन्तु—

दो० कृपा हेतु सौहृद हमैं, क्षमा करत हम तेहिं।
भीष्मादिक जनि मरहिं जिमि, शम होवे यहि नेहिं ॥ १ । १६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षट्सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७६ ॥

सतहत्तरवां अध्याय।

दो० सतहत्तरवें महँ कहब, जिमि हरि भाष्यहु भीम।
बहुप्रकार बलदेव कहि और भीम बलसीम ॥ १ ॥

भीमसेन के वचनसुन श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द बोले कि हे भीमसेनजी ! हमने आपका अभिप्राय जानने के लिये ऐसा कहा है न निन्दा से न अपनी पाण्डित्य से न क्रोध से न कहने की इच्छासे १ हम तुम्हारा माहात्म्य अच्छी तरह जानते हैं व तुम्हारे जितना बल है वह भी जानते हैं व तुम्हारे सब कर्म्म भी जानते हैं हम तुम्हारा अनादर नहीं करते २ जैसा तुम अपने में कल्याण बढ़ाते हो हम उस से सहस्रगुण अधिक तुम में कल्याण बढ़ाते हैं ३ जैसा सब राजाओं से पूजित कुल में तुम्हारा जन्म है वैसेही भाइयों व सुहृदों सहित भीमसेन तुम हो ४ जो कहो कि हमको ऐसा जानतेही हो तो फिर हमारी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

निन्दा क्यों की तो देवता व मनुष्य दोनोंके धर्म्मों का अन्त जानने-
वाले अच्छे प्रकार नहीं जानते क्योंकि इन दोनों के धर्म्म में सन्देह
ही रहता है देवताओं का धर्म्म होने वाला पुण्यफल ज्योतिर्विदादिकों
से पूछते भी लोग हैं पर निश्चय नहीं होता क्योंकि कभी २ ज्योति-
र्विदादिकों के कहने में भी अन्तर देख परता है इसीप्रकार मनुष्य का
धर्म्म बल अबल का भी निश्चय नहीं होता क्योंकि कभी कभी वीरों
का भी मन क्लीब होजाता है ५ इससे वही धर्म्मही पुरुषों की अर्थ-
सिद्धियों में हेतु है व पुरुषों के विनाश में भी इस लिये पुरुष के कर्म्म
में सदा सन्देहही रहता क्या जानें सिद्ध हो व असिद्ध ६ दोषदर्शी
कवियों ने दिखाया कुछ औरही रीति पर है व बर्त्ताव औरही रीति
पर होता है जैसा पवन का वेग कभी कुछ दिखाई देता कभी कुछ ७
मनुष्य का कर्म्म चाहे अच्छी तरह सम्मत करके किया गया हो व
अच्छी नीति से किया गया हो व न्यायही से सिद्ध किया गया हो
पर दैव उसमें विरोध कर देता यथावस्थित सिद्ध नहीं होने देता व
दैव के कर्म्म शीत, उष्ण, वर्षा, भूख, प्यास आदि मनुष्य भी अपने कर्म्म
रजाई कम्बलादि ओढ़ने, पंखा चलाने, छत्रादि लगाने, अन्नादि खाने
जल पीने आदि से निवृत्त कर देता है ८। ९ जिससे कि दैवकर्म्म शीतादि
का वारण पुरुषकर्म्म कम्बलादि से होजाता है इससे पौरुष सदा करना
चाहिये दैव के ऊपर न बैठ रहना चाहिये १० इससे हे पाण्डव! कर्म्म
करने से पृथक् लोक की जीविका नहीं होती इससे दैवकार पुरुषकार
दोनों में बुद्धि प्रवृत्त होती है दोनों करने चाहिये ११ जो दैवकर्म्म के
साथ पौरुष करता है वह कर्म्म के न सिद्ध होने में व्यथित नहीं होता
न सिद्ध होने पर हर्षही को प्राप्त होता है १२ इससे इस विषयमें हमने
यह माना है कि शत्रुओं के साथ संग्राम करने में यह नहीं होसक्ता
कि सदा जय ही हो पराजय न हो १३ इससे कार्य्य की सिद्धि न होने
पर न हीन तेज ही हो जाय न विषाद व ग्लानि ही को प्राप्त हो इसी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लिये हम कहते हैं १४ अब हम प्रातःकाल धृतराष्ट्र के समीप जाय तुम्हारे अर्थ को ग्रहण किये हुए मिलाप करने व झगड़ा शान्त होने में यत्न करेंगे १५ जो वे लोग शम करेंगे तब तो जानों हमारा बड़ाही यश होगा व आप लोगों का भी काम होगा व उन लोगों का भी काम होगा १६ व जो वे लोग हमारे वचन न मानेंगे अपने मन माना ही करेंगे तो महाघोर कर्म युद्ध ही होगा इसमें कौन अन्तर है १७ हे भीम ! इस युद्ध में रथ रूप तुम हो इससे सब भार तुम्हारे ऊपर है व अश्व रूप अर्जुन हैं इससे धुरी खींचने का भार उनके ऊपर व और सब तो उसके ऊपर चढ़कर चलनेवाले हैं १८ व संग्राम में हम अर्जुन के सारथि होंगे अर्जुन ने केवल यही चाहा है कि हमारे सारथि बनो इससे हम युद्ध करने की इच्छा नहीं करते ॥ १९ ॥

दो० यासों तव मति मैं हमैं, शङ्का भीम महान।
क्लीब वचन तब सुनि हुई, तेजित कीन न आन॥ १। २० ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥

अठहत्तरवां अध्याय।

दो० अठहत्तरवें महँ कहब, जिमि अर्जुन हरि पाहिं।
कह्यहु सँदेशो कौरवन, कहनो गुनि मनमाहिं॥ १ ॥

अर्जुनजी श्रीभगवान् कृष्णचन्द्रजी से बोले कि हे जनार्दन ! युधिष्ठिरजी ने जो कहने के लिये आप से कहा वह तो आप का वचन सुन हमको जान परता कि १ जानों आप मिलाप होना सहज नहीं समझते वह धृतराष्ट्र के लोभ से व हम लोगों की दीनता से २ व आप पुरुष का पराक्रम अफल मानते हैं दैव ही को श्रेष्ठ मानते हैं, कि बल का उदय विना पौरुष किये व प्रारब्ध अच्छा हुए नहीं होता यह मानते हैं ३ यद्यपि युद्ध करने में हम लोगों का अनिष्ट है तथापि जैसा आप ने कहा है कि युद्ध ही होगा मिलाप न होगा वही होगा परन्तु शम करा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

देना भी आप को कुछ असाध्य नहीं है ४ क्या आप हम लोगों का नाशक युद्ध ही अच्छा मानते हैं हमारी जान तो जिन पुरुषों को फल का उदय नहीं है उनके कर्म भी उनको मार डालते हैं ५ व जो कर्म अच्छी तरह से किये जाते हैं वे सफल होते ही हैं इससे आप उसी प्रकार का बर्त्ताव करें जिस में शत्रुओं से शम होजाय युद्ध न हो ६ क्योंकि जैसे देवताओं व दैत्यों के सुहृद् ब्रह्माजी हैं वैसे ही पाण्डव कौरव दोनों के सुहृद् आप हैं ७ इससे आप कौरवों पाण्डवों के अच्छा होने ही का उपाय करें उसमें भी हमारा हित करना कुछ आपको दुष्कर नहीं है, जो ऐसा करोगे कि युद्ध भी न हो व हम को राज्य में भाग भी मिल जाय तो आपका कार्य सिद्ध हो जायगा ८ जायकर आप वहां ऐसा ही कीजियेगा कि जिसमें युद्ध न हो व जो आपने उस दुष्टात्मा दुर्योधन के लिये मार डालना ही विचारा है तो उसी का उपाय कीजिये ९ अच्छा जाइये कि तो उनके साथ हम लोगों का मेल ही होजायगा व जो आपने विचारा है वही होगा, वास्तव में तो जो आप ने विचारा है कि युद्ध ही होगा मिलाप न होगा वही हम को भी अभीष्ट है क्योंकि वह दुष्टात्मा पुत्र बान्धव सहित क्या वध करने के योग्य नहीं है वध के योग्य ही तो है १० क्योंकि जिस दुष्ट ने युधिष्ठिरजी में श्री देख उपताप किया यह न देखा कि यह कार्य हम लोगों का नाशक है ११ क्योंकि युधिष्ठिरजी की श्री उस कपटी ने कपट से जुआं खेलाय धोखे से हरली हम कहते हैं कि ऐसा छली पुरुष क्षत्रियों में जन्म ले धनुर्द्धर कैसे हुआ १२ उसको चाहिये था कि जो प्राण त्याग का भी समय होता तो भी जब जुआं खेलने के लिये बुलाया गया था तो जुआं खेलने से निवृत्त होजाता न कि अधर्म से जीत हम लोगों को वन को भेज प्रसन्न हुआ १३ इससे अवश्य हम सुयोधन को मार ही डालेंगे यह कुछ अद्भुत नहीं जो आप मित्रों के अर्थ उस दुष्ट को मारना ही चाहते हैं यह आप को उचित ही है १४ अब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बताइये उसके मारने की क्रिया कैसे सिद्ध होगी कोमलता करने से व कठोरता करने से १५ व जो आप निश्चय २ उसका मार डालना ही श्रेष्ठ मानते हों तो फिर वही कीजिये अब कुछ विचार करने की आवश्यकता नहीं १६ क्योंकि जानतेही हो जैसा उस पापबुद्धि ने द्रौपदी को सभा के बीच में पकड़कर दुश्शासन से खिंचाया वह उसी का पाप था और किसी का नहीं ॥ १७ ॥

दो० दुर्य्योधन पाण्डवन महँ, नहिं राखिहि सम भाव।
यह निश्चय है जिमि उषर, बोये बीज अभाव ॥ १ । १८ ॥
तासों जो मानहु उचित, अरु पाण्डव हित जोय।
तुरत करहु वह हमहिं जो, आज्ञा कहिये सोय ॥ २ । १९ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्यष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥

उन्नासीवां अध्याय।

दो० ऊनासी महँ कहब जिमि, अर्ज्जुन सों भगवान।
कह्यहु सकल कर्त्तव्य जो, कौरवमाहिं विधान ॥ १ ॥

श्रीभगवान् कृष्णचन्द्रजी अर्ज्जुन के वचन सुन बोले कि हे पाण्डव! यह ऐसा ही है जैसा तुम कहते हो हम कौरव पाण्डव दोनों के कुशलही का कार्य्य करेंगे १ व युद्ध करा देना मिलाप करा देना दूत के अधीन होता है हम दूतही बनकर जाते हैं इससे यद्यपि हमारे अधीन है तथापि जैसे खेत को अच्छी तरह जोतते, वापी कूपादि से सींचते व पृथ्वी भी निर्द्दोष होती सर्द्दी भी उसमें होती पर उसमें भी कभी कभी दैवाधीन विना पानी बरसे फल नहीं लगता ऐसे ही दैवाधीन है देखें क्या होता है २ जब वर्षाही के अधीन अन्न का होना ठीक ठहरा तो वही सींचना ही पौरुष ठहरा जिस प्रकार बने सींचे ३ फिर सींचने का उपाय बहुत करे उसमें जो सूखा ही पर गया तो वह दैव का किया हुआ है इससे आगे के महात्मालोगों ने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अपनी बुद्धि से निश्चय किया है कि लोक का जितना व्यवहार है सब दैव व पुरुषार्त्थ दोनों के अधीन है परन्तु हम वही करेंगे जो पौरुष करने से होता है ४ । ५ व दैवाधीन कर्म्म को मानना यह हम कभी नहीं करसक्ते क्योंकि वह दुष्टधर्म्म व लोक दोनों को छोड़ काम करता है ६ व उस असत्कर्म्म से कभी सन्तप्त नहीं होता व उसकी बुद्धि को दुष्टमन्त्रीलोग और भी बढ़ातेही जाते हैं ७ मन्त्री उसके तीन ही हैं शकुनी कर्ण व उसका भाई दुश्शासन इससे वह राज्य छोड़ मिलाप कभी न करेगा ८ जबतक वह परिवार सहित मार न डाला जायगा राज्य कभी न देगा व युधिष्ठिरजी भी चाहे वह आय पैरोंपर भी गिरे पर ये राज्य विना पाये शम न करेंगे व माँगनेसे वह दुष्ट देगा भी नहीं फिर कैसे शम होगा ९ इससे जो युधिष्ठिर कहते हैं कि हमको पांचही ग्राम दे दें और सब आप लिये रहें इस बात का कहना हम उचित नहीं समझते यद्यपि धर्म्मराज ने उसके प्रयोजनही की बात कही है पर वह पापी दुर्य्योधन १० वैसा किसी तरह न करेगा जब उस वचन को न मानेगा तो उसको लोकभर मारडालने के योग्य समझेंगे ११ व हम भी फिर वधही करने के योग्य समझेंगे व जगत् भर समझेगा देखो जिस दुष्ट ने जब तुमलोग दश वर्ष के भीतरही के बनाय बालक थे तभी तुम सबों को नानाप्रकार के दुःख दिये १२ व उस क्रूरस्वभाव दुष्टात्मा ने तुमलोगों का राज्यही लोप करदिया व फिर भी जो युधिष्ठिरजी को किसी युक्ति से श्री हुई उसे देख सन्तप्त हुआ १३ व बार बार उसने चाहा कि इनसे व पाण्डवों में भेद परजाय इस विषय में बहुत फोर तोर की बातें कहता रहा परन्तु हमने उस पापी के मन की बात नहीं की उसके वचन नहीं माने १४ सो उसका मत तुम भी अच्छी तरह जानते हो व हमको भी जानते हो कि सदा धर्म्म-राजहीका प्रिय करना चाहते हैं १५ फिर उसका मत जानते, व हमारे मत को अपना जानते फिर क्यों अजान के समान हमारे विषय में

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

शङ्का करते हो कि ये शान्त होना नहीं चाहते १६ फिर तुम तो परम दिव्य जो भाव है कि देवतालोग भूमि का भार उतराने के लिये ठौर ठौर उत्पन्न हुए हैं व हमारी तुम्हारी द्वारा उतरावैंगे फिर यह तो होनी ही है कि सब राजा मारे जायँ पृथ्वी का भार उतरे फिर तुम से व शत्रुओं से मेल कैसे होगा युद्ध न होगा तो भूमि का भार कैसे उतरेगा १७ इससे हे पाण्डव! कर्म्म व वचन से जो हम से होसकेगा करेंगे परन्तु कौरवों के सङ्ग तुम्हारा मेल हो जाना यह न हम चाहते हैं न करावैंगे १८ फिर हमीं तुम्हारा व कौरवों का मेल नहीं चाहते कौरव तुम से मेल चाहते हैं जो वे मेल चाहते तो जब विराट नगर में गाइयां हरी गई थीं तब भी तो भीष्मजी ने दुर्य्योधन से कहा था कि अब पाण्डवों से मेल करलो फिर उसने नहीं माना तो अब मानेगा १६ जब उसने तुम लोगों को थोड़ा भी राज्य क्षणमात्र भर तक भी देना अङ्गीकार न किया व सन्तुष्ट न हुआ तभी तो तुमने भी प्रतिज्ञा की कि इस दुष्ट के सङ्ग सब कौरवों को मार डालूंगा २० इससे सब प्रकार से हम धर्म्मराज की आज्ञा करेंगे पर उस दुष्टात्मा दुर्य्योधन के पाप कर्म्मों का भी विचार किये रहेंगे जिसमें वह भी जानै ॥ २१ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकोनाशीतितमोऽध्यायः ॥ ७६ ॥

अस्सी का अध्याय।

दो० अस्सी के अध्याय महँ, नकुल कहे जिमि बैन।
कहब सोई चितलाय त्यहि, सुनि जनमाने चैन ॥ १ ॥

नकुलजी कृष्णचन्द्रजी से बोले कि धर्म्मज्ञ व महादानी धर्म्मराजजी ने बहुत प्रकार के वाक्य कहे वे सब आप ने सुने १ व महाराज का मत जान भीमसेनजी ने शम करना कहा व अपनी बाहों का वीर्य्य देख युद्ध करने की भी प्रशंसा की २ व उसी प्रकार अर्ज्जुनजी ने जो कहा वह भी आपने सुना व फिर कुछ आपने अपना भी मत कहा ३

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

परन्तु हमारी जान इन सब मतों का अतिक्रमण कर वहां जाय शत्रुओं का मत सुन जो उस समय उचित हो वह कीजियेगा ४ क्योंकि तिस तिस निमित्त में मनुष्य का मत काल के अनुसार होता है राजा का मत है कि शान्त हो जाय युद्ध न हो द्रौपदीजी का मत है कि सब कौरव निर्मूल कर दिये जायँ फिर वहां पहुँचने पर जैसा उचित समझ परे वैसा कीजियेगा ५ क्योंकि प्रथम और युक्ति से अर्थ की सिद्धि विचारी जाती फिर होती कुछ और तरह से है क्योंकि लोक में पुरुषों की मति अनित्य होती जैसा विचारो वैसा नहीं होता ६ हम लोगों की मति वन में बसने के कारण और प्रकार की होगई है इस से अदृश्य पदार्थों में दृश्य जान परता व दृश्य पदार्थों में अदृश्य ७ हमलोगों का भी प्रेम जब वन में थे तब ऐसा राज्य के विषय में नहीं था कि जैसा अब है ८ अब हम लोगों को वनवास से निवृत्त सुन तुम्हारे प्रसाद से ये सात अक्षौहिणियां आई हैं ९ अब अचिन्त्य बल पौरुष व शस्त्र धारण किये इन सब पुरुषसिंहों को देख ऐसा कौन पुरुष है जो व्यथित न हो १० इससे आप वहां जाय कौरवों के मध्य में प्रथम समझाय बुझाय बातें कीजियेगा फिर भय भी दिखाइयेगा पर जहां तक हो ऐसा ही कहियेगा जिसमें एकाएकी मन्द बुद्धि दुर्य्योधन व्यथित न हो उठे ११ क्योंकि युधिष्ठिर, भीमसेन, अपराजित अर्ज्जुन, सहदेव व हम, तुम व बलदेवजी, महावीर्य्य सात्यकी, पुत्र सहित राजा विराट, मन्त्रियों समेत राजा द्रुपद, तथा उनके पुत्र धृष्टद्युम्न व बड़े विक्रमी काशिराज, चँदेली के राजा धृष्टकेतु इन लोगों से समर में मांस व रुधिर की देह धरे कौन पुरुष युद्ध करेगा १२। १४ इससे अब आप वहां जाने ही से धर्म्मराज का इष्ट अर्थ सिद्ध करेंगे इसमें कुछ अन्तर ही नहीं है १५ व फिर जब वहां जाय आप कल्याण की बातें कहेंगे तो विदुर, भीष्म, द्रोण व वाह्लिकजी तुम्हारे कहने से जान भी सकेंगे १६ फिर वे लोग

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

मन्त्रियों सहित धृतराष्ट्रजी को व उस दुष्ट पापी दुर्य्योधन को भी समझा देंगे ॥ १७ ॥

दो० जहां विदुर श्रोता बहुरि, तुम वक्ता भगवान।
तहां कौन असअर्थ ज्यहि, मग नहिं थापहु आन ॥ १ ॥ १८ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥

इक्यासी का अध्याय।

दो० एकाशी महँ कहब जिमि, हरिसों कह सहदेव।
निज मतता सुनि सात्यकी, स्वइ दृढ़ कीन न भेव ॥ १ ॥

सहदेवजी बोले कि जो राजा ने कहा है सनातन धर्म्म तो वही है परन्तु हमारे मत से आप वैसी ही बातें कहियेगा जिसमें युद्ध ही हो १ जो कौरव लोग पाण्डवों के सङ्ग शम भी चाहें तो भी आप ऐसी ही युक्ति कीजियेगा जिसमें उनके साथ युद्ध ही हो मेल किसी तरह न हो २ क्योंकि सभा में द्रौपदी की वह दुर्दशा देख दुर्य्योधन को विना मार डाले हमारा क्रोध कैसे शान्त होगा ३ जो भीमसेन, अर्ज्जुन व धर्म्मराज ये धर्म्मात्मा ही बने रहेंगे तो भी हम अकेले धर्म्म छोड़ कर समर में दुर्य्योधन से युद्ध ही करना चाहते हैं ४ यह सुन सात्यकीजी बोले कि हे कृष्णचन्द्रजी! महामति सहदेव ने सत्य कहा कि दुर्य्योधन के मारे ही जाने पर हमारे क्रोध की शान्ति होगी हमारे भी क्रोध की शान्ति तभी होगी जब दुर्य्योधन मारा जायगा ५ क्योंकि आप नहीं जानते जैसे वन में पाण्डवों को चीर मृगचर्म्म धारण किये देख आपको भी पाण्डवों को दुःखित देख क्रोध हुआ था ६ तिससे रणकर्म्म में कर्कश माद्रीजी के पुत्र सहदेवजी ने जो कहा है वही सब योधों का सम्मत है ७ वैशम्पायनजी बोले कि महामति सात्यकी वीर के ऐसा कहते ही सब योधों ने बड़ा भयङ्कर सिंहनाद किया ॥ ८ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो० सब दिशि सों सब वीर कहि, साधु साधु युयुधान ।
वचन प्रशंसनलागि तब, शिनिसुत के सविधान ॥ १ । ६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८१ ॥

बयासी का अध्याय ।

दो० कहब द्व्यशीत्यध्याय महँ, जिमि द्रौपदी सकोप ।
हरिसों कहनिजदुख सुनत, ज्यहि सबके रणचोप ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि राजा के धर्म्मार्त्थ सहित व हित वचन सुन शोक की मारी कर्शित द्रौपदीजी आगे बैठे कृष्णचन्द्रजी से बोलीं १ व बहुत काले व लंबे केशवाली द्रुपदराजकी कन्या सहदेव व सात्यकी के वचन की प्रशंसाकर २ भीमसेन को शान्तदेख उदास हो नेत्रों में आँसूभर परम मनस्विनी हो बोली ३ हे महाबाहो, धर्म्मज्ञ, मधुसूदन ! आपको तो विदितही है जैसे कपट से पाण्डव लोग सुख से भ्रंशित कराये गये ४ व उसमें मंत्रियों सहित दुर्योधन ने जैसा किया वह भी सब विदित है व जैसे सञ्जय ने आय एकान्त में धृतराष्ट्र राजा की बातें सुनाईं वे भी विदित हैं ५ व युधिष्ठिरजी ने सञ्जय से जो कहा व फिर सञ्जय के जानेपर जो आपसे कहा आपने सब सुना व जाना ६ कि पांच ग्राम हमको दो बाकी सब तुम लो उनमें अविस्थल, वृकस्थल, माकन्दी, वारणावत ७ व एक जो उनके मन में हो यह दुर्य्योधन से व उनके सुहृदों से कहना यह सञ्जय से सन्देश कहा ८ पर मेल की इच्छाकिये धर्म्मात्मा श्रीमान् युधिष्ठिरजी के वचन दुर्य्योधन ने न माने पांच ग्राम भी देना अङ्गीकार न किया ९ इससे हम अब आपसे कहती हैं कि जो विना पांच भी ग्राम दिये दुर्य्योधन सन्धि किया चाहें तो आप वहां जाय सन्धि करना न मानियेगा १० क्योंकि सृंजयवंशियों समेत पाण्डवलोग दुर्य्योधन की बड़ी घोर भी सेना के प्रतिपक्षी अच्छी तरह हो सकेंगे ११ कौरवलोग साम व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दाम से कभी न मानेंगे इससे आप उनके ऊपर दया न कीजियेगा १२ क्योंकि जो शत्रु साम दाम से न शान्त हों जो अपने प्राणों की रक्षा चाहे उन शत्रुओं को दण्ड ही देकर शान्त करे १३ इससे कौरवों के ऊपर महादण्ड प्रक्षेप करना आपको उचित है सो आपको अकेले नहीं कहतीं पाण्डवों सृञ्जयों समेत आप कौरवों के ऊपर दण्ड प्रक्षेप कीजिये यह पार्थों के अर्थ का साधक व आपके यश का कारक होगा १४ व यह काम क्षत्रियमात्र को भी सुखदायक होगा क्योंकि यह तो लिखा ही है कि लोभी क्षत्रिय को क्षत्रिय मार डाले व अपने धर्म्म में टिका हुआ क्षत्रिय लोभी अक्षत्रिय को भी मार डाले १५ परन्तु और सबको क्षत्रिय मार सक्ता है जो सब पाप ही करता हो वैसे भी ब्राह्मण को नहीं मार सक्ता क्योंकि ब्राह्मण सब वर्णों का गुरु है व सबके प्रथम भोजन करने का पात्र है १६ जैसे अवध्य ब्राह्मणादि के वध करने में दोष होता है वैसे ही वध्य के न वध करने में दोष होता यह धर्म्मवेत्ताओं ने कहा है १७ जिसमें आपको वध्य दुर्योधनादिकों के अवध का दोष न हो वह पाण्डव, दाशार्ह, सृञ्जय व सैन्यसहित आप करें १८ हे जनार्दन! अब हम विश्रम्भ के कारण कही हुई बात फिर कहती हैं कि भला पृथ्वी में हमारी नाईं कौन सी स्त्री है १९ जो हम द्रुपदराज की तो कन्या सो भी योनि से उत्पन्न नहीं वेदी के मध्य में से उत्पन्न व धृष्टद्युम्न महारथ की भगिनी व आपकी प्यारी सखी २० आजमीढ़ राजा के कुल में ब्याही, महात्मा पाण्डुजी की पुत्रवधू, व इन्द्रसम तेजस्वी पांच पाण्डुपुत्रों की स्त्री २१ फिर पांचों वीरों से हमारे पांच वीर पुत्र उत्पन्न हुए वे पांचों महारथ धर्म्म से जैसे आपकी भगिनी के पुत्र अभिमन्यु वैसे ही ये हमारे पुत्र भी हैं २२ सो ऐसी हम पाण्डुपुत्रों के देखते २ व आपके जीते २ सभा के बीच में केश पकड़े घसीटी हुई महाक्लेश को प्राप्त हों २३ हाय! पाण्डु के पुत्रों के व पाञ्चालों के व सृञ्जयों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के जीते ही जीते उन पापियों की दासी के समान हो हम सभा में उस दुर्दशा के साथ पहुँचाई गईं २४ जब पाण्डव लोग हमको देखते रहे व कुछ न कर सके तो हमने मन से आपका स्मरण किया कि हे गोविन्द! हमारी रक्षा करो २५ तब हमारे श्वशुर राजा धृतराष्ट्र ने आपकी प्रेरणा से हम से कहा कि हे द्रौपदि! तुम वरदान पाने के योग्य हो जो चाहो वर माँगो २६ तब हमने कहा कि पाण्डव लोग अदास हो रथ घोड़े सहित वन को जाने पावें यही वरदान है हमारे ऐसा कहने पर ये लोग दासता से छूट वन को जाने पावें २७ इस प्रकार के सब दुःखों के आप जाननेवाले हो इससे हे पुण्डरीकाक्ष! पति, पुत्र, बान्धव, ज्ञाति सहित हमारी रक्षा करो २८ हे कृष्ण! धर्म्म से तो हम भीष्म व धृतराष्ट्र की भी पतोहू होती हैं तिसको ज़बर-दस्ती उनके पुत्रों ने दासी बना लिया २९ हे कृष्ण! जो अब मुहूर्त्त भर भी दुर्य्योधन जीता रहा तो अर्जुन की धनुर्द्धरता को धिकार है व भीमसेन के बल को धिकार है ३० हे कृष्णचन्द्रजी! जो आपकी हमारे ऊपर अनुग्रह हो व जो हमारे विषय में आपकी कृपा हो तो सब प्रकार से धृतराष्ट्रके पुत्रोंके ऊपर आप कोपही करें ३१ वैशम्पायनजी बोले कि इतना कह सूत्र के ठरों से बँधेहुए भी व टेढ़े, रमणीय, बहुत ही काले सब चमेली आदि सुगन्धित तैलयुक्त ३२ सब लक्षण संपन्न, बड़े काले सर्प्पोंके समान लम्बे ऐसे अपने केश बायें हाथ से पकर ३३ कमलाक्षी व गजगामिनी द्रौपदीजी नेत्रों में आँसूभर कृष्णचन्द्रजी के बनाय समीप जाय यह वचन बोलीं कि हे पुण्डरीकाक्ष! ३४ शत्रुओं से मेल करने की इच्छा किये आप सब कार्य्यों में दुश्शासन के हाथों से उखाड़े हुए इन हमारे केशों का स्मरण करते रहें ३५ हे कृष्ण! जो बेचारे भीमसेन व अर्ज्जुन कृपण हो मिलाप करने की इच्छा रखते हों तो पुत्रों सहित हमारा वृद्ध पिता कौरवों से युद्ध करेगा ३६ व पांच हमारे महावीर्य्य पुत्र हैं वे अभिमन्यु को आगे कर सब कौरवों के सङ्ग युद्ध करेंगे ३७

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

क्योंकि जब तक हम दुश्शासन का श्यामरङ्ग का हाथ कटा हुआ रक्त व धूलि से युक्त न देखेंगी तब तक हमारे हृदय को कौन शान्ति होगी ३८ प्रदीप्त अग्नि के समान प्रज्वलित क्रोध हृदय में स्थापित किये राह परखते परखते हमको तेरह वर्ष बीत गये ३९ पर हे शत्रुभयङ्कर, कृष्ण! जो आप अब भी धर्म्म ही देखते हैं तो अब पीड़ित हो हमारा हृदय फटा जाता है ४० इतना कह विशाल नेत्रवाली द्रौपदीजी नेत्रों में आंसू भर थरथराय कँपती हुई बड़े जोर से गद्गदाय रोदन करने लगी ४१ उससमय गर्म आंसुओं से पीनस्तनों को बनाय भिगो दिया जिसके देखने से महानिष्ठुर भी पुरुष होता तो उसको करुणा आती ४२ ऐसी द्रौपदीजी को समझाते हुए करुणा वरुणालय कृष्णचन्द्रजी बोले कि हे द्रौपदि! बहुत ही शीघ्र कौरवों की स्त्रियों को रोती देखोगी ४३ हे भामिनि! जिन कौरवों के ऊपर तुमने क्रोध किया है उनकी स्त्रियां इसीतरह रोदन करेंगी क्योंकि उनके ज्ञाति, बान्धव, पति, पुत्रादि सब मार डाले जायँगे ४४ यह काम युधिष्ठिर की ही आज्ञा से भीम, अर्ज्जुन, नकुल व सहदेव के सङ्ग हमी करेंगे॥ ४५॥

दो० कालपक्क धृतराष्ट्र सुत, जो न सुनहिं मम बैन।
तो हत ह्वै श्वश्रृगालभख, ह्वै क्षिति परहिं तो चैन॥ १। ४६॥
बरु हिमगिरि चलिजाय बरु, धरणि होय शतखण्डि।
बरु तारायुत द्यो गिरै, मम बच मृषा न चण्डि॥ २। ४७॥
सत्य कहत हम द्रौपदी, आंसु करहु अब बन्द।
शत्रुरहित श्रीयुत पतिन, वेगि लखहु स्वच्छन्द॥ ३। ४८॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्व्यशीतितमोऽध्यायः॥ ८२॥

तिरासी का अध्याय।

दो० कहब तिरासी महँ गयहु, जिमि हरि कौरव पास।
कहन हेतु सन्देश वर, जहँ पाण्डवन सुपास॥ १॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अर्ज्जुनजी श्रीकृष्णचन्द्रजी से बोले कि आप सब कौरवों व पाण्डवों के उत्तम सुहृद हैं व दोनों पक्षों के सम्बन्धी व नित्य प्रिय हैं १ इससे पाण्डवों की ओर से सब कौरवों की कुशल पूछियेगा व आप सब कुछ करने में समर्थ हैं इससे कौरवों पाण्डवों का मेलही कराइये २ व असहनशील भाई दुर्य्योधन से आप इस ओर से जो कुछ कहियेगा वह शान्ति ही होने के विषय में कहियेगा ३ व जो कुशल कारक कल्याण रूप व योग्य आपके वचन वे न मानेंगे तो आप अपनी अभाग्य के वश में परेंगे ४ यह सुन श्रीभगवान् बोले कि अच्छा हम अभी जाते हैं जो हम लोगों का हित हो व कौरवों को भी कुशल कारक हो वही कहेंगे इसमें धृतराष्ट्र के मनकी जो बात होगी वह भी खुल जायगी ५ वैशम्पायनजी बोले कि जब प्रातःकाल हुआ व बनाय अन्धकार जाता रहा व अर्ज्जुनजी के नाम से मैत्रनाम अठईं तारा हुई व दिवाकर के किरण बनाय कोमल हुए ६ तब कार्त्तिक महीने में रेवती नाम नक्षत्र में जब कि पूर्वा फाल्गुनी का जन्म होने से रेवती नक्षत्र सत्तरहवां होता है व वह अठईं मैत्रनाम तारा होती है व शरदृतु का अन्त हुआ हिमका प्रारम्भ हुआ व सब अन्न ठौर ठौर बोया गया था वह जमरहा था जड़हन धानों में बालियां आय रहीं थीं उस समय सबप्रकार अर्ज्जुनजी बलवत्तर हुए क्योंकि स्वामी ही का बल दूत का लिया ही जाता है इससे उसी समय में ७ विश्वस्त ब्राह्मण लोगोंके मङ्गलयुक्त वेदवचन पुण्याहवाचन सुनते हुए जैसे ऋषियों के वचन इन्द्र सुनते हैं ८ पूर्वाह्ण की सब क्रिया कर मध्याह्न स्नानकर पवित्र हो चन्दनादि से भूषित हो कृष्णचन्द्रजी ने प्रथम सूर्य्यनारायण का उपस्थान कर फिर अग्नि में आहुतें दीं ९ फिर एक श्वेत बैल की पूछ छू ब्राह्मणों के प्रणाम कर अग्नि के प्रदक्षिणा विधानकर व आगे सब कल्याण की वस्तु देखते १० कृष्णचन्द्रजी अर्ज्जुन व युधिष्ठिरादि के वचन के पूरे करने की प्रतिज्ञा कर शिनि के नाती सात्यकी से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बोले कि ११ रथ के ऊपर शङ्ख, चक्र व गदा व सब बाण धनुष शक्ति व अन्य नाना प्रकार के आयुध धरो १२ क्योंकि शकुनी कर्ण के सम्मत में परने से दुर्य्योधन बड़ा दुष्टात्मा हो गया है उसका कुछ ठीक नहीं युद्ध न करने लगे तो विना आयुध क्या होगा क्योंकि जो आप बलवान् भी हो तो भी दुर्बल भी शत्रु को तुच्छ न समझना चाहिये १३ केशव भगवान् का ऐसा मत जान सब योधा लोग भी अपने अपने अस्त्र शस्त्रादि ले तैयार हुए व भगवान्के रथपर तो जानों सब प्रकार के आयुध स्थापित ही किये गये १४ वह रथ प्रज्वलित कालाग्नि के समान प्रकाशित अति शीघ्र चलने के कारण मानों आकाश को चले जाते हुए व सूर्य्य चन्द्र समान प्रकाशित दो पहिये बने इस से भूषित १५ व जिसमें अर्द्धचन्द्राकार व चन्द्राकार नाना प्रकार की मछलियां व मृग पक्षिगण बने व बहुत प्रकार के फूल बने व सर्वत्र मणियों से जटित १६ दोपहर के सूर्य्य के समान प्रकाशित बड़ा भारी देखने में अति मनोहर, मणियों व सुवर्ण से जटित होने के कारण चित्र विचित्र ध्वजा पताका युक्त १७ सब सामग्री युक्त किसी के ढिठाई करने के अयोग्य व्याघ्रचर्म्म से मढ़े शत्रुओं के यश का नाश करते हुए व यदुवंशियों को आनन्द बढ़ाते १८ शैव्य, सुग्रीव, मेघपुष्प, बलाहक नाम चार घोड़े जुते वे घोड़े सब स्नान कराये खरहरा आदि होने से साफ सुथरे १९ फिर कृष्णचन्द्रजी की महिमा को बढ़ाते गरुड़ युक्त ध्वज का शब्द होते, ऐसा रथ तैयार हुआ २० ऐसे सुमेरु पर्वत के कंगूरे के समान शोभित रथ पर श्रीकृष्णचन्द्रजी सवार हुए जानों इच्छा के अनुकूल चलने वाले विमान ही पर सवार हुए २१ तिसके पीछे पुरुषोत्तम भगवान् सात्यकी को चढ़ाय पृथ्वी आकाश व अन्तरिक्ष को सन्नादित कराते चले २२ उस समय सब बादर छँट गया क्षणमात्र में सब प्रकाशित हो गया पवन अनुकूल बहने लगा धूलि का उड़ना बन्द हो गया २३ जो पक्षी व मृगगण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दहिने निकलने चाहिये दहिने निकले बायें वाले बायें इस प्रकार वासुदेव भगवान् की यात्रा में सब अनुकूल ही हुआ २४ व मङ्गल के अर्थ के शब्द करते हुए सारस हंसादि पक्षी कृष्णचन्द्रजी के पीछे पीछे चले जाते २५ व ब्राह्मणों ने जो मन्त्र पढ़ अग्नि में आहुतें दीं तो अग्नि से दक्षिणावर्त्त लपक निकलने लगी व ऐसा प्रज्वलित हो बरने लगा कि धुआं का कहीं नाम भी नहीं सुनाई व दिखाई देता २६ व वसिष्ठ, वामदेव, भूरिद्युम्न, गय, क्रथ, शुक्र, नारद, वाल्मीकि, मरुत, कुशल, भृगु २७ देवर्षि, राजर्षि ब्रह्मर्षि, ये सब यदुकुल के सुखदायक कृष्णचन्द्रजी के दहिनी ओर आ निकले २८ इस प्रकार ब्रह्मर्षि महर्षियों से आशीर्वाद पाते हुए कृष्णचन्द्रजी कौरवों के समीप को चले २९ जब इस प्रकार कृष्णचन्द्रजी चले तो उस समय भी कुन्तीजी के पुत्र युधिष्ठिरजी व भीमसेन, अर्जुन व नकुल सहदेव सब बोले कि ३० व चेकितान चँदेली का राजा धृष्टकेतु, राजा द्रुपद, काशिराज, महारथ शिखण्डी ३१ धृष्टद्युम्न तथा पुत्रों सहित राजा विराट व कैकय देश के पांचों भाई राजकुमारों सहित ये सब कृष्ण-चन्द्रजी की सहायता के लिये पीछे पीछे चले ३२ तदनन्तर राजाओं के बीच से आगे हो धर्म्मपुत्र युधिष्ठिरजी श्रीगोविंद भगवान् से बोले ३३ जोकि ऐसे स्थिर बुद्धि व ऐसे निश्चल मन थे कि जिन्हों ने काम क्रोध व भय के कारण तथा अर्थ के लोभ से कभी अन्याय के पीछे पैर ही नहीं धरा ३४ वे धर्मज्ञ, धारण शक्तिमान् व सब प्राणियों में महाप्राज्ञ केशव सब प्राणियों के ईश्वर, देवदेव सनातन ब्रह्म ३५ ऐसे सब गुण सम्पन्न, श्रीवत्स के लक्षण से लक्षित ऐसे कृष्णचन्द्रजी को लपट भेंट कर युधिष्ठिरजी कुछ सन्देश कहने लगे कि ३६ जिसने बाल्यावस्था ही से हम लोगों का पालन पोषण कर बढ़ाया व उपवास तपस्यादि करती हुई सदा हम लोगों के कल्याण ही में तत्पर रही ३७ व सदा देवता अतिथियों की पूजा में व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

गुरु की शुश्रूषा में तत्पर रहतीं व सबके ऊपर वत्सल रहतीं व हमको तो प्राण से अधिक प्रिय जानतीं ३८ व जिन्हों ने दुर्य्योधन की भय से हम लोगों की रक्षा की यहांतक कि बड़े भारी मृत्यु की बाधा से ऐसे हम सबों को उतारा जैसे समुद्र में से नौका उतारती है ३९ व जिन्हों ने हम लोगों के लिये अनेक दुःख सहे उन दुःख न सहने के योग्य हमारी माता से कुशल पूछियेगा ४० व पुत्रों के शोक से भरी हुई उनको बहुत ही अच्छी तरह से समझाइयेगा व हम लोगों की ओर से प्रणाम कर सबों का अलग अलग नाम कह कह मिलियेगा ४१ जिन्हों ने बाल्यावस्था से ले आजतक श्वशुरादिकों का दुःख सहा यद्यपि दुःख सहने के योग्य न थीं तथापि दुःख ही भोगे ४२ हे कृष्ण ! कभी वह भी समय होगा जिसमें यह दुःख मिटेगा व कष्ट से छुड़ाय अपनी माता को हम सुख में युक्त करेंगे ४३ जब हम लोग वन को निकाले गये तो पुत्रों के लोभ के मारे पीछे पीछे वे भी दौरी आती थीं पर हम लोग उनको वहीं छोड़ वन को चले आये ४४ कदाचित् वे हमारी माताजी हम लोगों के वियोग के दुःखों से मर न गई हों तो हे द्वारकादेश पूजित ! ४५ हमारी ओर से बहुत बहुत प्रकार से प्रणामाभिवादन करना व धृतराष्ट्र से भी प्रणाम कहना तथा और राजा लोग जो अवस्था में हम से अधिक हों उन से भी ४६ भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य व महाराज बाह्लिक व अश्वत्थामा, सोमदत्त व कौरवों से प्रणामादि कहना ४७ हे मधुसूदन ! अगाधबुद्धि, धर्मज्ञ, महाप्राज्ञ व कौरवों के मन्त्री विदुरजी से हमारी ओर से छपट कर मिलना ४८ इतना राजाओं के मध्य में कृष्णचन्द्रजी से कह व प्रदक्षिणा कर राजा युधिष्ठिरजी कृष्णचन्द्रजी से बिदा होकर लौटे ४९ उनके पीछे अर्जुनजी बनाय समीप जाय अपराजित पुरुष श्रेष्ठ अपने सखा श्रीकृष्णचन्द्रजी से बोले ५० हे गोविन्द ! प्रथम जो सम्मत करने के समय हम लोगों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के विषय में निश्चय हुआ था कि आधा राज्य दुर्य्योधनादिकों से मिलना चाहिये इसको सब राजा लोग भी जानते हैं ५१ कदाचित् प्रसन्न मन से आपका सत्कार कर वह आधा राज्य हम को दे दें तो हमारा प्रिय हो व वे लोग बड़ी भारी भय से छूट जायँ ५२ कदाचित् दुर्य्योधन ने इसके विपरीत किया आधा राज्य न दिया तो आप के सामने कहते हैं निश्चय है कि क्षत्रियों का नाश हम कर देंगे ५३ जब अर्जुनजी ने ऐसा कहा तो भीमसेन बहुत ही हर्षित हुए व क्रोध के मारे थरथराय कँपने लगे ५४ व कँपते कँपते ही बड़े जोर से पुकार खड़े हुए क्योंकि अर्जुन के वचन सुन बहुत ही आनन्द में मग्न हो गये थे ५५ भीमसेन का वह जोर से सिंहनाद सुन सब धनुर्द्धर थरथराय कँपने लगे व जितने हाथी घोड़े वृषभादि वाहन वहां थे सबों ने विष्ठा व मूत्र कर मारा ५६ इस प्रकार नाद कर व श्री भगवान् से इसी आधे राज्य ही पाने का निश्चय कह भीमसेन जी भी मिल भेंट लौटे ५७ व सब राजा लोग भी प्रणामादि कर लौटे तब कृष्णचन्द्रजी ने बड़ी शीघ्रता के साथ अपने शैव्य, सुग्रीव, मेघपुष्प, बलाहक नाम घोड़ों को हांका ५८ वे वासुदेवजी के घोड़े दारुकनाम सारथी की प्रेरणा से ऐसे वेग से आकाश मार्ग हो चले मानों आकाश ही को खाय जायँगे ५९ इस प्रकार वायु वेग से रथ चला जाता था कि कृष्णचन्द्र भगवान् ने देखा तो मार्ग में ऋषि लोग अपनी ब्राह्मणों की शोभा से युक्त खड़े थे बस रथ से झट उतर श्रीभगवान् ने ऋषियों के साष्टाङ्ग प्रणाम किया ६० व यथायोग्य सब ऋषियों से बोले कि आप लोगों के यहां सब कुशल तो है व धर्मानुष्ठान तो अच्छी तरह होता है कोई विघ्न तो नहीं है ६१ व आप लोग ब्राह्मणों की आज्ञा में क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र तीनों वर्ण टिके रहते हैं यह कह उनकी पूजा कर जनार्दन भगवान् ऋषियों से फिर बोले ६२ आप लोग कहां से सिद्ध हुए व आप लोगों का यहां मार्ग कौन है व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

आप लोगों का कार्य्य क्या है जो हम करें ६३ व आप लोगों का निवास तो जन तपलोक में रहता इस पृथ्वीतल पर किस लिये आगमन हुआ उनमें से परशुराम ऋषिराज कृष्णचन्द्रजी के समीप आय बोले ६४ प्रथम तो आय कृष्णचन्द्रजी को लपट कर मिले फिर इन्द्रादि देवताओं व दैत्यों के सखा परशुरामजी ने कहा कि देवर्षि लोग सब पुण्य करते हैं व ब्राह्मण लोग अपने वेद वेदान्तादि पढ़ते हैं ६५ व राजर्षि लोग सब तपस्वियों को मानते हैं व सब देवता असुरों को देखे रहते व पुराण सदा देखते व उनके अनुसार चलते ६६ परन्तु हम लोग सब ओर से आये हुये राजा लोगों को व सब सभासदों को व सत्यवक्ता सत्य पराक्रमी आपको देखने की इच्छा से यहां आये हैं ६७ यह सब देखने की इच्छा से व धर्म्म अर्थ सहित आपके वचन सुनने की इच्छा हम लोगों को है ६८ क्योंकि कौरवों के मध्य में आप भीष्म द्रोणादिकों से व विदुर से कहेंगे ६९ आप जब सभा में बैठ कर कहेंगे व भीष्म विदुरादि उसका उत्तर देंगे वह सब हम लोग सुना चाहते हैं ७० क्योंकि—

दो० सकल तुम्हारे वचन हित, बहुरि सत्य नहिं आन ।
सुना चहत अब बिदा ह्वै, जात लखब फिरि ध्यान ॥ १ । ७१ ॥
बिघ्नरहित जाइय बहुरि, सभा माहिं जब आप ।
दिव्यासन पर बैठि हैं, तब देखब गत दाप ॥ २ । ७२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्र्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥

चौरासी का अध्याय ।

दो० चौरासी महँ कहब हरि, नगर प्रवेश विधान ।
शकुन भये जो मार्ग महँ, उनहूं केर बखान ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि जब श्रीकृष्णचन्द्रजी हस्तिनापुर को चले तो उनके पीछे शत्रु के वीरों के भञ्जन करनेवाले हाथों में शस्त्र लिये

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दश महारथ और गये १ व एक सहस्र प्यादे तथा एक सहस्र सवार भी गये व भोजन की वस्तु भी विविध प्रकार की व सेवक तो सैकरों सङ्ग गये २ इतनी बातसुन जनमेजयजी ने पूछा कि महात्मा मधुसूदन भगवान् कैसे गये व चलने के समय कौन कौन शकुनादि निमित्त हुए ३ वैशम्पायनजी बोले कि तिन महात्मा की यात्रा के समय दैविक जो उत्पात व शकुन भी हुए हम कहते हैं सुनो ४ विना बादर ही के वज्र का शब्द हुआ व बिजली भी चमकी व उसके पीछे विना बादर ही की वर्षा भी हुई ५ सब नदियां वेग से बहने लगीं सो भी सबकी सब पूर्व ही दिशा को पश्चिम का बहना ही बन्द हो गया दिशा सब विपरीत हो गईं इससे कुछ समझ ही नहीं परता कि यह कौन दिशा है ६ अग्नि सब विना बारे ही बर उठे पृथ्वी कांपने लगी चरहियों व घड़ों से जल अपने आप उफला चला ७ व जगत् भर में अँधियारी छा गई व धूलि इतनी उड़ने लगी जिस से दिशा विदिशा का ज्ञान ही न रहा ८ अकस्मात् आकाश से शब्द होने लगा शब्द करने-वाले का शरीर कुछ भी नहीं दिखाई देता इस प्रकार सब देशों में एक बड़ा भारी अद्भुत सा हुआ ९ व हस्तिनापुर में दक्षिण पश्चिम से इस वेग से पवन बहकर आया कि सहस्रों वृक्ष उखड़ परे १० व मार्ग में जहां जहां कृष्णचन्द्रजी जाते थे वहां वहां सुखद दहिने भाग का पवन बहता था वह सब उत्पात हस्तिनापुर ही के निकट हुआ ११ ऊपर से फूलों की वर्षा हुई व कमल ठौर ठौर छोटे भी तड़ागों में फूल उठे सीधी गली अपने आप बन गई सो भी उसमें कुश कण्ट-कादि के न होने से दुःख रहित १२ जहां जहां जाते वहां वहां ब्रा-ह्मण लोग आशीर्वाद दे दे स्तुति करते व शर्बत जल आदि से पूजित करते उन लोगों को कृष्णचन्द्रजी धन देते १३ सब प्राणियों के हित करने में तत्पर उन श्रीकृष्णचन्द्रजी के ऊपर मार्ग में स्त्रियां फूलों की वर्षा करती थीं १४ व सबके घरों में जड़हन धान कटकर भर हुआ इससे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

शोभित होने लगे व और भी बहुत से अन्न सबके घर में हो आये इस प्रकार सब लोग परमसुखी व धर्मिष्ठ दिखाई देने लगे १५ मार्ग में जितने ग्राम दिखाई दिये सब सबों में पशु बहुत व सब रम्य इस से देखते ही हृदय के सन्तोष करनेवाले थे इस प्रकार हज़ारों ग्राम, पुर, नगर, राज्य, देश नांघते चले जाते १६ सब ग्राम देश कौरवों से रक्षित थे इस से सब सुख प्रसन्न थे वहां के लोग ऊबते कभी नहीं थे क्योंकि शत्रु की सेना कभी उन लोगों ने देखी ही न थी १७ अपने अपने ग्रामों से आय आय लोग मार्ग्ग में कृष्णचन्द्रजी के दर्शन की इच्छा से खड़े रहते थे १८ व उनको अपने देश के पाहुने जान सब नगरग्रामनिवासी आदर सत्कार कर पूजा करते थे १९ इस प्रकार सन्ध्या समय कृष्णचन्द्रजी वृकस्थल में पहुँचे २० व बड़ी जल्दी रथ से उतर स्नानादि कर रथ छोड़ने की आज्ञा दे आप सन्ध्या करने लगे २१ दारुक सारथी भी घोड़ों को छोड़ शास्त्र के अनुसार उनको मलदल घास दाना मसाला आदि दे रथ के सब रस्से आदि खोल खाल इकट्ठे धरे २२ जब सन्ध्यादि कर चुके तो कृष्णचन्द्रजी बोले कि युधिष्ठिरजी के कार्य्य के लिये आज यहीं बस रात्रि बितावेंगे २३ उनका मत सुन लोगों ने रहने के लिये रम्य स्थान बनाया व एक क्षण ही भर में नाना प्रकार की खाने पीने की वस्तु इकट्ठी कर दीं २४ उस ग्राम में जो मुख्य मुख्य कुलीन ब्राह्मण रहते थे व ब्राह्मणों की उत्तम वृत्ति करते थे अन्य वृत्ति से जीविका नहीं करते थे २५ वे लोग महात्मा शत्रुनाशक श्रीकृष्णचन्द्र की पूजा आशीर्वाद मङ्गल वस्तुओं समेत की २६ उन लोगों ने पूजा कर महाराज कृष्णचन्द्रजी को रत्नजटित बड़े सुन्दर अपने मन्दिर में जाय टिकाया ॥ २७ ॥

दो० परिहर तिनके भवन लखि, करि सत्कार अनेक।
बहुरि आय निज थल बसे, तिन सँग सहित विवेक ॥१।२८॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सबन सुहावन भोजनो, दै पुनि भोजन कीन।
तिन सँग तहँ निशिभरबसे, सुखयुत कृष्ण प्रवीन ॥२।२६॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुरशीतितमोऽध्यायः ॥ ८४ ॥

पचासी का अध्याय।

दो० कहब पचासी महँ यथा, कृष्ण हेतु कुरुराज।
सामग्री एकत्र किय, साजि बहुत विधि साज ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि इस प्रकार आते हुए कृष्णचन्द्रजी को दूतों के द्वारा सुन धृतराष्ट्रजी भीष्मपितामहजीसे बोले १ व द्रोणाचार्य्य, सञ्जय, महामति विदुर व मन्त्रियों सहित दुर्य्योधन से भी प्रसन्न होकर बोले २ कि हे कुरुनन्दन ! एक बड़े आश्चर्य की बात सुनाई देती है जो कि घर घर स्त्रियां बालक व वृद्ध कहते हैं ३ कोई सत्कार के साथ यह बात कहते कोई कोई यहां आय आय कहते परन्तु जै मनुष्य तै तरह की बातैं चौहटों में व सभाओं में हो रही हैं ४ वह बात यह है कि महा पराक्रमी कृष्णचन्द्रजी पाण्डवों के अर्थ यहां आते हैं अच्छी बात है वे तो हमारे भी पूज्य व मान्य सब प्रकार से हैं ५ अन्त में उन्हीं में सब संसार बसता है व सब प्राणियों के ईश्वर वही हैं व उन माधव में धारणा शक्ति, वीर्य, प्रज्ञा व पराक्रम सब पदार्थ विद्यमान हैं ६ व वे नरश्रेष्ठ सज्जनों के सदा मान्य हैं व वे सनातन धर्म हैं जो कोई उनकी पूजा करता उसको सुखी करते व जो पूजा नहीं करता उसको दुःख देते हैं ७ कदाचित् हमारे यहां की सामग्री से प्रसन्न हो जाते तो उन से सब राजाओं के समाचार मिल जाते ८ इससे हे परन्तप ! उनकी पूजा के लिये सब सामग्री करो प्रथम तो सब कामयुक्त सभा मार्ग में उनके लिये बनाओ ९ हे दुर्योधन ! तुमको वैसा कार्य करना चाहिये जिस में उनकी प्रीति तुम्हारे विषय में होवे भीष्मजी इस विषय में आप की क्या सम्मति है १० यह सुन भीष्मादि सब धृतराष्ट्रजी की बात

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

की बड़ाई करने लगे कि हां सब प्रकार उनकी पूजा ही होनी चाहिये ११ जब सब जनों का यही सम्मत हुआ तो राजा दुर्योधन ने रम्य सभा ठौर ठौर बनाने को आज्ञा दी १२ उनकी आज्ञा पाते ही सब रमणीय प्रदेशों में नाना प्रकार के रत्नों से संयुक्त बहुत उत्तम उत्तम अनेक सभा बनाई १३ व विविध प्रकार के गुणों से युक्त विचित्र आसन बनाये उनमें उत्तम उत्तम स्त्रियां चन्दनादि सुगन्धित पदार्थ व मिहीन रेशमी आदि वस्त्र स्थापित हुए १४ गुणवान् व अन्न पान विविध प्रकार की भोज्य चीजें उनमें स्थापित कराई गईं व नाना प्रकार की माला राजा ने उनमें स्थापित कराईं १५ यह सर्वत्र किया गया पर कृष्णचन्द्रजी के निवास के लिये वृकस्थल ग्राम में विशेषता से सभा बनाई गई वहां की सभा में दुर्योधन राजा ने सब रत्न ही रत्न इकट्ठे करा दिये १६ यह सब देवताओं के ही योग्य बनाया व सब इतनी शीघ्रता के साथ बनाया गया कि अति मानुष कर्म्म हुआ व यह सब बनवाय दुर्योधन ने राजा धृतराष्ट्रजी से कहा कि सब कुछ बनाय दिया गया ॥ १७ ॥

दो० सभा सकल अरु विविध विधि, रत्न समूह मुरारि ।
मनहुँ लख्यहु नहिं तजित्वरित, कौरव सदन पधारि ॥१। १८॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८५ ॥

छियासी का अध्याय

दो० छयासी महँ वह कहब जिमि, हरिहि देन के काज ।
सामग्री धृतराष्ट्र नृप, वरणी सकल समाज ॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी बोले कि, हे विदुर ! विराट नगर के समीप से जनार्दन कृष्णचन्द्रजी आये हैं व वृकस्थल में टिके हैं प्रातःकाल यहां आवेंगे १ वे आहुकवंशियों के स्वामी तथा सब सात्वतवंशियों के पुरोगामी प्रसन्नचित्त महावीर्य व महापराक्रमी जनार्दन जी हैं २ व सर्व सम्पद्युक्त वृष्णिवंश के राज्यभर्त्ता व रक्षक माधवजी हैं व तीनों लोकों के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वेगवान् प्रपितामह हैं ३ व वृष्णि अन्धकवंशी उनकी आज्ञा के अनुकूल कैसे चलते हैं जैसे आदित्य वसु व रुद्रगण बृहस्पतिजी की बुद्धि के अनुकूल चलते हैं ४ हे धर्म्मज्ञ ! उन कृष्णचन्द्रजी के लिये जो पूजा हम देंगे तुम्हारे प्रत्यक्ष कहते हैं सुनो ५ एक ही रङ्ग के बड़े समर्थ काबुलदेश के चार चार घोड़ों से नहे सोलह बड़े उत्तम तो रथ उन भगवान् को देंगे ६ व नित्य मद बहते हुए ८ हाथी जिनकी सेवा में आठ आठ और हाथी व जिनके दाँत हर्स से भी लम्बे व बड़े तीखे हों देंगे ७ व जिनके अभी लड़के नहीं हुए ऐसी रूप यौवनादि युक्त सुवर्ण समान चमचमाती सौ दासियां व उसी प्रकार नई अवस्था के सुन्दर सौ दास भी उनको देंगे ८ व पर्वतीयों के लाये हुए बड़े नम्र रोमों के ऊनी वस्त्र अठारह हजार उन्हें देंगे ९ व चीन देश के मृगों के हजार मृगचर्म बिछौना के लिये देंगे व और अधिक यदि उन्होंने चाहा तो अधिक भी देंगे १० व जो यह महामणि हमारे यहां है कि दिन रात्रि बराबर चमकता रहता है वह भी उनको देंगे क्योंकि उसके पाने के योग्य केशव ही भगवान् हैं ११ व एक ही दिन में जो ५६ कोस चल सक्ता है ऐसा चार खच्चरियों से युक्त रथ भी भगवान् को देंगे १२ व जितने वाहन व जितने पुरुष उनके साथ होंगे एक एक को आठ आठ भोजन की सामग्री देंगे १३ व दुर्य्योधन को छोड़ जितने हमारे पुत्र व पौत्र हैं सब रथादि सवारियों पर सवार हो श्रीकृष्णचन्द्रजी की अगुआनी को जायँगे १४ व अच्छे अच्छे भूषण वस्त्र धारण किये सहस्रों वेश्या पैदर श्रीकृष्णचन्द्रजी की अगुआनी को जायँगी १५ व नगर से भी जो कन्या सब भूषणों से भूषित हो कृष्णचन्द्रजी को देखने जायँगी वे भी ऐसे सब के सामने चली जायँगी पर्दा कुछ न कराया जायगा १६ व क्या स्त्री क्या पुरुष क्या बालक जिसको देखने की इच्छा हो सब कोई बे रोंक टोंक कृष्णचन्द्र जी के दर्शन करें १७ व सब दिशों में महाध्वजा महापताका टाँगी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जायँ व सब मार्ग अच्छी तरह झारे बहारे जायँ व कर्पूरादि से सुगन्धित जल उनमें छिरकाया जाय १८ दुर्योधन के गृह से दुश्शासन का सदन बहुत अच्छा है वह सब प्रकार झाड़ फन्नूसादिकों से भूषित किया जाय जिसमें उसी में कृष्णचन्द्रजी उतरें १९ यह मन्दिर बड़े रुचिर आकारों के धवरहरों से बना है इससे कल्याणदायक व रमणीय है व उसमें सदा एकही काल में ६ ऋतु वर्त्तमान रहते हैं ॥ २० ॥

दो० मम अरु दुर्य्योधन सदन, जो रत्नादि अनूप ।
जो जो हरि चहि हैं सकल, देब तासु अनुरूप ॥ १ ।२१॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षडशीतितमोऽध्यायः ॥ ८६ ॥

सत्तासी का अध्याय ।

दो० सत्तासी महँ कहब जिमि, विदुर कह्यहु नृपपाहिं ।
हरि मिलने व प्रसन्न की, रीति सोचि मनमाहिं ॥ १ ॥

विदुरजी बोले कि, हे भारत ! आप सबलोक में सम्मत हो व तीनों लोकों में सम्मत हो व जितने लोग प्रतिष्ठित हैं सबके मान्य हो १ व जो तुम इस वृद्धावस्था में ऐसी बातें करते हो वे कि तो शास्त्र से करते व तर्क से करते हो किसी से करते हो अब बनाय वृद्ध हुए हो २ व प्रजा लोग यही जानती हैं कि तुममें ऐसा उत्तम धर्म्म है जैसे पत्थर में रेखा, सूर्य्य में प्रभा, समुद्र में लहरें ३ व तुम्हारे गुण-समूहों से सदा लोग प्रसन्न रहते हैं इससे आप गुणों की ही रक्षा में यत्न करते रहिये ४ अब सरलता को प्राप्त होवो बालकों की सी बुद्धि से नाश को न प्राप्त होवो हे राजन् ! पुत्र पौत्र व सुहृद व प्रिय ५ व जो कुछ श्रीकृष्णचन्द्र अतिथि को दिया चाहते हो वह व और भी बरन सब पृथ्वी भर भी पाने व लेने के योग्य कृष्णचन्द्रजी हैं इसमें कुछ भी सन्देह नहीं ६ परन्तु तुम न धर्म्मबुद्धि से उनको यह सब दिया चाहते हो न उनके प्रिय के कारण हम अपनी शपथ खाय कर कहते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हैं जो कृष्णचन्द्र को देने को कहते हो इससे कुछ और ही प्रयोजन समझते हो ७ यह केवल माया ही है व सब छल ही है क्योंकि तुम्हारा जो मत गुप्त है वह हम खूब जानते हैं कि ऊपर और भीतर और ८ हे राजन्! भला पाण्डवलोग पांच ही ग्राम माँगते थे वही पाय जाते परन्तु तुम उनको पांच भी नहीं दिया चाहते इससे उनसे मेल न करोगे ९ अब तुम धन देखकर महाबाहु कृष्णचन्द्रजी को अपनी ओर खींचा चाहते हो इस उपाय से उनके व पाण्डवों के बीच में भेद डालना चाहते हो १० सो तुम कृष्णचन्द्र को अर्ज्जुन से पृथक् न तो धन से कर सक्ते हो न किसी उद्यम से न निन्दा करने से यह बात हम निश्चय करके कहते हैं ११ हम कृष्ण का माहात्म्य जानते हैं व अर्ज्जुन के विषय में जो उनकी दृढ़ भक्तिता है वह भी जानते हैं व यह भी जानते हैं कि उनको अर्ज्जुन प्राणों के ही समान अत्याज्य हैं १२ एक लोटा भर जल चरण धोने के लिये व लोटा भर पीने के लिये व कुशल प्रश्न पूछने के लिये इसी का ग्रहण कृष्णचन्द्र करेंगे और यह तुम्हारा कुछ भी वे न लेंगे १३ इससे हे राजन्! जो उनका प्रिय आतिथ्यमान है उन महात्मा का मान अच्छी तरह कीजिये और इस दिखाव की वहां कुछ भी आवश्यकता नहीं है १४ व जो कहने की इच्छा से तुम कौरवों के समीप कृष्णचन्द्र आते हैं वह अर्थ उनके सामने प्राप्त करो बस उन्हें और कुछ न चाहिये १५ वे केवल तुम्हारा व दुर्य्योधन का व पाण्डवों का मेल हो जाय यही चाहते हैं बस यह तुम करो जानों उनकी सब पूजा हो चुकी ॥ १६ ॥

दो० नृप तुम पिता कुमार वे, वे शिशु तुम हो वृद्ध ।
तुम पितु सम वर्त्तहु उन्हें, वे सुत सदृश समृद्ध ॥ १ । १७॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥ ८७ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अट्ठासी का अध्याय।

दो० अट्ठासी महँ कहब जिमि, दुष्ट सुयोधन कीन।
इच्छा हरि के बन्ध की, रोंक्यहु भीष्म प्रवीन॥ १ ॥

दुर्य्योधन बोले कि, विदुरजी ने जो कहा कृष्णचन्द्रजी के विषय में वह सब है सत्य ही सत्य पार्थों के विषय में वे ऐसे अनुरक्त हैं कि वहां से उनको कोई किसी यत्न से अलग नहीं कर सक्ता १ इससे हे राजेन्द्र! सत्कारपूर्वक जो जो वस्तु कृष्णचन्द्र के देने के लिये अनेक रूप की विचारी गई हैं वे किसी प्रकार उनको न देनी चाहिये २ यद्यपि वे पूज्य हैं इससे पूजा पाने के योग्य हैं पर देशकाल इस समय उनके देने का नहीं है क्योंकि जो बड़ी पूजा उनकी की जायगी तो वे यही मानेंगे कि ये भय से हमारी पूजा करते हैं ३ इससे क्षत्रिय का जिस कार्य्य के करने में अपमान हो पण्डित क्षत्रिय को चाहिये कि वह कार्य्य कभी न करे हमारी यह निश्चय मति है ४ हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि ये कृष्णचन्द्रजी तीनों लोकों के पूज्य-मान्य हैं ५ परन्तु उनको कुछ देना यह कार्य की रीति नहीं है क्योंकि विग्रह का जो प्रारम्भ हो रहा है वह केवल पूजामात्र से नहीं निवृत्त हो सक्ता ६ वैशम्पायनजी बोले कि कुरुवंशियों के पितामह भीष्मजी दुर्य्योधन के ऐसे वचन सुन राजा धृतराष्ट्रजी से यह वचन बोले ७ कि चाहे सत्कार करो चाहे असत्कार कृष्णचन्द्रजी क्रोध न करेंगे परन्तु उनका निरादर न करना चाहिये क्योंकि केशव भगवान् निरादर के योग्य नहीं हैं ८ हे राजन्! जो कार्य्य मन से हो रहा है उसको कोई किसी उपाय से अन्यथा नहीं कर सक्ता ९ हां वासुदेव भगवान् आय जो कहें निश्शङ्कता से वह करना चाहिये अब मार्ग अच्छा मिल गया है वासुदेवही के द्वारा पाण्डवों के साथ मिलाप कर लीजिये १० क्योंकि धर्म्मात्मा जनार्द्दन भगवान् जो बात कहेंगे निश्चय है कि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

धर्म्म अर्थयुक्त ही कहेंगे ११ इतना सुन दुर्य्योधन बोले कि हे पितामहजी ! यह बात नहीं हो सक्की निष्कण्टक राजलक्ष्मी को पाय अब हम पाण्डवों के साथ उसे भोगें यह बात जबतक हम जीते हैं तबतक नहीं हो सक्की फिर आगे कौन जाने क्या होता है १२ हां जो हमने विचारा है बड़ा भारी कार्य्य तो यह है सुनिये पाण्डवों के परम स्नेही कृष्णचन्द्र को हम पकड़कर बन्दीखाना में डाल देंगे १३ जब कृष्णचन्द्र बँधुआ हो जायँगे तो सब वृष्णिवंशीय व सारी पृथ्वी तथा पाण्डव सब हमारे अधीन हो जायँगे यह बात दूर नहीं है प्रातःकाल ही तो कृष्णचन्द्र यहाँ आवेंगे १४ इस विषय के उपाय आप बतावें जिसमें जनार्द्दन इस विषय को न जान पावें व न इस कार्य्य का नाश किसी प्रकार हो बस वही बताइये १५ वैशम्पायनजी बोले कि कृष्णचन्द्रजी के बन्धन के विषय के दुर्य्योधन के वचन सुन मन्त्रियों समेत धृतराष्ट्रजी दुःखित हो उदास हो गये १६ व दुर्य्योधन से बोले कि, हे प्रजापाल, दुर्य्योधन ! ऐसा न कहो यह सनातन धर्म्म नहीं है कि दूत कहीं बँधुआ किया जाय १७ फिर एक तो कृष्णचन्द्र दूत बनकर आते फिर हम लोगों के सम्बन्धी हैं उसमें भी प्रिय फिर कौरवों के विषय में सदा पापरहित हैं तो वे बँधुआ होने के योग्य कैसे हो सक्के हैं १८ इतने में भीष्मजी बोले कि हे धृतराष्ट्र ! तुम्हारा पुत्र दुर्य्योधन बड़ा मन्दबुद्धि है व इसकी मति बनाय विपरीत है क्योंकि इसको अपना शत्रु मित्र नहीं जान परता व इसी से सुहृदों के वचन नहीं करता सब अनर्त्थ ही करता अर्थ की एक तो भी बात नहीं करता १९ व पापी, पापानुगामी, कुमार्गी इसके पीछे पर तुम भी सुहृदों के वचन छोड़ इसी के अनुयायी हो गये हो २० सहज में सब कर्म्म करनेवाले कृष्णचन्द्र के सामने जब यह इस बुद्धि से जायगा तो मन्त्री पुत्र परिवार सहित क्षणमात्र में मारडाला जायगा २१ इस पापी, निर्लज्ज, अधर्म्मी व दुष्टमति दुर्य्योधन की अनर्त्थयुक्त वाणी हम किसी प्रकार नहीं सुन सक्के ॥ २२ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो० वृद्ध भरत पुङ्गव पितामह करि क्रोध अपार।
इमि कहि उठि वहँ से चल्यहु, सत्य पराक्रम कार॥१।२३॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्यष्टाशीतितमोऽध्यायः॥ ८८॥

नवासी का अध्याय।

दो० ऊननवति महँ कहब जिमि, कौरवपुर भगवान।
पहुँचे भीष्मादिक मिले, अगुवानी सविधान॥१॥

वैशम्पायनजी बोले कि प्रातःकाल होते ही कृष्णचन्द्रजी सब स्नान पूजनादि आह्निक कर्म्मकर ब्राह्मणों की आज्ञा ले नगर को चले १ जब कृष्णचन्द्रजी चले तो जितने वृकस्थल के रहनेवाले थे सब कृष्णचन्द्रजी से बिदा हो अपने अपने गृह को आये २ व यहां कृष्णचन्द्रजी को आते सुन दुर्य्योधन को छोड़ जितने भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्यादि धृतराष्ट्र के सम्बन्धी थे सब अगुवानी लेने चले ३ व बहुत से हस्तिनापुरवासी भी कृष्णचन्द्रजी के दर्शन की इच्छा से वाहनों पर सवार हो व पैदर भी गये ४ व कृष्णचन्द्रजी मार्ग्ग में भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य व धृतराष्ट्रजी के सब पुत्रादिकों से यथायोग्य मिल उन लोगों के सङ्ग नगर को गये ५ वहां कृष्णचन्द्रजी के सन्मान के लिये नगर सब झार बहार चित्रसारी आदि बनाने से भूषित हो रहा था व राजमार्ग्ग में नाना प्रकार के रत्न जड़ दिये गये थे इससे वह शोभित हो रहा था ६ व उस समय क्या स्त्री क्या पुरुष क्या बालक क्या वृद्ध क्या युवा कृष्णचन्द्रजी के दर्शन के लिये कोई भी अपने घर के भीतर नहीं रह गया ७ बरन भगवान् हृषीकेशजी के प्रवेश के समय सब लोग आय आय राजमार्ग्ग पर खड़े हुए थे जैसे जैसे दर्शन करते थे कि पृथ्वी पर गिर साष्टाङ्ग प्रणाम करते थे ८ व जितने मन्दिर राजमार्ग्ग के समीप थे उस समय श्रेष्ठ श्रेष्ठ पतिव्रतादि स्त्रियों से भरे थे इससे विदित होता था कि मानों मारे भार के प्रचलित

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हुए जाते थे ९ व यद्यपि कृष्णचन्द्रजी के घोड़े वायु वेग थे पर राजमार्ग्ग में उस समय बड़ी भारी भीर होने के कारण उनकी वह चाल जाती रही धीरे धीरे चलने लगे १० जाते जाते शत्रुनाशन कृष्णचन्द्र भगवान् कमलनयन धवरहरादिकों से शोभित धृतराष्ट्रजी के राजमन्दिर में पधारे ११ व राजमन्दिर के तीन फाटक नांघ चौथे फाटक के भीतर भगवान् कृष्णचन्द्रजी ने धृतराष्ट्रजी को बैठे देखा १२ व कृष्णचन्द्रजी को आते जान महाराज धृतराष्ट्रजी भीष्मपितामह व द्रोणाचार्य्य सहित आसन से उठ खड़े हुए १३ व कृष्णचन्द्रजी की पूजा करते हुए कृपाचार्य्य, सोमदत्त व महाराज वाह्लिक भी अपने अपने आसनों से उठ खड़े हुए १४ इसके पीछे महाराज कृष्णचन्द्रजी ने महायशस्वी राजा धृतराष्ट्र व भीष्मपितामह व द्रोणाचार्य्यजी को वचनों से बहुत आदरपूर्वक पूंछा १५ व उन लोगों के सङ्ग अवस्था के अनुकूल प्रणामादि कर फिर अन्य लोगों से भी अवस्था व सम्बन्ध के अनुसार नमस्कार प्रणामाशीर्व्वाद कुशलप्रश्न पूछना आदि किया १६ उसके पीछे द्रोणाचार्य्य, राजा वाह्लक तथा उनके पुत्र कृपाचार्य्य सोमदत्त से बहुत अच्छी तरह मिले भेंटे १७ इसके पीछे एक सबसे उत्तम सुवर्ण की चौकी रत्नों से जटित बहुत ऊँची थी जो कि इन्हीं के बैठने के लिये राजगद्दी के समीप ही धरी थी उस पर धृतराष्ट्रजी के कहने से जा बैठे १८ इसके पीछे धृतराष्ट्रजी के पुरोहित लोगों ने सुन्दर वचन कह जल शर्ब्बत आदि यथा योग्य सब पदार्थ भगवान् कृष्णचन्द्रजी के लिये लाये १९ जब बनाय आतिथ्य सत्कार हो चुका तो सब कौरवों से जिससे जैसा सम्बन्ध था उसके अनुरूप हास्यादि की बातें व नातेदारी की रीति की भी गाली आदि करते कराते सब कौरवों के बीच में विराजमान रहे २० व कुछ देर तक वहां बैठ बैठाय धृतराष्ट्र की ओर से बनाय पूजा व स्तुति पाय राजा से कह कर उनकी अनुमति पाय वहां से उठ व सभा से बाहर आये २१ व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

और सब कौरवों से मिलते मिलाते व सत्कार पाते देते करते जाते जाते विदुरजी के स्थान पर पहुँचे २२ विदुरजी भगवान् कृष्णचन्द्र को देखते ही अपने को कृतार्थ मान प्रणामादि कर नाना प्रकार की वस्तुओं से जो अच्छे पाहुनों को दी जाती हैं उनसे उनकी बड़ी भारी पूजा व वचन सत्कारादि कर हाथ जोड़ बोले २३ हे कमललोचन! आपके दर्शन से जो प्रीति मुझे हुई है वह आपसे क्या कहूं क्योंकि आप सब प्राणियों के अन्तःकरण के स्वामी हैं सब जानते ही हैं॥ २४ ॥

दो० कृतातिथ्य हरिसों विदुर, धर्म्म निपुण बहु भाँति।
पूछी पाण्डव की कुशल, बहुरि चरित धरि पाँति॥ १। २५॥
हरि लखि सबविधि सुहृद प्रिय, धर्म्म अर्थपर प्रज्ञ।
रोषरहित मतिमान त्यहि, कहन लगे सर्व्वज्ञ॥ २। २६॥
जो कुछ चेष्टित पाण्डवन, वह सब करि विस्तार।
कह्यहु विदुरसन बहुत विधि, जिमि होइहि निस्तार॥ ३। २७॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि नवाशीतितमोऽध्यायः॥ ८९ ॥

नब्बे का अध्याय।

दो० नब्बे के अध्याय महँ, कहब गयहु ज्यहि भाँति।
हरि कुन्ती ढिग तिन कह्यहु, बहुत विपति गिनि पाँति॥ १ ॥

वैशम्पायन जी जनमेजय जी से बोले कि दोपहर के पीछे विदुर से मिल भेंट सब कह सुन कृष्णचन्द्रजी अपनी फूफू कुन्तीजी के समीप गये १ व उनको सूर्य्य समान प्रकाशित आते देख अपने पुत्रों का स्मरण करती हुई कुन्ती जी कृष्ण भगवान् का कण्ठ पकर लपटाय रोदन करने लगीं २ क्योंकि उन महापराक्रमी पाण्डवों के सङ्ग रहनेवाले कृष्णचन्द्रजी को उन्होंने बहुत दिनों के पीछे देखा था इससे नयनों से आँसुओं की धारा उन्होंने बहाई ३ व कृष्णचन्द्रजी को फिर आगत स्वागत कर आसन पर बैठाय आंसुओं से भीगे व शोक

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

से सूखे मुख से गद्गद वचन कहती कुन्ती जी बोलीं ४ कि जो हमारे पुत्र बालपन ही से अपने बड़े बूढ़े व गुरुओं की शुश्रूषा में तत्पर रहे व आपस में सदा सुहृद रहे व सब समान चित्त होने से सबको प्रिय रहे वे छल से राज्यहीन कर दिये गये यद्यपि सदा अच्छे जनों के मध्य में रहने के योग्य हैं पर निर्जन वन को चले गये ५ उनके उस समय क्या कभी न क्रोध ही आता न हर्ष ही आता व सब ब्रह्मण्य सत्यवादी थे इससे प्रिय व सुख दोनों को छोड़ तथा रोती हुई हमको छोड़ वन को चले ही गये ६ व वन को जाते हुए उन लोगों ने मूल सहित हमारा हृदय भी हर लिया हे केशव ! वे महात्मा पाण्डव तो वनवास के योग्य थे ही नहीं ७ इससे सिंह व्याघ्रयुक्त वन में कैसे बसे होंगे बालपन ही में उनके पिता न रहे हमने बड़ी बड़ी कठिनताओं से निरन्तर उनका लालन पालन किया ८ फिर अब पिता माता दोनों को बिना देखते हुए वे वन में कैसे बस होंगे ९ हे केशव ! बाल्यावस्था से ले जब तक यहां रहे सब पाण्डव लोग शङ्ख, नगारे, मृदङ्ग, बांसुरी आदि बाजों के शब्द के सुनने से जागते रहे १० व हाथियों की चिग्घाड़ व घोड़ों का हिनहिनाना सुन व रथ के पहियों का शब्द सुन घर में जागते रहे ११ व शङ्ख, नगारे, बांसुरी, वीणा आदि के शब्द से व ब्राह्मणों के पुण्याहवाचन के शब्द से पूजित होते व वस्त्र रत्न भूषणों से सदा ब्राह्मणों की पूजा करते थे १२ फिर ब्राह्मण लोग मङ्गल के आशीर्वचन सुनाय उनको प्रसन्न करते ब्राह्मण जिस पूजा के योग्य थे उनसे पाते थे व वे जिस आशीर्व्वादादि के योग्य थे उनसे पाते थे १३ व सदा सम्बूर आदि बड़े कोमल बिस्तरों पर चित्र विचित्र धवरहरों में शयन करते थे उनको महावन में वन्य जीव मृग व्याघ्रादिकों का शब्द सुन कैसे निद्रा आई होगी १४ किसी प्रकार उनको निद्रा न आई होगी न आती होगी क्योंकि वे तो उसके योग्य थे ही नहीं हे जनार्दन ! वे तो सदा नगारे मृदङ्गों के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नाद से व शङ्ख बांसुरी के शब्द से १५ व स्त्रियों के मधुर गाने के शब्द से व बन्दी, मागध, सूतादिकों की स्तुति से सदा जागते थे १६ वे अब महावन में वन्यजीवों के शब्द से कैसे जागते होंगे फिर उनमें युधिष्ठिर लज्जावान्, सत्यवादी, इन्द्रियजित्, प्राणियों के ऊपर दया रखनेवाले १७ काम व अप्रीति को सदा अपने वश में किये सज्जनों के ही मार्ग्ग पर चलते अम्बरीष, मान्धाता, ययाति, नहुष, भरत, दिलीप, उशीनर देश के राजा शिबि आदि पुराने राजर्षियों का भार उठाते १८ । १९ व सदाशील वृत्त सम्पन्न, धर्म्मज्ञ, सत्यप्रतिज्ञ, सर्व्व-गुण युक्त जो कि तीनों लोकों के राजा होने के योग्य २० धर्म्मात्मा पके सुवर्ण के समान वर्ण युधिष्ठिर तो शास्त्र पढ़ने व सदाचरण रखने से सब कुरुवंशियों में श्रेष्ठ हैं फिर हे कृष्ण ! ऐसे प्रिय दर्शन व दीर्घ-बाहु युधिष्ठिर कैसे हैं उनके समाचार तो कहो २१ व जिनके दश सहस्र हाथियों का बल है व पवन के समान वेग है व महा बलवान् हैं व जो सदा असहनशील हैं व अपने भाई के बड़े प्रिय हैं क्योंकि सदा उनका प्रिय ही किया करते व जिन्होंने जाति भाई सहित कीचक को मार डाला व क्रोध के वशीभूतों के बीच में बड़े शूरवीर हैं हिडिम्ब व बकराक्षस के जिन्होंने प्राण ही ले लिये व जो पराक्रम में तो इन्द्र के समान व बल में पवन के समान क्रोध में महादेव के समान व प्रहार करनेवालों में बड़े भयङ्कर हैं व जो क्रोध बल असहन-शीलता को हृदय में रख अपने आत्मा को जीत अपने भाई की ही आज्ञा में चलते हैं व जो तेज की राशि महात्मा अति श्रेष्ठ अमित पराक्रमी देखने में भी भयङ्कर ऐसे भीमसेन को बताओ कैसे हैं जो कि परिघाकार बाहें धारण किये महाबलवान् सबसे मंझिले भीमसेन कैसे रहते वही स्वभाव बना है व कुछ बदल गया है २२ । २७ व हे कृष्ण ! जो अर्जुन दो ही बाहों से प्राचीन राजा अर्जुन जिसके सहस्र बाहें थीं उसकी स्पर्द्धा करते हैं २८ क्योंकि वह कार्त्तवीर्य्यार्ज्जुन राजा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हज़ार बाहों से पांच सौ बाण चलाता था व ये हमारे अर्जुन दो ही बाहों से एक ही बार में पांच सौ बाण चलाते हैं इससे उसी के समान हैं २६ व तेज में तो सूर्य के सदृश इन्द्रियों के दमन करने में महर्षियों के समान क्षमा करने में पृथ्वी के समान विक्रम में इन्द्र के तुल्य हैं ३० व जिन्होंने महाप्रकाशित व विख्यात आधिराज्यपद जो कि सब राजाओं का स्वामित्व है सब राजाओं से हरलाय कौरवों में स्थापित कर दिया ३१ व जिस सत्य, विक्रमी, सब महारथों में श्रेष्ठ पाण्डवों की बाहों के बल की उपासना सब पाण्डव लोग करते हैं ३२ व समर में जिसके सामने आय कोई भी जीता हुआ नहीं जा सक्ता व जो सब प्राणियों को जीत लेते हैं व उनको कोई भी नहीं जीत सक्ता ३३ व जो पाण्डवों के ऐसे रक्षक हैं जैसे देवताओं के इन्द्र वे तुम्हारे भाई व सखा अर्जुन कैसे हैं हे कृष्णचन्द्र! बताओ तो ३४ व सब प्राणियों पर दयावान्, लज्जावान्, महाशस्त्रास्त्र जाननेवाले, कोमलस्वभाव, अतिसुकुमार, परम धर्म्मात्मा व हमारे प्राणप्यारे बड़े बाण चलाने-वाले, अति शूर, संग्राम की शोभा करनेवाले, अपने बड़े भाइयों के सेवक, धर्म्मअर्थमें कुशल व जिसके भाई सदा जिसके कल्याणयुक्त आ-चरणकी बड़ाई किया करते हैं व जो अपने सब ज्येष्ठ युधिष्ठिरादि भाइयों के भाव को सदा बढ़ाते ही रहते हैं व सब योधों के पति हैं हे कृष्णचन्द्र! ऐसे माद्री के पुत्र व हमारे प्राणप्रिय सहदेव के समाचार कहो कैसे रहते हैं ३५।३८ व जो अति सुकुमार युवा अवस्था को प्राप्त, अतिदर्शनीय रूप, अपने सब भाइयों के प्रिय वरन सबों के बाहर के रहनेवाले, प्राण व चित्र विचित्र युद्ध करने वाले, बड़े बाण चलानेवाले, महा-बलवान् ऐसे नकुल भला कुशल तो हैं जो कि सदा सुख ही से बढ़ाये गये ३६।४० हे कृष्ण! सुख करने के योग्य, दुःख सहने के अयोग्य, सुकुमार स्वभाव व महारथ नकुल को फिर कभी हम देखेंगी ४१ हे वीर, कृष्णचन्द्र! जो पलक मारने के समय में भी नकुल हमारी आँखों के सामने नहीं रहते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

थे तो हम नहीं रह सक्ती थीं पर इतने वर्ष विना नकुल के देखे जीती हैं हमको देखो ४२ व हे जनार्द्दन! हमको सब पुत्रों से अति प्रियतर द्रौपदी हैं जो महाकुलीन कुल की कन्या व सब गुणसम्पन्न हैं व सब गुणों से प्रकाशित हो रही हैं ४३ व जो अपने पुत्रों को छोड़ भी पतियों के सङ्ग को अङ्गीकार करती हैं व सदा सत्य ही बोलती हैं व प्राणप्रिय पुत्रों का परित्याग कर पाण्डवों के ही सङ्ग रहती हैं ४४ व जो सदा महात्माजनों की ही सेवा में युक्त रहतीं व सदा सब अपने अभिलाषों से पूर्ण ही रहीं व यहां सबकी स्वामिनी रहीं व सकल कल्याणयुक्त ही बनी रहती थीं हे कृष्णचन्द्र! कहिये वे द्रौपदी कैसी रहती हैं ४५ हाय! महाशूरवीर, अग्नितुल्य तेजस्वी व दुराधर्ष, महायोद्धा व महा-धनुर्द्धर पांच पतियों को पाकर भी द्रौपदी ऐसे दुःख को प्राप्त हुई ४६ जिससे कि यह चौदहवां वर्ष बीतता है व हमारे पुत्रादिकों के साथ दुःखित सत्यवादिनी द्रौपदी को हमने न देखा इससे यही निश्चय होता है कि पुण्य कर्म्म करने से पुरुष सुख नहीं पाता क्योंकि द्रौपदी ने सदा पुण्य ही कर्म्म किये पर सुख न भोगे ४७। ४८ द्रौपदी से अधिक अर्ज्जुन, युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल व सहदेव हमको कोई प्रिय नहीं हैं तिस रजोदर्शन को प्राप्त सभा में श्वशुरों के सामने आई हुई द्रौपदी को देख हमको जो दुःख हुआ वैसा जन्म से ले उस दिन तक कभी नहीं हुआ था ४६। ५० हाय क्रोधी लोभी दुर्य्योधन की आज्ञा से पकड़ आई हुई एक ही केवल सारी पहिरे हुई द्रौपदी को सभा में सब कौरवों ने देखा ५१ वहीं धृतराष्ट्र, महाराज वाह्लिक, कृपाचार्य्य, सोमदत्त व सब और कौरव बैठे थे क्या करें दुश्शासना-दिकों को छोड़ सब उदासीन व दुःखित हो गये थे ५२ पर कुछ किसी ने कहा नहीं हां उस सभा में सबों से अधिक हम विदुरजी की बड़ाई करती हैं संसार में श्रेष्ठता आचरण ही से होती है न विद्या से हो न धन से ५३ हे कृष्ण! तिन महात्मा, महाबुद्धि, गम्भीरस्वभाव,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

विदुर का शील व अलङ्कार चौदहों लोकों को नीचे कर विद्यमान है ५४ वैशम्पायनजी बोले कि श्रीगोविन्द भगवान् को आये देख शोक के मारे पीड़ित भी हुईं व हर्षित भी होकर कुन्तीजी ने नाना प्रकार के सब दुःख वर्णन किये ५५ कि हे शत्रुसूदन, कृष्णचन्द्र ! आगे के खराब राजाओं ने जो जुआ खेलने व शिकार में मृगों के वध करने की रीति निकाली है क्या कुछ ये सुखदायक हैं इनसे तो सबको दुःख ही मिला होगा ५६ देखो इसी जुआ खेलने ही के कारण धृतराष्ट्र के पुत्रों की खींची द्रौपदी को हमने सब कौरवों के सामने देखा व तो भी हमारा मरण न हुआ ५७ हे जनार्दन ! क्या हमने द्रौपदी ही की यह दुर्दशा देखी है नाना प्रकार के दुःख हमने देखे व सब जानती हैं जैसे नगर से पुत्रों का निकारा जाना व उसमें भी चीर बल्कलादि धारण करके ५८ फिर उसमें भी गुप्त होकर वर्षदिन रहना व फिर अब राज्य न देने से पुत्रों की जीविका की रुकावट परन्तु पुत्रों सहित हम इसको भी दुःख व क्लेश नहीं समझतीं ५९ दुर्योधन से निरादरित हम लोगों को चौदह वर्ष बीत गये यदि सुख से पुण्य की क्षय होती है तो दुःख से पाप की भी क्षय होती होगी इससे दुःख से भी हमको सुख होगा क्योंकि जो कुछ पाप रहा होगा वह अब नष्ट हो गया होगा ६० हमें ऐसे दुःख में भी पाण्डवों में व धृतराष्ट्र के पुत्रों में विशेषता नहीं आई इसी सत्य से हे कृष्ण ! शत्रुओं को मार राजलक्ष्मीयुक्त इस संग्राम से छूटे हुए पाण्डवों के सङ्ग तुमको देखेंगी ६१ क्योंकि इधर कोई ऐसा नहीं है जो तुम लोगों के समान पराक्रमियों को जीत सके व हम तो अपने पिता ही की निन्दा करती हैं न अपनी निन्दा करें न दुर्योधन की ६२ क्योंकि जिस हमारे पिता ने हमको कुन्तिभोज राजा को ऐसे अक्लेश से दे दिया जैसे दानी लोग ब्राह्मणादिकों को धन दे देते हैं तुम्हारे पितामह व हमारे पिता शूरसेन ने बाल्यावस्था ही में गेंद हाथ में लिये खेलती

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हुई हमको अपने महात्मा सखा राजा कुन्तिभोज को दे दिया ६३ हमको इस तरह प्रथम तो हमारे पिता ही ने परित्याग किया फिर भीष्मपितामह व हमारे पति से ज्येष्ठ होने के कारण धृतराष्ट्र भी श्वशुर ही के समान हैं इससे श्वशुरों ने भी परित्याग किया इससे हम परम दुःखित हुईं हे कृष्ण! हमारे जीने का कौन फल है ६४ जब अर्ज्जुन का जन्म हुआ था तब रात्रि को आकाशवाणी ने हमसे कहा था कि तुम्हारा यह पुत्र पृथ्वी भर को जीत लेगा व इसका यश स्वर्ग को छू लेगा ६५ व महा संग्राम में यह सब कौरवों को मार राज्य पाय अपने भाइयों के सङ्ग तीन अश्वमेध यज्ञ करेगा ६६ हम उस आकाशवाणी की निन्दा नहीं करतीं व विश्व के करनेवाले धर्म्म के नमस्कार करती हैं कि उन्हीं का किया सब कुछ होता है व महात्मा कृष्ण के भी नमस्कार करती हैं जो साक्षात् ईश्वर भी हैं पर कुछ नहीं कर सक्के व धर्म्म प्रजाओं को धारण करता है इसी से उसका धर्म्म नाम है वही भला ६७ व जैसा आकाशवाणी ने कहा था व धर्म्म वैसा ही है तो हे कृष्ण! तुम ईश्वर भी सब सिद्ध करोगे इसमें कुछ सन्देह नहीं ६८ हे कृष्ण! हम को न वैसा विधवा का होना जारता है न धन का नाश न कौरवों से वैरता जैसा कि विना पुत्रों के रहना भस्म किये डारता है ६९ जो हम सर्व शस्त्रास्त्र धारियों में श्रेष्ठ अर्ज्जुन को कि जिनके गाण्डीव नाम धन्वा है नहीं देखतीं तो हमारे हृदय को कौन शान्ति है ७० व चौदह वर्ष बीता चाहते हैं व हमने युधिष्ठिर को नहीं देखा ७१ न अर्ज्जुन को न भीमसेन को न नकुल सहदेव को तो अब प्राण नाश ही समझो फिर जो मर जाते हैं मनुष्य उनकी भी तो श्राद्ध करते हैं ७२ फिर अर्त्थ से तो हमारे लेखे वे सब मर गये व उनके अर्त्थ से हम मर गईं इससे हे माधव! धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिर से कहना ७३ कि हे पुत्र! तुम्हारा बड़ा भारी धर्म्म नष्ट हुआ जाता है वृथा अब क्या कर रहे हो जिसकी माता दूसरे की आश्रय में रह कर जीती हो उस

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पुत्र व माता दोनोंको धिक्कार है ७४ दीनता के साथ जीविका मिलने से अप्रतिष्ठा ही अच्छी दीन से जीविका पाय प्रतिष्ठा हुई तो क्या व अर्ज्जुन तथा नित्य युद्ध करने ही में उद्यत भीमसेन से भी कहना कि ७५ जिसके लिये क्षत्रिय की स्त्री पुत्र उत्पन्न करती है अब यह उसका काल आ गया है कदाचित् यह काल बीत गया व तुमने अकाल में विक्रम किया तो फिर क्या ७६ क्योंकि लोक में प्रतिष्ठा पाय पण्डित हो फिर अत्यन्त बीभत्स कर्म्म करोगे जो अति क्रूरता व बीभत्सता का काम करोगे तो जन्म जन्म के लिये तुम लोगों को छोड़ देंगी ७७ क्षत्रिय को चाहिये कि जब समय आ जाय तो प्राण भी त्याग दे पर समय न जाने पावे व क्षत्रियों के धर्म्म में तत्पर माद्री के पुत्रों से भी कहना कि ७८ प्राणों के बदले में भी विक्रम ही से इकट्ठे किये भोगों का अङ्गीकार करें क्योंकि क्षत्रिय के धर्म्म से जीते हुए पुरुष के विक्रम ही से प्राप्त अर्त्थ अर्त्थ के होते हैं ७९ व वही मनुष्य के मन को तृप्त करते हैं व हे महाबाहो, कृष्ण ! जाय कर सर्व शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ अर्ज्जुन वीर पाण्डव से कहना कि द्रौपदी की पदवी को प्राप्त हों क्योंकि आप जानते हैं जब द्रौपदी के केश खींचे गये हैं तब यमराज के समान अर्ज्जुन व भीमसेन ने क्रोध किया था ८० । ८१ व यह भी तुम जानते हो कि भीम व अर्ज्जुन जो चाहते तो देवताओं को भी अन्त गति को पहुँचा देते यह उन दोनों का बड़ा भारी निरादर हुआ है जो द्रौपदी उस दुर्दशा के साथ सभा में खींच आई ८२ व उस समय दुश्शासन व कर्ण ने कितने कठोर वचन कहे थे व दुर्य्योधन ने मनस्वी भीमसेन को कौरवों में मुख्य भीष्मादिकों के सामने जो वचन कहे हैं उनका फल दुर्य्योधन अवश्य देखेंगे क्योंकि भीमसेन वैर करके फिर कभी शान्त होते ही नहीं ८३।८४ जब तक वे शत्रुओं का नाश नहीं कर डालते चाहे बहुत भी दिन बीत जायँ पर भीमसेन तब तक वैर शान्त ही नहीं करते हमको

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राज्य हरजाने का कुछ दुःख नहीं न कुछ दुःख जुआ में हारने का है व पुत्रों का वनवास हुआ वह भी हमारे दुःख का कारण नहीं है ८५ किन्तु जो एक वस्त्र धारण किये द्रौपदी ने सभा में आय ऐसे कठोर वचन सुने कि तुम्हारे पति तो अब हार गये मरे ही समझो तुम अपने लिये और पति ढूंढ़ो इससे अधिक हमको और दुःख नहीं है ८६ हाय! नाथवती भी सती द्रौपदी रजोदर्शन को प्राप्त व क्षत्रियों के धर्म्म में निरत पांच पतियों की स्त्री उसका भी कोई नाथ उस सभा में न ठहरा ८७ हे कृष्ण! पुत्र सहित जिस हमारे तुम ऐसे नाथ जिन्होंने मधु नाम दैत्य को मार डाला व सब बलवानों में श्रेष्ठ बलराम जी तथा महारथ प्रद्युम्न ८८ सो वे हम ऐसे दुःख सहें हे पुरुषोत्तम! व भीमसेन व अर्ज्जुन के भी जीते जीते यह दुःख सहें ८९ वैशम्पायन जी बोले कि इतना सुन अर्ज्जुन के सखा महाराज कृष्णचन्द्र जी पुत्रों के दुःख से दुःखित कुन्ती जी को समझाने लगे ९० श्रीभगवान् बोले कि हे फूफूजी! तुम्हारे समान इस लोक में कौन सी स्त्री है जो कि शूरसेन राजा की तो कन्या व परम पूज्य राजा अजमीढ़ के कुल में ब्याही गई ९१ इससे आप महाकुलीना हैं मानों समुद्र से निकल दूसरे समुद्र में आई हो फिर यहां सबकी स्वामिनी हुई व पति की ओर से महा प्रतिष्ठा पाई ९२ फिर प्रथम तो वीर की पत्नी हुई व फिर महावीर पुत्रों को उत्पन्न किया इससे सब गुणों से प्रकाशित हुई हे महाप्राज्ञे! सुख व दुःख सब तुम्हारे सदृश लोग सहने के योग्य हैं ९३॥

दो० निद्रा तन्द्रा क्रोध मुद, क्षुधा पिपासा घाम।
शीत इन्हें जिति तव तनय, निरत वीर सुखधाम १। ९४
त्यक्त ग्राम्य सुख पार्थ सब, नित्यवीर सुखप्रीति।
सन्तोषी नहिं स्वल्प सों, महोत्साह बल नीति २। ९५
धीर अन्त सेवन करत, मध्य ग्राम्य सुख भोगि।
उत्तम क्लेशादिक अहैं, भोज मनुज उपयोगि ३। ९६

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

धीर अन्त में रमत हैं, रमत मध्य महँ नाहिं।
अन्त प्राप्ति सुखदायिनी, उभय मध्य दुख आहिं ४। ९७
द्रुपदसुता युत पाण्डुसुत, सकल तुम्हैं परणाम।
करत सुखी कहि अपन कहँ, लै लै सब निजनाम ५। ९८
रोगरहित सब अर्त्थ सिध, शत्रुहीन श्रीयुक्त।
सबलोकन के स्वामि निज, सुत देखिहहु सुख भुक्त६। ९९
इमि जब प्रतिबोधित भईं, पृथा कृष्ण सों भाष।
पुत्र दुःख विरहित तबहिं, तुम गतयुत अभिलाष ७। १००
जो जो उनकहँ पथ्य हो, महाबाहु भगवान।
अरु जो उनकहँ हित गुनो, करहु सोई सविधान ८। १०१
धर्म्मलोप नहिं होय जिमि, अरु न होय छल कोय।
तव प्रभाव अरु सत्यकर, जानत करिये सोय ९। १०२
मित्र बुद्धि विक्रम महैं, बहुरि व्यवस्था माहिं।
ममकुल धर्म्मरु सत्यतप, तुमहिंआनकोइनाहिं १०। १०३
तुम रक्षक तुम ब्रह्म हौ, सकल विश्व तुम माहिं।
यथा कहत तिमिसकलतुम, होयसत्यशकनाहिं ११। १०४
इमि कुन्ती समभाय त्यहि, सों ह्वै बिदा अनन्त।
दुर्य्योधन के सदन कहँ, गये कहन वृत्तन्त १२। १०५

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्व्वणि नवतितमोऽध्यायः॥ ९०॥

इक्यानबे का अध्याय।

दो० इक्यानबये महँ कहब, जिमि दुर्य्योधन भौन।
हरि गे भोजन करहु उन, कहपर किह्यहु न तौन॥ १॥

वैशम्पायनजी बोले कि कुन्तीजी की आज्ञा ले व उनकी प्रदक्षिणा कर कृष्णचन्द्रजी दुर्य्योधन के गृह को गये १ व परमलक्ष्मी से युक्त विचित्र आसनों से भरे इन्द्र के गृह के समान उस मन्दिर में श्रीकृष्ण-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चन्द्रजी ने प्रवेश किया २ उस मन्दिर के तीन फाटक नांघ चौथे फाटक के भीतर पहुँचे द्वारपालों ने कहीं कुछ रोंक टोंक नहीं की देखा तो घने बादर के समान व ऊँचाई में पर्व्वत के शृङ्ग के समान विराजमान ३ व शोभा से प्रकाशित धवरहर दिखाई दिया उसपर महायशस्वी श्रीकृष्णचन्द्रजी चढ़े, वहां हजारों राजाओं व कौरवों से घेरेहुए ४ दुर्य्योधन को बड़े ऊँचे आसनपर बैठे देखा, व दुश्शासन कर्ण शकुनि को ५ दुर्य्योधन के बनाय समीप आसनपर बैठे देखा कृष्णचन्द्रजी को आते देख धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्य्योधन ६ कृष्णचन्द्रजी की पूजा करते हुए अपने मंत्री कर्णादिकों समेत आसनपर से उठ खड़े हुए कृष्णचन्द्रजी प्रथम दुर्योधन से मिले भेंटे फिर उनके मन्त्रियों से ७ तदनन्तर अवस्था व संबंध के अनुसार सब राजा लोगों से मिले भेंटे वहां एक सुवर्ण का आसन सुन्दर मणियों से जड़ा स्वच्छ लकदक ८ विविध प्रकार के चटापटी के बिछौने से संयुक्त था कृष्णभगवान् उसपर जाय विराजमान हुए उसपर विराजमान होतेही सुन्दर वचन जल शर्ब्बत ताम्बूलादि भगवान् के लिये ९ दुर्योधन ने अपने हाथ से उठकर दिया व कहा कि यह गृह व राज्य आपही का है लीजिये फिर वहां बैठे हुए कृष्णचन्द्र जी की उपासना सब कौरव लोग व अन्य राजा लोग भी करनेलगे १० तब राजा दुर्य्योधन ने श्रीकृष्णचन्द्रजी को भोजन करने के लिये निमन्त्रण किया परन्तु केशव भगवान्जीने अङ्गीकार न किया ११ तब दुर्य्योधन कर्ण की ओर निहार उस कौरव समाज में कृष्णचन्द्रजी से बोले कोमल वचन पर शठतायुक्त बोले १२ कि हे जनार्द्दन! अन्न पान व विविध प्रकार के वस्त्र व आसन जो तुम्हारे लिये यहां से दिये गये उनको आपने क्यों नहीं अङ्गीकार किया १३ आपने तो हम को व अर्ज्जुन को दोनों की सहायता देने को कहा था व दोनों के हित करने में निरत हो १४ व धृतराष्ट्र के सम्बन्धी व प्रिय भी आप सब प्रकार से हो इसके सिवाय आप धर्म अर्थ दोनों अच्छी तरह से जानते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हो १५ इसके न अङ्गीकार करने का कारण हम सुना चाहते हैं हे चक्र गदादि धारण करनेवाले, कृष्णचन्द्रजी! १६ वैशम्पायनजी बोले कि जब गोविन्द भगवान् से दुर्य्योधन ने ऐसा कहा तो प्रसन्न चित्त हो वर्षाकाल के मेघ के समान गर्ज्जते हुए कृष्णचन्द्रजी अपना दहिना हाथ उठाय बोले १७ वह वचन श्रीभगवान्जी का न तो बहुत शीघ्रता के साथ कहागया न उसके कोई अक्षर लुप्त हो गये न एक में उसके अक्षर मिलगये सब साफ़ २व सब हेतुयुक्त थे व दुर्योधनहीसे कहा भी वैसा नहीं कि जैसे दुर्योधन ने कर्ण की ओर निहार भगवान् से कहा था १८ कहा हे दुर्य्योधन! दूतलोग जब जिसके लिये आते हैं वह कार्य्य कर लेते हैं तब भोजन करते हैं इससे जब हम जिसके लिये आये हैं वह कार्य्य कर लें तो सहित समाज हमको भोजन कराना हम अङ्गीकार करेंगे १९ जब श्रीभगवान्जी ने ऐसा कहा तो दुर्य्योधन बोले कि आपको हम लोगों के विषय में अयुक्त करना योग्य नहीं है २० हे मधुसूदन! चाहे आप कार्य्य कर चुकें व न कर चुकें पर हम लोग सदा आप की पूजा करने में उद्यत हैं पर कर नहीं सके क्या करें २१ हे मधुसूदन! जो हम लोगों ने आपकी प्रसन्नता के लिये पूजा की व उस को आपने अङ्गीकार नहीं किया व कारण उसका बताया कि दूत कार्य्य करके तो पूजा अङ्गीकार करते हैं हम वह कारण नहीं समझते २२ हे गोविन्द! आपके सङ्ग हमारा कुछ वैर नहीं है न कुछ हमसे आप से विग्रह है यह बात आप अच्छी तरह विचार देख कर ऐसा कहने के योग्य नहीं हैं २३ वैशम्पायन जी बोले कि जब दुर्य्योधन ने ऐसा कहा तो श्रीकृष्णचन्द्र जी मन्त्रियों सहित दुर्य्योधन की ओर देख हँसते ही से बोले २४ कि हम न काम से न क्रोध से न वैर से न धन के लोभ से न कपट से व न और किसी लोभ से किसी प्रकार धर्म्म छोड़ेंगे किन्तु जो करें कहेंगे धर्म्म ही के अनुकूल कहेंगे २५ हे राजन्! भोजन दो प्रकार से किया कराया जाता है एक तो अच्छी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

प्रीति के साथ दूसरे जब भोजन करने वाले के ऊपर कोई विपत्ति परा हो कि उसे भोजन मिलता ही नहीं किसी तरह पेट भरने से काम है सो इसमें दोनों बातें नहीं हैं न तो आप प्रीति के साथ भोजन कराते हो न हम लोगोंके ऊपर कोई विपत्ति ही परी है कि भोजनकर लें २६ हे राजन् ! आप जन्म से ले आज तक अकस्मात् पाण्डवों से वैर करते हैं वे तुम्हारे प्रिय के अनुवर्त्ती व भाई हैं फिर सब शुभ गुणों से युक्त हैं २७ अकस्मात् पाण्डवों से अप्रीति करना योग्य नहीं है क्योंकि जब वे अपने धर्म्म में टिके हैं तो उनको कोई क्या कहने के योग्य है २८ जिसने पाण्डवों से वैर किया उसने जानों हम से वैर किया व जो उनका अनुयायी है वह हमारा भी अनुयायी है हमको व धर्म्मचारी पाण्डवों को एक ही रूप समझो २९ इससे वह काम क्रोध ही का अनुगामी है जो हमसे व पाण्डवों से विरोध करना चाहे ३० व जो पुरुष गुणवान् से वैर करता है वह अधम पुरुष कहाता है व जो कल्याण गुण युक्त अपने भाई बन्धुओं को मोह व लोभ से दोष दृष्टि से देखा चाहता है ३१ वह अजितात्मा व अजित क्रोध पुरुष बहुत काल तक राज्यलक्ष्मी भोगने में नहीं स्थिर रहता व चाहे हृदय से अप्रिय भी हों पर जो पुरुष गुणवानों को ३२ प्रिय कर अपने वश में कर लेता वह बहुत दिनों तक यश में टिकता है ३३ इससे हम यह अन्नादि कुछ न अङ्गीकार करेंगे क्योंकि सब तुम लोग दुष्टों का है यहां केवल अकेले विदुरजी का अन्न भोजन करने के योग्य है हमारी बुद्धि में तो यही बात है ३४ महाबाहु कृष्णचन्द्र जी ऐसा दुर्योधन से कह उनके उस अत्युत्तम मन्दिर से उठ कर चल दिये ३५ व प्रसन्न चित्त हो भगवान् वासुदेव जी निवास करने के लिये महात्मा विदुर जी के स्थान पर चले गये ३६ जब ये विदुर जी के स्थान पर जाय उतरे तो द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, भीष्मपितामह व राजा वाह्लिक तथा और भी सज्जन कौरव लोग उनके समीप आये ३७

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व आय माधव मधुसूदन कृष्णचन्द्र जी से बोले कि हे वृष्णिवंशोद्भव, कृष्णचन्द्र जी! हम लोग रत्नादि युक्त गृह आपको निवेदन करते हैं आप चल कर उनमें उतरिये ३८ महातेजस्वी कृष्णचन्द्र जी ने उन सबों से कहा कि आप सब लोग अपने अपने स्थान को जायँ हमारी सब पूजा व सत्कार कर चुके ३९ यह सुन जब भीष्म द्रोणादि सब चले गये तो विदुर जी ने बड़ी यत्न से अपराजित कृष्णचन्द्र जी की पूजा की ॥ ४० ॥

भुजङ्गप्रयात छन्द ॥

तबै स्वादु युक्तान्न पानादि चत्ता। पवित्रौ रहै पै सुशोध्यो सुयत्ता ॥
महात्मा मुरारी समीपै सुआने। उन्हें देख स्वामी सबै स्वच्छ माने १।४१
व लैकै सबै भूमि देवौं हँकारी। रहे जो वहां वेद विद्याधिकारी ॥
ज्यवांयोतिन्हेंलैकह्योस्वादुभारी। सबैह्वै प्रसन्नै गये विप्र झारी २।४२
तबै संगियों संग बैठे कृपाला। यथा देव संगे सुरेशो निहाला ॥
गुणीऔपुनीतोसुस्वाद्वन्नछत्ता। बड़े प्रेमसों पायखायो अनन्ता ३।४३

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि कृष्णदुर्य्योधनसंवादे एकनवतितमोऽध्यायः ॥ ९१ ॥

बानबे का अध्याय।

दो० बानबयें महँ कहब जिमि, हरिसों सब वृत्तान्त।
विदुर कह्यहु सुविनीत है, सुनि हर्षे श्रीकान्त ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि जब भोजनादि कर कृष्णचन्द्रजी स्वस्थचित्त हुए तो रात्रिमें विदुरजीने कहा कि केशवजी आपका यहां आगमन अच्छा नहीं हुआ १ क्योंकि अर्थ धर्म से विमुख, मन्दबुद्धि, सदा क्रोधी, औरों के मान का नाशक, आप औरों से मान चाहनेवाला, वृद्धों की शिक्षा का उल्लङ्घन करनेवाला, धर्मशास्त्र से विरुद्ध, महामूढ़, दुष्टात्मा, हठ में तत्पर, कल्याण की बातों से बाहर रखने के योग्य ऐसा मन्द धृतराष्ट्र का पुत्र, महाकामी, अपने ही को पण्डित मानता मित्रों से भी द्रोह

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करता व सबसे सदा सशङ्क चित्त रहता आप किसी के सङ्ग न उपकार करे न दूसरे का उपकार मानें धर्म सदा छोड़े ही रहता, झूठही सदा प्रिय मानता, महामूढ़, बुद्धि कुछ रखताही नहीं, इन्द्रिय उसकी कोई उसके वश नहीं, सदा काम ही का अनुसारी बना रहता व कार्य कराने में सबके विषय में निश्चय रहित इतने ये व और भी बहुत से दोषों से युक्त दुर्य्योधन दुष्ट है आप कल्याण की भी बात कहेंगे तो भी वह मारे क्रोध के ग्रहण न करेगा २ । ६ वह भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, अश्वत्थामा व जयद्रथ में बड़ी भारी प्रीति इसलिये रखता है कि ये युद्धकर हम को राज्य दिला देंगे व मिलाप करने को तो कभी स्वप्न में भी वह मन नहीं करता ७ व उसको यह बनाय निश्चय है कि कर्णसहित धृतराष्ट्र के पुत्रों को व भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्यादिकों को पाण्डव युद्ध में देख भी नहीं सकते फिर लड़ने को कौन कहै ८ इतनी सेना इकट्ठी करली है इससे यह मूर्ख अपने को कृतार्थ मानता है ९ दुर्य्योधन दुष्ट के विचार से तो अकेला कर्ण ही पांचों पाण्डवों को जीत सकता है इससे मिलाप करना किसी प्रकार वह न मानेगा १० जितने धृतराष्ट्र के पुत्र हैं सबका यही सम्मत होगया है कि यद्यपि श्रीकृष्णचन्द्र चाहते हैं कि पाण्डवों कौरवों का मेल होजाय व इनका भायपन बना रहै ११ परन्तु पाण्डवों को हमलोग उचित भाग क्या कुछ भी न दें जब उन लोगों ने ऐसा निश्चय कर लिया है तो उनसे आप कहेंगे तो अवश्य ही वचन निरर्थक होगा १२ हे मधुसूदन ! जहां अच्छा कहना व खराब कहाना दोनों समान हों वहां पण्डित को चाहिये कि कुछ नहीं कहै जैसे बहिरों के आगे गानेवाले गाते नहीं १३ इससे हे माधव ! इन अज्ञानी मूढ़ मर्य्यादा रहितों के सामने आप वचन कहने के योग्य नहीं हैं जैसे चाण्डालों के सामने ब्राह्मण लोग वेदवाणी नहीं उच्चारण करते १४ इससे यह बलवान् व मूढ़ दोनों है आपका वचन न मानेगा उससे जो वाक्य आप कहेंगे निस्-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

र्थक ही होगी १५ व उन सब पापियों के बीच में हे कृष्णचन्द्रजी! आपका बैठना हमको नहीं अच्छा लगता १६ व दुर्बुद्धि नीच स्वभाव व दुष्टचित्त उन बहुतों के बीच में आप अकेले का जाना व उनके विपरीत वचन कहना हमको नहीं अच्छा लगता १७ जिससे कि उस दुष्ट दुर्य्योधन ने कभी वृद्धों की सेवा नहीं की व राजलक्ष्मी के अहङ्कार से मोहित जुदा है व अवस्था का भी उसको घमण्ड है व असहनशील होना जानों उसका स्वाभाविक धर्म है इससे वह कल्याण-दायक आपके वचनों को न अङ्गीकार करेगा १८ हे माधव! जो आप यह कहेंगे कि युधिष्ठिरादिकों के बल तुमसे अधिक हैं तो उसको आपके विषय में बड़ी भारी शङ्का होगी फिर किसी प्रकार आप का वचन न करेगा १९ क्योंकि उन सबों ने अपने मनों में यह निश्चय करलिया है कि हमारी सेना के सामने सब देवताओं समेत इन्द्र भी युद्ध करने के लिये आवेंगे तो पराजित ही होकर लौटेंगे २० इससे काम क्रोध के अनुयायी उन लोगों के सामने आपकी समर्थ भी वाणी असमर्थ ही होजायगी २१ यह मन्द मूढ़ दुर्य्योधन हाथियों व रथों के बीच में बैठा हुआ निर्भय यह मानता है कि हमने सब पृथ्वी भर जीत ली २२ व यह धृतराष्ट्र का पुत्र सबसे यह कहा करता है कि पृथ्वी में हमारा महाराज्य शत्रु रहित है फिर वह केवल शान्त होना क्यों मानेगा क्योंकि यद्यपि सब आपके अधीन है उसके अधीन कुछ भी नहीं पर वह यही मानता है कि सब अर्थ हमीं को मिल गया है २३ यह सब पृथ्वी काल समीप आजाने के कारण पक रही है इससे पतित होती ही है इसीसे दुर्य्योधन के लिये पाण्डवों से युद्ध करने के लिये पृथ्वी भरके योधा सब राजाओं समेत आये हैं २४ व जितने राजा दुर्य्योधन की ओर लड़ने को आये हैं वे सब आप से बहुत दिनों से वैर रखते हैं व सबों ने अपनी जान सारांशरूप दुर्य्योधन को ग्रहण किया है व आप की ओरसे ऊबकर सब कर्ण सहित दुर्य्योधन के सङ्ग

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

आ मिले हैं २५ जितने योधा यहां आये हैं वे विद्यमान हैं सब दुर्य्योधन के साथ पाण्डवों से युद्धकर अपने प्राण देने पर उतारू हैं सो उनके बीच में आप जाना चाहते हो हे दाशार्ह वीर! हमारा यह मत नहीं है, आप उनके बीच में न जायँ २६ हे शत्रुनाशन! उन बहुत से दुष्टचित्त शत्रुओं के मध्य में आप अकेले कैसे जाया चाहते हैं २७ यद्यपि हम आप का प्रभाव पौरुष व बुद्धि सब जानते हैं कि आप देवताओं के भी सहने के योग्य नहीं वे भी आपके सामने आवें तो पराजित ही होकर जायँ तो भी हमारा मत नहीं है कि आप उस समाज में जायँ॥ २८॥

दो० जो मम प्रीति सुपाण्डवन, महँ तुममहँ वह ढेर।
प्रेम मान बहु सौहृदहु, सों यह कहत न फेर॥ १।२६॥
कमलनयन तव दर्श सों, जो मोहिं प्रीति घनेरि।
अन्तर्यामी आप सों, सो किमि भाषों टेरि॥ २।३०॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्विनवतितमोऽध्यायः॥ ९२॥

तिरानबे का अध्याय।

दो० तिरानबे महँ कहब जिमि, श्री भगवान महान।
कह्यहु विदुर सन इष्टनिज, जो कर्त्तव्य सुहान॥ १॥

विदुरजी के वचन सुन श्रीभगवान् कृष्णचन्द्र आनन्दकन्द बोले कि जैसा महाप्राज्ञ कहता है व जैसा महाविचक्षण पण्डित कहता है व जैसा तुम्हें ऐसे महात्मा को हम ऐसे सुहृद से कहना चाहिये व धर्म अर्थ युक्त जैसा तुम्हारे हृदय में विद्यमान है वैसा ही वचन तुमने हम से कहा जैसा कि माता पिता कहते हैं व जैसा तुमने हमसे कहा सत्य सत्य वैसा ही प्राप्त है व वही हमको करना भी चाहिये परन्तु हमारे आने का जो कारण है विदुरजी एकाग्रचित्त होकर सुनिये उसका तात्पर्य और ही है १। २ हे विदुर! दुर्य्योधन की दुष्टता व जो राजा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लोग यहां आये हैं उनकी वैरता हम दोनों जानते हुए इस समय कौरवों के समीप आये हैं ४ हाथी, घोड़े, रथ सहित यह पृथ्वी नाश होने पर तैयार है इससे जो मृत्यु की फांसी से छुड़ावे वह उत्तम धर्म पावे ५ व जो कोई अपनी शक्ति भर धर्म का कार्य करने के लिये यत्न करे पर उसे न कर पावे तो भी उस धर्म कर्म ही का फल पाजाता है इसमें कुछ भी संशय नहीं है ६ व जो मन से पाप करने की चिन्तना करे व कर्म से पाप करना न रुचे तो पाप का फल न पावे धर्मज्ञ लोग ऐसा कहते हैं अर्थात् मन की पुण्य का फल होता है व मन के पाप का फल नहीं होता ७ इससे कौरव सृञ्जयवंशीय संग्राम में नाश हुआ चाहते हैं हम निश्छलता से शान्त होजाने के लिये यत्न करेंगे फिर सिद्ध असिद्ध होना देखा जायगा ८ सो यह विपत्ति महाघोर कौरवों के ही ऊपर कर्ण व दुर्य्योधन की की हुई उत्पन्न हुई है क्योंकि ये सब दुर्य्योधन ही के वंश के हैं पाण्डवों के ऊपर न आवेगी ९ व दुःख में क्लेश पाते हुए मित्र के पास जाय जो कुछ सहायता नहीं करता व उसे समझाता बुझाता नहीं जिससे कि उसका दुःख छूटे पण्डित लोग उसे क्रूर कहते हैं १० व जो पुरुष झुँटधर करके भी मित्र को खराब कर्म करने से रोंकता है उसको कोई बुरा नहीं कहता भला ही कहता है कि इन्होंने अपने बलभर रोंका पर उन्होंने न माना तो ये क्या करें ११ इससे हे विदुरजी ! हम धर्म अर्थ सहित समर्थ व शुभ वचन कहेंगे अमात्यों सहित दुर्य्योधन उसे ग्रहण करने के योग्य हैं पर चाहे न ग्रहण करें १२ हम अपनी ओर से निश्छल होकर धृतराष्ट्र के सम्बन्धियों व पाण्डवों व पृथ्वी भर के क्षत्रियों के हित होने में यत्न करेंगे १३ व हित करने में यत्न करते हुए हममें जो दुर्य्योधन शङ्का करेंगे तो हमारे हृदय की प्रीति उनसे उऋण होजायगी १४ जहां कहीं आपस में भाई बिरादरीवालों का झगड़ा बखेड़ा हो व उसके बीच में सब यत्न से जो मित्र नहीं परता व अपने बूतभर दोनों को नहीं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

समझाता पण्डित लोग उसे मित्र ही नहीं कहते १५ हम यह कार्य इसलिये करते हैं जिसमें अधर्मात्मा मूर्ख जो कि हमारे वैरी हैं वे यह न कहें कि कृष्णचन्द्र रोंकने में समर्थ थे पर युद्ध करते हुए कौरवों पाण्डवों को उन्हों ने नहीं रोंका १६ इससे हम दोनों का अर्थ सिद्ध करने की इच्छा से यहां आये हैं अब इस विषय में यत्न करके हम अपना पीछा छुड़ाते हैं जिसमें हमको कोई पीछे से न कहै १७ व धर्मार्थ युक्त कुशलकारक हमारा वचन जो मूर्ख दुर्य्योधन न अङ्गीकार करेगा तो अपने भाग्य के वश में परेगा ॥ १८ ॥

शालिनीछन्द ॥

बीना छोड़े पाण्डवों का सुअर्थो। मेलो होवै कौरवों का समर्थो ॥
मोकों होवै पुण्य भारी महात्मा। छूटैं कौरौ मृत्युसों पाप सद्मा १ ।१६
काव्यावाणी जो भणी हौं अहिंसा। धर्माराम अर्थ युक्त प्रशंसा ॥
जो देखैंगे धार्त्तराष्ट्रा समस्ता। तो पूजैंगे मोहिं ह्वै दस्तबस्ता २ ।२०
सारे राजा कौरवा सर्व जेते। मेरे आगे होहिंगे नाहिं तेते ॥
जैसे मृगा सामने केशरी के। जाते नाहीं वैसही वे घरी के ३ । २१
ऐसी वाणी भाषि कै श्री मुरारी। सोने लागे नींद पागे सुखारी ॥
शय्या शुभ्रा वैदुरीया सवाँरी। मोती हीरा पन्नलागी किनारी ४। २२

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्रिनवतितमोऽध्यायः ॥ ९३ ॥

चौरानवे का अध्याय।

दो० चौरानबयें महँ कहब, जिमि हरि कृपानिधान।
कौरव राज समाज महँ, भ्राजमान सविधान ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी जनमेजयजी से बोले कि उन दोनों बुद्धिमानों के बतलाते बतलाते कल्याणदायिनी नक्षत्रापायिनी हो वह रात्रि बीत गई १ उस रात्रि में धर्म्म, अर्त्थ, काम युक्त विचित्र अर्त्थ पद अक्षर सहित श्रीकृष्णचन्द्रजी की सुन्दरी वाणी सुनते सुनते महात्मा विदुरजी को तो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नींदही न आई २ व वैसेही यद्यपि कृष्णचन्द्रजी अकामथे तथापि अनुरूप कथा कहते सुनते उनको भी निद्रा न आई व रात्रि बीत गई ३ यद्यपि कृष्णचन्द्रजी जागते ही थे परन्तु नाना प्रकार के स्वरों से युक्त शङ्ख नगारे आदि के शब्दों से सूत मागध व बन्दीगण आय श्रीभगवान् करुणानिधान को जगाने लगे ४ तब सब सात्वतवंशियों में श्रेष्ठ व भक्तों के हितकारी श्रीविहारीजी उठकर प्रातःकाल के सब आवश्यक कार्य्य करने लगे ५ प्रथम शौचादि कर आचमन स्थान विधान कर परम मन्त्रादि जपकर अग्नि में आहुति दे अच्छी तरह भूषित हुए इतने में अरुणोदय हुआ फिर सूर्य्योदय कि दयानिधान श्रीभगवान् भगवान् सूर्य्य महान् का उपस्थान करने लगे ६ इस प्रकार करुणा-पार शुभ व्यापार श्रीहरि सन्ध्यावन्दन करते ही थे कि दुर्य्योधन व राजा सुबल के पुत्र शकुनी दोनों ने आय कहा ७ कि महाराज राजा धृतराष्ट्र व भीष्मपितामहादि सब कौरव व सब राजा लोग सभा में आ गये हैं ८ आपके आने की प्रार्थना करते हैं जैसे सब देवगण इन्द्र के आगमन की प्रार्थना करते हैं यह सुन करुणा वरुणालय श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द ने बड़ी मधुर वाणी से समझाय उनसे कहा हम सन्ध्या समाप्त कर आप्त सभा में आते हैं ९ इतना कह उनको तो बिदा किया व इतने में सूर्य्य भगवान् बनाय प्रकाशवान् हो आये कि ब्राह्मणों को बुलाय परम शोभावान् श्रीभगवान्जी ने धेनु, वस्त्र, सुवर्ण, भूषण व अदूषण भूषण सहित घोड़े व जोड़े उनको दिये व प्रणाम किये १० इस प्रकार नाना प्रकार के रत्नादि दे श्रीयदुनाथ अनाथनाथ खड़े हुए थे कि सारथी ने आय शिर नवाय वन्दना की ११ व आज्ञा पाते ही किङ्किणी जाल मण्डित दोषाखण्डित रथ में शैब्य सुग्रीवादि घोड़े जोत दारुक आय आगे खड़ा हुआ १२ उस श्रावण के मेघ के शब्द के समान शब्द से शब्दित व सब रत्नों से विभूषित दिव्य रथ को आया जान करुणानिधान महान् श्रीभग-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वान् १३ अग्नि की प्रदक्षिणा कर व ब्राह्मणों के परिक्रमण कर कौस्तुभ मणि धारण कर परम शोभा से शोभित हो १४ कुरुवंशियों से वन्दित व वृष्णिवंशियों से रक्षित सब यादवों के नन्दन यदुनन्दनजी रथ पर सवार हुए १५ व जब सब प्राणियों में श्रेष्ठ व सब बुद्धिमानों में प्रधान भगवान् रथ पर चढ़ चुके तो सब धर्म्म जाननेवाले विदुरजी भी उसी पर सवार हुए १६ व यद्यपि कृष्णचन्द्रजी दुर्य्योधन व शकुनि को बिदा कर चुके थे पर वे दोनों खड़े ही रहे इससे जब श्रीभगवान्जी विदुर सहित रथ पर चढ़े तो दूसरे रथ पर सवार हो वे दोनों भी कृष्णचन्द्रजी के पीछे पीछे चले १७ व उसके पीछे और और रथों पर सवार हो हो सात्यकी कृतवर्मादि वृष्णिवंशीय कृष्णचन्द्रजी के पीछे चले व बहुत से हाथियों घोड़ों आदि पर चढ़ कर भी चले १८ उस समय सुवर्ण के भूषणों से भूषित दोषादूषित घोड़ों सहित चले जाते हुए शब्दायमान चित्र विचित्र रथ शोभित होते थे १९ जिस राजमार्ग्ग होकर जाना था उस में प्रथम ही से झाड़ बहार साफ कर सुगन्धित जल से छिरकाव हो रहा था उस राजर्षियों के चलने के योग्य मार्ग्ग होकर कृष्णचन्द्र करुणाकर चले २० जब श्रीभगवान् चले सो नरसिंहा तुरुही आदि बाजे पीछे से बाजे व शङ्ख भी बाजे जिन्हें सुन और बाजे लाजे व सुननेवाले गाजे २१ व कृष्णचन्द्रजी के रथ के समीप समीप चारों ओर सब लोक के जो युवावस्था को प्राप्त बड़े बड़े वीर थे व जिनका सिंहों के समान विक्रम था वे लोग चले २२ उनके पीछे आगे बराबर पर और नाना प्रकार के चित्र विचित्र वस्त्राभूषण धारण किये सहस्रों वीर नाना प्रकार के आयुध लिये कृष्णचन्द्रजी के बहुधा आगे चले २३ उस सवारी में उस समय श्रीकृष्णचन्द्रजी के पीछे पीछे पांचसौ तो हाथी थे व रथ तो सहस्रों थे ये सब अपराजित कृष्णचन्द्रजी के पीछे ही पीछे चलते कोई आगे नहीं २४ उस समय कौरवों के नगर निवासी सब सुख-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राशी बालक युवा वृद्ध नर नारी हरि के दर्शन के लिये अपने अपने घरों से आय आय धाय धाय राजमार्ग्ग में प्रथम ही से खड़े हो रहे थे२५व सब राजमार्ग्ग के किनारे किनारे के मन्दिरों में नीचे ऊंचे बीचे स्त्रियां ऐसी भरी हुई थीं कि उनके भार से जानों सब मन्दिर चलते से दिखाई देते थे२६श्रीकृष्णचन्द्रजी भी इसलिये कि ये सब हमारे दर्शन के लिये आये हैं इससे कौरवों से सम्पूजित होते व उनकी मधुर कथायें सुनते बहुत धीरे धीरे इधर उधर देखते दिखाते चले जाते थे २७ इस प्रकार जाते जाते कृष्णचन्द्रजी के अनुचर लोग प्रथम राज सभा में पहुँचे व पहुँचतेही शङ्ख बांसुरी आदि बाजे बजा दिये कि उन के शब्दों से सब दिशायें शब्दितहो गईं २८ तिसके पीछे अमिततेजस्वी राजाओं की वह सभा कृष्णचन्द्र जी के आगमन की इच्छा से मारे हर्ष के काँपनेसी लगी २९ जब कृष्णचन्द्र जी भी सभा के बनाय समीप पहुँचे तो मेघों के गर्जने के समान रथ का गर्जना सुन सब राजा लोग बहुत हर्षित हुए ३० फिर सभा के द्वार पर पहुँच सब भक्तों के स्वामी श्रीकृष्णचन्द्र जी कैलास पर्व्वत के कंगूरे के समान उज्ज्वल व ऊँचे रथ पर से उतर ३१ नये बादर के समान प्रकाशित व तेज से मानों चमकती इन्द्र के भवन के आकार की महासभा में प्रविष्ट हुए३२ सभा के प्रवेश के समय में भगवान् कृष्णचन्द्रजी एक हाथ से तो विदुरजी का हाथ पकड़े थे व दूसरे से सात्यकिजी का व अपनी शोभा से कौरवों को ऐसा आच्छादित कराते थे जैसे सूर्य्यनारायण अपने तेज से नक्षत्रों को आच्छादित कराते हैं ३३ व वासुदेव भगवान् के आगे आगे तो उस समय कर्ण व दुर्य्योधन थे, व वृष्णिवंशी व कृतवर्मा ये सब भगवान् के समीप ही पीछे पीछे चले जाते थे ३४ तब धृतराष्ट्र जी को आगे कर भीष्म द्रोणादि सब कृष्णचन्द्र जी की पूजा करते हुए अपने अपने आसनों से उठ उठ आगे को बढ़े ३५ धृतराष्ट्रजी के जानों बुद्धि ही के नेत्र थे ही ये प्रत्यक्ष चक्षु तो थे ही नहीं इससे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

श्रीभगवान्जी को आते द्रोणाचार्य्य व भीष्मपितामह के साथ ही वे भी अपने आसन से उठे व आगे को बढ़े ३६ जब महाराजाधिराज धृतराष्ट्रजी उठे तो सब राजा लोग जो कि सहस्रों वहां वर्त्तमान थे अपने अपने आसनों से उठ खड़े हुये ३७ उस सभा में धृतराष्ट्र जी की आज्ञा से सुवर्ण से बना हुआ एक गोल आसन कृष्णचन्द्र जी के लिये धरा था ३८ उसके समीप जाय कुछ हँसते हुए कृष्णभगवान् राजा धृतराष्ट्र व भीष्मपितामह व द्रोणाचार्य्य से बोले व और राजाओं से भी उनकी अवस्था के उचित जो रहा वैसा कह उनसे बोले ३९ व आसन पर विराजमान हुए तब सभा में बैठे हुए कृष्णचन्द्रजी को सब राजा व सब कौरवों ने वचन सत्कारादि से अच्छी तरह पूजित किया ४० उस सभा में आसन पर बैठे हुए कृष्णचन्द्र जी ने अन्तरिक्ष की ओर देखा तो सभा से थोड़ी ही दूर ऊंचे सब ऋषि लोग खड़े थे तब उन नारदादि ऋषियों को अच्छी तरह देख व पहिचान ४१ श्रीभगवान् धीरे से शन्तनु जी के पुत्र भीष्मपितामहजी से बोले कि राजसमाज देखने के लिये देवर्षि लोग आय विराजमान हुए हैं ४२ इससे इन लोगों को आसनों से व अन्य बड़े भारी सत्कारसे बहुतही शीघ्र निमन्त्रण कीजिये क्योंकि विना इन लोगों के बैठे व सत्कार पाये कोई भी बैठ नहीं सक्ता ४३ इससे झटपट इन महा प्रतिष्ठित व पूजित ऋषियों की पूजा कीजिये व कराइये भीष्म जी ने भी देखा तो ऋषि लोग बनाय सभा के द्वार पर आ गये थे उनको देख ४४ भृत्यों को आज्ञा दी कि बहुत शीघ्र आसन लावो आज्ञा पाते ही भृत्यवर्ग दौड़े व सुवर्णमय मणि जटित भांति भांति के सैकरों आसन लाये व उन पर सब मुनियों को बैठाय अर्घपाद्याचमनीय मधुपर्कादि दिया ४५। ४६ तब तक कृष्णचन्द्रजी व सब राजा लोग अपने अपने आसनों से उठे खड़े रहे जब उनका सत्कार होगया तो कृष्णचन्द्रजी अपने आसन पर बैठ गये व राजा लोग

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अपने अपने आसनों पर व दुश्शासन ने अपने हाथ से उठाय सात्यकी जी को आसन दिया ४७ व विविंशति ने सोने की चौकी उठाय कृतवर्मा को दी कर्ण व दुर्य्योधन दोनों कृष्णचन्द्र जी के बनाय समीप ही ४८ एक ही आसन पर असहन शील महात्मा बैठे व गान्धार देश का राजा शकुनी अपने देश निवासियों से रक्षित ४९ अपने पुत्रों सहित आसन पर बैठा व महामतिमान् विदुरजी शुक्ल-मणियों से बने हुए व मृगचर्म बिछे हुए एक आसन पर कृष्णचन्द्र जी के आसन में बनाय भिड़ाय कर उस पर बैठे ५० व राजा लोग बहुत दिनों के पीछे कृष्णचन्द्रजी को देख तृप्त न हुए बार बार देखते ही रह गये जैसे अमृत पान करने से देवगण तृप्त नहीं होते ॥ ५१ ॥

दो॰ अतसी पुष्प समान द्युति, पीत वसन भगवान ।
सभा मध्य सोहत यथा, कञ्चन महँ मणि भान ॥१।५२॥
तब तहँ हरि महँ लाय मन, मौन भये सब लोग ।
तहां न कोई कुछ कहूं, नर करु वचन सँयोग ॥ २।५३॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुर्णवतितमोऽध्यायः ॥ ९४ ॥

पञ्चानबे का अध्याय ।

दो॰ पंचानबयें महँ कहब, जिमि बहुविधि कहि नीति ।
हरिसमुझायहुकुरुपतिहि, करि अनेक विधि प्रीति ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि जब वे सब राजा लोग चुप हो अपने अपने आसनों पर बैठे तब नगारे के बाजे के समान गर्जते हुए शब्द से श्रीकृष्णचन्द्रजी बोलने पर हुए १ जैसे वर्षाकाल के प्रारम्भ में मेघ गर्जता है वैसेही गर्जते हुए भगवान् सारी सभा को सुनाते हुए व धृतराष्ट्रजी की ओर देख उनको अपने सम्मुख कर बोले २ कि जिसमें इधर उधर के कोई वीर मारे न जायँ व कौरवों पाण्डवों का मेल मिलाप होजाय इस बात के सिद्ध करने के लिये हम यहां आये हैं ३ हे राजन्!

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तुम्हारे कल्याण की बात को छोड़ हमको और कुछ कथनीय नहीं है जो कुछ हमको जनाना है वह सब आपको भी अच्छी तरह विदित है ४ हे राजन्! शास्त्र पढ़ने व सदाचरण करने आदि शुभ गुणों से प्रकाशित होने से यह आप का कुल सब राजाओं में श्रेष्ठ गिना जाता है ५ व कृपा अनुकम्पा, करुणा, अक्रूरता, सरलता, क्षमा व सत्य ये बातें कौरवों में विद्यमान हैं इसीसे और राजाओं की अपेक्षा इनमें विशेषता है ६ हे राजन्! इस प्रकार के महाकुल में जो ऊपर के कहे गुणों से विपरीत हुआ फिर मुख्यकर आप के कारण विपरीतता हुई तो यह उचित नहीं है ७ हे तात! बाहर व भीतर सब कहीं से मिथ्या आचरण करते हुए कौरवों के शिक्षक आपही हो क्योंकि आप सबों में श्रेष्ठ व राजा हैं ८ परन्तु औरों को कौन कहे दुर्य्योधनादि तुम्हारे पुत्र धर्म अर्थ को पीछेकर क्रूरों के समान कार्य करते हैं ९ क्योंकि ये लोग ऐसे अशिष्ट व मर्य्यादा रहित व लोभग्रस्त होगये हैं कि अपने मुख्य भाई पाण्डवों में अशिष्टतादि के काम करते हैं व यह आप भी जानते हैं १० परन्तु यह बड़ी भारी महाघोर विपत्ति कौरवों में उठ खड़ी हुई है जो इसकी उपेक्षा की गई मिटाने की युक्ति न की गई तो कौरवों को तो क्या पृथ्वी भर का नाशकर डालेगी ११ कदाचित् तुम कुल के नाश होने की इच्छा न करो तो इस विपत्ति को मिटासक्ते हो हमारे मत से इसका शान्त होजाना कुछ कठिन नहीं है १२ सो इसका शान्त होना तुम्हारे व हमारे अधीन है इससे तुम अपने पुत्रों को शान्त होने पर उतारूकरो व हम पाण्डवों को करें बस शान्त होजाय १३ आप की आज्ञा अन्वय सहित आपके पुत्रों को माननी चाहिये यद्यपि ये बड़े बलवान् हैं पर आपकी आज्ञा मानने ही में इनका हित है १४ व तुम्हारी आज्ञा में चलने से तुम्हारा व तुम्हारे पुत्रों का व पाण्डवों का सबका हित है इससे अवश्य ये लोग तुम्हारी ही आज्ञा में चलें १५ हे प्रजानाथ! वैर को निष्फल जान आप शमही करें जो आप शान्त

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होने की इच्छा करेंगे तो सब कौरव पाण्डव आपही के सहायक हो जायँगे १६ व पाण्डवों से अभिरक्षित हो धर्म अर्थ दोनों में टिकिये कदाचित् आप पाण्डवों का तिरस्कार करेंगे तो किसी यत्न से वे तिरस्कार को नहीं प्राप्त होसकते १७ व जब तुम्हारे अधीन हो पाण्डव तुम्हारी रक्षा करेंगे तो सब देवताओं समेत इन्द्र भी तुम्हारे तेज बल को न सह सकेंगे फिर और राजाओं की कौन गिनती है १८ क्योंकि जहां भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, कर्ण, विविंशति, अश्वत्थामा, विकर्ण, सोमदत्त, वाह्लिक, सैन्धव, कलिङ्ग, काम्बोज, सुदक्षिण, युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, महातेजस्वी सात्यकी व महारथ युयुत्सु ये सब होंगे ऐसा कौन अपने प्राणों से ऊबा है जो युद्ध करने को उद्यत होगा १९।२१ जब आप कौरव व पाण्डव दोनों समेत विराजमान होंगे तो एक तो लोक भर के स्वामी हो जायँगे व लोक भर में कोई आपसे ढिठाई भी न कर सकेगा २२ किन्तु पाण्डवों के तुम्हारे साथ होने से जो तुम्हारे ही समान राजालोग हैं व जो तुमसे अधिक भी हैं सब आय आय तुम से मिलाप करेंगे २३ व तुम पुत्र, पौत्र, पितृव्य, भाई व सुहृदों से सब ओर से रक्षित हो सुखपूर्वक जीते रहोगे २४ इन लोगों को आगे कर जैसे कि अगाड़ी किया था फिर सम्पूर्ण पृथ्वी का राज्य भोगोगे २५ जब अपने सब कौरवों व पाण्डवों सहित आप होंगे तो तुम अन्य शत्रुओं को जीत सकोगे यही मेल करने में तुम्हारा बड़ा स्वार्थ है २६ हे राजन्! जो पुत्रों व अमात्यों के मारे एकत्र होने पावोगे तो इन्हीं पाण्डवों की ही इकट्ठी की हुई पृथ्वी का राज्य बहुत दिनों तक भोगोगे २७ हे महाराज! और संग्राम करने में बड़ी भारी क्षय दिखाई देती है फिर क्षय दोनों ओर होगी इससे क्षय होने में आप कौन धर्म देखते हैं २८ समर में पाण्डवों के मार जाने पर व महाबली अपने पुत्रों के ही मारजाने पर आप को जो मिले उसे बताइये क्या लाभ

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होगा २९ पाण्डव लोग व तुम्हारे कौरव लोग बड़े भारी शूरवीर हैं व अस्त्र शस्त्र चलाने में बड़े निपुण हैं व सब युद्ध करने पर बनाय तैयार हैं, इससे आप इन सबों को इस बड़ी भारी भय से बचाइये ३० समर होने पर न आप फिर सब पाण्डवों को देखेंगे न सब कौरवों को ही देखेंगे किन्तु दोनों ओर के शूरों को व महारथों को शूरों व महारथों से मारे ही हुए देखोगे ३१ फिर जब कौरवों पाण्डवों की यह दशा हो जायगी तो सब राजा लोग इकट्ठे होकर व अलग अलग भी इस दीन प्रजा का नाश कर देंगे ३२ इससे हे राजन्! इस मर्त्य-लोक की रक्षा कीजिये जिसमें ये प्रजा नष्ट न हों जो आप अपनी प्रकृति पर आ जावें तो सब बच जायँ कोई भी न मारा जाय ३३ आपके कौरव पाण्डव शुक्ल से भी शुक्ल हैं व महादानी हैं सब लज्जा-वान् श्रेष्ठ व पुण्यात्मा हैं व परस्पर एक दूसरे के मन्त्री होने लायक हैं इससे इन दोनों को बड़ी भारी भय से रक्षा कीजिये ३४ जिससे ये राजा लोग जो अपने अपने प्राण देने पर उद्यत हैं कल्याण सहित आपस में मिलजुलकर व भोजन भाव कर अपने घर को कुशलपूर्वक चले जायँ ३५ यहां से सुन्दर सुन्दर वस्त्र पावें माला पहिराई जायँ और सब प्रकार के सत्कार हों फिर अपना अमर्ष दूर कर व वैर छोड़ छोड़ चले जायँ ३६ जैसा कि पाण्डवों का अभिप्राय है कि किसी का नाश न हो तो अच्छा है वैसा ही आपका भी अभिप्राय हो जिससे आप भी शान्त हो जायँ ३७ देखिये पाण्डवों के पिता पाण्डुजी उन लोगों की बाल्यावस्था ही में मृतक हो गये फिर आपने पालन पोषण कर उन्हें बढ़ाया इससे न्यायपूर्वक उनको पालिये व अपने पुत्रों को भी पालिये ३८ ये दोनों आप ही के रक्षा करने के योग्य हैं इससे हे राजन्! आपका धर्म्म व अर्थ नाश न हो ३९ आपके प्रणाम कर व आपको प्रसन्न कर पाण्डवों ने कहा है कि आपकी आज्ञा से अब हम लोग बहुत दुःख पा चुके ४० देखिये १२ वर्ष

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तक तो वनवास हम लोगों ने किया व तेरहवां वर्ष जानों अज्ञातवास किया उसमें और भी अधिक दुःख पाया ४१ व यह हम लोगों ने निश्चय कर लिया था कि अच्छा इतने दिन भुगत डारो फिर हमारे पितृव्य जो पिता ही हैं वे तो विद्यमान ही हैं हमारा भाग हमको देहींगे इससे हम लोगों ने वह समय अच्छी तरह बिताया कुछ कुतर्क नहीं किया इस बात को सब ब्राह्मण लोग जानते हैं ४२ सो हम अपने करार पर टिके रहे आप भी अपने करार पर टिकिये अब हम लोगों को महाक्लेश है इससे अपने राज्य का हिस्सा पावें ४३ आप धर्म्म अर्थ दोनों जानते हुए अच्छी तरह हम लोगों की रक्षा करने के योग्य हैं आपके गौरव से हम लोगों ने बहुत दुःख सहे ४४ इससे अब आप हम लोगों के विषय में माता पिता के समान बर्त्ताव करें व शिष्य जैसी वृत्ति गुरु के विषय में करता है हम लोग वैसी आप के विषय में बर्तेंगे इससे आप भी गुरु की वृत्ति का बर्त्ताव करें हम लोग कुमार्ग में चलते हों तो आप पिता हैं इससे हम लोगों को सुमार्ग पर स्थापित करें ४५ । ४६ हम लोगों को मार्ग से बाहर न होने दीजिये व आप अपने सुन्दर धर्म्म मार्ग्ग में टिकिये जिससे तुम्हारे पुत्र व हम पाण्डव लोग इस आपकी सभा को धर्म्मज्ञ सभा कहें ४७ जिस सभा में धर्म्मज्ञ सभासद रहें उसमें ऐसा अन्याय होना उचित नहीं है ४८ क्योंकि जिस सभा में धर्म्म अधर्म्म के साथ किया जाय व सत्य झुँठाई के साथ वह सभा देखनेवालों का नाश करती है तो उसके सभासद तो जानों नष्ट ही हुए ४९ व जिस सभा में अधर्म्म से बेधा हुआ धर्म्म होता है सभासद लोग बाण से छेदे जाते हैं व बाणों को काट नहीं सक्के ५० धर्म्म उन लोगों को ऐसे भङ्ग करता है जैसे नदी अपने तीर के वृक्षों को भङ्ग करती है ५१ हे राजन् ! जो पाण्डव लोग धर्म्म पर टिके अपने आसन पर चुप्पे बैठे हैं उन्होंने जो जो कहा है सब न्याय व सत्य व धर्म्म ही की बात कही है ५२ हे राजन् !

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

आपही कहें उनका राज्य उनको दे देने के सिवाय और आपही क्या कह सक्ते हैं नहीं जो कुछ और कह सक्तेहो तो तुम्हारी सभा में ये जो राजा लोग बैठे हैं यही लोग कहें ५३ जो हम धर्म्म अर्थ दोनों को धारण कर यह सत्य ही कहते हों तो इन सब क्षत्रियों को आप मृत्यु की फांसी से छुड़ावें ५४ हे भरतश्रेष्ठ! अब शान्त ही हूजिये क्रोध के वशीभूत न हूजिये उनके पिता का राज्य पाण्डवों को दे दीजिये ५५ व उसके पीछे अपने पुत्रों के साथ अर्थ सिद्धकर नाना प्रकार के भोग भोगिये यह तो आप जानते ही हो कि युधिष्ठिरजी सदा धर्म्म ही पर टिके रहते हैं ५६ व पुत्र सहित तुममें जो उनकी वृत्ति है उसे भी आप जानते हैं देखो लाक्षाभवन में तुम्हारे पुत्रों ने उनको भस्म कराया जुआं खेलाय देश से निकाला राज्य से दूर कर दिया फिर भी वे आपकी शरण में हैं ५७ पुत्र सहित तुमने हस्तिनापुर से निकाल युधिष्ठिर को इन्द्रप्रस्थ में बसाया व उन्होंने वहीं बसे २ सब राजाओं को अपनी वश में कर लिया ५८ व उन सबों को लेकर आपके सम्मुख हाजिर कर दिया आपकी आज्ञा के प्रतिकूल कभी कुछ नहीं किया इसी प्रकार तुम्हारी सेवकाई में वे बेचारे लगे रहे पर उस पर भी तुमको संतोष न हुआ उनका राज्य धन लेने की इच्छा से ५९ शकुनि की द्वारा महा कपट का जुआं खेलवाया, उसमें झूठमूंठ जीत लिया उस अवस्था में उन्होंने द्रौपदी की वह दुर्दशा सभा में देखी ६० पर क्षत्रियों के धर्म्म पर टिककर महात्मा युधिष्ठिरजी ने कुछ नहीं कहा वह जो हुआ सो हुआ अब हम तुम्हारा व उनका दोनों का कल्याण चाहते हैं ६१ अब धर्म्म अर्थ व सुख चाहो तो शान्त होजावो प्रजाओं का नाश वृथा न करो अब अपने अर्थ को अनर्थ मान व अनर्थ को अर्थ मान ६२ व लोभ में फैले हुए अपने पुत्रों को रोको बस अपनेही भरे पर आरूढ़ रहें ॥६३॥

दो० पाण्डव सेवा करन को, और करन को युद्ध।
हैं उद्यत जो चहहु सो, करहु शान्त वा क्रुद्ध ॥ १।६४॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इमि हरिके वर वचन सब, नृप मन माहिं सराह ।
पर न बोल सक कोइ वहँ, सकल रहे भरि आह ॥ २ । ६५ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चनवतितमोऽध्यायः ॥ ९५ ॥

छानबे का अध्याय ।

दो० छानबयें महँ कहब जिमि, परशुराम इतिहास ।
दम्भोद्भव नृपकर कहत, चह धृतराष्ट्र सुपास ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि, महात्मा केशव भगवान् ने जब ऐसा वचन कहा तो सब सभासद लोग हर्षित हुए व सबके रोम खड़े हुए १ इन लोगों में कोई भी पुरुष उत्तर नहीं दे सका यह सब राजा लोग अपने २ मन में चिन्तना करने लगे २ जब सब राजा लोग यह विचार चुप्प हो रहे तो कौरवों की सभा में परशुरामजी यह वचन बोले कि ३ हे धृतराष्ट्र ! अशङ्कित हो उपमा सहित हमारी यह वाणी सुनो व उसे सुन जो अच्छी मानो तो कल्याण की बात को ग्रहण करो ४ पूर्व समय में एक दम्भोद्भव नाम चक्रवर्त्ती राजा हुआ उसने सम्पूर्ण पृथ्वी का राज्य भोगा यह हमने सुना है ५ वह जब रात्रि बीत जाय व प्रातःकाल हो तो नित्य ब्राह्मण क्षत्रिय व वैश्यों से पूछा करे कि ६ भला हमसे विशेष व हमारे समान और कोई भी है जो हमारे सामने युद्ध में खड़ा हो चाहे शूद्र हो व वैश्य व क्षत्रिय व अस्त्र धारण किये ब्राह्मण ही हो ७ यही कहता हुआ वह मारे अहङ्कार के मत्त पृथ्वी पर नित्य घूमा करे और किसी कार्य्य की चिन्तना न करे ८ बार २ बड़ाई करते हुए उस राजा को सब कहीं से अभय बड़े उत्साही विद्वान् ब्राह्मण लोग रोकें कि हे राजन् ! तुम ऐसा न पूछते फिरो ९ यद्यपि बार २ ब्राह्मणों ने उसे रोंका पर वह नित्य ब्राह्मणों से इसी प्रकार पूछताही रहता जब ब्राह्मणों ने जाना कि इसको बड़ा मान है व श्री के मारे मतवाला हो गया है तो ब्राह्मण लोग बोले

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कि १० जोकि बड़े तपस्वी, महात्मा, वेद के विश्वस्त परमेश्वर के जाननेवाले थे उनको जब बड़ा क्रोध आया तो राजा से कहने लगे कि ११ हे राजन्! जो दो पुरुष ऐसे हैं जिन्होंने संग्राम में अनेक पुरुषों को जीत लिया है उनके समान तुम कभी नहीं हो सक्के १२ जब राजा से ब्राह्मणों ने ऐसा कहा तो राजा फिर ब्राह्मणों से बोला कि वे दोनों वीर कहां हैं व उनका जन्म कहां हुआ है व उनके कर्म्म क्या हैं व वे कौन हैं १३ यह सुन ब्राह्मण बोले कि वे दोनों नर नारायण नाम तपस्वी हैं यह हम लोगों ने सुना है व मनुष्यलोक में आ गये हैं बस तुम उन्हीं दोनों जनों से युद्ध करो १४ यह सुना जाता है कि वे दोनों महात्मा नर व नारायण अति घोर तप जिसके समान कोई दूसरा करी नहीं सक्का गन्धमादन पर्व्वत पर तप करते हैं १५ इस बात को सुन व न सहकर वह राजा बड़ी भारी षडङ्गिनी सेना इकट्ठी कर वहां गया जहां कि वे दोनों अपराजित महात्मा तपस्या करते थे १६ व विषय घोर गन्धमादन पर्व्वत पर जाय वह ढूँढ़ने लगा जाते २ वहां पहुँचा जहां वे दोनों महात्मा वन में तयस्या कर रहे थे १७ उन दोनों महात्माओं को क्षुधा पिपासा से दुर्ब्बल नसें निकली हुई देख जो कि शीत, वात, घाम से बनाय दुर्ब्बल हो गये थे १८ व उनके बनाय समीप जाय राजा ने कुशल पूछी तब उन दोनों जनों ने मूल फलादि भोजन करने के लिये व जल पीने के लिये बैठने के लिये आसन दिया १९ व फिर राजा से कहा हे राजन्! तुम्हारा कौन कार्य्य हम करें कहो, राजा मूर्ख ने वही प्रश्न उनसे भी किया २० कि मैंने अपने बाहों से पृथ्वी जीत ली व सब शत्रुओं को मारडाला अब आप दोनों जनों से युद्ध करने की इच्छा से इस पर्व्वत पर आया हूं २१ बस यही हमारा आतिथ्य दीजिये क्योंकि इस बात की इच्छा हम बहुत दिनों से किये हैं २२ यह सुन नर नारायणजी बोले कि हे राजसत्तम! यह आश्रम क्रोध लोभ रहित है इससे इस आश्रम पर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

युद्ध नहीं हो सक्ता क्योंकि कहां शस्त्र कहां यह सरल आश्रम इससे तुम और कहीं जाय युद्ध की इच्छा करो पृथ्वी पर बहुत से क्षत्रिय लोग हैं २३ परशुरामजी बोले कि नर नारायणजी ने ऐसा कहा भी तो भी उसने फिर युद्ध ही करने को कहा कौन कहे बार बार उन्होंने समझाया बुझाया व कहा कि यहां सर्व्वथा युद्ध अनुचित ही है पर उसने न माना बार बार हठ से युद्ध ही युद्ध करता गया २४ व कहा कि बस आय हमसे युद्ध करो तब उनमें से नरजी ने मूठा भर सिरकियां ले २५ बोले कि हे युद्ध करने की इच्छा किये, क्षत्रिय! यहां आव युद्ध कर अपने सब शस्त्रास्त्र ले व सेना इकट्ठी कर २६ हम आज से तेरी युद्ध की श्रद्धा दूर कर देंगे जिसमें फिर न किसी से तू युद्ध करने को कहै २७ यह सुन दम्भोद्भव राजा बोला कि हे तापस! जो यही अस्त्र हम लोगों से युद्ध करने के योग्य मानते हो तो अच्छा इसी से हम तुमसे युद्ध करेंगे हम तो युद्ध ही की इच्छा से तुम्हारे पास आये ही हैं २८ परशुरामजी बोले कि इतना कह दम्भोद्भव ने चारों ओर से तपस्वी के ऊपर बाणों की वर्षा कर दी व उसकी सेना ने भी मारे बाणों के आच्छादित कर दिया २९ राजा के व उसकी सेना वालों के जितने बाण थे जो कि शत्रुओं के शरीरों के काटनेवाले थे उन सबों का अनादरकर तपस्वीजी ने उन्हीं सिरकियों से सैन्य सहित राजा को मार आच्छादित कर दिया ३० व एक ही एक सिरकी सेना भरे के मारी उसमें बड़ी ही अद्भुत बात हुई ३१ कि सेनाभरे के नेत्र, कान, नासिका सब काट डारे किसी के नेत्रादि बाकी न रहे ३२ व आकाश भर में सब सिरकी ही सिरकी दिखाई देने लगीं इस दशा को देख राजा दम्भोद्भव नरजी के पैरों पर गिर कहने लगा कि हे महाराज! अब मेरा कल्याण कीजिये व मेरे अपराध क्षमा कीजिये ३३ तब शरणागतों के रक्षक नरजी बोले कि अच्छा अब जा ब्रह्मण्य हो व धर्म्मात्मा हो ऐसा अब कभी किसी के सङ्ग न

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करना ३४ हे नृपशार्दूल ! ऐसा पुरुष क्षत्रियों के धर्म को स्मरण कर कोई नहीं होता जो अपने मन ही से सबको जीत ले ३५ इससे अहङ्कार में आय अब किसी से ऐसे वचन न कहना जैसे हमसे कहे हैं चाहे कोई छोटा हो या बड़ा हो किसी से ऐसा न कहना ३६ अब जा व प्रज्ञावान् हो, लोभरहित, अहङ्कारहीन व आत्मज्ञानी हो, इन्द्रियों को जीत, क्षमाकर, कोमल स्वभाव हो व सौम्य स्वभाव हो, प्रजापालन करो ३७ अब विना बल अबल जानलिये किसी को कभी न छेड़ना ३८ अच्छा जाव आज्ञा है कल्याण हो ऐसा कभी किसी के साथ न करना हम दोनों जनों की ओर से जो कोई ब्राह्मण तुमको मिलें उनसे कुशल पूछा करना ३९ इतना सुन उन दोनों जन नर नारायणजी के चरणों में प्रणाम कर राजा दम्भोद्भव वहां से गया व उस दिन से धर्म्म ही करने लगा ४० इससे जो कर्म नरजी ने किया वह महाकर्म है व नर से सहस्रों गुण अधिक नारायण जी में हैं ४१ इससे हे राजन्, धृतराष्ट्र ! जब तक गाण्डीव पर अर्जुन बाण न चढ़ावें उसके प्रथम ही मान छोड़ तुम अर्जुन के शरण को जाव ॥ ४२ ॥

दो० काकुदीक शुक नाक अ, क्षिप्तरु तर्ज्जन नाम।
सन्तानक नर्त्तक घुरो, आस्यमोद शुभधाम १। ४२
जासु अस्त्रसों बिद्धगज, रथहयादि निज कांध।
सोवहिं प्रस्वापन वही, काकुदीक शुभबांध २
भयबिनहूं भयखाय ज्यहि, पदन धरहिं अगुआनि।
हय गय रथ सब शुककहत, मोहनास्त्र गुणखानि ३
जासों देखै स्वर्ग तक, उन्मादन के हेतु।
नाक नाम ताकर कहत, जो सुमिरत दुख देत ४
जासु क्षिप्तही मात्र सों, भयवश मूत्र पुरीख।
करहिं हयाद्यक्षिप्त सों, तर्ज्जन है यह दीख ५

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जहां निरन्तर वृष्टि हो, सो सन्तानक होय।
इन्द्रादिक दिव्यास्त्रकर, नाम यही सुन सोय ६
जासों नर्त्तन करहिं रिपु, सो नर्त्तन पैशाच।
अस्त्रमहोत्कट है सही, बात कहत हम सांच ७
कदन करै जो शत्रुकहँ, घोर नाम त्यहि केर।
यह राक्षस कर अस्त्र है, कहत भली बिधि टेर ८
जासों मारे लोग मुख, पत्थर दै मरणाय।
उद्यत होत सुअास्यमो, दकवाको यमभाय ॥ ६ ॥

इन सब काकुदीक आदि ८ अस्त्रों के लगने से सब मनुष्य मरी जाते हैं व काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मान, मात्सर्य, अहङ्कार ये सब क्रम से उदाहरण हैं ये सब इन अस्त्रों के लगने से होते हैं ४३ व इन्हीं के लगने से लोग उन्मत्त हो लोटने लगते हैं व कभी सोने लगते कभी ऊपर को उछलते व कभी डाकने लगते कभी मूत्र पुरीषोत्सर्ग करते कभी रोते कभी हँसते ४४ । ४५ व फिर सब लोकों के बनानेवाले व सबके ईश्वर सब कर्म जाननेवाले नारायण कृष्णचन्द्र जी जिनके बन्धु हैं ऐसे अर्जुन युद्ध में दुस्सह हैं ४६ हे धृतराष्ट्र! तीनों लोकों में उन अर्जुनजी को कौन जीत सकता है इन कपिध्वज वीर जीतने के स्वभाववाले अर्जुनजी के समान युद्ध में कोई नहीं है ४७ अर्जुन में असंख्य गुण हैं उनसे विशेष गुण जनार्दन ही में हैं और किसी में नहीं व तुम भी राजन्! कुन्ती के पुत्र अर्जुन जी को जानते हो ४८ व जो नर व नारायण बताये थे वही अर्जुन व केशव हैं हे महाराज! इस बात को अच्छी तरह जानो ४६ जो ऐसा जानते हो तो हमारी बात में शङ्का न करो श्रेष्ठमति पर टिककर पाण्डवों से मिलाप कर लो ५० जो अपना कल्याण मानते हो तो इसमें भेद न समझो बस शान्त ही हो जाव युद्ध करनेको मन न करो ५१ हे कुरुश्रेष्ठ! भूतल में आपके कुल की बड़ी प्रशंसा है इससे यह वैसा ही

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बना रहे तो अच्छा है अपना स्वार्थ अच्छी तरह विचारो युद्ध न करो ॥ ५२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षण्णवतितमोऽध्यायः ॥ ९६ ॥

सत्तानबे का अध्याय।

दो० सत्तानबयें महँ कहब, जिमि दुर्य्योधन पाहिं।
कह्यहु कण्व मुनि पाण्डवन, मिलनो संशय नाहिं ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि परशुरामजी के वचन सुन भगवान् कण्व ऋषि भी कौरवों की सभा में दुर्य्योधन से यह वचन बोले १ कि अक्षय व अव्यय लोक के पितामह ब्रह्माजी हैं वैसे ही भगवान् नर व नारायण दोनों ऋषि हैं २ जैसे बारह आदित्यों में विष्णुनाम सूर्य्य सनातन हैं इनका न कभी नाश होता है न इनमें कुछ कमी परती है ये निरन्तर बने रहते व सबके प्रभु ईश्वर हैं ३ व और सब कारण पाय मर जाते हैं चाहे चन्द्रमा हों व सूर्य, पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश ग्रह तारा गण ४ ये सब जगत् के प्रलय के समय तीनों लोकों को छोड़ नष्ट होजाते हैं फिर जगत् की रचना के साथ बनाये जाते हैं ५ व अन्य मनुष्य मृग पक्षी तो मुहूर्त्तमात्र में मर जाते हैं इसी तरह और भी चर अचर जीव जन्तु मरते रहते हैं ६ उनमें राजा लोग बहुधा राज्यश्री भोगकर आयुर्दाय के अन्त में मरते हैं व जबतक युवावस्था को प्राप्त रहते तबतक अपने किये पाप पुण्य भोगते रहते हैं इससे तुम्हारी अभी युवावस्था है यह भोग करने का समय है युद्ध करके क्यों प्राण देते हो ७ इससे दुर्य्योधन आप युधिष्ठिरजी के सङ्ग मिलाप ही करने के योग्य हैं पाण्डव व कौरव दोनों मिलकर पृथ्वी का पालन करें ८ हे सुयोधन! तुम यह कभी न मानना कि हम बलवान् हैं क्योंकि बलवानों के सङ्ग रहने से लोग बलवान् दिखाई देने लगते हैं ९ हे कौरव! जिन लोगों के शारीरिक बल अधिक है उनके सामने सेना

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

का बल काम नहीं करता फिर पाण्डव सबके सब बलवान् हैं क्योंकि उनके देवताओं के समान बल है १० इस विषय में एक यह पुराना इतिहास कहा जाता है जो कि अपनी कन्या का विवाह करने के लिये इन्द्र के सारथी मातलि का है ११ त्रिलोकी के राजा इन्द्रजी के सारथी का मातलिनाम है जोकि बड़े प्रसिद्ध पुरुष हैं उनके एक कन्या हुई वह अति रूपवती होने के कारण लोकभर में प्रसिद्ध हुई १२ उस का गुणकेशी तो नाम था व देवरूपिणी तो जानों रूप के कारण थी ही शोभा व शरीर के सौन्दर्य्य से सब स्त्रियों से वह पृथक् होगई १३ अपनी स्त्री सहित मातलि ने जाना कि अब यह विवाह करने के योग्य हुई तो उसके लिये उससे श्रेष्ठ वर ढूंढ़ने के विचार में वे दोनों हुए १४ व कहने लगे बड़े शीलवान् महात्मा ऊंचे कुलीन कोमल स्वभाववाले मनुष्यों के कुल में कन्या का उत्पन्न होना धिक्कार है १५ क्योंकि सज्जनों की कन्या माता के कुल को व पिता के कुल को व जहां ब्याही जाती उस कुल को इन तीनों को सदा संशय में डारे रहती है १६ हमने मनुष्य की दृष्टि से देवलोक व मनुष्यलोक सब देख लिया व बनाय ढूंढ़ा पर कन्या के योग्य वर नहीं दिखाई देता १७ कण्वजी बोले कि मातलि के विचार से कन्या के योग्य न तो कोई देवगणों में दिखाई दिया न दैत्यों में न गन्धर्वों में न मनुष्यों में न ऋषि गणों में १८ तब मातलि ने रात्रि में अपनी स्त्री के सम्मत से नागलोक में जाने की सम्मति वर ढूंढ़ने के लिये की १९ अपनी स्त्री से कहा कि देवलोक मनुष्य लोक में तो गुणकेशी के योग्य वर रूपादि से दिखाई दिया ही नहीं पर नागलोक में अवश्य होगा २० यह कह स्त्री से सम्मत ले व सुधर्म्मा नाम देव सभा का भी सम्मत ले व उसके प्रणामकर कन्या का शिर सूंघ मातलि स्वर्ग से महीतल में उतरे ॥२१॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तनवतितमोऽध्यायः ॥ ९७ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अट्ठानबे का अध्याय।

दो० अट्ठानबयें महँ कहब, जिमि मातलि देवर्षि।
मिलि बरुणालयगे लखे, तासु भूति अतिहर्षि ॥ १ ॥

कण्वजी बोले कि मातलि जब स्वर्ग से मर्त्यलोक को चले तो नारदजी वरुणलोक को जाते थे मार्ग में उनसे भेंट होगई १ नारदजी ने मातलि से पूछा कि आप इस समय कहां जाते हो सो भी अपने किसी कार्य्य के लिये व इन्द्रजी के कार्य्य के लिये २ जब मार्ग्ग में जाते हुए नारदजी ने मातलि से ऐसा पूछा तो मातलि ने कहा हम वरुण जी से अपनी कन्या के योग्य पति पूछने जाते हैं ३ यह सुन मुनि ने कहा अच्छा हम दोनों जने चलते हैं क्योंकि हम भी स्वर्ग्ग से वरुण ही के दर्शन के लिये चलते हैं ४ हम सब पृथ्वीतल तुम को दिखाते हुए बताते जायँगे व देख कर दोनों जने कोई न कोई वर प्रसन्न ही कर लेंगे ५ इतना कह भूलोक होते हुए इसके नीचे वरुण लोक में जाय दोनों महात्माओं ने वरुण जी को देखा ६ वहां नारद जी ने तो देवर्षि के योग्य पूजा पाई व मातलि ने इन्द्र के सम्बन्धियों की सी पाई ७ पर ये दोनों तो कार्य्य के लिये जाते थे इससे वरुण जी से अपना कार्य्य कह व उनकी भी आज्ञा ले नाग-लोक को चले गये ८ पर नारद जी तो पाताल के निवासियों के भी सब वृत्तान्त जानते हैं इससे मातलि से सब वहां के रहनेवालों का व्याख्यान करते गये ९ व वरुणलोक भी अच्छी तरह देख मातलि से कहने लगे कि मातलि पुत्र पौत्रादि सहित वरुण जी को तुमने देखा अब सर्व ओर से कल्याणरूप व सब ऋद्धि युक्त वरुण जी का स्थान देखो १० जलपति वरुण जी का यह महाप्राज्ञ पुत्र है जो कि शील व वृत्त व शौच के कारण सब से विशेष है ११ व इसके कमलसमान तो नेत्र हैं व सब को अतिप्रिय है व पुष्कर इसका नाम है रूपवान्

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होने के कारण ऐसा दर्शनीय है कि चन्द्रमा की कन्या ने अपने बूते इसे वर अङ्गीकार किया है १२ व दूसरी सोमपुत्री का ज्योत्स्नाकाली नाम है जो कि रूप से लक्ष्मी ही के समान है इसने अदिति के पुत्र सूर्य्य जी को अपना श्रेष्ठ पति किया है १३ व यह जो सब सुवर्ण ही से बना है वारुणी मदिरा का भवन है इसी के कारण देवताओं का एक सुरनाम है व उसका अर्थ यह है कि सुरा कहे मदिरा विद्यमान हो जिनके उनको सुर कहते हैं १४ व हे मातलिजी ! ये सब राज्य हरे हुए दैत्यों के दीप्यमान आयुध हैं दिखाई देते हैं १५ ये आयुध अक्षय हैं कभी चुकते नहीं क्योंकि इन में ऐसा प्रभाव है कि चलाने-वाले के पास फिर-फिर लौट आते हैं इससे देवता लोग किसी से हारते नहीं हैं १६ व इन्हीं आयुधों से दैत्यों की बहुत सी जातें व राक्षसों की जातें देवताओं ने पूर्व्वकाल में जीत ली हैं क्योंकि देवता लोग इन्हीं दिव्य आयुधों को धारण करते हैं १७ व वरुणजी के कुण्ड में जो यह अग्नि वर्त्तमान है सदा इसमें ज्वाला निकला करती हैं यहां तक कि यह ऐसा प्रज्वलित रहता है कि विष्णु भगवान् के चक्र का भी तेज इस पर नहीं चल सक्ता १८ व यह गाण्डीमय अर्थात् गैंड़े शृङ्ग से धनुष बना है इसके चढ़ाने से लोकों का संहार हो जाता है इससे देवता लोग इसकी रक्षा सदा किये रहते हैं, व इसी से गाण्डीव नाम धनुष बना है १९ यह गाण्डीव धनुष कार्य्य के अनुसार बल को धारण करता है सहस्रों व सैकरों लक्षों धनुषों का बल इसमें है बरन बड़ा काम परै तो अनन्तबल होजाता है २० व यह धनुष जो लोग अभेद्य हैं उनका भी भेदन करता है जो राजा लोग राक्षसों के तुल्य बल रखते उनके ऊपर भी जब चलाया जाता मार ही डारता है इसी विचार से प्रथम सृष्टि में ब्रह्मवादी ब्रह्मा जी ने इसे बनाया है २१ यह शस्त्र राजाओं के बड़े भारी चक्र से भासित है व इसे वरुणजी के पुत्र सदा धारण करते हैं २२ व यह वरुणजी का छत्र है जो छत्र

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

गृह में स्थापित है यह सब ओर से शीतल जल मेघ के समान बरसाया करता है २३ इस छत्र से जो जल बरसा करता है यद्यपि चन्द्रमा के समान निर्म्मल होता है पर अन्धकार से ऐसा आच्छादित रहता है जिससे किसी को दिखाई नहीं देता ॥ २४ ॥

दो० मातलि यहँ अद्भुत बहुत, दर्शनीय हैं ढेर।
पर अब चलैं तुम्हार हू, कार्य्य होत है देर ॥ १ । २५ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि मातलिवरान्वेषणेऽष्टनवतितमोऽध्यायः ॥ ९८ ॥

निन्नानबे का अध्याय।

दो० निन्नानबयें महँ कहब, नागलोक सुस्थान।
जिमि नारद मातलिहि दिख, लाय कीन्ह व्याख्यान ॥ १ ॥

नारद जी बोले कि हे मातलि! यह पुर नागलोक के नाभिस्थान में स्थित है व पाताल इसका नाम है दानव दैत्य ही इसमें रहते हैं १ यहां जो प्राणी कभी जल के वेग में परकर चले आते हैं वे मारे भय के पीड़ित हो चिल्लाने व पुकारने लगते हैं २ यहां असुररूप अग्नि सदा जलपान करता हुआ प्रकाशित रहता है व देवताओं ने उसे ऐसा बन्धन में डाल रक्खा है कि वह मर्य्यादा से बाहर नहीं होता क्योंकि अपने को बँधुआ समझता है ३ इसी पाताल में टिककर देवगण चन्द्रमा का अमृत पान किया करते हैं इसी से कृष्णपक्ष में प्रतिदिन एक २ कला कम हुआ करती व शुक्लपक्ष में बढ़ती है यही चन्द्रमा की हानि व वृद्धि दिखाई देती है ४ व यहीं आदिति के पुत्र हयग्रीव भगवान् समय पर पर्व्व २ में वेदपाठियों की वेदध्वनि सुनने के लिये व बढ़ाने के लिये प्रकट होते हैं ५ जिससे कि यहाँ चन्द्रादि सब जलही के रूप से पतित होते हैं इससे इस पुर का उत्तम पाताल नाम है ६ व इसी पाताल से ऐरावण नाम मेघ जगत् के हित के लिये जल ले जाता है व सब बादरों में भर देता है फिर इन्द्र की

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

आज्ञा से बादर बरसते हैं ७ व यहां अनेकरूप के सौ २ योजन के व इससे बड़े भी तिमि आदि नामों से प्रसिद्ध मत्स्य रहते हैं व सदा चन्द्रमा के किरण पीकर जल में बिचरा करते हैं ८ वहां से अन्य स्थान पर जाय नारदजी फिर मातलि से बोले कि हे सूत! यहां सूर्य्य के किरणों से भिन्न हो पाताल के नीचे के भाग में आय हम लोगों की रात्रि में जानों मृतकही होकर व फिर हम लोगों के दिन में सब प्राणी फिर जी आते हैं ९ व यहां चन्द्रमा सदा उदय बने रहते हैं व अमृत का स्पर्श कराय सब प्राणियों को जिलाते हैं १० व यहीं जिन दैत्यों की राज्यलक्ष्मी इन्द्र ने छीन ली है वे काल से पीड़ित होकर भी अपने धर्म्म में टिके हुए बसे रहते हैं ११ व यहीं सब प्राणियों के महेश्वर भूतपति भगवान् ने सब प्राणियों के ऐश्वर्य्य के लिये उत्तम तप किया है १२ व यहीं वेदाध्ययन करने से दुर्ब्बल हो गोव्रती महर्षि लोग प्राण त्याग स्वर्ग्ग को जीते हुए बसते हैं ॥ १३ ॥

दो० जहँ तहँ सोवै नित्य अरु, जो कुछ मिल सो खाय।
जो पावे पहिरै वही, गोव्रत सूत कहाय ॥ १ । १४ ॥

व ऐरावण गजराज, वामन, कुमुद व अञ्जन नाम गजराज सुप्रतीक नाम हस्तिराज के वंश में यहीं उत्पन्न हुए हैं १५ हे मातलिजी! अब यहां देखो जो कोई वर तुमको रुचै उसके पास जाय यत्नपूर्व्वक उसको अङ्गीकार करावें १६ व यहीं इसी जल में शोभा से प्रकाशित अण्ड परमेश्वर ने स्थापित किया है जब से प्रजाओं की उत्पत्ति हुई है तब से यहीं स्थित है न कभी फूटता है न ठौर पर से चलता है १७ इस अण्ड की जाति व उत्पत्ति हमने किसी से कहते नहीं सुनी व इसके पिता माता को भी कोई नहीं जानता क्योंकि इसके प्रथम तो कुछ उत्पन्न ही न था १८ व इसी अण्ड में प्रलय के समय महाअग्नि उत्पन्न होता है वह चराचर तीनों लोकों को भस्म कर देता है ॥ १९ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो० इमि नारद के वचन सुनि, मातलि कह यहँ कोय।
हमैं रुचत नहिं वर चलो, अनत खोजिये सोय॥ १ । २०॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि नवनवतितमोऽध्यायः॥ ९९॥

सौ का अध्याय।

दो० कहब सवें अध्याय महँ, जिमि नारद दर्शाव।
मातलिकाहिं हिरण्यपुर, दैत्यवास सर्साव॥ १॥

नारदजी बोले कि, यह सैकरों सहस्रों माया जाननेवाले दैत्यों व दानवों का अति उत्तम हिरण्यपुर नाम स्थान है १ इसे विश्वकर्मा ने बड़े प्रयत्न से बनाया है व मयदानव ने पाताल में आय इसे फिर अपने मन से बनाया है २ यहां बड़े पराक्रमी व सहस्रों माया जाननेवाले शूरवीर व वरदान पाये दानव दैत्य बहुत दिनों से बसते हैं ३ इन दानवों व दैत्यों को न इन्द्र अपनी वश में कर सक्के हैं न और ही कोई यम, वरुण व कुबेर ही कर सक्के हैं ४ व यहीं कालकञ्ज नाम असुर रहते हैं जोकि श्रीविष्णु भगवान् के चरणों से उत्पन्न हुए हैं व और नैर्ऋत यातुधान भी रहते हैं जोकि ब्रह्माजी के चरणों से उत्पन्न हुए हैं ५ व और भी बहुत से बड़े २ दाँतवाले भयङ्कर वेगयुक्त व पवनवेग के समान पराक्रमी, माया वीर्य्य से उत्पन्न दैत्यगण बसते हैं ६ व युद्ध में महादुर्म्मद निवात कवच नाम दानव भी यहीं बसते हैं उन को तुम जानते ही हो कि इन्द्र जिस प्रकार उन्हें बाधित नहीं कर सक्के ७ व बहुत बार तुम व तुम्हारा पुत्र गोमुख व जयन्त सहित देव-राज इनके सामने से भग खड़े हुए हो ८ हे मातलिजी! देखो कैसे २ सोने व चाँदी के अद्भुत २ मन्दिर यहां बने हैं व सब बिधिपूर्वक बनाये गये हैं इससे सब समयों में सुखदायी हैं ९ व सब वैदूर्य्यमणि से चित्र-विचित्र बने हैं व मूंगों से रुचिर हैं सूर्य्यमणि व स्फटिकमणि के समान उजले हैं, व हीरा के सार से भी श्वेत रङ्ग के हैं १० व पानी इनके

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ऊपर पद्मरागमणि के समान झलझलाता है कोई २ शिलामय व कोई २ काठों से बने से दिखाई देते हैं ११ व कोई २ सूर्य्य के रूप से शोभित होते कोई २ प्रज्वलित अग्नि के तुल्य व सब मणि समूहों से विचित्र इनमें धूलिका कहीं नाम भी नहीं सुनाई देता १२ इनकी उपमा रूप से गुण से व धन से किसी से नहीं दे सकते क्योंकि इनके समान इन्हीं में गुण हैं १३ अब दैत्यों की क्रीड़ा के व शयन करने के रत्नयुक्त बड़े मोल के स्थान व नाना प्रकार के बर्त्तन आसन देखो १४ पर्वत सब यहां के बादरों के रङ्ग के हैं व सबों से जल के झरने झरते हैं वृक्ष यहां के सब समयों में फूल, फल, पल्लव युक्त बने रहते हैं व जब जैसा चाहते वैसा रूप धारण कर लेते हैं १५ हे मातलिजी! भला यहां कोई वर तुम को प्रसन्न हुआ व नहीं जो न प्रसन्न हो तो चलो पृथ्वी की और किसी दिशा को चलें १६ ऐसा कहते हुए नारदजी से मातलिजी बोले कि नारदजी यहां तो हमारा कुछ भी काम नहीं चल सकता क्योंकि ये सब तो देवताओं के वैरी हैं ॥ १७ ॥

दो० देव दैत्य भ्राता उभय, पर दोनों नित वैर।
यासों हम परपक्ष महँ, किमि वे हैं ये गैर ॥ १ । १८ ॥
यासों जनि दानव लखौ, चलौ अनत देवर्षि।
हिंसायुत इन आतमा, किमि विवाह करि हर्षि ॥ २ । १९ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि शततमोऽध्यायः ॥ १०० ॥

एकसौएक का अध्याय ।

दो० यकसै एक महँ कहब जिमि, गरुड़ देश देवर्षि।
मातलिकाहिं दिखायहु, पर न हुए वे हर्षि ॥ १ ॥

नारदजी बोले कि हे मातलिजी! यह लोक सर्पों के खानेवाले गरुड़ नाम पक्षियों का है इनको विक्रम करने व चलने में व भार लादने में कुछ भी परिश्रम नहीं करना पड़ता १ यह कुल गरुड़जी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के ६ पुत्रों से व्याप्त रहता है उनके पुत्रों के नाम ये हैं सुमुख, सुनाम, सुनेत्र, सुवर्च्चस २ सुरुच व सुबल ये सब विनता के कुल के कर्त्ता गरुड़ों से अति वेगवान् बनाय बढ़ाये गये हैं ३ इनकी जाति के ग्यारह सौ और हैं ये सब कश्यप ऋषि ही के ऐश्वर्य बढ़ानेवाले हैं ४ ये सब शोभा युक्त हैं व सबके श्रीविष्णुजी का लक्षण होता है व सब शोभा ही की इच्छा किये बल को धारण करते हैं ५ ये सब कर्म से क्षत्रिय हैं क्योंकि सब क्षत्रियों के समान निर्द्दयी होते हैं इसीसे सर्प्पों को पकर पकर खा जाते हैं अपने भाई बन्धु सर्प्पों को खाजाने के कारण ब्राह्मणता को कभी नहीं प्राप्त होते ६ इनमें जो २ प्रधान हैं उनके नाम तुम से बताते हैं इनका कुल विष्णु भगवान् के ग्रहण करने से प्रशंसा के योग्य है इससे कहते हैं ७ इन लोगों के विष्णुही देवता हैं व विष्णु ही इनके परायण हैं व इनके हृदय में सदा विष्णुही निवास करते हैं व विष्णुही इनकी सदा गति हैं ८ सुवर्णचूड़, नागाशी, दारुण चण्डतुण्डक, अनिल, अनल, विशालाक्ष, कुण्डली ९ कम्पाजित्, वज्र, विष्कम्भ, वैनतेय, वामन, वातवेग, दिशाचक्षु, निमिष, अनिमिष १० त्रिवार, सप्तवार, वाल्मीकि, दीपक, दैत्यद्वीपक, परिद्वीप, सारस पद्मकेतन ११ सुमुख, चित्रकेतु, चित्रवर्ह, अनघ, मेषहृत्, कुमुद, दक्ष, सर्प्पान्त, सोमभोजन १२ गुरुभार, कपोत, सूर्यनेत्र, चिरान्तक, विष्णुधर्म्मा, कुमार, पारिवर्ह, हरि १३ सुस्वर, मधुपर्क, हेमवर्ण, मलय, मातरिश्वा, निशाकर व दिवाकर १४ ये प्रकरणवश से हमने गरुड़ के पुत्र गिनाये जोकि यश से व प्राण से प्रधान हैं १५ जो इनमें आप की रुचि नहीं है तो आइये वहां चलें जहां तुम अपनी कन्या के योग्य वर पावोगे ॥ १६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०१ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौ दो का अध्याय।

दो० द्व्यधिक एक शत में कहब, जिमि नारद मुनिराज।
सुरभी लोक रसातलहु, दर्शायहु अति भ्राज॥ १॥

नारदजी बोले कि, यह रसातल नाम पृथ्वी से नीचे सातवां लोक है जहां कि गाइयों की माता अमृत से उत्पन्न सुरभी रहती है १ व छवों रसों के सार से भी उत्तम व पृथ्वी के सार से उत्पन्न दूध सदा उससे चुआ करता है २ यह सुरभी अमृत पान कर तृप्त हुए ब्रह्माजी के मुखसे सारांश गिरा उससे उत्पन्न हुई है ३ व इसी के दुग्ध की धारा पृथ्वी पर गिरी उसी का कुण्ड क्षीरसागर है जोकि परम पवित्र कहाता है ४ व उस कुण्ड के निकट मुनि लोग बैठे रहते जो फेना निकलता वे पिया करते इससे उनका फेनपा नाम परा है ५ हे मातलिजी! उन फेनपा नाम ऋषियों के फेन ही आहार है वे लोग ऐसे उग्रतप में टिके हैं कि उनसे देवता लोग भय खाते हैं ६ इस सुरभी से चार सुरभियां और उत्पन्न हुई हैं जोकि सब दिशाओं में बसती हैं व वही चारों दिशाओं का पालन करती हैं इससे उनकी स्वामिनी कहलाती हैं ७ उनमें जो पूर्वदिशा को धारण करती है उसका सुरूपा सौरभी नाम है व जो दक्षिण दिशा को धारण करती है उसका हंसिका नाम है ८ व सुभद्रानाम सौरभी पश्चिम दिशा को धारण करती है यह पश्चिम दिशा वरुणजी की है इस सुभद्रा का महानुभाव है व विश्वरूपा भी इसीका नाम है ९ व उत्तरादिशा को सर्वकामदुघा नाम धेनु धारण करती है इस उत्तरदिशा का ऐलविला भी नाम है १० इन्हीं सबों का दुग्ध मिलाय क्षीरसागर में मन्दराचल को मथानी बनाय देवता व दानवों ने मथा था ११ तब क्षीरसागर से वारुणी मदिरा देवी व लक्ष्मीजी निकली थीं व अमृत भी निकला था व उच्चैश्श्रवा नाम अश्वराज निकला व मणियों में श्रेष्ठ कौस्तुभमणि १२ व सुधाहारी सर्पों के लिये सुधा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

निकली व पितरों के लिये स्वधा निकली क्योंकि वे लोग विना स्वधा बोले भोजनही नहीं करते व देवताओं के लिये अमृत निकला व कामधेनुनाम एक गाय भी निकली जो देवताओं को दुग्ध देती है १३ रसातल के निवासियों ने एक पुरानी गाथा गाई है जोकि पण्डितों की गाई हुई है व पुराण की है ऐसी सुनी जाती है ॥ १४ ॥

दो० नागलोक सुरलोक महँ, चढ़ि विमान सुख नाहिं ।
जिमि सुख बसत रसातलहिं, होत गुनहु मनमाहिं ॥ १।१५॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्व्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०२ ॥

एकसौतीन का अध्याय ॥

दो० त्र्यधिक एक शतमहँ कहब, जिमि नारद दिखलाव ।
भोगवती वासुकि पुरी, जहँ मातलि वर पाव ॥ १ ॥

नारदजी बोले कि, यह वासुकि नाम नागराज की पालित भोगवती नाम पुरी है जैसे इन्द्र की पुरी अमरावती सब पुरियों में श्रेष्ठ है वैसीही यह नीचे की सब पुरियों में श्रेष्ठ है १ व देखो ये शेषनाम नागराजजी बैठे हैं जोकि अपने तपोबल से प्रभावयुक्त इतनी बड़ी पृथ्वी को अपने शिरपर धारण किये हैं २ इनका स्वरूप श्वेताचल के आकार का है व सदा दिव्य भूषणों से भूषित रहते हैं व शिर इनके सहस्र हैं व इनकी जीभों से ज्वालाओं की माला निकला करती हैं व ये महाबली हैं ३ व यहां नाना प्रकार के आकारों के व नाना प्रकार के भूषण धारण किये सुरसा के पुत्र नागलोग व्यथारहित बसते हैं ४ यहां के सर्प कोई २ तो मणि के चिह्न के कोई २ स्वस्तिक के चिह्न के कोई २ चक्र के चिह्न के कोई २ पानपात्र के चिह्न के, ऐसे सहस्रों बली नाग हैं व स्वभाव के सब महारौद्र ५ यहां कोई २ सर्प तो सहस्र शिरवाले हैं व कोई पांच सौ शिरवाले, कोई २ सौ शिरवाले व कोई २ तीन शिर के ६ कोई दो शिर के, कोई पांच शिर के, कोई सात मुख के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इन सबकी बड़ी भारी लम्बीडार व बड़े कायवाले व पर्व्वताकार किसी २ का शरीर है ७ यहां बहुत सहस्रों लाखों अर्ब्बुदों एक २ वंश के नाग हैं परन्तु जो उनमें श्रेष्ठ २ वंशवाले हैं उनके नाम हम बताते हैं सुनो ८ वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, धनञ्जय, कालिय, नहुष, कम्बल, अश्वतर ९ बाह्यकुण्ड, मणि, नाग, अपूरण, खग, वामन, एलपत्र, कुकुर व कुकुण, १० आर्य्यक, नन्दक, कलश, पोतक, कैलासक, पिंजरक व ऐरावत ११ सुमनोमुख, दधिमुख, शंख, नन्द, उपनन्द, आप्त, कोटरक, शिखी व निष्ठूरिक १२ तित्तिरि, हस्तिभद्र, कुमुद, माल्यपिण्डक, पद्म, पुण्डरीक, पुष्प, मुद्गः व अपर्णक, १३ करवीर, पिठरक, सवृत्त, वृत्तपिण्डार, बिल्वपत्र, मूषिकाद व शिरीषक, १४ दिलीप, शंखशीर्ष, ज्योतिष्क, अपराजित, कौरव्य, धृतराष्ट्र, कुहर व कृशक १५ विरजा, धारण, सुबाहु, मुखर, जय, बधिरान्ध, विशुण्डि, विरस, व सुरस १६ इतने ये व बहुत से और भी हैं पर सब कश्यप ही जी के पुत्र हैं हे मातलिजी ! देखो तो इनमें कोई वर तुम को रुचता है १७ कण्वजी बोले कि मातलि इतने में निरन्तर निरीक्षणकर सावधान चित्त हो व प्रीतिमान् हो नारदजी से बोले कि १८ यह जो कौरव्य व आर्य्यक के आगे खड़ा है व बड़ा द्युतिमान् व दर्शनीय है यह किसके कुल का नन्दन है १९ व इसके पिता माता का क्या नाम है, व किसके वंश का यह पताकारूप स्थित है ॥ २० ॥

दो० धैर्य्यरूप प्रणिधान वय, सब प्रकार अनुरूप ।
गुणकेशी के योग्य वर, यह है सुनु ऋषिभूप ॥ १ । २१ ॥

कण्वजी बोले कि मातलि को सुमुखनाम नाग के देखने से प्रसन्न मन देख नारदजी ने उनके जन्म कर्म्मादि कहे २२ ये ऐरावत के तो कुल में उत्पन्न हैं, सुमुख इन नागराज का नाम है, व आर्य्यक इनके पिता का नाम है व वामन नाम नागराज की कन्या के ये पुत्र हैं २३

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व इनके पिता का चिकुरनाम था उनको गरुड़जी ने थोड़े दिन हुए कि खा लिया है ॥ २४ ॥

दो० ह्वै प्रसन्न मातलि कह्यो, यह मम रुच्यो दमाद।
भुजगोत्तम जो सुमुख है, यामहिं नहिं कछुवाद ॥ १ । २५ ॥
यामें कीजै यत्न हम, यहि निज कन्या दैन।
चहत भली विधि जानिये, और न कहिये बैन ॥ २ । २६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि मातलिवरान्वेषणे त्र्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०३ ॥

एकसौचारि का अध्याय।

दो० कहब चतुरधिक सौ महँ, जिमि मातलि सँग आय।
सुधा सुमुखहू ने पियी, विष्णु वचन सों पाय ॥ १ ॥

नारदमुनि बोले कि ये मातलि नाम इन्द्रजी के सूत हैं, व इन्द्र के बड़े प्रिय सुहृद हैं व सदा पवित्र, शील गुणयुक्त, तेजस्वी, वीर्य्यवान्, बली हैं १ ये इन्द्र जी के सखा मन्त्री व सारथि हैं, व सवर्णों में इनके व इन्द्र के प्रभाव में थोड़ा ही अन्तर रहा है २ ये ऐसे हैं कि जहां देवताओं व असुरों का संग्राम होता है तो सहस्र घोड़े नहा इन्द्र का रथ मन के इशारे से चलाते हैं ३ इन्होंने इन्द्रजी के घोड़ों को ऐसा जीत रक्खा है कि इन्द्रजी अपने बाहों से तुरन्त शत्रुओं को जीत लेते हैं, व प्रथम शत्रुओं के ऊपर मातलि बाणादि चला लेते हैं फिर इन्द्र चलाते हैं ४ इन मातलि के एक कन्या ऐसी उत्तम है कि रूप में पृथ्वी पर दूसरी और उसके समान नहीं है व सत्यशीलादि गुणों से संयुक्त है, व गुणकेशी उसका नाम है ५ ये उसके लिये तीनों लोकों में यत्न से घूम आये पर इनको उसके योग्य वर कहीं न मिला देखते २ आप के पौत्र सुमुख को इन्हों ने अपनी कन्या के लिये पति प्रसन्न किया है ६ हे आर्य्यक! जो तुम को यह बात रुचती हो तो अब विलम्ब न कीजिये अपने पौत्र के लिये इस कन्या को ग्रहण कीजिये ७

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जैसे विष्णुभगवान् के कुल में लक्ष्मी व जैसी अग्नि के यहां स्वाहा, वैसी ही तुम्हारे कुल में गुणकेशी हो ८ इससे आप अपने पौत्र के लिये गुणकेशी को ग्रहण करें, सुमुख के सदृश गुणकेशी है जैसे इन्द्र के सदृश इन्द्राणी शची ९ यद्यपि इस तुम्हारे पौत्र के पिता नहीं है तथापि इसमें बहुत गुणों के कारण हमलोग इनको अंगीकार करते हैं, इसमें आपका व ऐरावत का भी बड़ा मान समझते हैं १० व सुमुख के शील शौच दमादि गुणों से भी अपने बूते आय कन्या देने को ये उद्यत हुए हैं ११ इससे इन मातलि का सम्मान करने के योग्य आप हैं १२ कण्वजी बोले कि आर्य्यक नाम नागराज प्रथम बहुत दुःखी हुए फिर प्रसन्न भी होकर नारदजी से बोले कि हमारे पौत्र का तो तुम विवाह करने को कहते हो व हमारा पुत्र अभी थोड़े ही दिन हुए मारा गया है तो नारदजी ऐसे अवसर में गुणकेशी को स्नुषा बनाना हम कैसे चाहें १३ हे नारद ! नहीं तो हम आप का वचन न मानते फिर ये इन्द्र के सखा इनका सम्बन्ध किसको न अच्छा लगेगा १४ पर इसमें एक कारण की दुर्बलता है इसी से हम चिन्तना करते हैं वह यह है कि इस सुमुख का पिता मेरा पुत्र था १५ उसे थोड़े ही दिन हुए कि गरुड़जी ने भक्षण कर लिया है उसी दुःख से हमलोग दुःखी हैं व फिर चलने के समय गरुड़ ने यह कहा है कि १६ अगिले महीना में इसके पुत्र सुमुख को भी हम भक्षण कर लेंगे सो हमलोग यह निश्चय जानते हैं कि यह बात जो गरुड़ ने कही है वे जरूर अपने वचन करेंगे अगिले मास में इसे भी खा लेंगे १७ कण्वजी बोले कि यह सुन मातलि बोले इस विषय में हमने बुद्धि करली है तब तुम्हारे पौत्र सुमुख को अपना दमाद बनाना चाहा है १८ वह युक्ति यह है कि ये सुमुखनाम नाग हमारे व नारदजी के सङ्ग चलें इन्द्रजी के दर्शन करें १९ इनके आयुर्द्दाय के समाचार हम वहां सम्पूर्ण जान लेंगे जो इनकी आयुष अभी होगी केवल गरुड़ही मारे लेते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होंगे तो उनके भी मारने का प्रबन्ध किया जायगा २० अब यह कार्य सिद्ध करने के लिये सुमुख हमारे साथ चलें व इन्द्र के दर्शन करें आपकी स्वस्ति हो २१ यह सम्मतकर सुमुख को सङ्गले मातलि नारद व आर्य्यक सबों ने आय बैठे हुए इन्द्रजी को देखा २२ वहां इन्द्रजी के अर्द्ध सिंहासन पर उस समय भगवान् विष्णुजी भी चतुर्भुजी मूर्त्ति को धारण किये विराजते थे नारदजी ने मातलि से कहा कि अच्छा है इसी बीच में सब वृत्तान्त इन्द्रजी से कहो जिसमें श्रीभगवान् भी सुनें २३ वैशम्पायनजी बोले कि यह सुन मातलि ने सब वृत्तान्त कहा तब श्रीविष्णुजी ने इन्द्र से कहा कि बस इस सुमुख को भी अमृत देकर झटपट देवताओं के समान बना लो २४ जिसमें आप की इच्छा से मातलि सुमुख व नारद तीनों जने अपना अभीष्ट पावें विवाह होजाय २५ इन्द्रजी ने गरुड़ का विक्रम बड़ा भारी समझ जाना कि हम युद्ध में उनसे न जीतेंगे श्रीविष्णुजी से कहा कि अब हम क्या इनको अमृत दें आप ही अपने हाथ से दीजिये २६ श्रीभगवान्‌जी बोले कि तुम सब चराचरों के स्वामी हो तुम्हारे दिये को विना दिया कौन कर सकेगा २७ यह सुन इन्द्र ने सुमुख को चिरञ्जीवी कर दिया पर अमृत न पिलाया २८ तब मातलि की कन्या के सङ्ग सुमुख का विवाह हुआ व अपनी स्त्री सङ्ग लेकर सुमुख अपने घर को चले गये २९ व नारद आर्य्यक दोनोंजने कार्य्य सिद्ध होजाने से परमानन्दित हो महाद्युति देवराज की पूजा कर अपने २ स्थान को गये ॥ ३० ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुरधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०४ ॥

एकसौ पांच का अध्याय।

दो० एकसै पँचयें महँ कहब, जिमि विनतासुत आय।
गर्व्व दिखायहु विष्णुकहँ, पर सब गये गँवाय ॥ १ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कण्वमुनि बोले कि जिस प्रकार इन्द्रजी ने सुमुख नाम नाग को आयुर्बल दिया वह महाबली गरुड़जी ने कहीं सुना १ व अपने पंखों के पवन से तीनों लोकों को रूंध परम क्रोध कर गरुड़जी इन्द्रके पास को दौरे २ व आय बोले कि हे भगवन्, इन्द्र! हमारा निरादर कर आपने हमारी जीविका क्यों हरली ? जो मानी उस नाग को विना विचारे वर दे अब कहां जाते हो ३ देखो सब प्राणियों के ईश्वर ब्रह्मा जी अपने स्वभाव ही से जैसे सबका आहार बनाते हैं वैसे ही हमारा आहार सर्पों को बनाया है फिर आप क्यों रोंकते हो ४ इस नाग को हमने अङ्गीकार कर लिया था व समय भी बद दिया था कि अगिले मास में भक्षण करेंगे इससे उस मास में इसी के शरीर से हमारा भरण पोषण हो सक्ता है और दूसरे से नहीं ५ अब इसकी तो आपने आयु बढ़ा दी हम दूसरे को मार नहीं सक्ते व तुम तो अपने आनन्द से क्रीड़ा कर रहे हो व हम भूखों मरेंगे ६ इससे अब हम आप के शिरे मर जायँगे व हमारे भाई बन्धु भी मरेंगे व जो हमारे घर में सेवक लोग हैं वे भी मरेंगे हे इन्द्र! तुम प्रीतिमान् रहो ७ हे बल व वृत्रासुर के मारनेवाले! अब हम इसके योग्य हुए कि प्रथम तो तीनों लोकों के ईश्वर रहे अब भृत्यत्व को प्राप्त हुए ८ क्योंकि तुम्हारे होते विष्णु जी हमारे भी कारण नहीं हैं क्योंकि तीनों लोकों के राजाओं का राज्य निरन्तर तुम्हारे ही अधीन है ९ सो आपने अपने ही को कैसे बड़ा समझ लिया क्योंकि हमारी भी माता दक्ष ही की कन्या है व कश्यप ही हमारे पिता हैं व हम भी तीनों लोकों को अनायास अपने ऊपर उठाकर लाद सक्ते हैं १० व हमारे भी सब प्राणियों को असह्य बड़ा भारी बल है व दैत्यों के विग्रह में हमने भी बड़ा भारी कर्म्म किया है ११ व श्रुतश्री, श्रुतसेन, विवस्वान्, रोचनामुख, प्रश्रुत व कालकाक्षादि हमने भी दैत्य मारे हैं १२ जो कि हम तुम्हारे छोटे भाई वामनजी की ध्वजा में टिककर घूमते फिरते व उनको अपनी पीठ पर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लादते हैं इसी से तुमने हमारा अनादर किया कि ये लद्दू तो हुई हैं क्या करेंगे १३ भला यह तो बताइये कि हमको छोड़ और दूसरा कौन इतना भार सह सक्ता है व हमारी बराबर और कौन बलवत्तर है नहीं सबसे विशेष बलवान् हमीं हैं क्योंकि भाई सहित तुम को भी लादे फिरते हैं १४ व जिससे कि तुमने अनादर कर हमको भोजन करने से दूर कर दिया उससे हमारा गौरव नष्ट होगया व तुमसे भी हमारा गौरव जाता रहा १५ व जो ये सब अदितिजी से उत्पन्न हुए उन सबों में तुम बलवत्तर हो यद्यपि और देवगण भी बलवान् हैं पर तुम्हारी समता को कोई नहीं पाता १६ सो हम तुम को एक अपने पंख पर चढ़ाय जहां चाहते वहां ले जाते हैं तो तुम्हीं धीरे से विचारो तो हमारे समान दूसरा और कोई कौन बलवत्तर है १७ कण्वजी बोले कि गरुड़ के ऐसे दारुण व बलयुक्त वचन सुन क्षोभरहित गरुड़जी को क्षोभ कराते हुए श्रीविष्णु भगवान् बोले १८ हे गरुड़ ! तुम हो तो बड़े दुर्बल पर अपने को बड़े बलवान् मानते हो, परन्तु हमारे सामने अपनी ऐसी बड़ाई करनी न चाहिये बस हो चुका अब ऐसा न समझना १९ क्योंकि यह सम्पूर्ण त्रिलोक हमारे देह को नहीं उठा सक्ता हमीं अपने से अपने को धारण किये रहते व तुमको भी हमीं ले चलते तुम बेचारे हम को क्या ले चलोगे २० अब तुम तब तक हमारा दहिना एक हाथ अपने ऊपर लाद कर चलो जो इस एक को धारण कर लोगे तो तुम्हारा यह बकना सफल होगा २१ इतना कह श्रीभगवान् ने अपना एक हाथ गरुड़ के ऊपर धर दिया कि मारे भार के पीड़ित हो गरुड़ पृथ्वी पर गिर परे व विह्वल होकर मूर्च्छित हो गये श्वास चलना भी बन्द हो गया २२ जितना पर्व्वतों समेत सम्पूर्ण पृथ्वी का भार है उतना भगवान् के देह की एक शाखा का भार गरुड़ ने माना २३ भगवान् विष्णुजी ने जोर से गरुड़ के ऊपर हाथ दे नहीं मारा केवल चुप्पे धीरे से रख दिया था इससे उनका प्राण नहीं निकला क्योंकि भगवान्

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को गरुड़ का नाश कराना अङ्गीकार नहीं था २४ पर तो भी ऐसा हुआ कि मुँह बाय सब शरीर शिथिल कर विचेत व विह्वल हो बड़े गरू भार से पीड़ित हो गरुड़ ने अपने सब पङ्ख छोड़ दिये २५ फिर विनता के पुत्र गरुड़ विष्णुभगवान् के शिर से प्रणाम कर अचेत विह्वल व दीन हो कुछ धीरे से बोले २६ हे भगवन्! आपने तो धीरे ही से अपनी जान मेरे ऊपर हाथ धरा परन्तु वह तो लोकभर के सारांश के तुल्य था इससे मैं पृथ्वी पर गिर कर पिस गया २७ अब हे भगवन्! विह्वल व अल्प तेजस्वी व बलदर्प्प से विहीन व अपने ध्वज में बसने वाले मुझ पक्षी के अपराध क्षमा कीजिये २८ हे विभो! मैंने आपका परमबल नहीं जाना इसी से मैं मानता था कि मेरे समान कोई और बलवान् नहीं है २९ यह सुन श्रीभगवान्‌जी ने गरुड़ के ऊपर प्रसाद किया व अब ऐसा कभी न करना यह कह गरुड़ से बोले ३० व अपने चरण के अँगूठे से उठाय उसी सुमुख नाम नाग को गरुड़ की छाती में पटक दिया कि तब से गरुड़ सर्प्प युक्त होगये ३१ इस प्रकार श्रीविष्णु के बल से आक्रान्त होने के कारण गरुड़ का गर्व नष्ट हो गया यद्यपि वे बड़े बलवान् व महा यशस्वी भी थे पर क्षणमात्र में सब बल कहीं जाता रहा ३२ कण्डव जी दुर्य्योधन से बोले कि हे गान्धारी के पुत्र, दुर्य्योधन! ऐसे ही जब तक रण में तुम पाण्डवों के सामने नहीं जाते तभी तक जीते हो ३३ क्योंकि पवन के पुत्र महाबली भीमसेन व इन्द्र के पुत्र अर्ज्जुन वीर रण में किसको न मार डालेंगे ३४ भला हे दुर्य्योधन! विष्णु, वायु, इन्द्र, धर्म्म व अश्विनीकुमार इन इतने देव मुख्यों को तुम किस हेतु से देखने को समर्थ हो ३५ इससे हे राजकुमार! अब विरोध करने से कुछ भी सिद्ध नहीं है बस पाण्डवों से मिलाप कर लो अब अच्छी युक्ति लग गई है वासुदेव के द्वारा कुल की रक्षा कर लो ३६ ये महा तपस्वी नारदजी सब के प्रत्यक्ष देखने वाले हैं उसमें भी विष्णु का माहात्म्य तो ये

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

प्रत्यक्ष देखा ही करते ये जानते हैं वही शङ्ख, चक्र, गदाधारी विष्णु ही ये कृष्ण भगवान् हैं ३७ वैशम्पायनजी बोले कि—

मालिनीछन्द

यह सुनि मुनिबानी अन्ध के सूनुजानी।
भृकुटि धनुषतानी श्वास ऊधी सुठानी॥
करणतन विलोकी हासकै यों बखानी।
मुनिगण किमि जानी युद्धबांकी कहानी॥१।३८॥

दो॰ इमि मुनि की वाणी निदरि, दुर्म्मति भूपकिशोर।
निजजङ्घा कर पीटिकै, यह बोल्यहु बरजोर॥२।३९॥
जिमि ईश्वर सिरजो हमें, जो भावी जो बुद्धि।
तिमि वर्त्तत हम किमिकरत, तुम प्रलाप ह्वै सिद्धि॥३।४०॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः॥१०५॥

एक सौ छः का अध्याय।

दो॰ यकसै छठयें महँ कहब, जिमि नारद कह नीक।
हठ विषयक गालव बहुरि, कौशिक वचन व्यलीक॥१॥

इतनी कथा सुन जनमेजय जी ने पूछा कि हे मुनिराज! अनर्थ में हठ किये, परधन के लिये लोभ से मोहित, नष्ट कर्म्मों में तत्पर, मरण में निश्चय किये, ज्ञाति वालों के दुःख कर्त्ता, बन्धुओं के शोक बढ़ाने वाले, सुहृदों को क्लेश देने वाले, शत्रुओं के हर्ष बढ़ाने वाले व कुमार्ग्ग ही में सदा चलने वाले इन दुर्य्योधन को भाई बन्धुओं ने क्यों नहीं रोंका फिर और किसी ने रोंका व न रोंका परम सुहृद व ज्ञानी भीष्मपितामह जी ने सौहार्द की रीति से क्यों नहीं ऐसे असत्कर्म्मों से उन्हें रोंका १।२ वैशम्पायनजी बोले कि प्रथम तो श्री भगवान् कृष्णचन्द्रजी ही ने बहुत कहा फिर भीष्मपितामहजी ने भी कहा फिर नारद जी ने जो कहा हम कहते हैं सुनिये ४ नारद

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जी बोले सुहृद सुनने वाला इस संसार में दुर्लभ है व सुहृद हितकारी भी दुर्ल्लभ ही है क्योंकि जहां सुहृद टिकता है वहां कोई बन्धु नहीं खड़ा हो सक्ता ५ व हमारे विचार से सुहृदों की कही बात सुनने के ही योग्य होती है इससे तुम्हें भी सुननी चाहिये व फिर सुनकर करनी चाहिये हठ न करना चाहिये क्योंकि हठ करना नाशकारी होता है ६ इस हठ करने के विषय में एक पुराना इतिहास परिडत लोग कहते हैं जैसे हठ करने से गालव महर्षि की पराजय हुई है सुनाते हैं सुनो ७ विश्वामित्रजी तपस्या करते थे तब भगवान् वशिष्ठ जी का रूप बनाय धर्म्म जी उनके मन का अभिप्राय जानने के लिये वहां आये ८ रूप अपना सप्तर्षियों से पृथक् धारण कर लिया था बहुत भूंखे प्यासे बन कौशिक जी के आश्रम पर पहुँचे ९ विश्वा-मित्रजी उन को देख चकित चित्त हो उनके लिये खीर बनाने लगे कि अच्छा अन्न इनको भोजन करावें परन्तु धर्म्म ने उनके खीर बनाने की राह न देखी १० तब अन्य तपस्वी लोग अन्न लाये उन्हों ने भोजन करलिया उसके पीछे जब खीर तैयार हुई तो वैसीही गर्म्म ही खीर विश्वामित्रजी भी लेकर आये ११ धर्म्मजी ने कहा अब तो हम भोजन करचुके तबतक ठहरो फिर देखाजायगा इतना कह धर्म्म चले गये व विश्वामित्रजी वैसेही खीर का पात्र हाथ में लिये खड़ेही रहगये १२ जब देरहुई धर्म्म न आये तो खीर का पात्र उठाय शिरपरधर श्वास चढ़ाय वृक्षके ठूंठके समान निश्चलहो व बनाय निश्चेष्ट हो उसी स्थानपर खड़े रहे १३ जब विश्वामित्रजी इस प्रकार वशिष्ठरूपधारी धर्म्म के लिये हव्य शिरपर धर तप करनेलगे तो उनका गौरव बहुत मान सौहार्द व प्रिय की कामना से गालवमुनि शुश्रूषा करने लगे १४ इस प्रकार सौ वर्ष पूरे होनेपर धर्म्मजी फिर आये व फिर वशिष्ठही का रूप धारण करके व भोजन ही करने की इच्छा से १५ देखा तो महर्षि विश्वामित्रजी वायु भक्षण करतेहुए शिरपर वही खीर का पात्रधरे खड़े हैं १६ धर्म्मजी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ने जो मुनि के शिरपर से खीर उतारी तो वह वैसीही गर्म्म व वैसीही नई विदित हुई इससे भोजनकर व प्रसन्न हो मुनि चले गये १७ व प्रसन्न होकर कहगये कि जाव अब क्षत्रिय का भाव तुम्हारा जाता रहै व ब्राह्मणत्व को प्राप्त होजावो तब से धर्म्म की आज्ञा से विश्वामित्रजी ब्राह्मणत्व को प्राप्त होगये १८ व विश्वामित्र जी अपने तपस्वी शिष्य गालव की शुश्रूषा से बहुत प्रसन्न होकर बोले १९ कि गालव अब हमारी आज्ञा है जाव यथेष्ट घूमो तुम को कहीं से कुछ भय नहीं इतना सुन गालव विश्वामित्रजी से बोले कि हे महाराज! आप तो गुरुठहरे बताइये गुरुदक्षिणा कौन २ वस्तु आप के लिये लावें २० क्योंकि दक्षिणाओं के सहित मनुष्य के कर्म्म सिद्ध होते हैं व दक्षिणाओं का देनेवाला पुरुष मोक्ष पाता है २१। २२ स्वर्ग्ग में यज्ञफल भोगकरने के लिये दक्षिणा शान्ति कहाती है इससे आप अपने मुख से कहें कौन वस्तु गुरुदक्षिणा लावें २३ गालव की सेवाही से अपने को वश समझ विश्वामित्रजी ने कहा जाव २ बस हम दक्षिणा पाचुके २४ इस प्रकार वारंवार विश्वामित्रजी ने कहा जाव २ व वारंवार गालव कहते रहे बतावो क्या दें २५ जब गालव ने बड़ाही हठ किया किसी तरह विश्वामित्रजी का कहा न माना तो विश्वामित्रजी को कुछ क्रोध आगया व बोले कि ॥ २६ ॥

दो० एक श्यामकर्णक तुरँग, चन्द्र सदृश रँगश्वेत।
हमको दीजै आठ सौ, गालव जाहु न सेत ॥ १ । २७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षडधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०६ ॥

एकसौसात का अध्याय।

दो० यकसै सतयें महँ कहब, जिमि गालव पछितान।
हठकर बारहि बारही, गयहु तासु अभिमान ॥ १ ॥

नारद मुनि बोले जब धीमान् विश्वामित्रजी ने ऐसा कहा तो तब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

से न तो गालव से बैठते बने न सोते बने न खाते बस उसी चिन्ता में लग गये १ यहां तक कि मारे चिन्ता के शरीर में हाड़ व चाम रह गया मांस रक्त सब सूख गया मारे शोक के रात्रि दिन जलने लगे, बार २ शोच करते २ शरीर मारे क्रोध के जरने लगा २ ऐसे पुष्ट मित्र कहां मिलें ? जिनके इतना धन का संचय हो कि आठसौ एक श्यामकर्ण व सर्वांग चन्द्रमा के समान उजला हो ऐसे घोड़े जिन के हों हाय अब हम को घोड़े कहां से मिलेंगे ३ अब हम को भोजन में श्रद्धा कहां हो व सुख की श्रद्धा कहां हो अब तो हमारे प्राण रखने ही की श्रद्धा टूट गई व हम जीकर क्या करेंगे ४ अब हम कि तो समुद्र के उसपार जाय व पृथ्वी के उसपार कहीं लोकालोक के उस पार जाय प्राण छोड़ें क्योंकि हमारे जीने से अब क्या है ५ जो पुरुष निर्द्धन होने से अर्थ नहीं सिद्ध करता व विविध प्रकार के फलों से त्याग दिया गया व उसके ऊपर किसी का ऋण लदा है उसको सुख कहां है ६ सुहृदों का धन खाय व वाञ्छित अपने उनसे पूरे कराय जिसने उसके बदले में सुहृदों का प्रत्युपकार न किया उसके जीने से मरना श्रेष्ठ है ७ व जिसने प्रतिज्ञा की कि हम तुम्हारा कार्य्य करेंगे व प्रत्युपकार न कर सका वह मिथ्या वचन से जलजाता है व उसका यज्ञ ताल खुदाना बाग लगाना इंदारा बंधाना आदि कर्म्म सब नष्ट होजाता है ८ झूठ कहनेवाले का न तो रूप रह जाय व न उसके सन्तति रहै, न उसके राज्यादि अधिकार रहैं फिर शुभगति उसकी कहां से हो ९ व जो पुरुष नेकी करनेवाले की नेकी नहीं मानता उसको कृतघ्न कहते हैं उसका यश कहां होसक्ता है, व उसको स्थान कहां मिल सक्ता व सुख भी उसे कहां है कृतघ्न विश्वास करने के योग्य नहीं इससे वह पापों से नहीं छूट सक्ता १० निर्द्धनी पापी नहीं जीता, व पापी कुटुम्ब का धारण कहां करसक्ता है, व पापी निश्चय है कि नाश को प्राप्त होजाता है क्योंकि उसने उपकार का नाश किया है ११ सो हम पापी हैं व कृतघ्न भी हैं व कृपण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

और झूठे भी हैं क्योंकि गुरु का कार्य करने को कहा अब नहीं करते १२ इससे हम कुछ उत्तम यत्न कर प्राण छोड़ देंगे क्योंकि आज तक हमने देवताओं से भी कभी कुछ नहीं मांगा तो मनुष्यों की कौन गणना है १३ व सब देवगण यज्ञादि कराने के समय हमको मानते हैं इससे अब हम देवताओं में श्रेष्ठ तीनों भुवनों के ईश्वर गतिमानों में श्रेष्ठ कृष्ण भगवान् की शरण को जायँगे १४ जिसमें सब भोग टिके हैं जिनके समान सुर असुर किसी में भोग नहीं है, इससे प्रणत हो अव्यय योगी कृष्णचन्द्र ही के दर्शन को जायँगे १५ ऐसा गालव ने कहा है कि उनके सखा विनता के पुत्र गरुड़जी वहां आये व दर्शन दे उनसे प्रिय करने की इच्छा से बोले ॥ १६ । १७ ॥

दो० इन्द्रानुज मम विभव हैं, विप्र सुनहु यह बात।
तवहित हम उनसन कहा, उन माना हरषात ॥ १ । १८ ॥
यासों आवहु चलहिं लै, चलहिं तुम्हें सुख पूर्व।
जलधिपार वह देश है, विलँब न करहु अपूर्व ॥ २ । १९ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि गालवचरिते सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०७ ॥

एकसौआठ का अध्याय।

दो० अष्टोत्तर शत में कहब, जिमि दिश पूर्व बखान।
गालव सन विनतातनय, कीन प्रवीन महान ॥ १ ॥

गरुड़जी बोले कि हे गालव! ज्ञान की योनि श्रीविष्णु भगवान् ने हमको आज्ञा दे दी है कि तुम गालव का अभीष्ट करो इससे बताओ प्रथम किस दिशा को देखने चलें १ हे गालव ! प्रथम पूर्वदिशा को चलें व दक्षिण को व पश्चिम को व उत्तर को बताइये २ जिस दिशा में सबलोक के प्रकाशक सूर्य प्रथम उदय होते हैं व सन्ध्यासमय साध्यगण जहां तप करते हैं ३ व जिस दिशा में पूर्व समय में बुद्धि जाती है जिससे यह सब जगत् व्याप्त है व जहां यज्ञ के आज्यभाग टिकते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हैं ४ जिन दोनों आज्य भागों के मध्य में खीर बनाय होम करने से सब दिशाओं में पहुँचता है व यही दिन का तथा देवयान का द्वार है ५ इसी दिशा में दक्ष की कन्या अदिति दनुकाष्ठादिकों ने पूर्व समय में प्रजाओं को उत्पन्न किया व इसी दिशा में कश्यपजी के देह से उत्पन्न सब प्रजा प्रथम बढ़ी हैं ६ व यही देवताओं की जड़ है व यहीं इन्द्र का अभिषेक हुआ है व यहीं इन्द्र ने व सब देवताओं ने भी तपस्या की है ७ इसी कारण से यह पूर्व दिशा कहाती है जिससे कि पूर्वकाल में देवताओं ने प्रथम इसी दिशा को अङ्गीकार किया है ८ इसी से इसको पूर्वजों की पूर्वदिशा कहते हैं इससे जो सुख की इच्छा करे तो प्रथम सब कार्य पूर्व ही दिशा की ओर मुखकर करै ९ व ब्रह्माजी ने इसी दिशा की ओर मुखकर वेद पहिले बनाया है, व सूर्यनारायण जी ने भी ब्रह्मवादियों से इसी दिशा में गायत्री कही है १० व यहीं सूर्य भगवान् ने यजुर्वेद याज्ञवल्क्यजी को दिया है व यहीं वरदान पाय देवतालोग यज्ञों में सोमनाम लता पीते हैं ११ व यहीं तृप्त होकर अग्नि लोग घृत दुग्ध जलादि को भोगते हैं व यहां पाताल को प्राप्त हो वरुणजी ने श्री पाई है १२ व इसी दिशा में पूर्वकाल में जब निमि के शाप से वशिष्ठजी का शरीर त्याग हुआ तो मित्रावरुण के यज्ञ में फिर कुम्भ में उत्पन्न हुए १३ व यहीं ओंकार के दशसहस्र मार्ग उत्पन्न हुए जिन मार्गों में मुनि लोग हवि भोजन करते व धूमपा अर्थात् धुआं पीनेवाले मुनि लोग धुआं पीते हैं १४ व जिन ॐकार के मार्गों में इन्द्रजी ने वराहादि सैकरों मृग वन में प्रोक्षित किये हैं व वे सब यज्ञों में देव गणों के भाग के अर्थ कल्पित हैं १५ व इसी दिशा में उदय हो शत्रु कृतघ्न मनुष्य व असुर जो कोई हों सबकी आयुर्बल सूर्य नारायण अल्प करते हैं १६ व यही स्वर्ग सुख व लोक का द्वार है व यही पूर्व दिशा का भाग है जो इच्छा हो तो प्रथम हम तुम भी इसी में प्रवेश करें ॥ १७ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो० हम जाके वर वचन महँ, स्थित हैं प्रिय त्यहिं काज।
कहहु तो गालव चलहिं नतु, कहें दिशापर साज॥ १। १८॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि गालवचरितेऽष्टोत्तर-
शततमोऽध्यायः॥ १०८॥

एकसौनव का अध्याय।

दो० यकसै नवयें महँ कहब, जिमि दक्षिण दिशकेर।
गरुड़ कीन वर्णन कहे, कारण जासु घनेर॥ १॥

गरुड़जी बोले कि, यह दिशा पूर्वकाल में सूर्यनारायण ने यज्ञ कराके अपने गुरु कश्यपजी को दक्षिणा दी है इससे यह दक्षिणदिशा कहलाती है १ इसी दिशा में तीनों लोक के पितर लोग टिके रहते हैं व यहीं उष्ण अन्न खीरादि भोजन करनेवाले पितरलोगों का निवास सुना जाता है २ व यहीं अर्य्यमादि पितरों के साथ तेरह विश्वे देव-गण सदा बसते हैं जोकि सब लोकों में पूजित होने के कारण तुल्य भाग पाने के अधिकारी हो गये हैं ३ यह धर्म्म का दूसरा द्वार कहा जाता है व यहीं त्रुटि लव से ले सब काल की गिनती होती है ४ व यहीं सब देवर्षि, पितृलोकर्षि व राजर्षि लोग निर्भय होकर सदा बसते हैं ५ व धर्म्म सत्य व कर्म्म सब यहीं कहा जाता है व कर्म्म करनेवालों की गति यहीं होती है ६ हे द्विजश्रेष्ठ! यह वह दिशा है जिसमें सब लोग प्राप्त होते हैं क्योंकि मरण समय में अन्धकार से सब आच्छा-दित हो जाते हैं इससे जितने मरते हैं सबको प्रथम इस दिशा में आना पड़ता है ७ व हे द्विजश्रेष्ठ! यहां सहस्रों लाखों राक्षस भरे परे हैं व वे सबका प्रतिकूल ही करने के लिये बनाये गये हैं परन्तु जिन्होंने भगवद्भजनादि से अपना मन अपने अधीन नहीं किया उन्हीं को वे राक्षस दिखाई देते हैं औरों को नहीं दिखाई देते ८ व यहीं मन्दरा-चल के कुञ्जों में व विप्रर्षियों के स्थानों में गन्धर्व्व लोग चित्त बुद्धि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हैं ४ जिन दोनों आज्य भागों के मध्य में खीर बनाय होम करने से सब दिशाओं में पहुँचता है व यही दिन का तथा देवयान का द्वार है ५ इसी दिशा में दक्ष की कन्या अदिति दनुकाष्ठादिकों ने पूर्व समय में प्रजाओं को उत्पन्न किया व इसी दिशा में कश्यपजी के देह से उत्पन्न सब प्रजा प्रथम बढ़ी हैं ६ व यही देवताओं की जड़ है व यहीं इन्द्र का अभिषेक हुआ है व यहीं इन्द्र ने व सब देवताओं ने भी तपस्या की है ७ इसी कारण से यह पूर्व दिशा कहाती है जिससे कि पूर्वकाल में देवताओं ने प्रथम इसी दिशा को अङ्गीकार किया है ८ इसी से इसको पूर्वजों की पूर्वदिशा कहते हैं इससे जो सुख की इच्छा करे तो प्रथम सब कार्य पूर्व ही दिशा की ओर मुखकर करै ९ व ब्रह्माजी ने इसी दिशा की ओर मुखकर वेद पहिले बनाया है, व सूर्यनारायण जी ने भी ब्रह्मवादियों से इसी दिशा में गायत्री कही है १० व यहीं सूर्य भगवान् ने यजुर्वेद याज्ञवल्क्यजी को दिया है व यहीं वरदान पाय देवतालोग यज्ञों में सोमनाम लता पीते हैं ११ व यहीं तृप्त होकर अग्नि लोग घृत दुग्ध जलादि को भोगते हैं व यहां पाताल को प्राप्त हो वरुणजी ने श्री पाई है १२ व इसी दिशा में पूर्वकाल में जब निमि के शाप से वशिष्ठजी का शरीर त्याग हुआ तो मित्रावरुण के यज्ञ में फिर कुम्भ में उत्पन्न हुए १३ व यहीं ओंकार के दशसहस्र मार्ग उत्पन्न हुए जिन मार्गों में मुनि लोग हवि भोजन करते व धूमपा अर्थात् धुआं पीनेवाले मुनि लोग धुआं पीते हैं १४ व जिन ॐकार के मार्गों में इन्द्रजी ने वराहादि सैकरों मृग वन में प्रोक्षित किये हैं व वे सब यज्ञों में देव गणों के भाग के अर्थ कल्पित हैं १५ व इसी दिशा में उदय हो शत्रु कृतघ्न मनुष्य व असुर जो कोई हों सबकी आयुर्बल सूर्य नारायण अल्प करते हैं १६ व यही स्वर्ग सुख व लोक का द्वार है व यही पूर्व दिशा का भाग है जो इच्छा हो तो प्रथम हम तुम भी इसी में प्रवेश करें ॥ १७ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो० हम जाके वर वचन महँ, स्थित हैं प्रिय त्यहिं काज ।
कहहु तो गालव चलहिं नतु, कहें दिशापर साज ॥ १ । १८॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि गालवचरितेऽष्टोत्तर-
शततमोऽध्यायः ॥ १०८॥

एकसौनव का अध्याय ।

दो० यकसै नवयें महँ कहब, जिमि दक्षिण दिशकेर ।
गरुड़ कीन वर्णन कहे, कारण जासु घनेर ॥ १ ॥

गरुड़जी बोले कि, यह दिशा पूर्वकाल में सूर्यनारायण ने यज्ञ कराके अपने गुरु कश्यपजी को दक्षिणा दी है इससे यह दक्षिणदिशा कहलाती है १ इसी दिशा में तीनों लोक के पितर लोग टिके रहते हैं व यहीं उष्ण अन्न खीरादि भोजन करनेवाले पितरलोगों का निवास सुना जाता है २ व यहीं अर्य्यमादि पितरों के साथ तेरह विश्वे देव-गण सदा बसते हैं जोकि सब लोकों में पूजित होने के कारण तुल्य भाग पाने के अधिकारी हो गये हैं ३ यह धर्म्म का दूसरा द्वार कहा जाता है व यहीं त्रुटि लव से ले सब काल की गिनती होती है ४ व यहीं सब देवर्षि, पितृलोकर्षि व राजर्षि लोग निर्भय होकर सदा बसते हैं ५ व धर्म्म सत्य व कर्म्म सब यहीं कहा जाता है व कर्म्म करनेवालों की गति यहीं होती है ६ हे द्विजश्रेष्ठ ! यह वह दिशा है जिसमें सब लोग प्राप्त होते हैं क्योंकि मरण समय में अन्धकार से सब आच्छा-दित हो जाते हैं इससे जितने मरते हैं सबको प्रथम इस दिशा में आना पड़ता है ७ व हे द्विजश्रेष्ठ ! यहां सहस्रों लाखों राक्षस भरे परे हैं व वे सबका प्रतिकूल ही करने के लिये बनाये गये हैं परन्तु जिन्होंने भगवद्भजनादि से अपना मन अपने अधीन नहीं किया उन्हीं को वे राक्षस दिखाई देते हैं औरों को नहीं दिखाई देते ८ व यहीं मन्दरा-चल के कुञ्जों में व विप्रर्षियों के स्थानों में गन्धर्व्व लोग चित्त बुद्धि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हरनेवाली पुरानी कथा गाते हैं ९ यहीं कथाओं से सामवेद गाते हुए सुनकर अपने को मरे हुए न जानकर राजा रैवत अपने स्थान को आये वहां अमात्य, पुत्र, स्त्री, बन्धुओं को मरे देख जान फिर वन को चले गये १० यहीं यवक्रीत के पुत्र सावर्णिमनु ने सूर्य्यरथ की वीथियों के वाहकों की मर्य्यादा बना दी है उस मर्य्यादा को सूर्य्य भी उल्लंघन नहीं कर सक्के ११ व यहीं पुलस्त्यजी के पौत्र महात्मा राक्षसों के राजा रावण ने तपकर देवताओं से मारे न जाने के लिये अमरता का वरदान पाया है १२ व यहीं अपने सदाचार से वृत्रासुर भी इन्द्रजी की शत्रुता को प्राप्त हुआ व यहीं सब प्राण पहुँच कर फिर प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान इन पांच संज्ञाओं को प्राप्त होते हैं १३ हे गालव ! पाप कर्म्म करनेवाले मनुष्य अपने पापों से पचते हैं व वैतरणी नाम नदी में परनेवाले मनुष्यों के लिये यहां वैतरणी नाम नदी बनाई है १४ यहीं जाय पुरुष नरक को प्राप्त होता है व इसी मार्ग्ग होकर स्वर्ग्ग को भी जाता है व यहीं कर्कायन को प्राप्त हो सूर्य्य आर्द्रा नक्षत्र में सुन्दर रस का जल वर्षाकाल में बरसाते हैं १५ व फिर जब यहां से उत्तर दिशा को चले जाते हैं तो फिर सूर्य्यनारायण हिम छोड़ने लगते हैं व हे गालव ! इसी दिशा में एक समय हमने भूखों के मारे चिन्तना की थी तो १६ आपस में युद्ध करते हुए दो बड़े भारी हाथी व कछुहा पाये थे व यहीं चक्रधनु नाम बड़े भारी ऋषि सूर्य्य से उत्पन्न हुए १७ जिनको लोग कपिलदेव कहते हैं जिन्होंने राजा सगर के पुत्रों को भक्षण कर लिया व यहीं शिव नाम वेदवादी ब्राह्मण लोग सिद्ध हुए हैं १८ व सब वेद पढ़ नाश रहित मोक्ष उन्होंने पाया व यहीं वासुकि नाग की पाली भोगवती नाम पुरी है १९ व उसकी रक्षा तक्षक नाग व ऐरावत नाग भी करता है व यहां मरण काल में बड़ा अँधेरा रहता है २० उस अँधेरे को न सूर्य्य मिटा सक्के हैं न अग्नि हे गालव ! यह भी मार्ग्ग तुम्हारे सेवा करने के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

योग्य है जो इसमें चलना अङ्गीकार हो तो हमसे कहो नहीं तो अब हमसे पश्चिम दिशा सुनो ॥ २१ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि नवाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०९ ॥

एकसौदश का अध्याय।

दो० यकसै दशवें महँ कहब, जिमि पश्चिम दिशिभाष।
वैनतेय बहु भाँति सों, सुनहु सुजन तजि माष ॥ १ ॥

गरुड़जी बोले कि, यह दिशा जल के स्वामी वरुण देवताको बहुत प्रिय है व सूर्य्यनारायण इसी दिशा में प्रतिष्ठित हो जाने पर फिर यहाँ के लोगों को नहीं दिखाई देते १ व यहीं सूर्य्य सन्ध्या के समय अपने किरणों का विसर्जन करते हैं इसी से यह दिशा पश्चिमा कहाती है २ व इस दिशा में जल जन्तुओं के राजा बनाय जल की रक्षा के लिये कश्यप भगवान् ने वरुणजी का अभिषेक किया ३ यहां वरुण के छवों रस पानकर चन्द्रमा तरुण हो जाते हैं इससे शुक्लपक्ष के आदि में अन्धकार को दूर कर देते हैं ४ यहां अच्छी तरह सन्नद्ध दैत्यों को पवनदेव ने विमुख कर दिया इससे प्रचण्ड पवन के लगने से बार २ श्वासें लेते हुए पीड़ित हुए इससे सब सो गये ५ यहां पर झुके हुए सूर्य्य को अस्त नाम पर्व्वत आड़ करता है इसी से पश्चिमा सन्ध्या आ जाती है ६ व इसी सन्ध्या ही के होने के कारण रात्रि हो जाती है तब लोगों को निद्रा आने लगती है वह जानों प्राणियों की आधी आयुर्बल हरने के लिये प्राप्त होती है ७ व इसी सन्ध्या में सोई हुई गर्भवती दिति के पेट के भीतर जाय इन्द्र ने उनको गर्भ रहित कर दिया इसी से ४९ पवन उत्पन्न हुए ८ व इसी दिशा में हिमवान् पर्व्वत का मूल मन्दराचल समुद्र में डूब गया है जिस हिमवान् के मूल का व समुद्र का अन्त सहस्रों वर्ष में भी नहीं मिल सका ९ यहां सुवर्णमय कमल युक्त सुवर्ण के सुमेरु पर्वत के समीपवर्ती समुद्र के तुल्य सरोवर में काम-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

धेनु दुग्ध चुआती है १० व यहीं समुद्र के मध्य में सूर्य चन्द्रमा को मारने की इच्छा से सूर्य ही के तुल्य प्रतापी राहु का कबन्ध दिखाई देता है ११ व यहां श्यामकेश युक्त सुवर्ण शिरोनाम मुनि का गाना सुनाई देता है पर उनका रूप नहीं दिखाई देता न उसका प्रमाण मिल सकता है १२ यहां हरिमेधा नाम मुनि की ध्वजवती नाम कुमारी सूर्य की आज्ञा से खड़े रहो २ ऐसा कहती आकाश में खड़ी रहती है १३ व यहां पवन, अग्नि, जल व आकाश, रात्रि का व दिन का दुःख स्पर्श छोड़ते हैं १४ यहां से फिर सूर्य की चाल तिरछी हो जाती है व यहां सूर्य का मण्डल अग्न्यादि चमकनेवाले पदार्थों में प्रवेशकर जाता है १५ जैसे चन्द्रमा २८ रात्रियों के पीछे उन्तीसईं रात्रि में सूर्य के सङ्ग रह अस्त होजाता फिर अलग होजाता ऐसे ही सब नक्षत्र सूर्य के योग से अस्त होजाते हैं पीछे निकल आते हैं १६ यहां नित्य बहती हुई नदियों से समुद्र पूर्ण होता है व यहां तीनलोक के जल समुद्र में टिकते हैं १७ यहां अग्नि के सखा पवन का स्थान है व मरीचि के पुत्र महर्षि कश्यपजी का स्थान यहीं है ॥ १८।१९ ॥

दो० यह हम पश्चिम दिशाकर, कहा मार्ग समझाय।
कहु गालव क्यहि दिशहि अब, चलहिं रुचे सुबताय ॥ १ । २० ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि दशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११० ॥

एकसौग्यारह का अध्याय।

दो० यकसै ग्यरहें महँ कहब, जिमि उत्तर व्याख्यान।
कीन गरुड़ गालव ऋषिहि, सुनत जासु कल्यान ॥ १ ॥

गरुड़जी बोले कि हे ब्राह्मणदेव ! जिससे कि यह दिशा पाप से उतारती है व जिससे कि इस दिशा के जानेवालों को कल्याण भोगना होता है व पाप से उतार जिससे लोगों को स्वर्ग पर चढ़ाती है इसीसे यह उत्तर दिशा कहाती है १ हे गालव ! उत्तर दिशा में जो निधियों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

का स्थान है उसी में होकर स्वर्ग का मार्ग है व यह मार्ग पश्चिम पूर्व दिशाओं के मध्य में है २ हे द्विजश्रेष्ठ ! इस सबसे अतिशय श्रेष्ठ उत्तर दिशा में न असौम्य स्वभाव मनुष्य बसते न अजितचित्त पुरुष बसते न अधर्मात्मा बसते हैं ३ किन्तु इस दिशा में नारायण कृष्ण विष्णु भगवान् व नरजी व ब्रह्माजी बदरिकाश्रम में सदा बसे रहते हैं ४ व इसी दिशा में हिमवान् पर्वत के पृष्ठ पर महेश्वर महादेवजी नित्य ही टिके रहते हैं व सदा पार्वती ही के सङ्ग रहते हैं प्रकाश उनका युगान्त के अग्नि के समान है ५ इन महादेवजी को नर नारायणजी को छोड़ और कोई मुनिगण व इन्द्र सहित देवतागण व यक्ष गन्धर्व सिद्धादि नहीं देखते ६ व यहां जिनके सहस्रचरण, सहस्रनेत्र, सहस्र-शिर, नाश रहित हैं वे एक श्रीविष्णुजी मायायुक्त शिव को देखते हैं ७ व इस दिशा में ब्राह्मणों के राजा बनाय चन्द्रमाजी अभिषेकित हुए हैं व इसी दिशा में आकाश से गिरती हुई गङ्गाजी को महादेवजी ने अपनी जटा में आड़ लिया फिर पृथ्वी तलपर छोड़ दिया ८ तब से गङ्गाजी मानुषलोक में आईं व इसी दिशा में महादेवजी के पाने के लिये पार्वती देवी ने तप किया था ९ व यहां कामरोष पर्वत व पार्व्वती ये सब शोभित होते हैं व यहीं राक्षस, यक्ष, गन्धर्वों के १० स्वामी कुबेरजी किये गये हैं व उनका अभिषेक भी इसी दिशा में कैलास पर्वत पर हुआ है व यहीं कुबेरजी का चैत्ररथ नाम वन है व यहीं वैखानसों का आश्रम है ११ व यहीं मन्दाकिनी गङ्गा व मन्दराचल है व यहां सौगन्धिक नाम वन है जिसकी रक्षा राक्षस लोग करते हैं १२ व यहां हरी २ सुन्दर घास होती है व केला बहुत होते हैं व वृक्ष ऐसे यहां हैं जिनके भोजन से सन्तान होती है व यहां संयम करनेवाले यथेच्छाचारी सिद्धों के १३ काम भोगादि युक्त विमान घूमा करते हैं व यहीं वशिष्ठ कश्यपादि सप्तर्षि व वशिष्ठजी की स्त्री अरुन्धती रहती हैं १४ व यहीं स्वाती नक्षत्र रहता व यहीं उसका उदय भी होता व यहीं यज्ञ

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कर ब्रह्माजी ने ध्रुव को स्थापित किया है १५ व यहीं सब नक्षत्रगण व सूर्य चन्द्रमा नित्य भ्रमण करते हैं व हे द्विजसत्तम! यहीं धामानाम महात्मा ब्राह्मणलोग गङ्गाद्वार की रक्षा करते हैं व वे लोग बड़े सत्यवादी हैं न तो उनकी मूर्त्ति जानी जाती है न कुछ आकृति न उनका किया हुआ तपही कुछ दिखाई देता है १६ । १७ व हे गालव! यहां यज्ञ में यथेच्छ भोजन करने के लिये पात्र भी नहीं दिखाई देते न उन लोगों का आना जाना ही स्थूल दृष्टिवाले पुरुषों को दिखाई देता है व उस हिम स्थान से परे कोई नर वहां नहीं दिखाई देता १८ क्योंकि वहां जाने से झट मारे शीत के प्राणी मरकर गल जाते हैं इससे आज तक उन धामा नाम ब्राह्मणों के सिवाय और कोई नहीं गया १९ या नारायण देव व नरजी वहां को गये हैं क्योंकि वे तो नाश रहित होने के कारण कभी नष्ट होतेही नहीं व यहीं कुबेरजीका कैलासनाम स्थान है २० व यहीं विद्युत्प्रभा नाम दश अप्सरा उत्पन्न हुई हैं व यहीं वामनजी का विष्णुपदनाम स्थान है २१ जब बलि के छलने के लिये उन्होंने तीनों लोकों को नापा था तब इसी उत्तर दिशा में वह स्थान बन गया है व इसी उत्तर दिशा में राजा मरुत्त ने महायज्ञ किया है २४ व उनके यज्ञ करने का स्थान उशीर बीजस्थान है जहां कि सोने का तड़ाग बना है व वह स्थान जीमूतनाम विप्रर्षि के समीप विद्यमान है २३ उसका कनकाकर भी नाम है यह हिमवान् पर्व्वत पर बहुत पुण्य स्थान गिना जाता है व ब्राह्मण लोगों में जो कुछ बहुत धन दिखाई देता है २४ वह उन्हीं जीमूत ब्राह्मण ही का अङ्गीकार किया है इसीसे जैमूत धन कहाता है व यहां नित्य ही दिशाओं के रक्षक ब्राह्मण श्रेष्ठ लोग सन्ध्या समय व प्रातःकाल २५ किसका कौन कार्य्य है यह सबसे पुकार २ कहा करते हैं हे द्विजश्रेष्ठ! इसतरह इन गुणों से व अन्य गुणों से भी यह दिशा उत्तर कहाती है २६ जिससे इसका उत्तर नाम है इससे सब कर्म्मों के विषय में यह उत्तरा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अर्थात् उत्कृष्टतर हैं हे तात! ये विस्तारपूर्वक तुम से क्रम से चारों दिशा हमने बताईं अब बताइये आप किस दिशा को चलना चाहते हैं हम तुमको सब दिशा दिखाने को उद्यत हैं व सब पृथ्वीभर दिखाने को उद्यत हैं इससे हमारे ऊपर चढ़ो ॥ २७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि गालवचरित एकादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १११ ॥

एकसौ बारह का अध्याय।

दो० यकसै बरहैं महँ कहब, जिमि गालव विनतेय।
पूर्वदिशहिगे अति श्रमित, भे गालव सुख हेय ॥ १ ॥

पूर्व अध्याय की कथा सुन गालव जी गरुड़ से बोले कि हे गरुड़, भुजगेन्द्रनाशन, सुपर्ण, विनतातनय, तार्क्ष्य! जहां यज्ञ के आज्यभागाख्य स्थान हैं पूर्व मार्ग होकर १ प्रथम हम को पूर्व ही दिशा में ले चलो जिसका वर्णन तुमने सबसे पहिले किया है क्योंकि इस दिशा में तुमने देवताओं की सान्निध्य बताई है २ व यहां सत्य धर्म्म तुमने अच्छी तरह बताया है वहां चल हम सब देवताओं से मिला चाहते हैं क्योंकि बार बार हम सब देवताओं के दर्शन किया चाहते हैं ३ नारद जी बोले कि, यह सुन गरुड़ गालव ब्राह्मण देव से बोले कि अच्छा हमारे ऊपर चढ़ो तब गालव मुनि गरुड़ के ऊपर चढ़े व उनसे बोले ४ कि हे गरुड़! उड़ने में तो तुम्हारा रूप प्रातःकाल के सूर्य्यनारायण ही के समान प्रकाशित होता है ५ व तुम्हारी चाल ऐसे वेग से होती है उसके कारण जिन पीछे वाले वृक्षों में तुम्हारे पंखों की पवन लगती है जानों वे उखड़े हुए पीछे पीछे चले ही आते हैं इससे तुम्हारी चाल ही के संग दिखाई देते हैं ६ व हे गरुड़! समुद्र पहाड़ वनादि सहित पृथ्वी को तुम पक्षों के पवन से खींचते ही से विदित होते हो ७ व तुम्हारे पक्षों के पवन से प्रेरित मछली सर्प्प, नाकादि सहित जल जानों आकाश ही में आरोपित होता है ८

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व एक ही से रूप मुखवाले मत्स्य तथा तिमि व तिमिंगिल नाम मछलियों को व मनुष्य के मुख के आकार के मुखवाले सर्प्पों को उन्मथित ही से देखते हैं ९ व समुद्र के शब्दों से हमारे कान ऐसे बहिरे होगये हैं कि हम कुछ न सुनते हैं न कुछ देखते हैं न अपने प्रयोजन की सुधि हमको आती है १० इस ब्रह्मवध का स्मरण करते हुए आप धीरे धीरे चलैं क्योंकि अब हमको न सूर्य्य दिखाई देते हैं न दिशा जान परती न आकाश दिखाई देता है ११ खाली अन्धकार ही दिखाई देता है शरीर उसीसे लक्षित करते हैं व तुम्हारे नेत्रखानि से उत्पन्न उत्तम मणियों के समान चमकते दीखते हैं १२ व शरीर तो न हम तुम्हाराही देखते न अपना ही देखते हैं, पैरपैर पर शरीर से अग्नि उठता दिखाई देता है १३ इससे हमको मन्द कर वह हमारे नेत्र बन्द किये देता है, इससे हे गरुड़जी ! अब बड़े वेग से न चलो १४ हे पन्नगाशन ! चलने में अब हमारा कुछ प्रयोजन नहीं है इससे लौट चलिये हम आपका वेग नहीं सह सक्के १५ व जो गुरुजी को हमने चन्द्रमा के समान उजले व एक कान के काले आठसौ घोड़े देने को कहे हैं १६ उनसे उऋण होने का मार्ग्ग अब हम नहीं देखते, इसीसे यह प्राणत्याग होने का मार्ग हमको दिखाई देता है १७ न तो हमारे कुछ धन है न हमारा मित्र ही कोई धनवान् है, व न बहुत धन से भी यह ऋण छूट सक्का है क्योंकि आठसौ श्यामकर्ण घोड़े कोई कितना भी धन खर्च करे तो भी कहां पा सक्का है १८ नारद जी दुर्य्योधन से बोले कि ॥

दो० इमि बहुविधि अति दीन वच, कह गालव उरगारि ।
तब बोले हँसि चलत इव, द्विज सों कहत पुकारि ॥१।१९॥
नहिं द्विज हौ अति बुध यही, सों चाहत मर जान ।
मृत्यु न होत अकाल महँ, वह ईश्वर भगवान ॥२।२०॥
प्रथमहिं हमसन किमिनहीं, कह्यहु विप्र तुम येहु ।
यहँ उपाय यक महतहै, जाहि मिटै यह भेहु ॥ ३।२१ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सागरढिग यक ऋषभ अस, नाम अहै गिरिराज।
तहँ थँभकरि भोजन बहुरि, चलब करब तवकाज ॥ ४ । २२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्वादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११२ ॥

एकसौतेरह का अध्याय।

दो० यकसै त्यरहें महँ कहब, जिमिगालव भुजगारि।
भोजनकरिऋषभाचले, कौशिक पहँ पगधारि ॥ १ ॥

नारदजी बोले कि, यह कह सुन गरुड़ व गालव दोनों ने ऋषभ पर्व्वत पर उतर महातपस्विनी शाण्डिली नाम ब्राह्मणी को वहां देखा १ व गरुड़ गालव दोनों प्रणाम पूजा करके खड़ेहोगये तब उस तपस्विनी ने आगतस्वागत पूछ आसन बताया उसपर दोनों बैठगये २ व बलि-मन्त्र से बढ़ायाहुआ बनाबनाया अन्न उसने दिया भोजनकर तृप्त हो दोनों भूमिपर लेट सोरहे ३ एकमुहूर्त्तभरके पीछे चलने की इच्छा से गरुड़ जागे, देखा तो अपने सब पंख व अंग भ्रष्ट होगये थे ४ केवल मुख पैर रहगये और मांस के पिंड के समान सब अंग होगये गालव ने उनकी वह दशा देख उदासीन हो गरुड़ से पूँछा ५ कि आपने यहां आने से यह कौन फल पाया, अब यहां हम तुम कितने समय तक रहेंगे ६ तुमने प्रत्यक्ष में तो कुछ पाप कियाही नहीं पर मन से कौन धर्म्मदूषण पाप किया इसमें आपका थोड़ा धर्म्मातिक्रमण न होगा बहुतही कुछ मानसी पाप किया है जिससे तुरन्त ऐसी दशा हुई ७ गरुड़ बोले हे ब्राह्मणदेव! हमने अपने मन में यह विचारा था कि इस सिद्ध तपस्विनी को यहां से वहां उठा ले चलें जहां ब्रह्माजी रहते हैं, व जहां महादेव व सनातन भगवान् श्रीविष्णुजी रहते हैं व जहां धर्म्म व यज्ञ हैं वहीं यह तपस्विनी भी चलके बसे यहां वन में क्या परी रहे ८। ९ इतना गालव से कह फिर तपस्विनी से बोले सो अब प्रणामकर हम आपसे यह माँगते हैं कि हमने आपके प्रिय

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करने की इच्छा से यह विचारा था कि तुम बेचारी अकेली यहां क्यों परी रहो इससे तुम्हें वहां पहुँचादें १० पर हमने तो आपके मान के लिये ऐसा चाहा था पर उसको आपने बनाय अप्रिय समझा अब चाहे हमने अच्छा किया व खराब किया अपने माहात्म्य से आप क्षमा करें ११ यह सुन वह तपस्विनी गरुड़ व गालव दोनों से सन्तुष्ट होकर बोली कि हे सुपर्ण! तुम्हारे अच्छे पक्ष थे अब विना पक्ष के होने से न डरो व सन्देह छोड़ो १२ हे वत्स! तुमने मन से हमारी निन्दा की थीं व निन्दा को हम सह नहीं सक्तीं, इससे जो पापी हमारी निन्दा करता है वह लोक से भ्रष्ट हो जाता है १३ यद्यपि हम सब लक्षणों से हीन हैं व निन्दा करने के योग्य हैं पर तो भी हमने आचार ऐसा ग्रहण किया है जिससे हमको यह सिद्धि मिली है कि जो तुम्हारी निन्दा करे वह लोक से भ्रष्ट हो जाय॥ १४ ॥ क्योंकि--

दो० धर्म्म फलत आचार सों, धनहुँ फलत आचार।
आचारहि सों श्रीमिलत, हनत अचार कुकार १। १५
तासों खगपति जाहु अब, जो वाञ्छित मग होय।
हम तव निन्दा योग्यनहिं, निन्दित तिय कइ कोय २। १६
पुनि ह्वैहहु बलवीर्य्ययुत, जिमि तुम पूरबकाल।
यह कहतेही तासु पंख, सबलभये सुखचाल ३। १७
शाण्डिलि आज्ञापाय द्वौ, लौटे गालव पक्षि।
नहिं पायहु तादृश तुरग, देख्यहु जहँलग अक्षि ४। १८
लखिगालवकहँ मार्ग्गमहँ, कह कौशिक नागारि।
वचनरचनमहँअतिनिपुण, गाधितनय गुणधारि ५। १९
हे द्विज! ममहित देनकहँ, जो तुम कीन करार।
तासु देनकर काल यह, वा जो करहु विचार ६। २०
जिमि हम परखे दिन बहुत, तिमि पुनि परखब विप्र।
जिमि पैहहु तुम तुरगवर, सुनहु यत्न सो क्षिप्र ७। २१

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अतिदुःखित अरुदीनमुनि, गालवसन खगराज।
बोले हम जाना सकल, जो कौशिकमनसाज ८। २२
तासों आवहु विप्रवर, सम्मत करहिं विचार।
बिनसब गुरुधन के दिये, नहिं होइहि निस्तार॥ ६। २३॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्रयोदशाधिकशततमोऽध्यायः॥ ११३॥

एकसौचौदह का अध्याय।

दो० यकसै चौदहवें महँ, कहब यथा खगराज।
अरु गालव सम्मति किये, गये ययाति समाज॥ १॥

नारद मुनि बोले कि उड़नेवालों में श्रेष्ठ गरुड़जी अतिदीन गालव से बोले कि हिरण्य अग्नि के सन्तप्त करने से व उस समय पवन की प्रेरणा से अग्नि से उत्पन्न व पवन से बढ़ाया हुआ समझा जाता है व जिससे कि सब जगत् हिरण्यमय अर्थात् सुवर्णयुक्त है इसी से सुवर्ण को हिरण्य कहते हैं १ व जिससे कि सब कहीं धरा जाता व धराया जाता इससे धन कहाता है सो यह धन बहुत दिनों से तीनों लोकों में टिका है २ सो वह धन जब शुक्रवार को पूर्वाभाद्रपदा व उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र होते हैं उनमें अग्नि बार उसकी पूजाकर धनीलोग इकट्ठा करते हैं व अग्नि भी इस योग में कुबेर के यहां से धन लाय मनुष्यों को देते हैं उसको यज्ञादि कर भूमि में गाड़ना चाहिये, व जो इस रीति से उसकी रक्षा नहीं की जाती तो वह सब धन फिर कुबेर के समीप चला जाता है ३ व फिर पूर्वाफाल्गुनी व उत्तराफाल्गुनी दोनों नक्षत्रों में कुबेरजी उस धन की रक्षा करते हैं इससे जो इन दोनों नक्षत्रों व कुबेर की प्रार्थना करते हैं उन्हीं को धन मिलता है औरों को नहीं, बस इसी उपाय से लोग धन पाते हैं व उपाय न करने से नहीं पाते ४ व विनाधन पाये तुमको घोड़े किसी प्रकार नहीं मिल सकते ५ इससे अब तुम किसी अच्छे वंश के राजर्षि के पास चल

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उससे प्रथम धन मांगो जो कि हमारी तुम्हारी यांचा को पूर्ण करे उसको कुछ भी कठिनता न होगी क्योंकि राजाओं के तो धन रहता ही है ६ आजकल जो सोमवंशी राजा है वह हमारा सखा है इससे आवो हम तुम उसी के यहां चलें व मांगें क्योंकि पृथ्वी में उसी के विभव है ७ उस राजा का ययाति तो नाम है व नहुष का पुत्र है व बड़ा सत्यविक्रम राजा है उससे जब तुम मांगोगे व हम भी कहेंगे तो वह अवश्य धन देगा इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ८ हम जानते हैं आगे तो इसके कुबेर ही के समान ऐश्वर्य था पर अब भी होहीगा, इससे हे विद्वन् ! गुरु का धन इस प्रकार से लेकर देना चाहिये ९ इस प्रकार कहते व जो कुछ राजा के सामने जाय कहने के योग्य था उसकी चिन्तना करते करते प्रतिष्ठानपुर में जाय राजा ययातिजी के समीप पहुँचे १० राजा ने अर्घ्यपाद्याचमनीयादि से सत्कार कर आने के हेतु पूछा तो गरुड़जी बोले ११ कि हे राजन्! ये महातपस्वी गालवजी हमारे सखा हैं इन्होंने विश्वामित्रजी की सेवाकर हजारों वर्षतक वेदादि पढ़ा १२ जब इन्होंने उनकी बड़ी सेवा की तो प्रसन्न हो उन्होंने इनसे कहा अब तुम जाव हम तुम्हारे ऊपर बहुत प्रसन्न हैं तब इन्होंने कहा हमने आप से विद्या पढ़ी है इससे गुरुदक्षिणा देंगे जो चाहिये मांगिये १३ उन्हों ने कई बार कहा हम तुम्हारी सेवा ही से प्रसन्न हैं गुरुदक्षिणा की आवश्यकता नहीं पर जब इन्होंने बार बार हठ किया कि जरूर माँगो तो उनको कुछ क्रोध आ गया इससे उन्होंने कहा अच्छा जो तुम्हारे गुरुदक्षिणा देने को बहुत ही धन है तो १४ जिन घोड़ों का एक कान तो श्याम हो और सब अङ्ग श्वेतरङ्ग हो व अच्छी कुलीन जाति में उत्पन्न हों व चन्द्रमा की ऐसी दीप्ति हो ऐसे आठसौ घोड़े गुरुदक्षिणा में दो १५ तपोधन विश्वामित्रजी ने यही कहा कि गालव बस यही हमारी गुरुदक्षिणा है १६ सो ये ब्राह्मणश्रेष्ठ बड़े भारी शोक से सन्तप्त हुए क्योंकि ऐसी गुरुदक्षिणा देने में असमर्थ हैं इससे आपके शरण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

में आये हैं १७ सो ये आपसे भिक्षा पाय निर्व्यथित हो गुरुजी को दक्षिणा दे फिर बड़ा भारी तप करेंगे १८ उस तपस्या की पुण्य आप को भी देंगे यद्यपि आप अपनी ही तपस्या से पूर्ण हैं पर ये अपनी तपस्या से भी पूर्ण करेंगे ॥ १९ ॥

दो० होत तुरगमहँ जितक कच, उतने लोक महान।
दाता पावत है यही, है याको परमान ॥ १ । २० ॥
दानपात्र ये विप्रवर, दातृपात्र नृप आप।
यह सँयोग इमि सोहई, जिमि दरमहँ पय थाप ॥ २ । २१ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुर्दशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११४ ॥

एकसौपन्द्रह का अध्याय।

दो० यकसै पन्द्रहवें महैं, कहब ययाति महीप।
धनाभावसों दीन जिमि, सुतामुनिहिकुलदीप ॥ १ ॥

नारदजी बोले कि, जब गरुड़ ने ऐसे सत्य व उत्तम वचन कहे तो विचारकर व फिर निश्चयकर एकाग्र चित्त हो सहस्रों यज्ञों के करनेवाले व दातादान के पति सबके प्रभु व काशी के ईश राजा ययातिजी बोले १।२ राजा ने देखा कि एक तो प्रियसखा गरुड़जी आये हैं फिर ब्राह्मणों में श्रेष्ठ गालवजी याचक जो कि सब तप करने के उदाहरण व फिर भिक्षा भी बड़ी बड़ाई की माँगी है ३ फिर सब सूर्य्यवंशीय राजाओं को छोड़ हमारे ही पास ये दोनों आये हैं इसका भी विचारकर ४ कहा गरुड़जी आज हमारा जन्म सफल हुआ व आज हमारे कुल को आपने तार दिया व आज इस देश को आय तारा ५ पर हे सखे! हम आपसे एक बात कहा चाहते हैं कि जैसा हमको आप जानते हैं अब हम वैसे धनवान् नहीं हैं प्रथम थे पर अब तो हमारा सब धन क्षीण हो गया है ६ व तुम्हारा आगमन भी हम निष्फल नहीं करसके व न इन विप्रर्षिजी की आशाही विफल करना चाहते हैं ७ इससे वह वस्तु

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

देंगे जिससे यह कार्य्य सिद्ध हो जाय ८ क्योंकि जिसके द्वार पर आय अतिथि निराश हो लौट जाता उसके कुल का नाश कर देता है इससे हे गरुड़ ! इससे अधिक पापी कोई नहीं जिसके यहां से अतिथि विमुख हो जाय ९ व उसने तो आय बड़ी आशा से माँगा व उसने उसकी आशा का नाश कर कह दिया कि हमारे पास कुछ हई नहीं है तो जिसकी आशा हत हो गई व है वह बड़ा प्रतिष्ठित तो जानों तुरन्त ही मृतक हो गया १० व फिर वह जिसने उसका हित नहीं किया उसके पुत्रपौत्रादिकों का नाश करता है इससे अब हमारी यह एक कन्या है जोकि चार वंशों का स्थापन करेगी ११ यह देवकन्याओं के ही समान है व सब धर्म्म बढ़ानेवाली है व देवता मनुष्य असुर सबों के धर्म्म को बढ़ा सक्ती है १२ इससे इसके रूप व गुण से सब देवता मनुष्य व दैत्यों ने इसे चाहा था पर किसी को दी नहीं गई गालवजी आप इसे ले जायँ इसके मोल में राजा लोग अपना राज्य भी दे देंगे फिर धन की कौन गणना है १३ व आठसौ श्यामकर्ण घोड़ों की कौन गिनती है इससे आप माधवीनाम यह हमारी कन्या ही ले जायँ १४ व हम यह वरदान माँगते हैं कि इस कन्या के जो पुत्र होंगे वे हमारे दौहित्र होंगे पुण्य कुछ हमको भी देते रहेंगे ऐसा सुन गरुड़ समेत गालवजी यह कह कि फिर आपके दर्शन करेंगे कन्या को लेकर चल दिये व गरुड़ ने जाना कि बस घोड़ों के मिलने का यह कन्या द्वार है १५ । १६ इससे गालव से गरुड़जी ने कहा कि भाई अब तो तुमको घोड़ों के मिलने की युक्ति लगी गई अब हम जाते हैं ऐसा पूछ बिदा हो गरुड़ तो अपने घर को गये व उनके जाने पर कन्या सहित गालवजी १७ राजाओं में अधिक दाम देने-वाले को विचारते हुये इधर उधर घूमने लगे विचारते २ उन्होंने विचारा कि हर्य्यश्वनाम इक्ष्वाकुवंशीय राजा आजकल बड़ा प्रतापी है उसके यहां जायँ १८ क्योंकि वह अयोध्या का राजा महावीर्य्य व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चतुरङ्ग सैन्ययुक्त है व कोष अन्न धन से भरापुरा है व ब्राह्मणों का बड़ा भक्त भी है १६ वह राजा पुत्र होने की इच्छा से बड़ा भारी तप कर रहा था व सब इन्द्रियों को उसने उनके विषयों से निवृत्त कर रक्खा था ऐसे हर्य्यश्व के पास जाय गालवजी बोले कि २० हे राजेन्द्र! यह हमारी कन्या पुत्रों से कुल के बढ़ानेवाली है इससे हे हर्य्यश्व! इसे अपनी भार्य्या बनाने के लिये दाम देकर हमसे मोल ले लो २१ इसका मोल तुमसे हम कहेंगे वह देकर तुम इसे ग्रहण कर लो॥ २२॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चदशाधिकशततमोऽध्यायः॥ ११५॥

एकसौ सोलह का अध्याय।

दो० यकसै स्वरहें महँ कहब, जिमि हर्य्यश्वहि दीन।
गालव मुनि कन्याबहुरि, द्विशत तुरग उनलीन॥ १॥

नारदजी बोले कि बहुत प्रकार राजा हर्य्यश्व सन्तान के लिये ऊर्ध्वश्वासें ले गालवजी से बोले कि १ ब्राह्मणदेव इस कन्या के दोनों हाथोंकी पीठ व दोनों चरणों की पीठ व कुचों का ऊपर व नितम्ब व नेत्रों के बीच ये ६ स्थान तो ऊंचे हैं व शरीर का चर्म्म केश, दाँत, हाथ व पैरों की अंगुलियां व अंगुलियों के जोड़ ये सात स्थान सूक्ष्म हैं व बोल सत्व व नाभी ये तीन स्थान गहिरे हैं व हथोरी नेत्रों की कोरें तालु जीभ व ओष्ठ इतने पाँच स्थान लाल हैं २ व बहुत से देवता दैत्य गन्धर्वों के देखने के योग्य है व बहुत लक्षणों से सम्पन्न है व इसके पुत्र बहुत होंगे ३ व यह चक्रवर्ती पुत्र के उत्पन्न करने में समर्थ है इससे आप हमारा विभव देख उसके अनुकूल इस कन्या का मोल कहो ४ गालवजी बोले कि बस हमको बहुत दाम तो चाहिये नहीं जिनके एक कान तो श्याम हों व सब अङ्ग चन्द्रमा की किरण के समान श्वेत हों व वे किसी अर्ब्बादि उत्तम देश के हों ऐसे आठसौ घोड़े हमें चाहिये ५ तब यह तुम्हारे पुत्रों के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उत्पन्न करनेवाली होगी जैसे अग्नियों के उत्पन्न करने के लिये अरणी-
नाम लकड़ी होती है ६ नारदजी बोले कि गालवजी का ऐसा वचन
सुन राजर्षि हर्य्यश्व काममोहित हो ब्रह्मर्षि गालव जी से बोले ७ कि
जैसे घोड़े आप बताते हैं वैसे दोसौ तो हमारे बंधे हैं और सहस्रों घोड़े
हैं उनमें ढूंढ़ लीजिये शायद और भी कुछ निकल आवें ८ इससे हम
एक ही पुत्र इसमें उत्पन्न करेंगे व दोसौ घोड़े देंगे आप इसमें हमारा
यह काम अङ्गीकार कर वर दें ९ इतना सुन वह कन्या गालवजी से
बोली कि हमको एक ब्रह्मवादी ब्राह्मण ने वरदान दिया है कि १०
लड़का होने के पीछे फिर तुम कन्या हो जावोगी इससे तुम राजा को
हमें दे दो व दोसौ घोड़े ले लो ११ इस तरह चार राजाओं को हमें
देना तुम्हारे आठसौ घोड़े पूरे हो जायँगे व हमारे चार जनों से चार
चक्रवर्ती प्रतापी पुत्र उत्पन्न हो जायँगे १२ बस सब बटोरकर अपने
गुरुजी को दे देना हमारी बुद्धि से तो इस तरह में तुम्हारा कार्य सिद्ध
हो जायगा फिर जैसा आप अच्छा मानते हों वैसा ही करो १३ जब
कन्या ने गालव मुनि से ऐसा कहा तो वे राजा हर्य्यश्वजी से यह
वचन बोले कि १४ हे हर्य्यश्व ! इस कन्या को तुम लो व तुम चौथाई
ही दाम देते हो व इसमें चार पुत्र हो सक्ते हैं इससे तुम एक पुत्र उत्पन्न
कर लो १५ राजा ने दोसौ श्यामकर्ण घोड़े दे गालव की बड़ाई कर
कन्या को ग्रहण कर उसे अपनी भार्य्या बनाय समय पर एक पुत्र
उत्पन्न किया १६ उस पुत्र का वसुमना नाम धरा क्योंकि वह आठों
वसुओं से वसुमत्तर हुआ इससे वसुओं के समान तेजस्वी राजा ने
ब्राह्मणादिकों को बहुत सा वसु दान किया १७ कुछ दिनों के पीछे
गालवजी फिर वहां आये व प्रसन्न मन राजा हर्य्यश्व से बोले १८ हे
राजन् ! सूर्य्यवत्प्रकाशित आपके पुत्र तो यह हुआ अब हमको और
राजा से भीख माँगने का काल आ गया है इससे कन्या हमें दे दो १९
राजा हर्य्यश्व भी बड़े सत्यवक्ता थे इससे अपने पौरुष पर टिक व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जाना कि दोसौ के सिवाय और घोड़ों का इकट्ठा होना बड़ा दुर्लभ है इससे माधवी को फिर गालवजी को दे दिया २० तब माधवी फिर राजश्री को छोड़ अपनी इच्छा से कुमारी कन्या होगई व गालवजी के पीछे २ चली २१ गालवजी ने राजा हर्य्यश्व से यह कहा कि तब तक हमारे ये दोसौ घोड़े अपने ही यहां रहने दो कन्या को सङ्ग ले राजा दिवोदास के यहां को चले गये ॥ २२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षोडशोत्तरशततमोऽध्यायः ॥ ११६ ॥

एकसौ सत्रह का अध्याय।

दो० यक सै सत्रहवें महैं, कहब यथा दिवदास।
राजा के सँग माधवी, करि गालव सुखवास ॥ १ ॥

गालव मुनि बोले कि काशीपुरी आदि का राजा महा वीर्यवान् जिसका दिवोदास नाम है वह राजा भीमसेन का पुत्र है १ हे भद्रे! अब उसके यहां चलते हैं धीरे २ चली आवो शोच न करो क्योंकि वह राजा बड़ा धर्म्मात्मा है व सत्य ही सदा बोलता है संयम में तत्पर रहता है २ नारदजी बोले कि गालव मुनि न्यायपूर्व्वक राजा दिवोदास के पास पहुँचे राजा ने बड़ा आदर सत्कार मुनि का किया तब गालवजी ने राजा से कहा राजा तुम्हारे पुत्र नहीं है इससे इस कन्या को अपनी भार्या बनाय इसमें पुत्र उत्पन्न कर लो ३ दिवोदास बोले कि ब्राह्मण देव हम इस वृत्तान्त को बहुत दिनों से सुन चुके हैं इससे बहुत कहने की कुछ आवश्यकता नहीं सुनते ही हमने भी उस अर्थ की कांक्षा की है ४ हम इसको बहुत समझते हैं जो कि तुम और राजाओं को छोड़ हमारे ही पास को आये हो इससे हम जानते हैं कि इस तुम्हारी कन्या में पुत्र जरूर ही होगा ५ हमारे भी राजा हर्य्यश्व ही के समान विभव है इससे हम भी दोही सौ घोड़े देंगे व एक पुत्र इस में उत्पन्न कर लेंगे जोकि हमारे पीछे राजा होगा ६ गालव ने अच्छा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कह राजा को कन्या दे दी व राजा ने वेदविधान से कन्या को ग्रहण किया ७ व उसके साथ राजा दिवोदास ऐसा विहार करने लगे जैसे प्रभावती के साथ सूर्य्य विहार करते हैं व स्वाहा के साथ जैसे अग्नि व जैसे इन्द्राणी के साथ इन्द्र ८ व जैसे रोहिणी के साथ चन्द्रमा व जैसे धूमोर्णा के सङ्ग यमराज व जैसे गौरी के सङ्ग वरुण व जैसे वृद्धि के सङ्ग कुबेर व जैसे लक्ष्मीजी के सङ्ग नारायणजी व जैसे गङ्गाजी के साथ समुद्र व जैसे रुद्राणी के साथ रुद्र व जैसे देवी के सङ्ग ब्रह्माजी ९ व जैसे अदृश्यन्ती के सङ्ग वशिष्ठ व जैसे अक्षमाला के सङ्ग वशिष्ठजी, वसुकन्या के सङ्ग च्यवन व सन्ध्या के सङ्ग जैसे पुलस्त्य १० । ११ व वैदर्भी के सङ्ग जैसे अगस्त्य व जैसे सावित्री के सङ्ग सत्यवान् व जैसे पुलोमा के सङ्ग भृगु व जैसे अदिति के सङ्ग कश्यपजी १२ व जैसे रेणुका के सङ्ग जमदग्नि व जैसे हैमवती के सङ्ग कौशिक व जैसे तारा के सङ्ग बृहस्पति व जैसे शतपर्वा के सङ्ग शुक्राचार्य १३ व जैसे पृथ्वी के सङ्ग राजा व जैसे उर्वशी के सङ्ग पुरूरवा व जैसे सत्यवती के सङ्ग ऋचीक व जैसे सरस्वती के सङ्ग मनु १४ व जैसे शकुन्तला के सङ्ग दुष्यन्त व धृति के सङ्ग जैसे धर्मराज व जैसे दमयन्ती के सङ्ग नल व जैसे सत्यवती के सङ्ग नारद १५ व जैसे जरत्कारु के सङ्ग जरत्कारु व जैसे प्रतीची के सङ्ग पुलस्त्य व जैसे मेनका के सङ्ग ऊष्मायु व रम्भा के सङ्ग जैसे तुम्बुरु १६ व जैसे शतशीर्षा के सङ्ग वासुकि व कुमारी के सङ्ग जैसे धनञ्जय १७ व जैसे जानकीजी के सङ्ग श्रीरामचन्द्रजी व जैसे रुक्मिणी के सङ्ग जनार्द्दन कृष्णचन्द्रजी वैसेही माधवी के सङ्ग विहार करते हुए राजा दिवोदास को बहुत समय बीता १८ माधवी ने प्रतर्द्दन नाम एक पुत्र उत्पन्न किया तब भगवान् गालवजी राजा दिवोदासजी के समीप आये १९ व समय तो आयही गया था इससे गालवजी बोले भी आप अब हमारी कन्या दें व जबतक हम कन्या के मोल के लिये यत्न करने को अन्यत्र जायँ तब तक हमारे घोड़े आप

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ही के यहा रहें हम फिर लेजायँगे २० व दिवोदास भी धर्मात्मा होने के कारण गालव के कहने पर माधवी को गालव को दे दिया ॥ २१ । २२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तदशोत्तरशततमोऽध्यायः ॥ ११७ ॥

एकसौअठारह का अध्याय।

दो० यकसै अट्ठरहें महँ, जिमि औशीनर भूप।
निकट गये कन्या लिये, गालवमन अनुरूप ॥ १ ॥

नारदजी बोले कि उसी तरह राजा दिवोदास की भी राज्यश्री को छोड़ वह माधवी फिर कन्या हो गई व अपनी सत्य प्रतिज्ञा के कारण गालवजी के पीछे पीछे चली १ व गालव भी उस कन्या को सङ्ग लिये अपने कार्य में मन लगाये राजा उशीनर को देखने के लिये भोज-नगर को गये २ व सत्यविक्रमी उस राजा के समीप जाय बोले कि यह कन्या तुम्हारे यहां दो पुत्र उत्पन्न करेगी दोनों बड़े भारी राजा होंगे ३ आप इस कन्या में चन्द्रमा व सूर्य्य के समान प्रकाशित दो पुत्र उत्पन्न कर अपने अर्थ को प्राप्त होंगे व मरणान्त में भी सुखी रहेंगे क्योंकि अपुत्र दोष जो आप में है वह जाता रहेगा ४ व इसके मोल में एक श्यामकर्ण व सर्वाङ्ग उजले ऐसे चारसौ घोड़े दीजिये बस हे सर्व-धर्मज्ञ! हम को और कुछ न चाहिये ५ गुरु के लिये हम को यह कर्म करना परा नहीं तो घोड़ों से हमारा कुछ प्रयोजन नहीं है इससे हे महाराज! यदि आप से होसके तो विना विचारे ही यह कार्य शीघ्र ही कीजिये ६ हे राजन्! आप के कोई पुत्र कन्या नहीं है इससे दो पुत्र अवश्य उत्पन्न कर लीजिये व अपने को तथा अपने पितरों को इस पुत्ररूप जहाज पर चढ़ाय भवसागर से तारिये ७ हे पार्थिव! जैसे बिन पुत्रवाले लोग स्वर्ग से गिराय नरक में डाले जाते हैं वैसे पुत्रवान् लोग स्वर्ग से नहीं गिराये जाते व न कभी घोर नरक ही को जाते हैं ८ इतना यह व और भी गालव का वचन सुन उशीनर राजा ने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

गालव को प्रत्युत्तर दिया ९ कि गालव जैसा आप ने कहा वह वचन हम ने सुना व यह भी जाना कि विधि बड़ा बलवान् है क्योंकि हमारा भी मन पुत्र उत्पन्न करने में तत्पर है १० पर क्या करें ब्राह्मण देव हमारे ऐसे घोड़े दोहीसौ हैं और और तरह के तो हज़ारों लाखों चरते हैं ११ इससे हे गालव ! इसमें हम भी एकही पुत्र उत्पन्न करेंगे व जिस मार्ग में हमारे पूर्वज गये हैं उसी मार्ग पर हम भी चलेंगे १२ हम और बहुत सा धन दे कहीं से दोसौ घोड़े और भी तुम्हें दिला देते व इसमें दो पुत्र उत्पन्न कर लेते परन्तु हमारे यहां और जितना कोष (खजाना) है सब राज्यवालों व पुरवालों की रक्षा के लिये है अपने भोग के लिये नहीं है इससे उसे अपने कार्य में नहीं लगा सक्के १३ व जो राजा परलोक के लिये जो धन है उसे काम में लगा देता है वह न धर्महो से युक्त होता न यशही से १४ इससे हम इसे ग्रहण करेंगे आप दीजिये पर यह देवताओं के गर्भ ही से उत्पन्न सी कुमारी हम को केवल एक ही पुत्र के उत्पन्न करने के लिये दीजिये व अपने दो सौ घोड़े लीजिये १५ इस प्रकार बहुत बार जब राजा ने कहा तो गालव ने कहा अच्छा इस कन्या को लो एक ही पुत्र उत्पन्न करो १६ इस प्रकार उशीनर राजा को कन्या दे गालव वन को चले गये व राजा उसको पाय उस के सङ्ग भोग विलास करने लगे जैसे लक्ष्मी पाय लोग भोगने लगते हैं १७ उसके सङ्ग नाना प्रकार के पर्व्वतों की कन्दराओं में व नदियों के झरनों के किनारे व पवन पर चलनेवाले विमानों पर व और भी भीतरवाले गुप्त मन्दिरों के भीतर १८ व विचित्र फुलवारियों में व वनों में उपवनों में व पाई बागों में व रमणीय धवरहरों पर व धवरहरों के ऊंचे ऊंचे शिखरों पर १९ इसके पीछे उस स्त्री में राजा उशीनर से प्रातः काल के सूर्य्य के समान प्रकाशित एक पुत्र उत्पन्न हुआ व वही राजाओं में उत्तम महाराज शिबि के नाम से प्रसिद्ध राजा हुआ ॥ २० ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो० तब गालव आये सुता, लैकै चले स्वदेश।
मार्ग्गबीच खगपति मिले, हँसि बोले विप्रेश॥ १।२१॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि गालवचरितेऽष्टादशाधिकशततमोऽध्यायः॥ ११८॥

एकसौ उन्नीस का अध्याय।

दो० यकसै उन्निसवें महैं, कहब यथा खगराज।
गालव विश्वामित्रकर, मेलकरायहु काज॥ १॥

नारदजी बोले कि गरुड़ गालव से हँसतेही से बोले कि बड़े भाग्य की बात है जो गालवजी तुम को कार्य्यसिद्ध हम देखते हैं १ गरुड़ के ऐसे वचन सुन गालव बोले भाई अभी सब कार्य्य कहाँ सिद्ध हुआ चौथाई तो बाकी ही परा है २ तब कहनेवालों में बड़े चतुर गरुड़ बोले कि अब तुम इतने के लिये प्रयत्न न करो क्योंकि अब तो थोड़ाही सा कार्य्य रह गया है वह भी सिद्ध होजायगा ३ क्योंकि पुरानी कथा है कि कान्यकुब्जदेश के राजा गाधि की सत्यवती नाम कन्या को ऋचीक मुनि ने अपने साथ विवाह करने को माँगी तब राजा गाधि ने कहा कि ४ हे भगवन्! हम अपनी कन्या का विवाह तब तुम्हारे सङ्ग करेंगे जब कि तुम इसके मोल में हम को जिन घोड़ों के एक कान तो श्याम हों व सब अङ्ग चन्द्रमा के समान उजले हों ऐसे एक हज़ार दो ५ इस बात को सुन बहुत अच्छा यह कह ऋचीकमुनि वरुणजी के यहां चले गये व उनके यहां से हज़ार घोड़े उसीप्रकार के माँग राजा गाधि को दे दिये ६ व राजा ने कन्या तो ऋचीक को दे दी व आपने पुण्डरीक नाम यज्ञकर हज़ारों घोड़े ब्राह्मणों को दक्षिणा में दे दिये उन्हीं ब्राह्मणों से इन राजाओं ने दो २ सौ घोड़े मोल लिये थे वही उनलोगों ने दो २ सौ तीनों ने तुमको दिये ७ व और भी जो चारसौ बाक़ी रहे उन्हें ब्राह्मण लोग लिये चले आते थे मार्ग्ग में इधर उधर लोगों ने छीन लिये इससे यत्रकुत्र होगये इकट्ठे न रहे ८ इससे गालव ऐसी वस्तु कोई भी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नहीं है जो न मिल सके अब चलो ये छः सौ घोड़े व दोसौ घोड़ों के स्थान में यह कन्या उन्हीं विश्वामित्रही को देदो ९ तो फिर तुम्हारा मोह जाता रहै व कृतकृत्य होजाव कोई खुटका न रहै १० यह बात सुन व अङ्गीकार कर छः सौ घोड़े व कन्या ले गरुड़ सहित गालव विश्वामित्रजी के समीप गये ११ व बोले कि हे भगवन्! आठसौ घोड़ों के लिये आपने आज्ञा दी थी सो उनमें छः सौ तो ये घोड़े लीजिये व बाकी रहे दोसौ सो उनके बदले में यह कन्या लीजिये १२ इसमें तीन राजर्षियों से तीन बड़े धार्म्मिक पुत्र उत्पन्न होचुके हैं चौथा सब पुरुषों में उत्तम पुत्र आप भी उत्पन्न करलीजिये १३ ऐसा करने से आपके आठोसौ घोड़े पूरे होजायेंगे व हम भी आप से उऋण हो सुखपूर्वक तप करेंगे १४ तब विश्वामित्रजी गरुड़ सहित गालव को व उस कन्या को देख यह वचन बोले कि १५ गालव पहिलेही यह कन्या तुम ने हमीं को क्यों न देदी कि हमारेही कुल के बढ़ानेवाले चार पुत्र होजाते १६ अच्छा अब एक पुत्र इसमें उत्पन्न कर लेने के लिये यह तुम्हारी कन्या हम ग्रहण करते हैं व ये छः सौ घोड़े भी हमारे आश्रम पर सदा चरा करेंगे १७ यह कह विश्वामित्रजी उसके सङ्ग भोग करने लगे कि जिससे समयपर उस माधवी के अष्टकनाम पुत्र उत्पन्न हुआ १८ जैसेही वह पुत्र उत्पन्न हुआ कि विश्वामित्रजी सब अर्त्थ धर्म्म जो कुछ था उसे दे फिर छओसौ घोड़े भी उसी को उन्हों ने देदिये १९ तब अष्टक पुत्र तो सोमपुर के समान प्रकाशित विश्वामित्रजी के पुर को आया व विश्वामित्रजी वह माधवी नाम कन्या फिर गालव को दे आप वन को तप करने चले गये २० व गालव भी गरुड़ के साथ गुरु की दक्षिणा दे व प्रसन्न हो उस कन्या से यह बोले कि २१ तुम से प्रथम जो पुत्र उत्पन्न हुआ वह तो दानपति हुआ दूसरा महाशूरवीर तीसरा सत्यधर्म्म में तत्पर व चौथा महायज्ञ करनेवाला २२ इससे हे कल्याणिनि! यहां आवो तुम ने अपने पुत्रों से अपने पिता को तारा व उन चारों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राजाओं को तारा जिनसे तुम में पुत्र हुए व हम को भी तारा कि गुरु से उऋण हुए ॥ २३ ॥

दो० गालव खगपति सन बिदा, ह्वै कन्या लै साथ।
ता पितु ढिग पहुँचाय वन, गे तहँ भये सनाथ॥ १ । २४ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि गालवचरितएकोनविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः॥ ११९॥

एकसौ बीस का अध्याय।

दो० यकसै बिसवें महँ कहब, जिमि ययाति स्वसुतार्थ।
कीन स्वयंवर परन उन, ग्रहण कीन वइ सार्थ ॥ १ ॥

नारदमुनि बोले कि, राजा ययाति ने जब अपनी कन्या फिर पाई तो उसका फिर स्वयंवर करना चाहा इस लिये जहां गङ्गा यमुना एक में मिली हैं वहां प्रयागराज में जाय स्वयंवर किया १ इसलिये उस कन्या के भाई पुरु व यदु दोनों माधवी के हाथ में फूलों की माला दे व उसे रथ पर चढ़ाय उस स्थान पर लाये २ वहां नाग, यक्ष, मनुष्य, गन्धर्व्व, मृग, पक्षी व सब और भी पर्वत वृक्ष वनों के रहनेवाले लोग सुन्दर रूप बनाय २ आये ३ व बड़े बड़े उत्तम पुरुषों के ईश्वर नाना देशों के राजा लोग व ऋषि ब्राह्मण लोग भी आये यहां तक कि वह स्थान सब पूर्ण होगया ४ जब वह माधवी कन्या उन सब राजादिकों को देखने लगी तो उसे कोई भी वर प्रसन्न न आया इससे सबों को छोड़ उसने वनवास लेना ही अङ्गीकार किया ५ इससे रथ से उतर अपने पिता आदि बन्धुओं के प्रणामकर वह ययातिजी की कन्या पुण्य वन में जाय तप करने लगी ६ वहां उसने इतने उपवास, नियम, संयम, दीक्षादि किये जिनसे उसके अङ्ग ऐसे हलुके होगये कि वह मृगों के सङ्ग फिरने लगी ७ व वैदूर्यमणि के समान हरी कोमल चिकनी कड़ुवी व मीठी घास मृगों के सङ्ग चरने लगी ८ व वन में नदियों का सरस पवित्र शीतल व विमल जल पीने लगी ९ व सिंह व्याघ्र युक्त

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दावाग्नि लगे हुए व निर्जन वनों में १० हरिणों के सङ्ग हरिणियों के समान घूमती हुई ब्रह्मचर्य कर्म को धारण किये उसने विविध प्रकार के धर्म किये ११ व राजा ययातिजी भी अपने पूर्वजों के समान सहस्रों वर्ष तक राज्यकर मृतक हुए १२ उनके पीछे पुरु व यदु बढ़ते हुए दो नरोत्तम वंश में महाप्रतापी रह गये उन्हीं दोनों ने परलोक में ययाति जी को स्थापित किया १३ हे राजन्! महाराज ययातिजी जब स्वर्ग को गये तो महर्षियों के ही समान थे इससे स्वर्ग में भी जो उत्तम उत्तम पदार्थ थे उन्हीं को भोगते १४ इस प्रकार हज़ारों वर्ष उनको वहां उत्तम भोग भोगते बीत गये व सब जहां बड़े धनवान् धर्मात्मा राजा बैठते थे वहीं ये भी बैठते रहते भोग करते थे १५ परन्तु इनको वहां ऐसा मूढ़ विज्ञान होगया कि जिससे इनका चित्त ऐसा विस्मय युक्त हुआ कि ये सब देवताओं मनुष्यों व राजर्षियों ब्रह्मर्षियों का अपमान करने लगे १६ तब बल के नाश करनेवाले इन्द्रदेवने इनके समाचार जाने व राजर्षि लोग इनको धिक्कार है धिक्कार है ऐसा कहने लगे १७ व ययाति को देख विचार होने लगा कि यह कौन है व किस राजा का पुत्र है व स्वर्ग को कैसे यह आया १८ व किस कर्म से यह सिद्ध हुआ व इसने कहां तप किया व कैसे यह स्वर्ग में जाना जाय व किस हेतु यह जानने के योग्य समझा जाय १९ इस प्रकार सब स्वर्गनिवासी लोग आपस में विचार करते हुए राजा ययाति को देख परस्पर पूछने लगे कि भाई तुम जानते हो यह कौन है २० जब सब देवताओं से पूछा गया व जितने राजा लोग स्वर्गवास करते थे उनसे पूछा गया कि कोई जानता है यह कौन है सबोंने कहा हम इनको नहीं जानते २१ जब सब लोगों का ज्ञान ऐसा आच्छादित होगया कि किसी ने भी न जाना तब एक मुहूर्त्त ही भर में राजा ययाति का सब पराक्रम जाता रहा ॥ २२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि ययातिमोहे विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२० ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौइक्कीस का अध्याय।

दो० यकसै इकीसवें महँ, कहब ययाति निपात।
जिमिभा स्वर्गहुसों बहुरि, जिमि तारिनि त्यहि नात॥

नारदमुनि बोले कि जब राजा का सब पराक्रम जाता रहा तो स्थान से चलायमान हुये व आसन से गिर परे व मन कँपने लगा शोकानल ने जलाने का प्रारम्भ कर दिया १ व जो फूलों की माला पहिने थे जो कि कभी न सूखती थी उसके सब फूल सूख गये सब विज्ञान भ्रष्ट हो गया मुकुट बहूँटा इत्यादि भूषण जो धारण किये थे सब अपने आप अङ्गों से अलग गिरे राजा का शरीर घूमने लगा व सब अङ्ग ढीले पड़ गये जानों नीचे को गिरे पड़ते थे वस्त्राभूषण जितने पहिने थे सब अङ्गों से अलग हो गये २ अब अपना शरीर तो राजा को न दिखाई दे व और लोगों को देखें कभी उनको भी न देखें यहां तक कि मन पहिले तो शून्य हो गया फिर क्या जानें कहां चला गया इससे मन से भी शून्य हो गये यहां तक कि पृथ्वी की ओर को गिरने लगे ३ तब राजा चिन्तना करने लगे कि हमने अपने मन से कौन ऐसा पाप किया जिससे हमारे सब धर्मों का नाश हो गया जिससे कि हम स्थान पर से चलायमान हुए ४ ययाति अपने मन में यह शोचते ही थे कि वहां के रहनेवाले राजा लोग व सिद्ध व अप्सराओं ने देखा कि ययाति अब बनाय निरालम्ब हो गये गिरनेही चाहते हैं ५ उसी बीच में एक पुरुष आया जोकि पुण्य क्षीण होनेपर पुरुषों को नीचे ढकेलता है वह इन्द्र की आज्ञा से ययाति से बोला कि ६ तुम मद से अतीव मतवाले हो गये हो मान के मारे तुम किसी को कुछ मानते ही नहीं हो इससे तुम्हारा स्वर्ग भ्रष्ट हो गया जाव तुम यहां के योग्य नहीं हो ७ तुम्हारा तेज अब बनाय जाता रहा इससे तुम दिखाई ही नहीं देते जाव गिरो यह राजा से बोला तब नहुष के पुत्र ययाति ने तीन बार कहा कि अच्छा हम

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

गिरेंगे ८ जब गिरने लगे तो चिन्ता की कि देखें अब कहां गिरते हैं उसी समय में राजा ने स्वर्ग्ग ही से देखा कि चार राजश्रेष्ठ नैमिषारण्य में टिके हैं ९ बस उनको देख उन्हीं चारों के मध्य में राजा आय गिरे, उन राजाओं में एक तो प्रतर्द्दन थे दूसरे वसुमना तीसरे उशीनर के पुत्र शिबि चौथे विश्वामित्र के पुत्र अष्टक १० ये सब वाजपेय यज्ञ से परमेश्वर को वहां तृप्त कराते थे व उन लोगों के यज्ञ का धूम स्वर्ग्ग के द्वार तक पहुँच गया था ११ उस धूम को सूंघते हुए ययाति पृथ्वी पर गिरे वह जो धुआं की पाँति पृथ्वी से स्वर्ग्ग तक बराबर लगी थी १२ जान परता था मानों यह धुआं की गङ्गा नदी है जो स्वर्ग्ग से पृथ्वी पर तक बराबर लगातार धारा से बहती है राजा उसी के सहारे पृथ्वी पर गिरे पर दैवयोग से वहीं गिरे जहां कि यज्ञ करते हुए चारों उन्हीं की कन्या माधवी के पुत्र ही विद्यमान थे १३ ये चारों महात्मा लोकपालों के समान थे व चारो राजसिंह अग्नि के तुल्य थे वरन राजसिंहों में महा अग्निरूप थे उन्हीं के बीच में गिरे १४ जब पुण्य क्षय होने पर राजर्षि ययाति वहां गिरे तो शोभा से प्रकाशित राजा से वे चारो राजा बोले कि आप कौन हैं व किसके बन्धु हैं देश के वा नगर के १५ व यक्ष हो व देव हो व गन्धर्व्व हो अथवा राक्षस, मनुष्य का सा तो आपका रूप है नहीं आप क्या चाहते हो जिसके लिये आये हो १६ तब ययाति बोले कि हम राजर्षि ययाति हैं हमारी पुण्य क्षीण हो गई है इससे स्वर्ग्ग से गिरे हैं जब हमने कहा गिरेंगे तब गिरने लगे इतने में आप लोगों को देखा इससे यहीं गिरे १७ तब सब राजा लोग बोले कि हे पुरुषश्रेष्ठ ! तुम्हारा यह गिरना सफल हो हम चारों जनों के यज्ञ का फल व सब धर्म आप लें १८ ययातिजी ने कहा कि हम दान लेना ही जिनके धन होता ब्राह्मण नहीं हैं हम तो क्षत्रिय हैं हमारी ऐसी बुद्धि नहीं है कि हम दूसरे की पुण्य का नाश करें १९ नारदजी बोले कि उसी समय मृगों का सा आचरण किये माधवी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उनकी माता आई उसे देख राजा लोगों ने प्रणाम कर यह कहा कि २० आपके आने का कौन कार्य्य है व आपकी कौन आज्ञा हम लोग करें हम सब तो आज्ञा पाने ही के योग्य हैं क्योंकि आप ही के पुत्र हैं २१ उन लोगों के वैसे वचन सुन माधवी परमानन्दित हो अपने पिता ययातिजी के निकट गई व जाय प्रणाम किया २२ व उन अपने पुत्रों का मस्तक छूकर वह माधवी तापसी बोली कि हे राजेन्द्र! ये चारो हमारे पुत्र हैं इससे आपके दौहित्र हैं कोई अनारी नहीं हैं २३ ये तुमको तारेंगे क्योंकि वेद में लिखा है कि दौहित्र मातामह को तारते हैं व हे राजन्! हम आपकी कन्या माधवी हैं तपस्या करने के लिये मृगों का सा आचरण किये हैं २४ हमने भी बहुत सा धर्म्म इकट्ठा किया है उससे भी आधा आप लें, क्योंकि सब पुरुष अपने सन्तान के फल के भागी होते हैं २५ इसी से सब अपने दौहित्रों की इच्छा करते जैसे आप इच्छा करते हैं, यह सुन वे राजा लोग अपनी माता के प्रणाम कर २६ व अभिवादन नमस्कार कर अपने मातामह से बड़े ऊंचे स्वर से व बड़े मीठे अनुपम शब्दों से बोले २७ व सब चाहते थे कि स्वर्ग्ग से गिरे हुए अपने मातामह को तारें, उसी बीच में गालवजी भी आये व राजा ययाति से बोले कि हमने जितनी तपस्या की है उसका अष्टमांश आपको देते हैं उससे फिर आप स्वर्ग्ग को अभी चले जाइये ॥ २८ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२१ ॥

एकसौबाइस का अध्याय।

दो० यकसै बाइसवें महँ, कहब ययाति महीप।
दौहित्रादिक पुण्यलहि, जिमिदिवगे कुलदीप ॥ १ ॥

नारदमुनि बोले कि जैसे ही उन सज्जनों ने ऐसा कहा है कि राजा ययातिजी पृथ्वी को विना छुये ही फिर स्वर्ग्ग को चले उस समय

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ययातिजी की दिव्य यात्रा हुई १ वैसे ही दिव्यमाला वस्त्र धारण किये व दिव्य ही भूषण पहिने दिव्य चन्दनादि लगाये राजा ययाति ने पैर से पृथ्वी न छुई २ पर थोड़ी ही दूर ऊपर खड़े रहे तब राजा हर्य्यश्वजी के पुत्र वसुमनाजी बड़े जोर से उच्चारण करते हुए राजा से बोले ये वसुमना दानपति के नाम से पृथ्वी पर ख्यात थे ३ कि हमने लोक में किसी वर्णवाले की आजतक निन्दा नहीं की उससे लोक में जो पुण्य व धर्म्म हमको मिला हो वह भी आपको देंगे उससे आप संयुक्त हों ४ व सदा दान ही हम दिया करते उससे जो फल हो व क्षमा करने का जो हमारा स्वभाव है उससे जो फल मिला हो व जो फल अग्न्याधान नाम वेद कर्म्म के करने से हमें मिला हो वह सब आपको मिले ५ उसके पीछे माधवी व दिवोदास के पुत्र प्रतर्द्दनजी बोले कि हमारी जैसे नित्य धर्म्म में प्रीति है व नित्य ही जैसे हम युद्ध करने में परायण हैं ६ व हमने लोक में जो क्षत्रिय के वंश से उत्पन्न यश पाया है व जो वीर शब्द का फल पाया है उस फल से आप संयुक्त हों ७ उसके पीछे माधवी व उशीनर राजा के पुत्र राजा शिबिजी मधुर वाणी से बोले कि जैसे कि हमने बालकों के दुलराने के समय में व स्त्रियों के सङ्ग हँसने में व श्यालादि गाली देनेवाले सम्बन्धियों के आगे ८ व प्राणादि के सङ्कट पड़ने पर व कहीं गिर पड़ने पर व जुआ आदि खेलने में भी कभी झूठ नहीं कहा उस पुण्य से आप स्वर्ग को जायँ ९ व जैसे हम प्राण राज्य काम के सुख छोड़ दें पर सत्य बोलना न छोड़ें उस सत्य से आप स्वर्ग को जायँ १० व जैसे हमारा सत्य से धर्म्म है व जैसे हमने सत्य से अग्नि को प्रसन्न किया है व जैसे हमारे सत्य से इन्द्र हमारे ऊपर प्रसन्न हुए हैं उस सत्य से आप स्वर्ग को जायँ ११ व विश्वामित्रजी के व माधवी के पुत्र अष्टक राजर्षि अनेक शत यज्ञ किये हुए राजा ययातिजी को पाय १२ बोले कि हमने सैकड़ों तो पुण्डरीक यज्ञ किये हैं व सैकड़ों ही गोमेध यज्ञ किये हैं व इसी प्रकार वाजपेय यज्ञ किये हैं इन

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सब यज्ञों का फल आप पावें १३ हमने यज्ञों के करने के समय में नतो रत्न धारण किये हैं दे ही दिये हैं व धन भी सिवाय दे डालने के अपने किसी काम में नहीं लगाया न और वस्त्र भूषणादि भी धारण किये दे ही दिये हैं इस सत्य से आप स्वर्ग को जायँ १४ इस प्रकार जैसे २ उनके दौहित्रों ने बार बार पुकार २ अपने दानपुण्यादि राजा को दिये वैसे २ राजा ययाति स्वर्ग को चले गये ॥ १५ ॥

दो० इमि सब राजन निजसुकृत, दैदै कहि कहि नीक।
दिव से भ्रष्ट ययाति कहँ, तारि कीन पुनि ठीक ॥ १ ।१६॥
यज्ञदान कृत धर्म्म सों, नृप दुहिता सुतचार।
मातामह कहँ तारिदिय, निज निज वंश उधार ॥ २ ।१७॥
पुनि बोले सब सुनहु नृप, राजधर्म्म गुण युक्त।
बहुरि सर्व गुण धर्म्म युत, हम सब हैं न विमुक्त ॥ ३ । १८॥
अरु सब तव दौहित्र हैं, देत सुकृत सब लोग।
यासों सुरपुर जाय अब, करहु भली विधिभोग ॥ ४ ।१९॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्वाविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२२ ॥

एकसौतेइस का अध्याय।

दो० यकसै तेइसवें महँ, कहब ययाति यथैव।
सुरपुर लहि विधि वचन सुनि, सुखसे बसे सदैव ॥ १ ॥

नारदजी बोले कि, राजा ययातिजी बहुत २ दक्षिणा दे २ यज्ञ करनेवाले अपनी कन्या के पुत्र महात्मा चार राजाओं के पुण्य से उन लोगों से बिदा हो स्वर्ग को चले गये १ व फिर ययातिजी के ऊपर देवताओं ने सुगन्धित पुष्पों की वर्षा की व पुण्यगन्ध युक्त पवन उनके अङ्गों में लगा २ व अपने दौहित्रों के फलों से जीतेहुए अचल स्थान पर विराजमान हुए व उस पर फिर अपने कर्म्मों से बढ़ते हुए परम शोभा से प्रकाशित हुए ३ व जैसेही स्वर्ग में पहुँचे कि समीप आय गन्धर्वगण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व अप्सरा गाने नाचने लगीं व प्रीति से सब स्वर्गवासियों ने नगाड़े बजाय २ इनको प्रसन्न किया ४ व देवता राजर्षि चारणों ने आय बड़ी स्तुति की व देवताओं ने उत्तम अर्घ्यपाद्याचमनीयादि से बड़ी पूजाकर अभिनन्दित किया ५ जब इस प्रकार ययातिजी ने स्वर्ग का फल फिर पाया तो ब्रह्माजी ने आय शान्त मन व सब शोकादिकों से निवृत्त ययातिजी को वचनों से हर्षित कराते ही से कहा ६ हे राजन् ! तुमने तप, यज्ञ, ज्ञान व दान इन चारपादों से युक्त व अहिंसा सत्य चोरी न करना व किसी के ऋणी न रहना इन चारपादों से युक्त धर्म्म बहुत इकट्ठा किया है, व स्वर्गलोक व मर्त्यलोक में तुम्हारी अक्षय कीर्त्ति फैली है ७ पर ऐसा होकर फिर तुमने अपने आप पुण्य नाश करने के लिये सब स्वर्गनिवासियों का चित्त अपने पापरूप अन्धकार से ऐसा आच्छादित किया ८ कि जिससे उन लोगों ने तुमको चीन्ह ही न पाया कि कौन हो इससे अज्ञात पुरुष तो स्वर्ग में रहने ही नहीं पाता तुम नीचे गिरादिये गये फिर तुम्हारे दौहित्रों ने प्रीति से तुमको तारा तो यहां आ गये ९ अपने अर्जित कर्म्मों से अचल निरन्तर रहनेवाले पुण्यरूप उत्तम निश्चय व नाशरहित स्थान को प्राप्त हुए १० इतना सुन ययातिजी बोले कि हे भगवन् ! हमारे कुछ संशय है उसे आप काटने के योग्य हैं व आपको छोड़ और किसी से हम पूछ भी नहीं सक्ते क्योंकि आप तो तीनों लोकों के पितामह ठहरे इससे आपसे सब कोई पूछ सक्ता है ११ वह यह है कि सहस्रों वर्ष तक धर्म ही से प्रजापालनकर हमने धर्म बढ़ाया व अनेक यज्ञ दान समूहों से हमने जो धर्म इकट्ठा किया १२ वह सब धर्म्म थोड़े ही समय में हमारा कैसे क्षीण हो गया ? कि जिससे हम स्वर्ग से पृथ्वी पर गिराये गये हे भगवन् ! आप अच्छी तरह जानते हैं कि हमने बहुत दिनों तक रहने के लिये बहुत से लोक जीते थे वे सब हमारे एकाएकी कैसे नष्ट हो गये १३ ब्रह्माजी इतना सुनकर बोले कि हे राजन् ! सहस्रों वर्ष

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तक धर्म्मपूर्वक प्रजापालन करने से जो धर्म्म तुमने इकट्ठा किया व अनेक यज्ञदान समूहों से जो फल इकट्ठा किया १४ वह सब तुम्हारा धर्म्म व फल इसी दोष से नष्ट हो गया जो कि तुमको बड़ा अभिमानी जान सर्व्व स्वर्गवासियों ने धिक्कारा जिससे कि तुम फिर नीचे गिराये गये १५ क्योंकि यह स्वर्ग्ग लोक निरन्तर बसने के लिये न तो मान करने से मिलता न बल से न जीवों की हिंसा करने से न विश्वासघात से न और लोगों को छल से वञ्चित करने से १६ इससे हे राजन्! अब यहां अधम उत्तम व मध्यम सब प्रकार के स्वर्ग्गवासी हैं पर तुम किसी का अपमान न करना क्योंकि जो मान से भस्म हो जाते हैं उन के समान पापी कोई किसी लोक में कहीं नहीं है १७ व आपका स्वर्ग से पतन होना व फिर स्वर्ग में आना जो कोई पुरुष कहेंगे वे विषम स्थान नरकादिकों में प्राप्त भी हो गये होंगे तो फिर तर जायँगे इसमें कुछ भी संशय नहीं है १८ नारदजी दुर्य्योधन से बोले कि आगे अभिमान करने से ययाति ने यह दोष पाया व हठ करने से गालव ने बड़ा भारी कष्ट पाया १९ इससे हित चाहनेवाले व हित ही की इच्छा किये सुहृदों के वचन अवश्य सुनने चाहिये व बार बार हठ तो कभी करना ही न चाहिये क्योंकि हठ करने से क्षय की उदय होती है २० इससे हे दुर्य्योधन ! तुम भी मान व क्रोध को छोड़ो व पाण्डवों के संग मेल कर लो क्रोध त्यागो ॥ २१ ॥

क्योंकि,

हरिगीतिका ॥ जो देत करतरु तपत आहुति करतनित शुभ ही करै।
नहिं होत ताकर नाश कबहूँ नहिं कबहुँ नीचे परै॥
शुभ पुण्य वा अघपुञ्ज जो करु करनहारो भोगई।
आन नहिं गहिलेत यासों पाप करनो शोगई॥१।२२॥
यह महाख्यान बखान उत्तम हित विगत रोषीजना।
बहु शस्त्र वेद पुराण जाननहार लोगन को भना॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उन देखि लोक विशेषि लेषि विचार निश्चय जी ठना।
यहि मानि है सुनि जानि है क्षितिपाइ है मनहीमना॥२।२३

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्रयोविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२३ ॥

एकसौचौबीस का अध्याय।

दो० यकसै चौबिसवें महँ, कहब यथा भगवान।
समझायहु दुर्य्योधनहि, कहि बहुनीति विधान ॥ १ ॥

नारदजी के वचन सुन दुर्य्योधन तो कुछ बोले नहीं पर धृतराष्ट्रजी बोले कि हे भगवन्, नारद! यह ऐसा ही है जैसा आप कहते हैं हम भी यही चाहते हैं पर क्या करें हम कुछ कर नहीं सके १ वैशम्पायन जी बोले कि नारदजी से ऐसा कह धृतराष्ट्रजी कृष्णचन्द्रजी से बोले कि हे केशवजी! आपने जो हमसे कहा सब स्वर्ग्ग में उपकारक व लोक में उपकारी व सब धर्मयुक्त व सब न्याययुक्त हैं २ परन्तु हे तात! हम अपने वश में नहीं हैं व न हमको जो किया जाता है प्रिय है इससे हे कृष्णचन्द्र! आप कृपाकर इस मूर्ख मन्द व शास्त्र से भिन्न चलनेवाले दुर्य्योधन को ३ समझाइये हे महाबाहो, कृष्णजी! यह साधुओं का कहा वचन नहीं सुनता ४ न गान्धारी अपनी माता के वचन सुनता है न महामतिमान् विदुरजी के वचन सुनता व और भी जो हित चाहनेवाले सुहृद्र लोग भीष्मपितामहादि हैं उनके भी नहीं सुनता ५ इससे अब आप अपने बूते इस पापी, अतिक्रूर, पाप चित्तवाले, अचेत, दुष्टात्मा, दुर्य्योधन को जोकि राजा बना बैठा है समझाइये ६ जो आप इसको समझावेंगे तो जानों सुहृदों का सब कार्य्य आपने किया यह सुन श्रीकृष्णचन्द्रजी ने दुर्य्योधन की ओर निहारा जोकि महा असहनशील व दुष्ट था ७ व सब धर्म्मअर्त्थ के निश्चय जाननेवाले भगवान् बड़ी मधुर वाणी से बोले हे कुरुसत्तम, दुर्य्योधन! हमारी यह बात चित्त लगाय सुनो ८ वह हमारी बात सपरिवार तुम्हारे शान्त होने के विषय

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

में है इससे हे महाप्राज्ञ! तुम्हारा जन्म बड़े कुल में है इस हमारे कहने को अच्छा समझो व करो ९ क्योंकि तुम अच्छीतरह वेदशास्त्र पढ़े लिखे चतुर हो व जितने अच्छे अच्छे गुण हैं सब तुम में विद्यमान हैं परन्तु जो लोग खराब कुलों में जन्मे हैं व दुरात्मा हैं व क्रूरस्वभाव निर्लज्ज हैं १० वे लोग ऐसा काम करते हैं जैसा कि तुम मानते हो हे तात! यह तुमको उचित नहीं है क्योंकि लोक में सज्जनों की प्रवृत्ति धर्म्मअर्थयुक्त दिखाई देती है ११ व असंज्जनों की इससे विपरीत दिखाई देती है परन्तु वह विपरीत प्रवृत्ति तुममें बार बार दिखाई देती है १२ इस धर्म्मअर्थ से विपरीत प्रवृत्ति में सर्वथा घोर अधर्म्म है जोकि सबके प्राणों का हरनेवाला महा भयङ्कर है व वह महा अशुभ है क्योंकि अकारण ऐसा किया जाता है वह किसी के सहने के मान का नहीं है हे भारत! १३ इससे जो तुम इस अनर्थ को छोड़ना चाहोगे तो अपना परम कल्याण करोगे व अपने भाई बन्धु भृत्य मित्रादिकों का भी कल्याण करोगे १४ व अधर्म्मयुक्त व अयश करनेवाले कर्म्म से भी छूटोगे वह यह है कि बड़े प्राज्ञ, व शूर, महा उत्साही, आत्मज्ञानी व बहुत पढ़े सुने १५ पाण्डवों से मिलाप करलो हे पुरुषर्षभ! यह बात धृतराष्ट्रजी को भी प्रिय है व सबको हित है १६ व भीष्मजी द्रोणाचार्य्यजी व महामति विदुर जी, कृपाचार्य्य, सोमदत्त, महाधीमान् राजा वाह्लिकजी को १७ अश्वत्थामा व विकर्ण व सञ्जय व विविंशति को व सब जातिबिरादरीवालों को व मित्रों को तो बहुत ही प्रिय है १८ इस तुम्हारे कौरवपाण्डव के मिलाप होने में सब जगत् भर का कल्याण है व तुम लज्जावान् हो व महाकुल में तुम्हारा जन्म है सकल शास्त्रवेद अच्छी तरह पढ़े हो व जानते हो व अक्रूरता तुम में विद्यमान है इससे हे तात! अपने पिताजी व माताजी के कहने पर टिको १९ हे भारत! लोग इसी को कल्याण की बात मानते हैं जोकि पिता सिखाता है क्योंकि सब लोग आपत्काल में भी पिता ही की आज्ञा व शिक्षा को स्मरण करते हैं २० सो हे तात! तुम्हारे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पिताजी को पाण्डवों के साथ सङ्गम होना रुचता है इससे हे तात! वह तुमको भी रुचे क्योंकि तुम्हारे पिता के अमात्यवर्ग भी इसी को प्रसन्न करते हैं २१ जो पुरुष सुहृदों का सिखाना सुन उसको नहीं मानता अन्त में वह उसको भस्म करता है जैसे कुत्सित वस्तु भोजन कर लेने पर पीछे से भोजन करनेवाले को जलाती है २२ व जो पुरुष अपने कल्याण की बात मोह से नहीं ग्रहण करता वह मन्द अर्थहीन हो पीछे पछिताता है २३ व जो अपने कल्याण की वार्त्ता प्रथम सुनता व फिर वही करता है व अपने मत को छोड़ देता वह लोक में सुख बढ़ाता है २४ व जो पुरुष धनादि की इच्छा किये हुए अपने मतलब की बात सुनकर उसको अनुचित नहीं समझता सदा प्रतिकूल ही सुनाही करता है वह शत्रुओं के वश में रहता है २५ व जो सज्जनों के मत को छोड़ असज्जनों के मत पर चलता है उसके सुहृद्र लोग भी बहुत ही शीघ्र उसके क्लेश में शोच करते हैं २६ व जो पुरुष मुख्य मन्त्रियों को छोड़ हीन अमात्यों की सेवा करता है वह घोर आपत् को पाता जिससे कभी उत्तीर्ण ही नहीं होता २७ व जो असज्जनों की ही सेवा करता व वृथाही आचरण करता अपने सुहृद्र सज्जनों की बात नहीं सुनता व शत्रुओं को अङ्गीकार करता अपने लोगों से वैर करता हे भारत! उसे पृथ्वी अपने आप छोड़ देती है २८ हे भरतर्षभ! सो तुम उन अपने भाई वीर पाण्डवों से विरोधकर अन्य लोगों से अपनी रक्षा चाहते हो जोकि अशिष्ट व असमर्थ व महामूढ़ हैं वे तुम्हारी क्या रक्षा करेंगे २९ तुमको छोड़ और पृथ्वी पर ऐसा कौन मनुष्य है जो इन्द्र के समान प्रतापी महारथ अपने ज्ञातिवालों का अतिक्रमण कर अपनी रक्षा औरों से चाहे ३० जन्मसमय से ले आज तक पाण्डवों का तुमने अपकारही किया परन्तु तो भी धर्म्मात्मा पाण्डव लोग तुम्हारे ऊपर कोप नहीं करते ३१ हे तात! तुम जन्म से ले आज तक मिथ्या ही उनको छल में ही डालते चले आये पर तो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भी वे लोग ऐसे यशस्वी महात्मा हैं कि तुम्हारे विषय में कुछ वैर नहीं करते बरन तुम्हारी ही शरण में रहना चाहते हैं ३२ इससे तुमको भी यही चाहिये कि अपने मुख्य भाईबन्धु पाण्डवों में वही भाव राखो जो वे तुममें रखते हैं प्राणप्रिय क्रोध के वशीभूत न होवो ३३ हे भरत-श्रेष्ठ ! पण्डित लोग जिस कार्य्य को करते हैं उसमें धर्म्म अर्त्थ व काम तीनों युक्त रहते हैं पर जब काम का होना असम्भव जानते हैं तो धर्म अर्थयुक्त तो करते ही हैं इन दोनों को तो कभी छोड़ते ही नहीं ३४ व जब धर्म, अर्थ, काम तीनों अलग ही अलग होते देखते हैं तो धीर लोग वह कर्म करते जिसमें धर्म रहता है व मध्यम पुरुष कलह का हेतु अर्थ है उसको ग्रहण करते व अनारी पुरुष काम ही का सेवन करता है ३५ व जो प्राकृत पुरुष लोभ से इन्द्रियों की द्वारा धर्म को छोड़ देता है व काम अर्थ की इच्छा बिना उपाय ही के करता है वह नष्ट हो जाता है ३६ इससे जो काम अर्थ दोनों की इच्छा करे वह धर्म प्रथम ही से करै क्योंकि धर्म करने से काम अर्थ कहीं जाते नहीं रहते बरन और पुष्ट हो जाते हैं ३७ क्योंकि धर्म, अर्थ व काम इन तीनों के सिद्ध करने का उपाय धर्म ही है इससे जो धर्म्म ही की द्वारा कामार्त्थ की इच्छा करता है उसके ये ऐसे बढ़ते हैं जैसे सूखे तृण में डार देने से आग बढ़ती है ३८ हे तात ! सो तुम विना उपाय ही किये सब राजाओं में विख्यात व प्रकाशित सबसे श्रेष्ठ यह कौरवों का राज्य चाहते हो व धर्म्म नहीं किया चाहते ३९ हे राजन् ! जो पुरुष अच्छे मार्ग्ग पर चलनेवाले पुरुषों में झूठा बर्त्ताव बर्त्तता है वह जानों अपने को अपने हाथों से काटता है जैसे कुल्हारी से वन काटा जाता है ४० व जिसका अनादर न करना हो उसकी मति को लोभादि से दूषित न करना चाहिये क्योंकि जब उसकी मति लोभादि से दूषित न होगी तो कल्याण ही में लगेगी ४१ हे भारत ! जो आत्म-ज्ञानी पुरुष होता है वह किसी प्राकृत मनुष्य का अपमान नहीं करता

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

फिर ऐसे लोगों का जैसे कि पाण्डवलोग हैं ४२ बड़े शोच की बात है कि अमर्ष के वश में आय पुरुष कुछ भी नहीं समझता सबको काटना ही चाहता है इससे तुम लोकवेद में प्रसिद्ध प्रमाण देखो अमर्षके वश में आय पाण्डवों को काटना न चाहो ४३ दुर्जनों के सङ्ग की अपेक्षा तुम्हारा कल्याण पाण्डवों के मेल ही में है क्योंकि जब पाण्डवलोग भी प्रसन्न रहेंगे तो तुम सब अपने इच्छित पावोगे ४४ क्योंकि पाण्डव-लोग सब ओर से पृथ्वी जीत २ इकट्ठी करेंगे व तुम भोग करोगे ४५ व तुम पाण्डवों को पीछे डार अपनी रक्षा औरों से चाहते हो व दुश्शा-सन दुर्विषह कर्ण व शकुनी इन लोगों की सम्मति कर व सब भार इनको सौंप तुम ऐश्वर्य्य चाहते हो भला यह कभी हो सक्का है ४६ ये दुश्शासनादि तुमको ज्ञान देने में समर्थ नहीं हैं व न धर्म्मअर्थ ही तुमको बता सक्के हैं व ये लोग विक्रम में भी पाण्डवों के सामने कुछ भी नहीं हैं व सब राजाओं समेत तुम भी पाण्डवों के सामने कुछ विक्रम करने में समर्थ नहीं हो ४७ क्योंकि जब भीमसेन क्रोध करेंगे तो संग्राम में तुम लोग उनके मुख की ओर भी न देख सकोगे फिर युद्ध करने को कौन कहै सो कुछ तुम्हीं नहीं यह जितनी तुम्हारी सेना है व जितने राजालोग हैं कोई भी उनके सामने न खड़े होंगे ४८ व ये भीष्मपितामह व ये द्रोणाचार्य्य व यह कर्ण व ये कृपाचार्य्य व भूरि-श्रवा व सौमदत्ति व ये अश्वत्थामा व जयद्रथ ४९ ये सब एक ही साथ जो इस ओर से लड़ने लगें तौभी अर्ज्जुन के सङ्ग युद्ध करने में अशक्त हैं फिर एक एक की कौन गिनती है क्योंकि मनुष्यों को कौन कहै अर्ज्जुन को संग्राम में सब देवता व सब दैत्य भी नहीं जीत सक्के व न कोई गन्धर्व्वादिकही जीत सक्के हैं इससे दुर्य्योधन युद्ध करने में चित्त न लगावो ५० नहीं तो जितनी समाज घर की व राजालोगों की है उसमें किसी को दिखावो तो जो समर में अर्ज्जुन के सामने जाय व फिर कल्याणयुक्तही अपने घर को लौटआवे ५१ हे भरतर्षभ! सब जनों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

की क्षय करने से कौन प्रयोजन है बस एकही ऐसा पुरुष अपनी समाज में दिखावो जो समर में अर्ज्जुन को जीतसके क्योंकि उनको जिसने जीतलिया फिर औरों से युद्ध करने की आवश्यकता नहीं बस उसकी जय होजायगी ५२ हमारी जान तो जिन अर्ज्जुन ने खाण्डवप्रस्थ में सब देवता, गन्धर्व्व, यक्ष, असुर व नागों को अकेलेही जीत लिया उनके सङ्ग अब इस समाज में कोई न युद्ध करसकेगा ५३ व इसी प्रकार हमने देखा तो नहीं पर सुनते हैं कि विराटनगर में तुम सब जने बहुत से इकट्ठे थे व अर्ज्जुन अकेलेही आये थे पर तुम सबों को हराय गाइयां उन्होंने छीनलीं बस यह उदाहरण बहुत है ५४ फिर जिन अर्ज्जुन ने साक्षात् महादेव शिवजी का सन्तोष समर में करदिया उन अजेय व ढिठाई करने के अयोग्य व अच्युत को जीतने को कहते हो ऐसे वीर को कौन जीत सक्ता है ५५ फिर अकेलेही अर्ज्जुन को कोई नहीं जीत सक्ता तो उन्हीं के सहायक व सङ्गही उसी रथपर हम भी होंगे तो ऐसा कौन है जो युद्ध में सामने जाय लड़ने की प्रार्त्थना करै चाहे वह साक्षात् इन्द्रही हो पर सामने तो न आ सकेगा ५६ जो अर्जुन को समर में जीते वह तो अपनी बाहों से भूमि को भी उठा ले व क्रोधकर इस संसार को भस्म कर डाले व स्वर्ग से देवताओं को नीचे गिरा दे ५७ अय दुर्योधन ! देखो तुम्हारे ही कारण ये तुम्हारे पुत्र, भाई, ज्ञाति, बन्धु, नातेदार व ये भीष्म पितामहादि भरतसत्तम सब नाश को प्राप्त होंगे ५८ कौरवों का शेष अभी रहै यह कुल नष्ट न हो व तुम कुलनाशक न कहावो व तुम्हारी कीर्त्ति नष्ट न हो हे राजन् ! ऐसा करो जिसमें ऊपर कही बातें हों उनके विपरीत न हो ५९ अच्छा ॥

दो० यौवराज्य पर तुमहि को, थपि हैं पाण्डव लोग।
महाराज्यपर तव पितहि, धृतराष्ट्रहि युत भोग ॥ १ । ६० ॥
नहिं आवत त्यागहु महा, श्रीको कर अपमान।
अर्द्धराज्य दै पाण्डवन, भोगहु सकल अपान ॥ २ । ६१ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पाण्डवसँग करि मेल अरु, सुहृद वचन करि ख्याल।
मित्रन सङ्ग प्रसन्न है, भद्र लहहु चिरकाल॥ ३। ६२॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुर्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १२४॥

एकसौपच्चीस का अध्याय।

दो० यकसै पच्चिसवें महँ, कहब भीष्म गुरु भूप।
जिमि दुर्य्योधन सन कहा, विदुरहु मति अनुरूप॥ १॥

वैशम्पायनजी बोले कि, कृष्णचन्द्रजी के वचन सुन उसके पीछे शन्तनुजी के पुत्र भीष्मपितामहजी असहनशील दुर्य्योधन से बोले कि १ हे तात! सुहृदों के मेल होने की इच्छा से कृष्णचन्द्रजी ने जो तुमसे कहा है वही करो क्रोध के वश में पर अन्तगति को न पहुँचो २ क्योंकि हे तात! महात्मा कृष्णचन्द्रजी के वचन विना किये कभी न तो श्रेय को पावोगे न सुख न कल्याण ही पावोगे ३ हे तात! हे राजन्! महाबाहु केशव भगवान् ने तुमसे धर्म व अर्थयुक्त ही सब वचन कहे हैं इससे उनको करो इन प्रजाओं का नाश न करावो ४ यदि इनके वचन न मानोगे तो सब राजाओं से अधिक प्रकाशित इस कौरवों की राजलक्ष्मी को धृतराष्ट्र के जीते ही जीते तुम अपनी दुरात्मा से भ्रष्ट करोगे ५ व हमीं सब कुछ हैं इस अहङ्कार बुद्धि से अपने को व अपने अमात्य, पुत्र, भाई, बान्धवों को प्राणों से भ्रष्ट करावोगे ६ व सत्य व अर्थयुक्त केशव के वचन को उल्लङ्घन कर व अपने पिता व सब भारतों में श्रेष्ठ धीमान् विदुरजी के वचनों का उल्लङ्घन कर ७ कुलनाशक हो कुपुरुष दुर्म्मति कहाय कुमार्ग में न चलो व अपनी माता व पिता को शोकसागर में न डुबोवो ८ इसके पीछे अमर्ष के वशीभूत व बारबार ऊर्ध्वश्वासें लेते हुए दुर्य्योधन से द्रोणाचार्य्यजी यह वचन बोले कि ९ हे नराधिप! केशव भगवान् ने व भीष्मजी ने धर्मअर्थयुक्त वचन तुमसे कहा है उसका सेवन करो १० ये दोनों जने बड़े प्राज्ञ व मेधावी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व इन्द्रियों को दमन किये अर्थकाम में तत्पर व बहुत वेदशास्त्र पढ़े हैं व तुमसे तुम्हारे हित ही का वचन इन्होंने कहा है इससे हे नराधिप! उस वचन को प्रीति सहित ग्रहण करो ११ हे महाप्राज्ञ! कृष्णचन्द्रजी व भीष्मजी ने जो कहा है उसी पर टिको बुद्धि के मोह से माधव भगवान् का अपमान न करो १२ व जो ये कर्णादिक तुमको युद्ध करने के लिये प्रोत्साहित कराते हैं कोई भी विजय न करा सकेंगे किन्तु समर में यह वैर हमलोगों के गले में छोड़ देंगे १३ दुर्य्योधन इन सब प्रजाओं को व अपने पुत्रों भाइयों को न मरवावो क्योंकि जिस सैन्य में वासुदेव व अर्जुन हैं उसी सैन्य को जीतनेवाली समझो १४ हे तात! परम सुहृद् कृष्णचन्द्रजी व भीष्मजी का मत जो न मानोगे तो पीछे पछितावगे १५ जैसा कि परशुरामजी ने कहा है ये अर्जुन उससे भी अधिक हैं व ये देवकीजी के पुत्र कृष्णचन्द्रजी देवताओं को भी दुस्सह हैं १६ हे भरतर्षभ! तुमसे सुख व प्रिय कहने से क्या है? यह सब तुमसे कहा तुम जैसा चाहो वैसा करो हे भरतसत्तम! अब हम फिर और कुछ आपसे नहीं कह सकते १७ वैशम्पायनजी बोले इस बात के बीच में असहनशील दुर्य्योधन की ओर देख महामतिमान् विदुरजी भी उनसे बोले १८ हे भरतर्षभ, दुर्य्योधन! हम तुम्हारा कुछ शोच नहीं करते इन दोनों वृद्ध गान्धारी व धृतराष्ट्र का शोच करते हैं १९ जोकि तुम दुष्ट नाथ के कारण मित्र बान्धव अमात्यादि व पुत्रों के मर जाने पर पङ्ख उखाड़ डाले हुए दो पक्षियों के समान अनाथ इधर उधर मारे मारे घूमेंगे २० व तुम्हें ऐसे कुलनाशक पापी कुपुरुष को उत्पन्न कर भीख माँगते हुए व शोच करते इस पृथ्वी पर घूमेंगे २१ इसके पीछे राजा धृतराष्ट्रजी भाइयों के साथ राजाओं के बीच में बैठे हुए दुर्य्योधन से बोले २२ हे दुर्य्योधन! जो महात्मा कृष्णचन्द्रजी ने कहा है उसे अच्छी तरह समझो व उसको ग्रहण करो क्योंकि यह अति-कल्याणकारक योग क्षेम युक्त व नाशरहित वचन है २३ सहज ही में

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सब कार्य करनेवाले इन कृष्णचन्द्रजी की सहाय से सब राजाओं के बीच में हमलोग अपने सब इष्ट काम पावेंगे २४ इससे अब इन्हीं कृष्णचन्द्रजी के ही साथ हे तात ! तुम युधिष्ठिरजी के समीप चले जाव व सब भारतों का कल्याण करो २५ अच्छा है वासुदेवजी को बीच में कर हे तात ! पाण्डवों से मेल कर लो हम इस बात को समय पर हाथ लग गई समझते हैं हे दुर्य्योधन ! इसका अतिक्रमण तुम अब न करो ॥ २६ ॥

दो० शम याचत हरि की जबहि, तुम न मानिहहु बात ।
तौ न होइ है कबहुँ तव, जय यह जानहु तात ॥ १ । २७॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२५ ॥

एकसौछब्बीस का अध्याय ।

दो० यकसै छब्बिसवें महैं, कहब भीष्म अरु द्रोण ।
दुर्य्योधन सन जिमि कहेहु, पर न मान वह भोण ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि समान दुःखयुक्त भीष्मपितामह व द्रोणाचार्य्यजी धृतराष्ट्र के वचन सुन पिता आदि की शिक्षा से प्रतिकूल चलनेवाले दुर्य्योधन से यह वचन बोले कि १ जब तक कृष्णचन्द्र व अर्ज्जुन युद्ध करने को सन्नद्ध न हों व जब तक गाण्डीव धन्वा विद्यमान है व जब तक पाण्डवों के पुरोहित धौम्यजी शत्रु की सेनाको यज्ञाग्नि में नहीं आहुति करते २ व जब तक लज्जावान् महाधनुर्द्धर युधिष्ठिरजी क्रोधकर तुम्हारी सेना को नहीं देखते तब तक यह वैर शान्त हो जाय ३ व जब तक महाधनुर्द्धर कुन्तीजी के पुत्र भीमसेनजी हम लोगों की सेनाओं के बीच में युद्ध करने के लिये न उद्यत हों तब तक यह वैर शान्त हो जाय ४ व जब तक भीमसेन गदा हाथ में लिये सेना को भयभीत कराते हुए पैतड़े भरते हुए मार्गों में नहीं घूमते तब तक पाण्डवों के सङ्ग मेल कर लो ५ व जब तक भीमसेन समर में अपनी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वीरघातिनी गदा से समय पर पके हुए वृक्ष के फलों के समान हाथियों पर चढ़कर युद्ध करनेवाले लोगों के शिर नहीं फोड़ डालते तब तक वैर शान्त हो जाय ६ व जब तक नकुल, सहदेव, धृष्टद्युम्न, पार्षत, विराट, शिखण्डी व शिशुपाल के पुत्र धृष्टकेतु ये लोग कवच बख्तर आदि धारण कर समर में अस्त्र चलाने की कुशलता दिखाते हुए बड़ी शीघ्रता के साथ अस्त्र शस्त्र चलाते हुए समुद्र में नाकों के समान सेना में न पैठें तब तक वैर शान्त हो जाना चाहिये ७। ८ व जब तक राजाओं के सुकुमार शरीरों में बड़े तीषे बाण न पैठें तब तक वैर शांत हो जाना चाहिये ९ व जब तक बहुत शीघ्र बाण चलानेवाले व दूर ही से निशाना में बाणादि लगानेवाले महाधनुर्द्धर लोगों के चलाये लोहे के बड़े २ बाण चन्दन अगर लगाये हुए व हारकण्ठादि धारण किये योधा लोगों की छातियों में निशाना बनाय न लगाये जायँ तब तक यह वैर शान्त ही हो जाना चाहिये नहीं तो फिर अच्छा न होगा १०।११ परमेश्वर करे कि राजकुञ्जर धर्म्मराज युधिष्ठिरजी अपने दोनों हाथों से शिर झुकाय प्रणाम करते हुए तुमको ग्रहण करें १२ व प्रसन्न होकर ध्वजा, वज्र, पताका के चिह्नों से चिह्नित अपना दहिना हाथ तुम्हारे कन्धे पर शान्त होने के लिये धरें १३ व रत्नयुक्त औषध समेत व अँगुलियों में रत्न धारण किये अपने हाथ से समीप बैठे हुए तुम्हारी पीठ सुहरावें १४ व शाल समान स्कन्धवाले महाबाहु भीमसेन तुमको छाती में छपटाते हुए शान्ति हो जाने के लिये समझावें १५ व हे राजन्! अर्ज्जुन नकुल व सहदेवसे अभिवादित होकर उनके शिर सूंघ प्रेम से उनसे बोलो १६ व तुमको तुम्हारे वीर भाई पाण्डवों के सङ्ग मिले देख सब राजा लोग आनन्दके आँसुओंकी वर्षा करें १७ व तुम्हारी परस्पर की प्रीति सब राजा लोग अपनी २ राजधानियों में बखानें व तुम भाइयों के साथ आनन्द से पृथ्वी का राज्य भोगो व ज्वररहित होवो॥१८॥

इति श्रीमहाभारतेउद्योगपर्वणिभगवद्यानेभीष्मवाक्यन्नामषड्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौसत्ताइस का अध्याय।

दो० यक सै सत्ताइस महँ, कहब यथा सुनियेहु।
दुर्य्योधन हरिसों कह्यो, तजिकै सकल सनेहु॥ १॥

वैशम्पायनजी बोले कि दुर्य्योधन कौरवों की सभा में यह अप्रिय वाक्य सुन यशस्वी महाबाहु श्रीकृष्णचन्द्रजी से बोले १ हे कृष्णचन्द्र! विचार के साथ आप बोलैं क्योंकि विशेष हमीं को कड़े वचन कह निन्दित करते हो २ क्या आप बलाबल देखकर नित्य हमारी निन्दा करते हैं नहीं पाण्डवों की भक्ति के बाद से अकस्मात् हमारी निन्दा करते हैं ३ आप व विदुर, राजा, द्रोणाचार्य्य व भीष्मजी सब हमीं को नींदते हैं और किसी राजा की निन्दा नहीं करते ४ परन्तु हम अपना कोई भी अन्याय नहीं लक्षित करते हां आप सब नाहक हमसे अप्रीति करते हैं व ये सब राजा लोग भी आप लोगों की देखी देखा से करते हैं ५ परन्तु हे केशव! हम जो विचार कर देखते हैं तो अपना कुछ भी अपराध व अन्याय नहीं देखते ६ क्योंकि जब प्रीति से स्त्री की बाजी लगाय पाण्डवों ने जुआ खेला उसमें शकुनी से अपनी स्त्री व राज्य दोनों हार गये तो उसमें हमारा क्या पाप है ७ व उसमें जो कुछ धन पाण्डवों ने जीता तुरन्त उन लोगों को यहां से दे दिया गया हे मधुसूदन! ८ फिर भी वे जुआ में हार गये तो हमारा उसमें कुछ अपराध नहीं है यद्यपि पार्थ लोग अजेय हैं किसी के जीतने के योग्य नहीं हैं पर उस समय तो हारही गये इससे वन को चले गये हम क्या करें ९ फिर अब वे लोग किस अपवाद से हम लोगों को शत्रु समझ विरोध करते हैं, हैं तो सब पाण्डव अशक्त पर प्रहृष्ट हो शत्रुओं का सा काम करते हैं १० हम लोगों ने उनका कौन अपराध किया जिस पाप में सञ्जय सहित पाण्डव लोग धृतराष्ट्र के सम्बन्धियों को मार डालना चाहते हैं ११ परन्तु हम लोग उग्र कर्म से व कड़े वचन से व भय से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पाण्डवों की कौन गिनती है जो साक्षात् इन्द्र भी आवें तो उनके भी प्रणाम न करें १२ हे कृष्ण ! हम क्षत्रियों के धर्म में निपुण ऐसा किसी को नहीं देखते जो समर में युद्ध से शत्रुनाशक हमको जीतले १३ हे कृष्ण ! भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य व कर्ण को समर में देवगणभी नहीं जीत सक्के फिर पाण्डवों की कौन गिनती है १४ हम लोग अपने क्षत्रिय के धर्म पर टिके हैं जो संग्राम में अस्त्र से मर भी जायँगे तो भी स्वर्ग ही पावेंगे नरक को न जायँगे १५ हे कृष्ण ! हम लोग क्षत्रियों का तो यही मुख्य धर्म ही है जो कि संग्राम में बाणों की सेज पर सोवें १६ हे माधव ! वे हम लोग क्षत्रिय यदि समर में वीरशय्या का शयन पावेंगे तो शत्रुओं के विना प्रणाम ही करने से पावेंगे उसमें हम लोगों का मन सन्तप्त न होगा १७ भला ऐसा कौन पुरुष है जो क्षत्रिय के कुल में उत्पन्न होकर व उसी का बर्त्ताव सर्वत्र बर्त्तकर जीविका की ओर देख भय से कभी किसी के प्रणाम करे १८ उद्यम ही करे नम्र कभी न हो क्योंकि उद्यम ही पौरुष है चाहे टूट जाय पर नवे कभी न १९ मातङ्ग मुनि के इस वचन को हित चाहनेवाले लोग चाहा करते हैं हां सब कहीं का यह व्यवहार नहीं है हमारे सदृश जो पुरुष हैं धर्म के लिये ब्राह्मणों के अलबत्ता प्रणाम ही करते हैं २० बस ब्राह्मणों के आगे नम्र होजाना व अन्य लोगों के आगे कभी न झुकना इन दो कामों को छोड़ और किसी की चिन्ता न करना यही क्षत्रियों का धर्म है व यही हमारा भी सम्मत है २१ व जो राज्य हमारे पिता की आज्ञा से पाण्डवों ने भी इकट्ठा किया है वह भी हमारे जीते जी पाण्डवों को कभी नहीं मिल सक्का २२ इससे हे जनार्दन ! जबतक राजाधृतराष्ट्र जीते हैं तबतक हम व पाण्डव लोग सब जने क्षत्रियों का धर्म छोड़ अस्त्र शस्त्र छोड़ भोजन तैयार होने पर भिक्षुकों के समान बैठ भोजन करलें और किसी बात से काम नहीं है व हम तो अभी पराधीन हैं राज्य किसी को दे कैसे सक्के हैं २३ इससे हे जनार्द्दन ! चाहे अज्ञान

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

से समझो चाहे भय से अभी तो धृतराष्ट्र के होते हुए हम बालक ही हैं व पाण्डव भी बालक ही हैं इससे पाण्डवों को राज्य मिली नहीं सक्ता २४ व जब महाबाहु धृतराष्ट्रजी हम को राज्य सौंप देंगे तब तो ॥

दो० तीक्ष्ण सुईकी नोंकसों, जितनी महि बिधि जात ।
उतनीहूँ नहिं पाण्डवन, देव सुनहु यह बात ॥ १ । २५ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२७ ॥

एकसौ अट्ठाइस का अध्याय ।

दो० अष्टाविंशाधिक सवें, महँ दुर्य्योधन काहिं ।
फटकारयहु हरित्यहि तजेहु, बहुरि कह्यहु नृपपाहिं ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि इसके पीछे कृष्णचन्द्रजी बहुत विचारकर मारे क्रोध के व्याकुल नेत्र हो कौरवों की सभा के बीच में दुर्य्योधन से यह वचन बोले कि १ अच्छा वीरशय्या पर तो शयन करोगे यह तो तुम अपना इच्छित फल पावोगे अपने मन्त्रियों अमात्यों सहित स्थिर होवो बड़ा भारी संग्राम होगा २ व हे मूढ़ ! जो तुम ऐसा मानते हो कि पाण्डवों के विषय में हमारा कुछ अन्याय ही नहीं है उसको तुम व ये सब राजा लोग भी सुनें ३ हे भारत ! महात्मा पाण्डवों की श्री से सन्तप्यमान होकर तुमने ही शकुनी से छल युक्त जुआ खेलवाया है ४ नहीं तो हे तात ! कल्याणयुक्त साधुसम्मत तुम्हारे भाई निश्छल पाण्डव लोग इस छली शकुनी के सङ्ग जुआ खेलने पर न उतारू होते ५ हे महाप्राज्ञ ! जुआ खेलना सज्जनों की मति का विनाश ही करता है उसके भेद असज्जन लोग ही जानते व उन्हीं को उसके खेलने में अभ्यास भी होता है ६ व यह स्वभाव जो पाण्डवों का हुआ कि उन्होंने जुआ खेला वह तुम्हीं ने कराया नहीं तो वे महात्मा जुआ खेलना कैसे जानते व तुमने जान बूझकर पापियों के सङ्ग उनको खेलवाया कि ये तो खेलना जानते ही नहीं जरूर हारेंगे ७ जो तुम्हारा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सम्मत व तुम्हारी प्रेरणा न होती तो भला जैसे तुमने अपने भाइयों की स्त्री द्रौपदी को उस दुर्दशा के साथ सभा में मँगाय अवाच्य वचन कहे थे वैसा और भी कोई कह सक्ता है ८ व महाकुलीन, शीलसम्पन्न प्राणों से भी अधिक प्यारी पाण्डु के पुत्रों की पट्टरानी द्रौपदी की तुमने ऐसी दुर्दशा की कि केश पकरे घसीटते हुए सभा में मँगाया ९ व इस बात को ये सब कौरव लोग जानते हैं कि वन के चलने के समय पाण्डवों को दुश्शासन ने जैसे कुवाच्य कहे हैं १० ऐसा कौन साधु है जो सदा चार युक्त अलोभी निरन्तर धर्मचारी व उत्तम स्वभाववाले अपने बन्धुओं में ऐसा अन्याय करै ११ कर्ण, दुश्शासन व तुमने क्रूर अनारी पुरुषों की सी बातें बहुत सी उस समय पा ों को कहीं १२ तुमने मातासहित पाण्डवों के जला डालने के लिये वारणावत में लाक्षाभवन बनवाय अग्नि लगवाया था पर क्या करो तुम्हारा वह यत्न नहीं सिद्ध हुआ वे अपनी भाग्य से बच गये १३ व अपनी माता सहित पाण्डव लोग एक चक्र में ब्राह्मण के घर में बहुत दिनों तक गुप्त होकर रहे १४ व तुम ने पाण्डवों को विष खिलाया सर्पों से कटवाया व बन्धन में डाला सब उपायों से उनका विनाश ही कराना चाहा पर क्या करो तुम्हारा कोई कार्य सिद्ध न हुआ १५ सो पाण्डवों के विषय में इस प्रकार की मिथ्या वृत्ति बुद्धि आप की सदा रही फिर महात्मा पाण्डवों के विषय में आपका अपराध कैसे नहीं है १६ व अब जो कि वे बेचारे अपने पिता का हिस्सा तुमसे माँगते हैं कुछ अधिक नहीं चाहते पर तुम वह भी नहीं दिया चाहते वह भी अब उनको पाप दिया चाहते हो इससे तुम्हारा ऐश्वर्य भ्रष्ट ही होगा क्योंकि तुम दूसरों को नीचे गिराना चाहते हो १७ व फिर तुम्हारे पिता, माता व भीष्म व विदुरजी ने बार-बार कहा कि शान्त होजाव युद्ध न करो पाण्डवों से मेल कर लो पर तुम नहीं शान्त होते १८ इस प्रकार बहुत से क्रूरों के से अकार्य पाण्डवों के साथ मिथ्या वृत्ति होकर तुमने किये आप माता पिता आदि का

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कहा नहा मानते यह तुम्हारे हक में अच्छा नहीं १६ हमारे मत से तुम्हारा व पाण्डवों का मेल होजाना दोनों जनों को महालाभकारी है पर तुमको नहीं रुचता फिर यह बुद्धि की लघुता के सिवाय और क्या है २० हे राजन्! सुहृदों के वचनों का उल्लङ्घन करके सुख न पावोगे यह तुम अधर्म व अयश ही का कर्म करते हो २१ वैशम्पायनजी बोले कि असहन शील दुर्य्योधन से जब कृष्णचन्द्रजी ने ऐसा कहा तो उसी कौरवों की सभा के बीच में दुर्य्योधन से दुश्शासन ने यह वचन कहा कि २२ हे राजन्! जो अपनी इच्छा से तुम पाण्डवों से मेल न करोगे तो कौरव लोग तुमको बँधुआकर युधिष्ठिर को राज्य दे देंगे २३ सो तुम्हीं को नहीं कर्ण व तुम व हम तीनों को बाँधकर भीष्म द्रोण व तुम्हारे पिता पाण्डवों को राज्य दे देंगे २४ वैशम्पायनजी बोले कि अपने भाई के ऐसे वचन सुन धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्य्योधन क्रुद्ध होकर बड़े मतवाले हाथी के समान श्वास लेता हुआ सभा से उठ खड़ा हुआ २५ व विदुर, धृतराष्ट्र, महाराज बाह्लिक, कृपाचार्य, सोमदत्त, भीष्म, द्रोणाचार्य व जनार्द्दन २६ इन सबों का अनादर कर निर्लज्ज अनार्य्य मानी व मान्य लोगों का अपमान करनेवाला दुर्य्योधन अशिष्ट लोगों के समान चल दिया २७ दुर्य्योधन के उठते ही सब उसके भाई अमात्यवर्ग व सब राजा लोग भी उठकर उसके पीछे २ चल दिये २८ जब क्रोध करके अपने भाइयों समेत दुर्य्योधन चले गये तो शन्तनु के पुत्र भीष्मजी बोले कि २९ धर्म अर्थ को छोड़ जो पुरुष क्रोध ही को अच्छा मानता है उसके इस दुर्व्यसन को दुर्ज्जन लोग बहुत ही शीघ्र हँसते हैं ३० देखो यह दुरात्मा राजपुत्र दुर्य्योधन उपाय कुछ नहीं जानता मिथ्याभिमानी हो राज्य के लिये क्रोध लोभ के वश होगया है ३१ इससे हे जनार्द्दन! हम सब क्षत्रियों को काल से पके हुए समझते हैं क्योंकि मारे मोह के उसके सब मन्त्री व सब राजा लोग भी उसी के अनुगामी हैं ३२ भीष्मजी के ऐसे वचन सुन महावीर्यवान् श्रीकृष्ण-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चन्द्रजी भीष्म द्रोण धृतराष्ट्रादिकों से यह वचन बोले कि ३३ जोकि जबरदस्ती ऐश्वर्य में मन्दमति दुर्योधन को आप लोग नहीं रोंकते यह सब कुरुवृद्धों का बड़ा भारी अन्याय है ३४ हे शत्रुसूदन लोगो! इस विषय में हम जो करने के योग्य समझते हैं उसके करने पर कल्याण होगा उसे चित्त लगाय सुनो ३५ जो हम वचन कहेंगे वह आप लोगों को भी प्रत्यक्ष है व आप लोगों को भी जो अनुकूलता के साथ रुचे तो करो ३६ देखो वृद्ध भोजराज के जीते ही जी दुराचारी अज्ञानी अपने पिता का राज्य हरने से मृत्यु के वशीभूत हुआ ३७ वह जानते ही हो कि उग्रसेन का पुत्र कंस अपने बान्धवों से त्याग दिया गया था इसलिये ज्ञातिवालों के हित करने के लिये हमने उसे मार डाला ३८ व फिर हम लोग ज्ञातिवालों ने मिलकर भोज राज्य के बढ़ानेवाले आहुक उग्रसेनजी को राजा बनाया ३९ अब कुल भर के अर्थ अकेले कंस का परित्यागकर सब यादव अन्धकवंशीय व वृष्णिवंशीय इकट्ठे हो सुख से रहते हैं ४० व यही बात प्रजाओं के पति परमेष्ठी ब्रह्माजी ने भी कही है, जब कि देवासुर संग्राम होने पर हुआ सब लोग अपने अपने आयुध ले उद्यत हुए ४१ व सब लोकों में दुविधा पर गया व नाश होने पर सब तैयार हुए तो बड़े दूरदर्शी भगवान् देव ब्रह्माजी बोले कि ४२ ये दैत्य, दानव, असुर, आदित्य, वसु, रुद्र व और सब देवगण युद्ध कर निरादर को प्राप्त होंगे ४३ व देवता, असुर, मनुष्य, गन्धर्व, नाग, राक्षस सबके सब इस महायुद्ध में परस्पर लड़ मरेंगे कोई भी न बचेगा ४४ यह मान ब्रह्माजी ने धर्मजी से कहा कि सब दैत्यों को पकड़ वरुण के हवाले करो ४५ इस प्रकार ब्रह्माजी की आज्ञा से धर्म्म जी ने सब दैतेय दानवों को बँधुआ कर वरुण के हवाले कर दिया ४६ वरुणजी ने उन दैत्यों को धर्म्मपाशों से व अपने वरुणपाशों से बाँध जाय समुद्र में कर दिया व अब नित्य वहां उनकी रक्षा करते रहते हैं ४७ इसी प्रकार आप लोग दुर्योधन, कर्ण, दुश्शासन,

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

शकुनी को बँधुआ कर राज्य पाण्डवों को दे दो ४८ क्योंकि लिखा है—

दो० एकहि कुल के अर्थ तजु, ग्राम अर्थ कुल त्यागु।
देश अर्थ ग्रामहिं तजौ, तजु निज अर्थ भुभागु॥ १। ४९॥
दुर्य्योधन कहँ बांधि नृप, करहु पाण्डवन मेल।
नहिं तदर्थ क्षत्रिय सकल, मरहिं एक सँग पेल॥ २। ५०॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्यष्टाविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १२८॥

एकसौ उन्तीस का अध्याय।

दो० यकसै उनतिसवें महँ, कह जिमि निज सुत काहिं।
गान्धारी बहु रीति, समझायहु मान्यहु नाहिं॥ १॥

वैशम्पायनजी बोले कि, श्रीकृष्णचन्द्रजी के वचन सुन राजा धृतराष्ट्र सब धर्म्म जाननेवाले विदुरजी से बहुत शीघ्रता के साथ बोले १ हे तात, विदुर! जाव महाचतुर व बहुत दूर की बातें विचारनेवाली गान्धारी को यहां लिवा लावो उनके साथ हम उस दुष्ट मति दुर्य्योधन को समझावें २ कदाचित् वही उस दुष्टात्मा दुष्ट चित्त को समझाय शान्त करें तो सुहृद कृष्णचन्द्र के वचन पर हम लोग टिकें ३ क्या आश्चर्य्य कि दुर्बुद्धि दुष्ट सहाय के उस दुष्ट के शान्त होने के वचन कहती हुई गान्धारी उस महालोभी को कोई सुमार्ग्ग ही दिखा दें ४ कदाचित् यह जो दुर्य्योधन का किया घोर दुर्व्यसन हम लोगों को बड़ा भारी आन परा है उसे वे शान्त ही करा दें कि वह बहुत दिनों के लिये योग क्षेमकारक हो व जो राज्यादि सुख हैं बने ही रहें ५ धृतराष्ट्रजी के वचन सुन विदुरजी उनकी आज्ञा से दूरदर्शिनी गान्धारी जी को जाय झट बुला लाये ६ तब धृतराष्ट्रजी गान्धारी से बोले हे गान्धारि! यह तुम्हारा दुष्टात्मा पुत्र ऐश्वर्य्य के लोभ से शिक्षा नहीं मानता इससे ऐश्वर्य्य व प्राण दोनों छोड़ेगा ७ देखो वह मूढ़ सुहृदों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के वचनों का उलङ्घन कर अशिष्ट नीच के समान अपने पापी साथियों सहित सभा से उठकर चला गया ८ वैशम्पायनजी बोले कि यशस्विनी राजपुत्री गान्धारीजी अपने पति के ऐसे वचन सुन महाकल्याण की चाहना किये बोलीं कि ९ बहुत शीघ्र राज्य की इच्छा किये आतुर अपने पुत्र को आज्ञा दो कि धर्म्म लोप करनेवाले अशिष्ट पुरुष को अधिक राज्य नहीं मिल सक्ती १० व जो उसके पास रहता है वह भी नष्ट हो जाता है क्योंकि उसकी अविनीतता ही उसकी राज्य का लोप करती है ११ हे धृतराष्ट्र! तुम भी अत्यन्त लोभी हो इसी से ऐसे पुत्र को प्रिय समझते हो कि यह बड़ा कमाऊ है व यह बात जानकर तुम उसकी बुद्धि के पीछे चलते हो १२ और वह लोभ, काम, क्रोध, सहित तुम में टिका है उसे तुम अपने बल से निवृत्त नहीं कर सक्के १३ ऐसे मूढ़, अज्ञ, दुष्टात्मा, लोभी, दुस्सङ्गी को राज्य देकर अब धृतराष्ट्र तुम फल भोगते हो १४ क्योंकि प्रथम तो उसे राज्य दे बैठे अब उस अपने पुत्र की उपेक्षा कैसे कर सक्के हो क्योंकि जो स्वजन से भिन्न हो जावोगे तो शत्रु लोग पीछे हँसेंगे १५ हे महाराज! जो पुरुष समझाने से व भेद कराने से आपदों से बच सक्ता है वह अपने लोगों के ऊपर दण्डपात कैसे करै उसे प्रथम समझाना ही चाहिये फिर भेद करना फिर दान व दण्ड तो अपने के ऊपर हो ही नहीं सक्ता १६ वैशम्पायनजी बोले कि धृतराष्ट्र की आज्ञा से व उनकी माता की जबानी दुर्य्योधन को विदुरजी फिर सभा में बुला लाये १७ व माता के वचन सुनने की इच्छा से दुर्य्योधन क्रोध के मारे नेत्र लाल किये व सर्प के समान श्वास लेते फिर सभा में आये १८ उस कुमार्ग्गगामी पुत्र को सभा में बैठे देख शम कराने के अर्थ गान्धारीजी बोलीं १९ हे दुर्य्योधन! तुमसे जो तुम्हारे पिता ने कहा व भरतवंश में सत्तम भीष्मजी ने कहा व द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, विदुर ने कहा इन सब सुहृदों के वचन करो २० जो तुम अपने सुहृदों से मेल करोगे तो भीष्मपितामह

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व अपने पिता व हमारी भी जानों तुमने पूजा की व द्रोणाचार्य्यादि सब की पूजा इसी में होगी २१ हे महाप्राज्ञ! हे भरतसत्तम! राज्य अपनी इच्छा से नहीं मिल सक्ती न रक्षा ही होती न इच्छा से भोगने ही को मिलती है २२ अजितेन्द्रिय पुरुष बहुत दिनों तक राज्य नहीं भोग सक्ता व जितेन्द्रिय व बुद्धिमान् पुरुष बहुत दिनों तक राज्य का पालन कर सक्ता है २३ जिससे कि काम व क्रोध ये दोनों पुरुष को अर्थों से खींच लेते हैं इससे इन दोनों शत्रुओं को जीत कर राजा पृथ्वी जीतता है २४ राज्य क्या लोकभर का स्वामी होजाय तो भी दुष्टात्मा उसकी रक्षा नहीं कर सक्ता २५ जो अपना महत्त्व चाहे प्रथम इन्द्रियों को अर्थ धर्म दोनों से रोंके क्योंकि जिसकी इन्द्रियाँ वश में रहती हैं उसकी बुद्धि बढ़ती है जैसे कि ईंधनसे अग्नि २६ व विना वश की इन्द्रियां पुरुषको मारडालभी सक्ती हैं जैसे जो घोड़े कट्टर होते व अच्छीतरह सिखाये भी नहीं जाते वे मार्ग में अनारी हांकनेवाले को मार डालते हैं २७ व जो राजा प्रथम अपने को विना जीते मन्त्रादिकों को जीता चाहता है व विना अमात्यों के जीते शत्रुओं को जीतना चाहता वह अवश हो अपने स्थान से हीन होजाता २८ जो प्रथम अपने मन को ही वैरी समझ उसे जीते फिर अमात्योंको फिर शत्रुओं को जीते उसकी जीतने की इच्छा निष्फल नहीं होती २९ व जो पुरुष अपनी इन्द्रियों को वश में रखता व अपने मन को जीतता व जो लोग विकार करते उनको दण्ड देता व जो करता परीक्षा लेकर करता व धीर रहता उसकी सेवा लक्ष्मीजी करती हैं ३० जैसे छोटे छोटे छेदों के जाल में दो मछलियां फँस जातीं फिर निकल नहीं सक्तीं ऐसे ही, काम व क्रोध जब शरीर के भीतर रहते हैं तो बुद्धि का लोप कर देते हैं ३१ व काम क्रोध युक्त पुरुष चाहे बहुत उनमें आसक्त भी न हो पर जब स्वर्ग को जाने लगता है तो देवता लोग स्वर्ग के दरवाजे बन्द कर लेते हैं क्योंकि इस बात से भय खाते हैं कि जो यह पुरुष यहां आवेगा तो यहां भी काम क्रोध बढ़ जायँगे ३२ इससे जो राजा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

काम, क्रोध, लोभ, दम्भ व दर्प को अच्छी तरह जीतना जानता है वह पृथ्वी का राज्य करता है नहीं तो नहीं ३३ धर्म अर्थ की इच्छा किये व शत्रुओं का अनादर चाहता हुआ व इन्द्रियों को दमन किये जो पुरुष होता वही राजा होसक्ता है ३४ व जो काम युक्त होकर क्रोध से अपने लोगों के विषय में व अन्य लोगों के विषय में मिथ्या प्रवर्त्तित होता है उसके सहायक कोई भी नहीं होते ३५ इससे हे तात! जो तुम शूर वीर महाप्राज्ञ व शत्रुनाशक पाण्डवों से मेलकर लोगे तो उनके साथ सुखी होकर पृथ्वी को भोगोगे ३६ व हे तात! जैसा कि भीष्मपितामहजी व द्रोणाचार्यजी ने कहा है सत्य सत्य अर्जुन व कृष्णचन्द्र किसी के जीतने के मान के नहीं हैं ३७ इससे अब सहज में सब कार्य करनेवाले महाबाहु कृष्णचन्द्र के शरण में प्राप्त होवो क्योंकि ये कौरव पाण्डव दोनों के सुख के लिये प्रसन्न हैं ३८ व सब विद्याओं में निपुण महाप्राज्ञ सुहृद् जो कि अर्थ व काम ही की बातें कहते हैं इनकी शिक्षा जो नहीं मानता वह पुरुष शीघ्र ही अपने शत्रुओं को हर्ष बढ़ाता है ३९ हे तात! युद्ध में कल्याण नहीं है व न धर्म अर्थ फिर सुख कहां से हो व विजय भी नित्य नहीं होती क्योंकि वह दैवाधीन है इससे युद्ध में चित्त न लगावो ४० हे शत्रुसूदन! देखो भीष्मपितामहजी ने व तुम्हारे पिता ने व राजा वाह्लिकजी ने भेद पड़जाने के भय से प्रथम पाण्डवों को आधा राज्य दे दिया था ४१ उस राज्य के देने का फल अब तुम देखते हो कि उन शूरों ने पृथ्वी पर शत्रु नहीं रहने दिया था इसी से तुम निष्कण्टक पृथ्वी का राज्य भोगते हो ४२ इससे जो अपने मन्त्रियों सहित अभी कुछ दिन राज्य भोग करना चाहते हो तो पाण्डु के पुत्रों को आधा राज्य दे दो क्योंकि यह उचित है ४३ आधी पृथ्वी अमात्यों सहित तुम्हारी जीविका के लिये बहुत है व सुहृदों के वचन पर टिकने से यश पावोगे ४४ व हे तात! श्रीमान्, आत्मज्ञानी बुद्धिमान् व जितेन्द्रिय पाण्डवों के सङ्ग विग्रह करना बड़े भारी सुख से भ्रंश करादेगा ४५

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

इससे पाण्डवों का अंश पाण्डवों को देव सुहृदों का क्रोध मिटाय यथोचित अपना आधा राज्य सुख से करो ४६ हे प्रिय ! यही बड़ा अनर्थ होचुका जो तेरह वर्ष तक बेचारे पाण्डुपुत्रों को तुमने वनवास दिया इससे हे महाप्राज्ञ ! अब काम क्रोध से बढ़े हुए इस बिगाड़ को शान्त करावो अपना आधा राज्य पाय जायँगे तो फिर इसको भूल जायँगे ४७ व जो अर्थ तुम चाहते हो कि पाण्डवों को जीत हम अकेले सब राज्य करें इस बात को कर्ण दुश्शासन व तुम किसी प्रकार से भी नहीं कर सक्के ४८ क्योंकि भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, कर्ण, भीमसेन, अर्जुन व धृष्टद्युम्न के क्रोध करने पर सब प्रजा का नाश ही होजायगा तुम राज्य किसका करोगे ४९ हे तात ! अमर्ष के वश होकर कौरवों का नाश न करावो यह सब पृथ्वी तुम्हारे निमित्त नाश को न प्राप्त हो ५० व हे मूढ़ ! जो तुम अपने मनसे समझते हो कि भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्यादि ये सब अपनी शक्ति से हमारी ओर होकर लड़ेंगे यह बात भी अब नहीं होसक्की ५१ क्योंकि इन लोगों के लेखे पाण्डवों का व तुम्हारा राज्य समान है व प्रीति भी इनकी तुम में व उनमें है व स्थान भी इन लोगों को तुम्हारे यहां है व उनके यहां भी है इस बात को ये लोग अच्छी तरह जानते हैं व उन लोगों को उचित भी यही है कि तुमको उनको समान जानें परन्तु पाण्डवों में धर्म अधिक है इसलिये ये सब उनका प्रेम तुमसे अधिक करते हैं फिर तुम्हारे लिये उनको क्यों मारने लगें ५२ हां तुम्हारे यहां का अन्न ये लोग खाते हैं इस भय से जो अपने प्राण भी छोड़ा चाहेंगे समर में खड़े भी होजायँगे तो यह भी है कि राजा युधिष्ठिर के सामने देख भी न सकेंगे मरना ही मरना हाथ लगेगा ॥ ५३ ॥

दो० नहिं दिखात कहुँ लोभ सों, सम्पति नरन अनूप ।
तासों लोभ न करहु सुत, शान्त होहु है चूप ॥ १ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि ऊनत्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२९ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौतीस का अध्याय ।

दो० यकसै तिसवें महँ कहब, जिमि दुर्य्योधन दुष्ट ।
हरिहि चहो बांधन विदुर, धृतराष्ट्रहु सुनि रुष्ट ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि अपनी माता के अर्थयुक्त वचन सुन उस का अनादरकर मारे क्रोध के उन्हीं अपने अज्ञानी मन्त्रियों के पास फिर दुर्य्योधन चला गया १ व सभा से निकल अपने स्थान पर जाय महा जुआंरी राजा सुबल के पुत्र शकुनी से उसने सम्मत किया २ सम्मत में दुर्य्योधन, कर्ण, शकुनी व दुश्शासन इन चारों की एकान्त में यह कुमति ठहरी ३ कि ये शीघ्रकारी श्रीकृष्णचन्द्र धृतराष्ट्र राजा व भीष्म पितामह को मिलकर हम लोगों को पहले ही बँधुआ किया चाहते हैं ४ इससे हमीं लोग जबरदस्ती श्रीकृष्णचन्द्र को बँधुआ कर लें जैसे पुरुषसिंह राजाबलि को इन्द्रजी ने बँधुआ कर लिया था ५ फिर कृष्ण-चन्द्र को बँधुआ सुन पाण्डवों का चित्त हत होजायगा इससे वे लोग उत्साहहीन होजायँगे जैसे दाँत टूट जाने पर सर्प लोग निरुत्साह हो जाते हैं ६ ये महाबाहु कृष्णचन्द्र इन सब पाण्डवों के सुखदाता व कवचरूप हैं इससे इनके बँधुआ होने पर सब चन्द्रवंशी व पाण्डव लोग निरुद्यम होजायँगे क्योंकि ये सात्वतवंशियों में श्रेष्ठ कृष्ण ही इनको वरदान देनेवाले हैं ७ इससे हम लोग शीघ्रकारी कृष्णचन्द्र को धृतराष्ट्र के बकते ही बकते बँधुआकर शत्रुओं से युद्ध करेंगे ८ उन दुष्ट पापी दुर्य्योधनादिकों का अभिप्राय मन की बात जाननेवाले सात्यकीजी ने चट जान लिया ९ व उसके लिये सभा से बाहर आय हार्द्दिक्य के सङ्ग हो कृतवर्मा से बोले कि शीघ्र ही सेना तैयार करो १० व अपनी सेना तैयार किये तबतक सभा के द्वार पै खड़े रहो जबतक कि ये समाचार हम कृष्णचन्द्रजी से कह न आवें ११ यह कह महाप्रतापी सात्यकीजी सभा में पर्वत की गुहा में सिंह के समान प्रवेशकर महात्मा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

केशव भगवान्‌जी से दुर्य्योधनादिकों का अभिप्राय कहा १२ उसके पीछे धृतराष्ट्रजी व विदुरजी से भी सब अच्छी तरह कहा १३ कि धृतराष्ट्रजी धर्म्म अर्थ व काम से भी निन्दित यह कर्म तुम्हारे पुत्र किया चाहते हैं १४ परन्तु वे मन्द इस कार्य को किसी प्रकार नहीं कर सकते व प्रथम ये मूर्ख कलह करने ही पर उतारू हुए हैं तो महामूढ़ हैं १५ व काम क्रोध ने बनाय इन मूर्खों का निरादर कर डाला है इसी से ये अल्प बुद्धिवाले दुष्ट कृष्णचन्द्रजी को बँधुआ करना चाहते हैं १६ जैसे कि बालक व जड़ लोग जलती हुई आग को कपड़े में बांधकर ले चलना चाहते वैसे ही ये लोग यह कार्य्य किया चाहते हैं सात्यकीजी के ऐसे वचन सुन दीर्घदर्शी विदुरजी १७ कौरवों की सभा में महाबाहु धृतराष्ट्रजी से बोले हे राजन्! तुम्हारे सब पुत्रों को काल ने आय घेर लिया है १८ क्योंकि वे सब ऐसे कर्म के करने में उद्यत हुए हैं जिसे न करी सकते हैं व यश के नाश करनेवाला भी है वह यह है कि इन पुण्डरीकाक्ष भगवान्‌जी का अनादर कर १९ जबरदस्ती बँधुआ किया चाहते हैं सब उनके मन्त्रियों की सलाह हो चुकी है जब इन पुरुषशार्दूल कृष्णचन्द्रजी को प्राप्त होंगे तो २० नष्ट ही होजायँगे जैसे पांखियां अग्नि को पाय भस्म हो जाती हैं क्योंकि जब वे सब युद्ध करने पर उतारू होंगे व ये चाहेंगे तो २१ जैसे क्रुद्धसिंह हाथियों को मार डालता है वैसे ही ये उनको यमपुर को भेज देंगे परन्तु ये कभी निन्दित कर्म करहींगे नहीं २२ क्योंकि अच्युत पुरुषोत्तम धर्म से पृथक् चलते ही नहीं जब विदुरजीने ऐसा कहा तो कृष्णचन्द्रजी २३ धृतराष्ट्र की ओर देख व सब सुहृदों के सुनतेही सुनते यह बोले कि हे राजन्! ये लोग क्रोधकर जो हमको पराक्रम से पकड़ें तो २४ कि तो यही लोग हमारे पीछे चले जायँगे व हमीं इनके पीछे चले जायँगे परन्तु हम यह कहते हैं कि ये सब क्रोध करके हमारे सामने आवें तो हम इन सबों को अच्छी तरह सिखा सकते हैं २५ परन्तु हम निन्दित

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पाप कर्म किसी प्रकार से करहींगे नहीं व तुम्हारे पुत्र पाण्डवों का वध किया चाहते इस लोभ में परे हैं इससे ये अपना भी अर्थ त्यागेंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है २६ व जो ये तुम्हारे पुत्र ऐसा करना चाहते हैं तो बस युधिष्ठिरजी के सब कार्य सिद्ध होगये क्योंकि आज ही हम इनको व इनके अनुयायी कर्णादिकों को पकड़ २७ पाण्डवों को सौंप देंगे यह कुछ हम को दुष्कर नहीं है परन्तु हम ऐसा निन्दित कर्म करने में प्रवृत्त ही न होंगे २८ व हम तो आपके समीप बैठे ही हैं कुछ पाप कर्म करहींगे नहीं पर यह पापी दुर्य्योधन जो कुछ किया चाहता हो सो करे उसे करके भी देख ले २९ हम तो यही जानते हैं कि पाण्डव व दुर्य्योधनादि सब तुम्हारे ही पुत्र हैं यह सुन धृतराष्ट्रजी विदुरजी से बोले कि उस राज्य के लोभी पापी दुर्य्योधन को अभी हमारे पास लावो ३० उसके मित्र, मन्त्री व दुश्शासनादि सहोदरों को भी लावो कदाचित् हम इस कुमार्ग्ग से हटाय सुमार्ग ही पर चला सकें ३१ तब विदुरजी सब राजाओं व भाई मित्रादिकों समेत विना इच्छा किये हुए दुर्य्योधन को फिर युक्ति से सभा में लाये ३२ तब कर्ण, दुश्शासन सहित व राजाओं के बीच में घिरे हुए दुर्य्योधन से धृतराष्ट्रजी बोले ३३ कि हे क्रूर, निर्लज्ज, बहुत पाप करनेवाले, नीच व नीच कर्मकारी सहायक युक्त! तू पापी सहायकों के सङ्ग पाप कर्म किया चाहता है ३४ जैसा कर्म तेरे समान कुलनाशक किया चाहता है वह प्रथम तो अशक्य है तू करी नहीं सकता फिर अयश करनेवाला है व सज्जन लोगों से निन्दित भी है ३५ अरे किसी के भी ढिठाई करने के अयोग्य बड़े दुःख से भी विशीर्ण होने के अयोग्य व इन पुण्डरीकाक्ष भगवान् को अपने पापी सहायकों के साथ बंधुआ करने की इच्छा करता है ३६ जो कृष्णचन्द्र इन्द्रादि देवताओं के मान के भी नहीं हैं कि वे भी इनके सामने अपना कुछ भी पराक्रम दिखा सकें हे मन्द! तिनको तू पकड़ना चाहता है जैसे बालक चन्द्रमा को पकड़ा चाहे ३७ जिन

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कृष्णचन्द्रजी को समर में देवता, दैत्य, मनुष्य, गन्धर्व व सर्प नहीं सह सकते तिन केशवजी को तू नहीं जानता ॥ ३८ ॥

दो० प्राणी पवन न गहिसकत, पुनि छुइ सकत न चन्द ।
शिरपर मही न उठि सकत, हरिबल से तिमि मन्द ॥ १ । ३९ ॥
इमि भाष्यहु धृतराष्ट्र जब, तब पुनि विदुर महान ।
दुर्य्योधन तन लखि बहुत, गुनि बोल्यहु युत ज्ञान ॥ २ । ४० ॥

विदुरजी बोले कि हे दुर्य्योधन ! इस समय हमारा यह वचन सुनो सौभ के द्वार पर एक द्विविद नाम बड़ा पराक्रमी वानर था उसने बड़ी भारी शिलाओं की वर्षा से कृष्णचन्द्रजी को आच्छादित कर दिया ४१ व उसने चाहा कि जबरदस्ती मैं कृष्णचन्द्रजी को पकड़ लूं परन्तु वह इनको नहीं पकड़ सका तिनको तुम जबरदस्ती बंधुआ करना चाहते हो ४२ व प्राग्ज्योतिषपुर में पहुँचे हुए कृष्णचन्द्रजी को असुरों समेत नरकासुर ने ग्रहण करना चाहा पर नहीं ग्रहण कर सका तिनको तुम बल से ग्रहण किया चाहते हो ४३ देखो अनेक युग वर्षों की आयुष-वाले कृष्णचन्द्रजी ने नरकासुर को मार सोलह सहस्र एकसौ कन्या अपने यहां लाय विधिपूर्वक अपने सङ्ग एकही मुहूर्त्त में नाना प्रकार के मन्दिरों में विवाह कर लिया तिनको तुम बल से बन्धन में डाला चाहते हो ४४ व निर्म्मोचन नगर में छ सहस्र महादैत्य पाशों से बँधे थे उन्होंने भी इनको ग्रहण करना चाहा था पर नहीं कर सके तिनको तुम बल से बन्धन में डाला चाहते हो ४५ व हे भरतर्षभ ! इन्होंने बाल्यावस्थाही में पूतना को मार डाला बकासुर को मारा व गाइयों की रक्षा के लिये गोवर्द्धन पर्वत उठा लिया ४६ व वृषभासुर, धेनुका-सुर, महाबली चाणूर, केशी व कंस को भी मारडाला ४७ व जरासन्ध, दन्तवक्र, वीर्यवान् शिशुपाल, बाणासुर तथा अन्य राजा लोगों को भी जीता ४८ राजा वरुण को जीता व अमित पराक्रमी अग्निजी को जीता व पारिजात हरने के समय साक्षात् इन्द्रजी को भी जीत लिया ४९

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व दूसरे जन्म में इन्होंने मधुकैटभ नाम दो दैत्यों को मारा अन्य जन्म में हयग्रीव नाम दैत्य को मारा ५० ये पौरुष के कारण हैं व कर्त्ता भी हैं पर करते नहीं हैं व जो जो करना चाहते सो २ विना यत्न ही किये कर डालते हैं ५१ तिन गोविन्द भगवान् को क्रोध किये हुए महा-विषधर सर्प के समान नहीं जानते जोकि तेज की राशि हैं ॥ ५२ ॥

दो० सहज कारि हरि महाभुज, कहँ धर्षत मनलाय।
तो पतङ्ग जिमि अनलगिरि, तिमि न रहहुयुत भाय ॥ १ । ५३॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३० ॥

एकसौइकतीस का अध्याय।

दो० यकसै इकतिसवें महैं, जिमि हरि निज तनुमाहिं।
दिखरायहु कौरवन कहँ सकल विश्व स्व कहाहिं ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि जब विदुरजी ने दुर्य्योधन से ऐसा कहा तो शत्रुसमूह के नाशक केशव भगवान् वीर्य्यवान् व महान् धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्य्योधन से बोले १ हे दुर्य्योधन ! हमको अकेले जान अना-दर कर तुम मोह से हमें बन्धुआ किया चाहते हो बड़े दुर्बुद्धि हो २ क्योंकि यहां हीं सब पाण्डव व वहां हीं सब वृष्णिवंशीय अन्धक-वंशीय व बारह सूर्य्य ग्यारह रुद्र व आठ वसु व सब महर्षि विद्यमान हैं हम अकेले नहीं हैं ३ इतना कह शत्रुओं के नाशक कृष्णचन्द्रजी बड़े ज़ोर से ठठाय हँसे कि उन महात्मा के हँसते सब अङ्गों में बिजुली के समान चमकते ४ सब ब्रह्मादि देवगण दिखाई दिये व सब अंगुष्ठ-मात्र की मूर्त्ति धारण किये अग्नि समान प्रकाशित थे ब्रह्माजी तो मस्तक में दिखाई दिये व महादेवजी छाती में ५ व सब लोकपाल भुजों में दिखाई दिये मुख से अग्निजी उत्पन्न हुए आदित्य, साध्य, वसु, अश्विनीकुमार ६ व इन्द्र सहित ४६ पवन, सब देवगण, विश्वे-देव, यक्ष, गन्धर्व्व, किन्नर, राक्षस सबके सब अपना २ रूप धारण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कर कृष्णचन्द्रजी के सब अङ्गों से निकल आगे खड़े हो गये ७ हरि की दोनों भुजाओं से बलदेवजी व अर्ज्जुनजी प्रकट हुए उनमें धनुर्बाण धारण किये अर्ज्जुनजी तो दहिनी ओर खड़े हुए व हल मुशल हाथों में लिये बलरामजी बाईं ओर ८ व भीमसेन, युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव पीठ से उत्पन्न हुए प्रद्युम्नादि सब अन्धक वृष्णिवंशीय भी पीठ ही से निकल ९ अपने २ अस्त्रशस्त्र ऊपर को उठाये कृष्णचन्द्रजी के आगे खड़े हो गये व शङ्ख, चक्र, गदा, शार्ङ्गधनुष, शक्ति हल आदि प्रभु के सब आयुध १० सब युद्ध करने को उद्यत दिखाई दिये भगवान् की उस समय सहस्रों बाहें दिखाई दीं तिनमें सबों में भिन्न २ प्रकार के आयुध दिखाई दिये ११ ये सब आयुध कोई तो मुख से उत्पन्न हुए कोई नेत्रों से कोई नासिका से कोई कानों से सबों में धुआं निकलता हुआ दिखाई देता व सब अग्नि समान प्रकाशित थे १२ व सब रोम-रोम से सूर्य्य के से किरण चमकते हुये दिखाई दिये महात्मा केशवजी का ऐसा घोर रूप देख १३ मारे भय के व्याकुल चित्त हो सब राजाओं ने अपने २ नेत्र मूंद लिये पर द्रोणाचार्य्य, भीष्मपितामह, महामतिमान् धृतराष्ट्र, विदुरजी १४ व महाभाग सञ्जयजी व सब तपोधन ऋषि लोग इन लोगों ने नेत्र नहीं मूंदे क्योंकि भगवान् कृष्णजी ने इन सबों को दिव्य दृष्टि दे दी १५ सभा में महात्मा माधवजी का यह महा आश्चर्य्य देख देवताओं ने नगाड़े बजाये व पुष्पों की वर्षा की १६ तब धृतराष्ट्रजी बोले हे यादवश्रेष्ठ ! हे पुण्डरीकाक्ष ! तुम्हीं सब संसार के हित हो इससे आप प्रसन्न होने योग्य हैं १७ व हे भगवन्! आपके अनुग्रह से जो मेरे बहुत दिव्य नेत्र हो आये हैं अब मैं चाहता हूँ कि फिर ये नेत्र जाते रहें क्योंकि जिन नेत्रों से आपको मैंने देखा उनसे अब दूसरे को देखा नहीं चाहता १८ इतना सुन जनार्द्दन भगवान् धृतराष्ट्र से बोले कि अच्छा हे कुरुनन्दन ! और नेत्र तो अब न रहेंगे पर दो नेत्र बने रहेंगे जिनको अभी तो सब लोग देखेंगे फिर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कोई उन्हें भी न देखेंगे १९ उस समय यह महा अद्भुत हुआ कि भगवान् के विश्वरूप के दर्शन की इच्छा से धृतराष्ट्र ने दो नेत्र सदा के लिये २० पाये धृतराष्ट्रजी को सभा में विराजमान देख सब राजा लोग व ऋषि लोग विस्मित हो कृष्णचन्द्रजी की बड़ी स्तुति करने लगे २१ व उस समय सब पृथ्वी चल उठी समुद्र खलभलाय उठा व जितने राजा थे सब अति विस्मित हुए २२ तब सब शत्रुओं के नाशक कृष्णचन्द्र महाराज ने अपनी वह दिव्य अद्भुत चित्र विचित्र व ऋद्धिमत्ता को व दिव्य देह को हर लिया जैसे प्रथम थे वैसे ही फिर हो गये २३ इसके पीछे ऋषियों की आज्ञा ले सात्यकी व हार्दिक्य के हाथ पकड़े कृष्ण भगवान् सभा से बाहर निकल गये २४ व फिर नारदादि ऋषि लोग भी उसी स्थान पर अन्तर्द्धान हो गये इस प्रकार यह महा कोलाहल एक अद्भुत सा हो गया २५ व जब कृष्णचन्द्रजी चले तो सब कौरव व राजा लोग भी उनके पीछे चले जैसे देवगण इन्द्रजी के पीछे २ चलते हैं २६ व सब राजमण्डल को मृत्यु के वशीभूत जान धुआं सहित अग्नि के समान कृष्ण भगवान् वहाँ से चले २७ चलने के समय किङ्किणी युक्त उज्ज्वल, सुवर्ण की झालर लगे हुए व मेघ का सा शब्द होते हुए व सब सामग्रीयुक्त व्याघ्र के चमड़े का वहार परे, शैव्य सुग्रीव मेघपुष्प बलाहक नाम घोड़े मचे रथ को ले दारुक नाम सारथि दिखाई दिया २८। २९ उसी तरह वृष्णिवंशियों में श्रेष्ठ कृतवर्म्माजी व हार्दिक्यजी भी अपने २ रथों पर चढ़े हुए दिखाई दिये ३० रथ के समीप जब कृष्णचन्द्रजी जाय सवार होने पर हुए तो फिर महाराज धृतराष्ट्रजी बोले ३१ हे जनार्द्दन ! हे शत्रुनाशक ! पुत्रों के विषय में जो कुछ हमारा बल है आपके सामने भी कहा सुना वह आपको प्रत्यक्ष ही विदित हुआ व परोक्ष जानों आपको कुछ है ही नहीं सब जानते ही हो ३२ हम कौरवों व पाण्डवों के मेल ही होने के विषय में बराबर यत्न करते रहे हमारी इस

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अवस्था को जान अब आप हमारे विषय में शङ्का करने के योग्य नहीं हैं ३३ व पाण्डवों के विषय में पाप करने का अभिप्राय हमारा नहीं है वह आप जानते ही हो जैसा हमने दुर्य्योधन से कहा ३४ व आपके आने के प्रथम जो कुछ हमने उस दुष्ट से कहा उसे सब कौरव व राजा लोग जानते हैं कि ये सब प्रकार से मिलाप ही करने में यत्न करते रहे पर क्या करें उसने नहीं माना ३५ वैशम्पायनजी बोले कि इसके पीछे महाबाहु जनार्द्दन भगवान्, धृतराष्ट्र, द्रोणाचार्य, भीष्मपितामह, विदुरजी व महाराज बाह्लिकजी व कृपाचार्यजी से बोले ३६ कि जिस प्रकार मन्द दुर्य्योधन मारे रोष के अशिष्ट पुरुष के समान सभा से उठ गया व जैसे २ समझाया गया सब आप लोगों को प्रत्यक्ष है ३७ व यह भी आप लोग सुनते हैं कि राजा धृतराष्ट्र अपने को इस विषय में असमर्थ बताते हैं इससे अब हम आप लोगों से बिदा होते हैं व युधिष्ठिरजी के समीप को जायँगे ३८ जब सबसे पूछ कृष्णचन्द्रजी रथ पर चढ़े तो पीछे पीछे सब कौरव लोग चले ॥ ३९ ॥

दो० भीष्म द्रोण कृप विदुर धृत, राष्ट्ररु बाह्लिक भूप।
अश्वत्थाम विकर्ण अरु, रथी युयुत्सु सुरूप ॥ १।४० ॥
इन सबके देखत स्वपितु, भगिनी देखन हेतु।
रथ पर चढ़ि श्रीहरि चले, सकल जनन सुखदेतु॥ २।४१ ॥

इतिश्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणिविश्वरूपदर्शनन्नामैकत्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः॥१३१॥

एकसौ बत्तीस का अध्याय।

दो० यकसै बत्तिसवें महँ, जिमि कुन्ती नृप नीति।
कहि हरिसों निज सुतन सों, कह्यो सँदेश सप्रीति॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि श्रीकृष्णचन्द्रजी कुन्तीजी के स्थान पर जाय प्रणाम कर कौरवों की सभा में जो वृत्तान्त हुआ सब कहने लगे कि १ हमने बहुत से हेतुयुक्त व ग्रहण करने के योग्य वचन कहे व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

परशुराम कण्व नारदादि ऋषियों ने भी बहुत समझाया व कहा पर दुर्योधन ने कुछ भी नहीं माना २ इससे ये सब दुर्योधन के वशानुगामी काल से पक रहे हैं वही होगा अब हम आपसे बिदा हो पाण्डवों के समीप जाते हैं ३ आपकी जबानी हम सब पाण्डवों से क्या कहेंगे वह कहिये हम तुम्हारे वचन सुना चाहते हैं ४ कुन्तीजी बोलीं कि हे केशव! धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिर से कहना कि पृथ्वीपालन से उत्पन्न तुम्हारा बड़ा भारी धर्म हीन हुआ जाता है हे पुत्र! उसे वृथा न करो ५ हे राजन्! जैसे अर्थज्ञानशून्य अपण्डित वेदपाठी ब्राह्मण की बुद्धि अत्यन्त वेदाक्षरों की वृत्ति से हत हो केवल धर्म ही को देखती है वैसे ही तुम्हारी बुद्धि सब छोड़ केवल धर्म ही को देखती है ६ हे प्रिय! जैसे ब्रह्मा ने तुमको बनाया है उस अपने धर्म को देखो क्षत्रिय को उन्होंने अपने दोनों बाहों से उत्पन्न किया है इसी से क्षत्रिय बाहों के ही वीर्य से अपनी जीविका करते हैं ७ उसमें प्रजाओं के पालन करने में बहुधा सब क्रूर ही कर्म करने परते हैं इस विषय में हमने वृद्धों के मुख से एक उपमा सुनी है उसे सुनो ८ पूर्वकाल की वार्त्ता है कि राजर्षि मुचुकुन्दजी को कुबेरजी ने यह सब पृथ्वी ऐसे ही दे दी परन्तु राजा ने न ग्रहण की ९ कहा कि हम अपने बाहों के ही बल से जीते हुए राज्य की इच्छा करते हैं किसी की दी हुई पृथ्वी नहीं चाहते, यह सुन कुबेरजी बहुत प्रसन्न हुए व विस्मित हुए व उसके पीछे राजा मुचुकुन्द ने अपने बाहुवीर्य्य ही से सब पृथ्वी भर का राज्य क्षत्रियों के धर्म पर टिककर किया १० । ११ व जिस राजा से अच्छी तरह रक्षित हो प्रजा जितना धर्म करती है उस धर्म का चतुर्थांश राजा को मिलता है १२ कदाचित् राजा अपने बूते भी कुछ धर्म करे तो वह तो अमृतत्व ही को प्राप्त हो जाय व जो राजा अधर्म करे तो फिर नरक ही को जाय इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है १३ व जो धर्म करने के लिये राजा प्रजाओं को दण्ड देता है वह दण्ड नीति ही है अनुचित नहीं है

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

क्योंकि दण्ड पाने से प्रजा धर्म करने लगती हैं १४ व जब राजा अच्छी तरह दण्ड-नीति ही पर बर्त्ताव करता है तब परम श्रेष्ठ सत्य-युग का काल प्रवर्त्तित हो जाता है १५ काल राजा का कारण होता है कि राजा काल का कारण होता है यह तुमको संशय न होना चाहिये क्योंकि राजा ही काल का कारण होता काल राजा का कारण नहीं होता १६ राजा ही सत्ययुग त्रेता द्वापर व कलियुग सब युगों का कारण होता क्योंकि इन सबों के उत्पन्न करनेवाला राजा ही होता है १७ सत्ययुग का कारण होने से राजा अत्यन्त स्वर्ग-वास करता है व त्रेता का कारण होने से अत्यन्त स्वर्ग नहीं भोगता १८ व द्वापर के प्रवर्त्तन करने से कुछ स्वर्ग का भाग उसे मिलता है व कलियुग का बर्त्ताव करने से वह अत्यन्त पाप भोगता है १९ उससे वह पापी दुष्कर्म्म करनेवाला राजा बहुत दिनों तक नरक में बसता है राजा का दोष प्रजा को लगता है व प्रजा का दोष राजा को २० इससे पिता पितामहादिकों के उचित तुम भी राजधर्म्मों को ही देखो जिस आचरण पर तुम टिके हो वह राजर्षियों का आचरण नहीं है २१ क्योंकि जो राजा विकलता को प्राप्त हो क्रूरता कुछ भी नहीं करता वह प्रजापालन से उत्पन्न फल कुछ भी नहीं पाता २२ अब जिस बुद्धि से तुम ऐसा सन्तोष किये बैठे हो वह न तो पाण्डुजी ने तुम्हें सिखाई न हमने न तुम्हारे पितामह व्यास भगवान्जी ने २३ हमने तो नित्य यही तुमको सिखाया था कि नित्य यज्ञ करना, दान देना, तप करना, शूरता रखना, प्रज्ञावान् होना, सन्तान बढ़ाना, माहात्म्य करना, पराक्रम करना व बल करना २४ व नित्य स्वाहा स्वधा का प्रयोग करना क्योंकि ये देवता व मनुष्यों की देवता हैं इससे दीर्घ आयु, धन व पुत्र देती हैं पर जब इन स्वाहा स्वधा का अच्छी तरह आराधन होता है २५ माता पिता व देवता सब पुत्रों को यही सिखाते हैं कि दान करना, वेद शास्त्र

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पढ़ना, यज्ञ करना व प्रजाओं का पालन करना बस यही करना २६ यह चाहे धर्म हो व अधर्म पर जब क्षत्रिय के वंश में जन्म हुआ तो जन्म होते के साथ ही ये कर्म लिख दिये गये परन्तु तुम विद्वान् होकर भी व कुलीन कुल में जन्म पाय भी अपनी वृत्ति पर नहीं चलते इससे पीड़ित हो २७ व जिस दानपति व शूर के समीप जाय भूखे व रक्षा की इच्छा किये लोग भोजन पाते व रक्षित होते हैं उससे फिर सन्तुष्ट होते हैं इससे अधिक और कौन धर्म पृथ्वी पर है २८ धर्म्मात्मा पुरुष को चाहिये कि राज्यपाय दान देने से व बल से व सत्य बोलने से सब कहीं से ग्रहण करे २९ ब्राह्मण का धर्म भिक्षाटन करना है व क्षत्रिय का पालन करना व वैश्य का धन इकट्ठा करना व शूद्र का इन तीनों की सेवा करना ३० सो भीख माँगने का जानों तुमको निषेध ही ठहरा व वैश्यों का कर्म होने से खेती भी कर नहीं सक्के क्योंकि तुम क्षत्रिय हो क्षत अर्थात् नाश से जो रक्षा करे उसे क्षत्रिय कहते हैं व वह अपने बाहु ही के वीर्य से जीविका करता है ३१ हे महाबाहो! पिता का अंश डूब गया है उसे फिर उतरावो चाहे साम से व भेद से व दान से व दण्ड से व न्याय से ॥ ३२ ॥

दो० तुम्हें जन्मि प्रिय मित्र कहँ, दीनबन्धु हम जौन।
परदीन्हों भोजन करत, यासों दुख कहु कौन ॥ १ । ३३ ॥
राजधर्म सों लड़हु जनि, बोरहु पितरन काहिं।
क्षीण पुण्य ह्वै जाहु जनि, अधरमरत गति पाहिं ॥ २ । ३४ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्वात्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३२ ॥

एकसौतेंतीस का अध्याय।

दो० यकसै तेंतिसवें महैं, कहब पृथा जिमि भाष।
क्षात्र धर्म बिदुला चरित, कहि त्यहि साखी राष ॥ १ ॥

कुन्तीजी बोलीं कि इस विषय में बिदुला नाम एक क्षत्रिय की

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

स्त्री व उसके पुत्र का संवाद पुराना इतिहास कहा जाता है १ उस इतिहास को कह बहुत प्रकार से कल्याण की बात युधिष्ठिर से कहना, वह इतिहास यह है, कि यशस्विनी, क्रोधवती व बड़े कुल में उत्पन्न २ क्षत्रियों के धर्म में रत, इन्द्रियों को दमन किये, बहुत आगे की बातें जाननेवाली व बहुत सुनी पढ़ी लिखी राजसमाज में प्रसिद्ध ३ जिसका बिदुला नाम था व क्षत्रिय की स्त्री थी उसने अपने औरस पुत्र की बड़ी निन्दा की जोकि सिन्धुदेश के राजा से युद्ध में हार अचेत हो सो रहा था ४ बिदुला बोली कि हे अनन्दन, कुपुत्र! शत्रुओं को हर्षित करानेवाले तू न हमसे उत्पन्न हुआ न पिता से यहां कहां से आ गया ५ क्योंकि तू क्रोधहीन है इससे तेरी गिनती क्षत्रियों में नहीं है, तेरे सब साधन नपुंसक के हैं अरे जब तक तेरा जीवना है तब तक भी निराश हो बैठा है, कल्याण के लिये अपने बोझ को उठा ६ अरे अपना अपमान न कर व इस आत्मा को अल्प वस्तु से न पाल व कल्याणयुक्त मनकर तू न डर व भय को छोड़ दे ७ हे कुपुरुष! उठ खड़ा हो, उद्योगहीन हो क्यों सोता है, अरे पराजित हो कोई तेरे समान सुस्त होकर सोता है, तू सब अमित्रों को आनन्दित कराता हुआ मानरहित हो बन्धुओं को शोक दे रहा है ८ छोटी नदी थोड़े ही जल से भरी रहती है व चोर की अञ्जलि थोड़े में पूरी हो जाती है व कुपुरुष थोड़े ही में सन्तोष कर रहते हैं ९ जैसे कोई सर्प के दाँत तोड़ने लगता व नाश को प्राप्त हो जाता इसी प्रकार तू भी चाहे मरे पर युद्ध अवश्य ही करे, चाहे प्राण के रहने में संशय भी हो पर पराक्रम अवश्य ही तू कर १० व जैसे आकाश में घूमते हुए बाज को यद्यपि बड़ी भय रहती पर वह शत्रुओं के मारने को युक्तिपूर्वक घूमता ही रहता है ऐसे ही तू भी शत्रुओं को पराजित करने के लिये चुप्पे उनके छिद्र देखता हुआ घूमता फिरता रह शङ्का न कर ११ अरे तू क्या वज्र से मारा गया है जो मरे पुरुष के समान सो रहा है अरे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हे कुपुरुष! उठ शत्रु से हार अब क्या सो रहा है १२ अरे कृपण हो अस्त न हो, अपने कर्म्म से विख्यात हो, अरे साम व भेद ये मध्यम व निकृष्ट हैं इनमें न टिक व दान अधम है उसमें भी न टिक, दण्ड सबमें उत्तम है इससे गर्ज्जता हुआ उठ शत्रु को दण्ड दे १३ तिंदुआ की लकड़ी के समान मुहूर्त्त ही मात्र में धधक बरने लग व जीने की इच्छा से बूसी की आग के समान बिना चिनगारियों का न हो जाय १४ एक मुहूर्त्त भर में बर उठना कल्याणकारक है, बड़ी देर तक धुआंता रहना अच्छा नहीं, अरे राजा के घर में तीक्ष्ण ही होकर जन्म ले कोमल स्वभाव हो न जन्म ले १५ मनुष्य मनुष्य का कर्म्म कर व उत्तम संग्राम उत्पन्न कर धर्म्म से उऋण होता है अरे भयभीत हो अपनी निन्दा नहीं कराता १६ कार्य्य करने पर उसका फल पाय न पाय पण्डित शोच नहीं करता किन्तु निरन्तर कार्य्य करता ही रहता अपने प्राण व धन की इच्छा से बैठा नहीं रहता १७ कि तो वीर्य्य को बढ़ाय युद्ध कर व फिर मृतक ही होजा जिसमें तेरा मुख न देखूं हे पुत्र! धर्म्म को आगे कर किस लिये जीता है वीर्य्य नहीं करता १८ हे नपुंसक! तू ने जो कूप तड़ागादि खुदाये व बाग लगवाये वे सब नष्ट हो गये व सब तेरी कीर्ति हत होगई क्योंकि भोग का निमित्त राज्य तो तेरा छिन्न हो गया फिर अब किस निमित्त जीता है १६ शत्रु को जांघ ही में बांधे रहे उसके साथही चाहे गिरे व बूड़े पर छूटने न पावे निरुद्यम हो कभी न बैठे चाहे राज्य धन जाता भी रहै पर हाथ पर हाथ धरे बैठा न रहै करता कुछ अवश्य रहै २० कुलीन घोड़ों के समान भार को उठाना ही चाहिये अरे अपने पौरुष को प्राप्त हो पराक्रम व मानकर क्या परा है २१ अरे यह कुल तेरे ही लिये डूबता है इसे क्यों नहीं उतारता क्योंकि जिस पुरुष का महा अद्भुत समाचार पुरुष सर्वत्र बकते न फिरे २२ वह न पुरुष है न स्त्री किन्तु नपुंसक ही है॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो० दान तपस्या सत्य महँ, विद्या अरु धनमाहिं।
प्रथम रेख नहिं जासु सों, मातु मूत शक नाहिं ॥ १ । २३ ॥
विद्या तप श्री विक्रमहुँ, सों जो निदरै आन।
कर्म्म पाय सत्पुरुष के, उत्तम सोइ पुमान ॥ २ । २४ ॥

इससे हे पुत्र! तू स्त्री तुल्य पुरुषों की व भिक्षा माँगने की वृत्ति के योग्य नहीं है २५ क्योंकि वह वृत्ति क्रूर निर्लज्ज अयशस्वी पुरुषों के ही योग्य होती है व जिस कुत्सित दुर्बल पुरुष की प्रशंसा शत्रु लोग करें कि यह बेचारा अच्छा है २६ व लोक में सब उसका अनादर करें बैठने उठने का स्थान पहिरने को वस्त्र न मिलें व थोड़े भी लाभ को बहुत माने व सबसे हीन बना रहै व थोड़े ही में अपनी जीविका कर ले व अपने को अल्प ही जाने २७ ऐसे बन्धु को पाय उसके भाई बान्धव सुख नहीं पाते क्योंकि वे लोग कहते हैं कि हमारी कोई जीविका तो है ही नहीं इससे अवश्य ही मरेंगे क्योंकि देश से भी निकाल दिये जायँगे २८ व उसकी जातिवाले सब कामरसों से हीन हो जाते हैं क्योंकि स्थान से भ्रष्ट होने से उनके पास कुछ रह तो जाता ही नहीं हे सञ्जयनाम पुत्र! सज्जनों के सामने अमङ्गलकारी व कुल वंश के नाशक कलिरूप तुझ पुत्र को हमने पुत्र के अपवाद ही से उत्पन्न किया कोई सीमन्तिनी स्त्री अमर्ष शून्य उत्साहरहित वीर्य्यहीन व शत्रुओं का आनन्ददायी तुझ सदृश पुत्र न उत्पन्न करै ॥ २९ । ३० ॥

दो० जनि धुआंसिगाहि शत्रुज्वल, नाशु शत्रुगण आसु।
शत्रु शीश पर चढ़ि ज्वलै, क्षणमुहूर्त्त तहँ जासु ॥ १ । ३१ ॥
क्षमा रहित अमरष सहित, पुरुष स्वई नहिं आन।
क्षमावान अमरष रहित, नहिं नारी न पुमान ॥ २ । ३२ ॥
श्री नाशत सन्तोष अरु, दया करत श्री भङ्ग।
उभय भयद उत्थान के, नहिं निरीह सुख ढङ्ग ॥ ३ । ३३ ॥
सकल पराभव दोष से, निजसे निजहि छुड़ाव।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हृदय लोह करु मोह तजु, लहु धन राज्य बनाव ॥ ४। ३४ ॥

जिससे पुरुषों को नहीं सह सक्ता इसी से पुरुष कहाता है व जो स्त्री के समान घर में लुका बैठा जीता है उसका पुरुष नाम व्यर्थ है ३५ व जो पुरुष सिंह के समान विक्रमी हो शूरता से पराक्रम बढ़ाय सब को दिखाता चाहे वह भाग्य के भरोसे भी रहता हो तो भी उसकी प्रजा आनन्दित रहती है ३६ व जो पुरुष अपने प्रिय व सुख को छोड़ श्री होने को ही ढूंढ़ता रहता है वह बहुत ही शीघ्र अपने मन्त्री दीवान आदि अमात्यों को हर्षित कराता है ३७। ३८ यह सुन बिदुला का पुत्र सञ्जय बोला कि जब हमको तुम न देखोगी तो तुमको सारी पृथ्वी का राज्य मिलने से क्या सुख होगा, व भूषण वस्त्रादिकों से क्या होगा व भोग विलास की वस्तुओं से ही क्या होगा व प्राण ही से क्या होगा ३९ इतना सुन माता बोली कि, हां जो पुरुष निर्द्धन हो ऐसा कहते हैं कि आज क्या खायँगे क्या भोग करेंगे उनको जो लोक मिलते हैं वे तो हमारे शत्रुओं को मिलें व जो शस्त्रों से विना मारे हुए विजयी भूपों को लोक मिलते वे हमारे सुहृदों को मिलें ४० इससे हे पुत्र! भृत्यों से त्यागे पराये अन्न से जीते व पराक्रमरहित कृपणों की जीविका न ग्रहण करो ४१ हे तात! तुम्हारे पीछे ब्राह्मण लोग व सुहृद लोग जियें जैसे बादर के पीछे सब प्राणी जीते व इन्द्र के पीछे सब देवगण ४२ हे सञ्जय! जैसे पके फल लगे वृक्ष को पाय सब प्राणी जीते हैं वैसे ही जिस पुरुष को पाय सब लोग जीते हैं उसका जीवन सफल है ४३ जिस शूर के विक्रमों से बढ़े हुए बान्धव लोग सुख से जीते हैं जैसे देवगण इन्द्र के विक्रम से जीते उस पुरुष का जीवन इस संसार में अच्छा है ॥ ४४ ॥

दो० जो स्वबाहु बल पाय नर, जियत न आश्रित आन।
वह यहँ पावत कीर्त्ति वहँ, शुभगति लहत महान ॥१।४५॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्रयस्त्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३३ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौचौंतीस का अध्याय ।

दो० यकसै चौंतिसवें महैं, पुनि बिदुला निज पूत ।
जिमि समझायहु कहबकरि, चात्रधर्म्म मजबूत ॥ १ ॥

बिदुला फिर बोली कि इस अवस्था में जो पुत्र पौरुष त्यागना चाहते हो तो हीन पुरुषों से सेवित मार्ग्ग में बहुत ही शीघ्र चलोगे १ जो क्षत्रिय अपने जीने की इच्छा करता हो पर विक्रम से यथाशक्ति अपना पौरुष नहीं दिखाता पण्डित लोग उसे चोर कहते हैं क्षत्रिय नहीं कहते २ क्या कहें अर्थ युक्त, सिद्ध व गुणवान् वाक्य तुम को कैसे नहीं प्राप्त होते जैसे मरने की इच्छा किये हुए पुरुष को औषध नहीं पहुँचती ३ सब जन सिन्धुदेश के राजा वैसे सन्तुष्ट नहीं हैं जैसे तुम से रहते थे परन्तु क्या करें मारे दुःख समूहों से पीड़ित हो दुर्बलता के कारण समय परखते परे हैं ४ व बहुत से लोग अन्य लोगों को सहाय बनाय तुम्हारे पौरुष की राह देखते हुए दुःखित हो रहे हैं ५ इस से उन लोगों को इकट्ठे कर पर्वत पर किला बनाय जाय धाय अगुआय वहां बसो व समय पाय शरीर को दुःख दे युद्ध करो यह शरीर अजर अमर नहीं है कभी न कभी मरी जायगा ६ हे पुत्र! तुम्हारा सञ्जय नाम है जिसका अर्थ अच्छी तरह जीतनेवाला है पर वह बात तुम में नहीं पाई जाती इससे अपना नाम सार्थक करो जाय शत्रु को जीतो हे पुत्र! यह नाम व्यर्थ न करो ७ एक महाप्राज्ञ ज्योतिर्विद ब्राह्मण जी ने बालपन में तुम्हें देख कहा था कि यह बालक महाकष्ट पाय फिर बढ़ती को पावेगा ८ हम उन्हीं ब्राह्मण देव के वचन का स्मरण करती हुई बार बार तुम्हारी विजय कहती हैं व इसीसे तुमको युद्ध करने को कहती हैं व बार बार कहेंगी ९ व जिसके प्रयोजन की सिद्धि के विषय में उसके सम्बन्धी लोग जोकि उससे बढ़ते हैं उद्यत होते हैं उसके अर्थ की सिद्धि जरूर होती है क्योंकि वह नीति पर चलता होगा इसीसे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वे लोग उसकी बढ़ती मनाते हैं १० हे सञ्जय! अपने मन में यह विचार लो कि चाहे इसमें लाभ हो व अलाभ पर हमारे पूर्वजों का यह राज्य है इसे न छोड़ना चाहिये युद्ध ही करो राज्य न छोड़ो ११ शम्बरासुर ने कहा है कि इससे पापिनी और अवस्था नहीं है जिसमें न आज भोजन मिला है न प्रातःकाल मिलने की आशा है १२ पति पुत्र के मरण से भी यह दारिद्र्यरूप मरण अधिक दुःखदायी है क्योंकि दारिद्र्य भी मरजाने ही का दूसरा नाम है वह विना युद्ध किये मिटेहीगा नहीं १३ देखो हमारा बड़े कुलीन के यहां तो जन्म हुआ व फिर मानों कुण्ड से निकल फिर उसी प्रकार के कुण्ड में आई कि उत्तम कुल में विवाह हुआ फिर सब कल्याण सहित सबकी स्वामिनी हुई व पति ने बहुत आदर से रक्षा की १४ व पूर्व समय में बड़े मोल के भूषण पहिरे व सुन्दर चिकने महीन रेशमी आदि वस्त्र धारण किये सुहृदों के बीच में सबसे अधिक प्रसन्न देखते थे १५ व अब जब हम को व अपनी स्त्री को मारे भूखों के अत्यन्त दुर्बल देखोगे तो हे सञ्जय! फिर अपने जीने से कुछ अर्थ न समझोगे १६ जब जीविका न पाने से कामकाजी नौकर, चाकर, आचार्य, ऋत्विक्, पुरोहित लोग हम को छोड़ अपने अपने स्थान को चले जायँगे वैसी हमें देख फिर तुम को जीवन से कौन प्रयोजन रहेगा १७ जो हम बड़ाई करने व यश के योग्य तुम्हारे कर्म पहिले के से नहीं देखतीं तो हमारे जी को कौन शान्ति है १८ जब हम ब्राह्मण से कहेंगी कि हमारे पास नहीं है तब तो हमारा हृदय फटी जायगा क्योंकि आज तक कभी न हमने ब्राह्मण से नहीं यह कहा न हमारे पति ने कभी कहा १९ अब तक हम लोग ऐसी रहीं कि सब लोग हमारे आश्रयी होते थे इससे हम लोगों ने कभी किसी की आज्ञा सुनी ही नहीं वही हम जो दूसरे की आश्रय पाय जीवेंगी तो प्राण ही छोड़ देंगी उस दशा को न सहेंगी॥ २०॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो० भव अपारमहँ पार ग्वहिं, भव अनावमहँ नाव।

करु अभवन महँ भवनग्वहिं, मरिहि जियाव सुताव ॥ १।२१ ॥

कदाचित् तुम जीने की आशा छोड़ दो तो सब तुम्हारे शत्रु तुम्हारी वश में होजायँ व जो यही नपुंसकों की वृत्ति अच्छी समझोगे तो काहे को शत्रुओं को जीतोगे २२ इससे उदास हो व मन अलगकर इस पाप जीविका को छोड़ दो क्योंकि शूर केवल एक शत्रु ही के मारने से प्रसिद्ध होजाता है २३ देखो इन्द्र ने जबसे वृत्रासुर को मारा तब से उनका महेन्द्र नाम होगया व तबसे यज्ञों में अपना माहेन्द्रभाग पाने लगे व सबके ईश्वर हुए २४ व जब पुरुष समर में अपना नाम सुनाय अस्त्र शस्त्र धारण किये शत्रुओं को युद्ध के लिये ललकार सेना के मुख्य मुख्य वीरों को फटकार व मार शत्रु को संहार युद्ध से महायश पाता है तभी उसके शत्रु व्यथित होते व आय पैरों पर झुकते २५ जो पुरुष रण में दक्ष होते व शूर होते कुपुरुष लोग अवश हो उनके आगे देह छोड़ अपनी सब समृद्धियों से उसे पूरित करते हैं २६ चाहे राज्य मिले व उग्र नाश हो व प्राण के रहने में संशय हो परन्तु जब शत्रु को पाय जाते हैं तो साधु लोग फिर उसका शेष नहीं रखते मार उजार तहस नहस कर देते हैं २७ यह राज्य स्वर्ग द्वार व अमृत के तुल्य है इससे स्वर्ग व राज्य का एक ही दरवाजा जान जाव उल्मुक के समान प्रकाशित हो युद्ध करो कि तो राज्य ही पावोगे व स्वर्ग ही २८ हे राजन्! रण में शत्रुओं को मारो व अपने क्षत्रिय के धर्म को पालो जिसमें तुम सरीखे कृपण शत्रुओं के शोक बढ़ानेवाले को अतिकृपण को अपने लोगों को शोचते व शत्रुओं को गर्जते हुए व इन दोनों से घेरे हुए तुमको अनाथ के समान परे अनाथ व दीन हो हम न देखें २९। ३० अपनी स्त्रियों के सङ्ग हर्षित होवो व जैसे आगे अपने अर्थों से बड़ाई पाते थे वैसे ही फिर पावो अवश व पीड़ित हो सिन्धु-देश की कन्याओं के वश में न परो ३१ तुम्हारी युवा तो अवस्था है

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व रूप से सम्पन्न हो विद्या से भी युक्त व परिवार भी सब विद्यमान ऐसा भी यशस्वी व लोक में प्रसिद्ध पुरुष जो समर से भागे तो ३२ जैसे नवनिकार बर्द जुआ नहीं लेता वैसाही ठहरे फिर उससे तो मरण अच्छा व जब हम तुमको शत्रु से प्रिय वचन बोलते देखेंगी ३३ व शत्रु के पीछे पीछे चलते तो हमारे हृदय की कौन सी शान्ति होगी क्योंकि इस कुल में कभी ऐसा कोई उत्पन्न ही नहीं हुआ जो शत्रु के पीछे पीछे चला हो ३४ हे तात ! इससे तुम शत्रु के अनुचर हो जीने के योग्य नहीं हो क्योंकि हम क्षत्रिय का हृदय जानती हैं जैसा निरन्तर रहता है ३५ यह बात अपने वंश के पुरुषों ने कही है व अन्य वंशवालों ने भी व सब श्रेष्ठों ने भी कि क्षत्रियों का हृदय नाश रहित व निरन्तर रहनेवाला ब्रह्माजी ने बनाया है ३६ इससे क्षत्रिय कर्म का जाननेवाला जो कोई क्षत्रिय यहां उत्पन्न हुआ व अपनी वृत्ति को देखता वह चाहे प्राण जाते रहे पर किसी के आगे झुकता नहीं ३७ उद्यम ही करे नम्र कभी न हो क्योंकि उद्यम ही का पौरुष नाम है चाहे बीच से टूटजाय पर झुके कभी न ३८ सर्वत्र क्षत्रिय मतवाले हाथी के समान महामनस्वी होकर चले, पर हे सञ्जय ! ब्राह्मणों के सदा नमस्कार करे व धर्म के नमस्कार करे ३९ व अन्य वर्णों को सदा शान्त करता रहै व सबके पाप मिटाता रहै चाहे सहाय सहित हो व सहाय रहित जबतक जिये इसी वृत्ति से दूसरी से नहीं ॥ ४० । ४१ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुस्त्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३४ ॥

एकसौपैंतीस का अध्याय।

दो० यकसै पैंतिसवें महैं, कहब मातु जिमि पूत।
समझायहु नृपनीति कहि, सबप्रकार मजबूत ॥ १ ॥

पुत्र अपनी माता से बोला कि हे असहनशील, करुणाहीन व वीर बुद्धिवाली, माताजी ! तुम्हारा हृदय तो काले लोहे के पिण्ड ही के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

समान कठोर है १ क्षत्रियों के समाचार बड़े आश्चर्य्य युक्त होते हैं जिनके कारण हमको युद्ध करने को कहती हो जैसे कोई दूसरे की माता किसी अन्य पुरुष को समर करने के लिये प्रेरणा करती है २ हम अकेले पुत्र को आप ऐसा वचन कहती हैं हमारे न होने पर जो तुमको सम्पूर्ण पृथ्वी का भी राज्य मिल जायगा तो क्या होगा ३ व जब प्राण प्रिय पुत्र हम न रहेंगे तो तुमको भूषण भोग व प्राणों से भी क्या होगा ४ इतना सुन माता बोली कि हे पुत्र! पण्डितों की सब अवस्था धर्म व अर्थ ही के निमित्त होती है उन्हीं धर्म अर्थों को देख ही कर हमने तुमको युद्ध करने को प्रेरणा की ५ व यह काल देखने के योग्य पराक्रम से युक्त है जो इस समय करने के योग्य युद्ध तुम न करोगे तो ६ जो तुम अपनी देह के विषय में व शत्रुओं के विषय में दया करोगे, तो तुम ऐसे अयश से संयुक्त हो जावोगे कि हम फिर कुछ भी न तुमसे कह सकेंगी ७ जो सामर्थहीन पुत्र के लिये निरर्थक वत्सलता की जाती है वह गधी की सी वत्सलता कहाती है जैसे उसका बच्चा कर तो कुछ भी नहीं सक्ता पर वह प्रेम करती ही है इससे अब सज्जन निन्दित व मूर्ख सेवित इस मार्ग को छोड़ो ८ जिसमें यह सब प्रजा टिकी है कि इस देह ही के नाश को आत्मनाश समझती है वह बड़ी भारी अविद्या है यदि तुमको भी वही अविद्या है तो बहुत ही अच्छा यह तो शील ही है हमको प्रिय ही होगे अर्थात् जो देहात्मवादी व दुश्शील होगे तो हमारे वैरी ही होओगे हम तुम्हारा प्रिय न करेंगी ९ इससे धर्म अर्थ गुण युक्त सज्जनों के किये हुए व देवता मनुष्यों के भी करने के योग्य गुणों को धारण करो इनके विपरीत गुणों को कभी न अङ्गीकार करो १० क्योंकि जो पुरुष अनम्र दुर्बुद्धि दुर्विनीत पुत्र व नाती से युक्त होता उसकी प्रजा का फल निष्फल हो जाता है जो पुरुष कर्म करते ही नहीं अथवा ११ जो निन्दित कर्म करते हैं वे अधम पुरुष न यहीं सुख पाते हैं न अन्त होने पर स्वर्गादिही में सुख पाते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हैं १२ हे सञ्जय! युद्ध करने के लिये व जीतने के निमित्त क्षत्रिय बनाये गये हैं इससे युद्ध में जीतने से व मारे जाने पर भी इन्द्र के लोक को जाते हैं १३ अमित्रों को अपने वश में कर क्षत्रिय जो सुख पाते हैं वह स्वर्ग लोक में अति पुण्य इन्द्र के मन्दिर में भी नहीं है १४ क्रोध से जलते हुए मनस्वी पुरुष को चाहिये कि उसका बड़ा भारी अपमान भी हो गया हो तो भी शत्रुओं के जीतने ही की इच्छा किये रहै १५ क्योंकि विना अपने मर जाने पर व शत्रु का नाश कर डालने पर अन्य उपाय से उसकी शान्ति कैसे हो सकती है १६ इस संसार में प्राज्ञ पुरुष थोड़ा अप्रिय चाहते हैं व जो लोग थोड़ा प्रिय चाहते हैं उन को वह अप्रिय हो जाता है अर्थात् राजा को थोड़े ही में सन्तुष्ट न हो जाना चाहिये १७ व प्रिय के अभाव में पुरुष अच्छे पदार्थ को नहीं पाता किन्तु फिर उसका अभाव ही हो जाता है जैसे समुद्र में जाने से गङ्गाजी का अभाव ही हो गया १८ इतना सुन पुत्र बोला हे मातः! ऐसी मति तुमको उचित नहीं है फिर मुझ पुत्र के विषय में तो विशेष ऐसी मति न चाहिये इससे जड़ व मूकों के समान करुणा ही पर टिको १९ यह सुन माता बोली कि इस वचन से हमारी बड़ी ही समृद्धि हुई जो कि तुमने हमको करुणा करने को कहा परन्तु हमारा वज्र का हृदय है इससे हम तुम्हें युद्ध ही करने को कहती हैं २० जब तुम सब सिन्धु-देश निवासियों को जीत आवोगे तब हम तुम्हारी बड़ाई करेंगी सो कुछ कठिन नहीं है तुम्हारी विजय होगी परन्तु कष्टसाध्य है २१ पुत्र बोला कि न तो हमारे पास धन है न कोई सहायक है फिर हमारी जय कैसे होगी अपनी इसी दारुण अवस्था को जान २२ राज्य से हम निवृत्त हो गये जैसे पापी पुरुष स्वर्ग से निवृत्त हो जाता है अब इस विषय में कोई उपाय आप देखती हों तो २३ हम पूछते हैं बताइये जैसा आप कहेंगी हम सब करेंगे कुछ भी अन्तर न पड़ेगा २४ माता बोली हे पुत्र! जिसके पास धन राज्यादि की समृद्धि न रह जाय उसे अपने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

आत्मा का अनादर न करना चाहिये क्योंकि अर्थ धर्म कामादि कहीं नहीं होते पर हो आते हैं न कहीं होते हैं वे भी नष्ट हो जाते हैं २५ परन्तु अमर्ष ही के साथ अनारियों को भी अर्थादि सिद्ध करने का उपाय न करना चाहिये किन्तु आदर ही के साथ करना चाहिये व हे तात! सब कर्म्मों के फल में अनित्यता ही है इससे जो पण्डित लोग हैं वे अनित्य जानते हैं कभी ऐश्वर्य पा जाते हैं व कभी उनके अर्थ नहीं सिद्ध होते २६ इससे जो कर्म फल को अनित्य जान कर्म ही नहीं करते वे तो किसी प्रकार फल पाते ही नहीं क्योंकि न करने का तो यही एक ही फल ही है कि फल न पावे २७ व जो लोग हाथपैर चलाय कुछ कर्म करते हैं उसमें दो फल होते हैं कभी सिद्धि कभी असिद्धि व जिसको सब अर्थों की अनित्यता प्रथमही से विदित है २८ हे राजकुमार! वह अपनी पीड़ा व शत्रु का ऐश्वर्य दोनों को दूर करै इससे युद्धादि कर्म करने के लिये उठ खड़े होना चाहिये जाग उठना चाहिये व बहुत से कर्मों के करने में तैयार रहना चाहिये २९ व यह कार्य सिद्ध ही होगा ऐसा अपने मन में कर जो पुरुष मङ्गल वस्तुओं को आगे कर ब्राह्मणों व देवताओं की सहाय से करता है ३० उस प्राज्ञ राजा की वृद्धि बहुत ही शीघ्र होती है व उसको लक्ष्मी प्राप्त होती है जैसे सूर्य पूर्व दिशा में उदय होते ही हैं ३१ बहुत से दृष्टान्त व उपाय व उत्कर्षता की बातें तुम सीखे हो सीखने की आवश्यकता नहीं अब पौरुष करो हाथ पर हाथ धरे बैठने से कुछ न होगा ३२ अब पुरुषार्थ ही को अपना अभीष्ट जान उसको ग्रहण करो व जो लोग क्रोधी लोभी क्षीण बल अहङ्कारी, अपमानयुक्त ३३ व स्पर्द्धा रखते हों उनको योग्य हो युक्ति से अपने वश में लावो, इस प्रकार से तुम बड़े २ गणों को मार डालोगे ३४ व जितने वीर तुम्हारी ओर हैं सबको मासिक प्रथम दे दिया करो व उनको भोजन कराय पीछे तुम करते रहो प्रातःकाल सबसे प्रिय ही वचन कहो ऐसा करने स तुम शत्रुओं को ऐसा हटा-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

आगे जैसा कि पवन बादरों को हटाता है ३५ वे लोग तुमको अवश्य प्रिय समझ तुम्हारे आगे युद्ध करने को चलेंगे ३६ जब जीने की इच्छा किये हुआ शत्रु अपने शत्रु को मरने पर उतारू देखता है तो उससे भय खाता है जैसे जिस घर में सर्प्प रहता है उससे लोग भय खाते हैं ३७ व जो शत्रु बलवान् हो अशक्ति के कारण वश में न कर सके तो अच्छे दूतों की द्वारा साम दाम भेद से उसे अपने वश में लावे ऐसा करने से अवश्य शत्रु वश में आ जायगा ३८ इस प्रकार परिनिष्ठित होने से स्थान मिल जाता है व जब स्थान मिलता तो धन वृद्धि भी होती ही है व फिर धनवान् पुरुष के समीप मित्र लोग आते व आश्रयी होते हैं ३९ व जब उसके पास धन नहीं रह जाता तो मित्रवर्ग्ग व बन्धुवर्ग्ग सब उसे छोड़ देते हैं व उसका विश्वास नहीं करते बरन उसकी निन्दा करने लगते हैं ॥ ४० ॥

दो० करि सहाय जो रिपुहि कर, करत सदा विश्वास।
राज्य लहब दुस्तर अहै, तासु नहीं कछु आस ॥१४१॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चत्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३५ ॥

एकसौछत्तीस का अध्याय।

दो० इकसै छत्तिसवें महँ, पुनि जननी निज सूनु।
समझायहु नृपनीतिकहि, नहिं सब विधिसों ऊनु ॥ १ ॥

माता बोली कि राजा को किसी भी विपत्ति में भय न करनी चाहिये व जो कभी भयभीत हो तो भी भीतों के समान आचरण न करै अच्छी तरह ढाढ़स बांधे रहे जिसमें शत्रु आदि न जान पावें कि यह डर गया है १ क्योंकि राजा को भयभीत देख सब निर्भय हो जाते हैं इससे देश निवासी सेना के लोग व मन्त्री दीवान आदि सब पृथ्वी उससे छीन अपने २ वश में पृथक् २ कर लेते हैं २ इन अमात्यादिकों में कोई २ तो जाय शत्रुओं को मिल जाते हैं व कोई २ उसे छोड़ अन्यत्र चले

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जाते हैं व जिन लोगों का पूर्व्व समय में अपमान हुआ है वे राज्यादि ले लेने ही का बिचार करते हैं ३ उस समय में जो कोई अत्यन्त ही सुहृद होते वही लोग उसके पास रह जाते हैं क्योंकि उन लोगों में शक्ति तो रहती ही नहीं इससे स्वास्ति की कामना से वहीं परे रहते हैं जैसे जिन गाइयों के बछड़े घरों में बँधे हैं वे कहीं नहीं जा सक्तीं ४ किन्तु जब अपना भाई बन्धु शोच करने लगता है तो वे भी शोच करते हैं जैसे प्रति बान्धवों को लोग शोचते हैं भला तुम्हारे भी तो बहुत से सुहृद हैं तुमने उनकी सेवा शुश्रूषा आदर भाव कभी किया है या नहीं ५ व जिन लोगों को राज्य में ऐसा अभिमान रहता है कि रक्षा करने के लिये यह राज्य हमारा ही है राजा केवल दुःख ही के भागी हैं ऐसे सुहृदों से बिगाड़ कभी न करो नहीं तो जब तुमको भयभीत देखेंगे तो वही तुम्हारा राज्य छीन लेंगे ६ हम सब तुम्हारा प्रभाव पौरुष व बुद्धि जानना चाहती हैं व ऐसी २ बातें कह २ तुम को धैर्य्य कराती हैं व जो कुछ कहा वह तेज बढ़ाने ही के लिये कहा है ७ जो यह जानते हो कि ये हमारे हित की कहती हैं सो भी अच्छी ही बात तो अब हम कहती हैं कि अपने को अच्छी तरह प्रसन्न कर जीतने के लिये उठो ८ व हमारे बड़ा भारी खजाना भी इकट्ठा है उसे तुम नहीं जानते उसे तुम क्या हमारे सिवाय और कोई भी नहीं जानता पर वह सब कोष हम तुमको देंगी ९ हे सञ्जय ! तुम्हारे बहुत से सुहृद हैं पर सब एक प्रकार के नहीं हैं जो बराबर सुख दुःख सहते हुए संग्राम से न लौटें १० जिस पुरुष के ऐसे मन्त्र्यादि होते कि स्वामी के अनुकूल ही सब काय करते हैं वे लोग अपने स्वामी का इष्ट कहीं से लेकर भी पूरा करते हैं ११ तिसके ऐसे वचन सुन स्वल्प चित्तवालों को भी क्रोध आ गया १२ इससे पुत्र बोला कि यह पृथ्वी जल में डूबी जाती थी इसका उद्धार मैं करूंगा व युद्ध में मरूंगा निरुद्यम अब बैठा नहीं रहूंगा क्योंकि जिस मेरे होनहार ऐश्वर्य्य के देखनेवाली आप

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

प्रेरक हैं १३ हम जो कुछ कुछ सुन सुन थोड़ा कहीं कहीं बोले व बहुत चुप रहे उसका कारण यह है कि आपके वचन सुनने की हमको इच्छा थी कि देखें ये कैसी बातें सिखलाती हैं १४ सो तुम्हारे वचन हमको ऐसे प्रिय लगे कि जैसे कोई बड़े कष्ट से किसी अपने भाई बन्धु के द्वारा अमृत पावे इससे हम अभी शत्रुओं के नाश करने व विजय करने के लिये उद्यत हो वहां जाते हैं १५ कुन्तीजी कृष्णचन्द्रजी से बोलीं कि जब वह बिदुला का पुत्र वाग्बाणों से इस प्रकार प्रेरित हुआ तो सिखाने वाले की ताड़ना से प्रेरित घोड़े के समान चञ्चल हो वह चला व जैसी शिक्षा उसकी माता ने की थी सब उसी प्रकार उसने मानी व उसी के अनुकूल कार्य्य किया ॥ १६ ॥

चौ० अतिहि भयङ्कर तेज बढ़ावन। यह उद्धर्षण तुम्हें सुनावन ॥
अरिपीड़ित भूपति कहँ मन्त्री। याहि सुनावै करै स्वतन्त्री १। १७
यह जयनाम महा इतिहासा। चहै विजय सो सुनै कुलासा ॥
सुनि महि जीतै देर न होई। वैरि पुञ्ज मर्दै भय खोई २। १८
पुत्रप्रसव कर यह इतिहासा। वीरतनय उपजावन आसा ॥
बार बार गर्भिणि तिय सुनई। जनै वीर सुत भेद न परई ३। १९
विद्या शूर तपस्या शूरा। दान शूर तपसी भरपूरा ॥
ब्राह्मण श्री विद्या से दीपित। साधुवादसम्मतनहिंगोपित ४। २०
प्रभावान बलवान सुभागी। महारथी धृतिमान सुरागी ॥
अनाधृष्य विजयी अपराजित। बहुगुणखानिमानि अरुभ्राजित ५। २१
दुष्ट समूहन कर वर शिक्षक। धर्मचारि गणकर बड़ रक्षक ॥
सत्य पराक्रम वीर महाना। लहै क्षत्रिया सुत बलवाना ६। २२

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षट्त्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३६ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौ सैंतीस का अध्याय।

दो० इकसै सैंतिसवें महँ, सुनि कुन्ती सन्देश।
हरि विराट नगर हि गये, जिमि वर्णत सो देश ॥ १ ॥

कुन्तीजी बोलीं कि हे केशव! अर्ज्जुन से यह कहना कि जब तुम उत्पन्न हुए थे तो उसी समय हम सब स्त्रियों के समीप बैठी थीं १ कि इतने में दिव्य रूप मनोरम आकाशवाणी हुई कि हे कुन्तीजी! तुम्हारा यह पुत्र इन्द्र के समान पराक्रमी होगा २ व यह भीमसेन के साथ समर में सब कौरवों को जीत लेगा व शत्रुओं को व्याकुल करावेगा ३ व यह तुम्हारा पुत्र पृथ्वी भर को जीतेगा व इसका यश स्वर्ग तक पहुँचेगा व वासुदेव की सहायता से संग्राम में सब कौरवों को मार ४ नष्ट हो गया हुआ अपने पिता का राज्य फिर अपने पास लावेगा व अपने भाइयों के सङ्ग तीन अश्वमेध यज्ञ करेगा ५ वे सत्य-प्रतिज्ञ, बीभत्स, सव्यसाची व अच्युत जैसे अर्ज्जुन हैं उनको केशव तुम्हीं जानते हो कि कैसे दुःख से प्राप्त होने के योग्य हैं ६ हे कृष्ण! इससे जैसा आकाशवाणी ने कहा था वह वैसा ही हो व जो धर्म्म सत्य सत्य है तो वह भी सत्य ही होगा ७ व हे कृष्ण! तुम भी वैसा ही करोगे जैसा कि आकाशवाणी ने कहा था हम तुम्हारी कुछ निन्दा नहीं करतीं कि हमारे पुत्र के सहायक होओ ८ व महात्मा धर्म्म को नमस्कार है क्योंकि प्रजाओं को वही धारण कराता है व अर्ज्जुन और भीमसेन से यह कह देना कि ९ जिसके लिये क्षत्रिय की स्त्री पुत्र उत्पन्न करती है उसका यह काल आ गया है वैर करके पुरुषश्रेष्ठ कहीं फिर पीछे को नहीं पछरते १० व आप जानते हैं कि जब तक शत्रुओं का नाश न कर देंगे तब तक भीमसेन शान्त न होंगे ११ हे कृष्ण! सब धर्म्मों को अच्छे प्रकार जाननेवाली महात्मा पाण्डुजी की पुत्रवधू यशस्विनी व कल्याणयुक्त द्रौपदी से यह कहना कि १२

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जो तुम हमारे सब पुत्रों में यथा योग्य बर्त्ताव बर्त्तती हो वह बड़े कुलीन कुल में उत्पन्न हुई यश करनेवाली तुमको उचित ही है १३ व क्षत्रिय के धर्म्म पर टिके हुए नकुल सहदेव से कहना कि चाहे प्राण भी जाते रहें तो भी अपने पराक्रम ही से इकट्ठे किये हुए भोगों को अङ्गीकार करें १४ हे पुरुषोत्तम ! क्षत्रिय धर्म्म से जीविका करनेवाले मनुष्य के विक्रम ही से इकट्ठे किये सब अर्थ उसको तृप्त कराते हैं १५ जो कि सब धर्म्म करने व जाननेवाले तुम लोगों के सामने दुश्शासनादिकों ने द्रौपदी को कठोर वचन कहे उनको कौन पुरुष क्षमा कर सक्ता है १६ न हमको राज्य हर जाने का दुःख है न जुआ खेलने में हार जाने का व हमारे पुत्र वन को निकाल दिये गये वह भी हमारे दुःख का कारण नहीं है १७ किन्तु जो केश खींचे जाने के समय सभा में अनाथों के समान रोदन करती द्रौपदी के कठोर वचन हम ने सुने उनसे अधिक दुःख हमको है और कुछ नहीं है १८ क्योंकि पांचपति महापराक्रमी नाथों के होने में भी अनाथ के समान रजोधर्म्म को प्राप्त द्रौपदी ने किसी को नाथ न पाया १९ इससे हे भगवन्, कृष्ण ! सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ अर्ज्जुन से कहना कि हे पुरुषसिंह ! द्रौपदी के मार्ग्ग पर चलो जैसे उनकी दुर्द्दशा कौरवों ने की है वैसे ही तुम शत्रुओं की स्त्रियों के विधवा होने का उपाय करो २० आपको अच्छी तरह विदित है कि क्रोध करने पर भीमसेन व अर्ज्जुन यमराज व काल ही क समान होजाते हैं इससे उस समय जो उनके सामने इन्द्रादि देवगण भी आवें तो उनको भी मरणता को पहुँचा दें ॥ २१ ॥

चौ० जो द्रौपदी सभामहँ आई । भीमार्जुन निन्दा अधिकाई ॥
दुश्शासन भीमहिकटु भाषा । वहौ अनादर भयहु समाषा १ । २२ ॥
कुरुवीरन के देखत देखत । जो सब भयहु जनायहु लेखत ॥
सुत कृष्णायुत पाण्डु दुलारे । पूछेउ कुशल वचन कहि प्यारे २ । २३
हमें कुशलिनी कह्यो बहोरी । बार बार बिनती सुनि मोरी ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कुशलसहितमग जाहुमुखारी। ममप्रिय पूतनपालुमुरारी ३। २४

वैशम्पायनजी बोले कि सिंह के खेल के समान चलनेवाले श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द कुन्तीजी के प्रणाम व प्रदक्षिणाकर उनके स्थान से बिदा हुए २५ व भीष्मपितामहादि कौरव श्रेष्ठों को बिदाकर कर्ण व सात्यकी सहित कृष्णचन्द्र रथ पर चढ़कर चले २६ कृष्णचन्द्र जी के चले जाने पर सब कौरव लोग आपस में उनके विषय की आश्चर्य्ययुक्त वार्त्ता करने लगे २७ कि यह सब पृथ्वी मृत्यु की फाँसी में बंधी है अब दुर्य्योधन की मूर्खता के कारण यह राज्य नष्ट हो जायगा २८ जब कृष्णचन्द्रजी चल के हस्तिनापुर के बाहर गये तो कर्ण से इसी विषय में कुछ सम्मति किया २९ फिर कर्ण को बिदा कर बड़े शीघ्र चलनेवाले घोड़ों को अतिवेग चलवाय सब यादवों को आनन्दित कराते हुलसाते चले ॥ ३० ॥

दो० दारुक प्रेरित अश्ववर, मानहुँ पियत अकास।
पवन वेगसों वेग अति, चले विराट निवास ॥ १ । ३१॥
महामार्ग सब नांघते, श्येन समान उड़ाय।
पहुँचाये उपप्लव्य महँ, हरिहि सुखेन सुहाय ॥ २ । ३२॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तत्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३७ ॥

एकसौअरतिस का अध्याय।

दो० इकसै अरतिसवें महँ, भीष्म द्रोण बहुभाँति।
समुझायहु दुर्य्योधनहि, कहि सुनीति की पाँति ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि महारथी भीष्म व द्रोणाचार्य्यजी कुन्ती के ऐसे वचन सुन आज्ञाभङ्गकारी दुर्य्योधन से यह वचन बोले कि १ हे पुरुषव्याघ्र! कुन्ती ने कृष्णचन्द्र से जो वचन कहे तुमने सुने जो कि सब धर्मयुक्त व अतिउग्र थे २ सो वासुदेव की सम्मति से पाण्डव लोग सब कुन्ती के कहने ही के अनुसार करेंगे विना अपना आधा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राज्य पाये किसी प्रकार शान्त न होंगे ३ व उस समय पाण्डव लोग धर्म की फांसी से बँधे थे इससे तुमने उनको महाक्लेश दिया था कि सभा में द्रौपदी के केश तुमने खिंचवाये वह भी तुम्हारा अन्याय उन्होंने सह लिया ४ परन्तु अब अस्त्रविद्या में कुशल अर्जुन व अस्त्रशस्त्र में निश्चय किये भीमसेन गाण्डीव धनुष, तरकस, रथ, ध्वज, बलवीर्य-युक्त नकुल, सहदेव व भगवान् वासुदेव को सहाय पाय युधिष्ठिरजी क्षमा न करेंगे ५। ६ हे दुर्य्योधन! यह भी बात तुम्हारे प्रत्यक्ष ही में हुई है कि पूर्व समय में विराट नगर में धीमान् अर्जुन ने हम लोगों को जीत लिया था ७ वे अति घोर कर्म करनेवाले निवात कवच नाम दानव लोगों को भयानक अस्त्र उठाय अर्जुनजी ने भस्म कर दिया॥८॥

दो० कर्णादिक अरु तुम सकल, कवच सहित रथरूढ़।
रह्यो घोष यात्रा महँ, उन्हीं बचायहु मूढ़॥ १। ९॥
यासों मिलि पाण्डवन सँग, जो तुम्हार हैं भाय।
मृत्युदन्त गत भूमि की, रक्षा करहु सुहाय॥ २। १०॥
धर्मशील वत्सल चिकन, वचन ज्येष्ठ तव भ्रात।
पापत्यागि तिन ढिगचलहु, बात बनै सब तात॥ ३। ११॥
रहित शरासन तुम्हहिं जब, देखहिं धर्मकुमार।
शान्त भ्रकुटि ह्वै जाइहैं, बचिहैं वंश तुम्हार॥ ४। १२॥
सचिवसहितत्यहिपहँपहुँचि, मिलियो भुजापसारि।
करि प्रणाम बहुभाँति शिर, दिह्योझुँकायअगारि॥ ५। १३॥
जब प्रणाम करिहहु तबहिं, भीमसेन बड़भाय।
सौहृद सों करिहैं ग्रहण, तुम्हें युधिष्ठिर राय॥ ६। १४॥
सिंहकन्ध उरु बाहु अरु, महाभुजायतवक्ष।
भीमसेन मिलिहैं तुम्हें, समुझि आपनो पक्ष॥ ७। १५॥
कम्बुग्रीव पुष्कर नयन, गुडाकेश कपिकेतु।
करि हैं तुम्हैं प्रणाम उठि, सकल जनन सुखदेतु॥ ८। १६॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व अश्विनीकुमार के पुत्र नकुल सहदेव जिनके समान रूप में पृथ्वी पर कोई भी नहीं है वे दोनों भाई प्रेम से गुरु के समान तुम्हारी पूजा करेंगे १७ हे पार्थिव ! कृष्णचन्द्रादि सब राजा लोग तुम्हारा मिलाप देख आनन्द के आँसू छोड़ेंगे इससे मान छोड़ अपने भाई पाण्डवों से जा मिलो १८ व भाइयों के सङ्ग मिल सम्पूर्ण पृथ्वी का राज्य करो ये राजा लोग परस्पर मिल भेंट अपने अपने स्थानों को चले जायँ १९ युद्ध करने से कुछ भी प्रयोजन सिद्ध न होगा सुहृदों का रोक न मानों इस युद्ध में केवल क्षत्रियों का विनाश ही दिखाई देता है और कुछ नहीं २० क्योंकि सब तारागण विपरीत दिखाई देते हैं मृग पक्षी भी दारुण बोली बोलते हैं व विविध प्रकार के उत्पात दिखाई देते हैं ये सब क्षत्रियों के ही विनाशकारी हैं २१ व ये अशुभ निमित्त विशेष रीति से यहां तुम्हारे ही पुर में दिखाई देते हैं सब ओर से जलती हुई उल्का तुम्हारी सेना को बाधित करती हैं २२ व सब वाहन अप्रसन्न हो ठौर ठौर रोदन करते हैं तुम्हारी सेना के चारों ओर गीध मड़राते हैं २३ नगर व राजमन्दिर जैसा पूर्व समय में था वैसा अब नहीं रहा व सियारिनियां अमङ्गल शब्द से क्ष्यकरती हैं व जलती सी दिशाओं में दौड़ती हैं ॥ २४ ॥

दो० मातु पिता अरु हम सकल, हित कारिन के बैन ।
करहु शान्त अरु वैर सब, सबकर है सुख ऐन ॥ १ । २५ ॥
जो न करहुगे सुहृद वच, सच मानहु नरनाह ।
तो पारथ शर तड़ित बल, लखिदुखलहहुसत्राह॥ २ । २६॥
रणदुर्मद अरु वीरवर, भीम बचन रणमाहिं ।
अरु सुनि गाण्डिव रव वचन, सुमिरहुगे शक नाहिं॥ ३ । २७॥
जो यह वचन प्रमाण नहिं, मानहुगे महिपाल ।
तो परिजन युत होहुगे, सबविधि वीर विहाल ॥ ४ । २८॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि भीष्मवाक्येऽष्टत्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३८ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौउनतालीस का अध्याय।

दो० इकसै उन्तालिस महँ, बहुरि भीष्म अरु द्रोण।
जिमि दुर्य्योधन सों कह्यहु, ना तिन मान्यहु भोण॥ १॥

वैशम्पायनजी बोले जब भीष्म व द्रोणाचार्यजी ने ऐसा कहा तो दुर्य्योधन ने उदास हो नीचे को दृष्टि करली व भौंहों का बीच सिकोर कुछ उत्तर न दिया १ तब दुर्य्योधन को उदासीन देख परस्पर महात्मा भीष्म व द्रोणाचार्य्यजी फिर बोले २ भीष्मजी बोले कि हाय शुश्रूषा करनेवाले, अनिन्दित, ब्रह्मण्य, सत्यवादी अर्जुन से हम लोग युद्ध करेंगे अब इससे अधिक दुःख हम लोगों को कौन होगा ३ द्रोणाचार्यजी बोले कि हे राजन्! जैसा हमारा मान अश्वत्थामा हमारा पुत्र करता है उससे अधिक अर्जुन करते हैं व सन्नति भी अर्जुन में अधिक है ४ तिन पुत्र से भी अधिक प्रिय अर्जुनजी से हम क्षत्रिय के धर्म पर आरूढ़ हो युद्ध करेंगे इससे क्षत्रिय की जीविका को धिक्कार है ५ हमारे प्रसाद से अर्जुन के समान और दूसरा धनुर्द्धर कोई नहीं है क्योंकि वे सब धनुर्द्धरों से श्रेष्ठ हैं ६ दुर्य्योधन इस बात को जान रक्खो कि जो पुरुष तुम्हारे समान मित्रद्रोही, दुष्टस्वभाव, नास्तिक, कुटिल व शठ होता है वह सज्जनों के बीच में पूजा नहीं पाता जैसे यज्ञ में मूर्ख ब्राह्मण पूजित नहीं होता ७ पापों से रोका भी जाता है तो भी पापी पुरुष पाप ही करना चाहता है व पुण्यात्मा को पाप करने को भी कोई कहता तो भी वह पुण्य ही करना चाहता है ८ देखो इन पाण्डवों को तुमने वृथा दुःख भी दिया तो भी वे तुम्हारा प्रिय ही किया चाहते हैं व तुम्हारे दोष वैरभाव ही को अब भी प्रकट करते हैं ९ देखो तुमसे कुरुवंश में सबसे वृद्ध भीष्मजी ने कहा हमने व विदुर ने व भगवान् वासुदेवजी ने भी कहा पर तुम इन सबके वचन कल्याणकारक नहीं समझते १० तुम जानते हो कि हमारे बड़ी भारी सेना है इससे पाण्डव

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

समुद्र को हम अवश्य उतर जायँगे जैसे घड़ियाल नाक मगर आदि जन्तुओं से भरे पुरे समुद्र के पार को गङ्गाजी के वेग ने जाया चाहा पर पार नहीं गया ११ तुम अपने घर में ही बैठे ऐसा समझते हो कि हम तो सब ओर से रक्षित हैं हमको कौन पराजित कर सक्ता है जैसे कोई किसी की उतारी हुई फूलों की माला पाय उसको अपनी समझे वैसे ही तुम युधिष्ठिरजी की राज्यश्री को पाय अब अपनी समझते हो १२ यह नहीं जानते कि आयुध धारण किये भाइयों समेत व द्रौपदी सहित युधिष्ठिरजी को वन में रहने पर भी व आप राज्य पर टिका हुआ भी कौन जीतेगा १३ व जिसकी आज्ञा में सब राजा लोग किङ्करों के समान टिके हैं उन कुबेरजी को रण में पाय युधिष्ठिरजी ही शोभित हुए १४ व कुबेर के भवन में जाय वहां बहुत रत्न पाय फिर यहां आय पाण्डव लोग अपना रजापुजा राज्य लिया चाहते हैं १५ व हम लोगों को क्या है बहुत सा दान कर चुके यज्ञ भी बहुत किया वेद शास्त्र भी सब पढ़े धनादि से ब्राह्मणों को तृप्त किया अब हम दोनों की आयु भी बनाय गत होगई है कुछ करना बाकी नहीं रहा केवल मरना ही मरना है इससे अब हम लोगों को कृतकृत्य समझो १६ व तुम सुख छोड़ राज्य मित्र व धन त्याग पाण्डवों के सङ्ग विग्रहकर महादुःख पावोगे १७ व सत्यवादिनी द्रौपदी जिन युधिष्ठिरजी की विजय सदा सिखाया करती हैं जो कि तप घोरव्रत धारण किये रहती हैं फिर उन पाण्डव युधिष्ठिर को कैसे जीतोगे ॥ १८ ॥

दो० वासुदेव ज्यहि सचिव अरु, अर्जुन भ्राता जासु ।
उभय शस्त्र विद्या कुशल, किमि जीतहुगे तासु ॥ १ । १९ ॥
जासु सहायक विप्र हैं, इन्द्रियजित धृतमान ।
उग्रतपस्वी वीर कहँ, किमि जीतिहौ अजान ॥ २ । २० ॥
सुहृदहि व्यसनार्णव डुबत, लखि जो सुहृदहि योगि ।
कहत वही पुनरुक्त है, पर तुम कहँ उपयोगि ॥ ३ । २१ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वीर पाण्डवन सन समर, किये नहीं कछु लाहु।
शान्त होहु कुरुवृद्धिहित, जनि ममवचनभुलाहु॥ ४।२२॥
सचिव सैन्य परिवार सुत, सहित पराभव युक्त।
जनि होवहु मानहु कहा, सब श्रेष्ठन करउक्त॥ ५।२३॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकोनचत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः॥ १३९॥

एकसौचालीस का अध्याय।

दो० इकसै चालिसवें महँ, जिमि हरि कर्ण प्रवीर।
समुझायहु पाण्डवमिलन, पर न मिलो वह धीर॥ १॥

इसके पीछे धृतराष्ट्रजी सञ्जय से बोले कि हे सञ्जय! सब राजपुत्रों समेत व भृत्यों समेत कृष्णचन्द्रजी थे परन्तु सबको छोड़ कर्ण को रथ पर चढ़ाय कुछ दूर ले गये १ बताइये शत्रुनाशन व अपार पराक्रमी श्रीहरि ने क्या क्या बातें कर्ण को समझाईं २ सो बड़े उद्दण्ड बादर के समान गर्जते हुए कृष्ण भगवान् ने कर्ण से कोमल वचन व कड़े जो कुछ कहे हों हमसे सब बताओ ३ यह सुन सञ्जय बोले कि तीक्ष्ण व कोमल प्रिय व धर्मयुक्त सत्य व हित जो वचन क्रम से मधुसूदन जी ने कर्ण से कहे व हृदय से ग्रहण करने के योग्य थे वे सब अप्रमाण आत्मावाले हरि की वार्त्ता के अनुसार तुमसे कहते हैं सुनो ४।५ श्रीभगवान् कृष्णचन्द्र रथ पर चढ़े हुए कर्ण से बोले कि हे कर्ण! तुमने वेदपारगन्ता ब्राह्मणों की बड़ी उपासना की व निन्दारहित हो तुम ने उन लोगों से सकल शास्त्रों का निश्चय अर्थ भी पूछा ६ व हे कर्ण! तुम सनातन वेदवाद अच्छी तरह जानते हो व तुम सूक्ष्म अर्थ-युक्त सब धर्मशास्त्र के पढ़ने में परिनिष्ठित हो ७ कानीन अर्थात् कन्या के पुत्र दो प्रकार के होते हैं एक वह जो विवाह होने के पहले कन्या में किसी पुरुष से उत्पन्न हो दूसरा वह जो विवाह होने के पीछे जब तक कन्या पति के यहां न जाय पिता ही के घर में अन्य किसी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

से उत्पन्न हो इन दोनों कानीन पुत्रों का पिता वही कहाता है जिसके सङ्ग वह कन्या ब्याही जाती है ८ हे कर्ण! सो तुम भी कानीन ही हो क्योंकि कुन्तीजी का जब विवाह नहीं हुआ था तभी तुम सूर्य से उनमें उत्पन्न हुए हो इससे धर्मशास्त्र के अनुसार पाण्डुजी के पुत्र हो व धर्मशास्त्रों की आज्ञा के अनुसार तुम हमारे सङ्ग आवो राजा होगे ९ तुम्हारे पिता के पक्ष में तो पाण्डव लोग हैं व मातृपक्ष में वृष्णिवंशीय हम लोग हैं इससे हे पुरुषश्रेष्ठ! इन दोनों पक्षों को अपने जानो १० हे तात! जो आज तुम हमारे साथ चलोगे तो पाण्डव लोग तुमको जानेंगे कि ये भी कुन्तीजी ही के पुत्र हैं व युधिष्ठिरजी से भी प्रथम उत्पन्न हुए हैं ११ इससे सब पाण्डव तुम्हारे छोटे भाई तुम्हारे चरण पकड़ेंगे व द्रौपदी के पांच पुत्र तथा अभिमन्यु जोकि किसी से हारते ही नहीं ये सब प्रणाम करेंगे १२ व पाण्डवों के अर्थ जो राजा राजपुत्र लोग आये हैं सब तुम्हारे पैरों पर पड़ेंगे व सब अन्धक वृष्णिवंशीय भी प्रणाम करेंगे १३ व तुम्हारे अभिषेक के लिये सोने चांदी व मिट्टी के कुम्भों में भरके तीर्थों का जल आवेगा सब बीजों की औषधियां सब रत्न व सब होम की लकड़ियां आवेंगी १४ ये सब पदार्थ राजा लोग व राजकन्या लावेंगी व छठें समय में द्रौपदी भी तुम्हारे पास आवेंगी १५ धौम्य नाम जितेन्द्रिय पुरोहित तुम्हारे अभिषेक के लिये आज ही होम करेंगे व आजही चारों वेदों के पढ़ने वाले ब्राह्मण लोग तुम्हारा राज्याभिषेक करेंगे १६ ये धौम्यजी पाण्डवों के पुरोहित हैं व ब्रह्मकर्म में तत्पर हैं व पांचों भाई पाण्डव लोग भी उसी प्रकार वेदकर्म में तत्पर हैं १७ व द्रौपदीजी के पांच पुत्र व द्रुपदराज के सब पुत्र व शिशुपाल के पुत्रादि व हम तुमको आजही पृथ्वी भर के राजा बनावेंगे १८ व धर्म के पुत्र युधिष्ठिरजी तुम्हारी युवराज पदवी पर टिकेंगे व धर्म्मात्मा जितेन्द्रिय युधिष्ठिरजी श्वेत व्यजन हाथ में ले १९ तुम्हारे पीछे रथ पर चढ़ पंखा करते रहेंगे व बड़ा श्वेत छत्र

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

महाबली भीमसेनजी तुम्हारे ऊपर लगावेंगे २० जब तुम्हारा राज्याभिषेक होजायगा तब ये सब अपना अपना कार्य्य करेंगे व सैकरों किङ्किणी लगे हुए दिव्य रथ पर जिसके ऊपर व्याघ्रचर्म का बहार परा होगा व उजले घोड़े नहे होंगे उसे तुम्हारे आगे बैठ अर्जुन हांकेंगे व अभिमन्यु भी सदा तुम्हारे समीप ही विद्यमान रहेंगे २१।२२ नकुल, सहदेव, द्रौपदी के पांच पुत्र, पाञ्चालदेश के राजा के शिखण्डी महारथादि सब पुत्र तुम्हारे पीछे पीछे चलेंगे २३ हम भी तुम्हारे पीछे ही पीछे चलेंगे व सब अन्धक वृष्णिवंशीय दाशार्हवंशीय व दशार्णवंशीय सब तुम्हारे चारों ओर चलेंगे २४ हे महाबाहो, कर्णजी! अपने सब भाई पाण्डवों के साथ राज्य भोगो व जप होम मङ्गल कर्मों से सदा संयुक्त रहो २५ व द्रविड़देशनिवासी, कुन्तल देशवासी, अन्ध्र, ताल, चर, चूचुप व वेणुप ये लोग तुम्हारे आगे आगे चलेंगे २६ सूत मागध वन्दीगण विविधप्रकार की स्तुतियों से तुम्हारी स्तुति करेंगे व पाण्डव लोग व सुषेण की विजय तुम्हारे पीछे पीछे गावेंगे॥ २७॥

दो० तुम पार्थन के मध्यमहँ, जिमि विधु नखतन मांझ।
शोभित ह्वै पालहु मही, कुन्तिहि पुषहु न बांझ॥ १।२८॥
हृष्टमित्रगण होहिं तव, व्यथित होहिं रिपुलोग।
आज होय सौभ्रात्र तव, पाण्डव सँग सुख भोग॥ २।२९॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः॥ १४०॥

एकसौइकतालिस का अध्याय।

दो० इकसै इकतालीसवें, कर्ण कृष्ण सों भाष।
नहिं दुर्य्योधन सङ्ग तजि, पाण्डव सँग अभिलाष॥ १॥

इतना सुन कर्ण बोले कि इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि आपने सौहृद से, प्रेम से, सख्य से व कल्याण की कामना ही से ऐसा हमसे कहा १ सत्य सत्य शास्त्र के अनुसार धर्म से हम पाण्डुजी ही के पुत्र

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हैं जैसा आप मानते हैं हम भी सब जानते हैं २ क्योंकि कुन्तीजी तब कन्या ही थीं पर सूर्य्यनारायण मे हमको उन्होंने गर्भ में धारण किया व जब हमारा जन्म हुआ तो सूर्य्य के कहने से कुन्ती ने हमको फेंक दिया ३ हमारी उत्पत्ति इस प्रकार हुई इससे धर्म से पाण्डुजी के पुत्र हैं परन्तु कुन्ती ने तो हमको ऐसा फेंक दिया था कि कुशल रहने का कोई यत्न न था ४ दैवयोग से सूतवंश के राजा अधिरथजी ने हमको देखा फिर वे अपने घर को लाये व मारे सौहार्द के अपनी स्त्री राधा को सौंप दिया ५ यद्यपि राधा बन्ध्या थीं कोई सन्तान उनके न थी पर हमारे स्नेह से उनके तुरन्त दूध उतर आया पियाने लगीं व हमारा मलमूत्र सब उन्होंने उठाया धोया ६ इससे जो धर्मज्ञ हो व धर्मशास्त्रों के सुनने में रत हो वह हमारे समान पुरुष उन राधाजी के विपरीत कैसे चले व उनको कैसे छोड़े ७ व उसी प्रकार सूतराजा अधिरथ भी हमको अपना पुत्र जानते हैं व हम भी सौहृद से उनको अपना पिता जानते हैं ८ व हे जनार्द्दन ! उन्हीं ने पुत्र की प्रीति से हमारे सब जात कर्म किये कराये ९ ब्राह्मणों से हमारा सुषेण नाम धरवाया व जब हमारी युवावस्था हुई तो बहुत सी स्त्रियों के सङ्ग विवाह भी हुआ १० फिर उन स्त्रियों में हम से पुत्र उत्पन्न हुए पुत्रों से पौत्र हुए व उन स्त्रियों में हमारा चित्त काम के बन्धन से बँध गया ११ अब इन सब स्त्री, पुत्र, पौत्र, माता, पिता आदि को न तो हम पृथ्वी भरके राज्य के लोभ से मिथ्या कर सकते हैं न सोने की राशियों से न हर्ष से न भय से १२ इसके विशेष धृतराष्ट्र के कुल में दुर्य्योधन की सहाय से हमने तेरह वर्ष से आजतक अकण्टक राज्य भोग किया १३ व सूतों के सङ्ग हमने बहुत से यज्ञ भी किये व सूतों के ही साथ कुल के धर्म व विवाह भी हमने किये १४ व हे कृष्ण ! हमीं को पाय दुर्य्योधन ने सब शस्त्र का उद्यम किया व पाण्डवों से विग्रह भी हमारे ही भरोसे किया १५ व इसी से द्वन्द्व युद्ध में दुर्य्योधन ने हमको अर्जुन के सङ्ग लड़ने के लिये

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अङ्गीकार किया है व जानते हैं कि अर्जुन के सङ्ग लड़ने योग्य यही हैं १६ इससे हे कृष्ण! अब हम दुर्य्योधन के सङ्ग वध होजाने बँधुआ होजाने व भय खाजाने में उद्यत हैं परन्तु धनादि के लोभ से झुँठाई नहीं कर सकते १७ अब जो हम अर्जुन से द्वन्द्व युद्ध करने को न जायँ तो हे कृष्ण! हमारी व अर्जुन की भी बड़ी भारी अकीर्त्ति होगी क्योंकि उन्होंने भी हमारे सङ्ग युद्ध करने की प्रतिज्ञा की है बरन हम ने उनको मार डालने की व उन्होंने हमको मार डालने की प्रतिज्ञा की है १८ व तुम सब पाण्डवों से कह देना क्योंकि उनके प्रेरक तुम्हीं हो उनके हित की ही सदा करते हो व वे लोग जैसा तुम कहोगे वैसा ही करेंगे १९ एक बात हमारी भी कीजियेगा कि जो हमारी आपकी गुप्त वार्त्ता हुई है वह युधिष्ठिरजी से न कहियेगा हम इसमें सबका हित मानते हैं २० क्योंकि धर्म्मात्मा जितेन्द्रिय राजा युधिष्ठिरजी जो हम को जानेंगे कि ये कुन्ती के सबसे प्रथम के पुत्र हैं तो वे राज्य न ग्रहण करेंगे २१ जो कहो न सही तुम्हीं को वे राज्य दे देंगे तो उसमें भी न बनेगा क्योंकि हम सब धन धान्ययुक्त भी राज्य पावेंगे तो भी दुर्य्योधन ही को दे देंगे अपने आप न राज्य करेंगे २२ परन्तु ऐसा होना महाअनुचित है क्योंकि धर्म्मात्मा युधिष्ठिरजी ही निरन्तर राजा होने के योग्य हैं इससे हों क्योंकि जिसके प्रेरक तो कृष्णचन्द्रजी आप हो व योद्धा अर्जुन हैं २३ व उन्हीं की पृथ्वी उन्हीं का सब देश है जिनके महारथ भीमसेन वीर महारणधीर महाबली हैं फिर नकुल सहदेव व द्रौपदी के पांच पुत्र हैं २४ व राजा द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न व महारथ सात्यकीजी, उत्तमौजा, युधामन्यु व सत्यधर्म्मा सोमदत्ति २५ चँदेली का राजा धृष्टकेतु व चेकितान, अपराजित, शिखण्डी व बीरबहूटी के रङ्ग के पांच भाई केकय राजकुमार २६ व इन्द्रधनुष के रङ्ग का कुन्तिभोज नाम राजा व सेनजिन्नाम महारथ भीमसेनजी का मामा व राजा विराट का शङ्खनाम पुत्र व सब काम पूर्ण करनेवाले निधिरूप

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

आप २७ हे कृष्ण ! यह राजाओं का बड़ाभारी झुण्ड इकट्ठा हुआ है व यह राज्य जिस पर आजकल कौरवराज राजा हैं अति प्रकाशित व सब राजाओं में विख्यात है २८ सो इस राज्य के लिये दुर्योधन के शस्त्रयज्ञ होगा जनार्द्दनजी इस यज्ञ के जाननेवाले आप होंगे २९ व यज्ञ के प्रेरक भी आपही होंगे व इस यज्ञ में आहुति देनेवाले होता अर्जुनजी होंगे जिनका कपिध्वज व बीभत्सु भी नाम है ३० व गाण्डीव धनुष इस यज्ञ में स्रुव होगा व पुरुषों का वीर्य घृत होगा ऐन्द्र, पाशुपत, ब्राह्म व स्थूणाकर्ण ये सब अर्जुन के प्रेरित मन्त्र होंगे ३१ व जो अपने पिता ही के समान हैं बरन पराक्रम में अधिक हैं वे अभिमन्युजी गीत, स्तुति जो उद्गाता के कर्म हैं होंगे ३२ व भीमसेनजी भी पीछे से उद्गाता होजायँगे व प्रस्तोता भी वही महाबली भीमही होंगे क्योंकि रण में नाद करते ही वे सब हाथियों के प्राण ले लेंगे ३३ व धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिरजी जप होम युक्त ब्रह्मत्व करेंगे ३४ शङ्खनाद, मुरज, भेरी, सिंह-नाद यही ब्रह्मकर्म स्वस्तिवाचनादि होगा ३५ माद्रीजी के पुत्र नकुल सहदेव क्षत्रियों को पशु बनाय बलिप्रदान करेंगे इस कर्म को शामित्र कहते हैं ३६ व हे गोविन्द! चित्र विचित्र रथों की पंक्तियां इस यज्ञ में यज्ञस्तम्भ होंगी ३७ कर्णिनालीक, नाराच, वत्सदन्त, उपबृंहण, तोमर व धनुष ये सब बाणविशेष सोम नाम यज्ञलता पीने के पात्र होंगे ३८ हे कृष्ण ! इस यज्ञ में खड्ग ही खीर बनाने के पात्र होंगे व वीरों के शिर पुरोडाशनाम यज्ञकर्म होंगे व वीरों का रुधिर ही खीर होगी जिसकी आहुति दी जायगी ३९ शक्तियां इन्धन व गदा अग्नि की रक्षा के लिये सब ओर से काष्ठ लगाना होंगी जिनको परिधि कहते हैं व इस यज्ञ के सदस्य द्रोणाचार्य्य कृपाचार्य शरद्वत् के शिष्य होंगे ४० व अर्जुनजी के चलाये नानाप्रकार के बाण सोमचमसादि यज्ञपात्र होंगे व द्रोणाचार्य अश्वत्थामा के भी प्रेरित बाण परिस्तोमादि चमसादि यज्ञभाजन होंगे ४१ व अध्वर्य्यु आपके सहायक का कर्म प्रतिप्रास्थानिक सात्यकी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करेंगे व दीक्षित हो यज्ञकर्त्ता इसमें दुर्य्योधन होंगे व उनकी स्त्री यह सब सेना होगी ४२ व महारात्र आधीरात्रि में जब यह यज्ञ कर्म होने लगेगा तो घटोत्कचनाम वीर शामित्र कर्म अर्थात् क्षत्रिय पशुओं का बलिप्रदान करेगा ४३ व इस यज्ञ की दक्षिणा धृष्टद्युम्न नाम राजा होगा जोकि यज्ञ ही में अग्नि से उत्पन्न हुआ है ४४ हे कृष्ण! दुर्य्योधन का प्रिय करने के लिये हमने जो पाण्डवों को कटु वचन कहे हैं उनसे हमें सन्ताप होता है कि हमने बड़ा अकर्म किया ४५ व हे कृष्ण! जब हमको अर्जुन के बाणों से मरे हुए देखोगे तो फिर इस यज्ञ की चिति अर्थात् दूसरे यज्ञ का आरम्भ होगा ४६ व जब महानाद करते दुश्शासन का रुधिर भीमसेन पान करेंगे तो यज्ञान्त में मदिरा का पान होगा ४७ व जब द्रुपदराज के पुत्र शिखण्डी व धृष्टद्युम्न भीष्मपितामह व द्रोणाचार्य्य को मारेंगे तब उस यज्ञ के बीचमें एक ठहरने के लिये अन्त होगा ४८ व जब दुर्य्योधन को महाबलवान् भीमसेनजी मार डालेंगे तब यज्ञ की समाप्तिपूर्णाहुति होजायगी हे जनार्द्दन! ४९ व राजा पतियों के मारे जाने पर धृतराष्ट्र की पतोहें व उनकी पतोहें ५० गान्धारी सहित रोदन करेंगी तो इस दुर्य्योधन के यज्ञ का यज्ञान्त स्नान होगा ५१ हे कृष्णचन्द्रजी! अब ऐसा कीजिये जिसमें विद्या से वृद्ध व अवस्था से वृद्ध क्षत्रिय लोग विना युद्ध किये मृत्यु को न पावें युद्ध ही में मरें तो अच्छा है ५२ ऐसा हो जिसमें इस पुण्यभूमि कुरुक्षेत्र में सब क्षत्रियों का मण्डल युद्ध ही में मरे॥ ५३ ॥

दो० कृष्ण करहु सो जाहिसों, सब यह क्षात्रि समूह।
समर हते से अमरपुर, चले जाहिं करि हूह॥ १। ५४॥
जबलग गिरिअरु नदीसब, रहि हैं यहि जगमाहिं।
तबलग शाश्वत कीर्त्तिभव, शब्द रहिहि शक नाहिं॥ २। ५५॥
क्षत्रवंश यश वृद्धि कर, भारत समर महान।
कहिहैं द्विजवर सभन महँ, करिकै बहुत बखान॥ ३। ५६॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कृष्ण लाइये अर्ज्जुनहि, मोहि कराइय युद्ध।
यह मत गुप्तहि राखिये, युद्ध होय ज्यहि शुद्ध॥४।५७॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकचत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः॥ १४१॥

एकसौबयालिस का अध्याय।

दो० यकसै ब्यालिसयें महैं, कह्यो कर्ण सों कृष्ण।
ताहि दिखाय विभीषिका, जो सुनि सो युत तृष्ण॥ १॥

सञ्जय बोले कि शत्रुवीरों के नाशक कृष्णचन्द्रजी कर्ण के वचन सुन कुछ हँसते ही से बोले कि १ हे कर्ण! राज्य मिलने का उपाय तुमको न स्पर्श करै क्योंकि हमारी दी हुई पृथ्वी का राज्य करना तुम नहीं चाहते २ पाण्डवों की निश्चय विजय होगी इसमें कुछ भी संदेह नहीं है क्योंकि कपिध्वज का जयध्वज आगे दिखाई देता है ३ देखो विश्वकर्म्मा ने दिव्य माया बहुत सी बनाई हैं वे सब इन्द्रध्वज के समान दिखाई देती हैं उनमें कुछ स्वर्ग्ग में कुछ पृथ्वी पर दिखाई देतीं पर सब जय करनेवाली हैं व बहुत भयकारक हैं उनका फल तुम्हारी ओर होगा ४ हे कर्ण! अर्ज्जुन के रथ की ध्वजा चारकोश की लम्बी इतनी ही चौड़ी इतनी ही ऊंची है पर विश्वकर्म्मा ने ऐसी युक्ति से बनाई है कि रथ पर्व्वतों व वृक्षों व मन्दिरों के बीच में चला जाय पर ध्वजा कहीं भी न अड़ै व उसमें से अग्नि के तुल्य ज्वाला सदा निकला करती है ५ जब संग्राम में श्वेत घोड़े जुते अर्ज्जुन के रथ को देखोगे जिस पर कृष्णचन्द्र सारथि होंगे व ऐन्द्रास्त्र आग्नेयास्त्र वायव्यास्त्र गाण्डीव धन्वा से चलाये देखोगे जिनका शब्द वज्र के शब्द से भी अधिक होगा तब न त्रेता होगा न सत्ययुग न द्वापर अर्थात् सत्ययुग का धर्म्म न तो मोक्ष होगा न त्रेता का धर्म्म अर्थ काम न द्वापर का धर्म्म काम व उसका अङ्गभूत धर्म्म क्योंकि तुम लोग सब युद्ध में मारे जावोगे किसी बात की सुधि ही न आवेगी ६।७

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व जब कुन्तीजी के पुत्र युधिष्ठिरजी को जप होम से अपनी सेना की रक्षा करते देखोगे, व शत्रु की सेना पर सूर्य्य के समान तपते देखोगे तब न त्रेता होगा न सत्ययुग न द्वापर ८। ९ व जब समर में दुश्शासन का रुधिर पीकर महाबली भीमसेन को नाचते देखोगे जैसे कि दूसरे हाथी को मारे मतवाला हाथी दिखाई देता है न तब सत्ययुग होगा न त्रेता न द्वापर १०। ११ व जब संग्राम में द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, भीष्मपितामह, राजा दुर्य्योधन, सिन्धुदेश के राजा जयद्रथ को युद्ध करने के लिये कूदते व अर्ज्जुन के रोंके हुए देखोगे तब न सत्ययुग होगा न त्रेता न द्वापर १२। १३ व जब संग्राम में धृतराष्ट्र के पुत्रों की सेना को क्षोभित कराते हुए दो मतवाले हाथियों के समान माद्रीजी के पुत्र नकुल सहदेवजी को कठिन समर में वीरों के रथ तोड़ते फोड़ते मारते पीटते देखोगे तब न सत्ययुग होगा न त्रेता न द्वापर १४। १५ हे कर्ण! अब यहां से जाय द्रोणाचार्य्य कृपाचार्य्य व भीष्मपितामह से कहना कि यह चाँदनीयुक्त बड़ा सुन्दर मास आया है ईंधन इत्यादि अभी से इकट्ठा कर रक्खें १६ इस मास में सब अन्न तैयार हैं माक्षी बहुत कम हैं जल में अब कीचड़ नहीं दिखाई देता जल सब रसयुक्त है न बहुत गर्म्मी है न जाड़ा इससे सुखदायी है॥ १७॥

दो० अबसे सतयें बार को, सुतिथि अमावस होय।
इन्द्र देवता तासु हैं, समर अरम्भौ सोय॥ १। १८॥
पुनि सब राजसनकह्यहु, जो आये रणहेतु।
जो उनको वाञ्छित स्वई, हम करबै कहि देतु॥ २। १९॥
राजा राजकुमार सब, दुर्य्योधन वशवर्ति।
शस्त्रमरण लहि श्रेष्ठगति, पैहैं तनिक न आर्ति॥ ३। २०॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्विचत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः॥ १४२॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौतेंतालीस का अध्याय।

दो० यकसै अरु त्यैंतालिसैं, महँ जिमि हरि सों कर्ण।
कहि बहुबातें होनकी, गयहु कौरवन शर्ण॥ १॥

सञ्जय बोले कि कृष्णचन्द्र के हित व शुभ वचन सुन कर्णवीर मधुसूदन भगवान् श्रीहरि की पूजा कर अति विनीत हो बोले १ हे भगवन्! जान बूझकर हमको क्यों मोहित किया चाहते हो सब प्रकार से जो यह पृथ्वी का विनाश प्राप्त हुआ है २ इस पृथ्वी के विनाश करने के कारण शकुनी, हम, दुश्शासन व राजा धृतराष्ट्र के पुत्र राजा दुर्य्योधन हैं पांचवां कोई नहीं है ३ इससे हे कृष्ण! इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कौरवों पाण्डवों का महाघोर यद्ध होगा जिसमें रुधिर की कीच मच जायगी ४ व राजा व राजपुत्र जो दुर्य्योधन के वश में हैं व उनके ही अनुयायी हैं वे संग्राम में शस्त्राग्नि से भस्म होकर यमपुर को जायँगे ५ हे मधुसूदन! बड़े घोर बहुत से स्वप्न दिखाई देते हैं व बड़े बड़े घोर निमित्त व अति दारुण उत्पात भी दिखाई देते हैं ६ व वे सब विविधप्रकार के हैं सबों को देख रोम खड़े हो जाते हैं व सब के सब दुर्य्योधन की पराजय व युधिष्ठिरजी की विजय ही मानों कहते हैं ७ देखो तीक्ष्ण महाद्युति शनैश्चर नाम ग्रह ब्रह्मा के नक्षत्र रोहिणी में आया है इससे प्राणियों को अधिक पीड़ित करेगा व कर रहा है ८ व हे जनार्द्दन! ज्येष्ठा नक्षत्र से वक्री हो मङ्गल अनुराधा में आया है इसका फल यह है कि ज्येष्ठ राजा के मित्र लोगों का व राजा का भी नाश कराता है ९ निश्चय है कि कौरवों को महाभय उपस्थित हुई है क्योंकि महापात नाम ग्रह चित्रा नक्षत्र में आया है इसके वेध से राजा की जातिवालों का नाश होता है १० देखो अमावस्या निकट आई है इससे चन्द्रमा क्षीण होने से पापग्रह हो गया व उस तिथि में सूर्य्य भी आते हैं व उन दोनों का वैरी राहु भी वक्री होकर वहीं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

आवेगा तब कर्त्तरी योग होगा इससे सोमवंशीय सूर्य्यवंशीय दोनों का नाश होगा व दिन ही में उल्कापात दिखाई देते हैं वज्र भी उन्हीं के साथ गिरता भूकम्प भी होता है ११ हाथी घोड़े सब रोते हैं घास बूसा पानी की इच्छा नहीं करते व न प्रसन्नता किसी समय उनकी दिखाई देती है १२ हे भगवन् ! इन दारुण उत्पातों के प्रकट होने से प्राणियों का नाशक महा दारुण भय उपस्थित जान पड़ता है १३ व घोड़े हाथी मनुष्य आजकल थोड़ा भी भोजन करते हैं तो मल बहुत करते हैं यह भी महा अनर्थ का मूल है १४ इन सब उत्पातों को देख पण्डित लोग कहते हैं कि दुर्य्योधन की सब सेनाओं की हार होगी १५ व पाण्डवों के सब वाहन हर्षित दिखाई देते हैं व उनकी दाहिनी ओर मृगगण दिखाई देते यह सब उनकी विजय का लक्षण है १६ व दुर्य्योधन के सब मृगगण बाईं ओर दिखाई देते हैं आकाशवाणी भी बार बार दुर्य्योधन की पराजय के ही विषय में होती है १७ मयूर व और भी पुण्य पक्षी हंस, सारस, चातक, चकोर, जीवजीवक आदि पाण्डवों के पीछे उड़ते दिखाई देते यह उनकी जय का लक्षण है १८ व गीध, उजली चील्ह, बगुला, बाज, राक्षस, भेड़िया व मक्षियों के झुण्ड कौरवों के पीछे २ दौड़ते हैं यह उनके मरण का लक्षण है १९ दुर्य्योधन की सेनाओं में तुरुही बजाई भी जाती है तो भी नहीं बजती व पाण्डवों की ओर विना बजाये डंका बजते हैं २० कूपादि जलाशयों में अपने आप ऐसा शब्द होता है जैसे बैल डकराते हैं ये सब दुर्य्योधन की सैन्यों के निरादर के लक्षण हैं २१ हे माधव ! यहां मांस व रुधिर की वर्षा भी देवता लोग करते हैं व घेरा सहित आकाश में गन्धर्व नगर दिखाई देता सूर्य्य में मण्डल पड़ता है २२ शहरपनाह की दीवार के समान व खाईं के समान खेत की मेड़ के तुल्य फाटक पर के बड़े उतरंग के आकार काले रंग का घेरा सूर्य्य की सब ओर दिखाई देता है २३ फिर सूर्य्य के अस्त उदय के समय प्रतिदिन सियारी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

रोदन करती है उससे बड़ी भय होती है यह भी दुर्य्योधन की हार का लक्षण है २४ व जिन पक्षियों के पक्ष नेत्र व चरण एक ही होते जिन्हें महाराष्ट्र भाषा में पाँकोली कहते वे बीभत्स दिशा पेशाब करते हैं यह भी दुर्य्योधन के अनादर व पराजय का लक्षण है २५ व जिन पक्षियों का गला तो काला होता व पैर लाल वे भयानक पक्षी सन्ध्या के समय कौरवों के सन्मुख दौड़ते हैं यह भी कौरवों के निरादर का लक्षण है २६ व दुर्य्योधन आजकल प्रथम तो ब्राह्मणों से अप्रीति करते हैं फिर गुरु से व जो भक्तिमान् नौकर चाकर हैं उनसे यह भी उनके निरादर होने का लक्षण है २७ यहां पूर्वदिशा सदा लाल बनी रहती दक्षिणदिशा शस्त्र के आकार की व पश्चिमदिशा कच्चे मिट्टी के बर्त्तन के आकार की २८ और प्रकाश तो यहां सब दिशाओं में दिखाई देता है इस उत्पात के देखने से दुर्य्योधन को बड़ी भारी भय लोग बताते हैं २९ हमने स्वप्न के अन्त में देखा है कि युधिष्ठिरजी सहस्र खंभा लगे धवरहर पर बैठे हैं व उनके भाई भी उन्हीं के सङ्ग हैं ३० सबके सब उजली पगड़ी बांधे हैं व सब शुक्ल ही वस्त्र धारण किये हैं आसन भी सबके श्वेत ही हमने देखे ३१ व तुम्हारा शरीर भी हमने देखा जानों आँत से बँधा हुआ है यह भी स्वप्नही के अन्तमें हमने देखा है ३२ व यह भी देखा कि जानों युधिष्ठिर हाड़ोंके ढेर पर बैठे सोने की थारी में घृत मिली हुई खीर खातेहैं ३३ यह भीहमने देखा कि युधिष्ठिर पृथ्वी ही को लीले जाते हैं इससे आपकी दी हुई यह पृथ्वी अवश्य भोगेंगे ३४ यह भी देखा कि जानों भयङ्कर कर्मकारी भीमसेनजी बड़े ऊँचे पहाड़ पर चढ़ हाथ में गदा लिये इस पृथ्वी को लीले लेते हैं ३५ इससे यह निश्चय हैकि रण में वे हम सब लोगों को अवश्य मार डालेंगे यह हम को विदित है क्योंकि जहां धर्म होता है वहीं विजय होती है ३६ व यह भी देखा कि अर्जुनजी तुम्हारे साथ उजले हाथी पर चढ़े हैं इससे परम शोभा से शोभित हैं ३७ इससे आप सब लोग हम लोग दुर्य्यो-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

धन के वशीभूत अनुयायियों को अवश्य मार डालेंगे इसमें सन्देह नहीं है ३८ नकुल सहदेव व सात्यकी इन तीनों को हमने देखा है कि सब शुक्ल ही बहूंटे गलबन्धन माला आदि धारण किये हैं ३९ व सबके सब पालकियों पर सवार हैं, व तीनों के ऊपर श्वेत छाता लगा है व सब श्वेत ही वस्त्र धारण किये हैं ४० व सब श्वेत ही पगड़ियां बांधे हैं इससे इन तीनों को दुर्य्योधन की सेनाओं में इधर उधर कूदते मारते पीटते ही जानिये ४१ व अश्वत्थामा, कृपाचार्य, सात्वतवंशीय कृतवर्मा इन सबों को हमने लाल पगड़ियां बांधे देखा है व इधर के सब राजाओं को भी लाल ही पगड़ियां बांधे देखा ४२ भीष्मपितामह व द्रोणाचार्य को हमारे व दुर्य्योधन के साथ ऊंटों पर चढ़े हमने देखा है ४३ फिर ऊंटों पर चढ़े दक्षिण दिशा को जाते देखा है इससे थोड़े ही दिनों में हम सब अवश्य यमपुर को जायँगे ४४ बस हम व और सब राजा लोग व जितने क्षत्रिय यहां इकट्ठे हुए हैं सबके सब गाण्डीव धन्वा की आगि में गिर भस्म होंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ४५ इतना सुन श्रीकृष्ण-चन्द्रजी बोले कि हे कर्ण! हमारा वचन तुम्हारे हृदय में नहीं टिकता बस इस पृथ्वी भर का विनाश बनाय निकट आ गया है ४६ हे तात! जब सब प्राणियों का नाश निकट आ जाता है तो अन्याय न्याय के समान जान पड़ता व हृदय से नहीं हटता ४७ यह सुन कर्ण बोले ॥

चौ० जो यहि क्षत्रिय नाशनकारी। रण से जियत बचब असुरारी॥
महाबाहु तव दर्शन करिहैं। परमानन्द हर्ष उर भरिहैं १।४८॥
अथवा तव सङ्गम महराजू। स्वर्गमाहिं होइहि युत साजू॥
अबहुँ समर रहबै तव सङ्गा। मरण भयहु तव सङ्ग प्रसङ्गा २।४९॥
सञ्जय कह इमि कर्ण प्रवीरा। कहि माधव सो मिल्यो गँभीरा॥
हरिसों बिदा भयहु त्यहि काला। रथसों उतरि चल्यो गतजाला ३।५०॥
हम लोगन सँग चढ़ि रथ अपने। जो सुवर्णभूषित शुभ थपने॥
ह्वै उदास राधासुत लौटे। पुनिपुनि हरिहि लखत अति चौटे ४।५१॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तब सात्यकि युत श्रीभगवाना। सारथिसन भाषत अकुलाना॥
त्वरितचलहु जनिहोयविलम्बा।अससुनिहांक्यहुरथअतिलम्बा५।५२॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्रिचत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १४३ ॥

एकसौचवालीस का अध्याय।

दो० एकसौ चौवालिस महँ, विदुर पृथा संवाद।
जिमिभो कुन्ती कर्णजानि, निजसों कह्यउ सुनाद॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि जब श्रीकृष्णचन्द्रजी कौरवों से विफल विनय हो पाण्डवों के समीप को गये तब विदुरजी जाय कुन्तीजी से शोच करते हुए धीरे से बोले १ कि हे कुन्तीजी ! जानती हो कि हमारा अभिप्राय विग्रह होने का नहीं है इससे हम बार बार बकते ही जाते हैं पर दुर्य्योधन हमारा वचन नहीं अङ्गीकार करता २ देखो राजा युधिष्ठिरजी चँदेली के राजा, पाञ्चालदेश के राजा, केकयदेश के महीपाल, भीमसेन, अर्जुन, कृष्णचन्द्र, सात्यकी, नकुल व सहदेव से युक्त भी हैं पर विराट के नगर में बैठे हुये धर्म ही की चिन्ता करते हैं व मारे सौहृद के इतने भारी बलवान् होकर भी दुर्बल के समान बैठे हैं जिसमें जाति बिरादरीवाले व नातवांतों का नाश न हो ३ । ४ परन्तु राजा धृतराष्ट्र बूढ़े भी होगये हैं पर शान्त नहीं होते पुत्रों के मद से ऐसे मतवाले होगये हैं कि अधर्म ही के मार्ग पर चलते हैं ५ किन्तु जयद्रथ, कर्ण, दुश्शासन व शकुनी की दुर्बुद्धि से पाण्डवों के विषय में भेद ही देखते हैं ६ व जो प्रतिज्ञा की थी कि चौदहें वर्ष आय अपना राज्य लेना इस धर्म को जिन लोगों के कहने से अधर्म ही समझते व न देने को धर्म समझते इस अधर्म का फल वंश भर का नाश है वही होगा कि परिवार नातवांत इष्टमित्रों सहित मारे जायँगे ७ कौरवों ने जबरदस्ती धर्म का त्याग किया है इससे कौन पुरुष यह सुन उदास न होगा कृष्णचन्द्रजी का कहा इन्होंने नहीं माना वे ऐसे ही चले गये हैं अब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पाण्डव लोग जरूर उद्योग करेंगे ८ तब कौरवों के अन्याय का यह फल होगा कि सब वीरों का नाश होगा इस बात की चिन्ता करते करते हमको न दिन में नींद आती है न रात्रि को ९ विदुरजी के ऐसे वचन सुन जोकि उन्होंने अर्थ की इच्छा से युक्त कहे थे मारे दुःख के ऊधी श्वासें लेती हुई कुन्तीजी ने अपने मन में विचार किया १० कि इस युद्ध में सुहृदों का बड़ाभारी अनादर होगा इससे अर्थ को धिक्कार है जिसके अर्थ यह बड़ाभारी ज्ञातिवालोंका वध होगा ११ पाण्डव चँदेली के राजा पाञ्चालदेश के राजा व यदुवंशीय सब इकट्ठे हुए हैं ये भीष्मपितामहादि श्रेष्ठ लोगों से युद्ध करेंगे फिर इससे अधिक दुःख और क्या होगा १२ अयुद्ध करने में अनादर होता है पर देखने में युद्ध में बड़ाभारी दोष है इससे अधन होकर मर जाय वह तो कल्याणकारक है पर जातिवालों के नाश करनेवाली जय कल्याणकारक नहीं है १३ इस बात को जब हम विचारती हैं तो हमारे हृदय में दुःख होता है कि शन्तनुजी के पुत्र भीष्मजी व सबके आचार्य्य द्रोण भगवान् १४ व कर्ण ये सब दुर्य्योधन के अर्थ हमको भय बढ़ाते हैं भला द्रोणाचार्य्यजी को अब शिष्यों से कुछ प्रयोजन नहीं जो अब युद्ध करेंगे १५ व पाण्डवों में भीष्मजी प्रेम कैसे न करेंगे यह तो दुर्मति दुर्य्योधन की वृथा दृष्टि है १६ यह ऐसा मोही है कि पापी व्यर्थ पाण्डवों से वैर करता है बड़े भारी अनर्थ में इसका हठ है व बलवान् जानो विशेष हुई है १७ फिर औरों को क्या कहें यह कर्ण पाण्डवों से वैर करता है यह बात और भी हमारे हृदय को जलाती है हम तो जानती हैं कि कर्ण का मन पाण्डवों कीही ओर लगना चाहिये १८ क्योंकि हमने किसी प्रकार से प्रसन्न करने के लिये दुर्व्वासाजी को अपने पास बुलाया फिर प्रसन्न हो दुर्व्वासाजी ने हमको वरदान दिया १९ वह वरदान ऐसा था कि एकमन्त्र हमको उन्होंने बताया जिससे हम जिस देवता को चाहें अपने पास बुला लें ऐसा वरपाय कुन्तिभोज नाम अपने पिता के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

घर में हम बसती थीं २० हमने अपने मन में बिचारा कि ब्राह्मणों के मन्त्र बलवान् भी होते हैं व निर्ब्बल भी इससे इस मन्त्र को परखना चाहिये पर ब्राह्मण के वचन का बल जान हमारा हृदय काँपता था परन्तु स्त्री के भाव से व बालभाव से बार बार हमको चिन्ता लगी रहती कि मन्त्र की परीक्षा अवश्य लेनी चाहिये परन्तु हम अकेली तो रहती न थीं सखियां व उपमाता भी हमारे सङ्ग सदा रहती थीं २१।२२ फिर यह भी विचारती थीं कि जिसमें पिता के धर्म की भी रक्षा हो व हमको दोष भी न हो व पुण्य भी हमको हो अपराधवती भी हम न कहावें २३ एक दिन दुर्व्वासाजी के प्रणामकर उस मन्त्र से हमने अपने अनरपन से सूर्य का आवाहन किया सूर्य आये यद्यपि हम कन्या थीं पर हममें वे अपना वीर्य्य स्थापन कर गये २४ उस गर्भ को हमने रक्षा किया वह गर्भ अपने भाइयों का हितपथ्य क्यों न करेगा २५ यह विचार कुन्ती आवश्यक कार्य्य के लिये गङ्गा तट पर गईं ॥ २६ ॥

चौ० वह दयालु सत्यव्रत कर्णहि । वेदाध्ययन करत वर वर्णहि ॥
गङ्गातटपर निजसुत बानी । सुनिताढिग गइँ सहित गलानी १।२७
ऊर्ध्वबाहु पूरब मुख ओही । करत हतो जप गत मद मोही ॥
पीछे पृथा जाय भइँ ठाढ़ी । जपावसान लखत मुद बाढ़ी २ । २८
सूर्य ताप तापित महतारी । कर्ण उत्तरी छांह पधारी ॥
पाण्डुनारिपुनि वृष्णिसुताहू । कमलमालसम तहँ कुँभिलाहू ३।२९
करिदुपहरपर्य्यन्तजबहिंजप । कर्ण दीखफिरिपृथहिसहिततप ॥
हाथ जोरि करि विनय बहूता । उठ्यहुपूत जिमि उठत सुपूता ४।३०
महातेज धर्म्मात्मा साधू । कुछ हँसि कर्ण कियो आराधू ॥
बोल्यहु कुन्ती सन पुनि धीरा । वीरमहारणधीर शरीरा ५ । ३१

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि कुन्तीकर्णसमागमे चतुश्चत्वारिंशदधिक-शततमोऽध्यायः ॥ १४४ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौपैंतालीस का अध्याय।

दो० इकसै पैंतालिस महैं, कर्ण कुन्ति संवाद।
जिमिभो वर्णनकर बसो, सुनहु सुजन गतवाद॥ १॥

कर्ण कुन्तीजी से बोले कि हम राधा व अधिरथ के पुत्र कर्ण हैं आपको प्रणाम करते हैं यहां आप कैसे आईं कहिये आपका कौन कार्य्य हम करें १ इतना सुन कुन्तीजी बोलीं कि तुम कुन्ती के पुत्र हो राधा के पुत्र नहीं हो व अधिरथ तुम्हारे पिता नहीं हैं व तुम सूत के कुल में नहीं उत्पन्न हुए हे कर्ण! हमारा वचन ठीक जानो २ सबसे प्रथम अपनी कोखि से हमने तुम्हीं को धारण किया है इससे तुम हमारे सब पुत्रों से बड़े हो जब हम कुंतिभोज नाम राजा के भवन में थीं व हमारा विवाह नहीं हुआ था तभी तुम वहां हमसे उत्पन्न हुए थे ३ सो यह नहीं कि किसी ऐरे गैरे से तुम उत्पन्न हुये हो किन्तु ये जो प्रकाशकर्त्ता सूर्यनारायण देव सर्वत्र तपते हैं व शोभित होते हैं इन्हीं ने हममें सर्व शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ तुमको उत्पन्न किया है ४ हे पुत्र! जब हम पिता के घर में थीं तभी तुम कुण्डल धारण किये कवच बखतर आदि पहिने देवता के वीर्य्य से उत्पन्न होने के कारण परम शोभा से प्रकाशित उत्पन्न हुए व उसी समय बड़े दुर्द्धर्ष थे इस से हमारे पुत्र हो ५ इससे अज्ञान के मारे अपने भाई पाण्डवों को न जान जो तुम मोह से धृतराष्ट्र के पुत्रों की सेवा करते हो हे पुत्र! यह तुमको योग्य नहीं है ६ हे पुत्र! मनुष्यों के धर्म्म के निश्चय में धर्म्म का फल यही है जोकि उसके जन्म से पिता पितामहादिक सन्तुष्ट हों व एक पुत्र ही में स्नेह करनेवाली उसकी माता भी सन्तुष्ट हो ७ इससे पूर्व्व समय में अर्ज्जुन की इकट्ठी की हुई राज्यश्री जिसको इन असाधु दुर्य्योधनादिकों ने लोभ से हर ली है उसे फिर तुम धृतराष्ट्र के पुत्रों से छीन युधिष्ठिर के सङ्ग भोग करो ८ जिससे आज कौरव

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लोग कर्ण व अर्ज्जुन का समागम देखें व तुम्हारे भायपन से ये दुष्ट आय आय पैरों पर पड़ें ॥ ६ ॥

चौ० राम जनार्द्दन से हित जैसे । कर्णार्ज्जुन सोहैं पुनि तैसे ॥
जब तुम एक होहु द्वौ वीरा । काह असाध्य लोक महँ धीरा १।१०
पांचभाय युत कर्ण पियारे । शोभित ह्वैहहु तिमि संसारे ॥
जिमि ब्रह्मा सब देवन सङ्गा । सोहत यज्ञ वेदि शुभ ढङ्गा २।११
सकलश्रेष्ठ गुणयुत तुम नीके। अहहु ज्येष्ठ भाइन महँ ठीके॥
अब जनि सूतसूनु कहु कबहूं । वीर्य्यवान पारथ तुम सबहूं ३।१२

इति श्रीमन्महा०उद्योगप०कुंतीकर्णसमागमेपञ्चचत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः॥१४५॥

एकसौछियालीस का अध्याय।

दो० यकसै छयालिसयें महँ, कर्ण पाण्डवन सङ्ग ।
करन न अङ्गीकार किय, दिय उत्तर बहु ढङ्ग ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि इसके पीछे कर्ण ने सूर्य्य से निकली प्रेमसानी पिता के समान बखानी आकाशबानी सकल गुणखानी सुनी १ कि हे कर्ण ! कुन्ती सत्य कहती हैं माता के वचन करो हे नरव्याघ्र ! ऐसा करने से तुम्हारा सब प्रकार कल्याण होगा २ वैशम्पायनजी बोले कि यद्यपि माता कुन्ती ने ऐसा कहा व पिता सूर्य्यनारायण ने अपने आप आय ऐसा कहा परन्तु सत्यधारणाधारी कर्ण की मति न चली इससे यों बोले ३ कि हे क्षत्रिय की स्त्री, कुन्ती, तुम्हारे कहे हुए इस वचन का विश्वास हम नहीं करते क्योंकि तुम्हारी आज्ञा का पालन करना इस समय धर्म्मरहित होने का द्वार है ४ क्योंकि आप ने हमारे विषय में बड़ाभारी पाप किया है जिससे कि उत्पन्न होते ही हमको फेंक दिया इससे हमारा यश माहात्म्य कीर्त्ति का कीर्त्तन नाश हो गया ५ जोकि हम क्षत्रिय तो उत्पन्न हुए परन्तु तुम्हारे कारण हमारी क्षत्रिय की कोई सत्क्रिया न हुई क्योंकि संस्कार तो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कोई होने ही न पाये व कन्या में जो गर्भ हुआ वह तुम्हारे सुख के लिये हुआ हमारे साथ तो ऐसा पाप किया जिससे हमारी जाति भ्रष्ट होगई शत्रु भी न करेगा ६ जब संस्कार करने का समय था तब तो तुमने हमारे ऊपर ऐसी अदया की कि क्षत्रिय का संस्कार होने ही न दिया अब संस्कार रहित हमको अपने कार्य्य के लिये प्रेरित करती हो ७ तुमने पूर्व्व समय में माता के समान हमारा हित नहीं किया अब वही तुम केवल अपने हित की इच्छा से हमको समझाती व अपनी ओर मिलाती हो ८ श्रीकृष्णचन्द्र सहित अर्ज्जुन से ऐसा कौन है जो व्यथा न पावे, इससे इस समय जो हम पाण्डवों की ओर हो रहें तो हमको कौन न कहेगा कि ये डर से उनकी ओर हो गये हैं ९ अब तक तो हम पाण्डवों के भाई नहीं विदित थे अब युद्ध के समय में तुमने हमको पाण्डवों का भाई प्रकाशित किया जो हम पाण्डवों के पास जाय मिलैं तो क्षत्रिय लोग हमको क्या कहेंगे १० आज तक धृतराष्ट्र के पुत्रों ने सब कामों से हमको पृथक् नहीं किया व सुख-पूर्व्वक हमारी पूजा उन लोगों ने की अब हम दुर्य्योधनादिकों की पूजादि निष्फल कैसे करें ११ जो दुर्य्योधनादि शत्रुओं से वैर बांध हमारी उपासना नित्य करते हैं व जैसे वसु लोग इन्द्र के नमस्कार करते वैसे ही वे लोग हमारे प्रतिदिन नमस्कार करते हैं १२ हमारे ही प्राणों से जो लोग शत्रुओं के जीतने में समर्थ अपना को मानते हैं सो हम अब उनका मनोरथ कैसे काटें १३ इस अपार संग्राम सागर को जो लोग हमीं को जहाज बनाय उतरना चाहते हैं उनको हम इस समय कैसे छोड़ें १४ दुर्य्योधनादिकों के यहां जितने भोजनादि के आश्रयी उपजीवी हैं उन सबों के कालरूप हमीं हैं इससे हम अब अपने प्राणों की रक्षा छोड़ जो कुछ अन्नादि उनका खाया है उससे अऋण हो जायँगे १५ क्योंकि जिनका भरण पोषण जहां से होता समय पर उनका शरीर पोषकों के अर्थ लग जाता तो वे लोग

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कृतार्थ हो जाते हैं व जो बहुत दिनों से पालित पोषित होते पर समय पर काम नहीं आते वे पापी कहाते हैं १६ व वे लोग जोकि स्वामी का अन्न खाते हैं पर समय पर काम नहीं आते उन पापियों को न यही लोक मिलता न परलोक ही मिलता है १७ इससे हम अपने बल व शक्ति भर धृतराष्ट्र के पुत्रों के अर्थ तुम्हारे पुत्रों के साथ युद्ध करेंगे तुमसे झूठ नहीं कहते १८ सत्पुरुषों के उचित अक्रूरता व सदाचारता की रक्षा करते हुए हम अर्थयुक्त भी तुम्हारा वचन इस समय नहीं करते १९ परन्तु तुमने जो हमारे विषय में विचार किया है वह मिथ्या न होगा क्योंकि मारने के योग्य व जिनको हम मार भी सकेंगे ऐसे तुम्हारे पुत्रों को न मारेंगे २० न हम युधिष्ठिर को मारेंगे न भीमसेन को न नकुल न सहदेव को व न और ही किसी को युधिष्ठिर की सेना भर में केवल अर्जुन के सङ्ग हमारा युद्ध होगा २१ क्योंकि समर में जो हम अर्जुन को मारें तो सब फल पाय जायँ व यदि अर्जुन ही हमको मार डालें तो भी हम यश ही पावें २२ हे यशस्विनी ! तुम्हारे पांच पुत्र कभी न नष्ट होंगे चाहे निरर्जुन हों तो सकर्ण पाँच रहेंगे व हम मारे जायँगे तो सार्जुन पांच रहेंगे प्रयोजन कि अब तक तुम्हारे हमें सहित ६ पुत्र रहे अब पांच ही रहेंगे हम अर्जुन को मार डालेंगे तो हमें समेत व हमको अर्जुन मार डालेंगे तो अर्जुन समेत पांच रहेंगे ॥ २३ ॥

दो० इमि सुनि कर्ण वचन रचन, पृथा प्रकम्पित गात ।
धैर्याकम्पन कर्ण को, छपटायहु कहि बात ॥ १ । २४ ॥
जिमि तुम भाषत कर्ण तिमि, होइहि कौरव नाश ।
यह भावी बलवान है, कहँ लग करें प्रकाश ॥ २ । २५ ॥
अभय दान तुम दीन है, चारिउ भाइन काहिं ।
यासों बिच संग्राम महँ, देख्यहु वै न नशाहिं ॥ ३ । २६ ॥
स्वास्ति अनामय कर्ण सों, पृथा कह्यहु पुनि कर्ण ।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कुन्ती सों कहि उभय गे, पृथक मार्ग शुभ वर्ण ॥ ४ । २७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि कुन्तीकर्णसमागमोनामषट्चत्वारिंशदधिक-शततमोऽध्यायः ॥ १४६ ॥

एकसौसैंतालीस का अध्याय।

दो० एकसैसैंतालिस महँ, हरि पाण्डवन समीप।
जिमि पहुँचे सब वृत्त नृप, पूछे कह कुलदीप ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि कृष्णचन्द्रजी हस्तिनापुर से उपप्लव्यमान स्थान में जहां पाण्डव लोग थे आय पाण्डवों के आगे वहां के सब वृत्त उन्होंने कहे १ व बड़ी देर तक कह सुन सम्मत कर भगवान् विश्राम करने के लिये जहां आप टिके रहते उस अपने भवन को गये २ जब सूर्य्य अस्ताचल को गये तो विराटादि सब राजाओं को अपने अपने स्थानपर जाने के लिये बिदाकर पांचों भाई पाण्डव लोग ३ सायङ्काल की सन्ध्या की उपासनाकर कृष्णचन्द्र ही में मन लगाय उनको फिर बुलवाय एकान्त में सम्मत करने लगे ४ युधिष्ठिरजी ने श्रीहरि से पूछा कि हे पुण्डरी-काक्ष ! आपने हस्तिनापुर में जाय दुर्य्योधन से क्या कहा ? वह हम से कहने के योग्य हो कहिये ५ श्रीभगवान् बोले कि हमने हस्तिनापुर में जाय सभा में दुर्य्योधन से तथ्य पथ्य व हित वचन कहे पर उस दुष्ट मति ने ग्रहण नहीं किये ६ युधिष्ठिरजी ने फिर पूछा कि जब असहन-शील दुर्य्योधन कुमार्ग ही में चला आपके कहने पर आरूढ़ न हुआ तो कुरुवंशियों में सबसे वृद्ध भीष्मपितामहजी ने उससे क्या कहा ७ व महाभाग आचार्य्य द्रोणाचार्यजी ने क्या कहा ? व उसके पिता माता धृतराष्ट्र गान्धारी ने क्या कहा ८ व धर्मधारियों में श्रेष्ठ हम लोगों के छोटे पितृव्य विदुरजी ने हम लोग पुत्रों के शोक से सन्तप्त होकर दुर्य्योधन से क्या कहा ९ व जो राजा लोग सब सभा में बैठे थे उन लोगों ने क्या कहा ? सब हमसे यथातथ्य कहिये १० व जो हमारे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हित के लिये आपने भीष्मजी व धृतराष्ट्रजी से व सब राजाओं से कहा व उन सब लोगों ने दुर्य्योधन से कहा पर उसके मनमें कोई किसी की बात नहीं टिकी ११ क्योंकि वह काम लोभयुक्त है व मानी होने के कारण अपने को प्राज्ञ मानता है इससे जो हम लोगों का प्रिय है वह उसको अप्रिय लगता है १२ उन सबके वचन हमारी सुनने की इच्छा है जिसमें हम लोगों का काल वृथा न व्यतीत होवै सो कीजिये क्योंकि आपही हम लोगों की गति हैं आपही हम लोगों के नाथ व गुरु बन्धु सब कुछ हैं १३ श्रीभगवान् बोले कि हे राजन्! कौरवों की सभा में जो वचन हमने राजा दुर्य्योधन से कहे वे सुनो १४ हमने जो वचन दुर्य्योधन को सुनाया उसके ऊपर वह मूढ़ बहुत हँसा तब अति क्रुद्ध हो भीष्मजी ने यह वचन कहा १५ हे दुर्य्योधन! हम कुल के हित के लिये जो कहते हैं उसे सुनो व वह सुनकर अपने कुल का हितकरो हे राजशार्दूल! १६ हे तात! हे राजन्! लोक भर में विख्यात हमारे पिता शन्तनुजी थे हे पुत्रवानों में श्रेष्ठ! उनके हम अकेलेही पुत्र हुए १७ उनके मन में आया कि हमारे दूसरा पुत्र कैसे हो, क्योंकि पण्डित लोग एक पुत्र व अपुत्र को समान कहते हैं १८ क्योंकि एक पुत्र से कुल की उन्नति नहीं होती फिर यश कैसे हो, उनका ऐसा ईप्सित जान हम सत्यवती नाम माता लाये १९ पिता के अर्थ व कुल के अर्थ हम बड़ी दुष्कर प्रतिज्ञा करके माता लाये सो तुम भी जानते हो कि एक तो हमने राजा न होने की प्रतिज्ञा की व दूसरे ऊर्ध्वरेता हुए इसलिये विवाह ही अपना नहीं किया २० अब भी उस प्रतिज्ञा का पालन करते यहां बसे हैं, व अपना सदा संतुष्ट रहते हैं २१ उन सत्यवती नाम माता में महाबाहु कुरुकुल में श्रेष्ठ धर्म्मात्मा विचित्रवीर्यजी सबसे छोटे उत्पन्न हुए २२ जब हमारे पिताजी स्वर्ग्ग को गये तब हमने विचित्र-वीर्य को राजगद्दी पर बैठाया व उनके सेवक बनकर हम नीचे रहने लगे २३ फिर बहुत से राजाओं को जीत हमने उनके योग्य तीन

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

स्त्रियां ले आय उनका विवाह कराया, यह बात तुमने बहुत लोगों से बहुत बार सुनी है २४ जब हम परशुरामजी से द्वन्द्व युद्ध करने को गये तब राम के भय से प्रजाओं सहित विचित्रवीर्य भाग खड़े हुए सेनानिवेश स्थान शून्य होगया २५ फिर वे स्त्रियों के संग भोग विलास अत्यन्त करने लगे इससे उनके क्षयी रोग हुआ उसमें मृतक होगये, तब राज्य विना राजा का हो गया इन्द्र ने वर्षा ही बन्द कर दी तब मारे भूख प्यास से पीड़ित प्रजा हमारे पास आय बोली २६ कि हे शन्तनु के कुल बढ़ानेवाले ! सब प्रजा नष्ट हुई जाती हैं इससे आप हम लोगों के राजा हों व अनावृष्ट्यादि सात ईतियों को नाश कीजिये २७ हे गाङ्गेय ! दारुण व्याधियों से तुम्हारी प्रजायें पीड़ित हो रही हैं, अब थोड़ी रह गई हैं बहुत नष्ट होगईं, इससे आप प्रजाओं की रक्षा करें २८ हे वीर ! हम लोगों के मन की व्यथा को भी दूर कीजिये धर्म से प्रजा पालन कीजिये तुम्हारे जीतेजी प्रजा नाश को न प्राप्त हों २९ भीष्मजी बोले कि सद्वृत्त की रक्षा करते व प्रतिज्ञा की रक्षा करते हुए हमारा मन प्रजाओं के ऐसा रोदन करने पर भी चलायमान न हुआ ३० हे महाराज! इसके पीछे सब पुरवासी व हमारी सत्यवती माता भृत्य लोग पुरोहित व बहुत शास्त्र वेद पढ़े हुए ब्राह्मण लोगों ने हमसे अतिसन्तप्त होकर बार बार कहा कि आप अब राजा हों ३१ बहुत दिनों का रक्षित राज्य अब आपको न पाय नष्ट हुआ चाहता है इससे हम लोगों के हित के लिये आप राजा हों ३२ जब सबों ने ऐसा कहा तो हाथ जोड़ बहुत दुःखित हो पिता के गौरव से जो प्रतिज्ञा हमने की थी वह सबों से कही ३३ कि हम तो ऊर्ध्वरेता व अराजा कुल के अर्थ रहेंगे यह प्रतिज्ञा कर चुके हैं उसमें भी विशेष तुम्हारे ही अर्थ प्रतिज्ञा की है इससे आप हमको राजा होने को न कहें ३४ यह कह हाथ जोड़ हमने माता को प्रसन्न किया कि अब शन्तनु से उत्पन्न हम कौरव-वंश के राजा नहीं हो सकते ३५ क्योंकि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हम अपनी प्रतिज्ञा को मिथ्या न करेंगे आप अच्छी तरह जानती हैं कि तुम्हारे विवाह ही के अर्थ हमने प्रतिज्ञा की थी ३६ सो अब भी तुम्हारे आज्ञाकारी दास हम बने हैं जो आज्ञा होगी करते रहेंगे इस प्रकार हमने माता को समझाया ३७ व माता सहित हमने भाई विचित्रवीर्य की स्त्रियों में पुत्र उत्पन्न करने के लिये महामुनि व्यासजी से बहुत प्रार्थना की वे नहीं मानते थे इससे बहुत समझाय बुझाय पांच पलटिया की ३८ तब वे पुत्र उत्पन्न करने के लिये प्रसन्न हुए व तीन वर्ष में उन्होंने आय २ तीन पुत्र उत्पन्न किये ३६ उनमें यद्यपि सबसे ज्येष्ठ तुम्हारे पिता धृतराष्ट्र ही थे पर अन्ध बधिर होने के कारण राजा नहीं होसके इससे लोक में विश्रुत व महात्मा पाण्डुजी राजा हुए ४० फिर जब पाण्डु ही राजा ठहरे तो पाण्डव उनके पुत्र हैं उनके सब राज्यादि के अधिकारी हैं इससे हे तात! कलह न करो भला आधा राज्य तो उनको अवश्य ही दे दो ४१ जबतक हम जीते हैं तबतक हमारे विपरीत होकर कौन राज्य कर सकता है इससे हमारे वचन का निरादर न करो हम तुम लोगों का मेल चाहते हैं युद्ध नहीं चाहते ४२ हम तुम में व पाण्डवों में विशेषता नहीं समझते समान ही जानते हैं सो हमीं नहीं तुम्हारे पिता माता व विदुर का भी यही मत है कि आधा राज्य पाण्डवों को दिया जावे ॥ ४३ ॥

चौ० वृद्ध वचन सुनने के योगू। यासों सुनहु सुनत सब लोगू॥
शङ्का करहु न वचन हमारे। नाशहु जनि महि अरु निज सारे॥ १।४४

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तचत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १४७ ॥

एकसौअरतालीस का अध्याय।

दो० इकसैअरतालिस महँ, द्रोण विदुर के बैन।
धर्म्मतनय सों हरि कह्यहु, सो वर्णत सुखदैन ॥ १ ॥

श्रीभगवान् कृष्णचन्द्रजी बोले कि भीष्मजी के कहने के पीछे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राजाओं के मध्य में बैठे हुए दुर्य्योधन से द्रोणाचार्य्यजी यह बोले कि १ हे तात ! जैसे इस कुल के स्थापन करने के लिये राजा शन्तनु मुख्य थे वैसे ही इस कुल के अर्थ देवव्रत भीष्मजी भी हुए २ व उसी प्रकार सत्यप्रतिज्ञ जितेन्द्रिय धर्म्मात्मा सदाचार निष्ठ व एकाग्रचित्त महाराज पाण्डुजी राजा हुए ३ उन्होंने यद्यपि अन्ध बधिर होने से धृतराष्ट्रजी राजा होने के योग्य न थे व शूद्री के गर्भ में जन्म लेने के कारण विदुरजी राज्य के अधिकारी न थे पर धरोहर की रीति पर ज्येष्ठ भाई धृतराष्ट्र व छोटे भाई विदुर को भी राज्य सौंपा क्योंकि कुरुओं के वंश के बढ़ाने की इच्छा करते थे ४ इससे धृतराष्ट्र को सिंहासन पर बैठाय राजा पाण्डु अपनी दोनों स्त्रियों को सङ्ग ले वनको चले गये ५ इसके पीछे विदुरजी नीचों के समान धृतराष्ट्रजी की उपासना करते रहे जैसे सेवक लोग करते वैसे ही ये चामर लिये डुलाया करते ६ तब से सब प्रजा जैसे राजा पाण्डु की सेवा व आज्ञा में रहती थी वैसे ही विधिपूर्वक राजा धृतराष्ट्रजी की सेवा आदि में रहने लगी ७ इस प्रकार राज्य छोड़ धृतराष्ट्र व विदुर को सौंप राजा पाण्डु आप सब पृथ्वी पर घूमने लगे ८ यहां फिर कोष का इकट्ठा करना व उसकी रक्षा देना लेना भृत्यों का देखना भालना व सबका भरण पोषण इतने कार्य्य तो सत्यप्रतिज्ञ विदुरजी करते रहे ९ व शत्रुओं के जीतनेवाले भीष्मपितामह महातेजस्वी कर्त्तव्याकर्त्तव्य का विचारना सन्धि विग्रहादि करना राजाओं को दान देना उनसे उचित करादि लेना इस कार्य्य में रहे १० और विदुर भीष्मपितामह दोनों की निरन्तर शिक्षा से शिक्षित धृतराष्ट्रजी राज्यसिंहासन पर बैठे रहते ११ फिर तिसके कुल में उत्पन्न हो तुम कुल में भेद डालना कैसे चाहते हो, हे राजन् ! इकट्ठे हो सब भाइयों के साथ राज्य भोगो १२ यह बात न तो हम युद्ध के भय से कहते हैं न धन के लोभ से क्योंकि हम तो भीष्म का दिया हुआ जो कुछ पाते हैं उसी की इच्छा करते हैं तुम्हारे दिये हुए की कुछ भी नहीं करते १३

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व न हम तुमसे जीविका के उपाय की इच्छा करते हैं, हे नराधिप ! जिधर भीष्म रहेंगे उधर द्रोण भी रहेंगे इससे भीष्मजी ने जो कहा है वही करो १४ पाण्डुजी के पुत्रों को आधा राज्य दे दो हम उनके तुम्हारे दोनों के आचार्य हैं व वे हमारे तुम्हारे सबके स्वामी हैं १५ हमको जैसे अश्वत्थामा हैं वैसे ही अर्जुन इसमें कुछ भी अन्तर नहीं है अब बहुत प्रलाप करने से क्या है जहां धर्म्म वहीं जय जानो १६ श्रीकृष्णचन्द्रजी बोले कि हे महाराज ! जब द्रोणाचार्य्यजी ने ऐसा दुर्य्योधन से कहा तो सत्यप्रतिज्ञ विदुरजी बोले १७ सो दुर्य्योधन से नहीं भीष्मजी की ओर देख उनको अपनी ओर चिताय बोले १८ हे भीष्मजी! कहते हुए हमारे वचन सुनो यह कौरववंश प्रणष्ट होगया था उसको तुमने फिर उद्धार किया १९ व आप रोय रोय कहते हुए हमारे वचनों की ओर कान नहीं देते उपेक्षा ही करते हैं कुलनाशक दुर्य्योधन इस कुल का कौन होता है २० जिस लोभी की मति के पीछे आप चलते हैं इसका कौन ठीक है यह तो अनार्य हो गया है उपकार किसी का मानता नहीं व लोभ के मारे इसका चित्त बनाय हत होगया है २१ देखो यह दुष्ट शास्त्र का उल्लंघन करता व धर्म्मदर्शी अपने पिता के वचन का उल्लङ्घन करता है इसका परिणाम यह होगा कि इस दुष्ट के कारण ये सब कौरव मारडाले जायँगे २२ इससे हे महाराज ! जिसमें इन कौरवों का नाश न हो वैसा कीजिये हे राजन् ! हमको व धृतराष्ट्र को पूर्वसमय में आपने जैसे चित्रसारी बनानेवाला तसवीर बनाय स्थापित करता है वैसे ही बनाय स्थापित किया है, जैसे प्रजापति ब्रह्माजी सब प्रजाओं को बनाय फिर आप ही संहार भी करते हैं वैसे ही आपको भी कर्त्तव्य है २३ हे महाराज! आप कुल की क्षय देखते हुए अब इसकी उपेक्षा न करें व जो इन कौरवों के नाश के निकट आजाने के कारण तुम्हारी भी मति नष्ट होगई हो तो २४ हमको व धृतराष्ट्र को सङ्ग ले वनको चले चलो नहीं तो इस दुर्म्मति कृतघ्नी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दुर्य्योधन को बँधुआकर पाण्डवों से अभिरक्षित इस राज्य का पालन करिये कराइये २५ हे राजशार्दूल ! आप प्रसन्न हों इसमें बड़ाभारी विनाश दिखाई देता है सो पाण्डवों का व अमित तेजस्वी कौरवों का विनाश है २६ इतना कह कुछ मन में ध्यान करते व बार बार ऊर्धश्वासें लेते हुए विदुर दुःखितचित्त हो चुप हो रहे २७ इसके पीछे कुल नाश होने से डरती हुई राजा सुबल की पुत्री गान्धारीजी सब राजाओं के सामने क्रूरस्वभाव पापी अपने पुत्र दुर्य्योधन से अति कोपकर बोलीं २८ कि जो राजा लोग व ब्रह्मर्षिलोग इस राजसभा में बैठे हैं वे सब हमारे वचन सुनें इस दुष्ट दुर्य्योधन व इसके मन्त्रियों का अपराध कहती हूं ॥ २९ ॥

हरिगीतिका ॥

कुरुराज्य यह क्रम सों सुभोगत पूर्व भूपति आवहीं।
कुल धर्म्म यह बहुकाल सों क्रमनांघि नहिं कोइ पावहीं॥
अब पापबुद्धि नृशंस तू यह राज्य कौरव को चहै।
ज्यहि होय नाश न कोय बाकी बच रहै सोई कहै॥ १। ३०॥
मतिमान अरु धृतिमान श्रीधृतराष्ट्र राजा हैं सही।
अरु तासु अनुज पुनीत मति श्रीविदुरहू नृप वैसही॥
इनदोय निदरि सुयोध तुम किमि चहत राज्य बतावहू।
यह मोह है तुम्हरो न यामहिं भाग क्यहुविधि पावहू॥ २। ३१॥
धृतराष्ट्र नृप अरु विदुर दोऊ भीष्म जबलग हैं सहीं।
परवा न तबलग हैं स्ववश नहिं देहिं जो तुमको कहीं॥
पर धर्म्मवश नरश्रेष्ठ गङ्गातनय सुनय विचारि कै।
नहिं चहत लेनो राज्य कबहूं चित्त में नय धारिकै॥ ३। ३२॥
यह राज्य तो नृप पाण्डुका है धर्षणा कइ ना करै।
ये तनय तिनहीं के सही सब पार्थ हैं रण आकरै॥
नहिं और हैं यासों सबै यह राज्य उनहीं को चही।
जासों पितामह राज्य पुत्ररु पौत्र क्रमसों ही गही॥ ४। ३३॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जो सत्यसन्ध मनीषिवर कुरु मुख्य भीषम भाषहीं।
वह उचित हम सबको करणगत रोष दोषरु माषहीं॥
अरु धर्म्मयुत जो राज्यपालन करनचहहिं करैं वही।
सब भाँति शीश नवाय आय न आनकान धरै कही॥ ५। ३४॥
बिदुर अरु धृतराष्ट्र भूपति भीष्म आज्ञा ही कहैं।
जगकार्य्य आर्य्य बखान कीन्हों ही करैं सुख ते लहैं॥
अरु धर्म्म न्याय बनाय सबविधि दीर्घकाल फलैं सदा।
जो सुहृद वचन प्रमाण मानहिं ते लहैं सुख सम्पदा॥ ६। ३५॥
न्यायसों यह राज्य सारो धर्म्मनन्दन को चही।
वे भीष्म अरु धृतराष्ट्र हू के वचन पालहिं सो सही॥
अरु करहिं राज्य सुधीर मनवर वीर उनको ही लहैं।
नहिं आन है कइ राज्ययोग्य विचारि सबकोई कहैं॥ ७। ३६॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि कृष्णवाक्येऽष्टचत्वारिंश-
दधिकशततमोऽध्यायः॥ १४८॥

एकसौउञ्चास का अध्याय।

दो० इकसै उञ्चसवें महैं, जिमि धृतराष्ट्र भुआल।
निजसुतसों भाष्यहु स्वई, कह हरि परमकृपाल॥ १॥

श्रीभगवान् बोले कि, हे महाराज! जब गान्धारी ने ऐसा कहा तो बीच सभा में दुर्य्योधन से धृतराष्ट्रजी ने यह कहा कि १ हे पुत्र, दुर्य्योधन! जो हम तुमसे कहेंगे वह सुनो और पिता का गौरव मान वही करो उसमें तुम्हारा कल्याण होगा २ कौरवों के वंश के बढ़ानेवाले सबसे प्रथम सोम नाम प्रजापति हुये सोम से छठीं पुश्त में नहुष के पुत्र राजा ययातिजी हुए ३ उनके राजर्षिसत्तम पांच पुत्र हुए उनमें सबसे ज्येष्ठ व श्रेष्ठ महातेजस्वी यदुजी हुए ४ व उनमें सबसे छोटे पुरुजी हुए जो कि हमलोगों के वंश के बढ़ानेवाले हैं ये राजा वृषपर्वा दैत्य की कन्या शर्मिष्ठा के पुत्र हैं ५ हे भरतश्रेष्ठ! यदुजी शुक्राचार्य्य

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

की कन्या देवयानी के पुत्र हैं इससे अमिततेजस्वी शुक्रजी के दौहित्र हैं ६ ये यादवों के कुल के करनेवाले बड़े बलवान् वीर्यवान् हुए परन्तु ऐसे अहङ्कारी व सुमन्दमति थे कि इन्होंने क्षत्रिय धर्म की निन्दा कर डाली ७ बल्कि अहङ्कार से मोहित हो इन्होंने अपने पिता की आज्ञा न की व अपने पिता भाई सबों का निरादर किया ८ पर ऐसे बलवान् थे कि चारशतेंद्र पर्यन्त पृथ्वीके राजा हो सब छोटे राजाओं को अपने वश में कर हस्तिनापुर में बसे ९ हे दुर्य्योधन ! परन्तु नहुष के पुत्र राजा ययाति उनके पिता ने परम क्रुद्ध हो पुत्र यदु को शाप दिया व राज्य से उतार दिया १० व इन बलदर्पित यदु के अनुयायी तीन भाई और थे जिन्होंने भी पिता की आज्ञा न मानी थी क्रुद्ध हो ययातिजी ने उन पुत्रों को भी शाप दे दिया ११ उसके पीछे उन नृपसत्तम ने, अपने वशवर्त्ती सबसे छोटे पुत्र पूरु को राजा बनाया १२ इस रीति से जो पिता की आज्ञा में न चले व मदान्ध हो तो ज्येष्ठ भी पुत्र राज्य नहीं पाता और वृद्धों की सेवा करने से छोटे भी पुत्र राज्य पाजाते हैं १३ इसी प्रकार हमारे पिताजी के पितामह तीनों लोकों में प्रसिद्ध सब धर्मशास्त्र जाननेवाले प्रतीप नाम महाराज हुए १४ धर्म से राज्य का पालन करते हुए उन राजसिंह के यशस्वी देवतुल्य तीन पुत्र उत्पन्न हुए १५ उनमें सबसे बड़े देवापि, उनसे छोटे वाह्लीक व उनसे छोटे तीसरे बड़े धृतिमान्, हम लोगों के पितामह शन्तनुजी हुए १६ उनमें देवापिजी के कुष्ठ-रोग था परन्तु वे महातेजस्वी, बड़े धर्म्मात्मा, सत्यवादी पिता की सेवा में तत्पर १७ पुर नगरनिवासी व देशनिवासी सबके सम्मत, सज्जनों से सत्कार पानेवाले व क्या बाल क्या वृद्ध देवापिजी में सब का चित्त लगा रहता ऐसे सबके प्रिय थे १८ और बड़े दानी, सत्य-प्रतिज्ञ, सब प्राणियों के हित करने में तत्पर, पिता की आज्ञा में सदा वर्त्तमान व ब्राह्मणों की आज्ञा में युक्त १९ महात्मा वाह्लीक व शन्तनु

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दोनों अपने भाइयों के परमप्रिय क्योंकि उन तीनों महात्माओं का परस्पर बड़ा ही अच्छा भाईपन था २० होते २ बहुत काल बीतने से राजसत्तम प्रतीपजी वृद्ध हुए उन्होंने पुत्र के अभिषेक के लिये शास्त्र के अनुसार सब सामग्री इकट्ठी कराई २१ व सब मङ्गल के अर्थ उन्होंने कराये परन्तु पुरवासी देश निवासियों सहित ब्राह्मणों व वृद्धों ने २२ देवापि के राज्याभिषेक करने का निषेध किया उस अभिषेक करने का निषेध सुन राजा प्रतीपजी ने रोदनकर अपने बड़े पुत्र का बड़ा शोच किया २३ इस रीति से यद्यपि देवापिजी महादानी, सत्य-प्रतिज्ञ, धर्म्मज्ञ व सब प्रजाओं तथा अपने पिता के प्रिय थे पर कुष्ठी होने से दूषित होगये उनको राज्य न मिला २४ क्योंकि हीनाङ्ग पृथ्वीपाल को देवता लोग नहीं प्रसन्न करते इसी से ब्राह्मण श्रेष्ठों ने राजा को वैसे पुत्र के अभिषेक करने से रोंक दिया २५ इससे राजा प्रतीपजी पुत्र के शोक से बहुत व्यथित हुए व जब देवापि ने देखा कि राजा को ब्राह्मणों ने अभिषेक करने को रोंक दिया तो देवापि वन को चले गये २६ अब उनके पीछे वाह्लीकजी राज्य पिता भाई सबको छोड़ अपने मामा के यहां चले गये क्योंकि वहां का राज्य कोष सब उनको मिल गया २७ जब पिता प्रतीपजी मृतक हुए तो अपने भाई वाह्लीक की सम्मति से लोक में विश्रुत शन्तनुजी राजा हो राज्य करने लगे २८ इसी प्रकार हीनाङ्ग होने के कारण हमको भी महामतिमान् पाण्डुजी ने ज्येष्ठ होने पर भी राज्य पर नहीं बैठने दिया क्योंकि ब्राह्मणों ने उस समय भी रोंका था २९ इससे हमसे छोटे भी थे पर अङ्ग भङ्ग न थे पाण्डुजी राजा हुए अब उनके न होने पर उनके पुत्रों का ही यह राज्य है हे शत्रुसूदन! ३० फिर अन्ध बधिर होने के कारण राज्य के लिये जब हम अभागी ठहरे तो तुम कैसे राज्य लेने की इच्छा करते हो क्योंकि तुम अराजा के पुत्र हो इससे तुम भी अराजा रहोगे तुम पराया धन क्यों हरा चाहते हो॥ ३१॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हरिगीतिका ॥

राजपुत्र महान धर्म्म समान धर्म्मकुमार है ।
न्यायसों यह राज्य सारो है उन्हीं न तुम्हार है ॥
वे अहैं कुल कौरवन के भर्त्ता परम सुन्दर सही ।
अरु सबन के सिख देनहारे बात हम सांची कही ॥ १ । ३२ ॥
सत्यसन्ध प्रमत्त नहिं अरु बन्धुजन महँ साधु हैं ।
शास्त्रमहँ सब भाँति नागर प्रजाप्रीति अबाधु हैं ॥
सुहृद अनुकम्पी जितेन्द्रिय साधुजन पोषक महा ।
धर्म्मनन्दन सकलनन्दन गतविफन्दन सब कहा ॥ २ । ३३ ॥
दमनियमसंयम क्षमाआर्ज्जव सत्यव्रत ताहू तहां ।
अप्रमादरु सहनशील स्वभाव तासु मृषा कहां ॥
अरु सकलभूतन पर दया त्यहि सकल शिक्षाहूतहैं ।
इमि सर्व्वभूपतिगुण युधिष्ठिर में अहैं सांची कहैं ॥ ३ । ३४ ॥
तुमहौ अनार्य्यचरित्र अनृपकुमार लुब्धरु बन्धु के ।
नित पापबुद्धी अरु कुबुद्धी दुष्ट पूत सुअन्धु के ॥
क्रमसों सुपाण्डव प्राप्त राज्य हरा चहै मतिमन्दहू ।
किमि पाइहै न सुहाइ है पछिताइ है परि फन्दहू ॥ ४ । ३५ ॥
सह बाहनोयुतहू परिच्छद मोह छोड़ि महाअवै ।
अधराज्य पार्थन देहु आधो लेहु तुमहू तो फवै ॥
वह आधही गतबाधही सहअनुजमनुजपहै भला ।
नहिंलोभ करहु न धरहु जियमहँ परधनोजैहैचला ॥ ५ । ३६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्व्वणि कुन्तीकर्णसमागमएकोनपञ्चाशदधिकशततमोऽध्यायः॥

एकसौपचास का अध्याय ।

दो० इकसै पञ्चसवें महैं, धर्म्मतनय सन कृष्ण ।
कह कौरव उद्योगकृत, दुर्य्योधन सहतृष्ण ॥ १ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

श्रीकृष्णचन्द्रजी युधिष्ठिरजी से बोले कि इसप्रकार भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य्य, विदुरजी, गान्धारी व धृतराष्ट्र ने कहा परन्तु उस मन्द ने कुछ न माना १ क्रोध के मारे नेत्र लाल कर सबका तिरस्कार कर सभा से चला गया उसके पीछे जो उसके सङ्ग प्राण देने को आये हैं वे राजा लोग भी उसी के सङ्ग चले गये २ व अपने स्थान पर पहुँच सब राजाओं को उसने आज्ञा दी कि आज पुष्य नक्षत्र है तुम सब लोग युद्ध करने के लिये कुरुक्षेत्र को चलो ३ उसकी आज्ञा पाय काल के प्रेरित वे राजा लोग भीष्मजी को सेनापति बनाय बड़ी शीघ्रता के साथ कुरुक्षेत्र को चले गये अपनी २ सेना भी सङ्ग ले गये ४ ग्यारह अक्षौहिणी सेना सब राजाओं की मिल कौरवों की है उन सबों के मुखिया भीष्मजी हैं जिनकी पताका में ताल का चिह्न बना है ५ हे राजन्! अब इस विषय में जो योग्य व प्राप्त हो वह करो जो वचन भीष्म ने कहा व जो द्रोणाचार्य्य विदुरजी ने कहा ६ गान्धारी धृतराष्ट्रजी ने कहा सब हमारे सामने ही कहा किसी और के मुख की कही हमने नहीं कही जो कुछ कौरवों की सभा का वृत्तान्त है सब हमने आपसे कहा ७ हे राजन्! जिसमें तुम्हारा उसका सौभ्रात्र बना रहै इससे हमने जाते के साथ पहिले उसे बहुत प्रकार से समझाया जिससे इस वंश में भेद न परे व प्रजाओं की वृद्धि हो ८ जब उसने साम अर्थात् समझाना न माना तो हमने भेद का उपाय किया उसमें देवताओं और मनुष्यों के कर्म्म हमने कहे ९ जब समझाना दुर्य्योधन ने किसी प्रकार न माना तो राजाओं और उसके मन में भेद डाला १० उसमें अद्भुत घोर दारुण अमानुष कर्म्म हमने दिखाये ११ उसमें सब राजाओं को बहुत फटकार दिखाई व दुर्य्योधन को एक तृण के बराबर भी न समझा कर्ण व शकुनी को तो बार २ अपकार किया १२ फिर जुआ खेलाने के निमित्त दुर्य्योधनादिकों की बड़ी भारी निन्दा कर वचनों से व एकान्त की सम्मति से राजाओं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के मन में भेद अर्थात् फोर तोड़ कराया १३ फिर साम समझाना सहित दान देना भी सुनाया जिसमें कुरुवंश में भेद न हो व कार्य्य भी हो जाय १४ इस विषय में यह बात हमने कही कि यद्यपि युधिष्ठिरादि बड़े शूरवीर हैं परन्तु सब धृतराष्ट्र विदुर व भीष्म की सेवा में मान छोड़ नीच बनकर रहेंगे १५ तुमको वे सब राज्य देंगे आप असमर्थ होकर रहेंगे जिस प्रकार धृतराष्ट्र भीष्म व विदुरजी ने तुम्हारे हित की बात कही है वही सही १६ सब तुम्हारा राज्य हो केवल पांच ग्राम छोड़ दो क्योंकि तुम्हारे पिता धृतराष्ट्र को पाण्डवों का भी भरण पोषण करना बहुत आवश्यक है १७ ऐसा कहने पर भी उस दुष्टात्मा ने भाग नहीं छोड़ा इससे उन पापियों को अब दण्ड ही देना उचित है ॥ १८ ॥

दो० निजविनाशहितसकलनृप, कुरुक्षेत्रगे भूप।
कुरुसमाज के वृत्त सब, तुमसन कहे विरूप ॥ १ । १९ ॥
विना युद्ध नृप तुमहिं नहिं, देहहिं थोड़हु राज।
मृत्यु निकट नाशोन्मुखहु, हैं यासों युत साज ॥ २ । २० ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चाशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १५० ॥

एकसौइक्यावन का अध्याय।

दो० इकसै इक्यावन महँ, पार्थ सैन्य सजि साज।
कुरुक्षेत्र पहुँची समर, करन हेतु कुरु राज ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि कृष्णचन्द्रजी के वचन सुन धर्म्मात्मा धर्म्मराज युधिष्ठिरजी कृष्णचन्द्रजी के सामने ही अपने सब भाइयों से बोले १ कि कौरवों की सभा में जो वृत्त हैं उन्हें आप लोगों ने सुना व कृष्णचन्द्रजी ने जो कहा वह भी अच्छी तरह विचार लिया २ इस से अब बहुत ही शीघ्र सेना का विभाग आप लोग करें हमारी विजय के लिये सात अक्षौहिणी सेना इकट्ठी हुई है ३ उन सातों सेनाओं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के जो सात पति हैं उनको हम बताते हैं १ द्रुपद २ विराट ३ धृष्टद्युम्न ४ शिखण्डी ४।५ सात्यकी ६ चेकितान ७ वीर्य्यवान् भीमसेन, ये सब सेनाओं के नायक वीर हैं व सब अपना २ शरीर छोड़ने पर उतारू हैं ५ सब वेदशास्त्र जानते हैं, सब शूर हैं सबके आचरण ठीक हैं, सब ह्रीमान् नीतिमान् व सब युद्ध में विशारद हैं ६ बाणादि अस्त्र चलाने में सब कुशल हैं व सब अस्त्र शस्त्रों से युद्ध करना जानते हैं परन्तु सातों सेनाओं का स्वामी मुख्य सेनापति जोकि सबका विभाग जानै ७ वह होगा जो अग्निरूप बाणों को चिनगारी किये भीष्मजी को रण में सहै उसको पहिले सहदेव तुम बताओ कौन होगा तुम्हारे मत से इस समाज में जो सेनापति हो सके उसको बताओ तो ८ सहदेव बोले कि हमारे विचार से महाराज विराटजी सेनापति हों क्योंकि ये सम्बन्धी हैं व सुख में सुखी दुःख में दुःखी, अति वीर्य्यवान् व जिनके शरण में आय हम लोग अपना भाग पाने के भागी हुए ९ और ये मत्स्यदेश के राजा विराटजी बलवान् धनुर्विद्या में निपुण युद्ध करने में महादुर्म्मद हैं इससे भीष्मपितामह और सब राजाओं को रण में अच्छी तरह सह सकेंगे १० वैशम्पायनजी बोले कि जब सहदेव ने ऐसा कहा तो बोलने में बड़े चतुर नकुल यह बोले कि ११ यश, शास्त्र, धैर्य्य, कुल, परिवार, सम्बन्धी, ह्रीमान्, बलवान्, श्रीमान् सर्व्वशास्त्र में विशारद होने से १२ भरद्वाजजी से, शास्त्र पढ़ने से, महादुर्द्धर्ष होने से, सत्य प्रतिज्ञता से व नित्य ही भीष्मपितामह द्रोणाचार्य्य से स्पर्द्धा रखने से १३ व सब राजाओं के वंश में प्रशंसित होने से अपने पुत्र पौत्र समेत सैकरों शाखा के वृत्त के समान विराजमान १४ व मारे रोष के जिन्होंने द्रोणाचार्य्य के नाश के लिये स्त्री सहित बड़ी घोर तपस्या की है, वे वीर संग्राम में बड़े शोभित भी होते हैं १५ व जो पार्थिव श्रेष्ठ सदा हम लोगों का समाधान पिता के समान करते हैं वे हम लोगों के श्वशुर महाराज द्रुपदजी सब सेना

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

के सेनापति हों १६ क्योंकि जो भीष्म द्रोण दोनों एक ही सङ्ग युद्ध करने को आवें तो ये सह सकेंगे जिससे कि सब शस्त्रास्त्र के जानने वाले हैं और द्रोणाचार्य्य के सखा भी हैं १७ जब सहदेव नकुल कह चुके तब उन दोनों से बड़े इन्द्र के पुत्र इन्द्र ही के समान पराक्रमी अर्ज्जुनजी बोले कि १८ जो ये वीर तपस्या के प्रभाव से व ऋषियों के सन्तोष करने से ज्वाला के रङ्ग के महापुरुष उत्पन्न हुए हैं १९ जो धनुर्द्धारण कर कवच खड्ग धारण कर रथ पर चढ़ दिव्य घोड़े जुते ही रथ पर चढ़े अग्नि के कुण्ड से निकले हैं २० व उसी समय महा घोष-युक्त रथ के समान गर्ज्जते ही से सिंह के समान पुष्ट देह व सिंह ही के तुल्य पराक्रमी उत्पन्न हुए हैं २१ जिनकी सिंह की सी चौड़ी छाती है, सिंह ही की सी भुजा, सिंह ही का सा वक्षःस्थल, महाबली, सिंह ही का सा गर्ज्जना व सिंह ही का सा कन्धा ऐसे महाद्युतिमान् २२ व जिनकी सुन्दर भौंहें, सुन्दर दाँत, सुन्दर चौंह, सुन्दर बाहु, सुन्दर मुख, बड़े मोटे ताजे सुन्दर हसिया, सुन्दर बड़े नेत्र, सुन्दर पाद, सुन्दर बैठक है २३ व जो सब शस्त्रों से अभेद्य हैं, मानो मदान्ध हाथी हैं जोकि द्रोणाचार्य्य के विनाश करने ही के लिये जन्मे हैं सत्यवादी व जितेन्द्रिय हैं २४ ऐसे धृष्टद्युम्न को हम भीष्म के बाण सहने के लिये मानते हैं क्योंकि जो बाण वज्र के तुल्य स्पर्श करने में कठोर हैं मानो ज्वालामुख से निकलते हुए महा विषधर सर्प हैं २५ वेग में यमदूतों के ही समान शीघ्र चलते भस्म करने में प्रचण्ड अग्नि ही के समान हैं जिनको संग्राम में परशुरामजी भी नहीं सह सके जिनका शब्द वज्र के शब्द से भी दारुण है २६ इससे हे राजन्! हमारी बुद्धि में तो आता है कि धृष्टद्युम्न को छोड़ दूसरा पुरुष कोई भी ऐसा नहीं जो समर में महाव्रतधारी भीष्मजी को सह सके २७ इससे यही सेनापति किये जायँ क्योंकि ये बड़ी जल्दी के साथ हाथ चलाते हैं व चित्र विचित्र युद्ध करते हैं इनका कवच भी सब शस्त्रास्त्रों से अभेद्य हैं व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

यूथप हाथी के समान श्रीमान् हैं २८ भीमसेनजी बोले कि हे राजन्! सिद्ध ऋषि लोग जिसको कहते हैं कि भीष्मजी के वध ही करने के लिये उत्पन्न हुए हैं ऐसे शिखण्डीजी जो महाराज द्रुपदजी के पुत्र हैं २९ संग्राम में अस्त्र प्रक्षेप करते हुए जिनका रूप सब पुरुष देखेंगे जैसे महात्मा परशुरामजी का देखते हैं ३० हे राजन्! हम उस पुरुष को नहीं देखते जो संग्राम में रथ पर बैठे हुए शिखण्डीजी को शस्त्र से विदारण कर सकै ३१ द्वन्द्व युद्ध में शिखण्डी वीर को छोड़ ऐसा कोई पुरुषसिंह नहीं जो महाव्रत भीष्मजी को मार सकै इससे यही शिखण्डीजी हमारे सेनापति हों ३२ यह सुन युधिष्ठिरजी बोले कि, धर्म्मात्मा केशव भगवान् सब जगत् का सार असार बल अबल जानते हैं इससे इन लोगों का भी बलाबल जानते ही हैं जिनको कृष्ण भगवान् कहैं वह हमारा सेनापति हो चाहे वह अस्त्रविद्या अच्छी तरह जानता हो व न जानता हो चाहे बाल हो व युवा व वृद्ध ३३ । ३४ क्योंकि यही हम लोगों की विजय के मूल हैं और यही पराजय के भी मूल हैं यहां यही सबों के प्राण, राज्य, भाव, अभाव, सुख, दुःख सब कुछ हैं ३५ यही सबके धाता विधाता व सिद्धिरूप प्रतिष्ठित हैं इससे जिसको कृष्ण भगवान् कहें वही हमारी सेना का पति हो ३६ इससे कहनेवालों में श्रेष्ठ कृष्णचन्द्रजी बोले अब रात्रि हो गई है जिस को चाहें सेनापति बनावें जिसमें इनके वशवर्त्ती हम लोग ३७ रात्रि बीतने पर संग्रामभूमि को चलें सब अभी से अपने २ शस्त्रास्त्र सँभारें व मङ्गलादि करें ३८ वैशम्पायनजी बोले कि धीमान् तिन धर्म्मराज जी के ऐसे वचन सुन अर्ज्जुनजी की ओर देख श्रीकृष्णचन्द्रजी बोले कि ३९ हे महाराज! जिनको आप लोगों ने कहा है हम भी उन्हीं विक्रान्त योधा वीरों को आपकी सेना के पति होना चाहते हैं ४० ये सब लोग तुम्हारे शत्रुओं को वाधित करने में समर्थ हैं जो ये लोग महारण में परें तो मनुष्य की क्या गणना इन्द्र को भी भय उत्पन्न

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करा दें ४१ फिर मनुष्यों में भी इन पापी लोभी धृतराष्ट्र के पुत्रादिकों की कौन गणना है वे तो अपने पाप ही से मरे बैठे हैं हमने भी आप लोगों के प्रिय के लिये बड़ा भारी यत्न किया जिसमें शान्त होजाय युद्ध न हो अब हम धर्म से उऋण होगये जिसमें कहनेवाले हमको न कह सकें कि कृष्ण ने भी नहीं रोंका सब लड़मरे ४२ । ४३ देखो मूर्ख अनारी दुर्य्योधन ऐसा आतुर है कि अपनी सेना में व तुम्हारी सेना में सबसे अधिक योधा अपने को मानता है ४४ इससे अब सेना तैयार हो हमारे मत से सब धृतराष्ट्र के पक्षी वध ही करने के योग्य हैं अकेले अर्जुन ही को देख कोई दुर्य्योधनादि समर में खड़े न हो सकेंगे ४५ फिर जब भीमसेन क्रोधकर समर में खड़े होजायँगे तो कौन उधर का सामने खड़ा होगा फिर यमराज के समान महान् नकुल सहदेव फिर सात्यकी और असहनशील धृष्टद्युम्न जब खड़े होंगे तो क्या बात है ४६ फिर अभिमन्यु व सब पांच द्रौपदीजी के पुत्र, विराट व राजा द्रुपद इनके विशेष और भी अक्षौहिणियों के पति जो बड़े भयङ्कर विक्रम राजा लोग हैं ४७ प्रयोजन कि हमारी सब सेना जितनी है सब चुनी हुई सारवती है इससे दुर्य्योधनादिकों की सेना को मार ही डालेगी इसमें कुछ भी सन्देह नहीं ४८ परन्तु हे शत्रुसूदन ! हम भी धृष्टद्युम्न ही को सेनापति बनाना अच्छा मानते हैं ४९ वैशम्पायनजी बोले कि जब श्रीकृष्णचन्द्रजी ने ऐसा कहा तो सब राजा लोग बड़े प्रसन्न हुए व हर्षयुक्त उन लोगों का बड़ा भारी नाद हुआ ५० और सब लोग युद्ध करने के लिये तैयार होने लगे लोग इधर उधर दौर दौर अपनी अपनी युद्ध की सामग्री इकट्ठी करने लगे घोड़े हाथी सब ठौर ठौर हिनहिनाने चिग्घार मारने लगे रथों का शब्द सब ओर से होने लगा ५१ शङ्ख नगाड़े आदि सब ओर से बाजने लगे जिनका बड़ा रणसंकुल शब्द हुआ वह सेना का समागम उफलाये हुए शब्दायमान समुद्र के साथ

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

समागम होने के समान हुआ ५२ जोकि रथ पैदर हाथियों के इधर उधर चलने से बड़ा भारी लहरियों से संयुक्त था व इधर उधर दौड़ते हुए कवच बखतरादि बांधते हुए वीरों से छोटी लहरों से संयुक्त था ५३ इस प्रकार तैयार हो चले हुए पाण्डवों की सेना श्रावण भादों की गङ्गाजी के समान पूर्ण हो बड़े वेग से चली ५४ उसमें आगे आगे भीमसेन व नकुल सहदेव चले फिर अभिमन्यु व द्रौपदीजी के सब पुत्र फिर महारथ धृष्टद्युम्न व पांचाल देश के प्रभद्रक नाम राजकुमार यह सब भीमसेनादि की सेना बड़े धूमधाम से चली ५५ उस समय मारे हर्ष के चले जाते वीरों का शब्द पूर्णमासी के समुद्र ही का सा हुआ जानों स्वर्ग ही तक पहुँच गया था ५६ सब योधा प्रहृष्टमन व सब कवचादि धारण किये शत्रु की सेना के नाश करने में उद्यत इन सब वीरों के बीच में महाराज कुन्तीजी के पुत्र युधिष्ठिरजी चले ५७ सेना के साथ ही छकड़ों पर लदी हुई बाजार की सब सामग्री वेश्याओं के तम्बू कनात बहलों छकड़ों पर लदे, सब प्रकार के वाहन, सवारी ले चलनेवाले अलग, भार लेजानेवाले अलग, खजाना लदा हुआ अलग, गोला आदि चलाने के यन्त्र नाल आदि, घाव आदि सीनेवाले वैद्यलोग सहस्रों अलग ५८ जो सेना लटी थकी बीमार दुर्बल थी व अन्य कहार नापितादि बहुत से सेवक इन सबों को स्थान ही पर रहने दिया ५९ उपप्लव्य स्थान में जहां रहते थे जो विराट नगर के समीप है सब दास दासियों समेत सत्यवादिनी द्रौपदीजी रह गईं ६० यहां स्त्री धनादि की रक्षा अच्छे प्रकार कराय वहां भी कुछ सेना दूर रक्षा के लिये नियुक्त कर बड़ीभारी दलबादल सेना ले पाण्डव लोग चले ६१ चलने के समय भी ब्राह्मणों को बहुत सा धन, सोना, चांदी, धेनु आदि दे व उनसे आशीर्वाद ले बहुतों को सङ्ग भी ले लोगों से मार्ग में स्तुति पाते हुए मणियों से भूषित रथों पर चढ़ सब पाण्डवादि वीर चले ६२ केकय देश के राजा पांच भाई द्रुपदजी के पुत्र धृष्टद्युम्न

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

काश्यभूपति के पुत्र श्रेणिमान, वसुदान व अपराजित शिखण्डी ६३ ये सब हृष्ट सन्तुष्ट कवच बखतर धारण किये अस्त्र शस्त्र लिये वस्त्र भूषणादि धारण किये राजा युधिष्ठिरजी को चारों ओर से घेरे बीच में किये चले ६४ व पीछे की आधी सेना में राजा विराट द्रुपद के अन्य पुत्र सौमदत्ति, सुशर्मा, कुन्तिभोज व धृष्टद्युम्न के सब पुत्र चले ॥ ६५ ॥

दो० रथ चालीस सहस्र हय, लक्षद्वय अति वेगि।
बीसलक्ष पैदर करी, साठ सहस न अनेगि ॥ १ । ६६ ॥
अनाधृष्टि सात्यकि बहुरि, धृष्टकेतु चेकितान।
वासुदेव अर्जुन हिये, घेरि चले बलवान ॥ २ । ६७ ॥
रक्षित सैन्य समेत अरि, मारण माहिं प्रवीन।
कुरुक्षेत्र पहुँचे सकल, पाण्डव वीर अदीन ॥ ३ । ६८ ॥
सकल पहुँचि कुरुखेत महँ, शङ्ख बजाये जाय।
वासुदेव अर्जुन उभय, शङ्खनाद अलगाय ॥ ४ । ६९ ॥
पाञ्चजन्यध्वनिसुनिसकल, कौरव राजसमाज।
रोमाञ्चित भे वज्र सम, जासु शब्द अति बाज ॥ ५ । ७० ॥
दुन्दुभि दर रव युत समर, वीर नाद गम्भीर।
अन्तरिक्ष सागर मही, पूरित कियो प्रकीर ॥ ६ । ७१ ॥

इति श्रीमन्महाभारतेउद्योगपर्वणिकुरुक्षेत्रप्रवेशोनामैकपञ्चाशदधिकशततमोऽध्यायः १५१

एकसौबावन का अध्याय।

दो० इकसै बावनवें महँ, जिमि पाण्डव निज सैन्य।
कुरुक्षेत्र महँ बास रचि, थाप्यो तजि सब दैन्य ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि तिसके पीछे राजा युधिष्ठिरजी ने कुरुक्षेत्र में जहां सम चीकनी भूमि थी व घास भूसा ईंधन जल आदि निकट मिल सक्ता था वहां अपनी सेना टिकाई १ व जहां श्मशानभूमि, देवताओं के स्थान, महर्षियों के आश्रम व तीर्थस्थान थे उन स्थानों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को छोड़ दिया वहां नहीं टिकाया २ जहां की मिट्टी मीठी थी ऊषर भूमि न थी पवित्र व पुण्यस्थान था वहां उन महामति युधिष्ठिरजी ने सेना निवास स्थान बनवाया ३ तिसके पीछे जब प्रथम सेना उतरी घोड़े हाथी आदि वाहन सुस्ता लिये तो फिर उठकर सैकरों हज़ारों राजाओं के सङ्ग सब सुपास के स्थान देखने लगे ४ बहुत ठिकाने प्रथम से आय २ कुछ २ दुर्य्योधन की सेना पर चुकी थीं उसको मार पीट भगाय अर्ज्जुन व कृष्णचन्द्रजी जहां तक सेना की छावनी बनानी अङ्गीकार थी रथ पर चढ़ घूम आये ५ धृष्टद्युम्न सात्यकी व युयुधानादिकों ने अपने बूते सब सेना निवास की भूमि माप डारी कि यहां से यहां तक घोड़े हाथी आदि रहैं ६ यह सेना निवास कुरुक्षेत्र में हिरण्यवती नदी के तीर पै बनाया गया जिसमें सुन्दर घाट बने थे कहीं दलदल का नाम न था जल बड़ा स्वच्छ बहता था कांकर सिटकी कीचड़ का नाम ही नहीं सुनाई देता था ७ सेना निवास की चारों ओर केशवजी ने बड़ा भारी पनियासोते खावां खुदवाया जिसमें रक्षा रहै उसी के बीच में सब सैन्य टिकाई गई ८ जिस प्रकार की विधि पाण्डवों के यहां सेनानिवेश की थी व जैसी और सब राजाओं के यहां थी उसी रीति से केशवजी ने सेनानिवेश कराया ९ सब सेनानिवेशों के किनारे २ बहुत बड़े १ काठों के ढेर लगा दिये गये जिन के मारे फाटक की ओर बिना गये दूसरे शिबिर का मनुष्य भीतर न जा सके सबों में जितने खाने पीने आदि के पदार्थ आवश्यक थे उनसे सहस्र २ गुण अधिक स्थापित करा दिये १० इस प्रकार बड़े खावां के भीतर ही सब राजाओं के शिबिर सब वस्तुओं से भरे पुरे अलग २ बनवा दिये जानों अलग २ विमानों के ही समान दिखाई देते थे ११ व क्यों न ऐसी शीघ्रता के साथ सेनानिवेश बनें क्योंकि सैकरों हज़ारों राज कारीगर बनानेवाले थे जिनकी मजूरी पहिले ही चुका दी गई थी व सब सामग्री उनके पास विद्यमान थी इसी प्रकार

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जर्राह वैद्य भी बहुत से थे जो प्रत्येक शिबिर के लिये अलग २ नियुक्त थे १२ प्रत्यञ्चा, धनुष, कवच, शस्त्र, मिठाई, घी, राल आदि वस्तुओं के ढेर तो पर्वताकार लगाये गये थे १३ राजा युधिष्ठिरजी ने बहुत २ जल बहुत २ घास भूसा आदि पदार्थ प्रत्येक शिबिर में धरा दिया १४ महायन्त्र, बड़े २ बाण, तोमर, परश्वध, धन्वा, कवच, ऋष्टि, तरकस आदि के ढेरके ढेर लगे थे १५ हाथी ऐसे कि जिनके ऊपर ऐसी कटीली झूलें पड़ी थीं जिनके स्पर्शमात्र से दूसरे गजों के प्राणही जाते रहें क्योंकि उनका नीचे का भाग तो नर्म वस्त्रों से बनाया गया था पर ऊपरी भाग लोहे के कांटों से मढ़ा हुआ था बहुत से हाथी ऐसे थे कि पर्वताकार दिखाई देते थे ॥ १६ ॥

दो० तहँ आये पाण्डवन कहँ, जानि तिन्होंके मित्र।
बल वाहन युत तहँ चले, आये चित्र पवित्र ॥ १ । १७॥
चरित ब्रह्मचारी सकल, मखकारी बड़दानि।
पाण्डुतनय जयहित महिप, आय गये गुणखानि ॥ २ । १८॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्विपञ्चाशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १५२ ॥

एकसौतिरपन का अध्याय।

दो० इकसै तिरपनवें महैं, कौरव राज विचार।
जिमिभो युद्धहि जानि हित, कहब सोय उपचार ॥ १ ॥

इतनी कथा सुन जनमेजयजी ने वैशम्पायनजी से पूछा कि राजा दुर्य्योधन ने युद्ध करने की इच्छा से वासुदेवजी से पालित, पुत्र सहित विराट व द्रुपदराज समेत केकयराज वृष्णिवंशियों सहित व और भी बहुत से राजाओं के साथ राजा युधिष्ठिरजी को सेना सहित कुरुक्षेत्र में आये व वसुओं से सेवित इन्द्र के समान सेवित सुन कौन कार्य किया ? १ । २ हे तपोधन ! यह सब हमको विस्तारपूर्वक सुनने की इच्छा है उस बड़े भारी युद्ध में जो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कुरुजाङ्गल देश में हुआ हो हमसे कहो ४ क्योंकि पाण्डव, वासुदेव, राजा विराट, द्रुपद, धृष्टद्युम्न, धृष्टकेतु, शिखण्डी, युधामन्यु ये सब बड़े दुरासद थे और समर में जो इनके सामने इन्द्रादि देव भी आयजाते तो उनको भी व्यथित कर देते ५ । ६ हे तपोधन ! कौरवों व पाण्डवों का जो जो विचेष्टित हुआ हो वह सब हम विस्तारपूर्वक सुना चाहते हैं ७ वैशम्पायनजी बोले कि जब कृष्णचन्द्रजी हस्तिनापुर से चले गये तो राजा दुर्य्योधन कर्ण दुश्शासन व शकुनी से यह बोला कि ८ कृष्णचन्द्र विना कार्य ही किये पाण्डवों के समीप को यहां से चले गये इससे वे इन कौरवों को निश्चय है कि भस्म करेंगे ६ क्योंकि वासुदेव को इष्ट है कि पाण्डवों का हमारा विग्रह हो भीमसेन व अर्जुन ये दोनों वासुदेव ही के मत पर स्थित हैं १० व युधिष्ठिर बनाय भीम-सेन ही के वशीभूत रहते हैं और हमने जानों पूर्व समय में भाइयों समेत उनका निरादर भी बहुत किया है ११ इसी से विराट व द्रुपद भी हमारे साथ वैर मानते हैं वे दोनों सेनापति हैं व वासुदेव के वशीभूत हैं १२ इससे तुमुल लोमहर्षण बड़ाभारी यह विग्रह होनेवाला है इस से सब संग्राम की सामग्री निरालस होकर करो १३ हे राजा लोगो ! जाय जाय कुरुक्षेत्र में अपने अपने सैन्य निवास स्थान बनाओ क्योंकि जितने में हम लोगों की सेना टिक सकेगी उतना अवकाश शत्रु लोग बड़े कष्ट से देंगे १४ जहां सैकड़ों सहस्रों जलकाठ निकट हों वहां जाय शिबिर बनाओ मार्ग ऐसे बनावो जिन्हें कोई न रोंक सके, न तोड़ सके और पुष्ट ऊँचे बनाये जायँ १५ सब शिबिरों में विविध प्रकार के आयुध पताका ध्वजादि स्थापित किये जायँ व नगर से बाहर सब शिबिरों के मार्ग्ग बराबर किये जायँ खाला ऊँची कहीं न रहे १६ प्रातःकाल होते ही यात्रा है यह आज ही पुकार दिया जावे कि विलम्ब न हो उन लोगों ने अङ्गीकार कर प्रातःकाल होते ही वैसा ही किया १७ हर्षित हो राजाओं के निवास के लिये पुकार दिया उस राजाज्ञा को

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सुन बड़े बड़े मोल के आसनों पर से उठ खड़े हुए क्योंकि उस बात के असहनशील थे धीरे धीरे अपने अपने परिघाकार बाहु सुहराने लगे १८। १६ जिन बाहुओं में चन्दन लगा था व बहूटे बँधे थे कमलाकार हाथों से फिर अपनी अपनी पाग सुधारने बांधने लगे अँगोछा पटुकादि दूसरे वस्त्र व भूषण सब प्रकार के लेने लगे २० रथ हांकने में जो लोग चतुर थे वे रथ तैयार करने लगे घोड़ों के विषय में चतुर घोड़ों की व हाथियों की शिक्षामें चतुर लोग हाथियों को सजाय सजाय तैयार करने लगे २१ फिर सब लोगों ने चित्र विचित्र सुवर्ण के कवच बहुत से धारण किये व विविध प्रकार के शस्त्रास्त्र इकट्ठे किये ॥ २२ ॥

दो० पदचर नर शस्त्रास्त्र सब, हाटक खचित विचित्र।
बहुप्रकार निज अङ्ग महँ, धारण कीन सचित्र ॥ १ । २३ ॥
ज्यहि उत्सव सों हृष्ट नर, युत सब नगर अनूप।
भयहु समाकुल भीरयुत, सब विधि रण अनुरूप ॥ २ । २४ ॥
जन समूह सलिलौघ युत, रथ हय गय जहँ मीन।
दर दुन्दुभि निर्घोष युत, कोष रत्न परवीन ॥ ३ । २५ ॥
चित्र विभूषण ऊर्मि जहँ, निर्मल शस्त्र सुफेन।
धवरहरन श्रेणी सनग, आपण हृद मुददेन ॥ ४ । २६ ॥
योध शशाङ्कोदय बढ़ो, कौरव जलधि अपार।
तहँ दिखात नृपजिमि विधू, दय सों सागर धार ॥ ५ । २७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणित्रिपञ्चाशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १५३ ॥

एकसौचौवन का अध्याय।

दो० इकसै चौवनवें महँ, पुनि हरि नृप सों भाख।
कौरव मत ज्यहि सुनि नृपति, मन महँ रणहित माख ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि राजायुधिष्ठिरजी ने वासुदेवजी के उस वचन का स्मरण कर फिर पूछा कि मन्द दुर्य्योधन ने यह कैसे कहा १

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हे अच्युत ! इस समय में अब हमको क्या करना उचित है व हम लोग कैसे विद्यमान रहें जिससे अपने धर्म से न च्युत हों २ हे वासुदेव ! आप दुर्य्योधन, कर्ण, शकुनी का मत जानते हो व भाइयों सहित हमारा भी जानते हो ३ आपने विदुर भीष्मपितामह का भी वाक्य सुना व कुन्तीजी के वचन भी अच्छी बुद्धिमत्ता से सुनके विचारा ४ अब इन सब वचनों का अतिक्रमण कर व फिर फिर विचार कर जो हम लोगों को विना विचारे करना हो वह कहो ५ कृष्णचन्द्रजी धर्म अर्थ सहित युधिष्ठिरजी का ऐसा वचन सुन मेघ नगाड़े के समान गर्जते हुए बोले ६ कि हमने धर्म अर्थ सहित व हित जो वचन कहा कृतघ्नी दुष्ट दुर्य्योधन में न टिका ७ वह दुर्बुद्धि न तो भीष्म ही का वचन सुनै न विदुर ही का व हमारे कहने को तो कुछ समझता ही नहीं सब का उल्लङ्घन ही करता है ८ न तो वह धर्म्म की इच्छा करता न यश की केवल दुष्टात्मा कर्ण के आश्रित हो सबको पराजित ही मानता है ९ दुरात्मा पाप निश्चय दुर्य्योधन ने हमको बँधुआ करना चाहा था परन्तु उस दुष्ट का यह काम सिद्ध नहीं हुआ १० भीष्म व द्रोण कोई भी ठीक २ उचित वचन नहीं कहते विदुरजी को छोड़ सब उसी दुष्ट दुर्य्योधन ही के अनुगामी हैं ११ सुबल का पुत्र शकुनी कर्ण दुश्शासन सब ये मूढ़ अमूढ़ आपके विषय में अयोग्य ही वचन कहते हैं १२ दुर्य्योधन ने तुम्हारे विषय में जो २ कहा उसके कहने से क्या है संक्षेप से यह बात कही जाती है कि वह दुष्टात्मा तुम्हारे विषय में उचित बर्त्ताव नहीं बर्त्तता १३ ये राजा लोग जो तुम्हारे यहां सैनिक हैं इनमें न पाप है न अकल्याण परन्तु उस दुष्ट में पाप अकल्याण सब टिके हैं १४ हम तो राज्य का परित्याग करके कभी भी कौरवों के साथ मेल नहीं चाहते व वह राज्य देना चाहता ही नहीं तो अब युद्ध तो करना ही परा यह कहां बच सक्ता है १५ वैशम्पायनजी बोले कि, सब राजा लोग कृष्णचन्द्रजी के वचन सुन कुछ न

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बोले राजा युधिष्ठिरजी के मुख की ओर देखने लगे १६ तब महाराज युधिष्ठिरजी ने सब राजाओं का अभिप्राय जाना कि ये सब लड़ने पर उद्यत हैं इससे आज्ञा दी कि अच्छा भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव के सङ्ग आप लोग भी युद्ध करने का उद्योग करें १७ जब युद्धोद्योग करने की आज्ञा युधिष्ठिरजी ने दी कि पाण्डवों की सेना में सब किलकिला शब्द हुआ व सब सैनिक लोग हर्षित हुए १८ परन्तु राजा युधिष्ठिरजी अवध्य भीष्मपितामह द्रोणाचार्य्यादिकों का वध देख ऊधी सांसें ले भीमसेन व अर्ज्जुन से यह बोले १६ कि जिस के न होने के अर्थ वनवास लिया गया जिसमें हमने महादुःख पाया वह कुलक्षय का अनर्थ जबरदस्ती हम लोगों को प्राप्त हुआ २० इसी कुलक्षय के निवृत्त होने के लिये हमने भीमसेन को जुआ खेलने के समय में रोंका नहीं तो ये उसी समय सबको मार डालते पर वह हमारा कार्य्य व्यर्थ हुआ क्योंकि उस यत्न के करने पर भी हम लोगों को फिर वही युद्ध करना पड़ा जिसमें कुल का नाश होगा २१ अब हम कहते हैं कि अवध्य श्रेष्ठ भीष्म द्रोणादिकोंके सङ्ग कैसे युद्ध होगा व गुरुओं वृद्धोंको मार हम लोगोंकी विजय कैसे होगी २२ शत्रुसूदन अर्ज्जुन युधिष्ठिरजी का वचन सुन कृष्णचन्द्रजी ने जो कहा था वह वचन सुनाया ॥ २३ ॥

दो० वासुदेव कह विदुर अरु, पृथा वचन महराज।
सो तुम सुन्यहु विचार करि, सब प्रकार युत साज ॥ १ । २४ ॥
पृथा विदुर भाष्यहु नहीं, कुछ अधर्म मत मोर।
बिन रण किये निवृत्तहू, तब न योग्य यहि ओर ॥ २ । २५ ॥
सुनि किरीटिके वचन हरि, बोल्यहु कृपानिधान।
जिमि कह अर्ज्जुन है सही, जानहु पार्त्थ महान ॥ ३ । २६ ॥
यह सुनि सब पाण्डव कटक, रणहित करि सङ्कल्प।
सुखयुत निशा बिताव तहँ, तजि निज चित्तविकल्प ॥ ४ । २७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुःपञ्चाशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १५४ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौपचपन का अध्याय।

दो० इकसै पचपनवें महँ, कौरव सैन्य प्रयाण।
जिमिभो सो वर्णन करत, मानहिं लोग प्रमाण ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि, जब रात्रि बीत गई तो राजा दुर्य्योधन ने अपनी ग्यारह अक्षौहिणी सेना का विभाग कर दिया १ मनुष्य, हाथी, रथ, घोड़ों का विभाग ऐसा किया कि इतने आगे चलें इतने मध्य में इतने पीछे २ यह सब सैन्यों में किया २ जितने रथ उनकी सेनाओं में थे, सब में मजबूती के लिये नीचे दो २ लकड़ियां और बँधी थीं सब में रथ के बाहर बाण धरने को एक २ बड़ा भारी तरकस बँधा था गुम्मज सबों में था भाला सब पर धरे थे व्याघ्रादि चर्म्म से वहार सब में वढ़ाया गया था घोड़े हाथी जोतने के जुआ सब में लगे थे लोहे के दण्ड सब पर धरे थे काष्ठ के भी दण्ड सब पर थे ध्वजा, पताका, शरासन, तोमर, फांशी आदि विचित्र रस्सियों से बँधी सब पर धरी थीं ३ । ४ ऐसी करें सब पर धरी थीं जिनको फेंक शत्रु के बार लपेट उसे अपनी ओर खींच लें तेल, गुड़, बालू धिकी हुई सब रथों पर थीं जो शत्रुओं के ऊपर फेंक दी जाती थीं सर्पों से भरे हुए घड़े सब रथ पर धरे थे जो शत्रुओं के सामने खोल दिये जाते थे रालयुक्त धूलि सब रथों पर धरी थी जिससे अग्नि अकस्मात् उत्पन्न हो आता है ५ सब रथों पर घण्टा सहित ढालें धरी थीं लोहे के शस्त्र, खड्ग, छुरी, कटार, भाला आदि से युक्त गुड़ जल तप्त किया हुआ सब पर धरा था पत्थर धनवासी आदिपर फेंकने के लिये धरे थे शूल सहित धनवासी जिन्हें गोफना भी कहते हैं वे भी धरी थीं गर्म्म किया हुआ मधु यह भी शत्रुओं के ऊपर फेंका जाता है मुद्गर भी सब पर धरे थे ६ कँटीले बाणों के दण्ड हल विषयुक्त तोमर, गर्म गुड़ादि फेंकने के लिये शूप धरे थे इन सब पदार्थों के धरने की पिटारियां भी धरी थीं हँसिया अंकुश व दूसरे प्रकार के तोमर जिनमें

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

टेढ़े काँटे लगे होते पेट के भीतर जायँ तो आँतें भी बाहर खींचलावें वे भी धरे थे ७ कील कवच अर्गलादि धरे गुप्तियां बहुत प्रकार की धरी थीं वृक्षादि काटने की कुल्हाड़ी भी धरी थीं व्याघ्र व चित्ता के चमड़े से सब रथ मढ़े थे ८ दुधाराकत्ती भृङ्गी प्रासादि विविध आयुध फरसा फावड़ा तेल से भीगे वस्त्र ऐसे वस्त्रों को जलाय घावों पर राख डालने के लिये रखते हैं पुराना घी घाव पर लगाने के लिये ९ व सोने की झालर लगी व नाना प्रकार के मणियों से विभूषित ऐसे चित्र विचित्र रथ जलते हुए अग्नि के समान प्रकाशित थे १० इसी प्रकार सब शूरवीर कवच बखतर आदि धारण किये शस्त्रों के चलाने में निश्चय किये सारथी सब रथों पर कुलीन लोग व जो सब प्रकार के घोड़ों को पहिचानते थे वही थे ११ सबके सब अशुभ मिटाने के लिये यन्त्र बांधे थे काछें दोनों बाँधे थे ध्वजा पताकादि सब अपने अपने रथों पर बाँधे थे सब भूषणादि भी धारण किये ढाल तलवार पटा आदि सब बांधे थे १२ चार चार घोड़े सब रथों में जुते थे व सब उत्तम देशों के भाला कत्ती धनुष बाण तो एक एक योधा के पास सौ सौ से अधिक थे १३ धुरी के घोड़ों के हांकनेवाला और अगाड़ीवालों को हांकने-वाला और दोनों पहियों के पास दो और इस प्रकार सब रथों पर चार चार हांकनेवाले थे १४ जैसे नगर सब ओर से रक्षित रहते वैसे ही सहस्रों रथ रक्षित होने से शत्रुओं को बड़े दुःख से ढिठाई करने के योग्य थे सुवर्णादि की माला सबमें टँगी थीं १५ जैसे रथों की पेटियां बँधी थीं वैसेही हाथियों की भी बँधीं थीं सात पुरुष रत्नयुक्त पर्वतों के समान शोभित होते थे १६ दो अंकुशधारी दो उत्तम धनुर्द्धर दो अच्छे खड्ग लिये व एक शक्ति पिनाक लिये १७ मतवाले हाथियों व सब कवच आयुधादिकों से कुरुराज की सेना अतिभूषित हुई थी १८ व सवार सब कवच बखतर आदि धारण किये थे झण्डी अपने अपने भाला पर सब लगाये थे ऐसे सवारों के लाखों घोड़े थे १९ ऐसे सुशिक्षित

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

घोड़े थे कि आगे के दो पैर उठाय हिनहिनाते हुए युद्ध में कोई न चलते थे क्योंकि ऐसे चलने में सवार से युद्ध नहीं करते बनता हयकल आदि भूषण बहुत प्रकार के सब घोड़े पहिने थे जीन तारकसी के सब पर खिंचे थे ऐसे घोड़े हजारों थे पर सब सवारों के अधीन कट्टर कोई नहीं २० नाना प्रकार के रूपवाले व नाना प्रकार के कवच शस्त्रधारी सोने की माला पहिरे सब पैदर लोग भी थे २१ एक रथ के सङ्ग दश हाथी सौ घोड़े व हजार पैदर मनुष्य अस्त्र शस्त्र धारण किये ये मनुष्यादि सब रथ की रक्षा के लिये रहते न कि शोभाके लिये २२ व कुछ रथों के सङ्ग एक एक रथ के साथ पचास पचास हाथी व ५००० घोड़े ३५००० पैदर थे ये सब एक रथ की रक्षा के लिये रहते ॥ २३ ॥

दो० पँचशत गज इतनेहि रथ, पाँचससै पदचारि ।
पन्द्रहसै बाजीन की, सेना कहत विचारि ॥ १ ॥
दश सेना पृतना दशहि, पृतना वाहिनि होय ।
संख्या साधारण यही, जानि लेहिं सबकोय ॥ २ । २४ ॥
सेना पृतना वाहिनी, ध्वजिनी चमू बहोरि ।
अक्षौहिणी वरूथिनी, सब समान नहिं चोरि ॥ ३ । २५ ॥

इसी तरह दुर्योधन से रक्षित ग्यारह अक्षौहिणियां थीं २६ और पाण्डवों के सात ही अक्षौहिणी सेनाथी व कौरवों के जानों ग्यारह अक्षौहिणी बताय ही चुके २७ । पचपन मनुष्यों की पत्ति होती है व तीन पत्ति का सेनामुख इसी को गुल्म भी कहते हैं २८ तीन गुल्मों का गण होता है सो दुर्योधन की सेना में असंख्य गण थे जोकि लड़ने मरने मारनेपर उद्यत थे २९ राजा दुर्योधन ने इतनी भारी अपनी सेना में देख विचार छांट छांट सेनापति बनाये ३० ग्यारह अक्षौहिणियों के ग्यारह सेनापति अलग अलग बनाये ॥ ३१ ॥

दो० शल्य जयद्रथ द्रोण कृप, कृतवर्म्मा काम्बोज ।
अश्वत्थामा कर्णसू, दक्षिण वीर महौज ॥ १ । ३२ ।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

शकुनि भूरिश्रवबाह्लिकरु, महाबली सब वीर।
सेनापति चुनि गुनि किये, कौरवराज सुधीर ॥ २। ३३ ॥
प्रतिदिन पूजा सबनकी, बार बार करिभूप।
शुभ ढँगसों वार्त्ता करत, करन हेतु अनुरूप ॥ ३। ३४ ॥
तिमि अनुचर सब भूप के, नियत चित्त सब रीति।
सब नृप सैनिक तासु की, करत भलीविधि प्रीति ॥ ४। ३५ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चपञ्चाशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १५५ ॥

एकसौछप्पन का अध्याय।

दो० इकसै छप्पनवें महँ, कौरव सैन्य विभाग।
जिमि ह्वैगो कुरुक्षेत्र को, कहत सहित अनुराग ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि, इसके पीछे धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्य्योधन सब राजाओं सहित हाथ जोड़ भीष्मजी से बोले १ कि विना मुख्य सेनापति के बड़ी भारी भी सेना च्यूंटियों के दल के समान इधर उधर डोली २ फिरती है २ सेनापति एकही होना चाहिये क्योंकि बहुमत को कौन कहै दो जनों की भी बुद्धि कभी समान नहीं होती व जहां बहुत बलवान् इकट्ठे होते वहां एक दूसरे के बल शूरता की स्पर्द्धा करने लगते हैं ३ इस विषय में सुनते हैं कि हैहयवंश के अमित तेजस्वी राजा के ऊपर बड़े उद्दण्ड कुशवंश के पताका रूप बहुत से ब्राह्मण लोग चढ़ आये ४ उनके साथ बहुत से वैश्य व शूद्र भी चढ़ आये, इस प्रकार एक ओर तीन वर्ण के लोग हुए व एक ओर सब क्षत्रिय हुए ५ जब युद्ध हुआ तो बार २ तीनों वर्णों के लोग भगे यद्यपि क्षत्रिय थोड़े थे व उन तीनों वर्णों की सेना बड़ी थी पर क्षत्रिय जीते ६ तब उन ब्राह्मणों ने अपनी पराजय व क्षत्रियों की जय के विषय में क्षत्रियों से कारण पूछा उन्होंने धर्म्म के मारे यथातथ्य कह दिया ७ कि हम लोग तो रण में एकही बुद्धिमान् की बात सुनते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

रहे व आप लोग सब अलग २ अपनी २ बुद्धि के अनुकूल कार्य्य करते थे ८ यह सुन उन ब्राह्मणों ने एक न्याय जाननेवाले शूरवीर ब्राह्मण को सेनापति बनाय उसकी आज्ञा से सब कार्य्य कर सब क्षत्रियों को जीत लिया ६ ऐसे ही जो लोग कुशल शूर हित चाहने-वाले पापरहित किसी एक पुरुष को सेनापति करते हैं वे समर में शत्रुओं को जीत लेते हैं १० इससे नीतिशास्त्र जानने में आप शुक्रा-चार्य्य के समान व हमारे सदा हित चाहनेवाले हो व किसी के नाश करने योग्य नहीं क्योंकि धर्म्म में टिके हो इससे हमारे सेनापति हूजिये ११ जैसे तेजस्वियों में सूर्य्य, वृक्ष औषधियों में चन्द्रमा, यक्षों में कुबेर, देवताओं में इन्द्र १२ पर्व्वतों में सुमेरु, पक्षियों में गरुड़, देवताओं के कुमार, वसुओं के अग्नि १३ इसी प्रकार आप से हम लोग रक्षित होकर ऐसे हो जायँगे कि देवता लोग भी हमारा कुछ न कर सकेंगे जैसे इन्द्र से रक्षित देवों का कोई कुछ नहीं कर सक्का १४ जैसे देवताओं के आगे सेनापति हो स्कन्दजी चले थे वैसे ही हम लोगों के आगे आप चलें व हम लोग आप के पीछे २ चलें जैसे सांड़ के पीछे सब गाइयां चलती हैं १५ भीष्मजी बोले कि हे भारत! जैसा तुम कहते हो यह ऐसा ही है परन्तु जैसे हमारे आप लोग हैं वैसे ही पाण्डव लोग भी हैं १६ इससे हम को पाण्डवों का कल्याण भी देखना चाहिये परन्तु तुम से प्रतिज्ञा कर चुके हैं इससे तुम्हारे अर्थ युद्ध करेंगे १७ हम कुन्ती के पुत्र नरव्याघ्र अर्ज्जुन को छोड़ और किसी योधा को नहीं देखते जो हम से युद्ध करै १८ व वह महाबुद्धि यद्यपि अनेक दिव्यास्त्र जानता है पर प्रकट हो हमारे गौरव से हम से युद्ध न करेगा १६ हम में इतनी शक्ति है कि एक क्षण में असुर राक्षस देवगण सहित इस चराचर जगत् को नाश कर दें २० परन्तु हे राजन्! पाण्डु के पुत्रों को हम कभी न मार डालेंगे पर प्रतिदिन बाण चलाय दश हजार योधा उनकी सेना के मारते रहेंगे २१ जो वे भेंट होते ही

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होते हम को प्रथम न मार डालेंगे तो इस प्रकार हम उनको मार डालेंगे क्योंकि प्रतिदिन दश हजार योधा जब हम मारेंगे तो कहां तक योधा उनकी ओर आवेंगे २२ हम तुम्हारे सेनापति होंगे परन्तु एक बात की प्रतिज्ञा कर लेंगे उसे सुनो २३ चाहे पहले कर्ण युद्ध करें वा हम करें दोनों जने सङ्ग न करेंगे क्योंकि कर्ण हमेशा हम से युद्ध में स्पर्द्धा रखता है २४ कर्ण बोले कि हे राजन्! जब तक भीष्म जीते हैं तब तक हम युद्ध न करेंगे जब ये मारे जायँगे तो केवल अर्ज्जुन के सङ्ग हम लड़ेंगे २५ वैशम्पायनजी बोले कि इसके पीछे दुर्य्योधन ने बहुत दक्षिणा दे भीष्मजी को अपनी सब सेना का अधिप बनाया व जब सेनापतित्व पर भीष्म का अभिषेक हुआ तो वे बहुत शोभित हुए २६ व राजा की आज्ञा से बजानेवालों ने बहुत से नगारे शङ्ख आदि बाजे बजाये २७ विविध प्रकार के सिंहनाद भी हुए घोड़े सब जोर से हिनाहिना उठे बादर कहीं न था पर रुधिर की वर्षा होने लगी २८ वज्रपात हुआ पृथ्वी कँपने लगी हाथी अकस्मात् सब चिघड़ने लगे यहां तक कि सब योधों के मन मूर्च्छित हो गये २९ आकाश से अकस्मात् शब्द होने लगे व स्वर्ग से उल्कापात होने लगे सियारिनियां रोने लगीं इन बातों से लोगों को बड़ी भय हुई ३० जैसे ही भीष्म को राजा दुर्य्योधन ने सेनापति बनाया है कि वैसे ही ये सब उल्कापातादि अशुभ होने लगे ३१ शत्रु की सेना के पीड़ित करनेवाले भीष्मजी को सेनापति बनाय ब्राह्मणों को बुलाय बहुत दक्षिणा दिलाय स्वस्त्ययन बचवाय ब्राह्मणों का आशीर्वाद पाय भीष्म को आगेकर दुर्य्योधन बड़ी भारी सेना ले कुरुक्षेत्र को चले ॥ ३२। ३४ ॥

दो० कुरुक्षेत्र के करि विनय, कर्ण सहित कुरुराज।
शिविर मापने लागि सम, देशमाहिं अति भ्राज॥ १। ३५॥
मधुर भूमि ऊषर रहित, घास बूस इँधनौघ।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जहां हतो करि पुर सरिस, शिबिर रच्यो न अघौघ॥ २ । ३६॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षट्पञ्चाशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १५६ ॥

एकसौसत्तावन का अध्याय।

दो० इकसै सत्तावन महँ, पाण्डव सैन्य विभाग ।
जिमि भो सो वर्णन करब, करिकै अतिअनुराग ॥ १ ॥

इतनी कथा सुनकर जनमेजयजी बोले कि, महात्मा और शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ, भारतों के पितामह, सब राजाओं के पताका रूप, बुद्धि से बृहस्पति के समान, क्षमा से पृथ्वी के तुल्य, गम्भीरता में समुद्र के समान, स्थिरता में हिमवान् के समान, उदारता में ब्रह्मा के समान, तेज से सूर्य्य के समान, बाणवर्षा से शत्रुओं के नाश करने में इन्द्र के समान, भीष्मपितामह गङ्गाजी के पुत्र को बड़े भारी रणयज्ञ में बहुत दिनों के लिये दीक्षित सुन महाबाहु सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ महाराज युधिष्ठिरजी भीमसेन अर्जुन व श्रीकृष्णचन्द्रजी ने क्या कहा ? वह हमसे वर्णन करो १ । ५ वैशम्पायनजी बोले कि आपद्धर्म्म के अर्थ में कुशल, महाबुद्धि, बोलनेवालों में श्रेष्ठ महाराज युधिष्ठिरजी अपने सब भाइयों व कृष्णचन्द्रजी को इकट्ठे बैठाय सबों से समझाते हुए बोले कि तुम सब जने सैन्य तैयार करो व कवच बखतर आदि धारण किये उद्यत बैठे रहो क्योंकि भीष्मपितामहजी से तुम लोगों का युद्ध होगा, इससे प्रथम हमारी सातों सेनाओं के सेनापतियों को देखो ६ । ८ यह सुन कृष्णचन्द्रजी बोले कि हे राजन् ! इस समय जैसा आपको कहना चाहिये था वैसाही आपने कहा ९ यह बात हमको भी रुचती है इसके अनन्तर जो कर्त्तव्य हो कीजिये प्रथम तो आप अपनी सातों सेनाओं के सेनापति नियत कर दें १० वैशम्पायनजी बोले कि इसके पीछे महाराज युधिष्ठिरजी ने राजा द्रुपद को बुलाय व राजा विराट, सात्यकी, धृष्टद्युम्न, धृष्टकेतु, शिखण्डी व सहदेव को इन

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

युद्ध की अभिलाषा किये सातों राजाओं को सेनापति बनाय अभिषेक किया व सब सेनाओं के सेनापति धृष्टद्युम्न को बनाया इनमें द्रुपद जानों द्रुपददेश के राजा यज्ञसेन का नाम है व मत्स्यदेश के राजा का विराट वृष्णिवंशियों के एक राजा सात्यकी जी हैं धृष्टद्युम्न व शिखण्डी द्रुपदराजा के पुत्र धृष्टकेतु शिशुपाल के पुत्र सहदेव जरासन्ध के पुत्र हैं ११ । १३ इनमें धृष्टद्युम्न महारणधीर हैं जो प्रदीप्त अग्नि से द्रोणाचार्य्यजी के मारने के लिये उत्पन्न हुए हैं सो सब सेनापतियों के सेनापति तो धृष्टद्युम्न किये गये व इन सब महात्माओं के सेनापति अर्जुनजी किये गये व अर्जुन के भी आधिपति कृष्णचन्द्र भगवान् किये गये जो कि अर्जुन के प्रेरक व उनके घोड़ों का हांकना दो कार्य करते रहेंगे १४ । १५ ऐसे महाक्षयकारी युद्ध को बनाय सन्निकट आया जान पाण्डवों के यहां बलदेवजी आये उनके सङ्ग अक्रूर, गद, साम्ब, उद्धवादि बहुत से यदुवंशीय अन्धक वृष्णिवंशीय थे प्रद्युम्न, आहुक सुत व चारुदेष्ण आदि बहुत वृष्णिमुख्य लोगों से घेरे हुए थे मानो महाउत्कट व्याघ्रों से घिरे थे जैसे देवताओं से इन्द्र रक्षित रहते वैसे ही सब यदुवृष्णिवंशियों से बलदेवजी घिरे थे जोकि नीलरेशमी वस्त्र ओढ़े थे व डील में कैलास के शिखर के समान थे व सिंह के खेल के तुल्य जिनकी चाल थी व मारे मद के नेत्र अरुण हो रहे थे १६ । १९ तिनको देख राजायुधिष्ठिर व महाद्युति श्रीकृष्णचन्द्रजी भीमकर्मकारी भीमसेनजी अर्जुनजी व और भी जो राजा लोग वहां थे सबके सब उठ खड़े हुए व आये हुए बलभद्रजी की पूजा सबों ने की और राजा युधिष्ठिरजी ने उनका हाथ अपने हाथ से पकड़ लिया २० । २२ व कृष्णचन्द्रादि जितने थे सबों ने उनके प्रणाम किया राजा विराट व राजा द्रुपद ये दोनों बड़े वृद्ध थे इससे उनके बलदेवजी ने प्रणाम किया २३ व राजा युधिष्ठिरजी जिस आसन पर बैठे थे उसी पर बलभद्रजी को भी बैठाया फिर अन्य लोग भी अपने अपने आसन पर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बैठ गये जब बनाय सब बैठे तो बलदेवजी कृष्णचन्द्रजी की ओर देख सब युधिष्ठिरादिकों से बोले २४ कि यह महारौद्र दारुण पुरुषों की क्षय होगी सो इसको हम प्रारब्ध ही समझते हैं इससे इसे रोक नहीं सक्के २५ इससे जो युद्ध से निवृत्त आप सब सुहृदों को अरोग व अस्त्र शस्त्रों के घावों से रहित आनन्दित देखें तो धन्यभाग्य समझें सो आप लोगों को तो अच्छे ही देखेंगे इसमें सन्देह नहीं २६ पर यह जो सब क्षत्रियों की समाज इकट्ठी है सबको हम काल से पकी हुई समझते हैं क्योंकि इतना भारी युद्ध यह होगा कि मांस रुधिर की कीच मचेगी २७ इन कृष्णचन्द्र से हमने एकान्त में बार २ कहा कि सम्बन्धियों के विषय में समवृत्तिका बर्त्ताव करो २८ जैसे हम लोगों के पाण्डव लोग हैं वैसे ही राजा दुर्य्योधन भी हैं इससे दुर्य्योधन की भी सहायता करो व पाण्डवों की भी व दोनों की पूजा करो २९ परन्तु युधिष्ठिरजी तुम्हारे अर्थ कृष्णचन्द्र ने हमारा वचन नहीं किया केवल सब भाव से अर्ज्जुन ही की ओर देख इन्हीं के साथ हुए ३० इससे यह हमारी निश्चित मति है कि निस्सन्देह पाण्डवों की ही विजय होगी क्योंकि वासुदेव का इसी प्रकार विचार ही है ॥ ३१ ॥

दो० बिना लखे श्रीकृष्ण के, देख सकत नहिं लोक।
यासों हरि वाञ्छितहि के, अनुग हमहुँ गतशोक ॥ १।३२॥
गदायुद्ध पटु उभय मम, अहैं शिष्य न सँदेह।
दुर्य्योधन अर्ज्जुन महैं, तुल्य हमारो नेह ॥ २।३३॥
तासों सेवा तीर्थ की, करन सरस्वति तीर।
जात अहैं नहिं नशत कुरु, वंश लखें युत पीर ॥ ३।३४॥
इमि कहि है पाण्डवन सों, बिदा गये बलदेव।
करन तीर्थ हरिको बिदा, करि मन में धरिभेव ॥ ४।३५॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तपञ्चाशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १५७ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौ अट्ठावन का अध्याय।

दो० इकसै अट्ठावन महँ, जिमि पाण्डवन समीप।
आयहु रुक्मी वीर पुनि, लौटि गयहु कुल दीप॥ १॥

वैशम्पायनजी बोले कि, बलदेवजी के चले जाने पर महात्मा हिरण्यरोमा साक्षात् इन्द्रजी के सखा अति यशस्वी दक्षिणदेश के राजा महाराज भीष्मकजी के पुत्र जिनका रुक्मी नाम है वहां आये १। २ जो कि किम्पुरुषसिंह गन्धमादन पर्व्वत पर रहनेवाले हनुमान्जी के शिष्य थे व सत्य सङ्कल्प थे उन्हीं अपने गुरु से सम्पूर्ण धनुर्व्वेद पढ़ा था ३ व जिन्होंने माहेन्द्र नाम धनुष पाया जो कि गाण्डीव धनुष ही के समान है व शार्ङ्ग-धनुष के भी समान ही है ४ क्योंकि देवताओं के तीन ही धनुष दिव्य हैं एक वरुण देवता का गाण्डीव नाम धनुष, दूसरा माहेन्द्रनाम विजय धनु, तीसरा विष्णु देवता का शार्ङ्गनाम धनु जो दिव्य तेजोमय हैं ५ इस शत्रु की सेना के भय-दायक शार्ङ्गनाम धनुष को कृष्णचन्द्रजी धारण करते थे व खाण्डव वन में अर्ज्जुनजी ने अग्नि से गाण्डीव धनुष पाया ६ व रुक्मी ने वृक्ष से विजयरूप माहेन्द्र धनुष पाया और मौर व पाशों को तोड़ पराक्रम से मुर नाम दैत्य को मार नरक नाम भौमासुर को जीत अदिति के मणि कुण्डल छीन सोरह सहस्र एकसौ कन्या रत्न उसके यहां थे सबको कृष्णचन्द्र ने ग्रहण कर ७। ८ फिर शार्ङ्गधनुष भी वहीं पाया व मेघ के समान शब्द करनेवाला विजय नाम धनु माहेन्द्र प्रसिद्ध रुक्मी ने पाया ९ उसको बांधे जगत् भर को भयभीत ही सा कराता रुक्मी पाण्डवों के पास आया जोकि अपने बाहु के बल से दर्प्पित हो अगाड़ी कृष्णचन्द्रजी को भी नहीं सह सका १० जब कि वासुदेव धीमान्ने रुक्मिणीजीको हरा था इसने प्रतिज्ञा की थी कि विना कृष्णचन्द्र को मार डाले हम लौट कर इस शहर को न आवेंगे ११

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ऐसा कह सब शस्त्रधारियों में बड़े कृष्णचन्द्रजी के पीछे दौड़े सङ्ग में बड़ी भारी चतुरङ्गिणी सेना उसके साथ थी व दूर तक फैली थी १२ उसमें सब लोग चित्रविचित्र आयुध धारण किये थे इससे वह सेना गङ्गाजी की धारा के समान रुक्मी के पीछे २ चली परन्तु योगियों के ईश्वर परम पुरुष कृष्णचन्द्रजी को पाय १३ हार गये इससे ऐसे लज्जित हुए कि कुण्डिनपुर को फिर नहीं गये, जहां कृष्णचन्द्र से हारे थे १४ वहीं भोजकट नाम नगर बड़ा उत्तम बसाया उसमें हज़ारों घोड़े हाथी रथादि सहित सेना टिका दी १५ वह पुर पृथ्वी भर में भोजकटनाम से प्रसिद्ध है वह भोजराज रुक्मी बड़ी भारी सेना ले जो कि एक अक्षौहिणी थी पाण्डवों के यहां आया व कवच बखतर धनुष खड्ग धारण किये १६ । १७ सूर्य्यवत् प्रकाशित ध्वजसहित रथ पर चढ़ा पाण्डवों की बड़ी भारी सेना में आया पाण्डव लोग उसे पहिले से जानते ही थे इससे कृष्णचन्द्रजी का सम्बन्धी जान १८ महाराज युधिष्ठिरजी ने उठ बड़ा आगत स्वागत कर उसकी बड़ी पूजा की जब पाण्डुपुत्रों ने उसकी बड़ी पूजा स्तुति की तो १९ उस सब पूजादि को ग्रहण कर व सेनासहित विश्राम कर सभा के मध्य में बैठे कुन्ती जी के पुत्र अर्ज्जुनजी से बोला २० हे पाण्डव ! इस बड़े युद्ध में हम सहाय करने पर स्थित हैं जो तुम युद्ध करने से डरते होवो तो हम असह्य सहाय तुम्हारी करें २१ व सब तुम्हारे शत्रुओं से तुमको बचावें क्योंकि विक्रम में हमारे तुल्य कोई पुरुष यहां नहीं है जितना भाग हमको इस रण में दोगे उसको हम मार डालेंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है २२ चाहे द्रोणाचार्य्य कृपाचार्य्य व भीष्म कर्ण ये अलग २ हमसे लड़ें तो पराजित कर देंगे व सब राजा एकही सङ्ग आवें तो भी इन सबों समेत उनको पराजित कर डालेंगे २३ इस प्रकार समर में शत्रुओं को मार सब पृथ्वी तुम को दे देंगे यह बात युधिष्ठिरजी व कृष्णचन्द्रजी के सामने अर्ज्जुनजी से रुक्मी ने कही २४ व और

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भी जो बड़े २ महाराज उसमें थे वे भी इस बात को सुनते थे यह सुन वासुदेव भगवान् व युधिष्ठिरजी की ओर देख सभ्यता की रीति पर हँसकर अर्ज्जुनजी बोले कि कौरवों के कुल में उत्पन्न हो फिर महा प्रतापी पाण्डुजी के पुत्र हो व द्रोणाचार्य्य के शिष्य हो उसमें भी भगवान् कृष्णचन्द्रजी को सहायक पाय फिर गाण्डीव धनुष बांधे हम यह कैसे कहें कि हम भयभीत हैं २५। २७ इसके सिवाय जब घोष-यात्रा में महाबली गन्धर्व्वों से हम से युद्ध हुआ था तो हमारा कौन सखा सहायक हुआ था २८ फिर जब खाण्डववन में देवता दानव सब एक ओर थे और हम एक ओर थे तब हमारा कौन सहायक हुआ था २६ फिर जब निवातकवच और कालकेय दैत्यों से हमने युद्ध किया तब कौन हमारा सहायक हुआ ३० फिर विराट के नगर में भीष्म-पितामहादि सब कौरव एक ओर थे व हम अकेले एक ओर उस समर में हमारा कौन सहायक हुआ था ३१ फिर युद्ध के निमित्त रण में महादेवजी, इन्द्र, वरुण, यमराज, कुबेर, अग्नि, कृपाचार्य्य, द्रोणा-चार्य्य व बलभद्रजी की आराधना कर ३२ और तेजोमय बड़ा दृढ़ गाण्डीव दिव्य धनुष धारण कर अक्षयबाण संयुक्त और भी बहुत से अस्त्र शस्त्र से संयुक्त हो ३३ हम सरीखे पुरुष यश हरनेवाला ऐसा वचन कौन कहै कि हम रण करने से भीत हैं कौरवों की कौन गणना जो वज्र लेकर इन्द्र भी युद्ध करने को हमारे सामने आवें तो उनसे भी हम ऐसा न कहें कि हम डर गये हैं ३४ हे वीर! हम कुछ भी भयभीत नहीं हैं न हमको सहायक की आवश्यकता है इससे आप को जी चाहे चले जाइये व हमारी सेना से बाहर कहीं टिकिये ॥ ३५॥

दो० इमि सुनि रुक्मी सैन्य निज, लै दुर्य्योधन पास।
गयहु वहहुँ तिमि भाष्यहु, जिमि अर्ज्जुनहि प्रकास ॥ १।३६
दुर्य्योधनहू तिमि उतर, दीन सहाय न काम।
शूरमानि धृतराष्ट्र सुत, किमि त्याहि करै प्रणाम ॥ २।३७

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

यहिविधि त्यहि रण से द्वऊ, चले गये निरुपाय।
यक हलधर दूजो वही, रुक्मी मन पछितय ॥ ३।३८॥
तीर्थ करन बलदेव गे, रुक्मी गे निज गेह।
मन्त्रकरन हित पाण्डुसुत, पुनि इकत्र युत नेह ॥ ४।३६॥
नृपति सभाकुल पार्थ की, सभा सुहाई नीक।
जिमि तारा विधु के उदय, चित्रित द्यो अति ठीक ॥ ५।४०॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि रुक्मिप्रत्याख्यानं नामाष्टपञ्चाशदधिकशततमोऽध्यायः॥ ५८॥

एकसौउनसठि का अध्याय।

दो० इकसै उनसठवें महँ, सञ्जय नृप सों भाष।
राजनीति युत धर्म्म कछु, सुनि नृप कीन न माष ॥ १ ॥

जनमेजयजी ने पूछा कि जब सब सेना समूह बनाय इस प्रकार युद्ध करने पर उद्यत हुए तब धृतराष्ट्र तथा और कौरवों ने क्या किया? १ वैशम्पायनजी बोले जब उस प्रकार सब सेना युद्ध करने को तैयार हुई तो हे महाराज! राजा धृतराष्ट्र सञ्जय से यह वचन बोले कि २ हे सञ्जय! तुम यहां आवो कौरवों पाण्डवों के सेनानिवेश होने पर जो वृत्त होता हो वह सम्पूर्ण हम से कहो ३ हम भाग्य ही को श्रेष्ठ मानते हैं व पौरुष को निरर्थक क्योंकि हम क्षयफल देनेवाले युद्ध के दोषों को जानते भी हैं, तिस पर भी कपटी दुष्ट जुआरी अपने पुत्र को न रोक सक्के हैं न अपना हित कर सक्के हैं ४। ५ हे सञ्जय! हमारी बुद्धि इन सब दोषों को देखती है परन्तु दुर्य्योधन को पाय फिर लौट आती है फिर दोषों को नहीं विचारती ६ इससे अब जो होनेवाला है वही होगा, रण में तो क्षत्रिय का ही धर्म्म प्रसिद्ध है जो कि शरीर का त्याग हो जाय वही ठीक है ७ इतना सुन सञ्जयजी बोले कि, हे महाराज! जो तुम्हारा किया यह प्रश्न है व जो तुम चाहते हो तो यह दोष दुर्य्योधन में स्थापित करने के योग्य नहीं हो ८ हे राजन्! अपने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

किये पाप से मनुष्य जो अशुभ पाता है वह हम कहते हैं एकाग्रचित्त होकर सुनो ९ हे महाराज ! मनुष्यों में जो निन्द्यकर्म करता है वह भाग्य दैव किसी को कुछ नहीं कह सकता व जो निन्दित कर्म करता वह सबसे वध्य होता व समझा जाता है १० हे मनुजश्रेष्ठ ! पाण्डवों ने तुम्हारी प्रतीक्षा से बड़े निरादर भोगे जोकि तुमने जुआ ख्यलवाय उनका निरादर कराया ११ जो इस समर के निमित्त हाथी घोड़े रथ व अमित तेजस्वी राजाओं का नाश होगा वह हम बताते हैं सुनो १२ अब स्थिर हो सब लोक के नाश करनेवाले इस युद्ध के समाचार एकाग्र मन करके सुनो १३ शुभ व पापकर्म का कर्त्ता कोई पुरुष नहीं है, इन दोनों के करने में यह पुरुष पराधीन है क्योंकि कठपुतरी के समान जबरदस्ती प्रेरक इससे कार्य्य कराता है १४ कोई कोई तो ईश्वर की आज्ञा से शुभ व अशुभ करते हैं व कोई कोई अपने मन से करते हैं, कोई कोई पूर्वजन्म के कर्म्मों के अनुकूल करते हैं, तीनों धर्म लोगों में देख पड़ते हैं १५ तिससे अब प्राप्त अनर्थ को स्थिर होकर सुनो, हम कहते हैं १६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकोनषष्ट्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १५९ ॥

एकसौसाठ का अध्याय ।

दो० इकसै सठयें महँ कहब, जिमि दुर्य्योधन भूप ।
करि उलूककहँ दूत त्यहि, भेज्यहु पार्थ समीप ॥ १ ॥

सञ्जय बोले कि, हे महाराज ! जब पाण्डव लोग आय हिरण्यवती नदी के समीप सेना निवास बनाय उतरे तो तब कौरव लोग भी विधिपूर्वक उसी के थोड़ी दूर पर बसे १ वहां राजा दुर्य्योधन ने अपने पराक्रम से सेना स्थापितकर, राजाओं का बड़ाभारी मानकर फिर सैन्यों का विन्यास किया २ फिर उनकी रक्षा के लिये योधा नियत कर कर्ण दुश्शासन व सुबल के पुत्र शकुनी को ३ बुलाय व सब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राजाओं को बुलाय बड़ाभारी सम्मत किया वहां कर्ण सहित राजा दुर्य्योधन ने कर्ण दुश्शासन व शकुनी के साथ सम्मत किया ४। ५ फिर एकान्त में उलूक को बुलाय उससे यह बोले कि हे कैतव्य, उलूक! तुम पाण्डव चन्द्रवंशी दोनों के पास जावो ६ और जाय वासुदेव को सुनाय हमारी ओर से यह कहो कि जो तुम बहुत दिनों से विचारते थे उसका समय आ गया है ७ पाण्डवों कौरवों का यह बड़ा भयङ्कर युद्ध अब होगा, जिसके लिये तुमने अपनी बड़ी प्रशंसा की थी सब समाचार सञ्जय ने आय हमसे कहा है ८ और अर्जुन से कहना कि वासुदेव को सहाय पाय भाई सहित तुमने कौरवों के बीच में आय गर्जने को कहा था उसका यह काल आ गया है ९ जैसे तुम लोगों ने प्रतिज्ञा की है कि दुश्शासन का रुधिर पान करेंगे व दुर्य्योधन का पैर तोड़ डालेंगे अब वह सब करो सबसे ज्येष्ठ कौन्तेय युधिष्ठिर से भी हमारी ओर से कहना १० कि सब भाइयों सहित व सोमवंशियों समेत कृष्णचन्द्रजी व केकयवंशियों की सहायता पाय धर्म्मात्मा होकर तुम अधर्म करने में कैसे मन करते हो ११ जो कि इस सब जगत् को नश्यमान करना चाहते हो जैसे कोई क्रूर मनुष्य चाहे हम तो जानते थे कि तुम सब प्राणियों के अभयदाता हो १२ हे भरतर्षभ! इस विषय में प्रह्लादजी का गाया यह श्लोक सुनाई देता है जब देवताओं ने उनका राज्य हर लिया था तब उन्होंने गाया है १३ कि हे देवताओ! जिसका धर्म तो ध्वजा के समान ऊंचा हो सब कोई दूर से देखते हों और गुप्त पाप करता हो वह बैडालव्रत कहाता है १४ इस विषय में यह इतिहास कहते हैं जोकि नारदजी ने हमारे पिताजी से कहा था १५ गङ्गाजी के तीर एक दुष्टात्मा बिलार रहता था जोकि कुछ भी कर्म नहीं करता था केवल हाथ पै हाथ धरे बैठा रहता था व बहुधा ऊपर को दोनों हाथ उठाये रहता १६ उसने सब प्राणियों की प्रतीति के लिये मन शुद्धकर सब प्राणियों से कहा कि हम धर्म करते हैं १७ उस बिलार के विश्वास

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

में बहुत काल के पीछे कुछ पक्षी लोग आये, वे सब इकट्ठे हो उस बिलार की बड़ाई करने लगे १८ व सब पक्षी उसकी पूजा करने लगे वह बीच पाय पक्षियों को खाने लगा, अपने कार्य्य को उसने किया मानो उनकी पूजा का फल उन्हें देने लगा दो चार को रोज चख जाय १९ बहुत दिनों के पीछे वहां एक मूषकों की समाज आई, उन्होंने देखा कि भाई यह तो बड़ा धर्म्मात्मा बिलार है देखो कैसा व्रत करता है वह अपने बड़े भारी कार्य को बड़े दम्भ से सिद्ध करता २० और उन मूषकों ने विचारा कि हम लोगों के बहुत मित्र हैं यह हम सबों का मामा है २१ इससे हम लोगों में जो वृद्ध व बाल हों उन सबों की रक्षा यह मामा किया करै, यह विचार बिडाल के पास जाय सब के सब बोले, कि आप के प्रसाद से हम लोग सुखपूर्वक चरा चाहते हैं २२ आपही हम लोगों की अव्यग्रगति हैं व आपही हमारे परम सुहृद् हैं इससे हम सब इकट्ठे हो आप के शरण में आये हैं २३ आप सदा धर्म में पर हैं व आप धर्म में व्यवस्थित हैं अब हमलोगों की रक्षा कीजिये जैसे देवताओं की इन्द्र रक्षा करते हैं २४ जब इस प्रकार सब मूषकों ने उससे आय ऐसा कहा तो वह उनका वैरी उन सब मूर्ख मूषकों से बोला २५ कि यद्यपि तपस्या करना व मूषकों की रक्षा करना दोनों काम एक सङ्ग नहीं हो सकते पर क्या करें तुम लोगों के गौरव से रक्षा करेंगे चाहे तपस्या हो वा न हो २६ परन्तु हम तो तुम लोगों के वचन से तुम्हारे बाल वृद्धों की रक्षा करते हैं तुम भी नित्य हमारे वचन करते रहना क्योंकि बड़ा दृढ़ नियम करते करते हम तप करने से बनाय थक गये हैं २७ इससे अब चलने की कोई शक्ति अपने बूते नहीं देखते इससे हमको प्रतिदिन यहां से नदी के तीर तक तुम लोग व तुम्हारे बाल वृद्ध ये सब पहुँचादिया करें २८ उन सब मूषकों ने इस बात की प्रतिज्ञाकर अपने बाल वृद्धों को लाय बिडाल को सौंप दिया २९ तब वह पापी दुष्टात्मा मार्ज्जार मूषकों को खाता हुआ बहुत मोटा ताजा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हो गया रूप बनाय दगदगाय उठा और बड़ा पुष्ट शरीर होगया ३० धीरे धीरे मूषकों का झुण्ड तो नष्टता पर पहुँचा और बिलार तेज बल सहित बढ़ने लगा ३१ तब सब मूषक आपस में इकट्ठे हो कहने लगे कि मामा तो नित्य बढ़ते जाते हैं और हमलोग क्षीण हुए जाते हैं ३२ उनमें एक डिण्डिक नाम मूषक बड़ा ज्ञानी था वह सब मूषकों के झुण्ड से बोला कि ३३ तुम सब जने एक ही साथ नदी के कूल पर चलो और पीछे से मामा के साथ हम भी आते हैं ३४ बहुत अच्छा अच्छा कह सबों ने डिण्डिक के वचन की बड़ाई की व अर्थयुक्त उसके वचन सबों ने किये ३५ जब सब आगे चले गये तो डिण्डिक अकेला रह गया बिडाल ने उसको भक्षण कर लिया तब सब इकट्ठे हो आपस में सम्मत करने लगे उनमें एक सबों से बुड्ढा कोकिल नाम मूषक था ३६ वह अपनी जातिवालों के बीच में यथा तथ्य वचन बोला कि मामा ने धर्म की कामना से तपस्वी का वेष नहीं धारण किया किन्तु अपनी जीविका के लिये ऐसा किया है जिसमें लोग विश्वास मानें शत्रु भी विश्वस्त हो हमारे पास आवें हम उनको चख जायँ ३७ जो मूल फल खाता है उसकी विष्ठा में रोवां नहीं होते और मामा के अंग बढ़ते जाते व मूषकों का गण कम होता चला जाता है ३८ आज सात आठ दिन से डिण्डिक भी नहीं दिखाई देता यह सुन सब मूषक भग खड़े हुए ३९ और वह दुष्टात्मा बिडाल भी जहां से आया था वहां चला गया उसी प्रकार हे दुष्टात्मन् ! तुम भी बैडालव्रत को धारण किये हो ४० जैसे बिडाल मूषकों को खाता चला जाता था वैसे ही तुम भी ज्ञातिवालों के संग किया चाहते हो क्योंकि तुम्हारे वचन तो और प्रकार के हैं व कर्म और प्रकार के दिखाई देते हैं ४१ लोक के दिखाव के अर्थ तुमने वेद पढ़े और इन्द्रियों को अपनी वश में किया पर अब वह सब छोड़ हे युधिष्ठिर ! छल से आय क्षत्र धर्म करने लगे ४२ तुम तो बड़े धर्मिष्ठ हो सब कर्म करो बाहुके वीर्य से पृथ्वी लो क्या आगे पीछे करते हो ४३

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पृथ्वी को पाय अब ब्राह्मणों को दान दो व पितरों की भी श्राद्धादि करो व बहुत दिनों से क्लेश में पड़ी हुई अपनी माता के हित पर टिको ४४ रण में शत्रुओं को जीत माता के आँसू पोंछो व बड़े सम्मान को पावो क्या करो यत्न से पांच ग्राम माँगे थे उतने भी हमने न दिये ४५ विदुर कहते थे कि पाण्डवों के सङ्ग हम कैसे लड़ेंगे और उन को कैसे कोप करावेंगे इससे तुम्हारे ही लिये दुष्टभाव विदुर का हमने परित्याग कर दिया ४६ लाक्षाभवन में जो तुम लोगों को हमने जलवा डाला था उसका स्मरणकर पुरुष होवो और जब कृष्ण कौरवों की सभा को आने लगे थे तब तुमने जो कहा था कि ४७ हम शान्त होने और समर करने दोनों पर तैयार हैं हे राजन्! उस समर का यह काल आ गया है ४८ हे युधिष्ठिर! इसीलिये हमने भी सब किया है कि क्षत्रिय युद्ध ही को बहुत मानते हैं उससे पर कुछ लाभ मानते ही नहीं लाओ युद्ध ही करें ४९ और तुम भी क्षत्रिय के ही कुल में उत्पन्न हो और पृथ्वी पर वीर करके प्रसिद्ध हो ५० फिर द्रोणाचार्य्य कृपाचार्य्य से अस्त्र पाया तो भी बराबर जातिवाले व समपराक्रम वासुदेव के शरण में जाय पड़ो ५१ पाण्डवों के समीप बैठे हुए कृष्णचन्द्र से भी हमारी ओर से कहना, कि अपने अर्थ व पाण्डवों के अर्थ तैयार हो हमारे साथ पाण्डवों को लड़ावो ५२ सभा के मध्य में माया से जो रूप तुमने धारण किया था वह वैसा ही फिर कर अर्जुन सहित हमारे ऊपर दौरो ५३ इन्द्रजाल व माया व भयङ्कर कृत्या ये सब शस्त्रास्त्र धारण किये युद्ध करनेवाले के सामने केवल कोप ही कराते हैं कुछ भय नहीं दे सकते ५४ हम भी माया से स्वर्ग को चले जाय सकते व आकाश को भी जा सकते हैं रसातल में भी प्रवेशकर जा सकते हैं व इन्द्र की पुरी को भी जा सकते हैं ५५ व हम भी अपने शरीर में बहुत से रूप दिखा सकते हैं परन्तु मनुष्य की बुद्धि सदा सिद्धि ही को नहीं प्राप्त होती ५६ मन से ही तो प्राणियों को विधाता ही अपने वश में करते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हैं व हे कृष्ण! जो तुम कहते हो कि हम रण में धृतराष्ट्र के पुत्रों को मरवाय, पाण्डवों को उत्तमराज्य दिला देंगे वह तुम्हारा वचन सब सञ्जय ने हम से कहा है ५७। ५८ कि हम द्वितीय सहित अर्ज्जुन के सङ्ग तुम सबों का युद्ध होगा अब सत्यप्रतिज्ञ हो पाण्डवों के अर्थ पराक्रम करो ५९ आज आय सन्नद्ध हो रण में युद्ध करो पुरुष होओ हमलोग तुम्हारा पुरुषार्थ देखते हैं जो पुरुष शत्रु को जान शुद्ध पौरुष को प्राप्त हो वैरियों को शोक कराता है वही अच्छे प्राणों से जीता है ६० हे कृष्ण! अकस्मात् लोक में तुम्हारा बड़ा भारी यश प्रसिद्ध हो गया है हम जानते हैं कि पुरुषों का चिह्न लगाये बहुत से नपुंसक लोग इस संसार में हैं जिनके सामने तुम्हारा भी शौर्य प्रसिद्ध हो गया है ६१ परन्तु हमारे सदृश राजा तुम में शूरता का विश्वास कभी न करेगा कि तुम भी समर में कवच बखतर आदि धारण कर सक्ते हो क्योंकि तुम कंस के भृत्य हो ६२ व हे उलूक! तुम विना डाढ़ी मोछवाले उन भीमसेन से जाय हमारा सन्देश कहना जो कि बहुत भोजन करते हैं बार २ उनसे कहना कि ६३ विराटनगर में बल्लवनाम से प्रसिद्ध जो तुम भोजन बनाने वालों में थे वह हमारा ही पौरुष है ६४ और सभा के मध्य में जो तुमने प्रतिज्ञा की थी उसको मिथ्या न करो जो शक्ति हो तो दुश्शासन का रुधिर पान करो ६५ व जो तुम कहते हो कि रण में हम धृतराष्ट्र के पुत्रों को मार डालेंगे उसका काल यह आगया है मारो ६६ तुम भोजन बनाना व नीक मीठ खाना पीना जानते हो फिर कहां खाना पीना कहां युद्ध करना इसमें तो बड़ा अन्तर है पर शक्ति हो तो युद्ध करो पुरुष बनो, परन्तु गदा हाथ में लिये पृथ्वी पर परे शयन करोगे ६७।६८ तब जो तुमने सभा के मध्य में कहा था वह तुम्हारा बकना मिथ्या हो जायगा हे उलूक! नकुल से हमारा वचन कहना कि हे भारत! ६९ खड़े होकर युद्ध करो तुम्हारा पौरुष हम लोग देखते हैं व यह भी कि युधिष्ठिर में

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तुम्हारा अनुराग है और हमारे साथ वैर है वह भी देखते हैं ७० द्रौपदी के क्लेश का स्मरण इस समय खूब कर लो और राजाओं के बीच में सहदेव से हमारा वचन कहना कि ७१ सब क्लेशों का स्मरण कर इस समय युद्ध करो हे पाण्डव ! और हमारे वचन से विराटराज व राजा द्रुपद से भी कहना ७२ जब से ब्रह्मा ने प्रजा बनाई हैं तबसे आज तक महागुणवान् भृत्यों ने राजा भी नहीं देखे और राजाओं ने भृत्य भी नहीं देखे पर अब तुमको राजा युधिष्ठिर राजा अच्छे मिले और तुम दोनों भृत्य भी उनको अच्छे मिले ७३ तिससे तुम सब लोग हमारे वध के अर्थ और अपने तथा पाण्डवों के कल्याण के लिये अच्छी तरह हमसे लड़ो ७४ हमारे वचन से द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न से कहना कि यह तुम्हारा समय आ गया है तुम भी इसका फल पावोगे ७५ जब समर में द्रोणाचार्य्य को प्राप्त होगे तो अपना उत्तम हित पावोगे अच्छा युद्ध करो और दुष्कर कर्म्म करो ७६ हे उलूक ! हमारी जबानी शिखण्डी से कहना कि तुम को स्त्री मान महाबाहु गङ्गाजी के पुत्र भीष्मजी समर में न मारेंगे ७७ इससे युद्ध में तुम निर्भय रहो रण में सन्नद्ध हो कर्म्म करो तुम्हारा पौरुष हम लोग देखते हैं ७८ इतना कह राजा दुर्य्योधन हँसकर उलूक से बोले कि कृष्णचन्द्र के सुनते में अर्ज्जुन से कहना कि ७९ कि तो समर में हम लोगों को पराजित कर तुम्हीं इस पृथ्वी भर का राज्य करोगे अथवा हे वीर ! हम लोगों से निर्जित हो रण में पृथ्वी पर शयन ही करोगे ८० हे पाण्डव ! राज्य से निकाले जाने का क्लेश वनवास का दुःख व द्रौपदी के क्लेश का स्मरणकर पुरुष होओ ८१ जिस लिये क्षत्रियों की स्त्री पुत्र उत्पन्न करती हैं उसका समय यह आगया है बल, वीर्य, शूरता, अस्त्र चलाने की शीघ्रता, पौरुष युद्ध में दिखाते हुए कोप करने का फल सिद्ध करो और जो तुमने कहा था कि क्लेशित, दीन, बहुत दिनों तक विदेश में परे रहने से क्लेशित किस पुरुष का हृदय नहीं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

फट जाता जो ऐश्वर्य से भ्रष्ट हो गया हो फिर कुल में उत्पन्न उसमें भी शूर हो पर धन की इच्छा करै फिर जिसका राज्य ज़बरदस्ती छीन लिया गया हो उसका कोप कैसे सन्तापित न करावे ऐसा जो महा-वचन तुमने कहा था उसको कर्म्म करके दिखाओ क्योंकि जो विना कर्म्म किये मिथ्या बकता है पण्डित लोग उसको कुपुरुष कहते हैं अमित्रों के वश में तुम्हारा स्थान राज्य दोनों हैं उनको उनके पास से अपने पास लावो ये दोनों अर्थ युद्ध करने के हैं तिससे पौरुष करो ८२। ८६ जुआ खेलने में हार गये थे द्रौपदी बीच सभा में पकड़ आई उसी समय में जो पुरुष मानी मनुष्य होता तो मर्ष करता अवश्य मारता पीटता ८७ फिर १२ वर्ष तक राज्य से निकाल वन में बसाये गये एक वर्ष विराट राजा की दासता में रहे ८८ इससे अब राज्य से निकाले जाने का क्लेश फिर वनवास का दुःख और द्रौपदी के कष्टों का स्मरण करते हुए पुरुष होओ ८६ जब निकाले गये थे तब अप्रिय हम लोगों ने बहुत से अप्रिय वचन तुम लोगों को कहे थे उनकी असहनशीलता आज दिखाओ क्योंकि असहनशीलता ही पौरुष है ६० हे पार्थ! क्रोध, बल, वीर्य्य, ज्ञान, योग, अस्त्र में शीघ्रता अब यहां तुम्हारी देखी जाय युद्ध करो पुरुष होओ ६१ शस्त्रों की पूजा आदि करने का समय आ गया कुरुक्षेत्र की भूमि में कीचड़ नहीं है खूब युद्ध करने के योग्य है और तुम्हारे घोड़े भी पुष्ट हैं, योधाओं को मासिकादि पहिले ही से दे रक्खा है सब युद्ध की सामग्री तैयार है प्रातःकाल केशव सहित तुम युद्ध करो ६२ विना भीष्मपितामह के साथ समर में समागम हुए व्यर्थ क्या प्रलाप करते हो जैसे कोई गन्धमादन पर्वतपर चढ़ा चाहे व शक्ति कुछ भी न हो वैसे ही तुम्हारा बकना है ६३ हे कौन्तेय! इसी तरह तुम भी बकते हो अब विना बकते हुए पुरुष होओ हे पार्थ! समर में महा असहनशील कर्ण व महाबली शल्यजी युद्ध में इन्द्र के समान बलवानों में श्रेष्ठ

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

द्रोणाचार्य्य को विना जीते कैसे राज्य लेने की इच्छा करते हो ६४।६५ ब्रह्मविद्या व धनुर्विद्या दोनों के आचार्य्य वेद व धनुर्वेद दोनों के पारगन्ता युद्ध में धुरन्धर चोभरहित सेना में अचल हो स्थित कभी भागते जानों हुई नहीं ऐसे महाद्युति द्रोणाचार्य्यजी को अर्ज्जुन तुम कैसे जीतना चाहते हो यह तो मिथ्या ही है क्योंकि हम लोगों ने कभी सुना ही नहीं कि पवन ने सुमेरु पर्वत को उखाड़ डाला हो ६६।६७ जैसा तुम ने हम से कहा है कि हम सब कौरवों को जीत लेंगे जो ऐसा हो तो फिर पवन सुमेरु को भी उठा लेगा आकाश पृथ्वी पर गिर पड़ेगा कालचक्र उलट जायगा ६८ चाहे पार्थ हों व और ही कोई हो ऐसा कौन है जिसको जीने की इच्छा हो और इन द्रोणाचार्य्यजी के सामने समर में आय फिर कल्याण सहित अपने घर को चला जाय ६६ ऐसा कौन मनुष्य है जिसे भीष्मपितामह और द्रोणाचार्य्य मार डालने के लिये निश्चय कर लें फिर वह रण से जीता ही बच जावे १०० जैसे कूप के भीतर परा हुआ मेढ़क वहां के सिवा अन्यत्र के वृत्त कुछ नहीं जानता वैसे ही तुम अति दुराधर्ष इस कौरवराज महासेना को नहीं जानते जो कि देवसेना के समान प्रकाशित है जैसे देवताओं से रक्षित अन्तरिक्ष है १०१ हे अल्पबुद्धे, मन्द ! पूर्वीय, पश्चिमीय, दक्षिणीय, उत्तरीय, काबुली, शकवंशवाले, खशदेशवाले, शाल्वके वंश के, मत्स्यदेशनिवासी, कुरुदेशवासी, मध्यदेशवासी, म्लेच्छ, पुलिन्द, द्राविड़, अन्धवंशी व कांचीपुरी के निवासी इन सब नानादेश निवासियों का समूह जो भादों की गङ्गाके समान अपारणीय है वह हाथियों की सेना के मध्य में टिके हुए हम से युद्ध किया चाहते हो १०२ । १०३ हे अर्ज्जुन ! अक्षय्य दो तरकस व अग्नि का दिया हुआ तुम्हारा रथ व दिव्य पताका हम जानते हैं १०४ हे अर्ज्जुन ! बहुत वृथा बकने से क्या है ? विना बके ही हुए युद्ध करो युद्ध की सिद्धि शूरता से होती है मिथ्या बकने से नहीं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होती १०५ हे अर्ज्जुन ! जो यह युद्ध का कर्म्म केवल मिथ्या बहुत बकने ही से सिद्ध हो तो सब सिद्धार्थ हो जायँ बकने में कौन बड़ी कठिनता है १०६ हम जानते हैं कि तुम्हारे वासुदेव सहायक हैं और तुम्हारे तार के वृक्ष के समान लम्बा गाण्डीव धनुष है उसे भी जानते हैं व यह भी जानते हैं कि तुम्हारे समान और कोई योधा नहीं है हम जान बूझ कर तुम्हारा यह राज्य हरे लेते हैं भूल से नहीं हरते १०७ मनुष्य सदा नहीं जीतता वह कभी हारता भी है यह बात तो विधाता ही में है कि सदा अपने मन से ही जगत् को अपने वश में रखता है १०८ तेरह वर्ष बीत गये तुम ऐसे ही रोते ही रहे हमने राज्य का भोगही किया और फिर भी भाई बन्धु सहित तुमको संग्राम में मार राज्य भोगेंगे १०९ हे अर्ज्जुन ! तुम्हारा बल तब कहां गयाथा जब जुआ खेलने में हारकर दास हुए थे और तब भीमसेन का महाबल कहाँ गया था ११० गदाधारी भीमसेन से व गाण्डीवधारी अर्ज्जुन से तुम उस बँधोई से नहीं छूटे जब आय द्रौपदी ने छुड़वाया तभी छूटे १११ नीच मनुष्यत्व को प्राप्त दासी कर्म्म में टिके तुमको बचाने की इच्छा से द्रौपदी ही ने छुड़वाया ११२ जो कि हमलोगों को षण्ढ तिल तुमने कहा था कि इनके नाम तिल खांड़ डालो अब जीते न समझो वह बात सत्य है जो जैसा होता वह सबको वैसा ही जानता अर्ज्जुन ने विराटनगर में पाटी पारी व माँग सँवारी थी ११३ हे अर्ज्जुन ! जिससे विराट के महानस में भीमसेन जाय रसोईबनाने वाले होकर बचे वह हमारा ही पौरुष है ११४ हे अर्ज्जुन ! तुम पाटी पार माँग सँवार नपुंसक का वेष बनाय विराट की कन्याओं को नचाते थे और यद्यपि स्त्री न थे पर स्त्री का वेष धारण किये थे इससे वहाँ के पुरुष तुम्हारा पश्चाद्भाग कांख व पाटी के नीचे माथ मुख चूमते होंगे इससे तुम रति युद्ध का हाल जानते हो इस महा युद्ध में भागी खड़े होगे यह वह नहीं है इसी प्रकार क्षत्रिय के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

क्षत्रिय लोग सदा दण्ड देते चले आये हैं ११५ हे अर्जुन ! न हम वासुदेव के भय से तुमको राज्य देंगे न तुम्हारे भय से इससे अब केशव सहित तुम युद्ध करो ११६ न यहां माया से काम चलेगा न इन्द्रजाल से न डरवानेवाली कपटता से क्योंकि संग्राम में जो अस्त्र शस्त्र अच्छी तरह ग्रहण किये रहते उन्हीं का गर्जना सुनाई देता व उसी से काम चलता है ॥ ११७॥

दो० हरि सहस्र अर्जुन शतक, याहू सों बरु ढेर।
सफल बाण ममढिग भये, दशदिशि जाहिं न देर॥ १।११८॥
कि तो भीष्मसों रण करहु, वा शिर हतहु पहार।
पुरुषजलधि वा तरहु भुज, जो अगाध नहिं पार॥ २।११९॥
जहँ शारद्वत मीन हैं, उरग विविंशति यत्र।
भीष्मवेग नहिं अन्त ज्यहि, द्रोण ग्राहसम तत्र॥ ३।१२०॥
कर्ण शल्य झषकुण्ड अरु, बड़वानल बाह्लीक।
जहां बृहद्बल लहरि सम, सौमदत्ति तिमिंगीलक॥ ४।१२१॥
युद्ध करन में वायु जहँ, हैं भगदत्त महान।
हार्दिक और श्रुतायु बड़, हैं समुद्र प्रतिभान॥ ५॥
दुश्शासन जल पूर शल, शल्य मत्स्य दुर्वार।
चित्रायुध व सुषेण जहँ, नाग नक्र रणमार॥ ६।१२२॥

हरिगीतिका।

जहँ हैं जयद्रथ गिरि बहुरि पुरुमित्र वारि अगाधहू।
अरु उदक दुर्मर्षण शकुनि जहँ हैं प्रपात अगाधहू॥
शरशस्त्र निकर प्रवृद्ध अक्षय श्रमित ह्वै जबहीं मरो।
अवगाहि त्यहि बान्धव समेत संतापयुत ह्वैकै जरो॥ ७।१२३॥
तब पार्थ तव मन राज्यसो फिरि है यथा स्वर्गी जना।
नहिंचहत महिकरराज्य अशुचि विचारिकै अपनेमना॥
यासों अबहुँ हो शान्त दुर्लभ है चहत तुम हो ज्वई।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जिमिलहतनाहिं बिना तपोबल स्वर्गसुख जगमें कई॥८॥१२४॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि उलूकदुर्य्योधनवाक्ये षष्ट्यधिक-शततमोऽध्यायः ॥ १६० ॥

एकसौइकसठ का अध्याय।

दो० इकसै इकसठवें महँ, पार्थन पाहिं उलूक।
दुर्य्योधन सन्देशकह, कहूँ करी नहिं चूक ॥ १ ॥

सञ्जय धृतराष्ट्र से बोले कि छली उलूक दुर्य्योधन का ऐसा सन्देश ले पाण्डवों के सेना निवेश में पहुँच सब पाण्डवों से मिल युधिष्ठिरजी से बोला कि १ आप दूत वाक्यों के जानने में बड़े चतुर हैं इससे मैं यथा-तथ्य दुर्य्योधन का सन्देश कहता हूँ उसे सुन आप क्रोध करने के योग्य नहीं हैं २ यह सुन युधिष्ठिरजी बोले कि हे उलूक ! जो मत अदूरदर्शी व महालोभी दुर्य्योधन का हो उसे तुम निर्भय हो कहो तुमको कुछ भी भय नहीं है ३ यह सुन तब तेजस्वी महात्मा पाण्डवों के मध्य में व सृञ्जयवंशीय मत्स्यदेश निवासी और परमयशस्वी श्रीकृष्णचन्द्रजी, पुत्रों सहित राजा द्रुपद, राजा विराट और सब राजाओं के समीप सबों के मध्य में बैठ उलूकनाम दुर्य्योधन का दूत बोला ४ । ५ कि हे युधि-ष्ठिरजी ! सब कौरवों के सुनते में बड़े प्रसन्नचित्त राजा दुर्य्योधन ने आप से यह कहा है कि ६ तुम जुआ खेलने में पराजित हुए इसलिये द्रौपदी सभा में उस दुर्दशा के साथ पकड़ आई पुरुष मानी पुरुष को उस समय असहनशील होना चाहिये था ७ राज्य से निकाल दिये गये बारह वर्ष तक वन में रहे व एक वर्ष गुप्त हो राजा विराट की दासता में रहे ८ हे पाण्डव ! अमर्ष, राज्यहरण, वनवास व द्रौपदी का परिक्लेश स्मरण कर पुरुष होओ ९ असमर्थ भीमसेन ने जो प्रतिज्ञा की थी कि दुश्शा-सन का रुधिर पान करेंगे यदि शक्ति हो तो अब पान करें १० अब युद्ध करने के योग्य कुरुक्षेत्र की भूमि कीचड़ रहित है मार्ग सब समान हैं

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

घोड़े तुम्हारे खाये पिये पुष्ट हैं इससे केशव सहित प्रातःकाल युद्ध करो ११ विना भीष्मपितामह के समर में आये क्या बकते हो जैसे कोई मन्दपुरुष गन्धमादन पर्व्वत पर चढ़ने की इच्छा करै १२ हे कौन्तेय! ऐसा बकते हो विना बके पुरुष होओ बड़े दुःख से सहने के योग्य कर्ण बलवानों में बलवान् शल्य १३ व समर में इन्द्र के समान बलवानों में बलवान् द्रोणाचार्य्य को संग्राम में विना जीते कैसे राज्य लेना चाहते हो १४ ब्रह्मविद्या व धनुर्विद्या दोनों के आचार्य्य और वेद धनुर्व्वेद दोनों के पारगन्ता समर में धुरन्धर क्षोभ रहित सेना में विचरनेवाले कभी भी सैन्य से न हटनेवाले १५ महाद्युति द्रोणाचार्य्य को अर्ज्जुन मिथ्या ही जीतना चाहते हो क्योंकि हमने कभी सुना ही नहीं कि पवन पर्व्वत को भी उड़ा ले जाय १६ जैसा तुमने हमसे कहा है कि भीष्म द्रोणाचार्य्य कर्णादि सब कौरवों को हम जीत लेंगे यदि ऐसा हो तो पवन पर्व्वत को भी उड़ा ले जाय अन्तरिक्ष पृथ्वी पर गिर परै कालचक्र उलटा चलै १७ चाहे हाथी हो व घोड़ा व रथ व कोई और प्राणी जिसे जीने की इच्छा हो वह इन शत्रुमर्दन करनेवाले द्रोणाचार्य्य के सामने युद्ध में आय फिर कल्याण सहित घर को न जाय १८ भला ऐसा कौन मनुष्य है जिसे भीष्म व द्रोणाचार्य्य मार डालने की प्रतिज्ञा करैं फिर रण में जीता बचै १९ जैसे कूप के भीतर परा हुआ मेढक, वहाँ के सिवाय अन्यत्र के कुछ वृत्त नहीं जानता, वैसे ही तुम, अति दुराधर्ष इस कौरवराज महासेना को नहीं जानते, जो कि देवसेना के समान प्रकाशित है, जैसे देवताओं से रक्षित अन्तरिक्ष है २० हे अल्पबुद्धे, मन्द! पूर्व्वी, पश्चिमी, दक्षिणी, उत्तरीय काबुली, शकवंशवाले, खशदेशवाले, शाल्व के वंश के, मत्स्य देशनिवासी, कुरुदेशवासी, मध्य देश निवासी, म्लेच्छ, पुलिन्द, द्राविड़, अन्ध्रवंशी व काञ्चीपुरी के निवासी, इन सब नाना देश निवासियों का समूह जो भादों की गङ्गा के समान अपारणीय है व हाथियों की सेना के मध्य में टिके हुए

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हमसे युद्ध किया चाहते हो २१ । २२ धर्म्म के पुत्र राजा युधिष्ठिरजी से ऐसा कह लौट अर्ज्जुन की ओर मुख कर उलूक बोला २३ हे अर्ज्जुन ! विना व्यर्थ बके हुए युद्ध करो बहुत क्यों बकते हो युद्ध करने से इसकी सिद्धि होती है बकने से कार्य्य सिद्ध नहीं होता २४ हे धनञ्जय ! यदि लोक में इस प्रकार बकने ही से कार्य्य की सिद्धि हो तो सब सिद्धार्थ ही हो जायँ क्योंकि बकने में कौन कठिनता है २५ हम जानते हैं कि तुम्हारे सहायक वासुदेव हैं व ताल के वृक्ष के समान ऊँचा तुम्हारा गाण्डीव धनुष है और यह भी जानते हैं कि तुम्हारे समान और योधा नहीं है यह सब जानते ही हुए हमने तुम्हारा राज्य हर लिया है २६ परन्तु मनुष्य सदा पर्य्याय धर्म्म से राज्य नहीं पाता यह शक्ति तो विधाता ही को है कि अपने मन से ही सब अनुकूल पदार्त्थों को अपने वश में रखते हैं २७ तुम रोते ही रहे हमने तेरह वर्ष तक राज्य भोगा व फिर भी बान्धववर्ग सहित तुमको मार राज्य भोगेंगे २८ तब तुम्हारा गाण्डीव धन्वा कहाँ गया था जब तुम दास होने की बाजी लगाय हारे थे व हे अर्ज्जुन ! तब भीमसेन का बल कहाँ गया था २९ गदा सहित भीमसेन से व गाण्डीव सहित अर्ज्जुन से तुम दास होने की बँधोई से नहीं छूटे जब तक निन्दा रहित द्रौपदी ने आय तुमको नहीं छुड़वाया ३० उन द्रौपदी ने नीच मनुष्यों के दास्यकर्म्म में युक्त दास्यभाव को प्राप्त तुम लोगों को आय छुड़वाया ३१ जो हमने तुम लोगों को कहा था कि तुम्हारे नाम हम लोगों ने तिल खोंट डाला हमारे लेखे मर गये वह सत्य ही ठहरा क्योंकि जब पुरुष होकर विराटनगर में अर्ज्जुन ने पाटी पारी माँग सवाँरी तो फिर मरने में कौन सन्देह रहा ३२ हे कौन्तेय ! विराटनगर में जो भीमसेन ने जाय रसोईं बरदारी की वह हमारा ही पौरुष है ३३ इसी प्रकार के दण्ड क्षत्रिय लोग सदा क्षत्रियों को देते रहते हैं जिससे कि तुम ऐसे वीर को भी पाटी पार माँग सवाँर नपुंसक का वेष बनाय विराट के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कन्या को नाचना गाना सिखलाना परा ३४ हे अर्ज्जुन ! न हम वासुदेव के भय से तुमको राज्य देंगे न तुम्हारे ही भय से इससे सहित केशव आय युद्ध करो ३५ शस्त्र ग्रहण किये युद्ध करते समर में हम गर्जेंगे इसमें न माया चलेगी न इन्द्रजाल न कपटता की विभीषिका ३६ चाहे एक नहीं सहस्र वासुदेव हों व सैकरों अर्ज्जुन हों पर अमोघ बाणधारी हमको पाय अवश्य दशों दिशों को भगेंगे ॥ ३७ ॥

दो० किंतो भीष्म सों रण करहु, वा शिर हतहु पहार।
पुरुष जलधि वा भुज तरहु, जो अगाध नहिं पार ॥ १ । ३८ ॥
जहँ शारद्धत मीन हैं, उरग विविंशति यत्र।
भीष्मवेग नाहिं अन्तर्ज्यहि, द्रोण ग्राहसम तत्र ॥ २ । ३६ ॥
वायु जहाँ भगदत्त हैं, हार्दिक श्रुतयु समुद्र।
दुश्शासन जलपूर शल, शल्य मत्स्य अतिरुद्र ॥ ३ । ४० ॥
कर्ण शल्य झष कुण्ड अरु, बाह्लिक जहँ बड़वाग्नि।
चित्रायुधरु सुषेण हय, नक्र जहाँ विषदाग्नि ॥ ४ । ४१ ॥

हरिगीतिका ॥

जहँ हैं जयद्रथ गिरि बहुरि पुरुमित्र वारि अगाधहू।
अरु उदक दुर्म्मर्षण शकुनि जहँ हैं प्रपात अबाधहू ॥
शरशस्त्र निकर प्रवृद्ध अक्षय तूण गहि मरिहौं जबै।
अवगाहि त्यहि बान्धव समेत सँतापयुत जरिहौं तबै ॥ ५ । ४२ ॥
तब पार्त्थ तव मन राज्यसों फिरि है यथा स्वर्ग्गीजना।
नहिं चहत महिकर राज्य अशुचि विचारिकै अपनेमना ॥
यासों अबहुँ हो शान्त दुर्ल्लभ है चहत तुम हौ ज्वई।
जिमि लहतनाहिं विना तपोबल स्वर्ग्ग सुख जग में कई ॥ ६ । ४३ ॥

दो० इमि उलूक कुरुराज बच, कह अर्ज्जुन समुझाय।
सो न भयहु पुनि गुनि हिये, किये न कछु तिन आय ॥ ७ । ४४ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकषष्ट्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १६१ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौबासठ का अध्याय

दो० इकसै बासठवें महँ, दुर्य्योधन के बैन।
सुनि उलूक के वचन जो, पार्त्थादिक दुखदैन ॥ १ ॥

सञ्जय धृतराष्ट्रजी से बोले कि विषधर सर्प्प के समान क्रोध किये अर्ज्जुन से वाक्यदण्ड से व्यथित कराता ही सा उलूक फिर दुर्य्योधन के वचन यथातथ्य बोला १ तिसके वचन सुन पाण्डवों ने अत्यन्त कोप किया क्योंकि वे तो प्रथम ही से क्रुद्ध थे पर उलूक ने और भी क्रुद्ध करा दिया २ सब पाण्डव लोग अपने २ आसनों पर से उठ खड़े हुए और अपने हाथ पटकने लगे विषधर सर्प्पों के समान क्रुद्ध हो आपस में एक दूसरे की ओर देखने लगे ३ और विषधर सर्प्प के समान श्वासें लेते हुए भीमसेन ने लालनेत्रों से कृष्णचन्द्रजी की ओर निहारा व फिर नीचे को शिर कर लिया ४ क्रोध से अत्यन्त पीड़ित व दुःखित भीमसेनजी को देख भगवान् कृष्णचन्द्रजी हँसते ही उलूक से बोले ५ हे उलूक! अब शीघ्र ही यहाँ से जाओ दुर्य्योधन से जाय कहो कि तुम्हारे वचन सुने व उनका अर्थ ग्रहण किया व जो तुम्हारा मत है कि प्रातःकाल आय युद्ध करें वैसा ही होगा ६ हे राजन्! इस प्रकार महाबाहु केशवजी उलूक से कह फिर युधिष्ठिरजी की ओर देखने लगे ७ तब फिर सब सृञ्जयों के व यशस्वी कृष्णचन्द्रजी के व पुत्र सहित राजा द्रुपद के व विराट के समीप व सब राजाओं के मध्य में उलूक फिर दुर्य्योधन के कहे वचन क्रुद्ध अर्ज्जुनजी से कहने लगा ८ । ९ व फिर जैसा जिससे कहने को दुर्य्योधन ने कहा था कृष्णचन्द्रादि प्रत्येक से उसने यथातथ्य कहा १० पापदारुण रूप उलूक के वचन सुन अर्ज्जुन ने बड़ा क्रोध किया इससे उनका मस्तक फरकने लगा उसे वे सुहराने लगे ११ अर्ज्जुन को उस अवस्था में प्राप्त देख वह पाण्डवों की सभा व पाण्डवों के महारथ वीरलोग उन वचनों को न सहसके १२ कृष्ण-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चन्द्रजी व महात्मा पार्थों की निन्दा सुन सब पुरुषसिंह मारे क्रोध के बरउठे १३ उनमें धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, महारथ सात्यकी, केकयदेश के पांचभाई राजा व घटोत्कच नाम राक्षस १४ द्रौपदीजी के पांच पुत्र, अभिमन्यु, धृष्टकेतु राजा, महाविक्रमी भीमसेनजी व महारथ नकुल, सहदेव १५ ये सब अपने २ हाथ उठाय अपने २ आसनों से मारे क्रोध के रक्तचन्दन के सदृश नेत्र लालकर उठ खड़े हुए १६ और बहूंटा कङ्कणादि धारण किये हाथों को बार २ ऊपर को उठाय दाँत से दाँत कटकटाय जीभ से ओठों के अन्त बार २ चाटने लगे १७ इन सब लोगों के आकार के भाव के जाननेवाले भीमसेनजी क्रोध से प्रज्वलित ही से हो बड़े वेग से उठ खड़े हुए १८ एकाएकी नेत्र निकार दाँत कटकटाय हाथ से हाथ बार २ मींज उलूक से बोले १९ हे मूर्ख ! हम लोगों को अशक्त ही से समझ हमारे प्रोत्साहन करने के निमित्त जो वचन दुर्य्योधन ने तुझ से कहा हमने अच्छी तरह सुना अब हमारा भी बड़े दुःख से सहने के योग्य वचन तू सुनै २० जो वचन सब क्षत्रियों के सुनते में व दुष्टात्मा कर्ण शकुनी के भी सुनते में उस दुष्ट दुर्य्योधन से तू कहेगा २१ कि हे दुष्ट ! हमलोगों ने नित्य अपने ज्येष्ठ भाई की प्रीति की कामना से जो तुम्हारे दुराचारों को सहा उसको तुम बहुत न मानो २२ और कुल के हित की कामना से धीमान् धर्म्म-राजजी ने शान्त कराने के लिये कौरवों के समीप भगवान् वासुदेव जी को भेजा २३ परन्तु तुझको तो काल की प्रेरणा है इससे यमपुर को जाया चाहता है भगवान् के भी वचन तूने नहीं माने अच्छा अब जा हमलोगों के सङ्ग प्रातःकाल निश्चय युद्ध होगा २४ हे पाप ! हमने भी जो सब भाइयों समेत तेरे मार डालने की प्रतिज्ञा की है वह वैसी ही होगी इसमें कुछ विचार करने की आवश्यकता नहीं है २५ क्योंकि॥

दो० बरु सागर उमड़ै बढ़ै, बोरै सब जग काहिं।
बरु पर्व्वत फूटैं सकल, वचन मृषा मम नाहिं॥ १ । २६ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

यदि सहाय तव होहिं यम, अथवा रुद्र कुबेर।
यदपि करहिं गे पार्थ निज, वच प्रतिपाल न देर ॥ २ । २७ ॥
दुश्शासन कर रुधिर हम, अवशि पियें न सँदेह।
जो क्षत्रिय त्यहि समय मम, सन्मुख सह त्यहि देह ॥ ३ ।२८ ॥
वचन कहा हम जो नृपन, सभामाहिं सप्रतिज्ञ।
करत शपथ निज सत्य सो, होइहि सुनसि अविज्ञ ॥ ४ । २९ ॥

भीमसेनजी के ऐसे वचन सुन असहनशील सहदेवजी भी मारे क्रोध के लाल नेत्र कर यह वचन बोले कि ३० हे पाप, उलूक ! जो हमारा रणधीर वीरों की व सैनिक जनों की सभा में तुझको तेरे पिता दुर्य्योधन से कहने के योग्य वचन है उसे सुन ३१ यदि बाल्यावस्था ही में धृतराष्ट्र तुझ पापी अपने पुत्र दुर्य्योधन को त्याग देते तो हमलोगों का कौरवों के सङ्ग कभी भेद न होता ३२ हे पाप ! तू धृतराष्ट्र के कुल का और अपने भी पुत्रादिकों का विनाशक उत्पन्न हुआ है क्योंकि वैर सब तेरेही कारण उत्पन्न हुआ है ३३ और पापी पुरुष तेरे पिता ने जबसे हम लोगों का जन्म हुआ है तभी से हम लोगों का अहित व अतिक्रूर ही कर्म्म नित्य करना चाहा है व अब भी चाहता है ३४ सो अब उस वैरानुषङ्ग के अन्त को तू अवश्य पहुँचेगा क्योंकि हम शकुनी दुष्ट के देखते ही देखते पहिले तुझे मारें फिर सब धनुर्द्धरों के सामने शकुनी को भी मारेंगे ३५ । ३६ इस प्रकार भीमसेन व सहदेव दोनों के वचन सुन हँसते हुए अर्ज्जुनजी भीमसेनजी से बोले हे भीमसेन ! जिन दुष्टों का वैर तुम्हारे साथ है वे अब नहीं हैं मरे ही समझो ३७ यद्यपि अभी वे मन्द सुखी हो अपने घर में बैठे हैं पर काल की फाँसी में बँधे हुए हैं व हे पुरुषोत्तम ! आप उलूक बेचारे को कठोर बचन न कहें ३८ क्योंकि दूत तो अपने स्वामी का सन्देश ज्यों का त्यों कहते हैं उसमें उनका कौन अपराध महाबाहु अर्ज्जुनजी भीम पराक्रम भीमसेनजी से ऐसा कह धृष्ट-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

द्युम्नादि वीर अपने सुहृदों से बोले कि आप लोगों ने उस पापी दुर्य्योधन के वचन सुने ३९। ४० जोकि उसने वासुदेवजी की निन्दा की और हमारी तो विशेष ही निन्दा की जिसे सुन हम लोगों के हित की कामना से आप लोग क्रोधयुक्त हुए ४१ परन्तु वासुदेव भगवान् के प्रभाव से व आप लोगों के प्रयत्न से सम्पूर्ण राजगण व सब क्षत्रिय गणों को हम कुछ नहीं गिनते ४२ आप लोगों ने कुछ विचारा जो इसके वचन का उत्तर दिया जाय जो कि उलूक से कहें फिर वह जाय दुर्य्योधन से कहे ४३ हमने तो विचारा है कि यही उत्तर है कि प्रातःकाल होने पर सेनाओं के सन्मुख इस उसके बकने के नपुंसकता के उत्तर गाण्डीवधन्वा के मुख से कहवावेंगे और ऐसे अपने मुख से क्या कहें ४४ यह सुनते ही सब राजा लोगों ने अर्ज्जुनजी की बड़ी प्रशंसा की व सब राजसत्तम इस वचन से बड़े विस्मित हुए ४५ तब धर्म्मराजजी ने जैसा न्याय था व जैसी जिसकी अवस्था थी उसके अनुकूल सबको समझाय समयानुसार यह वचन कहा ४६ कि अपनी निन्दा सुन उत्तम राजा को चाहिये कि किसी के दूत को मारने न लगे हम उसका उत्तर कहेंगे और अभी तो हम उसके सुनने ही में रत थे ४७ इतना कह उलूक के मुख से फिर भी कुछ दुर्य्योधन के वचन सुन जो कि उसने बड़े ज़ोर से कहा ४८ तब अतिलाल नेत्र कर विषधर सर्प के समान ऊँची श्वासें भर मारे क्रोध के कुछ गर्वित से हो जीभ से दोनों ओठों के किनारे चाटते हुए वासुदेव भगवान् तथा अपने सब भाइयों की ओर देख उलूक का हाथ अपने लम्बे हाथ से पकड़ बोले ४९। ५० हे तात, उलूक! अब तुम जाव कृतघ्न, वैर पुरुष, दुर्मति व कुलदोषी दुर्य्योधन से कहो ५१ कि हे पाप! तुम सदा पाण्डवों के विषय में नित्य कुटिलता ही करते हो परन्तु हे पाप! जो अपने वीर्य्य से पराक्रम कर शत्रुओं को स्पर्द्धापूर्वक बुलाता है ५२ और निर्भय हो वाक्यों को पूरा करता है वह क्षत्रिय पुरुष कहाता है

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व वह पापी है जो क्षत्रिय हो हम लोगों को स्पर्द्धापूर्वक युद्ध करने को बुलाय मान्य अमान्यों को आगे खड़ा कर दे व आप अलग हो रहै इससे हे कुलाधम! मान्य भीष्मादिकों के माथे युद्ध न कर ५३।५४ हे कौरव! अपने और अपने भृत्यों के वीर्य्य के बल से रण में पार्थों को स्पर्द्धापूर्व्वक बुलाव तो सब प्रकार से क्षत्रिय हो ५५ क्योंकि जो पुरुष पराये वीर्य्य के भरोसे शत्रुओं को युद्ध करने को बुलाता है वह अशक्त कहाता व नपुंसकता ही ग्रहण करने को ऐसा काम करता है ५६ जो तुम दूसरों के वीर्य्य से अपने को बहुत मानते हो ऐसे अशक्त तुम कैसे हम लोगों के सामने गर्जते हो ५७ इसके पीछे कृष्णचन्द्रजी बोले कि हे उलूक! हमारा भी यह वचन दुर्य्योधन से कहना कि हे दुर्बुद्धिवाले! अब पुरुष हो प्रातःकाल अभी होगया समझ ले ५८ हे मूढ़! जो तू यह मानता है कि जनार्द्दन तो युद्ध करहींगे नहीं क्योंकि पार्थों ने केवल सारथ्य ही कर्म करने के लिये उनको ग्रहण किया है इसी से तू नहीं डरता ५९ परन्तु अन्तकाल में यह बात न होगी अन्त में तो सब राजाओं को हम ऐसा भस्म करेंगे जैसे शुष्क तृणों को प्रचण्ड अग्नि जलाता है ६० हां अभी तो युधिष्ठिरजी की आज्ञा से युद्ध करते हुए महात्मा अर्ज्जुन का सारथ्यकर्म उनकी प्रीति के लिये हम करेंगे ६१ परन्तु कल ॥

दो० यदि जैहहु तिहुँ लोक यदि, तुम पैठिहहु पताल।
तहँ तहँ अर्ज्जुन रथ खड़ो, देखिहहु प्रातःकाल ॥ १ । ६२ ॥
भीम वचन मानत मृषा, जो तुम मूढ़ बनाय।
सो दुश्शासन कर रुधिर, पियो गुनो सतिभाय ॥ २ । ६३ ॥
जो भाषत प्रतिकूल तुम, तुम्हें गिनत नहिं कोय।
पार्त्थ युधिष्ठिर भीम सह, देव नकुल जो होय ॥ ३ । ६४ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्विषष्ट्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १६२ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौतिरसठि का अध्याय।

दो० इकसै तिरसठवें महँ, जिमि अर्ज्जुन कौन्तेय।
द्रुपद विराट महीपहू, कह उलूक सों ज्ञेय ॥ १ ॥

सञ्जय फिर धृतराष्ट्रजी से बोले कि महायशस्वी भरतश्रेष्ठ अर्ज्जुनजी दुर्योधन के वचन सुन अतिलालनेत्रों से उलूक की ओर जोर से घोर दृष्टि कर फिर केशव भगवान् की ओर सुखपूर्व्वक देख अपना बड़ा भारी भुज उठाय उलूक से बोले कि १।२ जो पुरुष अपने वीर्य को पाय शत्रुओं को युद्ध करने के लिये स्पर्द्धा सहित बुलाता है फिर उनसे निर्भय होकर युद्ध करता है वह निश्चय पुरुष कहाता है ३ और जो पराये वीर्य्य को पाय स्पर्द्धासहित युद्ध करने को शत्रुओंको बुलाता है व आप युद्ध करने में अशक्त है वह केवल क्षत्रियों का नीच बन्धु कहाता पर कर्म्म से वह पुरुषाधम कहाता क्षत्रिय नहीं कहाता ४ सो तुम अन्य कर्णादिकों के वीर्य्य से अपना वीर्य्य मानते हो और आप खुद कुत्सितपुरुष हो औरों को कुत्सित वचन कह प्रचारणा चाहते हो ५ हे मूढ़! जो तुमने सब राजाओं में वृद्ध हितकारी जितेन्द्रिय महाप्राज्ञ भीष्मजी को मरने के लिये सबका सेनापति बनाय बकने का प्रारम्भ किया है ६ सो हे दुर्बुद्धे, कुलकलङ्क! वह तुम्हारा अभिप्राय हमने जाना कि पाण्डवलोग मारे दया के वृद्ध भीष्मजी को न मारेंगे ७ सो यह बात न होगी हे दुर्य्योधन! जिसके वीर्य्य को पाय तुम बकते हो सब धनुर्द्धरों के देखते ही देखते पहिले हम भीष्म ही को मारेंगे ८ हे उलूक! वहां जाय सब कौरवों के सामने दुर्य्योधन से कहना कि सव्यसाची अर्ज्जुन ने कहा है कि बहुत अच्छा रात्रि बीत जाने पर युद्ध होगा इसमें अन्तर न होगा ९ सत्यप्रतिज्ञ भीष्मजी जो कि अदीन पराक्रमी हैं उन्होंने जो तुम लोगों से कौरवों के मध्य में सबको हर्षित कराते हुए कहा है कि हम सृञ्जयों की सेना को व

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

शाल्ववंशियों की सेना को मार डालेंगे यह भार हमारे ऊपर आया और विना द्रोणाचार्य्य ही के हम अकेले ही लोकभर को मार सकते हैं इससे तुमको पाण्डवों से कुछ भय नहीं है इससे तुम्हीं को राज्य मिलेगा पाण्डव आपद्ग्रस्त ही बने रहेंगे इससे तुम अहङ्कार से पूर्ण हो अपना अनर्थ अपने में टिका नहीं देखते न उसको कुछ गिनते हो इससे हम तुम्हारे समूह में सबसे पहिले सबके सामने कुरुवृद्ध भीष्म ही को मारेंगे १०।१२ इससे सूर्य्योदय होने पर सेना युक्तध्वजी रथी कवची सत्यसन्ध भीष्म की रक्षा तुम सब लोग किये रहना क्योंकि तुम लोगों के देखते में बूड़ते हुए कौरवों के आधार भीष्मजी को हम रथ से भूमिपर बाणों से मार गिरावेंगे ॥ १३ ॥

दो० प्रातहोत निज बकन बच, जानहिंगे कुरुराज।
लखि मम शर के जालमहँ, फँसे पितामह आज ॥ १।१४ ॥

और क्रुद्ध भीमसेनजी ने जो सभा के मध्य में नीचपुरुष दुश्शासन तुम्हारे भाई को कहा है कि १५ अधर्म्मज्ञ, नित्यवैरी, दुर्बुद्धि व क्रूर कर्म्मकारी दुश्शासन का रुधिर हम पान करेंगे हे दुर्य्योधन! भीम की उस सत्यप्रतिज्ञा को बहुत ही शीघ्र तुम देखोगे १६ हे दुर्य्योधन! हमीं श्रेष्ठ हैं इसका जो तुमको अभिमान है व हम शत्रुओं का अनादर करसक्के इसका जो दर्प है क्रोध से जो जला करते हो व जो निष्ठुर वाक्य सदा बोला करते हो और स्नेह किसी का रखतेही नहीं इसकी निष्ठुरता तुम में है औरों का अपमान करते यह घमण्ड तुम में है व हमीं ज्ञाता शूरवीर हैं यह आत्मसम्भावना है १७ निर्दयत्व होने की नृशंसता व जो हमलोगों को विषदानादि किया उसकी तीक्ष्णता कपट से जुआ खेलाय जो विद्वेषण किया जब राज्य देने की प्रतिज्ञा की पर नहीं दिया यह अधर्म्म धर्म्मिष्ठ युधिष्ठिरजी में अधर्म्मिष्ठत्व का आरोपण करना कि तुममें बैडाल व्रत है यह अपवाद विदुरादिकों का अपमान यह वृद्धातिक्रमण १८ कर्णादिकों में

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जय की निश्चय यह दर्शन सेना की आधिक्य यह चक्र हम लोगों को दूर कर देना यह अपनय इतने सब दोष तुम में हैं इनका फल बहुत ही शीघ्र देखोगे १९ हे मूढ़, नराधम! वासुदेव को सहायक पाय हमारे क्रोध करने पर जीने में व राज्य पाने में तुमको किस हेतु से आशा है॥ २० ॥

दो० भीष्म द्रोण के शान्त पर, कर्ण निपाते जानि।
प्राण राज्य अरु पुत्र महँ, होहु निराश सग्लानि॥१।२१॥
निज भाइन अरुसुतन कर, सुनिके मरण कठोर।
भीमसेन सों निहत ह्वै, सुमिरहुगे अघ घोर॥ २ । २२॥

हे उलूक! हम और दूसरी प्रतिज्ञा नहीं जानते बस यह सत्य कहते हैं इससे सब यह सत्यही होगा २३ इसके पीछे युधिष्ठिरजी भी उलूक से यह वचन बोले कि हे तात, उलूक! दुर्य्योधन से जाय हमारा यह वचन कहना कि २४ अपने आचरण के समान हमारा आचरण तुम न जानो क्योंकि हम सत्य मिथ्या दोनों का अन्तर जानते हैं २५ इससे हम कीड़े च्यूँटी आदि का भी पाप करना नहीं चाहते फिर भाई सम्बन्धियों का वध कैसे चाहें २६ हे तात! इसी से हमने पहिले पांच ही ग्राम माँगे कि किसी प्रकार तुम निर्ब्बुद्धि का मरण हम अपने नेत्रों से न देखें २७ सो तुम काम से परीतात्मा हो मूढ़भाव से बकते हो और तुम्हारे हित के वचन वासुदेवजी ने कहे उनको भी तुम ग्रहण नहीं करते २८ इससे अब बहुत कहने से क्या है अपने भाई बन्धुओं समेत युद्ध करो हे उलूक! यह हमारा वचन हमसे वैर करनेवाले दुर्य्योधन से जाय कहना २९ कि हमने तुम्हारा वचन सुना व उसका अर्थ ग्रहण किया जो तुम्हारा मत है वैसा ही हो अच्छा युद्ध ही करो इसके पीछे भीमसेनजी फिर उलूक से बोले कि हे उलूक! दुर्म्मति, पापपुरुष, दुर्य्योधन से हमारा यह भी वचन कहना ३० जो कि बड़ा शठ, मिथ्यावादी, पापी सुयोधन है हमने यह प्रतिज्ञा की थी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कि या तो हम गृध्र के पेट ही में बसेंगे या हस्तिनापुर ही में बसेंगे इस बात की प्रतिज्ञा हमने सभा के मध्य में की थी ३१ । ३२ सो उसको हम सत्य ही करेंगे यह शपथ करके तुमसे कहते हैं कि दुश्शासन का रुधिर उसे मार ज़रूर पियेंगे ३३ हे दुर्योधन ! तुम्हारी चौहड़ी तोड़ व तुम्हारे सब सौ भाइयों को मार तब कल करेंगे क्योंकि धृतराष्ट्र के सब पुत्रों के मृत्युरूप हम हैं ३४ व तुम्हारे तथा तुम्हारे सब भाइयों के पुत्रों के मृत्यु अभिमन्यु हैं इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है हम अपने कर्म्म से तुमको प्रसन्न कर देंगे अभी और भी हमारा वचन सुनो ३५ हे दुर्य्योधन ! सब भाइयों समेत तुमको समर में मार महाराज युधिष्ठिरजी के देखते ही देखते तुम सबों के शिरों पर अपने पैर धरेंगे ३६ इसके पीछे नकुलजी उलूक से यह वचन बोले कि हे उलूक ! धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्य्योधन से हमारे वचन ऐसे कहना कि ३७ हे कौरव्य ! तुम्हारे सब वचन हमने यथातथ्य सुने इससे जैसा तुमने हमको कहला भेजा है सब वैसा ही करेंगे अन्तर न पड़ेगा ३८ फिर सहदेवजी ने कहा कि हमारा यह वचन कहना कि हे दुर्य्योधन ! तुम्हारी जो मति है वह मिथ्या होजायगी ३९ हे महाराज ! हम लोगों का यह क्लेश जो तुम बड़े हर्ष के साथ बार २ बकते हो उससे ज्ञाति बन्धु भाइयों समेत शोच करोगे ४० तब वृद्ध राजा विराट और द्रुपद दोनों सङ्ग ही बोले कि हे उलूक ! दुर्य्योधन से कहना कि जो हम दोनों को उन्होंने कहा है कि तुम दोनों बूढ़े अच्छे दास हो सो हम दोनों साधु युधिष्ठिरजी के दासभाव की प्रार्त्थना करते हैं कि इनके दास हों परन्तु तुम्हारे लिये दास अदास जो कुछ होंगे उसका पौरुष प्रातःकाल उसी रणभूमि में दिखावेंगे ४१ इसके पीछे शिखण्डी ने उलूक से यह वचन कहा कि हे उलूक ! सदा पाप में रत राजा दुर्य्योधन से आप हमारा यह सन्देश कहना कि ४२ हे राजन् ! रण में दारुण कर्म्म करते हमको तुम देखना कि जिसके वीर्य्य को पाय तुम समर में अपनी विजय

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

मानते हो उन तुम्हारे पितामह भीष्म को हम रण में रथ पर से गिरा देंगे क्योंकि हमको ब्रह्मा ने भीष्म के वध ही के लिये उत्पन्न किया है यह निश्चय जानो इससे सब धनुर्द्धरों के सामने हम भीष्म को मार ही डालेंगे इसमें कुछ भी अन्तर न पड़ेगा ४३। ४४ इसके पीछे धृष्टद्युम्न उलूक से यह बोले कि धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्य्योधन से हमारी ओर से कहना कि हम समर में भाई बन्धु समेत द्रोणाचार्य्य को मार डालेंगे ४५। ४६ जैसा हम कर्म्म करेंगे वैसा और कोई न करेगा बस इतने ही में जान लो फिर कारुण्य के अर्थ उलूक से धर्म्मराजजी बोले ४७ हे राजन्! हम नातवांत भाइयों का वध किसी प्रकार नहीं चाहते परन्तु हे दुर्ब्बुद्धे, दुर्य्योधन! यह सब तुम्हारे ही दोष से हुआ व होगा सो स्पष्ट ही है ४८ इससे अब अवश्य ही अपने पूर्व्वज पाण्डुजी का चरित जो कि द्रोण ने उनसे वैर किया था अब उनको मार उसको समाप्त करेंगे इससे हे उलूक, तात! यदि इच्छा हो तो अब जावो ४९ नहीं तो यहीं रहो हम भी तुम्हारे बान्धव हैं यह सुन उलूक धर्म्म के पुत्र युधिष्ठिरजी के ५० प्रणामकर व उनसे बिदा हो राजा दुर्य्योधन के समीप को चला गया व आय असहनशील दुर्य्योधन से अर्ज्जुन का सब सन्देश प्रत्युत्तर ज्यों का त्यों उसने वर्णन किया और वासुदेव भीमसेन युधिष्ठिर का भी पौरुष व वचन वर्णन किया ५१। ५२ नकुल, विराट, द्रुपद, सहदेव, शिखण्डी, धृष्टद्युम्न के वचन भी यथातथ्य उसने कहे॥ ५३॥

दो० केशव अर्ज्जुन के वचन, यथातथ्य सब भाष।
सुनि उलूक के वचन सब, दुर्य्योधन युतमाष॥ १। ५४॥
दुश्शासन कर्णरु शकुनि, सकलराज बलजौन।
बहुरि मित्रबल कहँ दई, आज्ञा मन में तौन॥ २। ५५॥
जिमि सूर्य्योदयसों प्रथम, सकल सेन चतुरङ्ग।
समर करन उद्यत रहै, करहु स्वई अब ढङ्ग॥ ३॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तब आज्ञा लहि कर्ण की, सकल दूत अतिवेग ।
ऊँट तुरग रथ पर चढ़े, सेनहिं गये अनेग ॥ ४ । ५६ ॥
आज्ञा दीनी सैन्य कहँ, अरुणोदय सों पूर्व ।
युद्ध योग है ताहि सों, उद्यत रहहु अपूर्व ॥ ५ । ५७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्रिषष्ठ्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १६३ ॥

एकसौचौंसठ का अध्याय ।

दो० इकसै चौंसठवें महँ, नृपति युधिष्ठिर आप ।
सेनाकरि सन्नद्ध तब, रणकहँ पठव सदाप ॥ १ ॥

सञ्जय बोले कि कुन्तीजी के पुत्र राजा युधिष्ठिरजी ने उलूक के वचन सुन धृष्टद्युम्न आदि संयुक्त सेना को युद्ध करने के लिये भेजा १ वह सेना पैदर, हाथी, रथ व घोड़ों से युक्त होने से चतुरङ्गिनी थी व पृथ्वी के समान किसी के कँपाने के योग्य नहीं २ भीमसेन अर्ज्जुनादि महारथों से रक्षित व धृष्टद्युम्न के अधीन और उमड़ेहुए समुद्र के समान भयङ्कर दिखाई देती ३ उस सेना के आगे महाधनुर्द्धर युद्ध में दुर्म्मद द्रुपदराज के पुत्र धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य्य के वध की इच्छा किये सैन्य को आगे बढ़ाते चले जाते ४ उन्होंने जिसमें जैसा बल था उसके अनुसार रथियों के भाग लगादिये जैसे कि अर्ज्जुन के भाग में कर्ण को किया व भीमसेन के भाग में दुर्य्योधन को ५ धृष्टकेतु के भाग में राजाशल्य को उत्तमौजा के भाग में गोतम को नकुल के भाग में अश्वत्थामा को सात्यकी के भाग में कृतवर्म्मा को ६ युयुधान नाम वृष्णिवंशीय के भाग में जयद्रथ को शिखण्डी के भाग में भीष्म को इस प्रकार कल्पना की ७ सहदेव के भाग में शकुनी को नियत किया चेकितान के भाग में शल को द्रौपदी के पांचों पुत्रों के भाग में त्रिगर्त्तों को सौंपा ८ अभिमन्यु के भाग में वृषसेन को और सब बाकी राजाओं को भी अभिमन्यु के इसी भाग में रक्खा क्योंकि अभिमन्य

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अर्ज्जुन से कुछ कम नहीं समझे गये ९ इन सबों के भाग से प्रयोजन यह है कि ये इनसे लड़ें इस प्रकार सबके भाग लगाय महासेनापति धृष्टद्युम्न ने अपने भाग में द्रोणाचार्य्य को कल्पित किया १० सेनापतियों के पति महाधनुर्द्धर धृष्टद्युम्न विधिपूर्व्वक सैन्यव्यूह बनाय युद्ध करने में मन लगाय जैसा चाहिये पाण्डवों की सातों अक्षौहिणी सेना को यथायोग्य भाग बांट आप पाण्डवों की जय के लिये समरभूमि में सेना ले रात्रि ही से जाय उपस्थित हुए ॥ ११ । १२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुष्षष्ट्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १६४ ॥

एकसौपैंसठ का अध्याय।

दो० इकसै पैंसठवें महँ, भीष्म कह्यहु रणधीर।
रथ अतिरथ अरु महारथ, द्विरथ आदि सब वीर॥ १ ॥

धृतराष्ट्रजी बोले कि हे सञ्जय ! जब अर्ज्जुन ने भीष्मजी के मार डालने की प्रतिज्ञा कर ली तब मन्द हमारे पुत्र दुर्य्योधनादिकों ने क्या किया ? १ हम अब वासुदेवसहाय सहित अर्ज्जुन से मारे ही हुए रण में भीष्मपितामह को देखते हैं किसी प्रकार नहीं बच सक्के २ फिर अपरिमितप्रज्ञ महाधनुर्द्धर वीरों के वीर अतिधीर भीष्मजी ने अर्ज्जुन के वचन सुन क्या कहा ? ३ और कौरवों के धुरन्धर महाबुद्धि पराक्रम भीष्मजी ने सेनापत्य पाय क्या किया ? सब हम से बताओ ४ वैशम्पायनजी जनमेजयजी से बोले कि जिस प्रकार कुरुवृद्ध भीष्मजी ने कहा सञ्जय ने धृतराष्ट्र से सब बताया ५ सञ्जय बोले कि शन्तनुजी के पुत्र भीष्मजी सेनापत्य को पाय दुर्य्योधन को हर्षित कराते हुए यह बोले ६ कि शक्कि हाथ में लिये देवताओं के सेनापति षडाननजी के नमस्कार कर दुर्य्योधन हम तुम्हारे सेनापति होंगे इसमें कुछ सन्देह नहीं है ७ क्योंकि हम सेनाकर्म्म में बड़े अभिज्ञ हैं व विविधप्रकार की व्यूहरचना में भी कुशल हैं व नौकरों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चाकरों तथा मित्रता से युद्ध में आये हुए लोगों से हमको कार्य्य अच्छी तरह करा आता है ८ हे महाराज ! शत्रु के ऊपर यात्रा करने में युद्ध करने में व मिलाप कर शान्त हो जाने में जो उपाय होते हैं वे सब हम ऐसे जानते हैं जैसे बृहस्पतिजी जानते हैं ९ फिर देवता मनुष्य गन्धर्व्वों के व्यूहों के आरम्भ हम सब जानते हैं उनसे पाण्डवों को मोहित कर देंगे अब इस विषय में तुम कुछ शोच न करो १० हे राजन् ! सो हम तुम्हारी सेना का पालन करते हुए शत्रुओं की सेना से युद्ध करेंगे सो भी ऐसा नहीं सब शास्त्रानुसार ही करेंगे अब तुम्हारे मन का ज्वर दूर हो ११ इतना सुन दुर्य्योधन ने कहा कि हे गाङ्गेय ! हम आपसे यह सत्य ही कहते हैं कि हमको देवताओं व दैत्यों के भी युद्ध में कुछ भय नहीं है १२ फिर जब कि महादुर्द्धर्ष आप सेनापत्य पर स्थित हैं और युद्ध करने में सदा प्रसन्न-चित्त पुरुषसिंह द्रोणाचार्य्य विद्यमान हैं तो कैसे भय हो सक्ती है १३ हे कुरुश्रेष्ठ ! जब पुरुषश्रेष्ठ आप दोनों टिके हैं तो निश्चय हमारी ही विजय होगी ऐसे अवसर में हमको देवताओं का भी राज्य मिलना दुर्लभ नहीं है १४ हे कौरव ! अब इस समय हम अपनी ओर व शत्रुओं की ओर के रथ, अतिरथ, महारथादि की संख्या जानना चाहते हैं १५ अपने व परायों की संख्या जानने में पितामह ही कुशल हैं इससे व इन सब राजाओं सहित हम रथादिकों की संख्या सुना चाहते हैं १६ यह सुन भीष्मजी बोले कि हे दुर्य्योधन, राजेन्द्र ! प्रथम अपनी सेना के रथों की संख्या सुनो जो कोई रथ हैं व जो अतिरथ हैं सबकी संख्या बताते हैं १७ तुम्हारी इस सेना में बहुत से सहस्रों अर्ब्बुदों रथ हैं उनकी संख्या हमसे सुनो १८ प्रथम तो अपने सौ भाई दुश्शासनादि समेत आप रथों में उदार हैं पर महारथों में नहीं १९ ये तुम सब प्रहार करने में कुशल हो और छेदन भेदन करने में चतुर रथ पर चढ़ हाथी पर चढ़ गदा भाला खड्ग ढाल बाँध चलाने में निपुण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हो २० सारथ्य कर्म्म में प्रहार करने में अस्त्रों की कुशलता में व भार-साधन करने में निपुण हो और बाणास्त्र में द्रोणाचार्य्य कृपाचार्य्य शरद्वत के शिष्य हो २१ ये सब युद्ध में बड़े दुर्मद पाञ्चाल देश-वालों को रण में मार डालेंगे क्योंकि ये सब धृतराष्ट्र के महामनस्वी पुत्र पाण्डवों के सङ्ग अपकार करते हैं तो पाञ्चालों की कौन गणना २२ और हम तो अपने गुण अपने मुख से कही नहीं सक्ते परन्तु तुमको हमारे गुण विदित ही हैं कहने की आवश्यकता ही नहीं और शस्त्र-धारियों में श्रेष्ठ कृतवर्म्मा भोजवंशीय अलबत्ता अतिरथ हैं २३ ये रण में तुम्हारे अर्थ की सिद्धि करेंगे इसमें संशय नहीं है, क्योंकि इनको कोई शस्त्रविद्या अच्छी तरह जाननेवाले भी कुछ नहीं कर सक्ते क्योंकि ये बड़ी दूर से ही शत्रुओं को नाशते हैं व इनके आयुध भी बड़े पुष्ट हैं २४ और मद्रदेश के राजा महाधनुर्द्धर शल्यजी हमारे मत से अतिरथ हैं ये पाण्डवों की सेना को ऐसे मारेंगे जैसे इन्द्रजी दानवों को मारते हैं २५ ये प्रत्येक रण में वासुदेव भगवान् की स्पर्द्धा करते हैं अपनी बहिन के पुत्र पाण्डवों से नहीं युद्ध किया चाहते पर औरों को तो मार ही डालेंगे ये अतिरथ हैं इसमें भी सन्देह नहीं है २६ फिर ये पाण्डवों में अपने भागिनेय नकुल सहदेव ही के सङ्ग न लड़ेंगे अन्य तीन महारथ पाण्डवों से भी युद्ध करेंगे समुद्र की लहरों के समान बाणों से शत्रुओं की सेना को डुबाते ही से लड़ेंगे और अस्त्रविद्या में बड़े चतुर भूरिश्रवाजी जो कि तुम्हारे हितकारी व सुहृद हैं वे भी अति-रथ हैं २७ और रथ यूथप महारथ लोगों के भी यूथप अतिरथ सोम-दत्तिजी शत्रुओं की सेना का बड़ा भारी नाश करेंगे ॥ २८ ॥

दो० द्विरथ जयद्रथ हैं सही, यामहिं नहिं सन्देह ।
यासों संयुग करहिंगे, रथ सत्तम करि नेह ॥ १ । २९ ॥
इन पावा दुख द्रौपदी, हरणमाहिं बहु भाँति ।
पाण्डवसों त्यहि सुमिरिनित, युद्धकरहिंगि निपाँति ॥ २ । ३० ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तपकरि इन लह वर महा, दुर्लभ औरन काहिं।
पाण्डव सन्मुख समर महँ, युद्ध करन शक नाहिं ॥ ३ । ३१ ॥
सो ये रथकेसरि स्वई, वैर सुमिरि रणमाहिं।
दुस्त्यजजीव विहायहू, पाण्डव सन लड़ि जाहिं ॥ ४ । ३२ ॥

इति श्रीमन्महाभारतेउद्योगपर्वणिरथातिरथसंख्यानेपञ्चषष्ट्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १६५॥

एकसौछांछठ का अध्याय।

दो० इकसै छाँसठयहुँ महँ, रथ अतिरथ व्याख्यान।
भीष्म सुयोधन सों कियो, सोई करत बखान ॥ १ ॥

भीष्मजी बोले कि काम्बोज देश का राजा सुदक्षिण एकरथ है यह तुम्हारी अर्थसिद्धि के लिये समर में शत्रुओं के सङ्ग युद्ध करेगा १ हे राजसत्तम ! इस रथसिंह का पराक्रम जो तुम्हारे अर्थ यह करेगा कुरुलोग इन्द्र के पराक्रम के समान देखेंगे २ हे महाराज ! रथसमूह में तीक्ष्णवेग से प्रहार करनेवाले इस राजा के काम्बोज देश के रहनेवालों की पाँति टीड़ियों के झुण्ड के समान है ३ व माहिष्मती नाम पुरी का वासी नीलरङ्ग के कवच बखतर आदि धारण किये नीलनाम वीर रथसमूह सहित शत्रुओं का नाश करेगा ४ इससे बहुत दिनों से सहदेव के साथ वैर है इससे यह तुम्हारे अर्थ अवश्य पाण्डवों से युद्ध करेगा ५ हे तात ! अवन्तीपुरी के राजा विन्द व अनुविन्द ये दोनों भी रथ हैं समर में बड़े कुशल व दृढ़वीर्य्य पराक्रम हैं ६ ये दोनों पुरुषसिंह तुम्हारे शत्रुओं की सेना का नाश कर देंगे क्योंकि गदा भाला खड्ग बाण तोमर आदि शस्त्र सदा धारण किये रहते हैं ७ ये क्रीड़ा करते हुए दो हाथियों के समान सदा समर में युद्ध की कामना किये रहते हैं और यूथ के मध्य में यमराज ही के समान विचरते हैं ८ व त्रिगर्त्त देश के राजा पाँचों भाई रथों में उदार हैं विराट के नगर में गोहरण के समय इनसे भी पाण्डवों से वैर हुआ है ९ ये लोग समर में पाण्डवों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

की सेना को ऐसे विदीर्ण कर देंगे जैसे महाप्रचरा वेगवाली गङ्गाजी को मगर लोग विदीर्ण कर देते हैं १० ये पाँचों रथ हैं इनमें पहिले का नाम सत्यरथ है ये पूर्व्व के वैर का स्मरण करते हुए अवश्य पाण्डवों से युद्ध करेंगे ११ क्योंकि भीमसेन के छोटे भाई अर्ज्जुन ने जब दिग्विजय की है तो इनका बड़ा अप्रिय किया है १२ इससे ये लोग पाण्डवों की सेना में जितने श्रेष्ठ होंगे सबों को ढूंढ़ २ मार डालेंगे १३ हे राजन् ! तुम्हारा पुत्र लक्ष्मण व दुश्शासन का भी लक्ष्मण नाम पुत्र ये दोनों पुरुषव्याघ्र संग्राम से कभी भगे नहीं १४ ये दोनों राजकुमार तरुणअवस्था को प्राप्त अति सुकुमार अति वेगवान् युद्धों की विशेषता जाननेवाले व सब प्रकार युद्धों के प्रेरक हैं १५ ये भी दोनों हमारे विचार से रथ हैं वरन रथसत्तम हैं व क्षत्रिय के धर्म्म में दोनों रत हैं इससे बड़ा भारी कर्म्म करेंगे १६ हे महाराज ! तुम्हारी सेना में एक दंडधार भी रथ है यह अपनी सेना ही से रक्षित तुम्हारे शत्रुओं से युद्ध करेगा १७ हे तात ! दक्षिण कोशला का राजा बृहद्बल भी रथ है जो कि महापराक्रमी है १८ यह बृहद्बल भी धृतराष्ट्र के पुत्रों के हित में तत्पर हो अपने बन्धुओं को हर्षित कराता हुआ पाण्डवों से अवश्य युद्ध करेगा १९ हे राजन् ! शारद्वत कृपाचार्य्यजी अतिरथ हैं ये अपने प्रिय पुत्रादि व प्राण छोड़ तुम्हारे शत्रुओं को भस्म करेंगे २० ये शरद्वान् महर्षि गौतमजी के शिष्य हैं और षडानन ही के समान जीतने के योग्य नहीं हैं क्योंकि ये भी पतावर के धूहा से मुनि के वीर्य्य से उत्पन्न हुए हैं ॥ २१ ॥

दो० विविधायुध कार्म्मुक धरे, विविध सेन चतुरङ्ग ।
पावक इव जारत समर, करिहैं युद्ध सुरङ्ग ॥ १ । २२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षट्षष्ट्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १६६ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौसरसठ का अध्याय।

दो० इकसौ सतसठवें महँ, पुनि गाङ्गेय महान।
दुर्य्योधन सों अतिरथहु, कहे सुशोधि विधान॥ १॥

भीष्मजी बोले कि हे राजन्! तुम्हारे मामा शकुनी भी एकरथ हैं ये भी पाण्डवों से वैर कर युद्ध करेंगे १ समर में पहुँचे पर इनकी सेना बड़ी दुर्द्धर्ष हो जाती है क्योंकि वेग में तो पवन ही के समान चलती और नाना प्रकार के विकृत आयुध धारण किये है २ व ये द्रोणाचार्य्य के पुत्र महाधनुर्द्धर समर में चित्र विचित्र युद्ध करनेवाले दृढ़ अस्त्रसंयुक्त अश्वत्थामा महारथ हैं इससे सब धनुर्द्धरों से चित्र विचित्र युद्ध करेंगे ३ हे महाराज! जैसे अर्ज्जुन के चलाये बाण महाविकराल चलते हैं वैसे ही इन अश्वत्थामा के भी धनुष से छूटे हुए बाण एक ही में मिले हुए चलते हैं ४ व इन महावीर रथसत्तम की संख्या हम नहीं कर सक्ते क्योंकि ये महारथ जो इच्छा करें तो तीनों लोकों को भी भस्म कर डालें ५ क्रोध तेज तो इन्होंने तपस्या से इकट्ठा किया है, फिर अपने घर ही में रहनेवाले द्रोणाचार्य्यजी ने दिव्यअस्त्र पढ़ाय अनुग्रह किया है इससे इनकी बड़ी उदारमति है ६ परन्तु हे महाराज! इनमें एक बड़ा भारी दोष भी है जिससे हमारे मत से ये न रथ ही हैं न महारथ ही ७ वह दोष यह है कि इनको अपने प्राण बहुत ही प्रिय हैं इससे ये द्विजोत्तम सदा आयुर्बल की कामना किये रहते हैं नहीं तो इनके समान दोनों सेनाओं में कोई भी नहीं है ८ सामर्थ्य तो इनमें ऐसी है कि ये अकेले ही देवताओं की भी सेना को मार डालें व अपने हाथ पटकने के शब्द से पर्व्वतों को भी फोर डालें ९ कहाँ तक कहें इन वीर के गुण तो असंख्येय हैं शत्रुओं के वध करने में तो इनकी महादारुण दीप्ति हो जाती है ये तो दूसरे यमराज ही हैं मानो हाथ से दण्ड लिये प्रजानाश के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लिये फिरते हैं इससे ये शत्रुसेना में काल ही के समान अपना प्रचार करेंगे १० क्रोध करने पर तो ये प्रलय के अग्नि ही के समान हो जाते हैं इनकी ग्रीवा सिंह की सी है व महातेजस्वी हैं हमको ऐसा जान पड़ता है कि युद्ध में जो कुछ शेष रहेगा सबका नाश यही करेंगे ११ व इनके पिताजी तो वृद्ध भी हैं तो भी लक्षों ज्वान वीरों से श्रेष्ठ हैं वे रण में महाकर्म करेंगे इसमें हमको कुछ भी सन्देह नहीं है १२ ये तो अस्त्रवेग पवन से प्रेरित हो सेना शुष्क तृण के ईंधन से प्रचण्ड हो रण में अग्नि के समान पाण्डवों की सेनाओं को भस्म कर देंगे १३ ये तो यूथों के यूथपों के यूथों के भी यूथप नरश्रेष्ठ हैं क्योंकि भरद्वाजजी के पुत्र हैं इससे तुम्हारा पूरा हित करने के लिये अतितीव्र कर्म्म करेंगे १४ ये वृद्ध द्रोणाचार्य्यजी सब क्षत्रियों के गुरु व आचार्य हैं इससे सब सृञ्जयवंशियों का अन्त कर देंगे परन्तु इनको अर्ज्जुन सबसे अधिक प्रिय हैं १५ इससे ये महाधनुर्द्धरजी सरलता से ही सब रणकर्म्म करनेवाले अर्ज्जुन को कभी न मारेंगे चाहे जो हो क्योंकि उनके गुणों से ये ऐसे जीत लिये गये हैं कि अर्ज्जुन को ही अपना अतिप्रकाशित आचार्य्य समझते हैं १६ व इसी से सदा विस्तारसहित गुणों से सदा अर्ज्जुन ही की प्रशंसा करते हैं बहुत कौन कहै ये अर्ज्जुन को अपने पुत्र अश्वत्थामा से भी अधिक समझते देखते हैं १७ ये तो ऐसे हैं कि जो इनके सामने देवता गन्धर्व मनुष्य सब एकत्र हो एक ही साथ आवें तो अकेले ही उन सबों को मार डालें ऐसे प्रताप-वान् हैं १८ हे राजन्! राजशार्दूल पौरव धृतराष्ट्रजी भी महारथ हैं इससे शत्रु की ओर के वीरों के रथों के तोड़नेवाले हैं १९ और अपनी बड़ी भारी सेना से ही तपते हुए शत्रु की सेना को भस्म करेंगे व पाञ्चालदेश के वीरों को तो ऐसे जलावेंगे जैसे अग्नि सूखे तृण को भस्म करता है २० व अति बलवान् सत्यश्रवा भी एक रथ है वह भी तुम्हारे शत्रु की सेना में कालसमान सबको भक्षण करेगा २१

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हे राजेन्द्र ! इनके योधा चित्र-विचित्र रथ आयुधादि रखते हैं इससे वे संग्राम में तुम्हारे वैरियों की सेना को मारते हुए बिचरेंगे २२ कर्ण का पुत्र वृषसेन भी महारथ है यह भी बलवानों में बलवान् है व तुम्हारे रिपुओं की सेना को भस्म करेगा २३ हे राजन् ! जलसन्ध नाम वीर भी रथवर है ये भी समर में तुम्हारे लिये अपने प्राण छोड़ेंगे २४ यह योधा हाथी पर व रथ पर सवार होकर शत्रु की सेना को नाश करता हुआ संग्राम में युद्ध करेगा २५ हे राजसत्तम ! यह भी हमारे मत से रथ है महारण में तुम्हारे अर्थ सेना सहित प्राण छोड़ने पर उद्यत है २६ यह विक्रान्त योधी व चित्रविचित्र युद्ध करनेवाला भी है और संग्राम में जानो किसी को डरता तो हई नहीं इससे तुम्हारे शत्रुओं के सङ्ग युद्ध करेगा २७ व हे राजन् ! हमारे मत से समर में से कभी न लौटने-वाले राजा बाह्लीकजी अतिरथ हैं युद्ध में ऐसे शूर हैं कि मानो दूसरे यमराज ही हैं २८ हे राजन् ! ये समर में पहुँच फिर खाली नहीं लौटते जैसे पहुँचे कि रण में शत्रुओं को मारा २९ हे महाराज ! सत्यवान् नाम तुम्हारे सेनापति महारथ हैं रणों में अद्भुत कर्म्म करते व आप रथ पर चढ़ पररथों को भञ्जन करते हैं ३० इनको समर देख कभी व्यथा होती ही नहीं ये शत्रुओं को रथों पर चढ़े देख बड़े हर्ष से उछल उन्हीं के पास पहुँच जाते हैं ३१ ये शत्रुओं के ऊपर बड़ा विक्रम करते और सब कर्म्म सत्पुरुषों के योग्य ही करते इससे तुम्हारे अर्थ संग्राम में महाकर्म्म करेंगे ३२ और यह अलम्बुस नाम राक्षसेन्द्र बड़ा क्रूर कर्म्मकारी है यह भी हमारे मत से महारथ है इससे हे राजन् ! पूर्व के वैर का स्मरण करता हुआ रण में शत्रुओं को मारेगा ३३ यह राक्षसों की सब सैन्यों का रथसत्तम है मायावी और दृढ़ वैर है इससे समर में विचरेगा ३४ व प्राग्ज्योतिष देश का राजा भगदत्त वीर बड़ा प्रतापी है यह भी रथों में विशारद है व गज अंकुश धरनेवालों में श्रेष्ठ है ३५ इस भगदत्त से बहुत दिनों तक एक समय अर्ज्जुन से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

युद्ध भी हुआ है दोनों परस्पर अपनी २ विजय चाहते थे ३६ तिसके पीछे अर्ज्जुन को इन्होंने अपना सखा मान उनके सङ्ग मैत्री कर ली ॥ ३७ ॥

दो० ये गज पर असवार हैं, युद्ध करहिंगे घोर ।
जिमि सुरपति ऐरावतहि, चढ़ि रण करत न थोर ॥ १।३८ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि रथातिरथसंख्यायांसप्तषष्ट्यधिकशततमोऽध्यायः १६७॥

एकसौअरसठ का अध्याय ।

दो० इकसै अरसठवें महैं, भीष्म रथाति रथादि ।
वर्णयौं वादविवाद करि, कर्ण सङ्गयुत नादि ॥ १ ॥

भीष्मजी बोले कि अचल वृषक ये दोनों भाई तुम्हारी सेना में रथ हैं और दोनों बड़े दुराधर्ष हैं इससे शत्रुओं का विध्वंस करेंगे १ क्योंकि ये दोनों नरव्याघ्र, बलवान्, दृढ़ क्रोधी, प्रहारी, तरुण अवस्था को प्राप्त दर्शनीयरूप व महाबली हैं २ हे राजन्! और यह तुम्हारा सखा नित्य प्रिय रण में बड़ाकर्कश कर्ण है जोकि तुमको सदा पाण्डवों के साथ वैर करने के लिये प्रचारा करता है और उत्साहित कराता है ३ यह नीच पुरुष केवल बकना ही बकना जानता है परन्तु तुम्हारा तो यही मन्त्री व प्रेरक भाई बन्धु है पर बड़ा मानी उन्मत्त है ४ यह सूर्य्य का पुत्र कर्ण न रथ है न महारथ क्योंकि इसका जब जन्म हुआ था तो कवचादि धारण किये था पर पीछे से उन कवचादिकों से रहित हो गया व बड़ा भारी मूर्ख है ५ जब जन्म हुआ था तो गर्भ ही से कुण्डल भी पहिने था परन्तु कुण्डलों से भी हीन हो गया और सब की सदा निन्दा ही किया करता है और ब्राह्मणों में श्रेष्ठ परशुरामजी के शाप से व जन्म के साथ के कवच कुण्डलादि कर्णों से रहित होने से यह अर्द्ध रथ अलबत्ता हो सक्ता है इससे जब यह अर्ज्जुन के सामने जायगा तो फिर जीता न छूटेगा ६ । ७ यह सुन द्रोणाचार्य्यजी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भी बोले कि जो सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ हैं कहा यह ऐसा ही है जैसा कि आप कहते हो इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ८ यह रण में तो अभिमान करता और विजयी कहीं नहीं होता निन्दा जानो सबकी करता ही है व जिस बात को कहने लगता कुछ पै कुछ भूल ज़रूर जाता है इत्यादि बातों से हमारे मत से भी कर्ण अर्द्धरथ ही है इसमें कुछ भी अन्तर नहीं है ९ यह वचन सुन कर्ण मारे क्रोध के नेत्र निकाल वचनों से व्यथित कराता हुआ भीष्मजी से बोला १० हे पितामह ! यथेष्ट वचनबाणों से सदा हम निरपराधी को काटते रहते हो सो वैर ही से वारंवार ऐसा करते हो कुछ विचार से नहीं ११ हम तुम्हारी सब बातें दुर्य्योधन के लिये सहा करते हैं और तुम तो सदा मन्द ही समझते हो जैसे कोई कुत्सित नीच पुरुष को समझे १२ आप हमको अर्द्धरथ बताते हैं तो अब सब जगत् भर अर्द्धरथ ही मानेगा क्योंकि सब यही कहेंगे कि भीष्मजी मिथ्या न कहेंगे जो उनके विचार में आया वही ठीक है १३ देखो आप ही के कहने से अभी द्रोणाचार्य्यजी ने भी हमको अर्द्धरथ ही कहा पर राजा आपको यह नहीं जानते कि ये कौरवों के अहित हैं यदि आप दोनों जने कौरवों के अहित न होते तो भला उदारकर्म्म करनेवाले समान राजाओं में ऐसा तेजोवध क्यों करते जो समर में भेद कराने की इच्छा न होती १४ जैसा तुम गुण के विद्वेष से अप्रीत करना चाहते हो परन्तु हे कौरव ! क्षत्रियों में महारथ न बहुत वर्षों के होजाने से होता है न बार पकने दाँत आदि गिरने से वृद्ध हो जाने पर न बहुत धन से न बहुत नातवाँत होने से १५ किन्तु क्षत्रिय बल से ज्येष्ठ कहाता है व ब्राह्मण लोग वेद शास्त्र पढ़ने से ज्येष्ठ होते हैं १६ वैश्य लोग धन से ज्येष्ठ माने जाते और शूद्र लोग अवस्था से ज्येष्ठ माने जाते हैं और ये भीष्म तो अपने मनमाना जिसको चाहते रथ कह देते जिसको चाहते अतिरथ कह देते हैं १७ आप काम व द्वेष से संयुक्त

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हो मोह से भेद करते हैं इससे हे महाबाहो, दुर्य्योधन ! आप अच्छी तरह देखभाल विचार करें १८ दुष्ट भाव इन भीष्म को तुम त्यागो क्योंकि ये तुम्हारा पाप ही करते हैं जब सेना भिन्न हो जाती है तो बड़े दुःख से फिर इकट्ठी होती है १९ जो परम्परा से एक में चले आते हैं वे जब किसी कारण से भिन्न होजाते हैं तो बड़े दुःख से फिर इकट्ठे होते हैं व जो पृथक् पृथक् कार्य्य किया चाहते उनको क्या कहना उनका इकट्ठा करना तो बहुत ही कठिन हो जाता है २० हे भारत ! इस युद्ध में योधाओं में द्विविधा हो गया क्योंकि देखो हमारे तेज का नाश ये भीष्म प्रत्यक्ष ही में करते हैं २१ कहां रथों का जानना कहाँ अल्प प्राणी भीष्म ये क्या जानें हम अकेले पाण्डवों की सेनाओं को रोंकेंगे २२ पाञ्चाल देश निवासियों सहित पाण्डव लोग हमको रण में पाय दशों दिशाओं को ऐसे भगेंगे जैसे सिंह को देख बैल भगते हैं २३ कहाँ युद्ध व घमासान की लड़ाई और कहाँ सलाह में अच्छे विचारपूर्वक वचनों का कहना महा जर्ज्जर जिनकी आयु बनाय खुँटा गई है मन्दात्मा काल प्रेरित भीष्म भला ये इस विषय को क्या जानें २४ जो कि अकेले ही सब जगत् भर से वैर करना चाहते व और किसी को पुरुष मानते ही नहीं व अपना दर्शन विफल है उसे नहीं जानते ऐसे मिथ्याभिमानी हैं २५ शास्त्र की आज्ञा है कि वृद्धों के वचन सुनने चाहियें परन्तु अति वृद्धों के न सुनने मानने चाहियें क्योंकि अति वृद्धों की बुद्धि फिर बालकों की सी हो जाती है २६ हे राजशार्दूल ! हम अकेले तो पाण्डवों की सेना को मारेंगे और यश भीष्म का होगा क्योंकि महासेनापति तुमने इन्हीं को बनाया है २७ इससे यश सेनापति ही का होता है योधों का किसी प्रकार नहीं होता २८ इसलिये जब तक भीष्म जीते रहेंगे तब तक हम किसी प्रकार से युद्ध न करेंगे जब भीष्म मार डाले जायँगे तो फिर अलबत्ता सब महारथों के सङ्ग युद्ध करेंगे २९ यह सुन भीष्म-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पितामहजी बोले कि हे सूतपुत्र, कर्ण! दुर्य्योधन के युद्ध का यह सागर के समान बड़ा भारी भार जो बहुत वर्षों से हमारे माथे विचारा गया है अब उस लोमहर्षण युद्ध का बनाय निकट समय आ गया है उसमें हमको आपस में भेद न डालना चाहिये इससे तू जीता बचता है ३०। ३१ नहीं तो हम बनाय जर्ज्जर वृद्ध भी हो गये हैं तो भी तुझ छोकड़े की युद्ध करने की श्रद्धा व प्राण रखने की भी श्रद्धा अभी काट डालें इसमें कुछ भी अन्तर न परै ३२ क्योंकि महाअस्त्र चलाते हुए परशुरामजी हमारे शरीर में कुछ व्यथा न कर सके तो तू हमारा क्या कर सक्ता है ३३ यद्यपि पण्डित लोग अपने बल की प्रशंसा अपने ही मुख से करने की बड़ाई नहीं करते परन्तु हे कुलनाशक, दुराचारी, नीच! क्या करें अब बनाय सन्तप्त होकर हमको अपने बल के समाचार कहने ही परे इससे कहहींगे ३४ सुन पृथ्वीमण्डल भर के सब बड़े २ क्षत्रिय काशिराज के स्वयंवर में विद्यमान थे उन सबों को हम अकेले ही जीत तीन कन्या हर लाये ३५ ऐसे सहस्रों वीरों को व इनसे विशेष सैकरों को समरभूमि में जहां कहीं हुआ है हमने अकेले ही ध्वस्त कर दिया है ३६ और तेरे ही कारण कौरवों के ऊपर यह बड़ाभारी अन्याय व विपत्ति आय परी है जोकि नाश किया चाहता है अब जो कुछ पुरुषार्त्थ हो तो इसके मिटाने में यत्न कर ३७ हे दुष्ट! जिन अर्ज्जुन से प्रतिदिन स्पर्द्धा करता है उन से समर में युद्ध कर हम तुझको इस युद्ध से भगा हुआ व प्राण त्यागे हुआ देखेंगे ३८ इतना सुन प्रतापी राजा दुर्य्योधन बोले कि हे पितामहजी! आप हमारी ओर दृष्टि करें क्योंकि बड़ा भारी कार्य्य आन परा है ३९ इससे एकाग्र हो दोनों जने आप हमारे परम कल्याण की चिन्तना कीजिये क्योंकि आप ही दोनों हमारा बड़ा काम करेंगे ४० अब हम फिर यह सुना चाहते हैं कि हमारे शत्रुओं की सेनाओं में कौन २ रथसत्तम हैं व कौन २ अतिरथ

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हैं व कौन २ रथयूथप के यूथप हैं अर्थात् महारथ अतिरथा से भी अधिक हैं ॥ ४१ ॥

दो० होत भोर होइहि महा, रण यासों रिपु सेन।
सुना चहत बल अबल सब, तदनुकूल रण देन ॥ १ । ४२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि भीष्मकर्णकलहेऽष्टषष्ट्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १६८ ॥

एकसौउनहत्तर का अध्याय।

दो० इकसै उनहत्तर महैं, भाष्यहु भीष्म विचारि।
रथ अतिरथ महरथ सकल, पाण्डव सैन्य मँझारि ॥ १ ॥

भीष्मजी बोले कि हे राजन्! तुम्हारी सेना के इतने रथ अतिरथ व अर्द्धरथ जो हैं सब तुमसे बताये अब पाण्डवों की सेना के रथादि सुनिये १ हे राजन्! जो सुनने की तुमको इच्छा है तो इन राजाओं सहित तुम रथों की संख्या पहिले सुनो २ प्रथम तो राजा युधिष्ठिर आप ही रथों में उदार हैं इससे समर में अग्नि के समान भक्षण करेंगे इसमें कुछ सन्देह ही नहीं और हे राजन्! भीमसेन तो अठगुने रथ हैं क्योंकि उनके समान दूसरा न गदायुद्ध ही में कोई है न बाण युद्ध ही में ३ । ४ दश सहस्र हाथियों का तो जानों उनके मुख्य बल ही ठहरा फिर मानी जानों बड़े ही हैं इससे वे तेज से मनुष्य नहीं हैं और माद्री के दोनों पुत्र पुरुषश्रेष्ठ रथी हैं ५ रूप व तेज से दोनों अश्विनीकुमार ही के समान हैं ये जब सेना के सामने आवेंगे तो जो जो क्लेश उनको हुए हैं उनको स्मरण करते हुए ६ तुम्हारी सेना में सब पाण्डव लोग रुद्र के समान भक्षण करते हुए विचरेंगे सबके सब महात्मा हैं सब सांखू के खम्भा के समान उत्पन्न हैं ७ और पुरुषों से उँचाई में बीता भर लम्बे अधिक हैं व सब पाण्डुपुत्रों की देह सिंहों की देहों के समान पुष्ट है महाबली जानों सबके सब हुई हैं ८ आचार से सबके सब ब्रह्मचारी ही हैं व सब तपस्वी हैं लज्जावान्

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सबके सब हैं और व्याघ्रों के ही समान बल में उत्कट हैं ६ वेग में प्रहार करने में व सम्मर्द्दन करने में सबके सब अति मानुष ही हैं और दिग्विजय में उन्होंने सब राजाओं की पूजा शस्त्रास्त्रों के पुष्पाक्षत बनाय अच्छी तरह से की है १० इन पाण्डवों के आयुध गदा व बाणों को कोई पुरुष उठा नहीं सक्के न धनुष आदि की प्रत्यञ्चा ही चढ़ा सक्के हैं न उनका वेग ही सह सक्के हैं फिर जब वे लोग बालक थे तभी गदा उछालते बाणों को चलाते जल के भीतर की वस्तु में निशाना मारते कुटिलता का युद्ध करते मूकों से मार कूट डारते ११ । १२ तुम लोगों से विशेष तो बाल्यावस्था ही में वे थे फिर इस सेना में जब आवेंगे तो सब अपनी उत्कटता दिखावेंगे १३ और तुम लोगों को तो देखते ही देखते विध्वंस कर देंगे इससे देखना उनके सङ्ग युद्ध न करना वे पांचो अकेले २ तुम्हारे सब राजाओं को मार सकेंगे १४ सो कुछ यह बात छिपी नहीं राजसूय यज्ञ में तुम्हारे सामने ही सब हुआ है कि जो जिस दिशा को गया जीत ही कर लौटा फिर अब तो द्रौपदी के परिक्लेश जुआ खेलने के समय के तुम लोगों के कठोर वचनों का स्मरण करते हुए १५ तुम्हारी सेना में प्रलय के समय के रुद्र ही के समान भक्षण करते हुए विचरेंगे फिर उनमें अरुणनयन अर्ज्जुनजी जिनके सहाय नारायण श्रीकृष्णचन्द्रजी हैं १६ उनके समान वीर तो दोनों सेनाओं में कोई हई नहीं फिर यह नहीं कि इन्हीं दोनों सेनाओं में ही कोई उनके तुल्य नहीं किन्तु आगे देवता गन्धर्व मनुष्यों में भी कोई इनके समान न था न अब है १७ फिर राक्षस यक्ष नागों में भी नहीं है तो मनुष्यों में उनके समान कहां से कोई आवे हमने तो अर्ज्जुन के समान भूत वर्त्तमान भविष्यत कोई शूर सुना ही नहीं १८ हे महाराज ! धीमान् पार्थ की सब सामग्री ही वैसी इकट्ठी हो गई है कि रथ उस प्रकार का अद्भुत, वासुदेव भगवान् सारथि व अर्ज्जुन वीर योधा १९ दिव्य गाण्डीव धनुष, वायुवेग

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चारों घोड़े, अभेद्य दिव्य कवच, बाण से सदा भरेहुए दो तरकस २० फिर अस्त्रों का तो जानों समूहही वहां विद्यमान है जैसे माहेन्द्र, रौद्र, कौबेर, याम्य, वरुण इत्यादि फिर गदायें जानों उग्र ही दिखाई देती हैं २१ वज्रादि मुख्य २ नाना प्रकार के आयुध व हिरण्यपुरवासी हज़ारों दानवों को जिन अर्ज्जुनजी ने अकेले ही जाय मारा तिनके सामने कौन वीर होगा २२ ये तो जो कोप करें तो तुम्हारी तो सब सेना मार डालें और अपनी सेना का पालन भी किये रहैं सौ बात की एक बात कि यातो हम अर्ज्जुन के सामने कुछ २ समर में जाय सक्के हैं व द्रोणाचार्य्यजी २३।२४ और तीसरा दोनों सेनाओं में ऐसा कोई नहीं जो सामने एकबार भी अर्ज्जुन के समर में खड़ा हो जो समर में बाणों की वर्षा करते हुए अर्ज्जुनजी के सामने खड़ा हो २५ पर बड़े सोच की बात यह है कि प्रचण्डपवन से प्रेरित बादर के समान गर्ज्जते वर्षते तरुणावस्था को प्राप्त वासुदेवजी की सहायता पाये अर्ज्जुन हैं और हम व द्रोणाचार्य्य महावृद्ध हैं २६ वैशम्पायनजी बोले कि॥

दो० भीष्म वचन इमि सुनि सकल, नृपनकेर करकाप।
पुरटाङ्गद धरपीन अरु, चन्दन युत हतथाप॥१।२७॥
पूर्व्व पराक्रम सुमिरि तिन, जनु देखा प्रत्यक्ष।
थरथर कांपे सकल नृप, लखि निज प्रबल विपक्ष॥२।२८॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकोनसप्तत्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १६९॥

एकसौसत्तर का अध्याय।

दो० इकसै सत्तरवें महँ, पुनि पाण्डव के वीर।
कियो भीष्म वर्णन स्वई, वर्णन करत गँभीर॥ १॥

भीष्मजी बोले कि, हे महाराज! द्रौपदी के पांचोपुत्र महारथ हैं व राजा विराट के पुत्र उत्तर भी हमारे मत से रथों में उदार हैं १ और महाबाहु अभिमन्यु तो रथों के यूथपों के यूथप हैं ये तो समर में अर्ज्जुन

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

और वासुदेव दोनों के समान हैं २ एक तो बहुत वेग से इनके हाथ चलते फिर चित्रविचित्र युद्ध करते मनस्वी जानों सिंह ही के समान हैं व दृढ़ प्रतिज्ञ हैं इससे अपने पिता के क्लेशों का स्मरण करते हुए अवश्य विक्रम करेंगे ३ मधुवंशीय सात्यकी भी रथों के यूथों के यूथपों के भी यूथप हैं ये कृतवर्म्मादि वृष्णिवंशीय जो तुम्हारी ओर हैं उन सबों के असहनशील हैं और भय को तो जानों जीते ही हैं ४ उत्तमौजा नाम वीर भी हमारी जान रथों में उदार हैं और बड़े विक्रमी युधामन्यु भी हमारे मत से रथोदार हैं ५ इन सब लोगों के बहुत सहस्र रथ हाथी घोड़े पैदर हैं वे सब युधिष्ठिरजी का प्रिय करने के लिये अपने प्राण छोड़कर भी युद्ध करेंगे ६ हे राजेन्द्र ! ये लोग पाण्डवों के साथ तुम्हारी सेनाओं में अग्नि व पवन के समान परस्पर स्पर्द्धा करेंगे ७ विराट व राजाद्रुपद जो कि अतिवृद्ध हैं ये दोनों महारथ हैं और महावीर्य्य पराक्रमी होने के कारण अजेय हैं ८ यद्यपि ये दोनों वृद्ध हैं तथापि क्षत्रियों के धर्म्म में ऐसे परायण हैं कि वीरमार्ग्ग में टिक अपनी शक्ति भर बड़ा यत्न करेंगे ९ एक तो ये दोनों महाराज युधिष्ठिरजी के सम्बन्धी हैं फिर वीर्य्य बल दोनों से श्रेष्ठ व्रत धारण किये हैं और स्नेहवीर्य्य में दोनों बँधे हैं १० हे कुरुपुङ्गव ! महाभुज व शूरवीर पुरुष कारण पाय सब लोग शूर व कातर हो जाते हैं ११ ये दोनों दृढ़ विक्रमी राजा अपने प्राण त्याग करके भी चेष्टा करते हैं १२ ये दोनों एक २ अक्षौहिणी सेना से सम्बन्धी के भाव की रक्षा करते हुए महाकर्म करेंगे १३ लोक में बड़े धनुर्द्धर ये दोनों वीर भी विश्वास की रक्षा करते हैं ॥ १४ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १७० ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौइकहत्तर का अध्याय।

दो० इकसै इकहत्तर महँ, पुनि गाङ्गेय महान।
कीन्ह पाण्डवन के महा, रथ रथ आदि बखान ॥ १ ॥

भीष्मजी बोले कि हे भारत! पाञ्चाल देश के राजा के पुत्र शत्रुपुर जीतने वाले शिखण्डी हमारे मत से पाण्डवों के रथ मुख्य हैं १ ये तुम्हारी सेना को विद्रावित कराते हुए व परम यश प्रकाशित कराते अवश्य संग्राम में युद्ध करेंगे २ इनके पाञ्चाल प्रभद्रक आदि बड़ी भारी सेना है उस अपनी सैन्य से ये बड़ा भारी कर्म्म करेंगे ३ और जो सब पाण्डवों की सेना भर के सेनानी धृष्टद्युम्न हैं जो कि द्रोणाचार्य्यजी के शिष्य हैं वे तो हमारे मत से अतिरथ हैं ४ ये रण में शत्रुओं को नाशते हुए ऐसा युद्ध करेंगे जैसे भगवान् महादेवजी प्रलय के समय प्रजाओं का संहार करते हैं ५ रण के प्रिय लोग कहते हैं कि इनकी सेना का समूह बहुत होने के कारण महासागर ही के समान है जैसे देवासुर संग्राम में देवताओं की सेना थी ६ व धृष्टद्युम्न का पुत्र क्षत्रधर्मा हमारे मत से अर्द्धरथ है क्योंकि बाल्यावस्था के कारण उसने बहुत श्रम धनुर्विद्या सीखने में नहीं किया ७ व पाण्डवों के सम्बन्धी चँदेली के राजा शिशुपाल का पुत्र धृष्टकेतु हमारे मत से महारथ है इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ८ यह चँदेली का राजा अपने पुत्र सहित महारथ लोगों के करने के योग्य ही कर्म्म करेगा ९ क्षत्रधर्मा तो हमारे मत से शत्रुओं के पुरों के जीतनेवाला है व क्षत्रदेव तो पाण्डवों में रथोत्तम है १० जयन्त, अमितौजा व सत्यजित् ये तीनों पाञ्चाल राजकुमार बड़े महात्मा महारथ हैं ११ ये समय में क्रोध किये हाथियों के ही समान युद्ध करेंगे व अज, भोज ये दोनों बड़े पराक्रमी महारथ १२ पाण्डवों के अर्थ बड़ा युद्ध करेंगे व अपनी शक्ति भर बड़ी सामर्थ्य दिखावेंगे क्योंकि ये दोनों बड़े जल्दबाज

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

चित्र विचित्र युद्ध करनेवाले कुशल व दृढ़ विक्रम हैं १३ व केकय देश के राजा के पांचो पुत्र बड़े दृढ़विक्रम व सब लाल चन्दन लगाये रथोत्तम हैं १४ व काशिक, सुकुमार, नील, सूर्य्यदत्त, शङ्ख, मदिराश्व के नाम से प्रसिद्ध हैं १५ व सब रथोदार हैं व सबों के संग्राम के लक्षण हैं व सब अस्त्र विद्याओं के विद्वान् हैं सब महात्मा हैं १६ हे महाराज ! वार्द्धक्षेमि राजा भी हमारे मत से महारथ है व चित्रायुध नाम राजा हमारे मत से रथसत्तम है १७ यह राजा संग्राम में शोभित होता व अर्ज्जुन का बड़ा भारी भक्त भी है चेकितान व सत्यधृति पाण्डवों के महारथ हैं ये दोनों पुरुषसिंह हमारे मत से रथोत्तम हैं १८ व्याघ्रदत्त व चन्द्रसेन ये दोनों राजा पाण्डवों के रथोदार हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं १९ सेनाबिन्दु व क्रोधहन्ता ये दोनों राजा वासुदेव व भीमसेन ही के समान हैं २० वे विक्रम कर तुम्हारे सैनिकों से युद्ध करेंगे जैसे आप हमको द्रोणाचार्य्य को व कृपाचार्य्य को मानते हो ऐसे ही उन समर में प्रशंसनीय को जानो वैसा ही राजा काश्य भी समर में प्रशंसा करने के योग्य हैं २१ । २२ ये काश्य एक गुण रथ हैं व समर में प्रशंसा करने के योग्य राजा द्रुपद के पुत्र सत्यजित् अष्ट गुण रथ हैं इससे अतिरथत्व को प्राप्त हैं और धृष्टद्युम्न ही के तुल्य हैं २३ । २४ व पाण्डवों के यश की कामना से उत्कृष्ट कर्म्म करेंगे पाण्डवों में इनका अनुराग भी है व शूर भी हैं २५ और पाण्डु देश का राजा पाण्ड्य यह बड़ा ही वीर्य्यवान् है व पाण्डवों का धुरन्धर है व इसका धनुष बड़ा ही दृढ़ है यह भी पाण्डवों की समाज में महारथ है ॥ २६ ॥

दो० श्रेणिमान वसुदान द्वौ, नृपतिसिंह बलवान ।
उभय अहैं अतिरथ बहुरि, रिपुपुर हनन महान ॥ १ । २७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि रथसंख्यायामेकसप्तत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १७१ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौबहत्तर का अध्याय।

दो० इकसै बाहत्तर महँ, पुनि रथ आदि बखान।
भीष्म पाण्डवन के किये, जहँ शिखण्ड व्याख्यान॥ १॥

भीष्मजी बोले कि हे महाराज! पाण्डवों का महारथ रोचमान समर में तुम्हारी सेनाओं के सङ्ग देवताओं के ही समान युद्ध करेगा १ पुरुजित् व कुन्तिभोज ये दोनों भीमसेन के मामा बड़े धनुर्द्धर व महावीर्य्य हैं इससे दोनों महारथ हैं २ उनमें कुन्तिभोज महाधनुर्द्धर युद्ध में कुशल व निपुण चित्र विचित्र युद्धकारी शक्तिमान् होने से हमारे मत से रथ सत्तम है ३ वह विक्रम कर तुम्हारी सेना से ऐसा युद्ध करेगा जैसे इन्द्र दानवों से करते हैं इसके जितने योधा हैं सब युद्ध करने में विशारद हैं ४ यह वीर अपने भानजे पाण्डवों के लिये युद्ध में बड़ा भारी कर्म्म करेगा क्योंकि पाण्डवों के हित ही में सदा लगा रहता है ५ हे महाराज! भीमसेन व हिडिम्बा नाम राक्षसी से उत्पन्न जो पुत्र राक्षसों का ईश्वर है वह बहुत माया जानता है इससे हमारी जान रथ यूथपों का भी यूथप है ६ इससे यह समर में माया युक्त युद्ध करेगा क्योंकि उसको माया बहुत प्रिय है इसके मन्त्री जो राक्षस लोग हैं वे सब इसके वश में हैं ७ इन्हें आदि और भी नानादेशों के निवासी राजा लोग वासुदेवादि पाण्डवों के अर्थ इकट्ठे हैं ८ हे राजन्! महात्मा पाण्डवों के राजा के इतने रथ अतिरथ व अर्द्धरथ महारथादि हैं ९ ये लोग इन्द्रवीर से पालित देवसेना के समान अर्ज्जुन वीर की पालित युधिष्ठिरजी की सेना को समर में उद्यत करावेंगे १० इन सब मायावियों व अन्य महारथादिकों से समर में जय व मरण की इच्छा से हम युद्ध करेंगे इसमें अन्तर न पड़ेगा ११ और चक्र गाण्डीव धारण किये वासुदेवजी व अर्ज्जुन से भी युद्ध करेंगे जो सन्ध्यासमय के सूर्य्य चन्द्रमा के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

समान एकही रथ पर चढ़े हुए हमारे सामने प्राप्त होंगे १२ युधिष्ठिरजी की सेना में जितने सेनापति व योधा हैं उन सबों से हम युद्ध करेंगे अन्तर न पड़ेगा १३ हे राजन्! ये जितने पाण्डवों की सेना के रथ अतिरथ महारथ अर्द्धरथ व और भी वीर हमने गिनाये व जिनको नहीं गिनाये वे सब वीर वैसेही हैं १४ इन सबों को व अर्ज्जुन और वासुदेवजी को भी जबतक हम जीते रहेंगे रोकेरहेंगे और किसी को मारने न पावेंगे १५ इस बात को लोकभर जानता है कि हमने राज्य पाय अपने पिता के प्रिय करने की इच्छा से फिर राज्यछोड़ ब्रह्मचर्य्य व्रत धारण किया है जिसमें मैथुन करने का निषेध है १६। १७ इससे फिर जब हमारी दूसरी माता के पुत्र चित्राङ्गद व विचित्रवीर्य्य हुए तो पिताजी के पीछे हमने उन दोनों में बड़े चित्राङ्गद को कौरवों के राज्य पर अभिषेक किया व छोटे विचित्रवीर्य्य को युवराजपदवी पर स्थापित किया १८ इससे पृथ्वी पर के सब राजाओं के बीच में ब्रह्मचारिव्रत को जनाय अब न तो कभी स्त्रीही को मारेंगे न जो पहिले स्त्री उत्पन्न हुआ हो फिर पुरुष हो गया हो उसी को क्योंकि स्त्री को जब देखेंगे तो दृष्टिमैथुन हो जायगा और पूर्व स्त्री फिर पुरुष के देखने पर भी स्मरणमैथुन होगा और प्रकार के मैथुनों में ये भी दोनों प्रकार के मैथुन लिखे हैं १९ इससे तुमने भी सुना होगा कि यह द्रुपद का पुत्र प्रथम कन्या हुआ फिर पुत्र हो गया है इससे इसके सङ्ग हम युद्ध न करेंगे ॥ २० ॥

दो० रण महँ मम सन्मुख जिते, आवहिंगे नृप भूप।
सब कर वध करबै शिखँडि, अरु न कुन्तिसुत रूप ॥१।२१॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्विसप्तत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १७२ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौतिहत्तर का अध्याय।

दो० इकसै तीहत्तर महँ, काशिराज गृह जाय।
नृपन जीति गाङ्गेय हरि, कन्या लाये आय॥ १॥

इतनी बात के सुनते ही राजा दुर्य्योधन भीष्मपितामहजी से पूछने लगे कि हे भरतश्रेष्ठ! जब समर में आयुध ले उद्यत हो शिखण्डी आततायी आप के सामने युद्ध करने को उपस्थित होगा तो आप उसे क्यों न मारेंगे १ क्योंकि पूर्व्वकाल में आप प्रतिज्ञा करचुके हैं कि पाञ्चालवंशी व सोमवंशी सबों को समर में मार डालेंगे पर अब पाञ्चालवंशी शिखण्डी को नहीं मारना चाहते इसका हेतु हम से बताइये २ यह सुन भीष्मजी बोले कि हे दुर्य्योधन! इन सब राजाओं सहित कथा सुनो जिसके लिये हम शिखण्डी को न मारेंगे ३ लोक में विश्रुत हमारे पिता महाराजा शन्तनुजी जोकि बड़े महात्मा व भरतवंश में श्रेष्ठ थे जब वे समय पर स्वर्गवासी हुए ४ तो हे महाराज! हमने अपनी प्रतिज्ञा का पालन कर चित्राङ्गद नाम अपने भाई को महाराज्य पर अभिषेक कर स्थापित किया ५ जब चित्राङ्गद भी मृतक हो गये तो अपनी माता सत्यवती के सम्मत से हमने विचित्रवीर्य्य को राज्य पर अभिषेक किया ६ हे राजेन्द्र! जब हमने विचित्रवीर्य्य का अभिषेक किया तो यद्यपि वे छोटे थे पर ऐसे धर्मात्मा थे कि हमारे ही मुख की ओर निहारा करें जो कुछ हम कहें वही करें ७ तब हमारे मन में आया कि अब इनका कहीं विवाह करना चाहिये पर ऐसे वंश की कन्या हो जो हमारे कुल के अनुरूप हो ८ यह विचारते ही थे कि हमने सुना कि काशी के राजा की तीन कन्या हैं उनका स्वयंवर होनेवाला है व सब की सब रूप में अद्वितीय हैं ९ उनमें एक का अम्बा दूसरी का अम्बिका तीसरी का अम्बालिका नाम था उन तीनों के लिये पृथ्वी भर के राजा लोग बुलाये गये १० उनमें

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सब से ज्येष्ठ कन्या अम्बा थी अम्बिका मध्यम थी व अम्बालिका सब से छोटी थी यह जान हम अकेले ही रथ पर चढ़ काशीपुरी को गये ११ वहां सब प्रकार से भूषित तीनों कन्याओं को हमने देखा व जो सब राजा लोग बुलाये गये थे उन्हें भी देखा १२ तिसके पीछे समर में टिके हुए उन सब राजाओं को पुकार तीनों कन्याओं को हमने रथ पर चढ़ालिया १३ क्योंकि सबों ने हमसे कहा कि इन कन्याओं का मोल वीर्य्य ही है जो जीते सबों को ले जाय इसी से हमने उनको रथ पर चढ़ाये जितने राजा वहां आये थे सबों से बड़े ज़ोर से पुकार कर कहा कि १४ महाराज शन्तनुजी के पुत्र हम भीष्म कन्या लिये जाते हैं लिये जाते हैं हे सब राजा लोगो! अपनी अपनी शक्ति भर तुम सब यत्न करो तुम सब जनों के सामने ज़बरदस्ती हरे लिये जाते हैं कुछ चोरी से नहीं इससे जिस से जो बनै सो करै हम अभी खड़े हैं १५ इस बात को बार बार सुन सब राजा अपने अपने अस्त्र शस्त्र धारण कर व ऊपर को उठाय अपने अपने सारथियों से कहने लगे रथ चलावो चलावो १६ ऐसा कहते हुए वे राजा लोग हाथियों के समान ऊँचे रथों पर सवार हो व जो हाथियों पर से युद्ध करना जानते थे वे हाथियों पर सवार हो बाकी सब बड़े पुष्ट घोड़ों पर चढ़ चढ़ ऊपर को आयुध उठाय मारो पीटो बांधो ऐसा कहते हुए एकाएकी आ टूटे १७ व हे राजन्! सबके सब राजाओं ने अपने रथ समूहों से चारों ओर से हमारे रथ को घेर लिया १८ हमने जो उन सबों के ऊपर लगातार बाणों की वर्षा की तो उनको ऐसा जीता जैसे इन्द्र दानवों को जीतते हैं १९ हमने एक हँसी के साथ बड़े दीप्ति बाणों से दौड़ते आते उनकी रथों की ध्वजा प्रथम काट डाली २० सो एक ही एक बाण ऐसा मारा कि ध्वजा पृथ्वी पर गिर परीं व एक एक बाण से सबके घोड़े हाथी व सारथी भी मार गिराये ॥ २१ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो० मम लाघव लखि सब नृपति, कुछ लौटे कुछ भागि ।
तब हम जीति महीपातिन, गजपुर कहँ अनुरागि ॥ १ । २ २॥
तब हम उन कन्यानि को, भ्रातु अर्थ तहँ थाप ।
माता सत्यवती निकट, किय सब कर्म्म अलाप ॥ २ । २ ३॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्रिसप्तत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १७३ ॥

एकसौचौहत्तर का अध्याय ।

दो० इकसै चौहत्तर महँ, अम्बा भीष्म महान ।
सो निजमनवाञ्छितकह्यहु, निज विवाह तह जान ॥ १ ॥

भीष्मजी बोले कि तब वीर चित्राङ्गद विचित्रवीर्य्य की माता कैवर्त्तक की कन्या सत्यवतीजी के चरण छू उनसे हमने यह कहा कि ये काशी के राजा की तीनों कन्या हैं इनका मोल केवल वीर्य्य था इसलिये इनके अर्थ आये हुए सब राजाओं को जीत विचित्रवीर्य्य के लिये इनको लाये हैं १ । २ तब हमारा शिर सूंघ नेत्रों से आनन्द के आंसू छोड़ती हुई सत्यवतीजी ने हर्षित हो हम से कहा कि हे पुत्र ! बड़े भाग्य की बात है जो तुम जीत आये ३ जब सत्यवतीजी की सम्मति से विवाह होने की तैयारी हुई तो काशिराज की जेठ कन्या लज्जित होकर बोली कि ४ हे भीष्म ! तुम धर्म्मज्ञ हो क्योंकि सब शास्त्रों के जानने में विशारद हो इससे हमारे धर्म्म युक्त वचन सुन आप करने के योग्य हैं ५ हमने अपने मन से बहुत दिन हुए कि शाल्व देश के राजा को अपना पति बनाया था इससे हमारे पिता नहीं जानते पर एकान्त में हमको शाल्वपति ने अङ्गीकार कर लिया ६ इससे हे राजन् ! दूसरे पुरुष की इच्छा किये हुई हमको धर्म्म का अतिक्रमण कर कौरववंशी हो कैसे अपने घर में बसाया चाहते हो ७ यह अपनी बुद्धि से निश्चय कर व मन से भी बनाय सोच विचार जो तुम को उचित जान परे वैसा करो ८ हे प्रजानाथ ! राजा शाल्व हमारी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राह परखते होंगे इसमें कुछ सन्देह नहीं इससे हे कुरुश्रेष्ठ ! तुम हमको वहां जाने के लिये आज्ञा देने के योग्य हो ॥ ६ ॥

दो० महाबाहु करिये कृपा, धर्म्मधारि वर आप ।
सत्यव्रत तुम हौ सदा, महि हम सुना अलाप ॥ १ । १० ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुस्सप्तत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १७४ ॥

एकसौपचहत्तर का अध्याय ।

दो० इकसै पचहत्तर महैं, अम्बा शाल्व समीप ।
गई न उन त्यहि ग्रहण किय, रोय फिरी मतिलीप ॥ १ ॥

भीष्मजी बोले कि उसके ऐसे वचन सुन हमने अपनी सौतेली माता योजनगन्धा सत्यवती से कह मन्त्रियों ऋत्विजों और पुरोहितों से सम्मत ले १ उस ज्येष्ठ अम्बा नाम कन्या से कहा कि अच्छा जाव इस प्रकार हमारी आज्ञा पाय वह कन्या शाल्वपति के नगर को गई २ उसके सङ्ग हमने कई वृद्ध ब्राह्मण कर दिये थे व एक टहलुई भी कर दी कि उन सबों से वह रक्षित चली गई जाते जाते जाय राजा शाल्व के समीप पहुँची ३ व शाल्वराज को पाय उस से बोली कि हे महाबाहुजी ! हम तुम्हारे उद्देश से यहां आई हैं ४ हे राजन् ! तब हँसता ही सा शाल्वपति उससे बोला कि हे वरवर्णिनि ! तुम प्रथम और के यहां गई हो इससे तुम को हम अपनी भार्य्या न बनावेंगे ५ इससे हे भद्रे ! तुम फिर भीष्म ही के समीप चली जावो ज़बरदस्ती भीष्म की ले गई हुई तुमको हम नहीं चाहते ६ क्योंकि उस समय तुम प्रसन्न होवोगी तब भीष्म जीतकर तुमको लेगये होंगे फिर वे तो युद्ध में राजाओं को जीतकर तुमको ले गये थे तो तुम्हारा हाथ अवश्य उन्होंने पकड़ कर रथ पर बैठाया होगा व लड़ने के समय भी पकड़े रहे होंगे ७ इससे अब तुम्हारा विवाह उनके सङ्ग होचुका अब हम तुमको अपनी भार्य्या नहीं बनाना चाहते क्योंकि हमारे समान

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

राजा हो पराई स्त्री को अपने घर में कैसे घुसने दे ८ फिर उसमें जिसको ज्ञान हो और दूसरों को धर्म्म सिखाता हो वह पराई स्त्री को अपने घर में कैसे डार ले इससे हे भद्रे! तुम यथेष्ट चली जावो तुम्हारा यह समय व्यर्थ न बीते ९ हे राजन्! तब कामबाण से पीड़ित अम्बा शाल्वराज से बोली कि हे महीपाल! ऐसा न कहो ऐसा किसीप्रकार से नहीं है १० हे शत्रुसूदन! जब भीष्म हमको ले गये हैं तब हम प्रसन्न नहीं थीं सब राजाओं को जीत रोती हुई हम को वे बल से ले गये ११ हे शाल्वपते! निरपराधिनी बाला व तुम्हारी सेवकी हमको भजो क्योंकि भक्तों का परित्याग धर्म्मों में प्रशंसित नहीं होता १२ समर से विना जीते न लौटनेवाले भीष्मजी से हम पूछ उनकी आज्ञा से आपके पास आई हैं १३ महाबाहु भीष्मजी हमारी इच्छा नहीं करते उन्होंने तो अपने भाई के लिये ऐसे काम का प्रारम्भ किया था यह हमने सुना है १४ वरन जो हमारी अम्बिका अम्बालिका दो भगिनियां हैं उन दोनों को अपने छोटे भाई विचित्रवीर्य्य को देदिया १५ हे शाल्वपतिजी! हे पुरुषव्याघ्र! हम जैसे तुमको छोड़ और किसी को अपना वर बनाना नहीं चाहतीं वैसेही अपना शिर छूकर शपथ करती हैं १६ हे राजेन्द्र! हम प्रथम अन्य किसी की स्त्री होकर आपके पास नहीं आईं हे शाल्व! सत्यही कहती हैं व इस सत्य की सौगन्द खाय अपने शरीर को छूती हैं १७ हे विशाल नयन! तुम्हारे प्रसाद की वाञ्छा किये और किसी को पूर्व्व समय में न जानती अपने आप आई हुई हम कन्या को भजो हे राजेन्द्र! १८ हे भरतश्रेष्ठ! शाल्वदेश के राजाने ऐसा कहती हुई उस कन्या को ऐसे त्यागा जैसे पुरानी खाल को सर्प्प त्यागता है १९ हे भरतर्षभ! इस प्रकार विविधप्रकार के वचनों से उस काशिराज की कन्या ने शाल्वराज की बार २ प्रार्थना की पर उन्होंने उस कन्या के कन्यात्व में विश्वास न किया २० तब वह काशिराज की कन्या मारे क्रोध के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व्याकुल हो रोदन करती हुई बड़ी शिथिलवाणी से बोली कि २१ हे प्रजानाथ ! तुम्हारी त्यागी हुई हम जहां कहीं जायँगी वहां साधु लोग ही अब हमारे रक्षक होंगे क्योंकि हमने सत्य ही कहा है अब ऐसी दशा में और कौन रक्षक होगा २२ हे कुरुराज ! इस प्रकार दीन वचन कहती हुई व शोचती उस ज्येष्ठ काशिराज की कन्या को शाल्वराजने परित्यागही किया २३ व बार २ शाल्वने कहा कि तू अब यहां से चली जा हम भीष्म को डरते हैं क्योंकि तू उनकी स्त्री होचुकी २४ जब उस अदूरदर्शी शाल्व ने ऐसा कहा तो वह कन्या करांकुल पक्षी के समान बार २ रोती हुई उस पुर से दीन हो निकली २५ भीष्मजी बोले कि जब नगर से वह निकली तो उसने अपने मनमें चिन्तना की कि पृथ्वीपर मेरे समान अभागिनी स्त्री कोई नहीं है २६ क्योंकि भाई बन्धुओं से हीन हो शाल्व के पास आई फिर अब इस ने भी परित्याग किया इससे अब फिर हस्तिनापुर को भी मैं नहीं जासक्ती २७ भीष्मने मुझे शाल्व के उद्देश से आज्ञादी कि अच्छा वहां जा अब मैं अपनी निन्दा करूं कि महादुरासद भीष्म की करूं २८ अथवा अपने मूढ़ पिता की निन्दा करूं कि जिसने मेरा स्वयंवर किया हां हमने यह अपने बूते दोष किया जो युद्ध होनेलगा था तब भीष्म के रथ से शाल्व के अर्थ पृथ्वीपर कूद न परी उसी का यह फल हुआ कि जो मैं मूढ़ के समान उनके रथ पर चुपचाप बैठी रह गई २९।३० भीष्म को धिक्कार है व मन्दमूढ़ मेरे पिता को भी धिक्कार है जिसने कि वीर्य्य के मोलपर बाज़ार की स्त्रियों के समान मुझको बेंचडाला ॥ ३१ ॥

दो० धिकमुहिं धिकशाल्वपहिं धिक, धाता कहँ ज्यहि भाव ।
यह उत्तम आपद लह्यहुँ, अब कछु नाहिं सुहाव ॥१॥३२॥
सबविधि निज प्रारब्ध फल, पुरुष लहत न सँदेह ।
पर मम यहि दुख मूल हैं, भीष्म तजौ जिन नेह ॥२॥३३॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तपसों वारण सों करन, प्रत्युपकार सुयोग्य ।
भीष्म सङ्ग निशशङ्क है, मम दुख के वे भोग्य ॥३ । ३४॥
को भूपति रणजीति है, भीष्महि करत विचार ।
निकर्सी पुरसों गुनत मन, और न कछु उपचार ॥४ । ३५॥
यह शोचत सुकृती कृती, मुनि महान के धाम ।
पहुँचि बसी त्यहि रात्रि तहँ, तापस सङ्ग सुवाम ॥५ । ३६॥
विस्तर कर सब वृत्त निज, तिन सन कीन बखान ।
जो जिमि जहँ भो सब भली, विधि कहि कछु न छिपान॥६ । ३७॥
तपोवृद्ध आरण्य उप, निषद वेद शास्त्रज्ञ ।
शैखावत्य जितेन्द्रि द्विज, हते एक तहँ प्रज्ञ ॥७ । ३८॥
दुःख परायण शोक रत, लेत उसास विहाल ।
अति आरत त्यहि सों कह्यहु, शैखावत्य दयाल ॥८ । ३९॥
कहु भद्रे ! तव हेतु सब, तापस कौन उपाय ।
करहिं रहत जो यहँ तपो, युक्त मुक्त सति भाय ॥९ । ४०॥
यह सुनि पुनि मुनि सों कह्यहु, करिय अनुग्रह आप ।
हमहुँ चहत तप जप करन, दुश्चर गत सब पाप ॥१०।४१॥
पूर्व जन्म हम कीन जो, कर्म्म निकर अति मन्द ।
यह फल है तिन हीन कर, कौन करै अब बन्द ॥११।४२॥
अब निज बान्धव ढिग नहीं, जाय सकत क्यहु भाँति ।
शाल्व निरादर कीन मम, करि बहु विधिहि अपाँति॥१२।४३॥
देव सरिस गत पाप हत, दाप आप सब लोग ।
कृपा करहु मम दुख हरहु, कहि उपदेश सयोग ॥१३।४४॥
वेद युक्ति दृष्टान्त कहि, मुनि समुझायहु ताहि ।
सब तपसिन सँग तप करन, कह्यहु लह्यहु सुख वाहि॥१४।४५॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चसप्तत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १७५ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौछिहत्तर का अध्याय ।

दो० इकसै छ्यत्तरवें महँ, तपस्विन कीन विचार ।
अम्बाहितता जननि पितु, कह चलु राम उदार ॥ १ ॥

भीष्मजी बोले कि उस कन्या के वैसे वचन सुन उसके विषय में चिन्तना करते वे तपस्वी लोग आपस में कहने लगे कि इसके लिये हम लोगों को क्या करना चाहिये १ किसी किसी तपस्वियों ने कहा कि इसे इसके पिता के घर में भेज आना चाहिये किसी किसी तापसों ने हमारे पास भेजने को कहा २ किसी किसी ने कहा कि इसे शाल्वपति के पास सौंप आना चाहिये किसी किसी ने कहा कि शाल्व राजा ने तो इसको ग्रहण ही नहीं किया उनके पास अब न ले जाना चाहिये तब सबों ने फिर उसी कन्या से पूछा कि हे भद्रे अब तपस्वी लोगों को तेरे लिये क्या करना चाहिये फिर सब तापस लोग जोकि बड़े व्रत नियम में तत्पर थे बोले कि ३ । ४ हे कल्याणिनि! संन्यासिनी होने से कुछ भी काम नहीं हम लोग जो कहते हैं सुनो अब तुम सीधी अपने पिता के ही स्थान को चली जावो ५ जिसको तुम्हारा पिता तुम्हें देगा वहां जाय रहना व अपने सब गुणों से उसको प्रसन्न रखना ६ हे भद्रे ! स्त्री की गति जैसा पिता होता है वैसा और कोई नहीं होता क्योंकि स्त्री की गति पति होता व पिता दो को छोड़ तीसरा नहीं ७ उसमें भी जब तक सम भाव से सेवादि करती हुई पति की आज्ञाकारिणी रहती तभी तक उसकी गति पति होता है पर विषमस्थान पर पिता ही गति होता है संन्यास धारण करना सबको दुःखदायी होता है पर कुमारी कन्या को तो विशेषता से ८ उसमें भी राजपुत्री को जो सदा से सुकुमारी रहती है इससे हे भद्रे ! इस मुनियों के आश्रम पर रहने से बहुत से दोष हैं व पिता के घर में रहने से वे दोष न होंगे क्योंकि यहां तुमको देख कदाचित् कोई मुनि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लोग ही मोहित हो गये व तुम्हारा ही चित्त कभी चलायमान हो गया तो अनर्थ ही है ये बातें पिता के यहां न होंगी इस के पीछे उस तपस्विनी से और तपस्वी लोग बोले ९। १० कि भला तपस्वियों का भय तो जैसा ही कैसा है पर इस निर्ज्जन गहन वन में अकेली तुम को देख राजा लोग ग्रहण करने की इच्छा करेंगे इससे यहां तुम्हारा रहना किसी प्रकार योग्य नहीं ११ यह सुन अम्बा बोली कि हम काशी नगर में अपने पिता के घर को फिर नहीं जा सक्तीं क्योंकि वहां सब भाई बन्धु हमारा अनादर करेंगे इसमें कुछ सन्देह नहीं है १२ हे तपस्वियो! हम पिता के घर में बाल्यावस्था से उस लाड़ प्यार के साथ रहीं अब वहां इस दशा में हम न जायँगी कि जहां हमारे पिताजी रहते हैं १३ अब हम तपस्वियों से ही रक्षित हो तप करना चाहती हैं कि जिसमें अब दूसरे जन्म में भी सुख का नाश न हो व यह अभाग्यता भी न हो कि कोई हम को ग्रहण ही नहीं करता इससे हे तापस लोगो! अब हम तपस्याही करेंगी १४ भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि इस प्रकार वे महात्मा तपस्वी लोग विचार ही कर रहे थे कि महा तपस्वी राजर्षि होत्रवाहनजी वहां आये १५ तब उन सब तपस्वियों ने आगत स्वागतादि पूजाओं से व आसन जलादि देने से राजा की बड़ी पूजा की १६ जब राजा बैठकर बनाय सुस्ताये तो उनके सुनते होते तपस्वियों ने उस अम्बा की कथा नीचे से सुनाई १७ तब अम्बा की कथा सुन व काशिराज की कथा श्रवण कर महातेजस्वी राजर्षि होत्रवाहनजी बहुत ही उद्विग्नचित्त हुए १८ व उस कन्या को वैसा कहती सुन व देख महातपस्वी राजर्षि महात्मा होत्रवाहन जी अतिकृपायुक्त हुए १९ व थरथराय कँपने लगे क्योंकि वे महाराज उस कन्या की माता के पिता थे इससे उठ उस कन्या को गोद में बैठाय समझाने बुझाने व उसके समाचार पूछने लगे २० जब सब आदि से दुःख का कारण राजा ने पूछा तो

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उसने सब विस्तारपूर्वक अपना वृत्तान्त वर्णन किया २१ वृत्तान्त सुन महाराज होत्रवाहनजी ने दुःख शोक से युक्त हो जो कार्य्य उस समय करने के योग्य थे मन से उनके करने का उपाय ठीक कर लिया २२ बनाय दुःखित हो कँपते हुए अतिपीड़ित उसी कन्या से बोले कि हे भद्रे ! अब तुम अपने पिता के घर को न जावो हम तुम्हारी माता के पिता हैं २३ हे पुत्रि ! अब हमारे ही सङ्ग रहो हम तुम्हारे दुःख को काटेंगे हे वत्से ! बस इतना ही बहुत हुआ जो तुमने अपने सब अङ्गों को सुखा दिया २४ अब हमारे कहने से तुम जमदग्निजी के पुत्र महातपस्वी परशुरामजी के निकट जावो वे तुम्हारे सब दुःख शोक हरेंगे ॥ २५ ॥

दो० यदि न भीष्मनृप राम के, वचन करहिंगे कान ।
तो रणमहँ त्यहि नाशि हैं, सब विधि राम महान ॥ १ । २६ ॥
यासों राम समीप चलु, जो कालाग्नि समान ।
तेजोमय भृगुवंशमणि, प्रणतपाल भगवान ॥ २ । २७ ॥
महातपस्वी राम त्वहिं, थपि हैं मम मगमाहिं ।
इमि सुनि बहुरोदन करत, सुस्वर वचन सुनाहिं ॥ ३ । २८ ॥
निज मातामहसों कह्यउ, होत्रवाहन ज्यहिं नाम ।
करि प्रणाम जैहहुँ वहाँ, तव आयसु जहँ राम ॥ ४ । २९ ॥

तोटकछन्द ॥

बड़िभाग्य अहै अवलोकहुँगी । मुनिराजहि आजहि भाषहुँगी ॥
किमि नाशहिंगे मम दुःखमहा । यह पूंछत हौं कहु मातमहा ॥ ५ । ३० ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षट्सप्तत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १७६ ॥

एकसौसतहत्तर का अध्याय ।

दो० इकसै सतहत्तर महैं, अकृतव्रण संवाद ।
होत्रवाहनृप काशिनृप, सुता केर शुभनाद ॥ १ ॥

अपनी नातिन अम्बा के वचन सुन सृञ्जय देश के राजा होत्र-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वाहन बोले हे भद्रे! उग्र तप करते, सत्यप्रतिज्ञ, महाबली परशुरामजी को महावन में तू देखेगी १ वे महेन्द्राचलपर नित्य तप किया करते हैं सो अकेले वही नहीं उस पर वेदविद्या के विद्वान् लोग गन्धर्व अप्सरा लोग भी तप करती हैं २ इससे अब वहां जाय उन तपोवृद्ध महादृढ़ ब्रह्मचर्य्यव्रतधारी परशुरामजी के शिर झुकाय प्रणाम कर हमारी ओर से कहना कि ३ होत्रवाहन ने आपको प्रणाम कहा है फिर अपना इष्ट उनसे विधिपूर्वक निवेदन करना हमारा नाम लेने से परशुरामजी तेरा सब कार्य्य कर देंगे ४ क्योंकि परशुरामजी हमारे तो सखा सुहृद् व मित्र हैं और जमदग्निजी के पुत्र होने से सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ हैं ५ राजा होत्रवाहन उस कन्या से ऐसा कही रहे थे कि परशुरामजी के अनुचर प्रियकारी अकृतव्रण नाम मुनि वहां आये ६ उनको देख वे सब सहस्रों मुनि लोग अवस्था से बड़े वृद्ध राजा होत्रवाहन समेत उठ खड़े हुए ७ फिर मुनि को देख अच्छी तरह उनका आतिथ्य सत्कार कर चारों ओर से मुनि को घेर सब तपस्वी लोग उनको आसन दे आप भी बैठे ८ फिर सब मुनि लोग आपस में प्रीतियुक्त हो धन्य दिव्य मन के हरनेवाली नाना प्रकार की उत्तम २ कथायें कहने लगे ९ जब सब कथा कह सुन चुके तो राजा होत्रवाहन ने अकृतव्रणजी से महर्षियों में श्रेष्ठ परशुरामजी को पूछा १० कि हे महाबाहो, अकृतव्रण! प्रतापवान् भगवान् परशुराम जी आजकल कहां विराजमान हैं भला हम लोगों से मुलाकात हो सक्ती है ११ यह सुन अकृतव्रण मुनि बोले कि हे राजन्! परशुराम जी निरन्तर आपकी बातें किया करते हैं कि सृञ्जय वंशीय राजर्षि होत्रवाहन हमारे बड़े प्यारे सखा हैं १२ हम जानते हैं कि कल प्रातःकाल परशुरामजी आपके देखने की इच्छा से यहां आवेंगे इससे यहीं आप उनको देखोगे १३ हे राजर्षिसत्तम! यह कन्या किसलिये वन में आई है और किसकी है आप से क्या सम्बन्ध रखती है यह

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हम आप से जानना चाहते हैं १४ तब राजा होत्रवाहन बोले कि हे मुनिराज ! यह हमारी दौहित्री है व काशिराज की ज्येष्ठ कन्या है इसकी दो भगिनियां और हैं उन सहित यह स्वयंवर में स्थित हुई १५ इस ज्येष्ठ काशिराज की कन्या का अम्बा नाम है इससे छोटी जो दोनों एक का अम्बिका दूसरी का अम्बालिका नाम है १६ इन सब कन्याओं के लिये काशीपुरी में भरतखण्ड के सब क्षत्रिय लोग इकट्ठे हुए इससे वहां एक बड़ा भारी धूमधामी उत्सव हुआ १७ तब बड़े प्रसिद्ध शन्तनुजी के पुत्र महावीर्य्य भीष्मजी ने वहां जाय सब राजाओं का महा तिरस्कार कर उन महा तेजस्वी ने तीनों कन्याओं को हर लिया १८ इस प्रकार सब राजाओं को जीत विशुद्धात्मा भीष्मजी उन कन्याओं को अपने सङ्ग ले हस्तिनापुर को आये १९ वहां अपनी माता सत्यवती से सब वृत्तान्त कह इन कन्याओं को उनको सौंप अपने भाई विचित्रवीर्य का विवाह इन कन्याओं के सङ्ग कराने के लिये वैवाहिक नेग चार कराने लगे २० वह मङ्गल कौतुक बन्धन उबटन आदि लगाना देख यह कन्या मन्त्रियों के बीच में बैठे भीष्मजी से यह वचन बोली कि २१ हे धर्म्मज्ञ ! हमने अपने मन से शाल्व राजा को अपना पति अङ्गीकार किया है इससे अन्य पुरुष में मन लगाई हुई हमको अपने भाई को देने के योग्य आप नहीं हैं २२ इसके वचन सुन अपने मन्त्रियों से सम्मत ले सत्यवती का भी मत ले उन्होंने इस कन्या को कह दिया कि अच्छा जावो २३ तब भीष्म की आज्ञा पाय यह कन्या आनन्दित हो सौभपति शाल्व-राज के समीप जाय समय पर बोली २४ हे महाराज ! भीष्मपितामह ने हमको छोड़ दिया अब आप हमारे धर्म्म को सिद्ध करें क्योंकि हम ने प्रथम अपने मन में आप ही को पति बनाने की प्रतिज्ञा की थी २५ इस के वचन सुन इसे पर पुरुषरता होने की शङ्का से शाल्व-राज ने अङ्गीकार न किया तब तपस्या करने के विचार से यह तपो-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

वन को चली आई २६ यहां जब इसने अपना वंश बताया तो हमने भी जाना कि हमारी कन्या की कन्या है इसके दुःख के कारण हमारी जान भीष्म ही हैं २७ यह सुन अम्बा बोली कि हे भगवन्! यह ऐसा ही है जैसा कि हमारी माता के पिता सृञ्जय वंशीय महाराज होत्रवाहनजी ने कहा है २८ अब हे मुनिराज! अपमान के भय से व लज्जा के मारे अपने नगर को हम नहीं जा सक्तीं २६ इससे हे द्विजसत्तम! अब जो भगवान् महान् परशुरामजी कहेंगे उसी कार्य्य को हम अपने करने के योग्य समझेंगी बस यही हमारी मति में आता है॥ ३०॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्तसप्तत्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १७७॥

एकसौअठहत्तर का अध्याय।

दो० इकसै अठहत्तर महँ, अकृतव्रण अम्बाहु।
परशुराम संवाद वर, भयहु भयहु नहिं लाहु॥ १॥

अम्बा के वचन सुन अकृतव्रणजी बोले कि हे भद्रे! इस दुःख के कारण दो हैं उनमें तुम किसका प्रतीकार चाहती हो उसका निश्चय कर हम से कहो १ हे भद्रे! जो तुम सौभपति के सङ्ग अपना संयोग चाहती हो तो महात्मा परशुरामजी तुम्हारे हित की कामना से उसके सङ्ग तुम्हारा संयोग भी करा देंगे २ अथवा तुम रण में धीमान् भगवान् महान् परशुरामजी से भीष्म को पराजित देखा चाहती हो तो वे महात्मा भृगुनाथ वह भी कर सक्ते हैं ३ राजा होत्रवाहन व तुम्हारे वचन सुन दोनों कार्य्य कर सकेंगे इससे इन दोनों में जो तुम्हें अत्यन्त करना अङ्गीकार हो उसका विचार अभी कर लो ४ अम्बा बोली कि हे भगवन्! भीष्मजी हमको विना जाने अपने यहां लाये क्योंकि वे यह नहीं जानते थे कि इसका मन शाल्वराज में लगा है ५ इससे आप ही अपने मन से इसका विनिश्चय विचारें जैसा न्याय हो वैसा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

विधान करें ६ कुरुशार्दूल भीष्मजी में व शाल्वराज में व दोनों में जैसा उचित हो वैसा कीजिये ७ हमने अपने दुःख का मूल जैसा का तैसा कह दिया अब इसका विधान युक्ति से आप करने के योग्य हैं ८ यह सुन अकृतव्रणजी बोले कि हे भद्रे ! जैसा चाहिये तुमने वैसा ही कहा सब धर्म ही की वार्त्ता की अब हमारा वचन सुनो ६ जो तुमको भीष्मजी हस्तिनापुर को न ले जाते तो परशुरामजी के कहने से शाल्व तुम को शिर के बल ग्रहण करता १० हे भद्रे ! जिससे तुमको भीष्म ले गये इसीसे अब तुम हार गई और इसी से शाल्वराज को तुम्हारे विषय में सन्देह हुआ ११ भीष्म ने काशी को जीता और वे पुरुषमानी हैं इससे तुम्हारे लिये जो कुछ किया जाय वह भीष्म ही के सङ्ग किया जाय और किसी से कुछ प्रयोजन नहीं १२ यह सुन अम्बा बोली कि हे ब्रह्मन् ! हमारे हृदय में भी यही बात नित्य रहती है कि जो रण में किसी यत्न से भीष्म को मार पावें तो अच्छा हो १३ फिर यह भी नहीं कहतीं चाहे भीष्म को व शाल्वराज को जिसको इस विषय में विशेष दोषी समझो कि जिसके लिये हम दुःखित फिरती हैं उसी के मारने का उपाय कीजिये १४ भीष्मजी बोले कि इस प्रकार उन सबों के वार्त्ता करते करते दिन बीत गया रात्रि आ गई जिसमें सुखदायी शीतोष्ण पवन चलने लगा १५ तिसके पीछे जब फिर प्रातःकाल हुआ तो जटा रखाये तपस्वियों के वस्त्र धारण किये धनुष हाथ में लिये प्रसन्न चित्त खड्ग परशु हाथ में लिये स्वच्छ शरीरी परशुरामजी तेज से प्रज्वलित अपने बहुत से शिष्यों के सङ्ग राजा सृञ्जय के पास आये १६ । १७ तिनको देख सब तपस्वी महातपस्वी राजा व वह तपस्विनी कन्या सबकी सब हाथ जोड़ उठ खड़ी हुई १८ मधुपर्क अर्घ्य पाद्यादि से सबों ने पूजा की जब न्यायपूर्वक मुनिराज पूजित हुए तो फिर उन सबों के सङ्ग बैठे १९ फिर परशुरामजी तथा राजा होत्रवाहन दोनों जने पूर्वकाल की बीती हुई

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बातें करने लगे २० फिर जब पुरानी कथा समाप्त हुई तो राजा होत्रवाहन महा बलवान् भगवान् परशुरामजी से मधुर वचन बोले २१ हे राम! यह हमारी दौहित्री व काशिराज की कन्या है हे कार्य्य-विशारद! इसके कार्य्य का निश्चय सुनो २२ रामजी ने कहा कि अच्छा तुम अपना कार्य्य कहो तब अग्नि समान प्रकाशित रामजी से अम्बा बोली २३ बोलने के समय रामजी के शुभ चरणारविन्द अपने कर कमलों से पकड़ आगे बैठ शोकयुक्त नेत्रों से आंसुओं की धारा छोड़ती रोदन कर कहने लगी कि हे भृगुनाथ! मैं आपके शरण में हूं २४। २५ यह सुन परशुरामजी बोले कि हे नृपकन्ये! जैसी तू इन राजा सृञ्जय की दौहित्री है वैसी ही हमारी भी है इससे तेरे मनको जो दुःख हो हमसे कह हम तेरा वचन करेंगे २६ यह सुन अम्बा बोली हे भगवन्! मैं महाव्रत आप के शरण में प्राप्त हूं इससे इस शोककर्द्दम सागर से मेरा उद्धार कीजिये २७ भीष्मजी बोले कि उसका रूप शरीर नवीन अवस्था सुकुमारता देख परशुरामजी बड़ी शंका को प्राप्त हुए कि २८ यह क्या कहेगी इसके विचारने के लिये बड़ी देर तक ध्यान किया फिर कृपायुक्त हो २९ कहा जो कहना हो कहती क्यों नहीं जब रामजी ने ऐसा कहा तो कुछ हँसकर सब अपना वृत्तान्त आद्योपान्त उसने कहा ३० तब उस राजकन्या का वचन सुन परशुरामजी अपने मन में उसका निश्चय कर उससे बोले ३१ कि हे राजकन्ये! यदि ऐसा है कुरुश्रेष्ठ भीष्म के समीप तुझे हम भेज देंगे वे हमारा वचन सुन अङ्गीकार करेंगे ३२ जो कदाचित् गङ्गासुत हमारा वचन न करेंगे तो हम अपने अस्त्र के तेज से मन्त्रादि सहित भीष्म को भस्म कर देंगे ३३ अथवा तेरा चित्त वहां रहने को न हो तो फिर हम शाल्वपति ही को इस कर्म्म में नियुक्त करें ३४ यह सुन फिर अम्बा बोली कि हे भृगुनन्दन! भीष्म ने तो जैसे ही जाना कि इसका मन प्रथम से शाल्वराज में लगा है वैसे ही

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हमको त्याग कर दिया ३५ तब हमने जाय शाल्वराज से बहुत प्रकार से कहा परन्तु परपुरुषरता होने की शङ्का से उन्होंने हमें न ग्रहण किया ३६ अब हे भृगुनन्दन ! यह सब आप अपनी बुद्धि से निश्चय कर जो करने के योग्य समझें वही करें ३७ परन्तु मेरे इस दुःख के मूल महाव्रतधारी भीष्म ही हैं क्योंकि उन्होंने बल से सब राजाओं को जीत मुझको अपनी वश में कर लिया था ॥ ३८ ॥

दो० यासों भीष्महिं बधिय मुनि, ज्यहि निमित्त दुख येहु ।
अति अप्रिय पायहु फिरत, व्याकुल करि सब देहु ॥ १ । ३९ ॥
लुब्ध नीच जितकाशि वह, भीष्म अहै भृगुनाथ ।
यासों करिये प्रतिक्रिया, ताही के धरि माथ ॥ २ । ४० ॥
भीष्महि के कर्त्तव्य से, जब मम भयहु कलेश ।
तबहिं कीन्ह सङ्कल्प यह, मरवैहहुँ कुरुपेश ॥ ३ । ४१ ॥
तासों भृगुवर काम मम, सिद्ध करहु यह आज ।
हतहु भीष्म कहँ समर महँ, जिमि वृत्रहि सुरराज ॥ ४ । ४२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि रामवाक्येऽष्टसप्तत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १७८ ॥

एकसौउन्नासी का अध्याय ।

दो० इकसै उन्नासी महैं, अम्बा सों भृगुनाथ ।
कहि समुझायहु बार बहु, पर न धरिसि वह माथ ॥ १ ॥

भीष्मजी बोले कि भीष्म को मारो ऐसा बार बार कहती रोती प्रेरणा करती हुई उस कन्या से परशुरामजी बोले कि १ हे कन्ये ! ब्राह्मण के हेतु विना अब हम शस्त्र ग्रहण ही नहीं करते इससे और जो कुछ काम हो कहदे किया जावे २ वचन से भीष्म शाल्व दोनों हमारे वश में हैं इसमे हम तेरा काम करा देंगे तू कुछ शोच न कर ३ परन्तु अब हम शस्त्र किसी भी तरह से न ग्रहण करेंगे क्योंकि हमने प्रतिज्ञा कर ली है कि ब्राह्मण के कार्य्य को छोड़ और किसी के लिये

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हम अब कभी अस्त्र न गहेंगे ४ अम्बा फिर बोली कि हे भगवन्! जैसे कैसे बनै पर मेरा दुःख अवश्य आपको मिटाना चाहिये पर हमारे दुःख की उत्पत्ति के कारण भीष्म ही हैं इससे हे समर्थ! अब भीष्म को मार ही डारिये विलम्ब न कीजिये ५ परशुरामजी बोले कि हे काशिकन्ये! फिर विचार कर कह यद्यपि भीष्म तेरे शिर से वन्दना करने के योग्य हैं तो भी हमारे कहने से वे तेरे चरणों पर गिरेंगे ६ अम्बा बोली कि हे राम! हाथी के समान रण में गर्ज्जते भीष्म को मार ही डारिये जो हमारा प्रिय करना आप चाहते हों तो जैसे ही भीष्म युद्ध के लिये आपको स्पर्द्धा सहित बुलावे मार डारिये आपने प्रतिज्ञा भी की है कि जो भीष्म हमारा वचन न करेंगे तो हम रण में मार डारेंगे वह अपना वचन कीजिये ७ भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि हे राजन्! परशुराम अम्बा दोनों ऐसा बतलाते ही थे कि परम धर्मात्मा अकृतव्रणजी बोले ८ हे महाबाहो, राम! शरणागत इस कन्या का परित्याग करने के योग्य आप नहीं हैं अब ऐसा कीजिये कि जो समर करने के लिये बुलाने पर कि तो भीष्म यह कह दें कि हम आप से हार गये व आपके वचन करेंगे तो हे भृगुनन्दन! इस कन्या का कार्य्य सिद्ध हो जाय ९। १० और आप का वचन भी सत्य हो जाय और तुम्हारी एक यह भी तो प्रतिज्ञा है ११ जो कि सब क्षत्रियों को जीत आप ने ब्राह्मणों के सामने रण में प्रतिज्ञा की थी कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चाहे जो हो पर समर में हमारे सामने आवे तो हम उसको अवश्य मार डारें परन्तु शरण के अर्त्थ बनाय पैरों पर गिरते हुए शरणार्त्थियों को हम परित्याग न कर सकेंगे जब तक कि हमारा जीवन रहेगा व जो पुरुष सब क्षत्रियों को रण में जीत लेगा उस तेजस्वी पुरुष को हम मार डारेंगे फिर भीष्म भी तो इसी प्रकार के विजयी हैं कि रण में सब क्षत्रियों को जीत लिया है इससे हे भृगुनन्दन! अब उसके पास जाय युद्ध कीजिये १२। १५

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

यह सुन परशुराम फिर बोले हे ऋषिसत्तम ! हम उस प्रतिज्ञा का स्मरण करते हैं परन्तु जहांतक समझाने से कार्य्य चले तो बहुत अच्छा है १६ हे ब्रह्मन् ! यह काशी के राजा की कन्या के मन की बात बहुत कठिन है इससे कन्या को ले जहां भीष्म होंगे वहां हम खुद जायँगे ॥ १७ ॥

दो० भीष्म रणप्रिय मम वचन, जो न करहिंगे कान ।
तो रणमहँ त्यहि मारिहौं, यह निश्चय नहिं आन ॥ १ ।१८ ॥
मम प्रेरित शर प्राणि उर, आदि अङ्ग सुकुमार ।
सहत नहीं बल वेग नृप, बधमहँ विदित तुम्हार ॥ २ । १९ ॥
इमि मत करि सब ऋषि सहित, परशुराम मतिधीर ।
यात्रा हित निज मति किये, खड़े भये भृगुवीर ॥ ३ । २० ॥
तहँत्यहिनिशिबसितपास्वगण,पावक आहुति दीन ।
मन्त्र जपे बहु भाँति मम, मारणहित तनु छीन ॥ ४ । २१ ॥
सकल ब्रह्मचारी लिये, सङ्ग काशिकन्याहु ।
कुरुक्षेत्र गवने सकल, लहन युद्ध कर लाहु ॥ ५ । २२ ॥
परशुराम आदिक तपस्वि, सरस्वती के तीर
आसन मारि विराजहीं, सकल प्रजा रणधीर ॥ ६ ।२३ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकोनाशीत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १७९ ॥

एकसौअस्सी का अध्याय ।

दो० इकसै असी महँ कहब, भीष्म राम संवाद ।
जिमि भो अम्बा हेतु गुरु, शिष्यहु केर विवाद ॥ १ ॥

भीष्मजी बोले कि तीसरे दिन वहां से हमारे नगर के समीप आय हमको सन्देश भेजा कि हम तुम्हारे यहां आये हैं हमारा प्रिय करो १ हमने जैसे ही सुना कि हमारे नगर के समीप तेजोनिधि महाप्रतापी परशुरामजी आये हैं प्रीतिपूर्व्वक अति वेग से उनके समीप को चले २ आगे एक गाय कर ब्राह्मणों को सङ्ग ले और भी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

ऋत्विक् पुरोहित आदि सहित जा पहुँचे ३ तब प्रतापी जामदग्न्यजी हमको आये देख बड़ी प्रसन्नता से पूजा ग्रहण कर हम से यह वचन बोले कि ४ हे भीष्म! तुमने किस विचार से विना इच्छा की हुई काशिराज की कन्या को अपने यहां लाय फिर परित्याग किया ५ तुमने इसको धर्म्म से भ्रष्ट कर दिया यह यशस्विनी बेचारी बैठी है अब तुम्हारी स्पर्श की हुई इसको कौन ग्रहण कर सक्ता है ६ तुम्हारे ले आने के कारण शाल्व ने भी इसको ग्रहण न किया इससे अब हमारे कहने से इसको तुम ग्रहण करो ७ हे पुरुषव्याघ्र! जिसमें यह राजपुत्री अपना धर्म्म पावे हे राजन्! तुम को इसका अपमान करना योग्य नहीं है ८ फिर परशुरामजी को क्रोधयुक्त उदास देख हमने उनसे कहा कि हम अब इसे अपने भाई को फिर किसीप्रकार से भी न देंगे ९ क्योंकि इसने हमसे अपने मुख से कहा था कि मैं शाल्व की स्त्री हूं तब हमने कहा कि अच्छा यदि तू शाल्व की स्त्री है तो शाल्व के पास जा तब यह शाल्वराज के नगर को चली गई १० और हमने यह प्रतिज्ञा कर रक्खी है कि हम कभी अपना क्षत्रिय धर्म्म न कभी भय से छोड़ेंगे न निन्दा से न धन के लोभ से न काम से ११ जब हमने ऐसा कहा तो मारे क्रोध के अरुण नेत्र कर रामजी ने हमसे कहा कि हे नरपुंगव! जो हमारा यह वचन न करोगे तो १२ अमात्यादि सहित तुम को आज ही हम मार डालेंगे यह बात कई बार उन्होंने कही मारे क्रोध के मुनिराज के नेत्र घूमने लगे और बड़ी भयावनी मूर्त्ति उन्होंने अपनी कर ली १३ हे राजन्! तब हमने बार २ बड़ी नम्रवाणी से भृगुनाथ की प्रार्थना की बहुत कुछ कहा पर वे किसी प्रकार शान्त न हुए १४ तो फिर ब्राह्मणसत्तम उन महात्मा के प्रणामकर हमने कहा कि क्या कारण है आज हमको आप युद्ध करने की आज्ञा देते हैं १५ हम तो आपही के शिष्य हैं क्योंकि चार प्रकार की सब धनुर्विद्या आपही ने हमको पढ़ाई है १६ तब महाक्रोध कर परशु-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

रामजी ने हमसे कहा हे भीष्म ! तुम हमको गुरु भी जानते हो तौ भी हमारे कहने से इस कन्या को ग्रहण नहीं करते १७ हे कुरुनन्दन ! जबतक इस काशिराज की कन्या को तुम ग्रहण न करोगे चाहे जैसी प्रार्थना करो पर हमारी शान्ति तब तक अन्य किसी उपाय से न होगी १८ हे महाबाहो, भीष्म ! इसको ग्रहण कर अपने कुल की रक्षा करो क्योंकि यह तुम्हारे ही भ्रष्ट करनेसे अब पति नहीं पाती १९ ऐसा कहते शत्रुओं के पुर जीतनेवाले राम से हमने कहा कि यह बात अब फिर होने की नहीं है इस विषय में आपके श्रम करने से कुछ कार्य न होगा २० हे जामदग्न्यजी ! हम आप में पुराना गुरुत्व देख बार २ प्रार्थना करते हैं इसको तो हमने पूर्व काल ही में त्याग दिया २१ भला ऐसा कौन पुरुष है जो स्त्रियों के महानाशक दोषों को जान फिर दूसरे पुरुष में चित्त लगाये हुई सर्पिणी के समान स्त्री को अपने घर में बसावे कोई कभी न रहने देगा २२ हे महाव्रत ! हम इन्द्र के भय से भी कभी धर्म्म नहीं छोड़ सक्ते इससे चाहे प्रसन्न हूजिये व और जो करना हो कीजिये पर देर न कीजिये २३ हे विशुद्धात्मन्, रामजी ! महाराज मरुत्त ने एक श्लोक गाया है वह पुराण में सुनाई देता है सुनिये ॥ २४ ॥

दो० गर्व्वित कार्य्य अकार्य्य नहिं, जानत चलत कुपन्थ ।
ऐसे गुरु कहँ त्यागिये, यही कहत शुभग्रन्थ ॥ २५ ॥

हम समर में गुरु को न मारें फिर गुरु ब्राह्मण हो तो उसे विशेषता से न मारें फिर जो तपोवृद्ध हो उसे तो और भी न मारें इस विचार से आपकी बातें हमने सहीं २६ सो आप हमारे गुरु हैं इसी से प्रेम के साथ हमने अत्यन्त मान किया परन्तु आप गुरु की वृत्ति जानते ही नहीं इससे अब तुम्हारे सङ्ग युद्ध ही करेंगे २७ क्योंकि लिखा है कि क्षत्रिय के समान आयुध हाथ में लिये युद्ध करने पर उतारू ब्राह्मण को क्रोध किये समर से न भागते हुए को देख जो मारे उसको

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

को ब्रह्महत्या न लगै यह धर्म्मों में निश्चय है यही क्षत्रिय का धर्म्म है सो हम क्षत्रिय हैं और क्षत्रियों के धर्म्म में टिके हैं २८ । २६ जो जिसके साथ जैसा करै वह उसके साथ वैसा करने से न अधर्म्म ही को पाता है न अकल्याण ही को पाता ३० अर्थ में व धर्म्म में देश काल के अनुसार समर्थ देशकाल में कुशल मनुष्य जब धर्म्म का लोप देखे तो उसे चाहिये कि अर्थ को छोड़ दे उसमें फिर संशय न करै क्योंकि जब पुरुष संशय रहित होता तभी धर्म्मरूप कल्याण को पाता है अब गुरु आप के वचन से स्त्री ग्रहण करना यह अर्थ है और पिता की प्रीति के लिये जो ब्रह्मचर्य्य हमने धारण किया था वह धर्म्म है इससे धर्म्म रखने के लिये हम अर्थ को छोड़ते हैं विवाह नहीं करते ३१ जिससे कि आप संशय युक्त भी हैं तो भी अर्थ ही में प्रवृत्त हैं इससे अब हम आप के साथ महारण में युद्ध करेंगे कुछ भी अन्तर न पड़ेगा ३२ अब हमारी बाहों का वीर्य्य व अतिमानुष विक्रम आप देखें ऐसा होने पर भी जो हमसे हो सकेगा, वह कुरुक्षेत्र में करेंगे अर्थात् आपके सङ्ग वहा चलकर युद्ध करेंगे सो भी द्वन्द्वयुद्ध होगा आप तैयार हों ३३ । ३४ वहां हमारे सैकरों बाणों से पीड़ित हो पवित्रता सहित प्राण त्यागकर आप अपराजित लोकों को प्राप्त होंगे ३५ इससे अब कुरुक्षेत्र को चलो इस कार्य्य से निवृत्त होवो वह स्थान रण करने के योग्य है हे तपोधन ! हम युद्ध करने के लिये वहीं आवेंगे ३६ क्योंकि तुमने भी पूर्व्व समय में उसी कुरुक्षेत्र में क्षत्रियों के रुधिर से अपने पिता का तर्प्पण किया है व दशरात्रि में अशौच से शुद्धि पाई है हम भी गुरु आपको मार उसी रुधिर से आपके लिये तप्पण कर दशरात्रि में शुद्ध होंगे क्योंकि पिता व गुरु के मरण में दशरात्रि में शुद्धि होती है ३७ हे युद्ध करने में दुर्म्मद, राम ! अब तुरन्त वहां चलो अपने को ब्राह्मणों में बड़े वीर मानते तुम्हारा अहंकार हम वहां दूर कर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

देंगे ३८ हे राम ! जो तुम बका करते हो कि हम ने बहुत वर्षों तक इस पृथ्वी को क्षत्रियहीन कर दिया है व हम अकेले ही थे दूसरे की सहाय हमने नहीं ली उसका अभिप्राय सुनो ३९ तब भीष्म क्षत्रिय नहीं उत्पन्न हुआ था न भीष्म के तुल्य और ही कोई क्षत्रिय उत्पन्न था तेज तो पीछे से उत्पन्न हुए हैं तुमने कहीं सूखे तिनकों में अग्नि लगा दिया होगा बरने लगे होंगे ४० जो तुम्हारा युद्धमय अहङ्कार और काम नाश करेगा शत्रुओं के पुर जीतनेवाले वे भीष्म तो हम अब उत्पन्न हुए हैं इससे हे राम ! तुम्हारा घमण्ड हम दूर कर देंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ४१ भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि यह सुन हँसते से परशुरामजी हमसे बोले कि अहो भाग्य है जो कि भीष्म तुम हमारे साथ युद्ध करना चाहते हो ४२ हे कौरव्य ! तुम्हारे साथ अभी कुरुक्षेत्र को चलते हैं तुम्हारा कहा करेंगे हे परन्तप ! ले चलिये ४३ वहां हमारे सैकरों बाणों से हते हुए तुमको तुम्हारी माता गङ्गा देखेंगी जब समर में तुम्हारा मांस गीध चील्ह काग नोच नोच खायँगे ४४ व हमारे बाणों से वध कृपण तुमको देख सिद्ध चारण गन्धर्व्वादि से सेवित गङ्गाजी आज ही तुमको देखेंगी ४५ यद्यपि बड़े भाग्यवाली पापरहित राजा भगीरथ की कन्या गङ्गाजी इस दुःख के देखने के योग्य नहीं हैं पर क्या करें जब युद्ध करने की सबसे इच्छा किये आतुर व मन्दबुद्धि तुम ऐसे पुत्र को उन्होंने उत्पन्न किया तो अब ऐसा महादुःख देखना ही पड़ेगा ४६ हे युद्धकामुक, दुर्म्मद, भीष्म ! यहां आ हमारे सङ्ग चल अपने सब रथ हाथी घोड़े पैदर भी सङ्ग लेते चल ४७ शत्रुओं के पुरों के जीतनेवाले ऐसा कहते रामजी से हमने शिर झुकाय प्रणाम कर कहा कि बहुत अच्छा ऐसाही हो ४८ ऐसा कह युद्ध करने की इच्छा से परशुरामजी तो कुरुक्षेत्र को चले गये व नगर में आय हमने सब वृत्तान्त सत्यवतीजी से कहा ४९ तिसके पीछे माता की आज्ञा पाय ब्राह्मणों से स्वस्त्ययन पढ़वाय

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

स्वस्तिवाचन पुण्याहवाचन भी द्विजेन्द्रों स कराय सुन्दर सब युद्ध-सामग्री समेत व्याघ्रचर्म्म से आच्छादित उजले घोड़े जुते चांदी से बने महाअस्त्रों से भरे अन्य सब सामग्री से पुरे कुलीन वीर वाजि-विद्या में निपुण रण में कुशल अतिशिष्ट बहुत तरह से कर्म्म करने-वाले सारथि से युक्त रथ पर चढ़ कवच बख़्तर आदि धारण कर श्वेत ही धनुष ले श्वेत छत्र लगाय हम नगर से बाहर निकले ५० । ५४ व्यजन भी श्वेत ही हमारे ऊपर होते शुक्ल ही सब वस्त्र शुक्ल ही पगड़ी व सब भूषण भी शुक्ल ही धारण किये थे ५५ ब्राह्मण लोगों से जय के आशीर्वाद ले हस्तिनापुर से निकल रणक्षेत्र कुरुक्षेत्र में जा पहुँचे ५६ उन घोड़ों को उस हमारे सूत ने ऐसा हांका कि वे हमको ले मन व पवन के वेग से चले ५७ हे राजन्! इस प्रकार हम और प्रतापी परशुरामजी कुरुक्षेत्र में जाय परस्पर युद्ध के लिये परा-क्रम करने लगे ५८ फिर अति तपस्वी रामजी के सन्मुख खड़े हो बड़ा सुन्दर शङ्ख ले हमने जोर से बजाया ५९ हे राजन्! उस समय वह युद्ध देखने के लिये सब वनवासी तपस्वी ब्राह्मण लोग आये व इन्द्रादि सब देवगण आय युद्ध देखने लगे ६० देवताओं ने स्वर्ग से दिव्य पुष्पों की वर्षा की बाजे भी आकाश में बाजे मेघों के वृन्द भी गाजे ६१ जो तपस्वी परशुरामजी के सङ्ग थे वे समरभूमि में खड़े हो चारों ओर से घेर देखने लगे ६२ उस समय हमारी माता गङ्गाजी ने दिव्य स्त्री का स्वरूप धारण कर आय हमसे कहा कि तुमने यह क्या विचार किया है ६३ हे कुरूद्वह! हम जाय परशुरामजी से प्रार्थना करेंगी कि अपने शिष्य भीष्म से आप युद्ध न करें ६४ व हमसे फिर यह कहा कि हे पुत्र! ब्राह्मण के सङ्ग ऐसा हठ न करो ब्राह्मण में भी फिर जामदग्न्य के साथ ऐसा कह हमको बहुत से अपकार वचन कहे ॥ ६५ ॥

दो० क्या सुत तुम नहिं जानते, हर सम क्षत्रि विनाशि।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

परशुराम कहँ जो चहत, तासन समर प्रकाशि ॥ १।६६ ॥
तब हम करतल जोरि करि, विनय मातु सन भाष।
जिमि वृत्तान्त हतो स्वयं, वर कर सब तजि माष ॥ २।६७ ॥
जिमि हम कह भृगुनाथ सन, जिमि म्वहिं कह भृगुवीर।
काशिराज तनया चरित, पूर्व्व कहा धरि धीर ॥ ३।६८ ॥
तब मम माता जाह्नवी, गै भृगुनाथ समीप।
मम हित तिनसों कह त्तमा, करहु विप्र कुलदीप ॥ ४।६६ ॥
भीष्म आपने शिष्य सों, युद्ध न करहु मुनीश।
इमि याचत मम मातुसों, कह मुनि रोंकु महीश ॥ ५।७० ॥
वह न करत मम वचन यहि, कारण तासों युद्ध।
करन चहत हम ताहि तुम, रोंकहु होय न क्रुद्ध ॥ ६।७१ ॥
वैशम्पायन कह तबहिं, सुत सनेह सों गङ्ग।
गई भीष्म पहँ क्रोधवश, तिन न वचन किय अङ्ग ॥ ७।७२ ॥
तब धर्म्मात्मा राम अति, तापस परे दिखाय।
समर हेतु कुरुपतिहि धै, ललकारयहु सुहहाय ॥ ८।७३ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्यशीत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १८० ॥

एकसौइक्यासी का अध्याय।

दो० शताधिकैकाशी महँ, भीष्म परशुधर दोय।
किया युद्ध अति घोर दिन, अन्तगयो द्विजसोय ॥ १ ॥

भीष्मजी बोले कि हम कुछ हँसते से रण में खड़े परशुरामजी से बोले कि हम रथ पर चढ़ भूमि पर पैदर खड़े आप से युद्ध नहीं कर सक्के १ इससे हे वीर! जो हमारे साथ युद्ध किया चाहते हो तो रथ पर सवार हो कवचादि बांधो २ यह सुन रामजी हमसे हँसते ही से बोले कि हे भीष्म! हमारे पृथ्वी ही रथ है व वेद ही अच्छे घोड़ों के समान वाहन हैं ३ सारथी पवनदेव हैं कवच अन्तरिच्च है, इन सबों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

से युक्त हम रण में युद्ध करेंगे हे कुरुनन्दन ! तुम इसका शोच न करो ४ हे दुर्य्योधन ! ऐसा कहते हुए राम ने हमारे चारों ओर बाणों की वर्षा कर दी ५ तिसके पीछे हमने जो राम को देखा तो धनुर्बाण तरकस लिये अँगुलियों में पनच से न कटने के लिये लोहे की अँगूठी धारण किये सर्व्व आयुध भरे पुरे, अति शोभित अद्भुतरूप मन से बनाये पुण्यरूप नगर के समान लम्बे चौड़े दिव्य घोड़े जुते सब प्रकार पुष्टता सहित बँधे सुवर्ण से भूषित कवच से युक्त होने से चन्द्र सूर्य्य के समान प्रकाशित रथ पर चढ़े हुए दिखाई दिये ६ । ७ युद्ध की इच्छा किये परशुरामजी का सारथ्य कर्म्म धनुर्व्वेद जाननेवाले अत्यन्त प्रिय व भार्गवजी के सखा अकृतव्रणजी ने किया ८ । ९ तब भृगुनाथजी युद्ध में हमारे मन को हर्षित ही से कराते बार बार पुकार सामने आवो सामने आवो ऐसा कहने लगे १० जब उन्होंने ऐसा पुकार कहा तो सूर्य्य समान उदित, ढिठाई करने के अयोग्य महाबल पराक्रमी क्षत्रियों के नाशक अकेले परशुरामजी को हमीं अकेले प्राप्त हुए ११ तब हमने अपने घोड़ों को उनके बाण चलाये हुए स्थान पर खड़े कर रथ से उतर धनुष भूमि पर रख पैदर हो ऋषिसत्तम द्विज श्रेष्ठ राम की पूजा करते हुए उनके प्रणाम कर विधिपूर्व्वक यह वचन कहा १२ । १३ कि हे राम ! अब चाहे आप हमारे समान हैं व अधिक हैं पर हमारे गुरु हैं और धर्म्मशील हैं आप से हम युद्ध करेंगे पर हे स्वामिन् ! हमको आशीर्व्वाद दीजिये कि तुम्हारी जय हो १४ रामजी बोले कि हे महाबाहो, भीष्म ! जो लोग अपने बड़ों के सङ्ग लड़ते हैं उनको ऐसा ही करना चाहिये जैसा तुमने किया ऐसा ही धर्म्म भी है १५ हे राजन् ! जो अब हमसे ऐसा ही युद्ध न करो तो तुमको सौगन्द धराते हैं अब तैयार हो अवश्य रण में हमसे युद्ध करो १६ हम अब तुम्हारी जय होने को आशीर्व्वाद नहीं दे सक्ते क्योंकि हम तुमको जीतने के लिये उपस्थित हैं अब जाव धर्म्म से

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

युद्ध करो तुम्हारे आचरण से हम बहुत प्रसन्न हुए १७ तब हमने मुनिराज के नमस्कार कर रथ पर चढ़ सुवर्ण से भूषित शङ्ख हाथ में ले जोर से बजाया १८ फिर हमारा उनका युद्ध बहुत दिनों तक हुआ दोनों जने आपस में अपनी अपनी जय एक दूसरे की पराजय चाहते रहे १९ अब प्रथम दिन के युद्ध में प्रथम उन्होंने हमारे ऊपर एकसै उनहत्तर बाण चलाये २० उनसे हमारे चारों घोड़े व सारथि को भी आच्छादित कर दिया, और सब कवचादि धारण किये हमको भी आच्छादित किया २१ तब हम देवताओं के नमस्कार कर व विशेष रीति से ब्राह्मणों के प्रणाम कर हँसते हीसे मुनिराज से बोले २२ कि यद्यपि आप मर्य्यादाहीन हैं, तथापि हमने आपकी आचार्य्यता मानी अब धर्म्मसंग्रह करने में हमारा और भी वचन आप सुनें २३ जो वेद आपके शरीर में टिके हैं व जो आपका बड़ा भारी ब्रह्मकर्म्म है और जो आपने बड़ा भारी तप किया है हम तुम्हारे इन सबों के ऊपर प्रहार नहीं करते २४ किन्तु तुम्हारे क्षत्रिय धर्म्म के ऊपर प्रहार करते हैं, जिस पर तुम सवार हो क्योंकि शस्त्र धारण करने से ब्राह्मण क्षत्रियत्व को प्राप्त हो जाता है २५ अब हमारे धनुष का वीर्य्य देखो और हमारे बाहों का भी बल देखो अभी तीक्ष्ण बाण से तुम्हारा धनुष काटे डालते हैं २६ यह कह हमने उनके ऊपर तीक्ष्ण बाण चलाया उससे उनके धनुष की कोटि काट भूमि पर गिरा दिया २७ फिर सौ बाण बड़े तीखे हमने कान तक प्रत्यञ्चा खींच उनके रथ के ऊपर छोड़े २८ वे सब जाय परशुरामजी के शरीर में लगे और बनाय घुस गये फिर सर्प्पों के समान घुसकर निकल भी आये कि उनके घावों से बलबलाय रुधिर बहने लगा २९ हे राजन्! सर्व्वाङ्गों से रुधिर बहाते परशुरामजी कैसे शोभित हुए कि मानों गेरू बहाता हुआ पर्व्वत शोभित हो ३० और लाल पल्लवयुक्त अशोक जैसे शिशिर ऋतु में शोभित होता व वसन्त में जैसे पलाश शोभित

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

होता वैसे ही रामजी रुधिर बहने के हेतु शोभित हुए॥ ३१॥

दो० तब दूसर धनु हाथलै, अतिहि क्रुद्ध ह्वै राम।
हेमपुङ्ख शितपर्व्व शर, बरसाये त्यहि ठाम॥ १। ३२॥
मर्म्म भेदि ते शरनिकर, मम शरीर महँ लागि।
कम्पित किये हमार अँग, सविषसर्प्प सम सागि॥ २। ३३॥
तिन सहि हमपुनि बाणशत, उनपर दिये चलाय।
समर माहिं अतिकोप करि, निजबल सों हरषाय॥ ३। ३४॥
सूर अनल सम तेज विष, धर उरङ्ग सम तीर।
तिनसों बिंध्यो मुनीश गत, चेत भयहु लहि पीर॥ ४। ३५॥
तब हम कृपाविशिष्ट ह्वै, निजमन में करि शोच।
धिक रण धिक क्षत्रियधरम, कहा गुना अतिपोच॥ ५। ३६॥
बार बार सह शोक हम, बोले बोल अधीर।
हाय क्षत्रि के धर्म्म सों, कीन पाप यहि ठौर॥ ६। ३७॥
गुरुद्विजातियुत धर्म्म कहँ, शरसों पीड़ित कीन।
निन्दित कर्म्म विचारि पुनि, रामहिं बाण न दीन॥ ७। ३८॥
अथ रविमाहि सन्तप्त करि, सन्ध्या समय विचारि।
अस्त भये तब युद्ध हू, विरम्यहु तजि सबरारि॥ ८। ३९॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकाशीत्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १८१॥

एकसौबयासी का अध्याय।

दो० इकसैब्यासी महँ कहब, भीष्म राम रण फेरि।
जहँ पुनि मूर्च्छित राम भे, भीष्महु व्यथित न देरि॥ १॥

भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि फिर हमारे सारथी ने अपने अङ्गों में सब घोड़ों के अङ्गों में व हमारे शरीरमें जितने बाण गड़े थे सब निकाले क्योंकि वह बड़ा कुशल सूत था १ घोड़े रथ से छूटते पहिले तो अच्छी तरह लोटे फिर खूब धोये गये उसके पीछे पानी पियाय बाँधे गये सब

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

उनका थका जाता रहा रात्रि में दाना चारा खाय फिर ज्योंकेत्यों हुए इतने में सूर्य्योदय हुआ फिर युद्ध होने लगा २ हमको कवच बख्तर आदि धारण किये रथपर चढ़े शीघ्र आते देख प्रतापवान् परशुरामजी ने भी अपना एक रथ तैयार किया ३ तब हम युद्ध की इच्छा से जामदग्निजी को आते देख अपना श्रेष्ठ धनुष रथ ही पर छोड़ झट-पट रथ से उतर परे ४ व परशुरामजी के प्रणाम कर फिर युद्ध करने की इच्छा से झट अपने रथ पर चढ़ उनके सन्मुख निर्भय हो खड़े हो गये ५ फिर हमने उनके ऊपर बड़ी भारी बाणों की वर्षा की हमको शर वर्षाते देख उन्होंने भी हमारे ऊपर तीरों की झर लगादी ६ फिर बड़ा क्रोध कर जामदग्निजी ने बडे तीक्ष्ण अति घोर बाण महाविषधर सर्प्पों के समान फुफकार करते हुए चलाये ७ हे राजन्! परन्तु हमने बार २ उनके चलाये उन सब बाणों को सैकरों हज़ारों अतितीखे शरों से अन्तरिक्षही में काट डाले ८ फिर महाप्रतापी परशु-रामजी ने हमारे ऊपर दिव्य अस्त्र चलाये उनको हमने अपने दिव्यास्त्रों से आड़ लिया ९ जब इस प्रकार उनकी हमारी ओर से अति विकराल बाणावरी हुई तो आकाश में सब ओर से बड़ा भारी हल्ला हुआ १० हे भारत! तब हमने भृगुनाथजी के ऊपर वायव्यास्त्र चलाया, उसे उन्होंने गुह्यकास्त्र से काट डाला ११ तब हमने मन्त्र से अभिमन्त्रित कर आग्नेयास्त्र चलाया उसे उन्होंने वरुणास्त्र से रोंक लिया १२ इसी प्रकार हमने रामजी के दिव्यास्त्रों को रोंका व उन्होंने हमारे दिव्यास्त्रों को रोंका क्योंकि वे तो बड़े तेजस्वी व शत्रुओं के नाशक हैं क्योंकर न रोंकें १३ तब हे राजन्! हमको बाईं ओर कर आप झट दाहिनी ओर से अति क्रोध कर महाप्रतापी उन्होंने हमारी छाती में बाण मारे १४ कि हमको मूर्च्छा आ गई रथ पर गिर गये तब हमें मूर्च्छित जान हमारा सारथी रथ थोड़ी दूर हटा ले गया व हमको उठाय गोद में बैठाय रथ पर बैठ रहा १५ तब हे भरतश्रेष्ठ!

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

रामबाणों से पीड़ित अत्यन्त मरणतुल्य अचेत रण से कुछ दूर अलग रथ पर सूत की गोद में परे देख अकृतव्रणादि रामजी के शिष्य व काशिराज की कन्या अम्बा ये सब बड़े प्रसन्न हुए व बड़े ज़ोर से हल्ला करने लगे १६ । १७ तब जब हमारी मूर्च्छा जगी सूत के मुख से मूर्च्छित समय के समाचार जान हमने सारथी से कहा कि अब हमारी व्यथा जाती रही जहां रामजी हैं अति वेग वहीं पहुँचावो १८ तब हमारा सूत हमको चाल में पवन के समान नाचते हुए परम शोभित घोड़े जुते रथ को चलाय रणभूमि में ले गया १६ तब हमने अति क्रोध कर अति ही क्रुद्ध परशुरामजी के जीतने की इच्छा से उनके ऊपर बाणों की बड़ी भारी वर्षा की २० सीधे चले जाते हुए उन हमारे प्रत्येक बाणों को रामजी ने तीन तीन बाणों से बड़ी शीघ्रता के साथ काट डाला २१ इससे जितने हमारे बाण थे राम के बाणोंसे कट कट दो दो खण्ड हो पृथ्वी पर गिर पड़े २२ तब हमने काल समान महान् एक बाण ले मार ही डालने के विचार से परशुरामजी के ऊपर चलाया २३ उस बाण के लगने से महाप्रतापी रामजी समर में अतिव्याकुल हो मूर्च्छित हो रथ से पृथ्वी पर गिर परे ॥ २४ ॥

दो० राम गिरे जब भूमि पर, हाहा करि सब लोग ।
व्याकुल भे जिमि रविगिरे,व्यथितजगतयुतशोग॥ १ । २५ ॥
तब सब तापस वृन्द अरु, काशिप सुतातिवेग ।
अति व्याकुल रोदन करत, आये भृगुवर संग ॥ २ । २६ ॥
लपटि छपटि सब रामकहँ, धीरहिं त्यहि समझाव ।
सजल पाणि छुइ अङ्ग त्यहि, जयआशिषहि मनाव ॥ ३ । २७ ॥
तब उठि विह्वल वचन सों, राम कह्यो म्वहि बोलि ।
खड़े भीष्म हो मरहु अब, शर तान्यो धनु खोलि ॥ ४ । २८ ॥
राम चलायो बाण मम, वाम पार्श्व को भेदि ।
व्याकुल ह्वै हम तरु सरिस, घूमिगये त्यहि छेदि ॥ ५ । २६ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

रणमहँ पुनि तीखे शरन, मम हय मारे राम।
पुनि मम अवयव रोमप्रति, हने बाण अति वाम॥ ६। ३०॥
तब हमहूं वर शर हने, सकलशीघ्रगतिजौन।
राम हमारे मध्य महँ, पूरि गये सब तौन॥ ७। ३१॥
ममशर अरु भृगुवरहु के, पूरि गये आकाश।
जासों छादित ह्वै तबहिं, रवि को गयहु प्रकाश॥ ८। ३२॥
मेघरुद्ध इव पवन भो, वायु प्रकम्पन हेतु।
सूर्य्यकिरण रण महँ छिपे, शोभा परम उदेतु॥ ९। ३३॥
पवन किरण यक लग्न सों, प्रकट्यहु अनल प्रचण्ड।
तासों जरि बरि सकल शर, त्वरित भये शतखण्ड॥१०। ३४॥
भस्मरूप पुनि ह्वै सकल, महितल परे नराच।
तब करि कोप सहस्रशत, प्रयुतार्ब्बुद युत आंच॥११। ३५॥
अयुतखर्व्व नीखर्व्व शर, राम कीन सन्धान।
करि अति क्रोध अपार मम, उपर चलायहु आन॥१२। ३६॥
तब हमहूं निज बाण गण, सगर उरग सम देखि।
प्रेरित करि तिन शरनिकर, काटि किये अवशेखि॥ १३। ३७॥
इमि नृप भो वह युद्ध तब, सन्ध्या भई विलोकि।
मम गुरुवर निज थल गये, हमनिजथलअवलोकि॥ १४। ३८॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्व्यशीत्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १८२॥

एकसौतिरासी का अध्याय।

दो० इकसैत्र्यासी महँ कहब, जिमि गङ्गासुत राम।
पुनिकरि युद्ध सुघोरदिन, गये कीन विश्राम॥ १॥

भीष्मजी दुर्य्योधनजी से बोले कि प्रातःकाल होते ही और दिन फिर परशुरामजी से अति दारुण रणसंकुल युद्ध हुआ १ प्रति दिन दिव्यास्त्र जाननेवाले महाशूरवीर परशुरामजी अनेक शस्त्रास्त्र चलाते

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

थे इसमें रोज़ रोज़ नया ही युद्ध विदित होता था २ हे भारत ! उन बाणों को जिनसे वे कटने के योग्य थे वैसे बाणों से हमने काट डाले हमने प्राणों की आशा उस महाभयानक युद्ध में छोड़ दी थी ३ जब इस प्रकार अस्त्रों से अस्त्र काटे गये तो उन महात्मा ने भी अपने प्राणों की आशा छोड़ युद्ध करने का प्रारम्भ किया ४ जब उनके सब अस्त्र रुक गये तो महात्मा परशुरामजी ने हमारे ऊपर अतिघोर रूप काल की छोड़ी उल्का के समान प्रकाशित आगे धद्धाकार बरती तेज से लोक भर में प्रकाशित शक्ति चलाई ५ तब हमने सूर्य्यवत्प्रकाशित सन्मुख चली आती काल समय के प्रचण्ड मार्त्तण्ड के तुल्य प्रज्वलित उस शक्ति को अपने बाणों से काट तीन खण्ड कर पृथ्वी पर गिरा दिया उस समय सुगन्धित पवन बहने लगा ६ हे भारत ! जब वह शक्ति काट डाली गई तो अतिक्रोध कर महात्मा परशुरामजी ने उसस अतिघोर रूप बारह शक्तियां एक ही सङ्ग हमारे ऊपर चलाईं हे भारत ! उन शक्तियों का रूप अति तेज होने व अति चञ्चल होने के कारण वर्णन नहीं कर सक्के ७ किन्तु सब दिशाओं से अग्नि की महाउल्काओं के समान आती हुई उन शक्तियों को देख हम बड़े व्याकुल हुए उन बारहों के नाना प्रकार के चित्रविचित्र रूप थे व उग्र तेज से महाप्रलय के बारहों सूर्य्यों के समान प्रकाशित थीं ८ उन्हीं शक्तियों के चारोंओर बाणों का कराल जाल भी मुनिपाल ने छोड़ा था उसको फैला देख हमने प्रथम बाण जालसे काटडाला फिर बारह अतिविकराल बाण उन बारह शक्तियों के ऊपर एक ही सङ्ग चलाये कि वे सब जहां की तहां नष्ट होगईं॥९॥

हरिगीतिका ॥

तब जामदग्न्य महान क्रोधनिधान करि सन्धानहू ।
अतिघोर रूप विरूप कारण मनुजमारण प्रानहू ॥
वरहेमदण्ड अखण्ड चित्रित शक्ति बहु छोड़ीं तबै ।
जिमि होत उल्कापात घात विघात कर देखीं सबै ॥ १ । १० ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अतिघोर शक्ति सुचर्म्म ऊपर आड़ि काटि कृपानसों ।
बहुदिव्यबाण प्रमाणयुत बरसाय राम महानसों ॥
उन वाजि सूत अबूतकरि मजबूत शायक लायकै ।
यकओर घोर पुकार करि सब गिरे जाय परायकै ॥ २ ॥ ११ ॥
लखि सर्प्परूप अनूप शक्ति निकृत्त मम करबाल सों ।
किय हिय विचार अपार आयुध चार सार विशालसों ॥
युतकोह मोह विहीन अतिहि प्रवीन दीन्ह न रामजू ।
भुज सहस छेदी वेद वेदी नहिं लवेदी कामजू ॥ ३ । १२ ॥

दो० तब शर छोड़े शलभ सम, अति प्रकाश मुनिराज ।
मम शरीर हय सूत रथ, छिन्न किये महराज ॥ ४ । १३ ॥
शरहत रथ हय सूत सब, युगरथ चक्ररु ईस ।
तिलतिल कटिकटि छितिपरे, चकित भये जिन दीख ॥ ५ । १४ ॥
जब तिन शर वर्षा मिटी, तब मम शायक झार ।
उपर भई गुरुदेव के, बही रुधिर की धार ॥ ६ । १५ ॥
बाण जाल सों रामकर, हालभयो स्वइ मोर ।
भयहु हाल त्यहिकाल रवि, अथये रणबँद घोर ॥ ७ । १६ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्र्यशीत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥१८३॥

एकसौचौरासी का अध्याय ।

दो० इकसै चौरासी महँ, पुनि भीषम अरु राम ।
लड़े परस्पर जय चहत, कीन न कहुँ विश्राम ॥ १ ॥

भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि हे राजेन्द्र! जब प्रातःकाल हुआ सूर्य्य बनाय प्रकाशित हुए तो हमारा और भृगुनाथजी का फिर संग्राम होने लगा १ मेघ के समीप टिके रथ पर से परशुरामजी ने हमारे ऊपर ऐसी बाणों की वर्षा की जैसी बादर पहाड़ पर जल की झर लगाते हैं २ तिसके पीछे रामजी ने और अधिक शर झर लगाई कि

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अतिप्रिय मित्र हमारा सूत अतिपीड़ित हो हमको विषाद कराता रथ पर से नीचे गिर परा ३ व अत्यन्त कष्ट पाय पृथ्वी पर जाय बाणघात से पीड़ित अति मूर्च्छित हुआ ४ यहां तक कि रामबाण से ऐसा पीड़ित हुआ कि उस बेचारे हमारे प्यारे के प्राण ही निकल गये उससे एक मुहूर्त्तभर तक हम भी अति भयभीत रहे ५ जब हम सूत के मारेजाने के कारण प्रमत्त से हो गये युद्ध करना ही भूल गये तब तो गुरुजी ने मृत्यु समान बाण हमारे ऊपर बरसाये ६ फिर उस पर भी जो हम को बाणचलाने की सुधि न हुई तो हमें सूत के दुःख से अतिदुःखी जान भगवान् परशुरामजी ने बड़े जोर शोर से कठोर धनुष खींच अतिघोर बाण हमारे ऊपर मारा ७ वह बाण हमारी भारी छाती में लग अति विघाती हो हमें समेत जाय हहाय पृथ्वी पर गिरा ८ तब हे भरतर्षभ! हमको मृतक जान यद्यपि कृपानिधान थे पर अजान के समान भगवान् गुरुजी ने बड़ा नाद किया व बार २ अति हर्ष पाया ९ हे राजन्! जब हम इस प्रकार निहत हो पृथ्वी पर गिर पड़े तो रामजी अत्यानन्दित हो अपने साथियों समेत बड़े वेग से गर्ज्जने लगे १० व इधर जो कौरव लोग हमारे सङ्ग थे जो कि युद्ध देखने की इच्छा से वहां गये थे हमारी वह दशा देख सबके सब बहुत पीड़ित हुए ११ हे राजसिंह! तिसके पीछे हमने पृथ्वी पर परे ही परे सूर्य्य अग्नि के समान प्रकाशित ब्राह्मणों का रूप धारण किये आठ वसुओं को देखा जो कि समर के मध्य में अपनी बाहों के बीच में हमको कर आठों ओर से घेरे खड़े थे १२ उन ब्राह्मण रूप वसुओं ने हमारी ऐसी रक्षा की कि हम मूर्च्छित तो अवश्य हुए पर पृथ्वी तक न पहुँचने पाये बीच ही में उन्हों ने आड़ लिया जैसे किसी की भाई बन्धु रक्षा करते हैं वैसे ही हमारी रक्षा उन ब्राह्मणों ने की १३ तब उन ब्राह्मणों ने कुछ हमको श्वास लेते जान जल के छिप्पे ऊपर मारे जब हमको और भी कुछ चेत हुआ तो हमें गोद में किये वे सब हमसे बोले १४

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कि तुम न डरो न डरो तुम्हारा कल्याण हो कल्याण हो ऐसा बार २ उन्होंने कहा तब उनके वचनों से तृप्त हो हम एकाएकी उठ बैठ देखा तो नदियों में श्रेष्ठ हमारी माता गङ्गाजी स्त्री का वेष धारण किये दिव्य रथ पर चढ़ी आगे खड़ी हैं १५ और हमारे रथ के घोड़ों को अपने हाथों से पकड़े हैं तब हमने माता के चरणों में और अपने पितर उन ब्राह्मण रूप वसुओं के अभिवादन कर रथपर चढ़ अति प्रसन्नता प्रकट की १६ उन माताजी ने रथ घोड़े सहित हमारी रक्षा की व सब रथ की सामग्री की भी रक्षा करती रहीं तब हमने फिर उनके हाथ जोड़ विनय कर बिदा किया १७ इस प्रकार अब थोड़ा ही दिन बाकी रहा तो हमने उन वायुवेग अपने घोड़ों को अपने ही आप हांका व आय परशुरामजी से युद्ध करने का प्रारम्भ कर दिया १८ व पहुँचते ही एक महाबल बाण हृदय भेदन करनेवाला रामजी के ऊपर छोड़ा कि १९ उसके लगते ही अति पीड़ित हो रामजी टिहुनियों के बल पृथ्वी पर गिर पड़े व धनुष हाथ से अलग गिर पड़ा आप मूर्च्छित होगये २० जब सहस्रमुहर प्रति दिन दान करनेवाले रामजी हमारे बाण से निहत हो पृथ्वी पर गिरपड़े तो आकाश में मेघ गर्जने लगे और रुधिर की वर्षा होने लगी २१ व सैकरों उल्कापात हुए बिजुली सहित वज्रपात हुआ बनाय प्रकाशित सूर्य्य को एकाएकी राहु ने आ घेर लिया २२ पवन बड़े कर्कश बहने लगे पृथ्वी चल उठी गीध, काक, चील्ह आनन्दित हो चारों ओर मड़राने लगे २३ दिशाओं में अग्नि की ज्वाला निकलने लगी, शृगाल दिन ही में फेंकर उठे विना बजाये ही नगाड़े बाज उठे २४ ये सब उत्पात भयङ्कर घोर उसी समय हुए जब अति मूर्च्छित हो परशुरामजी पृथ्वी पर गिरे २५ इतने में जो गुरुजी की मूर्च्छा जगी कि झटपट उठ हमसे फिर युद्ध करने को उद्यत हुए व मारे क्रोध के विह्वल हो मूर्च्छित होगये ॥ २६ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

दो० तबकरि कै अतिकोप शर, जबहिं लीन कर राम।
मृत्यु समान न आन कछु, रोके तबहिं महान ॥ १ । २७ ॥
कृपायुक्त ऋषिगण सकल, कहा राम सो येहु।
पर नहिं मानो तिन हनो, कालसरिस शर देहु ॥ २ । २८ ॥
तब रविमन्द मरीचि ह्वै, रजयुत अथयहु जाय।
रात्रिभई रणबन्द भो, निज निज थलसब आय॥३।२९॥
इमि प्रतिदिन सन्ध्यासमय, समरबन्द पुनि प्रात।
होत रहो तेईस दिन, दिन दिन अधिक लखात॥४।३०॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुरशीत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १८४ ॥

एकसौपच्चासी का अध्याय।

दो० इकसै पच्चासी महँ, स्वप्न लख्यहु गाङ्गेय।
परशुराम सों जयलहन, हित सोई यह ज्ञेय ॥ १ ॥

भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि हे राजेन्द्र ! उस तेईसईं रात्रि में हम शिर झुकाय सब ब्राह्मणों, पितरों, सब देवताओं के रात्रि में चलने वाले राक्षसादिकों के राजाओं के प्रणाम करएकान्त में शयन कर मन से यह चिन्तना करने लगे कि १ । २ परशुराम के सङ्ग दारुण युद्ध करते २ हमको बहुत दिन बीत गये अब महानाश दिखाई देता है ३ इससे हम संग्राम में महावीर्य्य पराक्रमी महा बलवान महान् भगवान् विप्रराज महाराज रामजी को न जीत सकेंगे ४ जो हम प्रतापवान् भगवान् राम को रण में जीत सकें तो इस रात्रि में देवगण प्रसन्न हो हमको दर्शन दें ५ हे राजेन्द्र! इतना कह हम दाहिनी करवट लेट सो रहे, जब रात्रि बीत गई बनाय प्रातःकाल होने लगा तो ६ जिन ब्राह्मणों ने मूर्च्छा आने के समय रथ से गिरते हुए हमको उठाय समझाया था व कहा था कि न डरो ७ वे ही सब आठों ब्राह्मण लोग स्वप्न में हमको दर्शन दे चारों ओर से घेर जो कछ

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बोले हे राजन्! तुमसे कहते हैं सुनो ८ वह यह है कि हे गाङ्गेय! उठो न डरो तुमको कुछ भी भय नहीं है हे कौरव्य! हमलोग तुम्हारी रक्षा करते हैं क्योंकि तुम हमीं लोगों के शरीर हो ९ जामदग्न्य राम रण में तुमको किसी प्रकार न जीत सकेंगे हे भरतर्षभ! रण में तुम्हीं राम को जीतोगे १० इस प्रिय अस्त्र को आप अच्छी तरह पहिचानते हो पहिचानते तो होगे क्योंकि पूर्व्वजन्म में तो अच्छी तरह पहिचानते ही थे ११ यह विश्वकर्म्मा का बनाया प्राजापत्य नाम प्रस्वापसञ्ज्ञक अस्त्र है इसको राम भी नहीं जानते न और ही कोई पुरुष पृथ्वी पर जानता है १२ हे वीर! उसका तुम स्मरण करो व अत्यन्त उसका संयोग करो वह अपने आप तुम्हारे समीप स्मरण करते ही आजायगा १३ उससे तुम सब महावीर्य्यों को शिक्षा दोगे और परशुराम भी उससे मरेंगे नहीं १४ इससे तुमको ब्रह्महत्या का पाप भी न लगेगा किन्तु इस बाण के लगने से पीड़ित हो परशुराम जी सोय जायँगे युद्ध करने का स्मरणही उनको न रहेगा १५ तब उनको जीत तुम्हीं फिर उनको उठावोगे फिर समझावो बुझावोगे तो समझेंगे ऐसे शयन से मत्त हो जायँगे १६ हे कौरव्य! प्रभात होते ही रथ पर चढ़ ऐसा ही करो हम लोग मरे को व अत्यन्त सोये को तुल्य ही मानते हैं प्रयोजन तो विजय होनेसे है १७ हे पार्थिव! राम के हाथों कभी न मरोगे इससे अत्यन्त प्रस्वाप से उनको युक्त करो १८ हे राजन्! यह कह प्रकाशित मूर्त्ति सब वे आठों महात्मा एक ही रूप के अन्तर्द्धान हो गये ॥ १९ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि पञ्चाशीत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १८५ ॥

एकसौछियासी का अध्याय।

दो० इकसै छयासी महँ कहब, भीष्म राम रण घोर ।
जामें मरण समान भे, परशुराम करि शोर ॥ १ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि हे भारत ! जब रात्रि बीती प्रातः-
काल हुआ तब हम जागकर स्वप्न का स्मरण कर बहुत हर्षयुक्त हुए १
फिर हमसे उनसे तुमुल रोमहर्षण अद्भुत युद्ध हुआ २ प्रथम भार्गवजी
ने हमारे ऊपर बाणों की वर्षा की, उसे हमने शरों के जाल से निवारण
किया ३ तब परमक्रोध कर व पूर्वदिन के कोप का स्मरण कर महातपस्वी
रामजी ने हमारे ऊपर शक्ति चलाई ४ उसका स्पर्श तो इन्द्र के वज्र
के समान, दीप्ति यमदण्ड के तुल्य, प्रकाश अग्नि के सदृश, समर भर
को लीलने की इच्छा किये हुई थी ५ वह आय हमारे गले और
कांख के बीच हँसिया पर लगी ६ उसके लगते ही हमारे अंग से
वैसा रुधिर बहा जैसे पर्व्वत से गेरू की धारा बहती है ७ तब हमने
भी बड़े क्रोध से परशुरामजी के ऊपर मृत्युसम विषधर सर्प के तुल्य
बाण चलाया ८ हे महाराज ! वह हमारा बाण मुनिराजजी के मस्तक
में लगा, उससे वे महात्मा द्विजराज महाराज ऐसे शोभित हुए जैसे
शृङ्ग सहित पर्व्वत शोभित होता है ९ उसके लगने के पीछे अति
कोप कर हमारी ओर घूम कर उन्हों ने कालाग्नि के समान शत्रु-
नाशक बाण बड़े बल से खींच चलाया १० वह महाउग्र बाण आय
हमारी छाती में लगा लगने के समय विषधर सर्प ही के समान
फुफकार छोड़ता था, लगते ही हम पृथ्वी पर गिरे रुधिर की धारा
चलने लगी ११ कुछ देर मूर्च्छित हुए तुरन्त ही जैसे मूर्च्छा जगी
कि बड़ा क्रोध कर वज्र के समान एक शक्ति हमने भी गुरुदेवजी के
मारी १२ वह शक्ति उन द्विज मुख्य की बीच छाती में लगी, उसके
लगने से विह्वल हो मुनिराज थरथराय कँपने लगे १३ तब महात-
पस्वी उनके सखा अकृतव्रणजी ने उनको छाती से लगाय सुन्दर
वचनों से बहुत समझाया १४ जब अकृतव्रणजी के झारने पोंछने
समझाने बुझाने से स्वस्थचित्त हुए तो अतिक्रुद्ध हो महाव्रतधारी
रामजी ने हमारे ऊपर परमास्त्र ब्रह्मास्त्र चलाया १५ तब उसके विदारण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

करने के लिये हमने भी उत्तम ब्रह्मास्त्र ही चलाया जो कि प्रलय समय की ज्वाला के समान दिखाई दिया १६ हे भारतसत्तम! उन दोनों ब्रह्मास्त्रों से हमारे परशुरामजी के बीच ही में भेंट हुई न उनका हमतक पहुँचा न हमारा उनतक १७ केवल दोनों के मिलने से आकाश में तेजही तेज होगया उसके कारण सब प्राणी बहुत दुःखित हुए १८ उन अस्त्रों के तेज से पीड़ित ऋषि गन्धर्व देवता सबके सब अति व्याकुल हुए १६ और बड़े सन्तापित हुए तिसके पीछे पर्व्वत वन वृक्षादि समेत सब पृथ्वी चल उठी, सब प्राणी बहुत सन्तापित हुए, और अति विषाद को पहुँचे ॥ २० ॥

दो० तब आकाश प्रकाश युत, धूसर दिशा दिखाहिं।
नहिं अकाशगामी पुरुष, रहते व्योम लखाहिं॥ १। २१ ॥
जब देवासुर मनुज सब, हाहा कीन पुकारि।
यहि अन्तर प्रस्वाप शर, छोड़न चहा विचारि॥ २। २२ ॥
ब्रह्मवादियों के वचन, सों प्रस्वाप महान।
चित्रविचित्रित अस्त्र वह, मम मनमाहिं समान॥ ३। २३ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षडशीत्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १८६॥

एकसौसत्तासी का अध्याय।

दो० इकसै सत्तासी महँ, भीष्म विजय जिमि पाव।
परशुराम अविजय कछुक, पायहु वचन बनाव॥ १॥

भीष्मजी बोले कि हे दुर्य्योधन! जैसे ही हमने प्रस्वापास्त्र चलाने का मन किया कि देवताओं ने स्वर्ग में बड़ा भारी हल्ला किया कि भीष्म खबरदार प्रस्वापास्त्र न छोड़ना १ परन्तु हमने नहीं माना परशुरामजी के ऊपर चलाने के लिये धनुष पर प्रस्वापास्त्र चढ़ाय ही दिया तब वह अस्त्र चलाते हुए हम से आय नारदजी बोले २ कि हे कौरव्य! आकाश में टिके ये देवगण तुमको रोकते हैं कि हे भीष्म!

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

प्रस्वापास्त्र न चलाओ ३ क्योंकि परशुरामजी तपस्वी ब्राह्मण सो भी ब्रह्मण्य और तुम्हारे गुरु हैं इनका नाश तुम किसी प्रकार से न करो ४ तिसके पीछे हमने देखा तो स्वर्गमें वे आठ ब्रह्मवादी ब्राह्मण भी खड़े थे जिन्हों ने स्वप्न में हमको प्रस्वापास्त्र छोड़ने को कहा था, वे लोग भी धीरे से हमसे यह बोले कि ५ हे भरतश्रेष्ठ! जैसा नारदजी ने तुमसे कहा है वही करो क्योंकि लोक में यह बड़े कल्याण की बात है जो महात्माओं का कहा मानै ६ तब हमने उस महाप्रस्वापास्त्र को धनुष पर से उतार परशुरामजी के ऊपर चलाने के लिये ब्रह्मास्त्र को प्रकाशित किया ७ तब हे राजसिंह! क्रोधकर मन्दबुद्धि परशुराम ने उस अस्त्र को निवृत्त देख बड़े ज़ोर से कहा कि हे भीष्म! बस अब हम तुमसे जीत गये ८ तब परशुरामजी ने अपने पिता पितामहजी को स्वर्ग से आये हुए देखा जो कि उनके मान्य थे वे लोग आते ही के साथ रामजी को चारों ओर से घेर कर खड़े हो गये व समझाते हुए उस समय में बोले कि ९ हे तात! ऐसा साहस अब कभी न करना जैसा कि तुमने भीष्म के सङ्ग किया है फिर क्षत्रिय जाति उसमें भी भीष्म इनसे युद्ध करना सर्व्वथा तुमको अनुचित है १० हे भृगुनन्दन! युद्ध करना क्षत्रिय का ही धर्म्म है व वेद पढ़ना ब्रह्मचर्य्य से रहना ब्राह्मणों का परम धन है ११ यह बात हम लोगों ने किसी कारण से पूर्व्व काल में कही है कि शस्त्र का धारण बड़ा उग्र कार्य्य है पर उसका उल्लङ्घन कर फिर भी तुमने शस्त्र धारण ही किया १२ हे वत्स! बस हो चुका भीष्म के सङ्ग इतना ही युद्ध बहुत है इसमें तुम्हारा बड़ा भारी मान मर्द्दन होगा इससे इस युद्ध से निवृत्त होवो १३ तुम्हारा कल्याण हो बस धनुर्द्धारण करना इतना ही बहुत है इससे इस दुर्द्धर्षकर्म्म से निवृत्त हो अपना तप करो १४ ये सब देवता लोग भी कहते हैं कि रण न करो इससे तुमको चाहिये कि इस कर्म्म से निवृत्त हो जावो हम लोगों को प्रसन्न करो ये राजा शन्तनु के पुत्र

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भीष्म हैं इन से रण करना अब अधिक ठीक नहीं है १५ इतना रामजी से कह फिर उन लोगों ने हम से कहा कि राम अपने गुरु के साथ भीष्म युद्ध न करो हे कुरुश्रेष्ठ! उनको समर में जीत लेना तुमको उचित नहीं है बरन इन से हार जाने में प्रतिष्ठा है १६ हे गाङ्गेय! अब इस संग्रामभूमि में ब्राह्मण ही का मान करो हम लोग तुम्हारे भी गुरु हैं इससे तुमको रोकते हैं १७ इतना हमसे कह फिर परशुरामजी से कहने लगे कि भीष्म आठ वसुओं में से एक हैं इससे बड़े भाग्य की बात है जो तुम अब तक जीते हो ये महा यशस्वी गङ्गा व शन्तनुजी के पुत्र हैं १८ इससे तुम इनको कैसे जीत सक्ते हो बस अब लौट अपने स्थान पर चले चलो इनके मरण के लिये इन्द्र के पुत्र महाबली पाण्डवों में श्रेष्ठ अर्ज्जुन जी उत्पन्न हुए हैं १९ उनका नरजी का अवतार है और पूर्व्व समय के वे सनातन देव सब प्रजाओं के पति हैं अब सव्यसाची के नाम से तीनों लोकों में महावीर्य्यवान् करके प्रसिद्ध हैं बस ब्रह्माजी ने भीष्म की मृत्यु समय पाय उन्हीं को बनाया है इससे और कोई उनको नहीं मार सक्ता २० भीष्मजी दुर्य्योधनजी से बोले कि जब रामजी के पितरों ने ऐसा कहा तो वे अपने पितरों से बोले कि हम तो युद्ध से न लौटेंगे क्योंकि हमने तो प्रतिज्ञा कर ली है कि चाहे जैसा हो युद्धसे कभी लौटहींगे नहीं २१ व आज तक हम कभी कहीं भी संग्राम से विना जीते लौटे ही नहीं हे पितामह लोगो! अब आप लोग भीष्म ही को समझाय बुझाय लौटा ले जायँ २२ हम तो इस युद्ध से किसी प्रकार न लौटेंगे हे राजन्! इस बात को सुन ऋचीकादि सब ऋषि लोग नारदजी सहित हमारे समीप आय हम से यह बोले कि हे तात! अब इस रण से तुम्हीं लौट जाओ इन द्विजोत्तम परशुरामजी का ही मान करो २३। २४ हमने भी क्षत्रिय धर्म्म की ओर विचार कर कह दिया कि हम भी न लौटेंगे क्योंकि लोक में हमारा भी यही व्रत है कि कभी युद्ध से विमुख

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हो पीछे से पीठ में बाणों का प्रहार सहते न लौटें क्योंकि न हम लोभ से न कृपणता से न भय से न धन के कारण से निरन्तर क्षत्रियों का धर्म्म छोड़ें यह हमने अपनी बुद्धि में निश्चय कर लिया है २५ । २७ हे राजन् ! तब नारदादि सब मुनि लोग व हमारी माता गङ्गाजी सबके सब इकट्ठे हो समर में आय प्राप्त हुए हम उन लोगों के सामने भी उसी प्रकार धनुष पर बाण चढ़ाये दृढ़ निश्चय किये युद्ध करने को समर में तैयार खड़े रहे तब वे सब इकट्ठे हो फिर रामजी से बोले कि हे भृगनन्दन ! ब्राह्मणों का हृदय ऐसा कठोर न होना चाहिये इससे अब तुम्हीं शान्त हो रहो क्योंकि शान्त होना ब्राह्मणों का ही धर्म्म है हे राम ! हे राम ! हे द्विजोत्तम ! अब इस रण से निवृत्तही हो जाइये क्योंकि भीष्म भी तुम्हारे मारे नहीं मर सक्के न तुम्हीं भीष्म के मारे मर सक्के हो २८।३० ऐसा कहतेहुए ऋचीक जमदग्न्यादि मुनियों ने रण को बन्द कराय परशुरामजी के हाथोंसे शस्त्र धरवा दिया ३१ ॥

दो० तब हम फिर उन आठ द्विज, लोगन देखे साथ।
जिमि आठो ग्रह उदित इक, सँग लखि करत सनाथ ॥ १ । ३२ ॥
समरमध्य गत मोहिं वे, बोले करि अति प्रेम।
महाबाहु निजगुरु परशु, रामहिं जाहु सनेम ॥ २ । ३३ ॥
तब हम सुनि सुहृदन वचन, करन लोकहित कर्म्म।
ग्रहणकीन तिन वाक्य लखि, रण निवृत्त गुरु पर्म्म ॥ ३ । ३४ ॥
तब हम राम समीप लहि, प्रणति कीन्ह करजोरि।
रामहु हँसि युतप्रेम कह, वचन सुधा जनु बोरि ॥ ४ । ३५ ॥
भूतल महँ तव सम नहीं, कहीं क्षात्र है और।
जाहु वीर गृह म्वहिं समर, तुम तोष्यहु करि गौर ॥ ५ । ३६ ॥
तब मम सन्मुख राम त्यहि, कन्यहि लीन बुलाय।
सकल महात्मनमध्य कह, दीनवचन बिलखाय ॥ ६ । ३७ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि सप्ताशीत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १८७ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौअट्ठासी का अध्याय।

दो० इकसै अट्ठासी महँ, ह्वै निराश सब भांति।
करन तपस्या यमुन तट, अम्बा गई न शांति॥ १॥

परशुरामजी अम्बा से बोले कि, हे भामिनि! यह बात सब लोगों को व सब लोकों को विदित है कि हमने अपनी शक्ति भर पौरुष कर युद्ध किया १ परन्तु अब इससे अधिक शस्त्र धारियों में श्रेष्ठ भीष्म को अब हम अपनी शक्ति शस्त्र दिखाते हुए नहीं दिखा सके २ बस यही हमारी परमशक्ति है व यही हमारा परम बल है, हे भद्रे! अब तू यथेष्ट चली जा व और कुछ कार्य्य बताव तो वह करें ३ हमारी जान अब तू भीष्म ही के शरण में जा क्योंकि और दूसरी तेरी गति नहीं है, और हम तो महा अस्त्र शस्त्र छोड़ते हुए भीष्म से हार गये ४ ऐसा कह महामनस्वी परशुरामजी ऊधी श्वासें भर मौन हो गये तब वह कन्या भृगुनन्दनजी से बोली कि ५ हे भगवन्! जैसा आप कहते हो यह ऐसा ही है ये उदारमति भीष्मजी समर में देवताओं के भी जीतने के योग्य नहीं हैं ६ आपने यथाशक्ति यथावीर्य्य मेरा कार्य्य किया जो कि विविध प्रकार के अस्त्र शस्त्र चलाय रण में अनिवार्य्य कार्य्य किया ७ पर क्या करो अब युद्ध में भीष्म को मार तो सके ही नहीं बस और सब तो करी चुके, पर मैं भी अब भीष्म की शरण में कभी किसी प्रकार न जाऊँगी ८ किन्तु हे तपोधन! अब मैं वहां जाऊँगी जहां समर में अपने आप भीष्म को मैं ही पतन कराऊँगी, किसी की सहायता की आवश्यकता न रहेगी ९ ऐसा कह मारे रोष के व्याकुल नेत्र कर हमारे वध करने का संकल्प कर व उसी की चिन्ता करती वह कन्या तपस्या करने को चली गई १० इसके पीछे हमसे बिदा हो उन सब मुनियों सहित भृगुनाथजी अपने महेन्द्राचल पर को चले गये ११ उसके पीछे हम भी रथ पर चढ़ ब्राह्मणों

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

से आशीर्व्वाद पाते अपने नगर में आय माता सत्यवतीजी से सब वृत्तान्त निवेदन कर उनके आगे बैठ गये १२ सब समाचार सुन उन्होंने हमारे ऊपर अपनी बड़ी प्रसन्नता दिखाई, उसके पीछे हमने कन्या के वृत्तान्त जानने के लिये बहुत से पुरुष नियत किये १३ और उनसे कहा कि जाय प्रतिदिन के उस कन्या के समाचार हमको देते रहो कि क्या करती है, हमारी प्रेरणा से उन लोगों ने उसके तप करने के स्थान पर जाय रोज २ के वृत्तान्त हमारे पास भेजने का प्रारम्भ किया १४ जैसे ही वह कन्या तप करने के लिये वन को गई वैसे ही हम ऐसे व्यथित हुए कि जानो हमारे प्राण ही निकल गये १५ हे राजन्! आज तक समर में कोई क्षत्रिय अपने वीर्य्य से हमको नहीं जीत सका, हां वेदवित् तपस्वी जितेन्द्रिय ब्राह्मण को छोड़कर क्योंकि हमको अस्त्र शस्त्र न दिखावे ऐसे ही ब्राह्मण क्रोध करे हज़ार लाखबार उससे हारे व हारें १६ यह वृत्तान्त फिर हमने नारदजी व भगवान् व्यासजी स भी कहा तो उन दोनों महात्माओं ने हमसे यह कहा कि १७ हे भीष्म! अब तुम काशिराज की कन्या के विषय में विषाद न करो क्योंकि भाग्य को पौरुष से कोई भी नहीं हटा सक्ता १८ हे महाराज! वह कन्या यमुनाजी के किनारे पर एक आश्रम में टिक जिसे कोई मनुष्य न कर सके वैसा तप करने लगी १९ प्रथम तो उसने यमुना जल के भीतर रात्रि दिन खड़ी हो निराहार उपवास कर एक वर्ष बिताया २० उसके पीछे छः मास तक निराहार अति दुर्ब्बल शरीर रूखी जटा रखाय विना स्नान किये अङ्गों में कीचड़ लगाये केवल वायु पान करती तपस्या ही को धन मानती खड़ी रही २१ फिर एक वर्ष तक अपने आप गिरे गिराये वृक्षों के सूखे पत्ते खाय २ बड़े कोप से पृथ्वी में पैर के अँगूठों के बल खड़ी रही २२ ऐसे ही करते २ उसने बारह वर्ष बिताये तब उसके तप से पृथ्वी अन्तरिक्ष दोनों तपने लगे, उसके नात वांतों ने जाय २ रोंका

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भी परन्तु उसने न माना २३ हे वत्स! तिसके पीछे यमुनाजी का तट छोड़ और २ स्थान जो सिद्ध चारणों से सेवित थे जहां पुण्यात्मा महात्मा तपस्वियों के आश्रम थे वहां २ फिरने लगी २४ व उन सब पुण्य तीर्थों में रात्रि दिन स्नान करती वह काशिराज की कन्या अपनी इच्छा के अनुसार घूमने लगी २५ जैसे कुछ दिन नन्द-प्रयाग में रही फिर उलूकाश्रम में गई फिर च्यवनजी के आश्रम पर रह ब्रह्मावर्त्त में आई २६ फिर देवताओं के यज्ञस्थान प्रयागराज में पहुँची फिर देवारण्य तीर्थ को गई फिर भोगवती पुरी में कुछ दिनों तक रह कौशिकजी के आश्रम पर आई २७ फिर माण्डव्य ऋषि के आश्रम पर जाय दिलीपाश्रम पर पहुँची फिर कुरुक्षेत्र में आय पैलगर्भ के आश्रम पर पहुँची २८ हे राजन्! इन सब तीर्थों में जाय २ उस काशिराज कन्या ने अतिदुष्कर व्रत करने के लिये अपने अङ्ग जल में बहुत २ दिनों तक डुबोये २९ एक दिन हमारी माता गङ्गा जी ने जल के भीतर स्त्री का रूप धारण किये खड़ी हो उससे पूछा कि हे भद्रे! तू किसलिये ऐसे क्लेश सहती है हमसे सत्यही बता दे ३० तब उस निन्दा रहित काशिराज कन्या ने हाथ जोड़ गङ्गाजी से कहा कि हे चारुलोचने! समर में परशुरामजी भीष्मजी से पराजित हो गये हैं ३१ अब जो वे बाण उठावेंगे तो ऐसा दूसरा कौन राजा पृथ्वी पर है जो उन्हें जीत सकै, इससे हम भीष्म के विनाश के अर्थ दारुण तप करती हैं और अभी करती रहेंगी ३२ व इसीलिये हम इस पृथ्वी भर में घूमती हैं कि जिसमें भीष्म हमारे ही हाथों से मारेजायँ ३३ तब गङ्गाजी ने कहा कि तुम बड़ा कुटिल कर्म्म करती हो यह मनोरथ तुम्हारा पूरा नहीं हो सक्ता ३४ यदि तू भीष्म के विनाश ही के लिये ऐसा व्रत करती है तो इसी व्रत में टिकी २ जब तू अपना शरीर छोड़ेगी तो ३५ हे शुभे! तू कुटिला नाम नदी होगी जिसमें चार मास वर्षा ही में जल रहेगा व आठ मास ऐसे ही सूखी परी रहेगी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व वर्षा में भी तेरे तटों में ऐसे दलदल होंगे कि कोई स्नान न कर सकेगा ३६ व तुझमें इतने भयङ्कर घड़ियाल होंगे जिसमें प्राणियों को महाभय होगी इससे कोई कभी स्नान न करेगा ऐसा काशिराज की कन्या से कह हमारी माताजी निवृत्त हुईं ३७ और वह कभी २ आठ मास पर कभी२ दशमासपर थोड़ा जल पीले व यों ही निराहार सब तीर्थों में फिरा करै ॥ ३८ ॥

दो० काशिसुता इमि भूमि पर, तीर्थ करन के लोभ।
घूमत फिरत अनेक विधि, रही न मनमहँ चोभ ॥ १ । ३९ ॥
वह कन्या मरणान्त महँ, वत्स देश महँ जाय।
ग्राहवती कुटिला प्रवृट, में सजला भै आय ॥ २ । ४० ॥
अर्द्ध देह सों वह भई, तपसों कुटिला नद्दि।
आधे सों नृपकी सुता, ज्यहि शिखण्डिनी गद्दि ॥ ३ । ४१ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्यम्बातपःकरणेऽष्टाशीत्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १८८॥

एकसौनवासी का अध्याय।

दो० इकसै ऊननवत्ति महँ, काशिसुतहि वृषकेतु।
कन्या ह्वै पुनि पुत्र ह्वै, भीष्म बधब कहदेतु ॥ १ ॥

भीष्मजी दुर्योधन से बोले कि जब वह तप करती थी जहां कहीं तपस्वियों के आश्रम पर पहुँचती इसे उग्र तप करती देख सब रोंकते थे कि यह कौन कार्य्य तू करती है १ तब तपोवृद्ध उन ऋषियों से वह कन्या बोली कि भीष्म ने मेरा बड़ा निरादर किया है कि मुझ को पति के धर्म्म से भ्रष्ट कर दिया है २ इससे हे तपोधनो! हमारा सङ्कल्प भीष्म के वध के अर्थ है कुछ किसी लोक के अर्थ नहीं है, मेरा यही निश्चय है कि भीष्म को मारही कर शान्त होऊँगी ३ क्योंकि जिस भीष्म ही के कारण मैं जन्मपर्य्यन्त के लिये निरन्तर इस दुःख की बस्ती में बसी हूँ, पति के लोक से विहीन होने के कारण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

न अब मैं स्त्री ही हूँ न पुरुष ही हूँ ४ हे तपोधनो ! समर में विना भीष्म का वध किये मैं इस कर्म्म से निवृत्त न होऊँगी, बस जो मैंने कहा यही मेरे हृदय में संकल्प है ५ स्त्री भाव से तो अब मैं बनाय उदासीन हूँ केवल पुरुष भाव में निश्चय किया है, जो कार्य्य मैंने भीष्म के विषय में विचारा है उसके करने में किसी के रोकने से न रुकूँगी ६ ऋषियों के बीच में वह ऐसा कही रही थी कि उमाजी के पति शूलपाणि महादेवजी ने अपने रूप से उसे आय दर्शन दिया ७ और कहा कि वरदान मांग जो चाहती हो उसने हमारी पराजय अपने से मांगी तब उस मनस्विनी से महादेवजी ने कहा कि अच्छा तू भीष्म का वध करेगी ८ तब वह फिर महादेव जी से बोली कि भला मैं तो स्त्री हूँ समर में मेरी विजय कैसे हो सकेगी ९ हे शिव ! स्त्रीभाव होने से मेरा मन शौर्य्यधर्म्म से रहित हो गया है, और आप कह चुके हैं कि तुझसे भीष्म की पराजय होगी १० इससे हे वृषध्वज ! जिससे आपका वचन सत्य हो वैसा उपाय कीजिये कि जिसमें मैं संग्राम में शन्तनु के पुत्र भीष्म का वध करूँ ११ तब महादेवजी उस कन्या से बोले कि हमारा वचन कभी झूंठा हुआ ही नहीं इससे हे भद्रे ! यह भी सत्य ही होगा १२ तू भीष्म को रण में मारेगी व पुरुषत्व को भी प्राप्त होगी और अन्य देह को पावेगी तब भी इन बातों का स्मरण बना रहेगा १३ राजा द्रुपद के यहां प्रथम तू कन्या होकर उत्पन्न होगी फिर बड़ा महारथ वीर हो जायगी उस महारथ की अवस्था में बड़ी शीघ्रता के सङ्ग अस्त्रशस्त्र चलावेगी व चित्र विचित्र युद्ध करेगी व पुरुषों में बड़ी प्रशंसा होगी १४ हे कल्याणि ! हमने जैसा कहा है सब वैसा ही होगा किसी कार्य्य की उलटा पलटी से स्त्री शरीर से फिर तू पुरुष शरीर हो जायगी ॥ १५ ॥

दो० इमि सब विप्रन के लखत, तासों कहि गिरिजेश ।
महादेव वृषकेतु का, पद्मीं गये स्वदेश ॥ ११६ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

तब वह निन्दा रहित नृप, सुता काष्ठ एकत्र।
करि सब ऋषिगणके लखत, रची चिता यक तत्र ॥ २।१७ ॥
तामहँ निज कर लाय कै, दीन्हीं अनल लगाय।
जब भो अग्नि प्रचण्ड तब, रोषवह्नि सरसाय ॥ ३।१८ ॥
कह गाङ्गेय वधार्थ मैं, पैठत गई समाय।
काशिराज की सुता तहँ, यमुना द्वीप जहाँय ॥ ४।१९ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकोननवत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १८९ ॥

एकसौनब्बे का अध्याय।

दो० इकसै नब्बे महँ कहब, द्रुपदसुता कर जन्म।
शिखण्डिनी ज्यहि नाम पुनि, भयो शिखण्डी वन्म ॥ १ ॥

इतनी कथा सुन दुर्य्योधन भीष्मजी से पूछने लगे कि हे पितामह! शिखण्डी प्रथम कन्या ही फिर पुरुष कैसे हो गया यह हमसे बताइये १ भीष्मजी बोले कि हे राजेन्द्र! महाराज द्रुपद की स्त्री के कोई पुत्र नहीं था तिसपर भी वह राजा को प्राण समान प्रिय थी २ एक समय पुत्र होने के अर्थ राजा द्रुपद ने महादेवजी को तप करने से प्रसन्न किया ३ राजा ने हमारे वध करने की इच्छा से बड़ा भारी तप किया जब महादेवजी प्रसन्न हुए तो कहा कन्या की हमको इच्छा नहीं इससे हमारे पुत्र ही हो ४ सो भी पुत्र हम भीष्म के वध की इच्छा से चाहते हैं जब महादेवजी से उन्होंने ऐसा कहा तो उन्होंने कहा कि अच्छा तुमने प्रथम कन्या का नाम लिया इससे पहले तुम्हारे कन्या होगी फिर वही पुत्र हो जायगा ५ हे महीपाल! बस अब लौट जावो और कुछ न कहो हमारे वचन कभी मिथ्या नहीं हो सक्ते यह सुन नगर में जाय राजा द्रुपद ने अपनी भार्य्या से यह कहा कि ६ हे देवि! हमने बड़ा यत्न किया तप से महादेवजी को प्रसन्न किया पर उन्होंने कहा कि पहले कन्या होकर फिर वही पुरुष हो जायगा ७ हमने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बार २ शिवजी से प्रार्थना की पर उन्होंने कहा तुम्हारे प्रारब्ध में ऐसा ही है अब वह और नहीं हो सक्ता बस वही होगा जो हमने कहा है ८ इसके पीछे जब ऋतु काल आया तो परम मनस्विनी राजा द्रुपद की रानी अपने पति द्रुपदजी को प्राप्त हुई ९ व जैसा गर्भ धारण करने का विधान है उस रीति से धारण किया, ये समाचार आय नारदजी ने हमसे कहे १० जब कमलनयनी द्रुपदराज की स्त्री ने गर्भ को धारण किया तब राजा द्रुपद उस अपनी प्रियभार्य्या को ११ पुत्र के स्नेह से अपने आप सुख देने के लिये सेवा करते थे, इससे उस रानी का गर्भ धारण के समय में जिस २ पदार्थ को मन चला सब उसे तुरन्त मिले १२ इस प्रकार पुत्रहीन राजा द्रुपदजी की पटरानी ने जब दशमास बीत गये तो अति रूपवती एक कन्या उत्पन्न की राजा द्रुपद अपुत्र थे कन्या तो उनके प्रथम से भी थी इस लिये उनकी रानी ने उस कन्या को राजा के प्रसन्न होने के लिये कह दिया कि महाराज हमारे पुत्र हुआ है १३।१४ तब राजा द्रुपद ने उसको गुप्त राख सब संस्कार भी पुत्रवत् कराये और राजा आप तो जान भी गये पर उनकी रानी ने ऐसा गुप्त उस कन्या को राखा कि कोई भी उसे न जान सका कि यह कन्या है इससे राजा को छोड़ कोई भी नगरनिवासी इस वृत्त को न जान सके १५ । १७ राजा ने भी विचारा कि महादेवजी ने तो कहा ही है कि कन्या से पुत्र हो जायगा तो फिर अच्छा है गुप्त ही रहने दो इसी से वे भी सबसे पुत्र ही बताते रहे ॥ १८ ॥

दो० जातकर्म्म सब पुरुष के, द्रुपदराज करवाय ।
नाम शिखण्डी अस द्विजन, सों लीन्ह्यों धरवाय ॥ १ । १९ ॥
हमहीं नारद कथन सों, अरु शिववचन प्रमान ।
करि अम्बा तप धरि हिये, जानत और न जान ॥ २ । २० ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि नवत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १९० ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

एकसौ इक्यानबे का अध्याय।

दो॰ इकसै इक्यानबे महैं, द्रुपद दशार्ण महीप।
निज निज कन्यन कर करे, ग्रहणकीन मतिलीप॥ १॥

भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि राजाद्रुपद ने प्रथम अपनी कन्या को सीना पिरोना चित्रसारी कसीदा सीखनादि स्त्रियों के कर्म्म सिखवाये १ फिर द्रोणाचार्य्यजी से धनुर्विद्या अच्छी तरह पढ़वाई तब हे महाराज! उसकी माता ने अपने पति से कहा कि अब कहीं इस पुत्र के लिये स्त्री ढूंढ़नी चाहिये इतने में राजा द्रुपद ने देखा तो वह कन्या बनाय युवातित्व को प्राप्त हो गई कुचादि उत्पन्न हो आये अब स्त्री मान राजा रानी दोनों ने बड़ी चिन्ता की और अपनी स्त्री से कहा २।३ अब तो यह हमारी कन्या बनाय यौवनधर्म्म को प्राप्त हुई इससे शोक बढ़ाती है आज तक हमने महादेवजी के वचन के भरोसे से गुप्त रक्खा था कि अब पुरुष हुई जाती है अब होती है ४ यह सुन राजा की स्त्री बोली कि हे महाराज! वह तो मिथ्या किसी प्रकार होहीगा नहीं कि यह कन्या पुरुष न होजाय क्योंकि तीनों लोकों के कर्त्ता धर्त्ता भर्त्ता महादेवजी क्यों झूठ कहते ५ इससे जो आपको रुचे तो हे राजन्! हम एक युक्ति कहेंगी हमारा वचन सुनो सुनकर जो आपकी मति में भी आवे तो उसे कीजिये ६ अब आप यत्न से कहीं इसका विवाह किसी की कन्या के साथ कीजिये हमारे विचार में आता है कि महादेवजी का वचन तो सत्य ही होगा क्या सन्देह है ७ इस प्रकार स्त्री पुरुष दोनों ने सम्मत कर बनाय अपने मनों में निश्चयकर दशार्णदेश के राजा की कन्या अपनी को पुत्र बनाय विवाह करने के लिये माँगी ८ तब राजसिंह राजाद्रुपदजी ने प्रथम सब राजाओं की वंशावली मँगवाय उनके कुलों के समाचार सुन दशार्णदेश के राजा का वंश अच्छा जान उनकी कन्या अपने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

शिखण्डी नाम पुत्र की स्त्री बनाने के लिये अङ्गीकार किया ९
हिरण्यवर्म्मा नाम उन दिनों में दशार्णदेशाधिपति थे उन्होंने अपनी कन्या का विवाह शिखण्डी के सङ्ग कर दिया १० यह दशार्णदेश का राजा बड़ा दुर्ज्जय दुर्द्धर्ष था सेना भी हिरण्यवर्म्मा की बड़ी भारी थी मनस्वी भी वह एक ही था ११ विवाह होजाने पर दशार्णदेश के राजा की कन्या बनाय यौवन को प्राप्त हुई व यह द्रुपदराजा की शिखण्डिनी कन्या जानो प्रथम ही बनाय ज्वानी हो चुकी थी १२
शिखण्डी तो विवाह कर अपने राज्य को आया दशार्णदेश के राजा की कन्या जब बधूप्रवेश में तीसरे वर्ष आई तो उसने शिखण्डी को जाना कि यह भी स्त्री है १३ तब अपनी सखियों से उसने कहा कि यह जिसके सङ्ग हमारा विवाह हुआ है पुरुष नहीं स्त्री ही है हम दशार्णदेश के राजा की कन्या ठहरीं व यह द्रुपददेश के राजा की शिखण्डिनी नाम कन्या है १४ हे राजन्! तब दशार्णदेश के राजा के यहां की जो धात्रियां संग आई थीं सब बहुत दुःखित हुईं व दो चार अपनी दासियों को दशार्णदेश को भेजा १५ उन दासियों ने जाय दशार्णदेश के राजा से सब समाचार कहे जैसे छल से स्त्री के सङ्ग स्त्री का विवाह हुआ था इस बात को जान दशार्णराज ने बड़ा भारी कोप किया १६ व यहां शिखण्डी स्त्री का वेष छिपाये पुरुष बनाहुआ राजकुल में यथेच्छ विहार करता था १७ जब राजा हिरण्यवर्म्मा ने ये वृत्तान्त सुने तो वह अति दुःखित हुआ॥ १८॥

दो० तीव्रकोप युत ह्वै तबहिं, हाटकवर्म्मा भूप।
द्रुपदराज गृह दूत तिन, पठयहु परम अनूप॥ १। १९॥
कनकवर्म्म नृप दूत पाञ्चालमहीपहि पाय।
लहि एकान्त अकेल ह्वै, बोल्यहु वचन ढिठाय॥ २। २०॥
भूप दशार्णाधिप वचन, तुमसन भाष्यहु येहु।
कुपित तुम्हारे छलन सों, ह्वै कह सो पुनि लेहु॥ ३। २१॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

भूप निरादर करत मम, यह दुर्म्मन्त्रित तोर।
जो मम कन्या निज सुता, के विवाह हित जोर ॥ ४ । २२ ॥
विप्रलम्भ जो कीन तुम, ता फल लहहु विमूढ़।
सजनअमात्यादिकसहित, हतों होहु आरूढ़ ॥ ५ । २३ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वण्येकनवत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १९१ ॥

एकसौबानबे का अध्याय।

दो० इकसै बानबवें महँ, द्रुपदराज निज नारि।
मत पूछ्यहु सम्बन्धि कहँ, समझायहु निरधारि ॥ १ ॥

भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि जब दशार्णदेश के राजा के दूत ने ऐसा वचन कहा तो बँधे चोर के वचन के समान राजा द्रुपद के मुख से कुछ वचन न निकला १ पर यत्न उन्होंने यह किया कि अपने बहुत से दूत समधी के पास उन्होंने भेजे उनके द्वारा कहला भेजा कि यह बात झूठी है भला ऐसा भी कहीं होता है जो कन्या ही के साथ कन्या का विवाह हो २ कुछ दिन ऐसा करने से बीते तब फिर हिरण्यवर्म्मा राजा ने निश्चय जाना कि सत्य सत्य द्रुपद राजा की भी कन्या ही है पुत्र नहीं है इससे अपने यहां द्रुपदराज के ऊपर चढ़ाई करने का विचार करने लगा ३ तब उसने अपने मित्रों को राजा द्रुपद के समीप भेजा व कहा कि धात्रियों के कहने से विदित हुआ है कि द्रुपदराज ने अपनी कन्या के सङ्ग हमारी कन्या का विवाह करा लिया है यह वृत्त तुम लोग भी उनसे जाय कहो ४ उन लोगों को ऐसा कह वहां भेज अपने यहां बड़ी भारी सेना इकट्ठी की व द्रुपदराज के ऊपर चढ़ाई करने के विषय में सबों से सम्मत पूछा ५ व सब अपने मन्त्रियों से भी राजा हिरण्यवर्म्मा ने द्रुपद के ऊपर चढ़ाई करने के विषय में सम्मत लिया ६ तब सब राजा लोगों व मन्त्रियों का सम्मत हुआ कि यदि यह बात सत्य ही हो शिखण्डिनी

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

कन्या ही हो तो ७ हम सब लोग वहां जाय पाञ्चाल राज को बँधुवाकर आपके पास ले आवेंगे व पाञ्चाल देश में दूसरा राजा स्थापित कर ८ शिखण्डी सहित पाञ्चालराज का वध कर डालेंगे ९ इस बात को फिर राजा ने सत्य जान फिर द्रुपदराज के पास दूतों को भेज कहला भेजा कि खड़े रहो हम आय तुमको वहीं मारे डालते हैं १० भीष्मजी बोले कि राजा द्रुपद एक तो स्वभाव ही से डरभुत थे फिर अपराधी भी ठहरे इससे दशार्णराज का सन्देश सुन अति भय-भीत हुए ११ फिर राजा हिरण्यवर्म्मा के समीप दूत भेज एकान्तमें राजा द्रुपद अपनी स्त्री से बोले १२ राजा भय के मारे कँपते थे व मारे शोक के हत हो गये थे इससे बहुत धीरे से शिखण्डी की माता अपनी रानी से यह बोले कि १३ हमारे समधी हिरण्यवर्म्माजी मारे कोप के व्याकुल बड़ी भारी सेना लिये हमारे ऊपर चढ़ आवेंगे १४ अब हम तुम इस शिखण्डी के विषय में कौन उपाय करेंगे क्योंकि शिखण्डी तो तुम्हारा पुत्र करके प्रसिद्ध है व वास्तव में कन्या तो हुई है १५ इससे वे भी इसको कन्या ही जान अपने इष्ट मित्र सेनादि सङ्ग ले यहां आय हमको उच्छिन्न किया चाहते हैं १६ अब इस विषय में सत्य सत्य सब लोगों के सामने बताओ जिसमें सब लोग जानें कि राजा नहीं जानते कि शिखण्डी तुम्हारा पुत्र नहीं है यह बात कह राजा ने प्रत्यक्ष में रानी से पूछा कि शिखण्डी पुत्र ठीक है व जैसा हमारे समधी साहब जानते हैं कि यह कन्या है यह बात ठीक है अब तुम्हारा वचन सुन फिर हम वैसा उपाय करेंगे ॥ १७ ॥

दो० अब हम कहँ संशय बड़ो, बहुरि शिखण्डिहु काहिं।
तुमहूँ कहँ बड़ कष्ट है, यामहँ संशय नाहिं ॥ १ । १८ ॥
यासों सब दुख मिटन हित, तुम निश्चय कहि देहु।
तिमि हम करहिं उपाय सुत, कन्या जो कुछ येहु ॥ २ । १९ ॥
तुम जनि डरहु शिखण्डिजनि, डरहु प्रिये तुम आज।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जो कुछ होय बताव वह, अब जनि करियो लाज ॥ ३ । २० ॥
हम छल कीन दशार्णनृप, सों यामहँ न सँदेह।
यासों कहु भामिनि यथा, करहुँ भूप हित नेह ॥ ४ । २१ ॥
यदपि भूप जानत रहो, अन्य जनावन हेत।
पूछ्यहु प्रियहि समक्ष महँ, सो बोली सुख देत ॥ ५ । २२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि द्विनवत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १९२ ॥

एकसौतिरानबे का अध्याय।

दो० इकसै तिरानबे महँ, वनहिं शिखण्डी भाग।
तहँ तपकरि वर यक्ष को, देख्यो अति अनुराग ॥ १ ॥

भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि तब शिखण्डी की माता ने सबके सामने अपने पति से कहा कि सत्य सत्य यह शिखण्डिनी नाम कन्या है शिखण्डी नाम पुत्र नहीं है १ हे महाराज! मेरे पुत्र तो थाही नहीं इससे सौतों के भय से शिखण्डिनी कन्या के उत्पन्न होने पर भी मैंने आप से कह दिया कि पुत्र उत्पन्न हुआ है २ आपने हमारे कहने से मान लिया कि ऐसा ही होगा इससे प्रीति से इसके सब संस्कार भी पुत्र ही के समान किये कराये ३ इसकी भार्य्या भी आप दशार्ण देश के राजा की कन्या को विवाह करके बनाई हमने भी जो ऐसा कह दिया था सो महादेवजी के वचन के विश्वास पर कहा था क्योंकि जानती थीं कि कन्या हो कर फिर पुरुष होनेवाला है इससे अबतक आप से भी नहीं बताया ४ इतना सुन द्रुपददेश के राजा यज्ञसेनजी ने सब वृत्तान्त अपने उत्तम मन्त्रियों से कह फिर अपनी प्रजाओं की रक्षा के विषय के सम्मत मन्त्रियों से पूछे ५ व सब से कहा कि मित्रो! देखो हमने जो दशार्णदेश के राजा को अपना समधी बनाया सो कुछ अनुचित नहीं किया था सुनते ही हो रानीने आज हमसे बताया रहा अबकि दशार्णराज इसको अनुचित जान चढ़े आते हैं तो अपने

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

नगर की रक्षा करनी चाहिये ६ हे दुर्य्योधन ! ऐसा कह राजा द्रुपदजी ने अपने नगर की बड़ी भारी रक्षा की व नये सिरे से रँगाया छुहाया यद्यपि उनका नगर स्वभाव ही से बहुत रँगा छुहा था ७ और दशार्ण देश के बलवान् राजा के सङ्ग विरोध होने से रानी सहित राजा बड़े दुःखित भी हुए ८ अब हम कैसा करें जिसमें समधी के सङ्ग यह बड़ा भारी विग्रह न हो यह बात मन से निश्चय कर देवताओं की पूजा करने लगे ९ राजा को देवताओं की पूजा करते देख उनकी रानी बहुत शोच विचार अपने राजा से यह वचन बोली १० कि जो लोग कल्याणवान् भी हैं कुछ दुःखादि उनके नहीं हैं उनको भी देवताओं की पूजा सदा करनी चाहिये फिर दुःख पाने पर क्या कहें उसमें तो अवश्य ही करनी चाहिये परन्तु दुःखसमय में देवता की आराधना के लिये ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिये इससे आप ब्राह्मणों की ही पूजा कीजिये ११ और उनको बहुत सी दक्षिणा दीजिये जानो सब देवताओं की पूजा कर चुके व देवताओं की अर्चा आप भी करते जाइये व अग्नियों में आहुतियां दीजिये दिलाइये जिस से दशार्णदेश का राजा यहां न आ सके १२ मनसे यही चिन्तना किये रहिये कि समधी से युद्ध न हो, यह बात ब्राह्मणों व देवताओं के प्रसाद से हो जायगी अन्तर न पड़ेगा १३ हे राजन् ! मन्त्रियों के साथ जो तुमने इस पुर के नाश न होने के विषय में रक्षा आदि विचारी हो वह भी करते रहो १४ क्योंकि मनुष्यकर्म्म सहित देवकर्म्म अत्यन्त सिद्ध होता है और जब दैव मानुषकर्म्मों में परस्पर विरोध होता है तो दोनों नहीं सिद्ध होते १५ इससे मन्त्रियों के साथ नगर की रक्षा का विधान भी कीजिये फिर देवताओं की पूजा भी करते रहिये १६ इस प्रकार वार्त्ता करते शोक में युक्त राजा रानी को देख महातपस्विनी शिखण्डिनी कन्या बहुत लज्जित सी हो गई १७ फिर उसने चिन्तना की कि ये हमारे पिता माता हमारे ही लिये अति दुःखित हैं इससे

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

हम कहीं जाय अपने प्राण छोड़ दें तो अच्छा हो १८ अत्यन्त शोक-युक्त हो ऐसा निश्चय कर वह कन्या अपने घर से निकल बड़े दुर्गम वन को चली गई १९ जिस वन में कन्या पहुँची उसकी रक्षा एक बड़ा धनवान् स्थूणाकर्ण नाम यक्ष करता था उसके भय से कोई पुरुष वहां नहीं जाता था २० वहां जो उस यक्ष का मन्दिर बना था उसमें अमृत की बटी बूक कर तो चूना बनाया गया था उसी से चूनाकारी हुई थी और गंड़रे की जड़ के परिमल का धुआं वहां होता था इससे अति सुगन्धित था फाटक व उसका सरदर बड़ा ऊंचा था २१ उस स्थान पर जाय राजा द्रुपद की शिखण्डिनी नाम कन्या ने बहुत दिनों तक निराहार रह अपना शरीर बनाय दुर्बल कर डाला २२ तब स्थूणाकर्ण नाम यक्ष ने आय दर्शन दे अति कोमल वचन कहा कि तू यह क्या करती है और क्या चाहती है हमसे सत्य सत्य कह दे हम तेरा कार्य्य करेंगे २३ तब उसने यक्ष से बार बार कहा कि मेरा कार्य्य किसी के करने के मान का नहीं है इससे क्या कहूं तब उस यक्ष ने कहा कि तू कह तो हम तुरन्त कर देंगे चाहे जैसा कठिन कार्य्य हो ॥ २४ ॥

दो० नृपकन्ये हम धनप के, हैं अनुचर जिय जानु।
जो अदेय देहहुँ कहसि, निजवाञ्छितजियआनु॥ १। २५॥
तबहिंशिखण्डीनिजअखिल, वृत्त निवेदन कीन।
स्थूणाकर्णक यक्ष सों, जो सब विधि परबीन ॥ २। २६ ॥
यक्षाधिप सुनिये पिता, मम अपुत्र न नशाय।
कनकवर्म्मनृप क्रोधयुत, ता ऊपर चढ़ि आय ॥ ३। २७ ॥
महाबली वह नृपति है, कनककवचज्यहिनाम ।
तासों रक्षिय मोहिं मम, मातहि पितहि ललाम ॥ ४। २८ ॥
मम दुखनाशन हित करी, आप प्रतिज्ञा यक्ष।
अब स्वइ करहु उपाय ज्यहि, होउँ पुरुष सुख पक्ष ॥ ५।२९ ॥

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

जबतक वह नृप मम पुरहि, नहिं आवे तब ताहिं ।
करु प्रसाद मम उपर निज, यक्ष सुगुनि मन माहिं॥ ६ । ३० ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि त्रिणवत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १९३ ॥

एकसौचौरानबे का अध्याय ।

दो० इकसै चौरानबे महँ, जिमि शिखण्डि वर पाय ।
कन्या से पूरुष भयो, स्त्रीसुख भोग्यहु आय ॥ १ ॥

भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि शिखण्डी के वचन सुन मन में चिन्तना कर भाग्य से उपपीड़ित हो वह यक्ष शिखण्डी से बोला १ कि अच्छा स्त्री से पुरुष तुम हो जावगे पर वह तुम्हारा ऐसा होना हमारे दुःख का कारण होगा इससे हे भद्रे! हम तुम्हारा काम तो करेंगे परन्तु हम इस विषय में जो करार करते हैं उसे सुनो २ कुछ काल के लिये हम अपना पुंस्त्व तुमको देंगे पर जब तक का कौल होजाय तब तुमको आना होगा यदि आवो तो हम से सत्य कहो ३ हम सङ्कल्पसिद्ध हैं इससे यथेच्छचारी हैं जब चाहते तब अपना रूप बदल लेते हैं इससे अब हमारे प्रसाद से तुम अपने पुर व भाई बन्धु माता पिता की रक्षा करो ४ अब हम तुम्हारा स्त्रीलिङ्ग धारण करेंगे व तुम हमारा पुँल्लिङ्ग धारण करो हम तुम्हारा प्रिय करेंगे पर तुम बताओ कब आवोगी ५ यह सुन शिखण्डिनी बोली कि आप कछु काल तक हमारा स्त्रीत्व धारण किये रहिये फिर हम आय आप का पुँल्लिङ्गत्व आपको देजायँगी ६ जब राजा दशार्ण चला जायगा तब हम यहां आय आपका पुंस्त्व आपको देदेंगी हम फिर कन्या होजायँगी और आप पुरुष होजायँगे ७ भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि यह कह परस्पर उन दोनों ने प्रतिज्ञा करली फिर आपस में दोनों ने अपने-अपने देह बदल लिये ८ स्थूणाकर्ण यक्ष ने तो स्त्री का स्वरूप धारण कर लिया और शिखण्डी ने दिव्य यक्ष पुरुष का रूप धारण कर

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

लिया ६ इसके पीछे हे भारत! द्रुपद का पुत्र शिखण्डी पुरुष का रूप पाय बहुत हर्षित हो अपने नगर में आय अपने पिता के पास पहुँचा १० जैसा वृत्तान्त वन में हुआ सब ज्यों का त्यों अपने पिता द्रुपद से निवेदन किया द्रुपद इस वृत्तान्त को सुन बहुत हर्षित हुए ११ व स्त्री पुरुष दोनों ने बैठकर महादेवजी के वचन का स्मरण किया व एक दूत झटपट दशार्णदेश के राजा के पास यह सन्देश लेकर भेजा कि १२ आप हमारे वचन का विश्वास कीजिये हमारा यह पुत्र पुरुष ही है दूत वहां पहुँचने ही न पाया कि दशार्णदेश का राजा खुद यहां को चढ़ आया १३ व मारे दुःख शोक के राजा द्रुपद के राज्य में आया व काम्पिल्यनाम नगर में उतरा जो उस राजधानी से थोड़ी ही दूर पर है १४ व एक वेदपाठी ब्राह्मण को दूत बनाय राजा द्रुपद के पास भेजा कि हे दूत! हमारी जबानी महाअधम राजाद्रुपद से कहो कि १५ हे दुर्म्मते, राजन्, द्रुपद! जो तुमने हमारी कन्या अपनी कन्या के विवाह के अर्थ ग्रहण किया है इस गर्व्व का फल आज ही देखोगे इसमें कुछ भी संशय न जानना १६ यह समझाय उस अपने पुरोहित ब्राह्मणोत्तम को द्रुपद के पास भेजा वह दशार्णराज की प्रेरणा से द्रुपद के समीप आया १७ व इत्तलाकर राजा द्रुपद की सभा में पहुँचा राजा द्रुपद ने बड़ी भारी उस ब्राह्मण की पूजा की १८ व सब पूजा शिखण्डी ही के हाथों पहुँचवाई परन्तु उन पुरोहितजी ने उस पूजा को ग्रहण न करके यह वचन कहा कि १९ जो कि दशार्णदेश के राजा ने उनसे कहा था कि हे अधमाचार! जो कि तुम्हारी कन्या ने हमको छला है २० उस पाप के करने का फल भोगो हे दुर्म्मतिवाले! हे राजन्! अब संग्राम में हमको युद्ध देवो २१ तुम्हारे मन्त्री पुत्र कुटुम्बादि सबों को हम उच्छिन्न करदेंगे यह निन्दापूर्वक वचन राजा को सभा के बीच में उन पुरोहित देवता ने सुनाया २२ इस बात को सुन राजा द्रुपद ने बड़े प्रेम से शिर नीचे झुका लिया २३

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

व कहा कि हे ब्राह्मण! हमारे समधी की जबानी जो आपने हमसे कहा उसका उत्तर हमारा भेजा हुआ दूत राजा से कहेगा २४ इतना कह राजा द्रुपद ने भी महात्मा राजा हिरण्यवर्म्मा के पास एक वेदवादी ब्राह्मण ही को फिर दूत बनाय भेजा २५ वह ब्राह्मण दशार्ण देश के राजा के पास जाय वह वचन बोला जो कि राजा द्रुपद ने कहा था २६ वह यह था कि यह हमारा कुमार पुत्र ही है आप जैसी चाहें परीक्षा ले लें किसी ने आप से मिथ्या ही कह दिया है कि वह स्त्री है इस बात का विश्वास किसी प्रकार न मानना चाहिये २७ राजा द्रुपद के ऐसे वचन सुन दशार्णदेश के महाराज ने अतिक्रोध कर अतिरूपवती बहुत सी ज्वानी स्त्रियां द्रुपदराज के यहां भेजीं कि तुम जान आवो शिखण्डी स्त्री है व पुरुष है २८ उन स्त्रियों ने यहां आय अब तो शिखण्डी पुरुष हो ही गया था अच्छी तरह परीक्षा ले जाय राजा हिरण्यवर्म्मा से कहा कि इसमें कुछ भी संदेह नहीं है शिखण्डी महानुभाव पुरुष ही है स्त्री किसी प्रकार नहीं है २९ इस बात को सुन राजा हिरण्यवर्म्मा बहुत प्रसन्न हुआ और अपने समधी द्रुपद को शिखण्डी सहित अपने यहां बड़ी धूमधाम से बुलाया ३० फिर प्रसन्न हो शिखण्डी को बहुत सा धन दिया बहुत से हाथी, घोड़े, दास, दासी, रथादि भी दिये ३१ इन्होंने भी बड़ा आदर सत्कार राजा का किया चलने के समय राजा पुर में भी आया अपनी कन्या को बहुत अपकार के वचन कह अपनी सेना समेत निज देश को चला गया जब राजा दशार्ण चले गये और यह सब दोष जाता रहा सब परीक्षादि हो गई तो शिखण्डी बहुत प्रसन्न हुआ ३२ अब वहां इसी बीच में पालकी पर सवार कुबेरजी तीर्थ यात्रा के प्रसङ्ग से घूमते २ एक दिन स्थूणाकर्ण यक्ष के स्थान पर आये ३३ उन्होंने स्थूणाकर्ण का स्थान बड़ा चित्रविचित्र देखा जिस में नाना प्रकार के पुष्पादि लगे थे ३४ व जो खसखस की जड़ के

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

परिमल के धुआं से सुगन्धित चन्दनादि और भी गन्धों से सुगन्धित सुन्दर वस्त्रों की चाँदनियों से तना ध्वजापताकादिकों से अलंकृत भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य चार प्रकार के अन्नों से भरा ३५ वह ऐसा भूषित स्थान देख कुबेरजी ने अपने नौकर चाकर यक्षों से कहा कि हे अमित विक्रमो ! स्थूणाकर्ण का मकान तो इस प्रकार का शोभित है पर वह मूर्ख हमारे समीप क्यों नहीं आता ३६ जिससे जान बूझकर वह मन्द हमारे समीप नहीं आता इससे हमारे मत से उसको बड़ा भारी दण्ड देना चाहिये ३७ यह सुन उसके वहां रहनेवाले यक्ष बोले कि हे महाराज! राजा द्रुपद के शिखंडिनी नाम कन्या हुई थी उसको किसी कारण से स्थूणाकर्ण ने अपना पुरुषचिह्न दे दिया है ३८ व आपने उसका स्त्री का चिह्न ले लिया है इसी से स्त्री होकर घर के भीतर घुसा बैठा है स्त्री स्वरूप के कारण लज्जित है इसी से आपके निकट नहीं आता ३९ बस हे राजन् ! इसी कारण से स्थूणाकर्ण तुम्हारे पास नहीं आता और कुछ कारण नहीं है यह सुन अब जैसा उचित हो यहां रहनेवालों को वैसा कीजिये ४० तब कुबेरजी ने कहा कि अच्छा हमारे समीप तक स्थूणाकर्ण को लिवा लावो हम उसको दण्ड देंगे यह बात बार२ कुबेरजी ने कही ४१ जब ऐसी आज्ञा हुई तो वह स्थूणाकर्ण कुबेरजी के पास आया पर स्त्री स्वरूप होने से लज्जित अलग खड़ा रहा ४२ उसको देख कुबेरजी ने सब यक्षों से कहा कि अब इस पापी का रूप स्त्री ही का बना रहै ४३ फिर ऐसा सब यक्षों से कह कुबेरजी ने स्थूणाकर्ण से कहा कि हे मन्दात्मन्! जिससे कि तुमने सब यक्षोंका अपमानकर शिखंडी का स्त्रीलक्षण ग्रहण किया और अपना पुरुषलक्षण उसको दिया ४४ हे दुष्ट ! जिससे तुमने यह उलटा कर्म्म किया ब्रह्मा की सृष्टि ही उलट दी इससे अब आज से तुम स्त्री ही बने रहो और शिखण्डी पुरुष ही बना रहै ४५ तब सब यक्षों ने स्थूणाकर्ण के लिये बार बार प्रार्थना

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

की कि महाराज इस शाप की कुछ मर्यादा कर दीजिये कि इतने दिनों के पीछे इसका अन्त होगा ४६ तब यक्षराज महात्मा कुबेरजी ने उस शाप के अन्त करने की इच्छा से सब यक्षों से कहा कि ४७ हे यक्षो! जब शिखण्डी मारा जायगा तब थूणयक्ष फिर पुरुष हो जायगा बस हमने इस शाप का यही अन्त कह दिया अब यह आनन्दित हो ४८ कुबेरजी ऐसा कह सब यक्षों से पूजित हो अपने सब अनुचरों सहित अपनी अलकापुरी को चले गये ४६ और स्थूण शाप पाय वहीं रहने लगा यहां जब समय पूरा हुआ दशार्णराज प्रसन्न हो शिखण्डी की परीक्षा ले चला गया तो शिखण्डी थूणाकर्ण के समीप आया ५० व प्रणाम कर बोला कि हे भगवन्! मैं अब आ गया अपना पुरुषत्व लीजिये मेरा स्त्रीत्व मुझे दीजिये तब स्थूणाकर्ण प्रसन्न हो शिखण्डी से बार बार बोला कि हम तुम्हारे ऊपर बहुत प्रसन्न हैं ५१ क्योंकि तुम अपनी सिधाई से समय पर आये ऐसा कह शिखण्डी से सब वृत्तान्त कहने लगा ५२ हे राजकन्ये! तुम्हारे लिये हमको कुबेरजी ने शाप दे दिया है इससे तुम सुखपूर्वक सबों के बीच में फिरो हम स्त्री ही का स्वरूप धारण किये रहेंगे ५३ इसको हम भाग्य ही का कारण मानते हैं कि उधर तुम्हारा यहां से जाना हुआ और इधर कुबेरजी के हमको दर्शन हुए ५४ भीष्मजी दुर्य्योधन से बोले कि जब उस यक्ष ने शिखण्डी से ऐसा कहा तो अति हर्षित हो शिखण्डी अपने नगर को चला आया ५५ व यहां नाना प्रकार की पूजा दान दक्षिणादिकों से ब्राह्मण, देवता, ग्रामदेवी, देव, चौरहा आदि की पूजा करने लगा ५६ व राजा द्रुपद भी अर्थ सिद्ध पाय अपने पुत्र शिखण्डी और भाई बन्धुओं के सङ्ग परमानन्दित हुए ५७ हे कौरवनन्दन! अपने शिखण्डी पुत्र को धनुर्वेद पढ़ने के लिये द्रोणाचार्य्यजी के पास भेजा क्योंकि प्रथम जब शिखण्डी स्त्री था तब भी उसने कुछ धनुर्विद्या सीखी थी पर स्त्री होने के कारण

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

अच्छी तरह अभ्यास न हुआ था अब फिर द्रोणाचार्यजी का आय शिष्य हुआ ५८ व उसने चारपदयुक्त पूरा धनुर्वेद तुम लोगों के सङ्गही सङ्ग द्रोणाचार्य्यजी से पढ़ा उसके भाई धृष्टद्युम्न ने भी उसी के सङ्ग ही सब धनुर्वेद पढ़ा ५६ ये सब वृत्तान्त हमसे हमारे दूतों ने आय आय कहे जिनको हमने इस भेद के जानने के लिये नियत किया था व वे गूंगे जड़ बहिरे बने वहां टिके रहते थे ६० हे कुरुश्रेष्ठ! इस रीति से राजाद्रुपद का पुत्र महारथ शिखण्डी प्रथम स्त्री उत्पन्न हो फिर पुरुष हो गया ६१ वह जो काशिराज की अम्बा नाम जेठी कन्या थी वही हमारे मारने के लिये द्रुपदराज के यहां शिखण्डी होकर उत्पन्न हुई॥ ६२॥

दो० यासों धनु शर कर गहे, युद्धोद्यत यहि काहिं।
क्षणहूँभर हम लखिसकत, नहिंन हतब रणमाहिं॥ १ । ६३॥
जासों मम यह व्रत प्रकट, है भूतल महँ भूप।
स्त्री में स्त्रीपूर्वकहु में, स्त्रीनामी स्त्री रूप॥२ । ६४॥
इनपर छोड़त बाण नहिं, जानहु कौरव राज।
यहिकारणहिशिखण्डिकहँ, नहिं मारब महराज॥ ३ । ६५॥
भीष्म हतैं जब नारि कहँ, करहिं प्रज्ञ उपहास।
यासों रण सन्मुखहु लखि, हम न हतब त्यहिश्वास॥ ४ । ६६॥
इमि दुर्योधन सुनि बचन, शोच्यहु सहित विधान।
स्त्री सों रण करनो उचित, नहिं भीष्महि यह मान॥ ५ । ६७॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि चतुर्णवत्यधिकशततमोऽध्यायः॥ १६४॥

एकसौ पंचानबे का अध्याय।

दो० एकसै पञ्चानबे महँ, भीष्म कह्यहु निज सैन्य।
जै दिन महँ पाण्डवकटक, जो मारहिं तजि दैन्य॥ १॥

सञ्जय धृतराष्ट्र से बोले कि जब रात्रि बीती बनाय प्रातःकाल हुआ तो तुम्हारे पुत्र दुर्योधन ने सब सैन्य के बीच में फिर भीष्म-

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पितामहजी से पूछा १ कि हे गाङ्गेयजी ! बहुत से मनुष्य, हाथी, घोड़े, रथादिकों से भरी जो यह पाण्डवों की बड़ी भारी सेना युद्ध करने को उद्यत है व जो कि महाधनुर्द्धर महाबली लोकपालों के समान पराक्रमी भीमसेन, अर्जुन, धृष्टद्युम्नादि महारथों से रक्षित व ढिठाई करने के अयोग्य किसी के रोकने के मान की नहीं व जिस सेनासागर को समर में देवतालोग भी न चलाय सकें २।४ उस सेना को हे गङ्गासुत ! आप कितने दिनों में नाश कर सकोगे व महाधनुर्द्धर द्रोणाचार्यजी कितने दिनों में नाश कर सकेंगे व कृपाचार्यजी कितने दिनों में ५ व समर में प्रशंसनीय कर्ण कितने दिनों में फिर ब्राह्मणों में उत्तम अश्वत्थामाजी कितने दिनों में उस पाण्डवी सेना का विनाश कर सकेंगे क्योंकि इतने आप सब लोग हमारी सेना में दिव्यास्त्र जानने के बड़े भारी विद्वान् हैं ६ हे महाबाहो ! यह जानने का हमको नित्य परम कौतूहल रहता है इससे सुना चाहते हैं आप कृपाकर कहने के योग्य हैं ७ भीष्मजी इतना सुन बोले कि हे कुरुश्रेष्ठ ! यह तुम्हारे योग्य ही है जो शत्रुओं का बलाबल पूछते हो ८ हे राजन् ! सुनो रण में जो हमारी परमशक्ति शस्त्रवीर्य में व भुजाओं में है बताते हैं ९ सज्जनलोग सरलता व धर्म से युद्ध करते हैं और मायावी लोग माया से समर करते हैं यह दोनों के धर्मों का निश्चय है १० हे महाभाग ! हम प्रति दिन दोपहर तक पाण्डवों की सेना के दशहज़ार योधा मार डाला करेंगे व एक सहस्र रथी भी प्रति दिन मारेंगे ११।१२ हे भारत ! इस विधान से हम प्रतिदिन उठ कर दोपहर तक दशहज़ार योधा व एकहज़ार रथी मार २ सब पाण्डवों की सेना नाश कर देंगे १३ और समर में टिक जो बड़े-बड़े अस्त्र छोड़े जिनसे एक ही बार में सैकड़ों हज़ारों मरें तो बस एक मास भर में पाण्डवों की पूरी सेना मार डालें १४ सञ्जय बोले कि भीष्मजी के वचन सुन फिर राजा दुर्योधन ने अङ्गिरसों में श्रेष्ठ

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

द्रोणाचार्यजी से पूछा १५ कि हे आचार्यजी! भला आप कितने काल में राजा युधिष्ठिर की सेना को मार सकोगे यह सुन हँसते ही से द्रोणाचार्यजी राजा दुर्य्योधन से बोले १६ कि हे महाबाहो! अब तो हम बनाय वृद्ध हैं व हमारे प्राण अब बनाय शिथिल हो गये हैं तो भी पाण्डवों की सेना को शस्त्राग्नि से जैसे भीष्म मास भर में भस्म कर सक्के हैं वैसे ही हम भी कर सक्के हैं बस यही हमारी परम शक्ति है यही हमारा परम बल है १७। १८ कृपाचार्य ने कहा कि हम तो दो मास में पाण्डवों की सेना मार सक्के हैं अश्वत्थामा ने कहा कि हम तो सब पाण्डवों की सेना दशरात्रियों में मारसक्के हैं १९ तब महास्त्रवेदी कर्ण ने कहा कि हमतो पांचरात्रियों में मारसक्के हैं कर्ण के वचन सुन भीष्मजी २० बड़े जोर से हहायकर हँसे व यह वचन भी बोले कि जब तक बाण शंख व धनुष धारण किये अर्जुन को कृष्णचन्द्र समेत रण में नहीं देखते व समर में उनके सामने नहीं जाते तभी तक ऐसा मानते हो नहीं तो जब उनके सामने जावगे तो फिर ऐसा कैसे कह सकोगे ॥ २१ । २२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्व्वणि पञ्चनवत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १९५ ॥

एकसौछियानबे का अध्याय।

दो॰ इकसै छानबवें महँ, पाण्डवराज महान।
पूछा कालप्रमाण निज, भाइन सों बलवान ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि दुर्योधन के यहां की ये सब बातें दूतों के द्वारा सुन राजा युधिष्ठिरजी ने अपने भाइयों को एकान्त में बुलाय यह वचन कहा कि ॥

दो॰ दुर्य्योधन की सेन महँ, जो मम चार रहाहिं।
ते यह ख़बर बतावहीं, गत रजनी कि तहाहिं ॥ १ । २ ॥
दुर्योधन गाङ्गेय सों, पूछ्यहु यह व्यवहार।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

पाण्डव सेना मारिहहु, कितक काल बलगार ॥ २ । ३ ॥
भीष्म कहा वहि दुष्टसन, हम मारब यक मास।
द्रोणाचार्यहु मासही, महँ मारण दी आस ॥ ३ । ४ ॥
कृपाचार्य द्वयमास महँ, मारण किह्यहु सुठीक।
अश्वत्थामा महारथ, दशदिन भाषे नीक ॥ ४ । ५ ॥
तिमि दिव्यास्त्र प्रहार वर, कर्ण सभा महँ भाष।
पञ्चदिवस महँ मम सकल, सेना हतन समाष ॥ ५ । ६ ॥
तासों अर्जुन हमहुँ तव, वचन सुनन अभिलाष।
तुम कितनेही काल महँ, शत्रुन हतिहहु भाष ॥ ६ । ७ ॥
इमि राजा के वचन सुनि, गुड़ाकेश बलवान।
कृष्णचन्द्रमुखलखि वचन, यह बोल्यहु सप्रमान ॥ ७ । ८ ॥
महाराज ये सब महा, अस्त्रविज्ञ बलशालि।
चित्र योधि हैं मारि हैं, नहिं संशय क्षितिपालि ॥ ८ । ९ ॥
पर न करहु कछुताप मन, सुनहु सत्य मम बैन।
लहियकहरिहिसहायचढ़ि, यक रथपर तजिदैन ॥ ९ । १० ॥
हतहुँ निमिषमहँ अमरयुत, स्थावर जङ्गम लोक।
भूत भविष्यरु भव्य सब, चौदह भुवन अशोक ॥ १० । ११ ॥
जो किरात के युद्ध महँ, घोर अस्त्र गिरिजेश।
द्वन्द्वयुद्ध परसन्न ह्वै, दीन्ह्यो हमहिं नरेश ॥ ११ । १२ ॥
वह युगान्तमहँ प्राणिगण, नाशन हित त्रिपुरारि।
छोड़त सो मम ढिग अहै, तुम सन कहत पुकारि ॥ १२ । १३ ॥
त्यहि नहिं जानत गङ्गसुत, नहीं द्रोण कृप नाहिं।
द्रौणि न जानत कर्ण किमि, त्यहि जानै मनमाहिं ॥ १३ । १४ ॥
पर न योग्य दिव्यास्त्र सों, इतर मनुज बध भूप।
यासों सरलहि युद्धसों, जितिहहुँ रिपुन अनूप ॥ १४ । १५ ॥
तिमि नृप ये सब पुरुष हरि, तव सहाय बलवान।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

युद्ध विशारद अस्त्रविद, चाहत समर महान ॥ १५ । १६ ॥
सब अपराजित वेदवर, जानत सहित विधान।
हतिहैं रणमहँ अमर हू, की सेना बलवान ॥ १६ । १७ ॥
सात्यकि धृष्टद्युम्न अरु, वीर शिखण्डी जौन।
भीमसेन माद्रीतनय, युधामन्यु सुख भौन ॥ १७ । १८ ॥
द्रुपद विराट महीप द्वौ, द्रोण भीष्म सम भूप।
शङ्ख हिडम्बासुत महा, बल सब निज अनुरूप ॥ १८ । १९ ॥
अञ्जनपर्वा तासु सुत, महापराक्रम वीर।
रणकोविद सैनेय तव, हैं सहाय सब धीर ॥ १९ । २० ॥
हैं अभिमन्यु बली तनय, पञ्च द्रौपदी केरि।
तीनलोक क्षयकरण महँ, तुम समर्थ नहिं देरि ॥ २० । २१ ॥
है संकुपित विलोकिहहु, ज्यहि तुम भूप महान।
वह न तुरत रहिहै जिअत, हम जानत तव मान ॥ २१ । २२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि षण्णवत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १९६ ॥

एकसौसत्तानबे का अध्याय।

दो० इकसै सत्तानबे महँ, कौरव सैन्य अपार।
धार्तराष्ट्र प्रेरित चली, पाण्डव कटक मँझार ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी बोले कि, जब बनाय प्रातःकाल हुआ तो दुर्योधन के प्रेरित सब राजा लोग पाण्डवों के ऊपर को चढ़े १ सबों ने बड़े प्रात ही स्नानकर फूलों की माला धारणकर श्वेतवस्त्र पहिन अपने अपने अस्त्र शस्त्र ले रथों पर ध्वज लगाय ब्राह्मणों से स्वस्ति बचवाय अग्नि में आहुति दी २ सबके सब वेद पढ़े लिखे सब शूरवीर सब सदाचार व्रत नियम में तत्पर सब इच्छा किये सबों में सब संग्राम के लक्षण विद्यमान सब समरों में परलोक जीतने की इच्छा किये सब एकाग्रमन किये सब परस्पर के मेल में विश्वस्त चित्त थे ३ । ४ अवन्तीपुरी के राजा

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

बिन्द अनुबिन्द केकय देश के राजा वाह्लीक देश के भूपाल ये सब द्रोणाचार्यजी के पीछे पीछे चले ५ अश्वत्थामा, भीष्मपितामह, सिन्धुदेश का राजा जयद्रथ, दक्षिणी, पश्चिमी, पर्वतीय सब राजालोग, गान्धारराज शकुनी, पूर्वी, उत्तरी सब महीपाल, शक-जाति के लोग, किरात लोग, यवन, शिविवंशीय, वशातिवंशीय ये सब अपनी अपनी सेना लिये भीष्मजी को बीच में किये चले ये सब महारथ दूसरी सेना में चले इनके सबके अध्यक्ष भीष्मजी हुए ६।८ कृतवर्मा अपनी सेना समेत त्रिगर्त देश का राजा जो बड़ा महारथ था राजा दुर्योधन अपने सौभाइयों समेत शल, भूरिश्रवा, शल्य व अयोध्यापुरी का राजा बृहद्बल ये सब दुर्योधन के पीछे पीछे चले ६।१० ये सब महाबली धृतराष्ट्र के पुत्र इकट्ठे हो अपने अस्त्र शस्त्र धारण किये कवचादि पहिने कुरुक्षेत्र की पश्चिम ओर आधी सेना को आगे कर खड़े हुए ११ दुर्योधन ने ऐसा सेना निवेश स्थान अच्छा बन-वाया मानों दूसरा हस्तिनापुर ही हो गया जोकि सब प्रकार से भूषित कराया था १२ हस्तिनापुर निवासी पुरुष जो बड़े चतुर भी थे वे हस्तिना-पुर नगर व कुरुक्षेत्र के सेना निवेश में कुछ विशेषता नहीं जानते यही समझते कि हम अपने नगर ही में बैठे खड़े डोलते फिरते हैं १३ इसी प्रकार के सब राजाओं के भी क़िला आदि दुर्योधन ने बनवाये थे १४ बीस कोस की गुलाई में वह सब संग्रामभूमि बनाई गई थी व बाजार शूरों घोड़ों हाथियों रथों के रहने टिकने के स्थान इसके बाहर बाहर बनाये गये थे १५ उन सब स्थानों में सब राजा लोग अपनी अपनी सेना सामग्री समेत उत्साह बल के अनुसार उतरे ऐसा शिबिर कोई न था जिसमें कोई वस्तु क्या खाने पीने की क्या युद्ध की न हो ॥ १६ ॥

दो० सेनायुत तिन सकल नृप, वीर महाशय काहिं ।
भोजनादि सामग्रि सब, नृप पहुँचाई ताहिं ॥ १ । १७ ॥
हय गय नर शिल्पी प्रमुख, मागध वन्दिरु सूत ।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

सबहि रहन भोजन वसन, पहुँचायहु मजबूत ॥ २ । १८ ॥
वणिजनिकर गणिका रजक, चार निरीक्षक आदि।
सब कहँ कौरवराज नित, लखत देत अशनादि ॥ ३ । १९ ॥

इति श्रीमन्महाभारते उद्योगपर्वणि कौरवसैन्यनिर्याणेसप्तनवत्यधिकशततमोऽध्यायः १९७॥

एकसौअट्ठानबे का अध्याय।

दो० इकसै अट्ठानबे महँ, पाण्डवसैन्य निवेश।
वर्णन है ज्यहि विधि सहित, किय कौन्तेय नरेश ॥ १ ॥

वैशम्पायनजी जनमेजयजी से बोले कि जैसे दुर्योधन ने अपनी सेना को वहाँ ले जाय टिकवाया वैसे ही कुन्ती व धर्मजी के पुत्र महाराज युधिष्ठिरजी ने भी धृष्टद्युम्नादि वीरों को प्रेरित किया १ फिर चेदिदेश काशी व करूषदेश के स्वामी शत्रुओं के नाशक धृष्टकेतु नाम वीर सेनापति को वहां चलने की आज्ञा दी २ फिर महाराज विराट, महीपाल द्रुपद, युयुधान, शिखण्डी, पाञ्चालदेश के राजा ही के पुत्र युधामन्यु व उत्तमौजा को आज्ञा दी ३ ये सब शूरलोग चित्र विचित्र कवच बख्तरादि से चमचमाते थे सब तपाये नये सुवर्ण के कुण्डल धारण किये ऐसे सुशोभित होते जैसे घृत की आहुति से प्रज्वलित अग्नि कुण्डों में सुशोभित होते हैं ॥ ४ ॥

तोटकछन्द।

अति शोभित होत महीप सबै। ज्वलितग्रह तुल्य प्रकाश त...
तब भूपति पूज्यहु सैन्यमहां। कहिकै अतिकोमलव...
सब सैन्यहि आयसु दीन तबै। चलियो सब लोग...
सह सैन्य सुशूरन को तबहीं। वर भो...
सब वाहन पाहन धारि जिते। ग...
वरराज रहे सिगरे जितने...
अभिमन्यु महारणधीर...

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor

धृष्टद्युम्नहु को महिपालमनी । पठयोत्यहिकाल सुसाजिअनी ॥ ४ । ८ ॥

दो० भीमसेन युयुधान अरु, अर्जुन वीर महान ।
दूसर सेनास्कन्ध करि, पठयहु भूप सुजान ॥ ५ । ९ ॥
रणसामग्री करत अरु, चलत इते उत वीर ।
तिनकरशब्दअकाशतक, पहुँच्यहु कर रिपुपीर ॥ ६ । १० ॥
द्रुपद विराट भुआल महि, पाल अनेकन और ।
तिनसँग धर्मतनूज नृप, चल्यहु युद्ध के ठौर ॥ ७ । ११ ॥
धृष्टद्युम्न पालित महा, वीर भीर की सेन ।
पूर्ण देवसरि वेग सम, तहँ लखात मुद देन ॥ ८ । १२ ॥
पुनि धृतराष्ट्र महीपसुत, बुद्धिविमोहन कारि ।
सेनायोजित कीन नृप, बुद्धिमान भय हारि ॥ ९ । १३ ॥
महाधनुर्धर पांचसुत, कृष्णा के अभिमन्यु ।
माद्रीसुतरु प्रभद्र सब, पठयहु नृप तहँ धन्यु ॥ १० । १४ ॥
दशसहस्र वाजी सुकरि, दो सहस्र रथ पांच ।
शतपदाति दशसहस ये, भीमसेन सँग सांच ॥ ११ । १५ ॥
पु॰ जयत्सेन वीराट के, मध्य माहिं नृप आप ।
स॰ चले भलीबिधि सेनयुत, तनिक न मनमहँ पाप ॥ १२ । १६ ॥
प्रका॰ उत्तमौज युधमन्यु द्वौ, महारथी द्रुपदेय ।
बीस को॰ तिनके मध्य किरीटहरि, गदा चाप कर लेय ॥ १३ । १७ ॥
घोड़ों हाथिय॰ धीर अति वीरवर, विंश सहस्र प्रहारि ।
गये थे १५ उन स॰ करीश रथ, वंश इते शुभकारि ॥ १४ । १८ ॥
सामग्री समेत उत्साह ... आंसि, कार्मुक गदा विधारि ।
जिसमें कोई वस्तु क्या खाने पीन॰, चले महारण कारि ॥ १५ । १९ ॥

दो० सेनायुत तिन सकल नृप, वीरप युधिष्ठिर आप ।
भोजनादि सामग्रि सब, नृप पहुँचत चले सदाप ॥ १६ । २० ॥
हय गय नर शिल्पी प्रमुख, मागध वन्धसूत साज ।

CC-0. Digital Donation Received and Uploaded by eGangotri on behalf of Anonymous Donor